श्री लालबहादुर शास्त्री से संबंधित संस्मरण,
सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अवसरों पर
व्यक्त किये गये उनके विचार

लालबहादुर शास्त्री
व्यक्तित्व
और
विचार

सम्पादक
प्रो० कृष्णबिहारी सहल

चिन्मय प्रकाशन

सम्पादन-परामर्श-मण्डल

डॉ० जाकिर हुसैन
उपराष्ट्रपति, भारत

डॉ० लक्ष्मीनारायण 'सुधांशु'
अध्यक्ष विधान सभा, बिहार

श्री रामनिवास मिर्धा,
अध्यक्ष विधान सभा, राजस्थान

श्री बृजसुन्दर शर्मा
शिक्षा मंत्री, राजस्थान

डॉ० कन्हैयालाल सहल
पिलानी

डॉ० कुंवर चन्द्रप्रकाशसिंह,
जोधपुर

सम्पादक

प्रो० कृष्णबिहारी सहल

उच्चतम व्यक्तित्व वाले, निरंतर सजग और कठोर श्रमशील व्यक्ति का नाम है—लालबहादुर।

—जवाहरलाल नेहरू
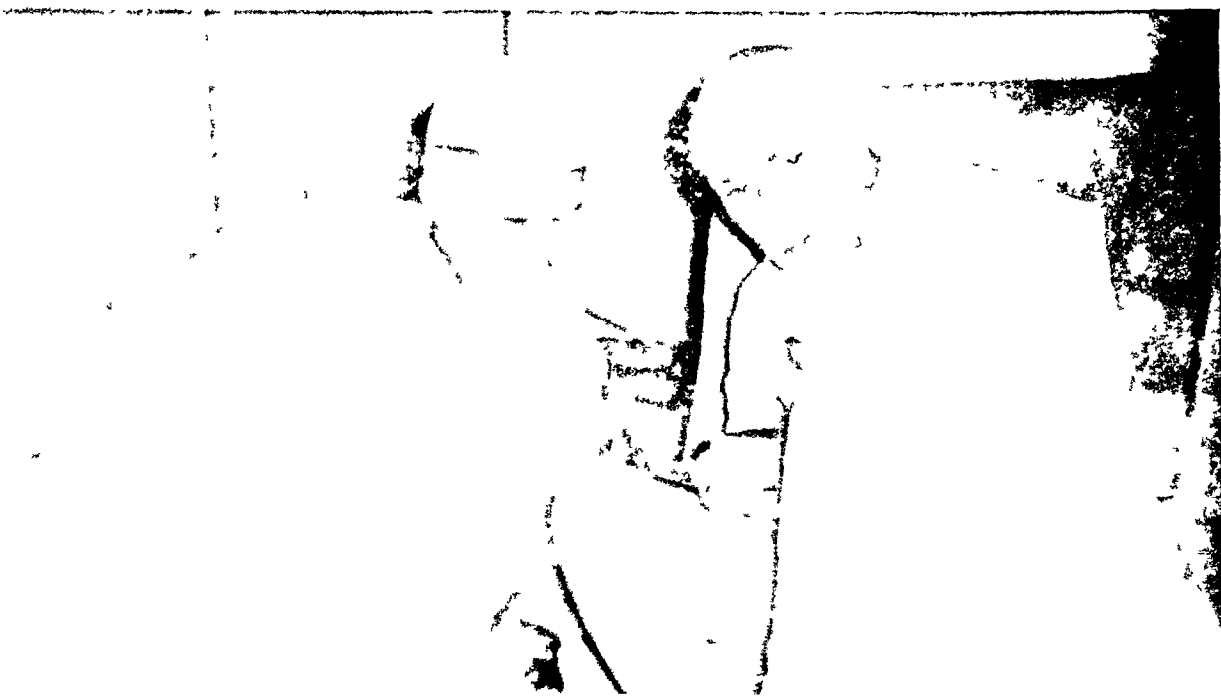
भूमिका

मुझे चिन्मय प्रकाशन, जयपुर (राजस्थान) द्वारा प्रकाशित होने वाले 'लालबहादुर शास्त्री: कृत्व और विचार' शीर्षक ग्रन्थ की अग्रिम प्रति को देखने का सुअवसर प्राप्त हुआ। स्वर्गीय शास्त्री- हमारे देश के उन महान व्यक्तियो में से थे, जिनको स्मरण करके अनेक वर्षों तक हमारे देश के ासियों को प्रेरणा मिलती रहेगी। उन्होने अपने कमठ जीवन के द्वारा यह सिद्ध करके दिखा दिया एक निधन परिवार में जन्म लेकर भी हमारे देश का कोई भी कर्मनिष्ठ व्यक्ति उच्च-से-उच्च स्थान प्राप्त कर सकता है। उन्होने अपनो गरीबो के वे दिन अन्त तक भी नहीं भुलाये थे; और इसलिये, के अन्दर एक अनोखो नम्रता था, जा स्वभावतया प्रत्येक व्यक्ति का मन मोह लेतो थो। लेकिन उस ता तथा शालीनता के आवरण के अन्दर उन्होने एक दृढ़-निश्चयी हृदय पाया था। इसी कारण, सरीखे नाटे कद के दुर्बल शरीर के व्यक्ति के अन्दर उन दिनों एक अद्‌भुत शक्ति आ गई थी, जब हमारे देश पर पाकिस्तानी आक्रान्ताओं ने अकारण ही आक्रमण किया था। उस अवसर पर उन्होंने नी जिस दृढता, सूझ-बूझ और संगठन-प्रियता का परिचय दिया, वह हमारे देश के इतिहास की अमर तु बन गई है। इसी कारण उनके प्रधानमन्त्रित्व के वे उन्नीस महीने सदैव याद रखे जायेंगे। तथ्य है कि उन्होने अपने उन्नीस महीनो के संक्षिप्त प्रधानमंत्रित्व-काल में जो अभूतपूर्व सफलता प्राप्त थी और इस देश को जो सबल नेतृत्व प्रदान किया था, वह शायद दूसरे प्रधान मन्त्री उन्नीस वर्षो भी प्राप्त नही कर पायेगे।

लेकिन उन्होंने गांधी जी के नेतृत्व में अपने देश के स्वतन्त्रता-संग्राम में भाग लिया था और रतीय संस्कृति के सद्‌गुण उनके स्वभाव मे कूट-कूट कर भरे हुए थे; इसोलिये, यद्यपि उन्हें संग्राम में साधारण सफलता प्राप्त हुई थी, तथापि जब शांति का अवसर आया, तब उन्होने उस दिशा में भी ढता और आत्मविश्वास के साथ कदम उठाया था और इस प्रकार, भारत का वह सपूत ताशकन्द में ान्ति की वेदी पर वलि हो गया! वे युद्ध में भी विजय हुये और शांति में भी उन्होने विजय ाप्त की!!

इसलिये, उनकी स्मृति में जो यह ग्रंथ प्रकाशित किया जा रहा है, यह सभी दृष्टियों से समर्थन यौग्य है। मुझे पूरा विश्वास है कि इस ग्रन्थ के प्रकाशन से जहाँ उनके बहुमुखी व्यक्तित्व के अनेक हलुओं पर विस्तृत प्रकाश पड़ेगा, वहाँ आने वाली पीढ़ियाँ अपने कर्त्तव्य-पथ पर अग्रसर होने के ये नया सम्वल भी प्राप्त करेंगी। अतः इस ग्रन्थ के समुचित प्रकाशन के लिये मैं सभी सम्वन्वित हानुभावों को हृदय से वधाई तथा साधुवाद देता हूँ और उनके इस आयोजन की सफलता के लिये पनी मंगल कामनाये अर्पित करता हूँ।

एक वार फिर से धन्यवाद के साथ

भक्त दर्शन
उप-शिक्षा मंत्री
भारत
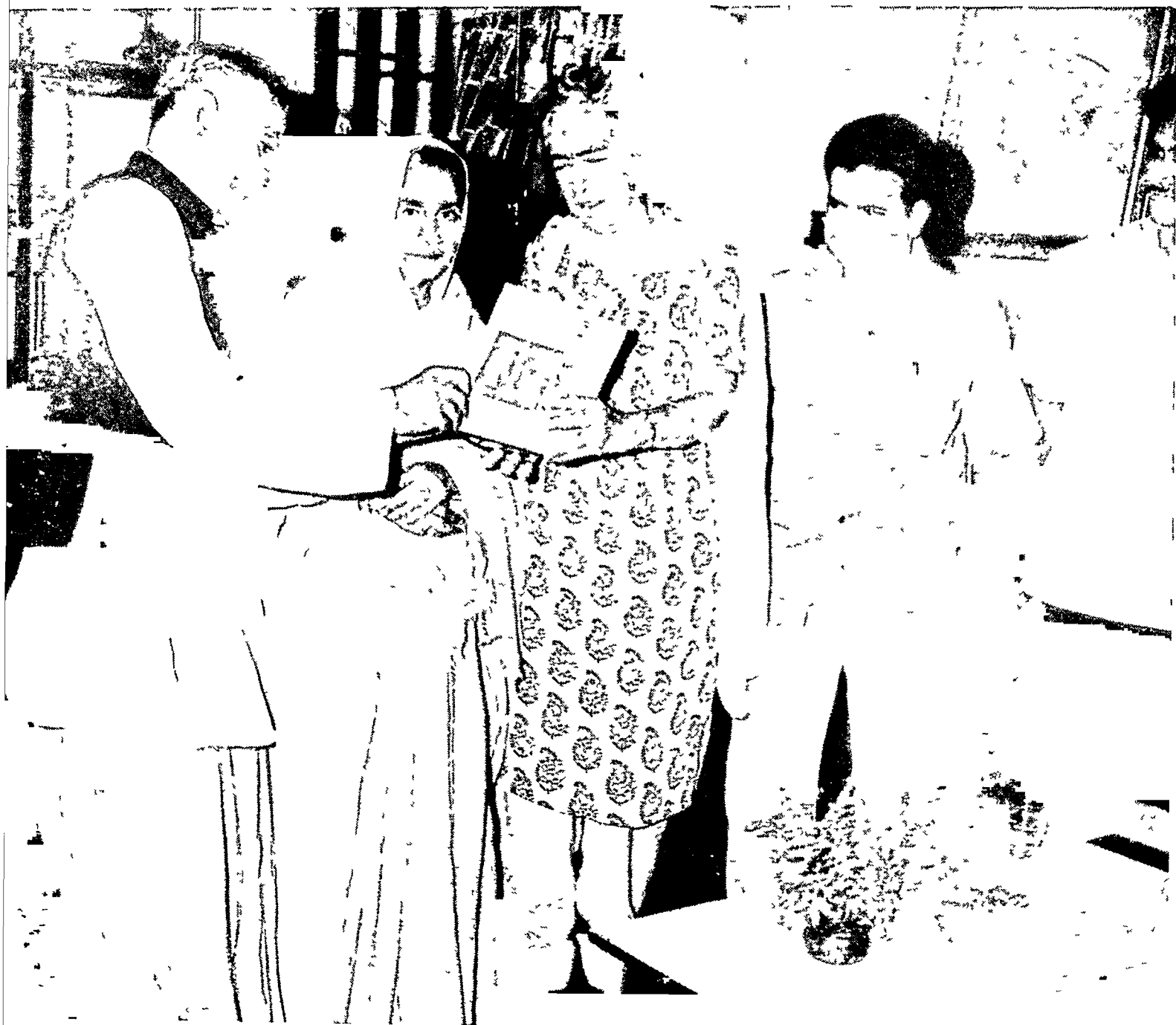
प्रकाशक श्री तारा चन्द वर्मा, श्रीमती ललिता शास्त्री एव श्रीमती चेस्टर बोल्स को ग्रन्थ दिखलाते हुए, साथ मे श्री हरिकृष्ण शास्त्री एवं ग्रन्थ के सम्पादक प्रो० कृष्ण बिहारी सहल

प्रकाशक श्री तारा चन्द वर्मा, श्रीमती ललिता शास्त्री एवं श्रीमती चेस्टर बोल्स को ग्रन्थ दिखलाते हुए, साथ में श्री हरिकृष्ण शास्त्री एवं ग्रन्थ के सम्पादक प्रो० कृष्ण बिहारी सहल
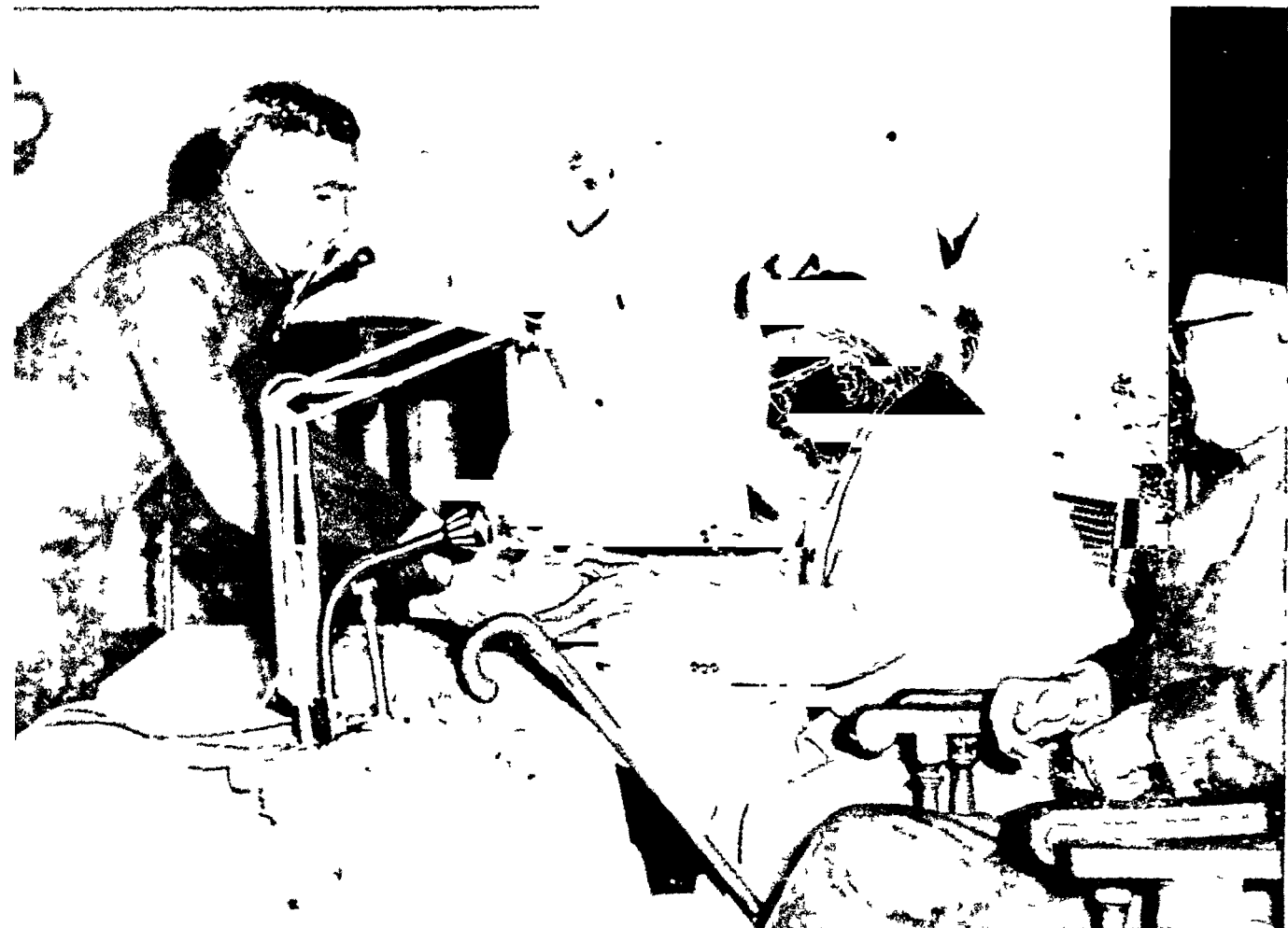
ग्रन्थविमोचन समारोह के अवसर पर चिन्मय प्रकाशन के सचालक श्री ताराचन्द वर्मा डॉ० सम्पूर्णानन्द (राज्यपाल राजस्थान) को ग्रन्थ भेंट करते हुए ।

सम्पादक प्रो० कृष्ण बिहारी सहल के साथ विचार-विमर्श करते हुए श्री तारा चन्द वर्मा, संचालक, 'चिन्मय प्रकाशन

स्व० लाल बहादुर शास्त्री के सुपुत्र श्री हरिकृष्ण शास्त्री ग्रन्थ
का अवलोकन करते हुए, साथ मे श्री तारा चन्द वर्मा (प्रकाशक)
एव प्रो० कृष्ण बिहारी सहल (सम्पादक)

सम्पादकीय

'हम रहें या न रहें, लेकिन यह झण्डा रहना चाहिए और देश रहना चाहिए और मुझे विश्वास है कि यह झण्डा रहेगा, हम और आप रहें या न रहें, लेकिन भारत का सिर ऊंचा होगा। भारत दुनिया के देशों में एक बड़ा देश होगा और शायद भारत दुनिया को कुछ दे भी सके।'

ये शब्द है उस व्यक्ति के जो साधारण-सा दिखलाई पड़ने पर भी असाधारण था, वामनाकार होते हुए भी जो विराट् था, मक्खन-सा जिसका मन था किन्तु जिसका मस्तिष्क स्थितप्रज्ञ का-सा था—ऐसा महामानव काल के बादलों मे बिजलो की कौध के समान चमक कर यदि उस लोक को चला जाय जहाँ से फिर कोई लौटकर नहीं आता तो सृष्टि की सारी मानवता ऐसे लालबहादुर के लिए आँसू बहाए बिना नहीं रहती। शास्त्री जी का अभिनन्दन एक व्यक्ति का अभिनन्दन नहीं, समस्त मानवता का अभिनन्दन है।

हृदय की गति रुक जाने से शास्त्री जी का पार्थिव शरीर तो अग्नि-ज्वालाओं को समर्पित कर दिया गया किन्तु अपने कार्य-कलापों द्वारा इतिहास का जो उज्ज्वल पृष्ठ उन्होने खोला, वह यश की प्रदीप्त शुभ्र आभा से सदा आलोकित होता रहेगा। केवल १८ महीनों के अल्प काल में श्री शास्त्री-जी ने जो यश अर्जित किया, वह इतिहास का एक अद्‌भुत आश्चय है—ऐसी मिसाल हमारे देश के इतिहास में दूसरी नहीं मिलती।

शास्त्री जी के व्यक्तित्व का विश्लेषण किया जाय तो लगता है कि उन्होंने यश को कामना से प्रेरित होकर कोई काम नही किया—फिर भी यश सदा उनका अनुगमन करता रहा, परछांई की तरह उनके साथ लगा रहा।

शास्त्री जी की प्रेरणा का स्रोत उनकी यशोलिप्सा नहीं, वरन् अपने देश की तथा उसके द्वारा समस्त मानव जाति की सेवा की अदम्य अभिलाषा थी। उन्होंने जब प्रधानमंत्रित्व का भार सम्हाला था, तब अनेक लोगों के मन मे सन्देह था कि किस प्रकार यह अदना-सा सरल व्यक्ति कभी नेहरू जी द्वारा सुशोभित पद को गौरवान्वित कर सकेगा? किन्तु शास्त्री जी ने अपनी लगन, ईमानदारी, निष्ठा तथा उत्साह के बल पर वह काम कर दिखाया जो शताब्दियों के इतिहास में भी पढने-सुनने को नही मिलता। एक बार तो उन्हे स्वय कहना पड़ा कि मै ऐसा सरल नहीं हूँ जैसा दिखाई देता हूँ। एक अन्य अवसर पर विवश होकर उन्हे यह भी कहना पड़ा कि आकार-लाघव और मृदु-भाषण के कारण कुछ लोग यह समझते है कि दृढतापूर्वक आचरण करने की क्षमता मुझमे नहीं है। किन्तु क्या हुआ यदि शारीरिक दृष्टि से मैं कमजोर हूँ, फिर भी मै समझता हूँ, आन्तरिक रूप से मैं इतना कमजोर नही हूँ।

शास्त्रो जी के इन शब्दों से उनको दृढ़ता प्रकट होतो है तथा उनका आत्मविश्वास पूर्णरूप से झलकता है।

गांधी जो तथा शास्त्री जी, दोनों का जन्म दो अक्टूबर को हुआ था। नहीं कह सकते कि समान तिथि पर जन्म लेने वाले व्यक्तियों के स्वभाव में ग्रहों के योग से कोई समानता पाई जाती है अथवा नही, किन्तु इसमें दो मत न होगे कि सत्य-निष्ठा और ईमानदारी को दृष्टि से पिछले वर्षो शास्त्री जी के समकक्ष कोई व्यक्ति दिखलाई नही पड़ा। १८ महीनों के शासन-काल मे उन्होने गाँधी

जी-जैसी सत्य-निष्ठा तथा दृढता दिखलाई। शास्त्री जी की अहिसा किसी भी दशा में कायरता का नामान्तर न थी—

पाकिस्तान के आक्रमण के समय जो देश-रक्षा-विषयक दृढता उन्होने दिखलाई वह सदैव भारतीय इतिहास मे स्मरणीय रहेगी।

शास्त्री जी को अपने शासन-काल मे वडी विकट समस्याओ का सामना करना पड़ा किन्तु उन्होंने अपना सन्तुलन बनाये रखा। देश को ऊँचे उठाने की वड़ी उमग उनमे थी। इस उमंग के कारण वे इस वात को भी भूल जाते थे कि उन्हे समय पर भोजन करना है। इस प्रकार की उमंग अगर मनुष्य के जीवन मे न हो तो उसका जीवन एक मरुस्थल के समान शुष्क और नीरस हो जाय। उनके जीवन मे उमग, निष्ठा और सत्यवादिता की ज्वाला जलती रही जिसने समस्त देश को आलोकित किया। किन्तु उमग और कट्टरता अथवा धर्मान्धता के बीच की सीमा-रेखा इतनी झीनी अथवा पतली होती है कि कभी-कभी उमग कट्टरता का रूप ग्रहण कर लेती है किन्तु शास्त्री जी के जीवन-काल मे ऐसा कभी नही हुआ। दूसरे के दृष्टिकोण को समझने के लिए वे सदा तैयार रहते थे।

प्रस्तुत ग्रन्थ इसी प्रकार के शील सम्पन्न, निष्ठावान, सत्यव्रती तथा सफल नेता के व्यक्तित्व को प्रकाश मे लाने का एक प्रयास मात्र है। हमे लगता है कि शास्त्री जी का व्यक्तित्व उनके कृतित्व से कही विशाल और समृद्ध था। इसलिए केवल उनके कृतित्व के आधार पर उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का निदर्शन प्रस्तुत नही किया जा सकता—फिर भी शास्त्री जी जैसे पुण्यश्लोक महाभागो के कार्यों का स्मरण भी पुनीत भावनाओ का संचार करने वाला है। इसलिए भी हम इस प्रकार के प्रयास की सार्थकता सिद्ध कर सकते है।

प्रस्तुत ग्रन्थ चार खण्डो मे विभक्त है। प्रथम खण्ड मे ऐसे लेखो का चयन किया गया है, जिनमे शास्त्री जी के वहुमुखी व्यक्तित्व पर प्रकाश पडता है, साथ ही अनेक ऐसे संस्मरणो का समावेश भी किया है जो पहली वार ही पाठको के सामने आ रहे है। इन सस्मरणो से शास्त्री जी के स्वभाव, गुण एव कार्यक्षमता पर स्वत ही प्रकाश पड़ता है।

दूसरे खण्ड मे हिन्दी जगत् के प्रमुख कवियो की भावपूर्ण काव्यमय श्रद्धाजलियो का संकलन है। हृदय से निकले हुए उद्‌गार ही व्यक्ति के व्यक्तित्व का विना किसी लाग-लपेट के मूल्याकन करने मे समर्थ होते हैं।

तीसरे खण्ड मे शास्त्री जी के ऐतिहासिक एवं सास्कृतिक अवसरो पर व्यक्त किये गये विचारो का समावेश किया गया है। व्यक्ति का सही रूप जानने और समझने के लिए उसके विचारो का जानना अत्यधिक आवश्यक है। मेरी दृष्टि मे व्यक्ति के विचार ही उसके अस्तित्व का बोध कराते है—इस दृष्टि से इस खण्ड का अपेक्षाकृत और भी अधिक महत्व है।

चतुर्थ खण्ड मे शास्त्री जी के जीवन की प्रमुख घटनाओ की तिथिक्रम से तालिका दी गई है। [illegible] मे पैदा होने वाला मानव १० जनपथ तक पहुँचने के लिए कैसे-कैसे, किन-किन सीढ़ियों को पार करके पहुँच पाता है, का विस्तृत विवरण इस खण्ड मे मिलता है। प्रमुख घटनाओ के साथ-साथ [illegible] चित्रो की निराली झाकी भी प्रस्तुत की गई है। इन चित्रो मे शास्त्री जी कही घर के बच्चो

में व्यस्त हैं, तो कहीं वे अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान में लीन हैं, तो कहीं जन-गण के साथ भाव-विभोर हैं, तो कहीं देश की समस्याओं के उलझाव में है, तो कही बच्चों के बीच में उनका बाल स्वभाव झलकता है, तो कहीं भारतीय नेताओं के बीच है तो कहीं विदेशी नेताओं से शान्ति मंत्रणा मे व्यस्त है तो कही करोड़ों नर-नारियों के बीच जननायक के रूप मे है तो कही देश के जवानों के दुःख-सुख के हमदर्द बने हुए है तो कही विशाल जनसमूह को कह रहे है—हम रहें या न रहे—हमारा झण्डा अवश्य रहेगा। इस प्रकार उनके नाना रूप इस खण्ड में देखे जा सकते है।

श्री भक्तदर्शन जी, उप-शिक्षा मन्त्री, भारत ने ग्रन्थ की भूमिका लिखकर मुझे उपकृत किया है। इसके लिए मैं उनका ऋणी हूँ।

श्री बृजसुन्दर जी शर्मा, शिक्षा मन्त्री, राजस्थान ने ग्रन्थ की प्रस्तावना लिखकर जो अनुकम्पा मुझ पर की है, उसके लिए मै बड़ा कृतज्ञ हूँ।

मैं प्रस्तुत ग्रन्थ के, सम्पादन-परामर्श-मण्डल को धन्यवाद देकर औपचारिकता की सीमा में अपने को आबद्ध कर आत्मीयता की परिधि को सकुचित नही करना चाहता। ग्रन्थ में जो कुछ 'अच्छा' है, वह उन्ही के सुझावों का फल है, जो कमिया रह गई है, वह मेरी अपनी है।

मेरे अनुरोध पर जिन महानुभावों ने अपनी मूल्यवान रचनाएँ भेजकर अथवा उनके प्रकाशन की स्वीकृति देकर जो सहयोग दिया है उसके लिए मै उनका बड़ा आभारी हूँ।

श्री श्यामबिहारी सहल एव प्रिय नवलकिशोर अग्रवाल का मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर अनेक महत्वपूर्ण सुझाव दिये, जिनके फलस्वरूप मेरा यह कार्य अधिक पूर्ण हो सका।

श्रीमती सन्तोष सहल के लिए क्या लिखूं जिन्होंने सदैव मेरे साहित्यिक जीवन में मुझे प्रेरित तथा प्रोत्साहित किया। इनकी प्रेरणा तथा सहायता मेरे जीवन का बल और सम्बल है। प्रस्तुत ग्रन्थ उन्ही की सहायता का श्रीफल है। उनकी मदद न होती तो शायद यह ग्रन्थ इतनी जल्दी में कभी तैयार न कर पाता।

श्री झुन्नीलाल जी, संचालक, राजस्थान प्रकाशन, जयपुर का बड़ा आभारी हूँ जिन्होने मुझे शास्त्री जी के कुछ महत्वपूर्ण चित्रों के ब्लॉक प्रदान किये। साथ ही मैं आगरा अखबार प्रेस के संचालक एवं व्यवस्थापक मौलाना आबिद हुसैन को धन्यवाद दिये बिना नही रह सकता, जिन्होने व्यक्तिगत कष्ट उठाकर इस ग्रन्थ को इतनी जल्दी प्रकाशित किया है।

अन्त में मै राजस्थान के सुप्रसिद्ध प्रकाशक श्री ताराचन्द वर्मा का बड़ा आभारी हूँ जिन्होने मेरे कहने मात्र पर इतने बड़े ग्रन्थ के प्रकाशन का गुरुतर भार सम्भाला। श्री वर्मा मेरे लिये केवल प्रकाशक ही नही रहे वलिक सम्पादन कार्य में भी मेरी बड़ी मदद की है। मै हृदय से उनका बड़ा आभारी हूँ।

दीपावली पर्व, १९६९
सहल-सदन
पिलानी (राज०)

कृष्णविहारी सहल

विषय-सूची

व्यक्तित्व : खण्ड १

पृष्ठसंख्या

पृष्ठसंख्या

काव्यांजलियाँ : खण्ड २

विचार : खण्ड ३

प्रमुख घटनाएँ चित्रों सहित : खण्ड ४

खण्ड : १

व्यक्तित्व

शांति और मैत्री के लिए बलिदान

श्री लालबहादुर शास्त्री के अचानक देहान्त की खबर सुन कर जैसे आप सब लोगों को गहरा धक्का लगा है, वैसे ही मुझे भी लगा। उन्होंने बडे कठिन समय में अठारह महीने तक प्रधान मन्त्री की हैसियत से देश की सेवा की। जवाहरलाल नेहरू की मृत्यु से जो स्थान खाली हुआ, उसे भरना कठिन था। काग्रेस ससदीय दल ने लालबहादुर जी को अपना नेता चुना और उन्होने प्रधान मत्री का पद ग्रहण किया।

स्वतत्रता-सग्राम मे और उत्तर प्रदेश के मत्री की हैसियत से तथा बाद मे भारत सरकार के मत्रिमण्डल के सदस्य के रूप मे उन्होंने जो काम किये, वे सर्वविदित है। स्वतन्त्रता के बाद के दिनो मे श्री लालबहादुर शास्त्री ने काग्रेस दल के संगठन का काम किया। वे शान्त, सौम्य, पर दृढसकल्प देशभक्त थे।

हमारे सामने खाद्य और वित्त आदि की कठिनाइयाँ तो थी ही, इसके अलावा कच्छ के रन मे और जम्मू-कश्मीर मे पाकिस्तान से युद्ध का भी सकट हमे झेलना पड़ा। इस आक्रमण का सामना करने मे श्री लालबहादुर शास्त्री ने देश का नेतृत्व किया। पाकिस्तान से समझौते की बातचीत करने के लिए वह ताशकन्द गए। वहाँ पर उन्होंने जो कठिन परिश्रम किया और उन पर जो तनाव पड़ा, उससे उनके जीवन का अन्त हो गया। वह शान्ति का प्रयत्न करते हुए, पिछली कटुता को भूल कर दोनो देशो मे मित्रता और शान्ति का समझौता करते हुए मरे। मुझे आशा है कि इस बातचीत से दोनों देशो के रुख मे नरमी आई है। हमारी समस्याएँ सेना के द्वारा हल नही हो सकतीं। दोनो देशों को यह समझना चाहिए कि यदि हम अपने विरोधी को फौजी ताकत से हराने का प्रयत्न करते है तो इससे शत्रुता और द्वेष और बढता है। और यदि हम अपने शत्रु को सद्भाव से जीतने का प्रयत्न करते है तो इससे मित्रता और शान्ति कायम होती है। बल और भय के ऊपर जो शान्ति स्थापित होती है, वह स्थायी नही हो सकती, वह तभी स्थायी हो सकती है जब वह न्याय और सत्य पर आधारित हो।

आज हमारा राष्ट्र अपने प्रधान मंत्री के प्रति आभारी है और उनके लिए गहरा शोक मना रहा है। हम यही कर सकते है कि अपने पड़ौसियो के साथ मित्रता और मेल से मिल-जुल कर रहने का अपनी पूरी शक्ति से प्रयत्न करे।

मैने दो-एक बार लालबहादुर जी से कहा था कि हम जो सबसे बड़ा सम्मान दे सकते है, वह 'भारत-रत्न' का अलकार है और मैने निश्चय किया था कि गणराज्य दिवस पर उनको यह अलकार देने की घोषणा करूँ। अब मै शोक के साथ उनकी मृत्यु के बाद उनको 'भारत-रत्न'' का सम्मान प्रदान करने की घोषणा करता हूँ—

देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिः धीरस्तत्र न मुह्यति ॥
वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यानि संयाति नवानि देही ॥

डा० जाकिर हुसैन

शान्ति के पुजारी

श्री लालवहादुर शास्त्री जो जन-साधारण व्यक्ति थे और जन-साधारण से उनका सम्बन्ध वरावर वना रहा। साध्य की दृढता को कायम रखते हुए वे यथावश्यक साधनो को अपनाते थे। वह स्वभाव से अत्यन्त विनम्र, व्यवहार मे सरल, वाणी मे कोमल और शान्ति के पुजारी थे। सकट की घड़ियो में वे शान्त, उत्साही और अडिग वने रहे। यदि हम सभी उनके दिखाये हुए रास्ते पर चले तो यह हमारी उनके प्रति सच्ची श्रद्धाजलि होगी।

इन्दिरा गांधी

दृढ़ संकल्पी

ताशकन्द मे अपने प्रधान मत्री श्री लालवहादुर शास्त्री के देहान्त होने की खबर सुनकर मैं स्तब्ध रह गई। वह वड़े दृढ सकल्प के आदमी थे और उन्होने अपना सारा जीवन देश-सेवा में निछावर कर दिया।

गुलजारीलाल नन्दा

वे सरलता और नम्रता की मूर्ति थे

आज राष्ट्र पर यह अचानक वज्रपात हुआ है। हमारे प्रधान मत्री लालबहादुर शास्त्री जो गुजर गए। इस समाचार से सारे देश के लोगो को बल्कि सारी दुनिया को धक्का लगेगा। अभी केवल डेढ बरस पहले हमने जवाहरलाल जी को खोया और हमारे दिल अभी भी उनके शोक से भरे हुए है। अब हमको इस दूसरी गहरी और कभी न पूरी होने वाली क्षति को उठाना पड़ा है।

पिछले डेढ साल देश के लिए बडी चिन्ता और कष्ट के रहे है। इन घड़ियो में शास्त्री जी ने बड़ी दृढता से देश की बागडोर सँभाली। वे सरलता और नम्रता की मूर्ति थे। साथ ही वे अत्यन्त दूरदर्शी, बडे बुद्धिमान और परिपक्व दिमाग के आदमी थे। देश की सेवा मे वे एक क्षण भी विश्राम नही लेते थे और उनकी मृत्यु भी महान और अथक प्रयत्न के बाद सम्मानपूर्वक शान्ति स्थापित करने के क्षणो मे हुई। उन्होने जो समझौता किया, उसे हम सच्चे दिल से पूरा करेंगे। यह समझौता हमारे देश की परम्परा के अनुकूल है। गाधी जी और जवाहरलाल जी ने जो परिपाटी डाली और जिसका लालबहादुर जी ने इतनी योग्यता और सच्चाई के साथ पालन किया है, उसके अनुकूल है।

आज सारा राष्ट्र उनके शोक में डूबा है। मै तो इस धक्के से स्तब्ध रह गया हूँ। परन्तु उनके लिए आँसू गिराने के साथ-साथ हमे उस काम को भी उठाना है जिसके लिए वे जिये और मरे। वह काम है—देश की साधारण जनता की भलाई और राष्ट्र की एकता और शक्ति। इससे अच्छी श्रद्धांजलि हम उनको नही दे सकते।

ए. एन कोसीजिन

एक बहुत बड़े राजनेता

भारत की महान जनता को आपको सरकार के नेता श्री लालबहादुर शास्त्री की मृत्यु से जो एक बहुत वडे राजनेता और राजनीतिज्ञ थे, भारी नुकसान उठाना पडा है। हम सोवियत सघ की सर्वोच्च सोवियत के अध्यक्षमडल और सोवियत सरकार की ओर से आपकी इस शोक की घडी मे शामिल होने के लिए और आपके दु ख मे जो कि हम देख रहे है कि भारत भर मे छाया हुआ है, हिस्सा लेने के लिए यहाँ आये हुए है। प्यारे दोस्तो, हम आपको वताना चाहते है कि सोवियत सघ की जनता अपने मित्र भारत की जनता के दु ख से हृदय से दुखी है। यदि कल आप ताशकन्द मे होते तो आपने खुद देखा होता कि हमारे देश के लोगो के हृदय मे कितना गहरा दु ख और कैसी दिली हमदर्दी है। लोग लाखो की तादाद मे आपके प्रधान मत्री के दर्शन के लिए जो इस कदर अचानक और ऐसे अफसोसनाक ढग से हमसे छिन गये, सडको पर जमा थे।

जो सदमा आप पर आ पडा है उसकी गहराई और कडवाहट हम और भी ज्यादा इसलिए महसूस करते है कि हमे ताशकद सम्मेलन के सात दिनो के दौरान श्री लालबहादुर शास्त्री से हर रोज वहुत नजदीकी से मिलने और उन्हे जानने का मौका मिला था और हमने यह देखा था कि किस तरह वह महान व्यक्ति एक बुद्धिमान राजनेता की तरह भारत के लिए जबर्दस्त महत्व रखने वाले एक सवाल का हल ढूँढ निकालने के लिए पूरी ताकत और वडे धीरज के साथ लगे रहे थे। इन पूरी सात दिन की अवधि के अन्दर और उनकी मृत्यु के सिर्फ तीन घटे पहले तक जबकि मेरी उनसे आखिरी मुलाकात हुई थी, मैने देखा कि उन्हे अपने देश और विश्वशान्ति तथा अपने देशवासियो के हित की कितनी चिन्ता थी। भारत और पाकिस्तान मे फूट पैदा करने वाली समस्याओ को हल करने के लिए उपायो की जो तलाश की गयी और उसका ठोस नतीजा जो सामने आया, इस कामयावी का सेहरा वहुत हद तक उनके सर पर है। १० जनवरी की शाम को जव हम बाते कर रहे थे—दुर्भाग्य कि यह हमारी आखिरी वातचीत सावित हुई—तो श्री लालवहादुर शास्त्री ने मुझसे कहा कि ताशकद सम्मेलन के नतीजे मे उन्हे खुशी हुई है। उन्होने मुझे वताया कि ताशकद घोषणा का, जिस पर उन्होने और पाकिस्तान के राष्ट्रपति ने थोडी ही देर पहले दस्तखत किये है, शान्ति के लक्ष्य के लिए और भारत की जनता के लिए वहुत वडा महत्व है। उस सारी शाम के दौरान श्री लालवहादुर शास्त्री वहुत ही खुश नजर आ रहे थे, लोगो से वातचीत करते हुए खूव हँसी-मजाक कर रहे थे और वार-बार यह कह रहे थे कि ताशकद घोषणा पर दस्तखत होने से वडी ही माकूल फिजा तैयार हो जायगी और उसके कुछ ही घटो के बाद हमने दर्दनाक खवर सुनी कि वे अव नही रहे।

इस खबर को सुन कर हमारे ऊपर जो सदमा गुजरा, उसे शब्दों में बयान करना मेरे लिए मुश्किल है। उस रात को ही हम लोग उस स्थान पर गये जहाँ भारतीय शिष्टमडल ठहरा हुआ था और हमने सोवियत जनता की ओर से हार्दिक शोक प्रकट किया।

यहाँ बोलने वाले दूसरे लोग बता चुके है कि श्री लालबहादुर शास्त्री मे एक साधारण मानव और राजनेता के रूप में कैसे असाधारण गुण थे और किसी तरह एक अध्यापक के घर में पैदा होकर उन्होने संसार की एक सबसे बड़ी ताकत की सरकार के प्रधान का पद प्राप्त किया। वे अपने देश की जनता और उसके हितों को समझते थे और उन्होने अपना सारा जीवन उसके लिए अर्पित किया था।

सोवियत जनता जानती है कि श्री लालबहादुर शास्त्री ने राष्ट्रीय आजादी को लड़ाई मे आगे बढ कर हिस्सा लिया था और इसके लिए उन्हे कई बार साम्राज्यवादी हुकूमत की जेल काटनी पड़ी। वे महात्मा गाधी के अनुयायी और श्री जवाहरलाल नेहरू के साथ कधे से कधा मिला कर काम करने वालो में से थे। और खुद भी राजनीतिक नेता और राजनीतिक के रूप मे बहुत ऊँचा उठे।

भारत के प्रधान मंत्री वनने के बाद से दुनियाँ को मुश्किल परिस्थितियो के अन्दर राजकाज सँभालने का भारी बोझ श्री लालवहादुर शास्त्री के कन्धो पर आ पडा और हमे कहना होगा कि इस परिस्थिति के अन्दर उन्होने मुश्किलो को फतह करने के रास्ते ढूँढ निकाले।

इन वर्षो के अन्दर श्री लालबहादुर शास्त्री ने अपने को असलियत के सामने रख कर सोचने वाला राजनीतिक साबित किया। उनकी यह योग्यता ताशकंद सम्मेलन के दौरान खास तौर से जाहिर हुई।

हम अच्छी तरह जानते है कि भारत और पाकिस्तान के जो अभी हाल मे एक-दूसरे से युद्ध कर रहे थे, नेताओ के लिए बातचीत के लिए एक मेज पर बैठना, एक-दूसरे से हाथ मिलाना और पाकिस्तान तथा भारत मे झगड़ा पैदा करने वाले मुश्किल सवालो का हल ढूँढ निकालना, ऐसा हल ढूँढ निकालना जो दोनो पक्षों को स्वीकार्य हो, मिल-जुल कर बठना, कोई आसान चीज नही थी। झगडे के कई सवाल बहुत सारे वर्षो से जमा हो रहे थे। सच तो यह है कि भारत और पाकिस्तान का झगड़ा साम्राज्यवादी शासन के एक लम्बे दौर की विरासत था जिसके अन्दर उपनिवेशवादियो का गुलाम बना कर रखी हुई जनता को आपस मे लड़ा रहे थे। सभी को वे दिन याद है, जब स्थिति अत्यन्त गम्भीर हो गयी थी। लेकिन इस सारी चीज के बावजूद भारत के प्रधान मत्री ने एक राजनेता की हैसियत से दिलेरी से काम लिया और ताशकद जाकर पाकिस्तान के राष्ट्रपति के साथ बातचीत करने का सोवियत सरकार का निमत्रण स्वीकार किया।

हर आदमी जो शान्ति की कीमत समझता है, उस पूरी बातचीत को बडे ध्यान और आशा के साथ देख रहा था। सभी ताशकद से आने वाली खवरो के लिए उत्सुक थे और आशा लगाये हुए थे कि उसके परिणाम से सभी प्रगतिशील जनो का यह विश्वास दृढ होगा कि कठिन से कठिन हालात आ पडने पर भी झगडो को सुलझाने की राह निकाली जा सकती है। लोगो की यह भावना सही साबित हुई। दोनो पक्षो की बातचीत के अन्त मे एक नया दस्तावेज सामने आया जिसको कि बिल्कुल ठीक ही ऐतिहासिक ताशकद घोषणा कहा जा सकता है।

मुझे प्रधान मंत्री श्री लालवहादुर शास्त्री के भाषण के कुछ शब्द जो ताशकंद सम्मेलन के आरभ के समय उन्होंने कहे थे, खास तौर से याद आ रहे है। उन्होने कहा था—'हमारे ऊपर वहुत वड़ी जिम्मेदारी है । भारत प्रायद्वीप की आवादी साठ करोड़ की है—पूरी मानव जाति का पाँचवाँ हिस्सा। भारत और पाकिस्तान दोनो ही विकसित और समृद्ध हो—इसके लिए उन्हे शान्ति के साथ रहने की आदत डालनी पडेगी। श्री लालवहादुर शास्त्री ने कहा कि लगातार झगड़े और लडाइयो की स्थिति रहने से दोनो देशो की जनता को और भी ज्यादा मुश्किलो का सामना करना पड़ेगा। आपस मे जग करने के वदले आइये, हम गरीवी, रोग और जहालत के खिलाफ जग करे। दोनो देशो की साधारण जनता की समस्याएँ, उनकी आशाएँ और अभिलाषा एक है। वे झगड़ा और लडाई नही चाहते है। वे शान्ति और तरक्की चाहते है। उन्हे हथियार और गोला-वारूद नही चाहिए, वल्कि खाना, कपडा, और मकान चाहिए, अपनी जनता के लिए इन कामो को अजाम देने के लिए हमे इस सम्मेलन मे ठोस नतीजा हासिल करने की कोशिश करनी चाहिए।

भारत सरकार के प्रधान मत्री की नीति सम्वन्धी इस वयान की तुलना जव हम ताशकद मे हासिल आखिरी नतीजे के साथ करते है तो इससे हम देखते है कि भारतीय शिष्टमण्डल का और व्यक्तिगत रूप से श्री लालवहादुर शास्त्री का इस सम्मेलन की सफलता मे कितना वड़ा हिस्सा रहा।

हमे पूरा विश्वास है कि ताशकद घोषणा को अमल मे लाने मे भारत और पाकिस्तान को जनता को लाभ होगा। ताशकद घोषणा इस उपमहाद्वीप मे शान्ति स्थापित करती है। यह घोषणा पाकिस्तान और भारत के सम्वन्धो को सामान्य वनाती है जिन्होने यह प्रण किया है कि वल का इस्तेमाल नही करेंगे और शान्तिपूर्ण तरीको से आपसी झगडो को हल करेंगे और जिन्होने फौजी मुठभेड के कारण पैदा हुई अनेक महत्वपूर्ण समस्याओ को हल करने के उपाय निश्चित किये है।

प्यारे दोस्तो, वन्दूको का चलना वद हो जायेगा। आपके देश और पाकिस्तान के वीच अच्छे पडोसियो जैसे सम्वन्धो की फिर से स्थापना होगी और इससे दोनो देशो के जनगण लाभान्वित होगे। दोनो देशो ने साम्राज्यवादियो के खिलाफ सघर्ष किया था और उनके कितने ही लोग स्वाधीनता और स्वतत्रता की लडाई मे शहीद हुए थे। दोनो मे आपसी लडाई चलती रही तो इससे दोनो की ताकत नष्ट होगी और उससे लाभ सिर्फ उन लोगो को होगा जो राष्ट्रो मे झगड़ा चाहते है।

भारत और पाकिस्तान के सम्वन्धो का सामान्य होना उन नीतियो के अनुरूप है जिन्हे श्री जवाहरलाल नेहरू के आदेश के प्रति वफादार भारत ने चलाया था और चला रहा है। गुट-निरपेक्षता की नीति, शान्ति और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग को दृढ वनाने की वजह से भारत ने सभी शान्ति-प्रेमी देशो के दिलो मे वडी इज्जत हासिल की। उसी का फल है कि दुनियाँ के रगमच पर आपके देश को आज वह ऊँचा स्थान प्राप्त है जिसके कि आप पूरी तरह हकदार हैं।

हम जानते हैं कि नीति खुद जिन्दगी का तकाजा है। यह इस दृढ़ विश्वास का परिणाम है कि शान्ति और राष्ट्रीय स्वाधीनता कायम रहने पर ही वे सारे रचनात्मक काम सफलता के साथ पूरे किये जा सकते है जिनके ऊपर देश के मगल—कल्याण को आगे वढाना निर्भर है। और यह उन

लिण्डन बी० जानसन

नेहरू के योग्य उत्तराधिकारी

हमारे राष्ट्र को भारत के प्रधान मत्री श्री लालबहादुर शास्त्री के निधन का अत्यन्त शोक है। विश्व के विशालतम लोकतन्त्र के नेता के रूप मे, उन्होने अमेरिकावासियो के हृदयो मे एक विशिष्ट स्थान प्राप्त कर लिया था। ताशकद मे सफल वार्तालाप के उपरान्त उनके इस निधन से शान्ति और प्रगति-सम्बन्धी मानव जाति को आशाओ को भारी आघात पहुँचा है। प्रधान मत्री शास्त्री ने अपने कार्यकाल के १८ महीनो मे ही, भारतीय लोकतत्र के महान आदर्शो को बुलन्द कर अपने आपको पडित नेहरू का योग्य उतराधिकारी सिद्ध कर लिया। इस उच्च पद पर विनम्रता के साथ आसीन रहते हुए, उन्होने देश के सर्वमान्य नेता के रूप मे अपनी दृढता और बुद्धिमानी का पूर्ण परिचय दिया। आज विश्व उनके बिना सूना लग रहा है और हमे उनके परिवार और भारत की जनता के साथ हार्दिक सहानुभूति है।

डा० सम्पूर्णानंद

स्वर्गीय प्रधान मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री

श्री लालवहादुर शास्त्री का हृदयगति रुक जाने से देहान्त हुआ। उनका हृदय कमजोर था, पहिले भी वह आहत हो चुका था; ताशकन्द मे निश्चय ही उस पर वहुत जोर पडा, वह कभी भी जवाव दे सकता था, परन्तु ऐसा नही होने पाया। यदि समझौते की वातचीत वीच मे तय होने पर भी समझौते पर हस्ताक्षर न हो पाते तो न जाने क्या होता? युद्ध फिर छिड़ जाता या कुछ दिन के वाद दूसरी संधि परिषद् वैठती, कौन कह सकता है? परिषद् वैठती भी तो क्या परिणाम होता, यह वताना सम्भव नही है। इस समय रूस का हित भी भारत-पाक समझौते मे वधा था। समझौता न होने पर उसको क्या आघात पहुँचता, यह भी कहना कठिन है। परन्तु इन सव अटकल के लगाने की नौवत ही नही आयी। सव काम सुचारु रूप से हुआ, समझौता हो गया, लिखा गया, उभय पक्ष के हस्ताक्षर हुए, एक दूसरे के पास हस्ताक्षर-युक्त प्रति पहुँच गई। इस हर्षावसर के उपलक्ष मे रूस सरकार की ओर से रिसेप्शन हुआ, फिर राष्ट्रपति अयूब और प्रधान मंत्री शास्त्री ने एक दूसरे से 'खुदा हाफिज' कह कर विदा ली। सारा आवश्यक काम पूरा हो गया, और तब अन्तिम पटाक्षेप हुआ। जिस घड़ी की प्रतीक्षा थी, वह आ गई। शास्त्रीजी की इहलीला समाप्त हो गई। वह सदा के लिए सो गए। मनुष्य रचित नाटक को ऐसा कथानक कहाँ मिल सकता है?

महाभारत मे कहा है "क्षणं प्रज्वलित श्रेयो न च धूमायित चिरम्" वह लम्वा जीवन किस काम का जो मिट्टी को तेल की ढिवरी की भाँति धुएँ से घिरा टिमटिमा रहा हो? अल्पकालीन परन्तु प्रज्वलित जीवन कही अधिक श्रेयस्कर है। यो तो अपने वाल-वच्चो को सभी लोग प्यारे होते है, परन्तु जगत् मे जो कुछ कर जाता है, जिसके हाथो कोई ऐसा काम सम्पन्न हो जाता है, जिसमे लाखो-करोड़ो मनुष्यो को अपना कल्याण देख पड़ता है, उसी का जीना सच्चा जीना है। वह मर कर भी जीता रहता है।

लालवहादुर जी ने ६१ वर्ष की आयु मे शरीर छोड़ा। प्रधान मंत्री होने के पहले वे केन्द्र मे और उत्तर-प्रदेश मे कई विभागो मे मंत्री रह चुके थे। उनकी कार्यकुशलता सदैव श्लाघ्य रही, परन्तु उनके कामो मे कोई विशेषता, कोई विलक्षणता नहीं थी। उनके प्रसुप्त गुणो को प्रस्फुटित होने का अवसर तो प्रधान मंत्री वनने पर मिला। पिछली १९ महीने की अवधि ही उनके जीवन का वहुमूल्य कहिए, अमूल्य कहिए, अंग थी। वह पूर्णतया इसी जमाने में जिए, प्रज्वलित होकर जिए। कई टेढी

समस्याओ को सुलझाया। मैं उन सबका उल्लेख नही करता—केवल पाकिस्तान से युद्ध की चर्चा करता हूँ।

सफल और सबल नेतृत्व

देश की आत्मा को चीनी आक्रमण के समय मार्मिक पीडा थी। भारतीय सेना का गौरव क्षत-विक्षत हो गया था, किसी देशी को या विदेशी को यह भरोसा नही था कि भारत कभी अपनी राजसत्ता, राज्य की अखण्डता या आत्मसम्मान के लिए शस्त्र उठाएगा। हमारी अहिसा कायरता का पर्याय मान ली गयी थी। देश इस अपमान से तिलमिला रहा था। लालबहादुर जी को देश की इन भावनाओ का पता था, उनके लिए आदर था, स्वय इनके लिए गम्भीर स्थान था। पहले भी पाकिस्तान कि ओर से छेडछाड आरम्भ होते ही उन्होने जिस नीति को अपनाया उसने शत्रु और मित्र दोनो को चकित कर दिया, देश की आत्मा खिल उठी। बात की बात मे कोटि-कोटि नर-नारियो का आशीर्वाद उनको प्राप्त हो गया। उनके स्वर मे देश भर की भावनाओ की अभिव्यक्ति हो रही थी। उन्होने देश को वह दिया जो देश चाहता था और देश ने उनको अपना अथाह प्रेम और अटूट विश्वास अर्पित किया। भारतीय सेना का लुटा हुआ गौरव वापस आया। दुनिया ने जाना कि हमारी अहिसा के पीछे अदम्य साहस और शक्ति है। सारे भारत मे राष्ट्रीय भावना और एकता की लहर दौड गयी, त्याग और उत्साह का सागर उमड पडा और इस सारे नव जीवन का केन्द्र था श्री लालबहादुर शास्त्री का व्यक्तित्व। वह देश के सच्चे प्रतीक थे।

युद्ध की आग मे देश को झोकने के लिए बड़े नैतिक साहस की आवश्यकता होती है। जो सिपाही हताहत होते है उनके लिए तो दायित्व है ही, न जाने कितनी स्त्रियो के माथे का सिन्दूर पुँछ जाता है, न जाने कितने बच्चे अनाथ हो जाते है, न जाने कितने घर उजड जाते है और फिर गणतत्र मे यह आशका तो रहती ही है—

न गणस्याग्रतो गच्छेत् सिद्धे कार्ये सम फलम्।
यदि कार्य्यविपत्ति स्यात् मुखरस्तत्र हन्यते॥

यदि विजय हुई होती है तो उसका लाभ समान रूप से सबको होता है, यदि हार हुई तो नेता पर ही सारे दोप दिए जाते है,, वही मारा जाता है। इसीलिए यह कहा गया है. न गणस्याग्रतो गच्छेत्—गण के आगे नही चलना चाहिए। परन्तु किसी को तो यह कडवा प्याला पीना ही पडता है। इसी जगह तो सच्चे नेता की परख होती है। लालबहादुर ने प्याला पिया, गण का नेतृत्व किया। उनके सहकर्मी निश्चय ही कर्मनिष्ठ और देशप्रेमी लोग थे, परन्तु मुख्य दायित्व तो लालबहादुर जी का ही था।

उन्होने यह दिखला दिया कि यदि कोई भारत को छेडता हो जाय तो अहिसावादी भारत भी [illegible] सकता है, ईंट का जवाब पत्थर से दे सकता है। परन्तु युद्धकाल मे भी वह अपने आदर्श से नही [illegible]। उसकी दृष्टि शान्ति पर ही रहती है। इसका पूरा प्रमाण ताशकद मे देखने को मिला। जैसे कि

प्रधान मंत्री श्री कोसोजिन ने कहा है, समझौते का श्रेय—प्रधान श्रेय लालबहादुर जी को है। वे इस दृढ़ सकल्प से ताशकन्द गये थे कि भारत की अखण्डता और उसके आत्मसम्मान को अक्षुण्ण रखते हुए शान्ति के लिए हर सम्भव उपाय करेंगे, जहाँ तक हो सकेगा झुकेंगे। उनका संकल्प पूरा हुआ।

यही डेढ वर्ष का काल उनके जीवन का श्रेष्ठतम भाग, उसका प्रज्वलित अंग था। कुछ विरले भाग्यशाली ही इस नश्वर कलेवर को छोड़ पाते है।

जीवन का निर्माण

मै लालबहादुर जी के जीवन से थोड़ा बहुत उस समय से परिचित हूँ जब वाराणसी के दारानगर मुहल्ले मे अपने मामा स्वर्गीय मुन्शी रघुनाथप्रसाद के साथ रहते थे। मुंशी रघुनाथप्रसाद म्युनिसिपल बोर्ड मे काम करते थे। गगास्नान उनका नित्य का नियम था। काशी मे तैरने का बड़ा रिवाज है। बहुत कम ऐसे लड़के होगे जिनको तैरना न सिखाया जाता हो। दारानगर मे भी भले घरो के ऐसे कई लड़के थे जो गर्मियो मे प्रायः नित्य सायकाल मे गगाजी जाते थे। उसी समय लालबहादुर जी ने भी तैरना सीखा। उनके तैरने की तो चर्चा बहुत हुई है।

स्कूल की शिक्षा उन्होने हरिश्चन्द्र स्कूल मे ली। मै स्वयं उस स्कूल का छात्र और फिर अध्यापक रह चुका हूँ। उनके स्कूल के साथियो मे श्री अलगूराय शास्त्री और उद्योग मंत्री श्री त्रिभुवननारायणसिह है। स्कूल के बाद लालबहादुर जी ने अपनी उच्च शिक्षा काशी विद्यापीठ मे समाप्त की। उन दिनो वहाँ स्वर्गीय डाक्टर भगवानदास, स्व० आचार्य बीरबलसिह और श्रीप्रकाश अध्यापन कार्य करते थे। लालबहादुर जी दर्शन विभाग के विद्यार्थी थे। उनके सहपाठी श्री राजाराम जी आजकल विद्यापीठ के समाजशास्त्र कक्ष के अध्यक्ष है। उस समय के छात्रो मे लालबहादुर जी के पुराने साथी त्रिभुवननारायणसिह, श्री अलगूराय शास्त्री तथा कमलापति त्रिपाठी तथा स्व० हरिहरनाथ शास्त्री जैसे कई व्यक्तियो ने सार्वजनिक काम के क्षेत्र मे ख्याति पाई है। अन्तिम वर्ष मे मैने भी १९२३ मे लालबहादुर जी को कुछ दिनो तक पढाया था। विद्यापीठ मे स्नातक (ग्रेजुएट) को शास्त्री की उपाधि दी जाती है। इसी से परीक्षोत्तीर्ण होने पर श्री लालबहादुर को शास्त्री उपाधि मिली। अब तो वह एक प्रकार से उनके नाम का अग बन गयी है।

विद्यापीठ मे शिक्षा का माध्यम हिन्दी थी परन्तु अंग्रेजी भी पढाई जाती थी। लालबहादुर जी उर्दू भी अच्छी जानते थे। उन दिनो कायस्थ घरानो मे प्रायः सभी लड़को को उर्दू का थोड़ा ज्ञान कराया जाता था।

उनका मकान तो रामनगर में है जो बनारस राज्य की राजधानी के रूप में विख्यात था। अब यह वाराणसी जिले मे मिला दिया गया है। शिक्षा वाराणसी मे हुई परन्तु कार्यक्षेत्र इलाहाबाद रहा। विद्यापीठ के कई स्नातक जैसे श्री हरिहरनाथ, श्री अलगूराय और श्री राजाराम; लाला लाजपतराय की 'सर्वेण्ट्स आव दि पीपुल सोसायटी' मे सम्मिलित हुए। इनमे लालबहादुर जी भी थे। उन्होने पहले तो मेरठ, मुजफ्फरनगर मे हरिजन कार्य किया, फिर इलाहाबाद को अपना कार्यक्षेत्र बनाया।

वे धुन के धनी थे

उनके सावजनिक जीवन की घटनाग्रो का व्यौरा देने की ग्रावश्यकता नही है। उनको चर्चा समाचारपत्रो मे ग्रा ही गयी है। इतना ही कहना पर्याप्त है कि वे जिस काम मे लगते थे उनमे जी-जान से लगते थे। मुझे स्वतत्रताकाल के पहले चुनाव की याद ग्राती है। उत्तर प्रदेश की काग्रेस पार्टी का चुनाव कार्यालय लखनऊ मे था। पार्टी के नेता पतजी ने उसका सारा काम लालवहादुर जी को सौंप रक्खा था। उनके घर के लोग इलाहाबाद मे थे। एक दिन एक विश्वसनीय सूत्र से मुझे पता लगा कि लालवहादुर जी कई कई दिन तक चाय के कुछ प्यालो ग्रौर डबल रोटी के कुछ टुकडो पर रह जाते है। इधर किसी का ध्यान भी नही गया। उसी वीच पत जी बनारस ग्राए थे, तो मैने उनसे जिक्र किया, उन्होने लखनऊ जाकर कुछ व्यवस्था की।

ग्रजातशत्रु तो स्यात् कोई नही होता, सार्वजनिक जीवन मे तो यह ग्रसम्भव है। जो सवको प्रसन्न करना चाहेगा, वह लोकहित का हनन कर देगा।

लालवहादुर जी के भी विरोधी थे; ऐसे लोग जो उनसे बुरा मानते थे वह भी उनको पहचानते थे, उनकी चालो से भली भाँति परिचित थे। परन्तु ग्रपने मुँह से ऐसे लोगो की भी निन्दा नही करते फिरते थे। लोकहित की दृष्टि से किसी को भले ही ठेस पहुँचानी पड़ी हो परन्तु उन्होने व्यवहार मे कभी कटुता नही ग्राने दी।

सम्भवत मुझसे यह ग्राशा की जाती होगी कि मै उनके सम्वन्ध मे सस्मरण सुनाऊँ। सस्मरण दो प्रकार के है, एक तो राजनीतिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाले। उनमे से कुछ के विषय सोये विवादो को जगाने वाले भी हो सकते है। दूसरे सस्मरण उनके विद्यार्थी तथा घरेलू जीवन से सम्बन्ध रखते है। वे वहुत ही हँसमुख व्यक्ति थे। हँसना ग्रौर हँसाना जानते थे। ये सस्मरण इस समय ही चित्तावस्था (मूड) के ग्रनुकूल नही लगते। इसलिए मै सस्मरणो की चर्चा नही करता।

लालवहादुर जी का पाचभौतिक शरीर तो ग्रव नही रहा, परन्तु उनका यश.काय ग्रब भी हमारे वीच मे है, हमारे ग्रादर ग्रौर स्नेह का भाजन है। जब तक भारत मे ऐसे व्यक्ति जन्म लेते रहेगे, जव तक भारतवासी ऐसे लोगो की गाथाग्रो से स्फूर्ति लेते रहेगे, तब तक इस देश का भविष्य निश्चय ही उज्ज्वल रहेगा।

●

शास्त्री जी के नेतृत्व ने देश को नयी निष्ठा और नया विश्वास दिया

स्वर्गीय श्री लालबहादुर शास्त्री शांति की खोज को कभी नही छोड़ते थे और "यह बड़ी हृदय-विदारक बात है कि हमने शास्त्री जी को उनके शाति-प्रयत्न मे सफल होने के तुरन्त बाद ही खो दिया है।"

हमारे प्रधान मत्री श्री लालबहादुर शास्त्री के आकस्मिक निधन का समाचार सुनकर मुझे गहरा दुःख हुआ। भारतीय सस्कृति मे जो कुछ भी श्रेष्ठ और अभिजात है, शास्त्री जी उसके सच्चे प्रतीक थे। मानव प्रकृति की स्वाभाविक अच्छाई मे उनकी दृढ आस्था थी। अपनी इसी आधारभूत विशेषता के कारण वह काग्रेस दल के मामलो मे एक समन्वयवादी और समझौतावादी की भूमिका को प्रभावशाली रूप से निभा सके थे।

"अठारह माह पूर्व जब शास्त्री जी प्रधान मत्री बने तो देश के सामने असख्य समस्याएँ थी। चीन और पाकिस्तान की ओर से हमारी स्वतन्त्रता और प्रादेशिक अखण्डता को चुनौती दी जा रही थी। उन्होने जिस बुद्धिमत्ता, साहस और दृढता के साथ इन समस्याओ का सामना किया, उससे हमारे देश का मान बढा है। उनके योग्य और गतिशील नेतृत्व मे जनता एक नयी निष्ठा और उद्देश्य-प्रियता से प्रेरित हुई।

जीवन भर उनकी अहिसा मे आस्था रही। फिर भी जब पाकिस्तान ने हमारी पवित्र भूमि पर आक्रमण किया और हमारी स्वतत्रता और प्रादेशिक अखण्डता को खतरा हो गया तो क्षण भर भी हिचकिचा न कर उन्होने हमारी सेनाओ को आक्रमणकारियो को निकाल बाहर करने का आदेश दिया। शास्त्री जी के योग्य नेतृत्व को ही इस बात का मुख्य श्रेय है कि सकट की उस घड़ी में समूचा देश एक होकर उठ खड़ा हुआ और पाकिस्तान की सैन्य-शक्ति पर ऐसे प्रखर प्रहार किये।

"पाकिस्तान की ओर से उकसावो के बावजूद शास्त्री जी ने कभी शाति की खोज न छोड़ी। इसी खोज मे वह ताशकंद गये और अन्ततः अपने शाति-प्रयत्न मे सफल हुए। न केवल हमारे, वरन् सारे संसार के लिए यह बड़ी हृदय-विदारक बात है कि हमने शास्त्री जी को उनके शांति-प्रयत्न मे सफल होने के तुरन्त बाद ही खो दिया है।

शास्त्री जी शांति-प्रेमी थे और उनका सारा जीवन देश की सेवा के लिए, जिसे वे अपने सम्पूर्ण हृदय से प्यार करते थे, अर्पित था। भारत-पाकिस्तान उपमहाद्वीप में शांति स्थापना के लिए सन्नद्ध रहते हुए ही उनका देहावसान हुआ है। उनके प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि यही हो सकती है कि अपने व्यक्तिगत जीवन मे हम उनका अनुसरण करे और वह शाति सुनिश्चित बनाये, जिसके लिए वह जिये और मरे।

●

उज्ज्वलसिंह

एक मूल्यवान सपूत

भारत माता ने अपना एक अत्यन्त वीर और मूल्यवान सपूत खो दिया है। केवल डेढ वर्ष पहले ही श्री लालबहादुर शास्त्री ने देश के प्रधान मत्रीपद की भारी जिम्मेदारी को अपने ऊपर लिया और उन्होने देश के कार्यो का अत्यधिक योग्यता और कुशलता से सचालन किया उनमे विनम्रता, चारित्रिक दृढता, अच्छे कार्यो मे स्वय पहल करने जैसे सर्वोतम मानवीय गुण थे। वे दयालु स्वभाव के थे, पर अपने इरादे के पक्के भी थे। वे शान्ति के पुजारी थे। उन्होने ससार के सब देशो के बीच सद्भाव बढाने और अपने देश के लोगो की एकता को दृढ़ करने का निरन्तर प्रयास किया। विश्वशान्ति को दृढ बनाने के लिए ही वे जिए और इसी कार्य मे रत उन्होने अन्तिम सास ली। ताशकन्द वार्ता की सफलता उनकी सद्भावना और शान्ति बनाए रखने की अदम्य इच्छा का उज्ज्वल प्रतीक रहेगी। आज सारा ससार उनकी मृत्यु पर शोकमग्न है। भारत के लोग तो मानो अथाह शोकसागर मे डूब गए है। पजाब के लोग अपने इस वीर नेता के निधन पर अत्यन्त शोक-सतप्त है। देश को आसानी से फिर ऐसे नेता के दर्शन नही होगे।

श्रीमन्नारायण

आदरणीय शास्त्री जी

आदरणीय लालबहादुर जी शास्त्री का नाम भारत के इतिहास मे अमर रहेगा। राष्ट्र-नेता पंडित जवाहरलालजी नेहरु के बाद उन्होंने जिस कुशलता, समझदारी व धैर्य से बहुत कठिन परिस्थितियो मे देश की बागडोर सँभाली, वह भारत के लोग बहुत वर्षों तक याद रखेगे। स्वास्थ्य अच्छा न होते हुए भी उन्होंने जिस प्रकार दिन-रात देश की सेवा मे अपना तन और मन लीन किया, वह सचमुच अनुकरणीय रहेगा।

स्वर्गीय शास्त्री जी मूलत. शान्तिप्रिय नेता थे और और उनकी सदा यही इच्छा रही थी कि सब कठिन संघर्ष कटुता के बिना हल हो जाये। किन्तु जब गत वर्ष पाकिस्तान से संघर्ष छिड़ गया तब उन्होंने बड़ी हिम्मत व शौर्य मे काम लिया और देश के असख्य नवयुवको और भारतीय फौज के जवानो को अद्वितीय प्रेरणा व उत्साह प्रदान किया। लोगो को आश्चर्य हुआ कि सीधे-सादे व शान्तिप्रिय लालबहादुर जी ने इस गभीर वह संघर्षपूर्ण परिस्थिति मे किस तरह लोहे की तरह शक्ति व साहस दिखलाया। शास्त्री जी की यही विशेषता थी कि वे एक तरफ फूल की पखडी जैसे कोमल थे और दूसरी तरफ इस्पात की तरह मजबूत और हिम्मतवान।

ताशकन्द घोषणा की वजह से शास्त्री जी के प्रति संसार भर मे अपूर्व आदर व प्रशंसा प्रकट हुई। शास्त्री जी ने अपनी पूरी शक्ति लगाकर भारत व पाकिस्तान की समस्याओं को शांतिपूर्ण ढंग से हल करने का प्रयत्न किया। उसी प्रयत्न मे वे स्वय भगवान के चरणो मे बलिदान भी हो गये। हम आशा करते है कि यह ताशकन्द भावना कायम रहेगी और इसके द्वारा भारत और पाकिस्तान के सम्बन्ध सद्भावनापूर्ण बन सकेगे। पाकिस्तान का वर्तमान रवैया इस समय उत्साह देने वाला नही है। फिर भी हमारी यह श्रद्धा है कि अंत मे स्वर्गीय शास्त्री जी का अपूर्व बलिदान व्यर्थ नहीं जावेगा।

•

आई० ए० बेनेदोक्तोव,

शांति का महामानव

विश्वास करना वड़ा कठिन है कि श्री लालवहादुर शास्त्री अव हमारे वीच नही रहे। इस दुःखान्त घटना के कुछ ही देर पहले वह भले-चगे थे—सवो से प्यारपूर्वक हाथ मिलाते, हँसते, मजाक करते दीखे थे। सोवियत सघ की मत्रिपरिषद् के अध्यक्ष अलेक्सेई कोसिजिन से जव वह वार्तालाप कर रहे थे, तव ताशकद मे भी मुझे उनसे मिलने का सुअवसर प्राप्त हुआ था। उस समय हमें क्या पता था कि इस नेकदिल और महान भारतीय का अन्त इतना करीव है। इसीलिए इस श्रेष्ठ भारतीय नेता की मृत्यु ने हम विलकुल स्तम्भित रह गये और हमे गहरा सदमा पहुँचा। अपने भारतीय भाइयों के दु ख मे सोवियत जनता भी साझेदार है। महान शोक की इस घडी मे वह उनके लिए अपनी गहरी सहानुभूति प्रकट करती है।

यह दु ख और भी गहरा इसलिए हो उठा है कि ताशकद घोषणा पर हस्ताक्षर करने के कुछ ही घटो वाद जिसने दो पड़ौसी एशियाई देशो के वीच मैत्री-स्थिति निर्माण करने का आधार तैयार किया, उनकी मृत्यु हो गयी। हमे उनके अन्तिम मर्मस्पर्शी शव्द अच्छी तरह याद हैं—"हमने एक अच्छा समझौता कर डाला है।" वड़े ही दु ख की वात है कि जव भारत और पाकिस्तान के सम्वन्धों मे एक नया अध्याय खुलने वाला है तो वह उसे देखने के लिए हमारे वीच नही रहे। फिर भी उन्हे यह सन्तोष अवश्य मिला कि उन्होने शान्ति के लिए अथक परिश्रम किया और उसके लिए एक समुचित वातावरण का निर्माण किया।

श्री जवाहरलाल नेहरू के अन्यतम और साथी के रूप मे सोवियत जनता उनसे परिचित थी। वह वहुत ही कम उम्र से भारत के स्वाधीनता-सग्राम मे शामिल हुए थे और उस सिलसिले मे उन्होने अनेक कष्टो का सामना किया और वलिदान किये। इस अपराध के लिए औपनिवैशिक अधिकारियो ने उन्हे कई वार कारावास का दड दिया, किन्तु उन्होने कभी हार न मानी। इसी स्वातन्त्र्य-सग्राम के दरम्यान इलाहावाद मे, वे स्वर्गीय श्री जवाहरलाल नेहरू के निकट सम्पर्क मे आये। उन्होने अपने प्रान्त उत्तर प्रदेश मे स्वतत्रता के सगठन मे सारी शक्ति लगा दी। इस काम मे उन्होने अपनी पूरी प्रतिभा का प्रदर्शन किया। जव देश स्वतत्र हुआ तो उनके कधो पर नये एव और भी भारी उत्तरदायित्व आ पडे। श्री जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व मे काम करते हुए उन्होने अपने नव स्वतत्र राज्य को सुदृढ वनाने के लिए प्रयास किया। श्री नेहरू की मृत्यु के वाद उनके कधो पर भारी उत्तरदायित्व आ पडा। उन्हे आधुनिक भारत के निर्माता और शिल्पी का उत्तराधिकारी चुना गया। यह उनकी महान नेतृत्व-क्षमता और राजनीतिक वुद्धिमत्ता का सम्मान था।

भारत जैसे देश के प्रधान मंत्री के रूप मे उन्होने अपनी राजनीतिज्ञता का परिचय दिय
श्री जवाहरलाल नेहरू की नीतियो पर चलते रह कर उन्होने शान्ति और अन्तर्राष्ट्रीय सहयो
ध्येय के लिए महान योगदान किया।

श्री शास्त्री ने अपनी मातृभूमि की प्रगति-समृद्धि के लिए अडिग रह कर काम किया। उन्होने उस महानाश को स्वय अपनी आँखो देखा था जो इस प्राचीन और गौरवशाली देश मे औपनिवेशिक शासन ने किया था। वह अच्छी तरह जानते थे कि औपनिवेशिक व्यवस्था के अन्तर्गत इस देश को कितने साघातिक आघात लगे थे, उसकी अर्थव्यवस्था नष्ट-भ्रष्ट थी, उद्योग-धन्धो का कही पता नही था। स्वाधीनता की प्राप्ति के वाद भारतीय नेताओ के समक्ष अपने देश की अर्थ-व्यवस्था को पुनर्गठित करने का कठिन कर्त्तव्य उपस्थित था। देश की अर्थव्यवस्था को विकसित करने और जनता की उन्नति के आधार के रूप मे श्री जवाहरलाल नेहरू ने भारत के उद्योगीकरण की योजना तैयार की। आजादी को सुदृढ करने के कठिन कर्तव्य की पूर्ति मे श्री शास्त्री ने श्री नेहरू की सहायता की। बाद मे, जब वे भारत के प्रधान मत्री बने तो श्री नेहरू की नीतियो पर चलते रहे।

श्री शास्त्री को इस बात पर गहरा विश्वास था कि विश्व-शान्ति की स्थिति मे ही भारत अपनी अर्थव्यवस्था का विकास कर सकता है और औपनिवेशिक व्यवस्था की दुःखपूर्ण विरासतो का खात्मा कर सकता है।

उन्होने महसूस किया कि शस्त्रास्त्रों की होड़ से दुनिया के संसाधनों का क्षय होता है जिनका दूसरी स्थिति मे एशिया और अफ्रीका के नवोदित राष्ट्रो की अर्थव्यवस्था को विकसित करने के लिए बड़ा ही लाभदायक उपयोग किया जा सकता है। विश्व-राजनेता के रूप मे वे महसूस करते थे कि विश्वयुद्ध कितना विनाशकारी होगा। श्री शास्त्री शान्ति का समर्थन करते थे और इसमे उनका मानवोचित दृष्टिकोण गहरे रूप से निहित था। उन्होने आम और पूर्ण निरस्त्रीकरण का समर्थन किया और तापनाभिकीय हथियारो के फैलाव का विरोध किया। यद्यपि भारत मे तापनाभिकीय हथियारो के उत्पादन की क्षमता है पर श्री शास्त्री के नेतृत्व मे भारत सरकार ने इस रास्ते को अपनाने से इन्कार किया। दिवगत प्रधान मत्री के इस काम को सारी दुनिया ने प्रशसा की। गुटनिरपेक्षता और विभिन्न समाज-व्यवस्थाओ वाले राज्यो के बीच शान्तिपूर्ण सहजीवन की नीति को जारी रखने के लिए सोवियत जनता श्री शास्त्री की प्रशसा करती है। वे गुटनिरपेक्षता को भारत की वैदेशिक नीति का आधार समझते थे जो एशिया के इस महान देश के लिए एकमात्र बुद्धिमत्तापूर्ण मार्ग है।

श्री शास्त्री को इसलिए प्रशसा हुई कि उन्होने उपनिवेशवाद से लड़ने वाली जनता के ध्येय का समर्थन किया। वह अपने व्यक्तिगत अनुभवो से जानते थे कि औपनिवेशिक शासन मे जनता की क्या हालत होती है—उन्होने स्वय उस शासन के कड़वे फलो को चखा था। उन्होने कहा था, "मुझे कभी-कभी हैरानी होती है कि आज भी कुछ औपनिवेशिक देश अपने उपनिवेशो को छोड़ना नही चाहते। मेरी राय में, इन शक्तियो को परिस्थिति की वास्तविकता को भूलना नही चाहिए।

उन्हें दुनिया की राय पर ध्यान देना चाहिये जो औपनिवेशिक गुलामी में आज भी शासित सभी देशों के स्वातन्त्र्य आन्दोलन का सुदृढ़ समर्थन करती है। यह बिल्कुल आवश्यक है कि उपनिवेशों को जल्द से जल्द आजाद किया जाये। यद्यपि बहुत से देशों ने अपनी आजादी हासिल कर ली है, किन्तु उपनिवेशवाद अभी भी जिन्दा है। इसे धरती से मिटाना होगा ताकि हर जगह आदमी स्वतंत्र होकर और अपनी राष्ट्रीय प्रतिष्ठा के साथ जीवन बिता सके।"

मास्को मे अलेक्सेई कोसिजिन के साथ जिस संयुक्त विज्ञप्ति पर उन्होंने हस्ताक्षर किये थे, उसमें भी इन्हीं भावनाओं की अभिव्यक्ति है। "सोवियत संघ और भारत जहाँ भी अब तक औपनिवेशिक शासन कायम है, उसका पूरी तरह खात्मा चाहता है। वे उपनिवेशवाद और उपनिवेशवाद के सभी रूपों का विरोध करते हैं और एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमरीका के जनगण का हृदय से समर्थन करते हैं। जो अपनी आजादी और स्वतंत्रता हासिल करने एवं उसे सुदृढ़ बनाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। दोनों पक्ष १९६० मे संयुक्त राष्ट्रसंघ की बृहत् सभा द्वारा स्वीकृत औपनिवेशिक देशों और जनगण को आजाद करने के घोषणापत्र का जोरदार समर्थन करते हैं। उनका यह एकमात्र विश्वास है कि अपनी राष्ट्रीय आजादी और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने वाले जनगण को अपनी इच्छा के अनुसार अपने भाग्य के निर्णय करने का अधिकार अवश्य मिलना चाहिए।"

श्री शास्त्री सोवियत संघ के एक महान दोस्त थे। जैसा कि सोवियत संघ को सर्वोच्च सोवियत के अध्यक्षमण्डल और मंत्रिपरिषद् ने कहा है—"उन्होंने सोवियत संघ और भारत के बीच मैत्री सम्बन्धों और फलप्रद सहयोग को और भी विकसित करने के लिए अत्यधिक योगदान किया।'

मई १९६५ मे उन्होंने पहली बार सोवियत संघ की यात्रा की थी। हमारी जनता ने उनका बड़ा जोरदार स्वागत किया। वह जहाँ भी गये, महान भारतीय जनता के नेता और प्रतिनिधि के रूप मे उनका अभिनन्दन किया गया। यह मैत्री की यात्रा थी, उस परम्परा को आगे बढ़ाना था, जिसे महान नेहरू ने स्थापित किया था। सोवियत सरकार ने मास्को में उनके सम्मान में एक भोज-समारोह आयोजित किया था। उस अवसर पर भाषण करते हुए उन्होंने कहा था—"मेरे पूर्व प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू पर भारत की जनता के प्रति सोवियत संघ की जनता की गहन मैत्री की भावना की बहुत ही गहरी छाप पड़ गयी थी। और उसे वह सदा याद रखते थे।"

श्री जवाहरलाल नेहरू की तरह श्री शास्त्री हमारे दोनों देशों के बीच मैत्री के महत्व को समझते थे। उन्होंने स्वयं कहा था—'हमारे देश की आजादी के तत्काल बाद जिन देशों से हमने सर्वी राजनीतिक सम्बन्ध स्थापित किया था, सोवियत संघ उनमें से एक पहला देश था। हमने इस विश्वास से वैसा किया था कि हमारे दोनों जन देशों के बीच मैत्री सम्बन्धों को विकसित करना न सिर्फ हमारे दोनों जनगण के हित मे था, बल्कि सारी दुनियाँ मे शान्ति के वृहत् हित में भी था।' मास्को के सदन में क्रेमलिन प्रासाद मे सोवियत-भारत मैत्री सभा मे भाषण करते हुए उन्होंने कहा था—"……… भारत की जनता सोवियत संघ की जनता को बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखती है और हमारे बीच की इस गहरी और बढ़ती हुई मैत्री को सजो कर रखती है। भारत और सोवियत संघ की जनता इसे दिखा चुकी

है कि वे सच्चे सुदृढ़ और अटूट मैत्री के सम्बन्धों में बँधे हैं। हमारे आपसी सम्बन्धों में किसी तात्कालिक जरूरतो पर आधारित नही है बल्कि इस गहरे विश्वास पर आधारित है कि शान्ति के क्षेत्र का विस्तार करके और उसे बढ़ा करके ही मानवता के वृहत् हितो की सेवा की जा सकती है।'' ... ... ''भारत की सरकार और जनता को इस बात पर खुशी है कि हमारे दोनो देशो के बीच सदा से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध कायम रहे है। उन्हे विश्वास है कि इस तरह के सम्बन्ध सवदा सुदृढ़ होते रहेगे।''

श्री शास्त्री द्वारा सोवियत सघ को यात्रा से हमारे दोनो पड़ौसी देशो के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध और भी सुदृढ़ हुए। इससे सोवियत और भारतीय जनता के बीच सद्भावना मे और भी वृद्धि हुई। हाल में हमने अपनी दोनो सरकारो के बीच बोकारो इस्पात कारखाने के निर्माण सम्बन्ध मे समझौता होते देखा, दिल्ली मे रूसी भाषा के अध्ययन के लिए इ स्टिट्यूट की स्थापना हुई, सोवियत सघ और भारत के बीच नए व्यापारिक समझौते पर हस्ताक्षर हुए, सार्वजनिक जीवन मे सुप्रसिद्ध व्यक्तियो, ससत्सदस्यो एव सस्कृति और विज्ञान आदि के क्षेत्रो मे काम करने वाले लोगो के अनेक शिष्टमडलो का आदान-प्रदान हुआ। श्री शास्त्री ने भारत और सोवियत सघ के बीच मैत्री-सम्बन्धो को विस्तृत करने मे गहरी दिलचस्पी ली। शान्ति, निरस्त्रीकरण, उपनिवेशवाद और नस्ली भेदभाव जैसे सवालो पर उन्होने भारत और सोवियत सघ के बीच विचार-साम्य पर जोर दिया। उनके शब्द आज भी मेरे कानो मे गूँज रहे है — ''हमारे दोनों देशो के बीच जो निकट सहयोग और सद्भाव है, जो विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओ पर हमारे दृष्टिकोण मे स्पष्ट है, वे शान्ति के लिए हम दोनो की समान खोज और युद्ध को समाप्त करने को हमारी समान इच्छा पर आधारित है। इसीलिए हमारे दोनो देश अन्तर्राष्ट्रीय मतभेदो के अन्त के लिए शक्ति के प्रयोग के बिलकुल विरुद्ध है। इसी तरह हम दोनो को यही राय है कि यदि मानव जाति को सम्पूर्ण विनाश से बचाना है तो जल्द से जल्द आम और पूर्ण निरस्त्रीकरण हासिल करना आवश्यक है।''

श्री शास्त्री हृदय से एशिया मे शान्ति चाहते थे। उन्होने वियतनाम मे अमरीकी बमबारी रोकने का आह्वान किया। इसे उन्होने उस युद्धपीड़ित देश मे युद्ध बन्द करने की प्रारम्भिक शर्त बताया। उनके निम्नलिखित शब्दो मे सारी दुनिया के करोड़ो लोगों की आवाज है—

''हमे वियतनाम की स्थिति से बड़ी चिन्ता है क्योकि उससे शान्ति के ध्येय पर बहुत बड़ा खतरा आ पहुँचा है। हम चाहते है कि वियतनाम मे फिर से शान्ति हो। वहाँ सभी तरह का बाहरी हस्तक्षेप बन्द हो जाना चाहिए। वियतनाम की जनता को स्वतन्त्रता और प्रतिष्ठापूर्वक जीवन बिताने का मौका मिलना चाहिए।''

शान्ति की इसी अदम्य भावना और अपने देश के समक्ष उपस्थित कर्त्तव्यों को गहरी समझदारी के कारण श्री शास्त्री ने ताशकन्द आकर राष्ट्रपति अयूब खाँ से मिलने और भारत तथा पाकिस्तान के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्धो की स्थापना का रास्ता ढूँढने के लिए हमारे प्रधान मन्त्री का निमन्त्रण स्वीकार किया।

उस घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करने से उन्हें काफी सन्तोष हुआ। ताशकन्द मे एक प्रेस सम्मेलन मे उन्होने उस ऐतिहासिक दस्तावेज के महत्वपूर्ण परिणाम पर प्रकाश डाला। उन्होने कहा-

सबसे प्रथम और महत्वपूर्ण परिणाम यह है कि सही मायनो में शान्तिपूर्ण सम्बन्धो को फिर से स्थापित करने के लिए एक ठोस कदम उठाया गया है। उन्होने आगे कहा - दूसरा परिणाम यह है कि ताशकन्द वार्ता से एशिया और सारी दुनियाँ मे शान्ति को दृढ करने मे मदद होगी। ताशकन्द बैठक की समाप्ति के बाद अलेक्सेई कोसिजिन ने कहा—"ताशकन्द घोषणापत्र भारत और पाकिस्तान के सम्बन्धो के विकास मे एक नई मजिल है, उससे फौजी सघष की समाप्ति होती है, उससे दो बड़ी एशियाई ताकतो मे सामान्य सम्बन्धो मे बाधक कठिनाइयो को दूर करने मे मदद होती है, और हमारी राय मे उससे एशिया के उस अत्यधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र मे शान्ति की स्थिति तैयार करने की सच्ची नीव पड़ती है।"

श्री लालबहादुर शास्त्री अब हमारे बीच नही रहे। लेकिन हम उन्हे याद करते रहेगे, लाखो भारतीयो और सोवियत जनता उन्हे याद करती रहेगी। उनके अच्छे कामो, रहमदिली और सहिष्णुता की भावना के लिए हम उन्हे सदा याद करेगे। अपनी विनम्रता और सादगी के कारण हम सबो के बीच, जिन्हे उनके सम्पर्क मे आने का मौका मिला—वे बहुत प्रिय हो गये थे। सोवियत सघ की जनता उनकी स्मृति को अपने हृदय मे सँजोकर रखेगी। वह इस युग के एक महान व्यक्ति के रूप मे उन्हे याद करेगी।

●

सुनोल शास्त्री

मेरे पूज्य पिताजी

हम सब पूजनोय पिता श्रो लालबहादुर जी शास्त्री को बाबूजी कहकर पुकारते है। अपने पूज्य पिताजी के सम्बन्ध मे मै कुछ लिखने की चेष्टा कर रहा हूँ; पर एक विद्यार्थी पुत्र के लिए लिखने का प्रयास करना कोई साधारण बात नही है। पर जो भी हो, मैने कुछ लिखने की हिम्मत की है। आशा है पाठक-गण विचार करेगे।

पूज्य बाबूजी के सम्बन्ध मे बहुत कुछ लिखा जायेगा—कभी उनके व्यक्तित्व के सम्बन्ध मे, कभी उनकी राजनीति के सम्बन्ध मे, कभी उनकी विद्वत्ता के बारे मे तो कभी उनकी सादगी और सरलता तथा सद्व्यवहार के सम्बन्ध मे। कही किसी ने उनके कुशल राजनीतिक सगठनकर्ता होने के गुणो की भूरि-भूरि प्रशसा की है, कही किसी ने उनको बहुत कुशल एडमिनिस्ट्रेटर (प्रशासक) बताया है तो कही कुछ लेखको ने बाबूजी की ईमानदारी के गुणो का जिक्र किया है। कही लेखको ने उनकी अत्यन्त परिश्रमी होने व उनके असीमित काग्रेस जनो के सम्पर्क को उनकी सफलता का राज बताया है। उनके कुछ पुराने साथियो ने उनके विद्यार्थी जीवन की गरीबी के चित्रो को शब्दो में बाँध कर उनकी चरित्र-प्रतिभा का वर्णन किया है। पर इन सब परिस्थितियो के उतार-चढाव की घटनाओ के बीच उनके महत्वपूर्ण घरेलू जीवन की झाँकी को प्रस्तुत करने का अधिकारी मुझसे अधिक हो कौन सकता है, जो उनको गोद मे खेल कर इतना बड़ा हुआ हो और जिसे राजनीतिक उतार-चढाव बदलते हुए वातावरण मे बाबूजी का प्यार-दुलार का सौभाग्य प्राप्त हुआ हो। इसी भावना से प्रेरित होकर मै पूज्य बाबूजी के बारे मे जितना समझ सका हूँ उसे इस छोटे से लेख मे लिख रहा हूँ। मै आशा करता हूँ कि पाठकगण इसे पसन्द करेगे। अपनी छोटी उम्र के कारण याद करने पर भी मुझे सन् १९५६ के पूर्व की घटनाओ की याद नही आती, पर उसके बाद के ही जीवन का जिक्र मैं कर रहा हूँ।

पूज्य बाबूजी चाहे वे कितनी ही उलझनो से भरे क्यों न हो, पर अपने राजकीय कामो से निबट कर जब हम लोगो के बीच आते है तब उन समस्त उलझनो या कठिनाइयो का भाव उनमे लेश-मात्र भी नही रहता। कठिन से कठिन परिस्थितियों में मैने उन्हे सदा ही हम सब भाई-बहनो के पास बैठ कर हमारे अध्ययन, हमारे खेलो, हम सबके मनोविनोद के सम्बन्ध में बात करते पाया है। वे हम सब लोगो के बीच बैठ कर हमारे स्कूल और अध्ययन सम्बन्धी बातें बड़े चाव से सुनते है। बात-बात मे हम लोगो से प्रश्न भी करते रहते है तथा अपने विद्यार्थी जीवन में उन्होने कठिन परिस्थितियो मे अवसर आने पर किस प्रकार व्यवहार किया है उनके बारे मे भी वे हमे बताते रहते है। पर उनके व्यस्त

दैनिक जोवन के कारण ऐसी बैठकें अधिक समय तक नहीं चल पातो, किन्तु फिर भी बाबूजी का यह नियम-सा है कि जब कभी उन्हे समय मिलता है वे हमारे बीच बैठ कर हमारी मीठो पर उल्टी-सीधी बातो को भी ध्यान से सुनते है, हमे समझाने का प्रयत्न करते और हमे बुनियादी कठिनाइयो से सघर्ष मे सफलता प्राप्त करने की युक्ति बताते है।

बाबूजी चाहे मुझसे बाते कर रहे हो या मेरे बड़े भाई हरि भैया या अनिल भाई साहब या मेरे छोटे भ्राता अशोक से, वे हमे बहुत मिल-जुलकर तथा हँस-हँसकर बाते करते है। घर मे वे बुजुर्ग-मात्र रहते है और हम सब कुरेद कुरेद कर उनसे राजनीतिक व सामाजिक मामलो पर बातचीत करते अपनी बचकानी दलील देकर उनसे बहस भी करते है। पर वे अत्यन्त शात मुद्रा मे हमारी गलत दलीलो को काटते है। हम सब उनको अपने साथ बैडमिटन अथवा अन्य खेल खेलने को राजी करते, लेकिन बाबूजी जितनी देर भी हम सब के साथ रहते तब न उनको हमारा बातो से ऊब होती, न कभी वे झुँझलाते है। उन्हे सभी बालको से स्नेह है। चाहे वे घर के हो अथवा बाहर के। यही कारण है कि वे बालको के साथ खेलने को बहुत अधिक पसन्द करते है, हालाकि बाबूजो कोई भी मशविरा नसीहत के रूप मे देने के आदी नहो हैं, किन्तु अवसर आने पर सादा जीवन तथा उच्च विचार ग्रहण करने को किसो न किसी रूप मे सीख देने से कभी नही चूकते। अपने दैनिक जोवन मे बाबूजो कुछ ऐसे काम करते है जो हम सब घर वालो के लिए बहुत ही शिक्षाप्रद होते है। अगर घर मे किसी जगह कोई पेन या कागज गिरा मिलता है तो उसको उचित स्थान पर स्वय रख देते हैं। अगर किसी कमरे मे बिजली या पखा बेकार चल रहा हो तो बगैर किसी से कुछ कहे उसे बुझा देते है। देखने वाले यह महसूस करते है कि उनको यह काम पहले ही कर देना चाहिए था।

बाबूजो बहुत ही स्वल्पाहारी है। आलू उनका प्रिय भोजन है। वे इसके कई अलग-अलग व्यजन बड़े चाव से खाते है। डबलरोटी के टुकड़े सब्जो के साथ बड़े चाव से खाते हैं। जबसे खाद्य की कमी हुई है चावल बिल्कुल छोड़ दिया है—यहाँ तक कि परिवार वालो को भी चावल न खाने के लिए मजबूर कर दिया है। दोपहर और शाम के भोजन मे कोई विशेष अन्तर नही रहता। एक रसेदार और दो सूखी सब्जियाँ तथा दो डबलरोटी के टुकडे यही उनका भोजन है। दिन मे एक-एक प्याला चाय कई बार पीते है और रात को सोने से पहले एक प्याला दूध पीते है। ऐसा प्रतीत होता है कि भोजन की नही, बल्कि आत्मा की शक्ति उनसे इतना कठिन काम लेती है।

खेल उनके विचार से राष्ट्रीय चरित्र निर्माण के लिए महत्वपूर्ण साधन है। उनकी राय मे सभी खेल, खेल के विचार से ही खेलना चाहिए और जिस प्रकार परस्पर टीमे अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सघर्ष करते हुए भी आखिर मे एक दूसरे से स्नेहपूर्ण ढग से मिलती है वैसा ही राजनीति के खिलाड़ियों को भी लक्ष्य रखना चाहिए। प्रजातत्र द्वारा सचालित देश के नव निर्माण के लिए बाबूजी इसी भावना का साकार रूप देखने के लिए व्यस्त रहते हैं। बाबूजी शान्तिप्रिय वातावरण को मानव की प्रगति के लिए सबसे पहली शर्त मानते है। उनका कहना है कि लड़ते-झगड़ते रहने से क्रोधी स्वभाव बन जाता है। क्रोधी व्यक्ति वास्तविकता से दूर होकर विकृति का शिकार बन जाता है। फलस्वरूप क्रोधी स्वभाव के बालक की बुद्धि का विकास स्वाभाविक गति से नही हो पाता। उनको शिक्षाओ का असर हम लोगो पर तो इतना पड़ा है कि हम लोग दूसरो को लड़ते-झगड़ते देख दुखी हो जाते है।

बाबूजी राष्ट्रीय स्तर पर भी दो विरोधी लडने वाले गुटों में परस्पर समझौता कराने में जो शत-प्रतिशत सफलता प्राप्त करते हैं उसमे हमे इनके हृदय की सच्ची भावना की कद्र करना दोनों पक्षों के लिए अनिवार्य हो जाता है। बाबूजी की उक्त शान्तिप्रियता तथा समझौता कराने के लिए सदैव तत्पर रहने के स्वभाव के कारण मै ऐसा महसूस करता हूँ कि कभी-कभी कुछ लोग उन्हे समझ सकने में भूल कर जाते है।

बाबूजी किसी प्रकार की बुराई की भावना से न तो कभी समझौता करते है, न कभी ऐसी सलाह देते है, वे सदैव ही समुद्र की भाँति गम्भीर रहते हुए भी अपने संकल्प मे हिमालय की भाँति अडिग भी है। जैसा मै समझ सका हूँ, मेरा दृढ विश्वास है कि ससार का वडे से बड़ा प्रलोभन भी उन्हे देश और समाज के लिए हानिकारक होने की सूरत में किसी समझौते के लिए तैयार नहीं कर सकता।

मैने इतनी छोटी-सी उम्र में ही बाबूजी को मन्त्री पद से स्वतः त्यागपत्र देते तथा बिना आफिस के मंत्री पद और गत वर्ष प्रधान मत्री पद को ग्रहण करते हुए देखा है। सभी अवस्थाओं मे मैने उन्हे शान्त व प्रसन्न पाया। पदत्याग के बाद जब वे घर मे आए तो उन्होने प्रसन्न होकर कहा, "अब मुझे तुम सबके साथ बैठ कर बात करने, खेलने, पढ़ने के लिए अधिक समय मिलेगा।" ऐसे समय में भी उन्हे समय तो ज्यादा नही मिला, किन्तु जितना समय वे घर पर निकाल पाते सबके बीच बात करते, सबके साथ भोजन आदि करने के कार्यक्रम मे लगे रहते, जैसे प्रधान मंत्री बनने के पूर्व करते थे। परन्तु बाबूजी प्रधान मंत्री बनने के बाद के दिनों मे हम बालको को अपना स्नेह नही दे पाते। लगता है जैसे 46 करोड जनता में उनका महत्व बढ गया हो। या यो कहिये कि काम के अपार बोझ से उन्हें इतना वक्त ही नही मिल पाता। वे प्रात· 8 बजे से 1 बजे रात तक इतने काम मे व्यस्त रहते हैं कि इन दिनों अक्सर दिन का भोजन प्रायः दिन के तीन बजे तक कर पाते है।

प्रधान मत्री पद की शपथ ग्रहण करने के लिए जाने का समय निकट आता जा रहा था, किन्तु बाबूजी साधारण तौर पर अपने नित्य के कामो मे व्यस्त थे। बाबूजी के व्यक्तिगत सहायक देखते और एक-दूसरे को उन्हे समय बताने को कहते, पर उनकी हिम्मत बाबूजी से कहने की नही होती थी, पर बाबूजी को अपने जाने का समय मालूम था। वे यथासमय वाहर आ गए।

खुशकिस्मती से मै अभाव में पैदा नही हुआ हूँ। मुझे इस बात का सौभाग्य मिला है कि इस देश के प्रधान मत्री का पुत्र हूँ। यद्यपि बाबूजी के प्रधान मंत्री बन जाने के वाद भी हमारा घर सादगी के लिए नमूने के तौर पर पेश किया जा सकता है। किन्तु अभाव नाम की वस्तु मेरे सामने कभी नही आई। आवश्यक वस्तुओ के अभाव के कारण मानव की क्या दशा होती है उसका मुझे अनुभव नही। किन्तु मैने सुना है कि बाबूजी की ऐसी अवस्थाओ से जूझने का अपने बचपन और विद्यार्थी जीवन मे बहुत अवसर मिला है। यही कारण है कि वे गरीबो की कठिनाइयों को भली भाँति जानते है और गरीबों की कठिनाइयो को सुन कर उनके यथाशक्ति निवारण मे विशेष दिलचस्पी लेते पाये जाते है। वे गरीब कांग्रेस-कार्यकर्ता से उसी प्रकार स्नेह और दिलचस्पी से मिलते है, जिस प्रकार कांग्रेस के उच्च कोटि के नेताओ से मिलते है। मैने प्रायः देखा है कि लान मे बाबूजी से भेट करने के लिए कई मत्री महोदय प्रतीक्षा करते रहे है, जवकि वावूजी लान के एक ओर घूमते हुए किसी साधारण कार्यकर्ता की कठिनाइयो से भरी कहानी सुनने मे व्यस्त है।

वाबूजी को गरीबो से नफरत है। पर गरीबो वर्ग से उन्हे बेहद सहानुभूति है। वे गरीबी को इस बीमारी को देश से जड-मूल से नष्ट कर देने के लिए चिन्तित है। मैने उन्हे कहते सुना है, "जब तक देश मे गरीबी है, देश को खुशहाल कैसे कहा जा सकता है? देश तो तभी खुशहाल कहा जायेगा जब देश मे कोई भूखा न रहे, कोई बिना वस्त्र के न हो, कोई बेघरबार के न रहे, कोई दवाई के बगैर बीमार पडा न हो।" जब देश गुलाम था वाबूजी अंग्रेजों की हकूमत के विरुद्ध लड़ते रहे। अब देश आजाद है। अत वे गरीबी के अभिशाप को नष्ट करने के प्रयास मे सलग्न है। उनके विचार मे उनके पद पर होने का अर्थ गरीबी को नष्ट कर सकने के अधिक तथा प्रभावशाली अवसरो की प्राप्ति मात्र है। और वे अब जब देश के प्रधान मत्री है, देश की गरीबी व पिछडेपन को दूर करने के पवित्र कर्त्तव्य के पालन मे सलग्न हैं।

(मृत्यु से कुछ समय पूर्व लिखा हुआ लेख)

ज्ञानचन्द

उनकी वसीयत

श्री लालबहादुर शास्त्री शान्ति के लिए शहीद हुए । वे मूल रूप से शान्ति के पथ पर थे। ११ जून १९६४ को राष्ट्र के नाम एक ब्राडकास्ट मे उन्होने कहा था—"सयुक्त राष्ट्र के समक्ष उपस्थित सबसे बडा कर्त्तव्य सिर्फ यही नही है कि युद्ध को निर्मूल कर दिया जाये, बल्कि युद्ध को असभव बना दिया जाये ··········· दुनिया के अन्य शान्तिप्रिय राष्ट्रों के साथ मिल कर हम यह प्रतिज्ञा करते है कि इस आदर्श की पूर्ति के लिए हम अपना प्रयास जारी रखेंगे ।"

ताशकन्द सदा के लिए उनकी महानता का स्मारक होगा । ताशकन्द घोषणा उनकी अन्तिम वसीयत है जो उन्होने हम लोगो के लिए छोड़ी है । सम्मेलन की सफलता का उन्हे कम श्रेय नहीं । शाति के लिए उनकी हार्दिक इच्छा और अथक प्रयास के कारण सम्मेलन सफल हुआ । और दिवगत प्रधान मत्री ने शाति की वेदी पर सबसे बड़ा बलिदान किया । ताशकन्द सम्मेलन के प्रारम्भिक अधिवेशन मे सोवियत सघ को मत्रि-परिषद् के अध्यक्ष अलेक्सेई कोसिजिन ने अपने भाषण मे यह आशा प्रकट की थी की "ताशकन्द की यह बैठक पाकिस्तान और भारत सम्बन्धो के मामले में एक मोड़ साबित हो सकती है ।"

सारी दुनिया की शान्तिकामी शक्तियों की भावना भी इसी तरह की थी ।

ताशकन्द सम्मेलन के परिणामों ने साबित कर दिया कि यह आशा सही साबित हुई ।

ताशकन्द सम्मेलन के लिए सोवियत संघ के निमंत्रण का उन्होंने, उनके ही शब्दों में "तत्काल और सकारात्मक" ढग से स्वागत किया । ताशकन्द शिखर सम्मेलन के उद्घाटन के समय उन्होंने अपने भाषण मे कहा—"हमारी जनता, सरकार और स्वय मैने आपकी (सोवियत सघ को) इस बहादुराना पेशकदमी की हृदय से प्रशसा की ।" उन्होने कहा कि उसके फलस्वरूप मै और पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खां एक साथ इस ऐतिहासिक एशियाई नगर मे मौजूद है ।"

ताशकन्द का निमंत्रण उन्होने सिर्फ औपचारिक तौर पर ही नही कबूल किया । उन्होने इस बात को गहराई से समझा कि अलेक्सेई कोसिजिन की यह पहल इस उपमहाद्वीप मे शान्ति की सच्ची इच्छा पर आधारित है । उनके पीछे अन्य कोई उद्देश्य नही ।

श्री शास्त्री को एक क्षण के लिए भी इस बात मे सन्देह नहीं था कि—"हमारे दोनो देशो (भारत और पाकिस्तान) मे जो संघर्ष हुआ वह बहुत बड़ा दुर्भाग्य था ।" उन्होने बार-बार इस बात पर

जोर दिया कि "शान्ति न सिर्फ भारत और पाकिस्तान के लिए बल्कि सही मायनो मे सारी दुनिया के लिए अत्यावश्यक है।" ताशकन्द मे अपने प्रथम भाषण मे ही उन्होने कहा कि "इस बैठक मे हमारा उद्देश्य अतीत की बातो पर आरोप-प्रत्यारोप न होकर भविष्य पर नजर होनी चाहिए।" श्रीशास्त्री ने इस बात के महत्व को समझा कि "भारत और पाकिस्तान ऐसे दो महान देश है जो समान इतिहास और समान परम्पराओ से आपस मे बँधे है। एक दूसरे के साथ मैत्री और अनेक क्षेत्रो मे निकट सहयोग उनकी स्वाभाविक नियति है।" (११ जून १९६४ को राष्ट्र के नाम सन्देश) ताशकन्द सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए अलेक्सेई कोसिजिन ने इन्ही भावनाओ को व्यक्त किया।

"हम चाहते है कि भारत और पाकिस्तान शान्ति से रहते हुए अपने बीच उठने वालो सभी समस्याओ का शान्तिपूर्ण ढग से निबटारा करे और राष्ट्रीय विकास के मार्ग पर सफलतापूर्वक बढते रहे।

श्री शास्त्री ने इस बात को महसूस किया कि ताशकद मे कठिनाइयाँ आयेगी, किन्तु इससे वह पस्त नही हुए।

भारत और पाकिस्तान के बीच जो मतभेद है, वह उपनिवेशवाद की विरासते है। इस उपमहाद्वीप के जनगण उन विरासतो पर काबू पाने की कोशिश कर रहे है। इस तरह वे अपनी स्वतत्रता को सुदृढ बना सकते है। श्री जवाहरलाल नेहरू के उत्तराधिकारी के रूप मे और अपनी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के पुर्ननिर्माण मे सलग्न स्वतन्त्र भारत के नेता के रूप मे श्री शास्त्री ने इस बात को औरो की बनिस्बत अच्छी तरह समझा था।

श्री शास्त्री ने इस बात पर जोर दिया कि "भारत और पाकिस्तान के लिए शान्ति अत्यावश्यक है।"

और इसलिए ताशकन्द मे उन्होने जोरदार आवाज बुलद की—"भाइयो, हम एक दूसरे से लडने के बजाय गरीबी, बीमारी और अज्ञान के खिलाफ सघर्ष करना प्रारम्भ करे। दोनो देशो की आम जनता की समस्याएँ, आशाएँ और आकाक्षाएँ एक ही तरह की हैं। हमारी वह जनता सघर्ष और युद्ध नही चाहती, बल्कि शाति और प्रगति की सामना करती है। उन्हे शस्त्रास्त्रो और गोला-बारूद की जरूरत नही, बल्कि अन्न, कपडे और आश्रय की जरूरत है?"

ये एक महान व्यक्ति, एक महान मानवतावादी के सीधे-सादे, किन्तु बुद्धिमत्तापूर्ण शब्द है। यदि इन्हे कार्यरूप मे परिणत किया जाये तो सारी दुनिया के लोगो की जिन्दगी से युद्ध, गरीबी, बीमारी और अज्ञान का खात्मा किया जा सकता है और धरती पर एक शान्तिपूर्ण और समृद्धिशाली जीवन का निर्माण हो सकता है।

ताशकद मे इसी भावना को विजय हुई।

उन्होने उन बातो को स्पष्ट किया जिनके आधार पर इस उपमहाद्वीप मे शाति की गारटी की जा सकती है। सबसे पहले यह आवश्यक है कि "शाति और अच्छे सम्बन्ध के लिए हम एक दूसरे की सप्रभुता का सम्मान करे।" और दूसरी बात यह कि जब तक हमारे मतभेद दूर न हो जाते,

तबं तक उनके समाधान के लिए "हमें यह घोषणा करनी चाहिए कि शक्ति का कभी प्रयोग न किया जायेगा।"

ये ही वे दो निर्देशक सिद्धांत थे जो अन्तिम तौर पर ताशकन्द घोषणा के आधार बने, जिनके आधार पर उसका मसविदा तैयार किया गया और दिवंगत प्रधान मंत्री श्री शास्त्री तथा पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खां ने उस पर हस्ताक्षर किये।

ताशकन्द घोषणापत्र इस उपमहाद्वीप के लिए ऐतिहासिक महत्व का दस्तावेज है। भारत के राष्ट्रपति डाक्टर राधाकृष्णन ने कहा है कि श्री शास्त्री ने ताशकन्द में इस प्रतिज्ञा के लिए अपने जीवन का बलिदान किया। उनके देशवासियों का यह कर्तव्य है कि उनकी वसीयत और आज्ञा का पालन करे।

श्री शास्त्री ने कहा था कि "उन्हे विश्वास है कि दुनिया के सभी जनगण के साथ ही भारत और पाकिस्तान की जनता को ताशकद बैठक के परिणामों से संतोष होगा।"। उन्हे सम्मेलन के परिणामो से सतोष हुआ। उनके अन्तिम शब्द थे—"हम लोगो ने एक अच्छा समझौता कर डाला है।"

ताशकन्द सम्मेलन के परिणामों मे एक यह भी है की उससे भारत-सोवियत मैत्री और भी सुदृढ हुई। इसकी चर्चा कम होती है, किन्तु इसे गहरे तौर पर महसूस किया जाता है, क्योंकि इसी भावना के आधार पर ताशकन्द सम्मेलन का पूरा ढाँचा खड़ा किया गया था।

रामलीला मैदान को शोक-सभा में भाषण करते हुए अलेक्सेई कोसिजिन ने हमारी बढ़ती हुई मैत्री को चर्चा की। उन्होने कहा—"भारत और सोवियत सघ राजनीतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक, तकनीकी और सांस्कृतिक सहयोग के मजबूत सम्बन्धो से आपस मे बँधे है। दोनो के आपसी हितो के आधार पर उनका निर्माण किया जा रहा है।"

उपस्थित जनसमुदाय को "प्यारे भाइयो!" कह कर सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा--"मै समझता हूँ कि 'प्यारे भाइयो' कह कर आपको पुकारने का मुझे हक है क्योकि जब-जब मै भारत आया अक्सर लोगो के दिलो से 'हिन्दी-रूसी भाई-भाई' की आवाज निकलते हुए सुनी। और, सोवियत सघ मे आप अक्सर ये शब्द सुन सकते है कि भारत के लोग हमारे दोस्त और भाई है।"

स्वर्गीय जवाहरलाल नेहरू की भाँति सोवियत सघ के साथ मैत्री दिवगत प्रधान मत्री श्री लालबहादुर शास्त्री की वैदेशिक नीति का आधार थी। १९६४ मे "सोवियत भूमि" के स्वाधीन दिवस अक के लिए सदेश देते हुए श्री शास्त्री ने कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार किया था—"हम भारत के लोग सोवियत सघ के ठोस और उदार सहयोग को गहरी प्रशंसा करते हैं।"

रामलीला मैदान की सभा मे कोसिजिन ने भारत-सोवियत मैत्री को सुदृढ़ बनाने में श्रीशास्त्री की भूमिका पर जोर दिया—"इस चीज पर मै खास तौर से जोर देना चाहता हूँ कि श्री लालबहादुर शास्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू के ध्येय को आगे बढ़ाते हुए सोवियत सघ और भारत की मित्रता और सहयोग को लगातार विकसित और दृढ़ कर रहे थे। उन्होने भारत के जनगण का झडा ऊँचा कर दिया।"

भारत और सोवियत सघ शान्तिपूर्ण सहजीवन और दूसरे देशो के मामले मे हस्तक्षेप न करने की नीति पर चलते हैं। सोवियत सघ हमारे देश और सभी नव-आजाद देशो का मित्र रहा है। सोवियत सघ के साथ मैत्री से उनके देशो के विकास मे मदद हुई है। ताशकद सम्मेलन ने बताया कि सोवियत संघ न सिर्फ यूरोप मे वल्कि एशिया मे भी और पूरी दुनिया मे शाति का एक प्रधान आधार रहा है। वह दुनिया के इस भाग मे तनाव के सभी कारणो को दूर करने के लिए अपने प्रभाव को पूरी तरह इस्तेमाल कर रहा है।

ताशकद घोषणा पर हस्ताक्षर के बाद श्री शास्त्री ने कहा था कि "सबो को मालूम है कि सोवियत सघ से हमारे सम्बन्ध कैसे है ? हम उसे और भी मजबूत वनाना चाहते है।"

श्री शास्त्री अब हमारे वीच नही रहे। लेकिन जिस ताशकद सम्मेलन को भावना के वे एक वडे शिल्पी थे, उससे भारत-सोवियत मैत्री और सहयोग और भी सुदृढ होगा तथा उससे एशिया और ससार मे भी शाति के ध्येय को बल मिलेगा।

के० गोपालकृष्णन

सोवियत संघ के मित्र

श्री लालबहादुर शास्त्री भारत-सोवियत मैत्री के महान हिमायती थे और उन्होंने इस मैत्री के महत्व को न केवल दोनो देशो मे जनगण के आपसी हितो के लिए बल्कि इससे भी अधिक महत्वपूर्ण एशिया और सम्पूर्ण विश्व मे शान्ति के उदात्त ध्येय के लिए जरूरी समझा। उनकी दृष्टि मे भारत और सोवियत संघ के बीच सम्बन्ध-सूत्र विभिन्न सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्था रखने वाले दो राष्ट्रो के बीच सम्बन्ध का नमूना है और यह ऐसा सम्बन्ध है जो अनुकरणीय है।

सोवियत संघ के बारे में उनकी जानकारी थोड़ी थी। गत वर्ष उन्होने पहली बार मई मे सोवियत सघ की आठ दिनो की यात्रा की थो। दूसरी यात्रा ताशकन्द की थी जहाँ सोवियत प्रधान मन्त्री अलेक्सेई कोसीजिन ने पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खाँ के साथ महत्वपूर्ण बैठक के लिए उन्हे आमन्त्रित किया था और जिसके फलस्वरूप ऐतिहासिक ताशकन्द घोषणा पर हस्ताक्षर हुए और इसका पूरी दुनिया मे शान्ति का अग्रदूत समझ कर और एशिया के दो बड़े देशो के बीच पड़ौसी जैसा सम्बन्ध बनाने वाले के रूप से स्वागत किया गया।

पहली यात्रा

श्री शास्त्री की सोवियत संघ को पहली यात्रा मे जो आठ दिनों की थी, उन्हे स्वय ऐसे मुल्क मे जो किसी जमाने मे पिछडा हुआ था, अक्टूबर क्रान्ति के फलस्वरूप हुए चमत्कारपूर्ण परिवतनो को देखने का अवसर मिला। उन्हे सोवियत जनता के जीवन से परिचित होने का मौका मिला। उन्होने शान्ति के प्रति उनके प्रेम को, भारतीय जनता के साथ मित्रता की सच्ची भावनाओं को समझा। उन्होने सोवियत जनता के साथ विस्तार से अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नो के साथ ही साथ आपस के प्रश्नों पर भी विचार-विमर्श किया, जो फलप्रद रहा।

गत वर्ष १२ मई को सोवियत राजधानी मे श्री शास्त्री के आगमन पर मास्कोवासियों ने उनका जोरदार स्वागत किया, बाद को उसी रोज शाम को उनके सम्मान में सोवियत सरकार द्वार क्रेमलिन प्रासाद मे दिए गए भोज मे श्री शास्त्री ने भाषण करते हुए कहा, "व्यक्तिगत रूप से मै ऐसा अनुभव कर रहा हूँ कि सचमुच मेरी यह यात्रा किसी खोज के लिए है। मुझे आपके महान देश के कुछ विशिष्ट नेताओ से, उनके दिल्ली आने पर, मिलने का गौरव प्राप्त हुआ है। मै सोवियत संघ की दोस्ताना और सोहार्दपूर्ण जनता व उसके नेताओं से मिलने के लिए उत्सुक था ताकि घनिष्ठ मैत्री को जो हमारे आपसी सम्बन्धो को रोशन करती है, देख सकूँ।"

श्री शास्त्री ने इसका उल्लेख किया कि सोवियत सघ उन देशो मे से पहला था जिन्होने भारत के साथ राजनीतिक सम्बन्ध स्थापित किये। श्री शास्त्री ने बल देते हुए कहा, "अनेक महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नो पर दोनो देशो के बीच निकटतर समझदारी और सहयोग विभिन्न राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक व्याख्या रखने वाले देशो के बीच शान्तिपूर्ण सहजीवन की नीति की सफलता का परिचायक है और इसी नीति का हमारे दोनो देशो की सरकारे अनुसरण करती है।"

श्री शास्त्री ने सोवियत सरकार को धन्यवाद दिया कि उसने भारत की गुटनिरपेक्ष नीति के प्रति सद्भावना प्रदर्शित की है। उन्होने कहा, 'यह नीति क्षणिक लाभ पर आधारित नही है बल्कि हमारे देश के प्राचीन इतिहास और परम्पराओ मे इसकी जड़े निहित है। आज के जमाने मे, हम पूरे तौर से ऐसा समझते हैं कि गुटनिरपेक्षता और शान्तिपूर्ण सहजीवन की नीति ही अपनी आजादी और सार्वभौमता को कायम रखने का सर्वोत्तम साधन है।"

श्री शास्त्री ने कहा कि "हमारी आजादी और क्षेत्रीय अखडता पर भारी दवाव और खतरे के बावजूद भारत इस नीति का अनुसरण करने मे समर्थ है। इसका श्रेय बहुत कुछ सोवियत सरकार की इस नीति के प्रति सद्भावना और समर्थन को है।"

महत्वपूर्ण मामलों पर समर्थन

उन्होने सयुक्त राष्ट्रसघ व अन्य अन्तर्राष्ट्रीय मचो पर दोनो देशो के बीच "घनिष्ठ समझदारी और सहयोग" का जिक्र करते हुए कहा, "भारत से सम्बन्धित अनेक महत्वपूर्ण मसलो पर आपके समर्थन का हमारी सरकार और जनता ने गहन रूप से सराहना की है और इससे हम दोनो की दोस्ती का बन्धन अटूट हो गया है।"

श्री शास्त्री ने १३ मई को भारतीय दूतावास द्वारा दिये गये भोज मे जो भाषण दिया उसमे उन्होने बताया कि भारत और सोवियत सघ द्वारा शान्ति कायम रखने के लिए सयुक्त सघर्ष की बहुत बडी सम्भावना और दायरा है। उन्होने कहा, "हमारे राष्ट्रों की ७० करोड़ जनता की दृढ इच्छा का कि वे शान्ति चाहते हैं, समस्त विश्व मे शान्ति कायम रखने और जनगण मे मेल-मिलाप रखने की दिशा मे कारगर असर होता है।"

श्री लालबहादुर शास्त्री ने भोज के अवसर पर दिये गये भाषण मे कहा, "सोवियत संघ ने एशिया मे आजादी के सघर्ष का समर्थन करने मे और एशिया मे नये आजाद हुए मुल्कों को उनकी पिछडी आर्थिक स्थिति सुधारने मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। यही कारण है कि सोवियत संघ और एशियाई देशो के बीच घनिष्ठतर सहयोग से बहुत हद तक भविष्य मे एशिया की आजादी और खुशहाली के लिए सहायता मिल सकती है और उसे सुदृढ बनाया जा सकता है।"

श्री शास्त्री ने कहा कि भारत के साथ राजनैतिक और आर्थिक क्षेत्रो मे इस सहयोग के रिकार्ड का जो सम्बन्ध है वह महत्वपूर्ण और प्रभावशाली है। "भारत-सोवियत आर्थिक सहयोग की, जो हाल के वर्षो मे दिन दूना-रात चौगुना बढा है, चर्चा करते हुए श्री शास्त्री ने कहा, "भिलाई, नेइवेली और अकलेश्वर जैसे स्थानो मे हमारी मैत्री और आर्थिक सहयोग के अनेक स्मारक मौजूद हैं। मैं यह आशा व्यक्त करना चाहूँगा कि भविष्य मे हमारे सम्बन्ध उतने ही दृढ़ और स्थायी होंगे, जितने भिलाई मे पैदा किये गये इस्पात।"

उपनिवेशवाद के विरुद्ध

श्री शास्त्री ने अपने सभी मामलों मे इस बात पर जोर दिया कि शान्ति और निरस्त्रीकरण के लिए प्रयासो और साम्राज्यवाद व उपनिवेशवाद के खिलाफ सघर्षो मे भारत और सोवियत संघ के बीच सम्बन्ध घनिष्ठ है। उन्होने क्रेमलिन मे १५ मई को सोवियत भारत मैत्री सभा मे जो भाषण दिया, वह इस कारण महत्वपूर्ण है कि इसमे उन्होंने जोरदार ढग से दोहराया कि भारत उपनिवेशवाद के खिलाफ है और जो जनगण आजादी के लिए सघर्ष कर रहे है उनका समर्थन करता है। उन्होंने कहा, "भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी हमारे महान राष्ट्रीय नेता व आधुनिक भारत के निर्माता श्री जवाहरलाल नेहरू की सदा यही धारणा रही कि भारत की आजादी पूरी दुनिया के शोषित राष्ट्रो की आजादी का ही एक अंग है। उन्होने हमें यही सिखाया है कि दुनिया मे जब तक कोई भी मुल्क विदेशी शासन के चंगुल मे रहता है तब तक यही सोचना चाहिए कि भारत की आजादी और स्वाधीनता अपूर्ण है।" श्री शास्त्री ने कहा कि इसी वजह से इन वर्षो मे भारत ने ऐसे जनगण का जो आजादी और औपनिवेशिकता के चगुल से अपने को छुड़ाने के लिए सघर्ष कर रहे है, दृढ़ समर्थन करता रहा है।"

उन्होने अंगोला, मोजाम्बिक, दक्षिणी रोडेशिया और दक्षिणी अफ्रीका के जनगण का समर्थन करते हुए पुनः कहा, "भारत की जनता का यह स्पष्ट विश्वास है कि पूरे विश्व मे शान्ति तभी स्थापित हो सकती है जब उपनिवेशवाद के आखिरी अवशेष भी मिटा दिये जाये।" उन्होने कहा कि—"मुझे खुशी है कि उक्त पवित्र ध्येय की प्राप्ति के लिए सोवियत सघ और भारत ने हमेशा कधे से कधा मिला कर काम किया है ....।" श्री शास्त्री ने वियतनाम की सकटपूर्ण स्थिति का जिक्र करते हुए सभी बाहरी हस्तक्षेप को समाप्त करने को कहा ताकि वियतनाम की जनता को "सम्मान और आजादी से रहने" का अवसर मिल सके। श्री शास्त्री नें इस पर बल देते हुए कि दोनो भारत और सोवियत सघ शान्ति और शान्तिपूर्ण सहजीवन की नीति मे पूर्णतः विश्वास करते है, कहा, "मुझे पूरी आशा है कि भारत और सोवियत संघ मिलकर इस युद्ध-जर्जर विश्व मे शान्ति की ताकतो का जबरदस्त रूप से समर्थन करेगे।" उन्होने अपना भाषण आशा और विश्वास के साथ समाप्त किया। उन्होने कहा, "सोवियत सघ की मेरी यात्रा से मुझे विश्वास हो गया है कि सोवियत और भारतीय जनता मिल कर विश्वशान्ति के लिए महत्वपूर्ण हो सकती है।"

मास्को मे श्री शास्त्री कुल चार दिन रहे। उन्होने अलेक्सेई कोसिजिन, लियोनिद ब्रेजनेव व अन्य सोवियत नेताओं से राजनीतिक व आर्थिक प्रश्नो पर अति महत्वपूर्ण वार्ता की। उन्हे सोवियत राजधानी मे जीवन की झलक भी देखने को मिली। वे लेनिन स्मारक भी गये और वहाँ उन्होने माला चढाई जिस पर लिखा था; "महान लेनिन— भारत के वफादार मित्र"। १४ मई को वह मास्को विश्वविद्यालय व पैट्रिस लुमुम्बा मैत्री विश्वविद्यालय गये। दिन में मैत्री भवन मे वे सबसे मिले, वहाॅ पावल बैल्यायेव ने उन्हे बताया कि अन्तरिक्षयात्रियों ने सलाम भेजा है। मास्को बोर्डिग स्कूल के बच्चो ने हिन्दी मे उनका अभिनन्दन किया और रशीद बेहबुतोव ने हिन्दी में गाने गाये।

लेनिनग्राद में

१६ मई को श्री शास्त्री लेनिनग्राद पहुँचे। अक्तूबर क्रान्ति का यह मुख्य स्थान था, इस वीर नगर को नौ सौ दिनो तक नाजियो ने घेरे रखा था लेकिन उसने आत्मसमर्पण नही किया था। वह

स्मोलनी गए, जहाँ लेनिन ने सोवियत सत्ता को विजय को घोषणा की थी तथा पिस्कोरवो स्मारक कब्रगाह गए, जहाँ लेनिनग्राद की रक्षा मे काम आये लोगों की कब्रे है। श्री शास्त्री ने विश्व सस्कृति का प्रसिद्ध समृद्ध संग्रहालय हर्मिताज देखा।

१७ मई को वह लेनिनग्राद मे धातु कारखाने गये जहाँ भारी भाप व हाइड्रालिक टर्बाइन उत्पादित किया जाता है। यह कारखाना कई देशो को जिनमे भारत भी शामिल है, टर्बाइन सप्लाई कर रहा है। जिस समय श्री शास्त्री गये, कारखाने मे भारत को सप्लाई करने के लिए २४ टर्बाईनो का निर्माण हो रहा था। यहाँ कई भारतीय विशेषज्ञो को प्रशिक्षित किया जा रहा है। श्री शास्त्री ने कुछ लोगो से भेट की। इसके अलावा अपनी यात्रा के दौरान श्री शास्त्री उक्राइन की राजधानी किएव और सोवियत उजबेकिस्तान की राजधानी ताशकन्द गये। १६ मई को ताशकन्द मे श्री जवाहरलाल नेहरू के जीवन और कृतित्व से सम्बन्धित एक प्रदर्शनी का उद्घाटन किया। यह ताशकन्द की टेक्सटाइल मिल और एक सामूहिक फार्म भी देखने गये। उन्होने उजबेक विज्ञान अकादेमी के प्राच्य अध्ययन इन्स्टिट्यूट मे भी कुछ घटे गुजारे।

ताशकन्द से रवाना होने के पूर्व श्री शास्त्री ने एक प्रेस सम्मेलन मे भाषण किया। उन्होने सोवियत नेताओ से "साफ और दोस्ताना" वार्ता का जिक्र करते हुए कहा, "हमारी वार्ता का वृहत् तत्व शान्ति और शान्तिपूर्ण सहजीवन ही है।"

१६ मई को श्री शास्त्री व उनके शिष्टमण्डल के अन्य सदस्य स्वदेश के लिए रवाना हुए। ८ दिन की यात्रा के नतीजो का उल्लेख उस अवसर पर जारी की गई एक सयुक्त विज्ञप्ति मे किया गया था। इसमे कहा गया है समानता, पारस्परिक लाभ और एक-दूसरे द्वारा सार्वभौमिकता के सम्मान के आधार पर सोवियत-भारत सघर्षो का विकास विभिन्न सामाजिक व्यवस्था वाले राज्यो के बीच शांतिपूर्ण सहजीवन के सिद्धान्तो के सफलतापूर्ण कार्यान्वित करने का उदाहरण है।" ये सिद्धान्त सोवियत सघ और भारत के बीच विश्व मे शान्ति कायम रखने और उसे सुदृढ बनाने के, और राज्यो के बीच सम्बन्धों मे तनाव को कम करने, औपनिवेशिका प्रभुत्व के सभी रूपो को खतम करने और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के शान्तिपूर्ण समाधान के सघर्ष मे व्यापक सहयोग के लिए महान अवसर प्रस्तुत करता है। परराष्ट्र-नीतियो मे यह सहयोग भारत और सोवियत सघ के जनगण के बुनियादी हितो और समस्त मानवजाति के हितो के अनुरूप है।"

महत्वपूर्ण-मंजिल

विज्ञप्ति मे भारतीय और सोवियत नेताओ के बीच विचारो के आदान-प्रदान के फलस्वरूप दोनो देशो के बीच आर्थिक, व्यापारिक, सास्कृतिक और विज्ञान के क्षेत्र मे सहयोग के और बढने को सम्भावनाओ का जिक्र करते हुए कहा गया है, "प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री की सोवियत यात्रा सोवियत सघ और भारत के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्धो और पारस्परिक सद्भावना के और विकास के लिए महत्वपूर्ण है।"

श्री शास्त्री सोवियत सघ से यह विश्वास लेकर लौटे कि यह देश वास्तव मे शान्ति का प्रेमी है और भारत का मित्र है। भारत और पाकिस्तान के बीच सघर्ष के दरम्यान भी यह स्पष्ट हुआ। श्री शास्त्री की यात्रा के समय अलेक्सेई कोसिजिन ने अपने एक भाषण मे इस पर जोर दिया था कि आजादी

पाये नये मुल्कों के बोच मतभेद होने पर साम्राज्यवादी इस अवसर का फायदा उठाने की कोशिश करते है। इस स्थिति में जब ये राज्य आपस में लड़ते है और उनके बीच सभी तरह के संघर्ष जिनमें सैनिक सघर्ष भी शामिल है, उठ खडे होते हैं, उनका सब तरह से हित साधन होता है। सोवियत सघ का रवैया ऐसी स्थिति में इससे बिलकुल विपरीत है। हमारी दिलचस्पी नये आजाद राज्यों के आपसी झगड़ो और मतभेदों में नही है, बल्कि उनके बीच मैत्री और सहयोग में है। सोवियत जनता चाहती है कि वे राज्य अपनी सीमा सम्बन्धी तथा अन्य मसलो को शान्तिपूर्ण ढंग से हल करे, और इसके लिए सभो पूर्वावश्यकताएँ मौजूद है।" (१५ मई १९६५ को सोवियत-भारत मैत्री सभा, मास्को मे भाषण)।

इन्ही भावनाओं से सोवियत सघ ने जब भारत-पाक झगड़ा जोरो पर था, सद्भावनाएँ-मूलक सेवा अर्पित की। प्रधान मन्त्री कोसिजिन ने भो शास्त्री और पाकिस्त.न के राष्ट्रपति अयूब खाँ को झगड़ा सुलझाने के लिए वार्ता करने के लिए ताशकन्द आने का निमन्त्रण दिया। भारत और पाकिस्तान के नेताओं ने इसे स्वीकार किया जिसके फलस्वरूप ऐतिहासिक ताशकन्द सम्मेलन हुआ।

सम्मेलन मे अपने प्रथम भाषण मे श्री शास्त्री ने इस बात का स्वागत किया कि सम्मेलन को आयोजित करने मे सोवियत सघ ने "साहसपूर्ण" पहल की है। उन्होने अलेक्सेई कोसिजिन को सम्बोधित करते हुए कहा कि "आप शान्ति के जिस उद्देश्य से प्रेरित है यह वास्तव में उदात्त है।"

भारत और पाकिस्तान के नेताओ ने इस बात को स्वीकार किया कि प्रधान मन्त्री कोसिजिन की भूमिका न केवल सम्मेलन के आयोजन मे रही है बल्कि इसकी सफल परिसमाप्ति सुनिश्चित बनाने में भी रही है। उन्होंने घोषणापत्र मे वर्तमान बैठक बुलाने के बारे मे जिसकी परिसमाप्ति पारस्परिक संतोषप्रद परिणाम मे हुई, सोवियत संघ की रचनात्मक, मैत्रीपूर्ण, उदात्त भूमिका के प्रति गहरी प्रशसा और कुशलता ज्ञापित की।

घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करने के बाद पत्रकारो से बातचीत करते हुए श्री शास्त्री ने इस बात पर पुनः जोर दिया था।

इसमे कोई शक नही कि भारत और सोवियत संघ के बीच मैत्री और सहयोग के बन्धनो को बढ़ाने में श्री शास्त्री ने जो महान भूमिका अदा की, आने वाले वर्षों में उन्हें और भी सुदृढ़ बनाया जावेगा।

डा० गजेन्द्रगडकर

उनका चरित्र बेदाग था

श्री लालवहादुर शास्त्री ने हमें युद्ध के मैदान मे विजय दिलाई और शान्ति के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग किया। स्व० श्री लालवहादुर शास्त्री कद मे छोटे, सादा मिजाज, सादे लिवास पहनने वाले अत्यन्त विनम्र और सौम्य स्वभाव के थे। लेकिन उनका हृदय वहुत विशाल था और उनके अन्दर एक वड़ी आत्मिक शक्ति थी। वे लौह इच्छावान पुरुष थे। उनमे अदम्य धैर्य और साहस तो था ही, लेकिन साथ ही साथ किसी भी वड़ी से वड़ी समस्या का सामना करने के लिए यथेच्छ दार्शनिक वृत्ति और सन्तुलन उनमे था। वे भारतीय सस्कृति के उच्चतम गुणो से विभूपित थे। यह भारतीय लोकतत्र को सवसे उल्लेखनीय वात है कि श्री लालवहादुर शास्त्री एक सामान्य कुल में जन्म लेकर भारत के प्रधान मन्त्री के उच्च पद पर पहुँच गए। उनकी सवसे वड़ी वात यह थी कि उनका चरित्र वेदाग था।

श्री शास्त्री सदैव न्यायपालिका की स्वतन्त्रता के हामी रहे है। उनकी मृत्यु से संवैधानिकता और न्याय का एक वड़ा पक्षपाती अव नही रहा।

वे थोडे समय प्रधान मन्त्री रहे, लेकिन इस थोड़ी सी अवधि मे ही उन्होने देश और अपने नाम को उज्ज्वल किया।

मुहूर्तं ज्वलितं श्रेयो
न च धूमायितं चिरम्।

एक क्षण के लिए भी प्रज्वलित होकर जलना, दीर्घ अवधि तक धीरे-धीरे धुँआ देते जलने से कही अच्छा है।

श्री शास्त्री को स्मृति को अमर रखने का सवसे अच्छा उपाय यही है कि हम उनके दिखाए गए मार्ग पर चले और उनके आदर्शो का अनुपालन करे, न कि आँसू वहाएँ।

अतो न रोदितव्यं हि
क्रिया कार्या. स्वशक्तितः।

●

डा० गोविन्ददास

सुदृढ़ युद्धनेता और सफल शान्तिदूत

आधुनिक युग मे भारत मे महात्मा गाँधी का प्रादुर्भाव शान्ति-पथ को एक बहुत बड़ी और अपूर्व देन थी। गाधी जी की विचार-सरणी, उनके दर्शन-प्रवाह और विरासत के रूप में, जो आधुनिक भारत की सर्वाधिक महत्वशाली सम्पत्ति भी है, को अजस्र और अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए मानवता को सेवा के पुनीत भाग से प्रेरित राष्ट्र के प्राण-धन लोकनायक पडित जवाहरलाल नेहरू ने अपने आपको अर्पित किया। अगणित समस्याओ से घिरे संघर्षपूर्ण विश्व-रंगमंच पर शान्तिवादी नेता के रूप मे नेहरूजी जहाँ त्रस्त, भयग्रस्त मानवता के प्राण बने, वहीं पोषक-तत्वो की दृष्टि मे, जिनका समस्याओं और संघर्षो के समाधान के लिये युद्ध में विश्वास है, नेहरू जी की यह शान्तिप्रिय नीति कमजोरी की निशानी समझी गई और इसका परिणाम भो हुआ भारत पर चीन का बर्बर आक्रमण। भारतीय जनता को एकता तथा विश्व-परिस्थिति से विवश होकर चीन ने एकतरफा युद्ध-विराम किया। जैसे आया था, वैसे वह पीछे पाँव लौट गया। इसी बीच स्वतन्त्रता, स्वावलम्बन और स्वाभिमान का सारथी राष्ट्रनायक जवाहरलाल इस अस्थायी शांति के समारोप के संधिकाल में टूट गया।

प्रजातन्त्र की वह खूबी

राष्ट्रनायक नेहरू का अवसान जागृत भारत के इतिहास में एक दुर्दान्त दुर्दिन बन कर आया। शोक के महान अन्धकार के बोच भारतीय प्रजातन्त्र की दोपशिखा को प्रज्ज्वलित रखने और इसकी ज्योति गाँव-गॉव मे पहुँचाने तथा इसे तूफानो, वायु के बवण्डरो और झोको से बचाने के लिए एक कुशल उत्तराधिकारी की आवश्यकता हुई और बहुत आश्चर्य से इस नये दायित्व भार को वहन करने जो आदमी भारतीय राजनीति और गणतन्त्र के प्रधान के रूप मे रगमच पर आया, उसका नाम था लाल-बहादुर शास्त्री। दुर्बल देह वाले एक छोटे कद के इस छोटे से आदमी को जिन्होने देखा था, उन्होने और जिन्होने नही देखा था उन्होने भी अखबारों में इसकी तस्वीर देखकर विश्वमान्य नेता जवाहरलाल के बाद उनके एकमात्र उत्तराधिकारी के रूप मे इस विशाल और महान भारतीय गणतन्त्र के प्रधान के रूप में प्रादुर्भाव पर कम आश्चर्य प्रकट नही किया। यही नही, इस निर्वाचन में जिन विधायकों की सहमति और समर्थन था, उन्हे भी इस छोटे-से व्यक्ति की नेतृत्व-क्षमता पर यदि सन्देह नही था तो निश्चित रूप से कहना होगा पूर्ण भरोसा भो नही था। देश की उस वक्त जैसी परिस्थिति थी, नेहरू जी के अव-सान से देशवासियों के हृदय मे जो रिक्तता और भावनाये थीं तथा इस सबकी देश और विश्व में होने वाली प्रतिक्रिया के सन्दर्भ मे श्री लालबहादुर शास्त्री का देश के नए नेता और प्रधान मन्त्री के रूप में

निर्विरोध निर्वाचन हुआ था। श्री शास्त्री के इस निर्वाचन पर उस वक्त की परिस्थिति मे यदि कोई प्रधान वात थी तो वह यही कि भारत जो ससार का सवसे बड़ा प्रजातान्त्रिक देश है, इसमे प्रजातन्त्र की वडी मजवूत वुनियाद डल चुकी है और यह कठिन से कठिन समय मे भी बड़ी-से-बड़ी समस्याओ, परिस्थितियो और सघर्षो को अपने प्रजातात्रिक साधनो और ढग से हल करने मे सक्षम और सिद्धहस्त है।

कसौटी का वह समय

एक ओर चीन का आक्रमण, दूसरी ओर काश्मीर-प्रकरण को लेकर पाकिस्तान का बढता हुआ तनाव, देश मे आतरिक गड़बड़ी और विदेशो से नित नये बनते-बिगड़ते सम्बन्धो के सदर्भ मे श्री लालवहादुर शास्त्री ने भारत के प्रधान मन्त्री का पद सभाला। लोकनायक नेहरू के अवसान से मर्माहत मातृभूमि की आँखे अभी गीली ही थी कि इसी बीच पाकिस्तान ने हमारे कच्छ रन क्षेत्र मे पूर्ण सैनिक तैयारी के साथ आक्रमण कर दिया। इस अकस्मात् आ पडी विपदा का देश ने सामना किया, ब्रिटेन ने भारत और पाकिस्तान के इस सघर्ष मे मध्यस्थता की और एक समझौता कराया। इस समझौते पर हस्ताक्षर हुए और इन हस्ताक्षरो की स्याही सूखी भी नही कि पाकिस्तान ने पूर्वनियोजित आधार पर एक दूसरा भीषण आक्रमण जम्मू और काश्मीर पर कर दिया। दूसरी बार के इस आक्रमण मे पाकिस्तान की विगत अठारह वर्षो की उसकी जन्मजात साध निहित थी। पहले सशस्त्र घुसपैठिये भारतीय क्षेत्र मे आए और उनके पीछे नियमित सशस्त्र पाक सेना के सचालन का कार्यक्रम हमारे सामने आया, उससे यह स्पप्ट हो गया कि पाकिस्तान का यह आक्रमण न केवल जम्मू और काश्मीर अथवा उसके किसी भाग-विशेप को हथियाने के उद्देश्य से प्रेरित था, वरन् इस आक्रमण के पीछे समग्र देश की एकता, अखण्डता और प्रभुसत्ता के लिए एक चुनौती के रूप मे इसका नियमन किया गया था।

पाकिस्तान का आक्रमण हुआ और उसका सामना भी। अक्तूबर, सन् ६२ मे चीन का आक्रमण हुआ था और उसका सामना भी। किन्तु, इस आक्रमण मे जो एक सबसे वडी बात देश के सामने आई और जो चीनी आक्रमण के समय भी हम अनुभव नही कर सके थे, वह थी भारत और उसके शेप विश्व से सम्वन्ध। चीनी आक्रमण के समय ब्रिटेन और अमेरिका ने हमे मुक्तहस्त सहायता दी थी, किंतु इस आक्रमण मे हमे कोई सहायता नही दी गई। मात्र प्रश्न यह नही है, प्रश्न है कि यह सारा युद्ध पाकिस्तान ने ब्रिटेन और अमेरिका की सैन्य-सामग्री और सहायता से लड़ा। इतना ही नही, आधुनिक वैज्ञानिक उपकरणो और साधनो से सज्जित पाकिस्तान की सेना ने जब भारत पर आक्रमण किया तब अमेरिका ने, जिसने उसे इस शर्त पर सहायता दी थी कि वह उसका उपयोग भारत के विरुद्ध नही करेगा, इस युद्ध मे उसका उपयोग न करने देने अथवा रोकने की तो बात पीछे है, एक शब्द भी जो उसको सैन्य सहायता सम्वन्धी शर्तो के साथ वँधा हुआ था, नही कहा। और इङ्गलैण्ड ने तो खुलकर पाकिस्तान का साथ दिया। जो तथ्य सामने आए हैं, उनसे ज्ञात होता है कि पाकिस्तान के इस आक्रमण की रूपरेखा ही इङ्गलैण्ड मे बनी। इस प्रकार न केवल इङ्गलैण्ड से वरन् परोक्ष रूप मे अमेरिका के मौन रहने से पाकिस्तान को शह और सहायता मिली। भारत मात्र रूस के नैतिक समर्थन से अभिभूत अपने आत्म-गौरव और अस्तित्व के लिए इस युद्ध मे विना किसी वाह्य सहायता और समर्थन के एकाकी लड़ता रहा। यह एक वड़ा ही कठिन और हमारे सिद्धान्तो और आदर्शो को कसौटी का समय था।

धान का साधक रहा है। हमारे युग-पुरुषो, नेताओं और नायकों ने भारत के इसी पुरातन मंत्र को समयानुसार अपनी वाणी मे उद्घोष किया है। महात्मा गान्धी ने तो विश्व के एक सबसे बडे समृद्ध और शक्तिशाली साम्राज्य से भी मातृ-भूमि की मुक्ति के लिए इसी शान्ति-पथ का अनुगमन कर भारतीय विचारधारा की प्राणप्रतिष्ठा की। उनके उत्तराधिकारी श्री लालबहादुर शास्त्री ने भारत-पाक युद्ध-विराम के तुरन्त बाद रूस द्वारा प्रस्तावित शान्तिवार्ता को स्वीकार कर हमारे इसी आदर्श को व्यावहारिक रूप देने का प्रयत्न किया। और रूस के प्रधान मन्त्री श्री कोसीजिन के सत्प्रयत्नो और सद्भाव से पाकिस्तान के साथ विचार-विनिमय कर शान्ति की पुन स्थापना के लिए ताशकन्द से जो सहमति और उद्घोषणा की, वह भारत की मूलाधार शान्तिप्रियता का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण तो बनी ही, श्री शास्त्री के सुदृढ युद्धनेता रूप के साथ उनके सफल शान्तिदूत का एक दुर्लभ प्रमाण बन गई और इस प्रकार दुनिया ने देखा कि श्री लालबहादुर शास्त्री के रूप मे भारत को ऐसा प्रधान मन्त्री मिला जिसमे आग भी थी और पानी भी।

देश का दुर्भाग्य कि उसका ऐसा लाड़ला, जन-सेवक, वसुन्धरा का शृंगार शान्ति-वार्ता के समारोप के साथ ही समाधिस्थ हो गया। जैसे भारत के सनातन लक्ष्य शान्ति-पथ का यह साधक राष्ट्र के जीवन मे आए सघर्ष का सफल सामना करता हुआ, उसकी सुख-समृद्धि के मूलाधार शान्ति की वेदी पर अपने आप ही बलि दे गया। मेरी दृष्टि मे श्री शास्त्री शान्ति के लिए लड़े और शान्ति के लिए ही शहीद हुए और जीवन के इसी उदात्त विचार की दृष्टि से वे सुदृढ युद्ध-नेता और सफल शान्तिदूत भी बन गये। वह पार्थिव देह से आज नही है, आज जो है, हम सभी, आयन्दा नही होगे, किन्तु श्री लालबहादुर शास्त्री, जिन्होने हमारे झण्डे की शान और राष्ट्र के सम्मान दोनो को ऊँचा रखा राष्ट्र के शान्ति और सघर्ष दोनो ही कालो मे हमारे प्रेरक रहेगे, हमारे आदर्श रहेगे।

श्री हरिदेव जोशी

※ कुछ संस्मरण ※

स्वर्गीय प्रधान मंत्री श्री शास्त्री की राजस्थान यात्रा

ग्यारह जनवरी की वह मनहूस सुबह भारतवासियों को सदा याद रहेगी जब उन्होंने आँख खुलते ही ताशकन्द में अपने प्रधान मन्त्री की आकस्मिक और असामयिक मृत्यु का हृदयविदारक समाचार सुना। उन्हे विश्वास नही हो रहा था कि ताशकन्द वार्ता की अप्रत्याशित सफलता के तुरन्त बाद नियति के अदृश्य क्रूर हाथ उनके प्रधान मन्त्री को उनसे छीन लेगे। इस आघात से सभी स्तब्ध हो गये। सारा राष्ट्र शोक मे डूब गया।

अठारह मास की अल्पावधि मे राष्ट्र के कर्णधार के रूप मे श्री शास्त्री के प्रयत्नो एव सफलताओ के चित्र आँखो के सामने उभरने लगे। पाकिस्तान का अचानक आक्रमण, उसका मुकाबला करने मे श्री शास्त्री की सूझबूझ और दृढता, हमारे सेनाध्यक्षो के रणकौशल एव सैनिको के साहस के फलस्वरूप पाक सेनाओ पर हमारी विजय आदि सभी घटनाएँ यकायक ताजी हो गईं। आश्चर्य हो रहा था कि अपने प्रधान मन्त्रित्व के थोडे से समय मे ही श्री शास्त्री भारत को कितना कुछ दे गये। स्वाभिमान, साहस, सकल्प, शान्ति और सहयोग सभी कुछ तो सिखा दिया, उस महान नेता ने देशवासियो को।

देशवासियो के समूचे मानस को किस प्रकार उन्होंने बदला—इसका आभास उनके विभिन्न भाषणो एवं सन्देशो से मिलता है।

पिछले २८ अक्तूबर की जोधपुर की एक विशाल सार्वजनिक सभा मे भाषण करते हुए पाकिस्तान के विदेश मन्त्री श्री भुट्टो द्वारा सुरक्षापरिषद् मे भारतीय प्रतिनिधिमण्डल को "भारतीय कुत्ता" की सज्ञा दिये जाने का जिक्र करते हुए स्वर्गीय प्रधान मन्त्री ने कहा था—"गाली देना और गन्दी बातें कहना हमारे तहजीब के खिलाफ है। हम गाली का जवाब गाली मे नहीं, ताकत से देगे।" उन्होंने दृढता से घोषणा की थी कि पाकिस्तान कश्मीर को पाने की उम्मीद छोड़ दे। उसकी यह उम्मीद पूरी नही होगी। पाक विदेश मंत्री द्वारा दी गई गालियों के विषय मे चुटकी लेते हुए उन्होंने कहा था, "श्री भुट्टो ने जिस भाषा का प्रयोग किया है वह उन्हे शोभा देती है। मैं तो उस तरह की भाषा बोलने

मे अपने आपको असमथ पाता हूँ। मै समझता हूँ कि विश्व संगठन मे इस तरह की भाषा बोलने वाले व्यक्ति को जिम्मेदार नही माना जा सकता।

राजस्थान की सीमाओ पर पाकिस्तानी सैनिक गतिविधियो का उल्लेख करते हुए श्री शास्त्री ने कहा था कि रेगिस्तानी इलाको मे छुटपुट कार्यवही और घुसपैठ करके पाकिस्तान कुछ जमीन पर अधिकार दिखाने की चेष्टा करता रहा है किन्तु उसे सफल नही होने दिया जायगा। भारत की शान्ति, प्रियता की नीति का स्पष्टीकरण करते हुए स्वर्गीय श्री शास्त्री ने कहा था, "हम शान्ति चाहते है लेकिन इसलिए नही कि हम कमजोर है, वल्कि इसलिए कि हम शान्ति को देश की प्रगति तथा मानव जाति को विनाश से वचाने के लिए आवश्यक कमझते है।"

जवानो के साहस और शौर्य के विपय मे उन्होने कहा था कि "सीमान्त क्षेत्रो के अपने दौरे में मैने देखा कि भारत के जवानो मे यह भावना है कि पाकिस्तानी सेनाओ को भारत की सीमाओ से हजारो मील दूर धकेल दिया जाये। मुझे उनका जोश रोकना पडा है।" श्री शास्त्री ने पाक आक्रमण के दौरान साहस का परिचय देने के लिए जोधपुर के नागरिको की भी प्रशसा की थी।

श्री शास्त्री मौके पर सही बात कहने मे भी नही चूकते थे। जोधपुर की सार्वजनिक सभा मे अपने भापण मे उन्होने कहा था, "पाकिस्तान को यह मालूम होना चाहिए कि उसका अस्तित्व भारत के ही कारण है। भारतीय जनता द्वारा ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध किये गये लम्बे और महान सघर्प के फलस्वरूप स्वतन्त्रता मिली और पाकिस्तान बना।"

स्व० प्रधान मन्त्री ने इस बात की भर्त्सना की थी कि पाकिस्तान की सरकार मे कोई भी ऐसा आदमी नही है जिसने ब्रिटिश शासन को चुनौती दी हो तथा उसके विरुद्ध सघर्ष किया हो। यही कारण है कि वे स्वतन्त्रता के मूल्य एव महत्व को नही समझते।

एक चतुर राजनीतिज्ञ और बुद्धिमान प्रशासक को तरह वे समय की गति को पहचानते थे। उन्होने कहा था कि आज की दुनियाँ मे यह सभव नही कि एक देश दूसरे देश की भूमि को ताकत और दवाव से हडप ले। यदि चीन और पाकिस्तान इस भ्रम मे है कि वे भारत की भूमि सैनिक बल से हडप लेगे तो उन्हे निराशा हाथ लगेगी। भारत अपनी एक इ च भूमि पर भी किसी देश को कब्जा नही करने देगा।

वे जहाँ वज्र की तरह दृढ थे वहाँ फूल की तरह कोमल भी। उनकी कोमलता और करुणा का एक सजीव उदाहरण प्रस्तुत है। जोधपुर मे सार्वजनिक सभा की समाप्ति के पश्चात् श्री शास्त्री पाक बमवारी के ध्वस्त जोधपुर जेल देखने गये। जेल के कैदियो ने अपने दैनिक आहार मे कमी करके वचाये हुए २० बोरे गेहूँ प्रधान मत्री को भेट किये। कैदियो के इस देशप्रेम व त्याग से श्री शास्त्री द्रवित हो उठे। उन्होने लगभग एक दर्जन ऐसे कैदियो को मुक्त किये जाने का आदेश तत्क्षण कर दिया जिनके कारावास की अवधि ४० दिन मे समाप्त होने वाली थी।

कश्मीर के सम्वन्ध मे भारतीय रुख का स्पष्टीकरण करते हुए स्वर्गीय प्रधान मत्री ने जयपुर के रामनिवास वाग की एक विशाल आम सभा मे कहा था की जम्मू और कश्मीर भारत का अविभाज्य अग है। राष्ट्रसघ सुरक्षा परिपद् मे भारतीय प्रतिनिधिमडल युद्धवन्दी अथवा सेनाओ को वापस हटाने के किसी भी प्रस्ताव पर होने वाली वहस मे भाग लेगा, किन्तु कश्मीर पर किसी भी वहस मे भाग लेना भारतीय प्रतिनिधिमण्डल के लिए सम्भव नही होगा।"

उन्होंने कहा था कि भारत पर कितना हो दबाव क्यों न पड़े, लेकिन काश्मीर सम्बन्धी उसकी नीति में परिवर्तन नही होगा। पाकिस्तान, अमरीका और ब्रिटेन सहित सभी देशों को समझ लेना चाहिए कि भारतवासी काश्मीर हथियाने के सभी प्रयत्नो को विफल कर देगे।

एक सच्चे देशभक्त और राष्ट्रनायक की भाँति स्वर्गीय श्री शास्त्री देशवासियो में देशप्रेम की भावनाएँ भरने के लिए भी सतत प्रयत्नशील रहते थे। जयपुर के महारानी कालेज मे आयोजित महिलाओ की एक सभा मे बोलते हुए उन्होने कहा था: "महिलाओं को चाहिए कि वे घरो का वातावरण देशभक्तिपूर्ण बनावे और भावी पीढियो को देश को प्रेम करना सिखावें। देश की सैन्य शक्ति को बढ़ाने के लिए स्वर्ण बाडो मे सोना देने और खाद्यान्न की बचत करने के लिए सोमवार की शाम को उपवास करने मे पहल करने की अपील भी उन्होने महिलाओ से की थी।

राजनीति की उठापटक नीरसता के बीच भी स्वर्गीय श्री शास्त्री की विनोदप्रियता छिपी नही रहती थी। राष्ट्रीय सुरक्षा कोप के लिए सोना देने के लिए राजस्थान के लोगों ने उन्हें सोने से तोलने की बात की तो उन्होने हँसते हुए कहा था "आप मुझे सोने से तोल कर सुरक्षा कोष को नुकसान पहुँचाने की गलती नही करे क्योकि आपके यहाँ मुख्य मत्री श्री सुखाड़िया तथा राज्यपाल डा० सम्पूर्णानन्द जैसे भारी भरकम व्यक्ति मौजूद है।"

पाकिस्तान के हमले से भारत के नागरिकों में उत्पन्न उत्साह और एकता को बनाये रखने को श्री शास्त्री देश की प्रगति एव मजबूती के लिए आवश्यक मानते थे। उन्होने जनता को आह्वान किया था कि वह उस उत्साह और एकता को बनाये रखने का प्रयत्न करे और उसमे शिथिलता न आने दे। श्री शास्त्री ने कहा था कि भारत को केवल पाकिस्तान के ही नही बल्कि चीन के हमले का सामना करने के लिए भी तैयार रहना है। भारत नही चाहता कि चीन भारत एव पाकिस्तान के मामलो मे दखल दे। फिर भी यदि चीन ने पाकिस्तान का साथ दिया तो विवाद और बढ़ जायेगा।

चीन और पाकिस्तान की सरकारो की युद्धपरस्त नोति का विरोध करते हुए श्री शास्त्री ने कहा था कि चीन और पाकिस्तान हो ऐसे देश है जो युद्ध चाहते हैं तथा विश्व जनमत की पर्वाह नहीं करते। उन्होने ससार के सभी राष्ट्रो से अनुरोध किया था कि वे इन दोनो देशों की इस शान्ति-विरोधी नीति का विरोध करे। चीन की धमकी का जिक्र करते हुए श्री शास्त्रो ने कहा था "चीन को इस सघर्ष मे हस्तक्षेप नही करना चाहिए क्योकि वह भारत और पाकिस्तान के बीच का मामला है। किन्तु यदि चीन ने इस सघर्प मे घुसने की कोशिश की तो भारत उससे लड़ेगा और बड़े पैमाने पर युद्ध छिड़ेगा। भारत अपने मित्रो से मदद ले सकता है पर उसे बुनियादी तौर पर अपने पर ही निर्भर रहना पड़ेगा। इसलिए हमको अपनी सैनिक शक्ति बढानी है। कितना स्वाभिमान और साहस भरा था उस छोटे से दिखने वाले व्यक्ति के शरीर में।

अपने भाषणो में श्री शास्त्री ने देश को खाद्य समस्या की भी चर्चा की और कहा था: यदि देशवासी एक सप्ताह मे एक समय का भोजन त्याग करके उपवास रखे तो इससे खाद्यान्नों की बचत होगी ही साथ ही इससे हमारी देशव्यापी एकता और संगठन का परिचय भी दुनियाँ के लोगों को मिल सकेगा। स्वर्गीय प्रधान मन्त्री ने कहा था: हमारे सामने एक तरफ देश का गौरव है और दूसरी तरफ

एक समय का भोजन ; हमे इन दोनों,मे से एक को चुनना है और यह फैसला करना है कि हमें एक सप्ताह मे एक समय का खाना भले ही छोड़ना पड़े पर हम अन्न के लिए भीख नहीं माँगेगे। कोई देश यदि अनाज की मदद के सवाल पर काश्मीर के मामले में दबाना चाहे, सौदेबाजी करना चाहे तो मैं साफ कह देता हूँ कि यह सौदा होने वाला नही है।

प्रधान मन्त्री का स्वागत करते हुए राज्य के मुख्य मन्त्री श्री मोहनलाल सुखाड़िया ने एक दर्जन नेट विमानों का एक राजस्थान स्क्वेड्रन बनाने के लिए एक करोड़ अड़सठ लाख रुपये की धनराशि सुरक्षा कोष मे देने की घोषणा की थी। राजस्थान की परम्परागत वीरता और बलिदान की चर्चा करते हुए मुख्य मन्त्री ने उनको वचन दिया था कि भारत सरकार जितने भी सैनिक देश की रक्षा के लिए भर्ती करना चाहे उतने राजस्थान देगा। और अपनी परम्परा को बनाये रखेगा। स्वर्गीय प्रधान मन्त्री इस घोषणा से बहुत हर्षित हुए थे।

भारत और पाकिस्तान की सेनाओ के बीच युद्ध विराम प्रस्ताव होने के पश्चात् सोवियत रूस के सत्प्रयत्नों से दोनो देशो के बीच आपसी समस्याओं को सुलझाने में बल-प्रयोग न करने तथा सेनाओ की वापसी आदि प्रश्नों का शान्तिपूर्ण हल निकालने के लिए उजवेकिस्तान की राजधानी ताशकन्द मे दोनो देशो के नेताओ की बातचीत आयोजित कराने का दौर आरम्भ हुआ। पाकिस्तान द्वारा युद्ध विराम रेखा के निरन्तर उल्लंघनो के बावजूद हमारे प्रधान मंत्री ने ताशकंद वार्ता मे भाग लेना बिना किसी हिचकिचाहट के स्वीकार किया।

कौन जानता था कि ताशकंद वार्ता की सफलता का समाचार भारत मे पहुँचते-न पहुँचते प्रधान मत्री अचानक ससार से चले जायेंगे। विधि के विधान पर किसी का वश ही क्या है। वे चले गये—ऐसी जगह चले गये जहाँ से कोई आज तक लौट कर नही आया। एक स्वतन्त्र राष्ट्र के नागरिक के नाते हमारा यही कर्तव्य है कि उनके आदर्शों और उपदेशो का पालन करे। यही हमारी सबसे बड़ी श्रद्धाजलि होगी उस महान् आत्मा के प्रति।

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल

प्रधान मंत्री श्री शास्त्री

भारत के राजनैतिक मच पर श्री लालवहादुर शास्त्री के गुणों का प्रकट होना सबके लिए आनददायक सिद्ध हुआ। उनमे दीर्घकालीन त्याग और तपस्या का सचय तो था ही किन्तु प्रधान मत्री का अधिकार प्राप्त करने के बाद उनकी बुद्धिमत्ता, मानसिक सन्तुलन, दृढ़ निश्चय की शक्ति और निर्भीक स्वभाव का नया परिचय देश को प्राप्त हुआ। थोडे ही समय मे शासन, सेना और जनता के लिए लोकप्रिय नेता बन गए। कठोर परीक्षा के बीच मे से उन्होने देश को मार्ग दर्शन दिया। उन्हे युद्ध मे आशातीत सफलता मिली। वे सवकी बात सुन कर अपना निर्णय देते थे। उनका हाथ जनता की नाड़ी पर रहता था। उनसे भारतीय प्रजातन्त्र की सच्ची सेवा होने वाली थी, यदि दैवकृपा से उन्हे और अधिक आयुष्य मिली होती। किन्तु ससार के सब प्राणी भगवान् की इच्छा और अपने कर्मफल से जीवित रहते है। शास्त्री जी भी थोडे ही समय मे कीर्ति और सफलता के शिखर पर पहुँच कर अपनी लीला का उपसहार कर गए। फिर भी भारतीय राजनीति को उन्होने बहुत कुछ स्वच्छता प्रदान की। कश्मीर को भारत का अभिन्न अग घोषित करके उन्होंने उस समस्या का समाधान कर दिया। उनके उत्तराधिकार का भार जिनके कधो पर आया है उन्हे शास्त्री जी की नीति पर स्पष्ट विचार करके उसका अनुसरण करना चाहिए और राष्ट्र की उन्नति के लिए जिस मंगल स्वस्तिक का निर्माण शास्त्री जी ने आरम्भ किया था, उसे पूरा करना चाहिए। भारत की आर्थिक व्यवस्था, सैनिक सगठन, जनता का सहयोग और स्वच्छ शासन ये स्वस्तिक की चार भुजाएँ है। जो इस चतुर्मुखी उन्नति का उपाय कर सकेगा, वह शास्त्री जी का सच्चा उत्तराधिकारी सिद्ध होगा।

छोटे-से क्षितिज हे!

प्रातःकाल उठ कर उस दिन जब मै अपने कमरे मे ऊपर गया और रेडियो की सुई घुमाई तो समाचार आ रहे थे—

Artificial respiration was given to him but he collapsed.

मै समझ नही पा रहा था, किस व्यक्ति की जीवन-लीला समाप्त हो गई है। किन्तु जब शास्त्री जी का नाम सुना तो हतप्रभ-सा और हक्का-वक्का-सा रह गया। वडे दुखी हृदय से नीचे जाकर अपने बच्चो को जब यह समाचार सुनाया तो वे ठक-से रह गये। समूचे देश मे ही नही किन्तु समस्त विश्व मे जब यह समाचार व्याप्त हो गया तो सभी ने इस उदात्त मानव के निधन पर शोक मनाया।

× × ×

शायद ही इतिहास मे ऐसा उदाहरण मिलता हो जब किसी एक व्यक्ति ने केवल १८ महीनो मे इतना यश कमाया हो जो इतने अल्प समय मे तो क्या, शताब्दियो मे भी सम्भव नही। विश्वविश्रुत राजनीतिज्ञ प० नेहरू के बाद जब शास्त्री जी ने प्रधान मत्री का कार्य-भार सम्हाला तो लोगो को विश्वास नही हो रहा था कि यह अदना-सा व्यक्ति, सीधा और निश्छल, कुटिल राज-चक्र को कैसे सम्हाल सकेगा? यह तो कभी विदेश भी नही गया, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का तो इसे अनुभव ही नही। किन्तु समूचा विश्व साक्षी है कि शास्त्री जी ने समय आने पर जहाँ लौह-पुरुष पटेल जैसी दृढता दिखलाई, वहाँ शान्ति-स्थापना के प्रयत्नो मे उन्होने बुद्ध और गाँधी की शान्तिप्रियता का भी परिचय दिया। विश्व के राजनयज्ञो को चकाचौंध से वे हतप्रभ नही हुए, विपत्ति मे न वे कभी बौखलाये और न कभी घबराये, विपक्षियो को भी सहानुभूतिपूर्वक समझने की उन्होने निरन्तर कोशिश की और अपने दिल और दिमाग का सन्तुलन उन्होने सदा बनाये रखा। उन्होने अपने लिए किसी विशाल कोठी अथवा किसी भव्य प्रासाद का निर्माण नही किया, किन्तु कीर्ति का महल जो वे अपने पीछे छोड गये है, वह कभी ध्वस्त अथवा धराशायी नही होगा। राजस्थान के कवि ने यथार्थ ही कहा था—

"इल ऊपर रहसी अमर
कीरत रा कमठाण।"

त्याग द्वारा भोग (तेन त्यक्तेन भुंजीथा) का उपदेश हमारे उपनिषत्कार दे गये हैं। शास्त्री जी ने उस उपदेश को अपने जीवन मे चरितार्थ करके दिखलाया। हमारे देश ने उन्ही व्यक्तियो का आदर किया है जिन्होने सत्ता के मद मे चूर होकर अपने कर्त्तव्य को नही भुलाया, व्यक्ति-हित की अपेक्षा समष्टि के हित को जिन्होने सदा महत्त्व दिया तथा जो सकीर्ण अह की सकुचित परिधि से ऊपर उठ कर मानव मात्र के कल्याण मे तत्पर रहे।

हमारे देश मे ऐसे व्यक्तियो की आज भी कमी नही है जो अपने बुद्धि-वैभव तथा अपनी वाग्मिता के वल पर दूसरो पर अपनी सर्वातिशायी छाप छोडने की शक्ति रखते है, जो द्वैध-चिन्तन तथा द्वैध-व्यवहार के वल पर दूसरो को वरगला कर अपने यश की दुदुभि स्वयं वजाते तथा दूसरो

से बजवाते है, जो आलीशान कोठियो में रहते है तथा जिनके भीतर और बाह्य के बीच कभी न पाटी जा सकने वाली बृहदाकार खाई है किन्तु यदि कमी है तो आज शास्त्री जी जैसे सत्यप्रिय, परहितकातर तथा शांतिप्रेमी मानवो की कमी है जो अन्धकार मे भटकती हुई मानवता का भी मार्ग-प्रदर्शन कर सकते है।

× × ×

प्रजातन्त्र-पद्धति मे बहुमत प्राप्त शासक-दल के साथ-साथ विरोधी दल भी काम करता है जो अभाव-अभियोगो को निरन्तर सामने रखता रहता है। शास्त्री जी ने भारत-पाकिस्तान-युद्ध के समय तथा ताशकन्द जाने से पहले भी विरोधी दल के सदस्यो से भी परामर्श किया और उनके विचारो को भी सहानुभूतिपूर्वक समझने की कोशिश करते रहे। सचाई, आन्तरिकता तथा सहानुभूति मे एक बडी शक्ति यह होती है कि उसके सामने विरोध का भी परिहार होने लगता है। इस तथ्य के स्पष्टीकरण के लिए शास्त्री जी का जीवन एक महत्त्वपूर्ण निदर्शन है।

× × ×

गाँधी, तिलक, मालवीय, गोखले, सुभाष, नेहरू आदि ऐसे महापुरुष हमारे देश मे उत्पन्न हुए जिनको जनता का पूरा विश्वास प्राप्त था—जिनकी सचाई और ईमानदारी पर जनता को कभी शक नही हुआ। किसी भी देश के सम्मुख एक बडी ट्रेजेडी का दृश्य तब उपस्थित होता है जब मूर्धन्य तथा शीर्षस्थ व्यक्तियो पर से हमारा विश्वास उठ जाता है, जब जनता उनकी सचाई पर प्रश्न-चिह्न लगा देती है।

शास्त्री जी की अपनी और बहुत-सी सीमाएं भले ही रही हो, किन्तु इसमे संभवतः दो मत न होगे कि सत्य और ईमानदारी ने उन्हे अपना पुत्र मान लिया था। इस सत्य-पुत्र की प्रभविष्णुता तो देखिए कि अमरीका के जिन राष्ट्रपति जानसन ने उनसे मिलने की तिथि इकतरफा निर्णय के आधार पर स्थगित कर दी थी, वे ही राष्ट्रपति हमारे स्व० प्रधान मत्री शास्त्री के उस पत्र को साथ रख कर वहुधा विज्ञापित करते रहते है कि शास्त्री जी की दृष्टि मे जानसन हृदय से शान्ति चाहते है। अनेक तर्कों के आधार पर भी जो वात सिद्ध नही हो पाती, एक आप्त-वाक्य की मुहर लग जाने पर वही प्रमाणित हो जाती है।

× × ×

परिस्थितियो की अपरिहार्यता के सामने शास्त्री जी का वश नही चला, ताशकन्द जाने पर क्रूर नियति के वे शिकार हो गये। किन्तु जब कभी किसी चित्रपट पर यह दृश्य दिखलाया जायगा, जब कभी कोई कवि इस त्याग और बलिदान की गाथा गाएगा अथवा जब कभी कोई चित्रकार इस अनुपम छवि को अंकित करेगा, तब-तब दर्शको या पाठको को मानव की भव्य तथा उदात्त गरिमा रोमाचित करती रहेगी। जिस व्यक्ति ने अन्त मे कहा था कि जिस दृढता और हौसले के साथ हमने शत्रु का मुकाबला किया, उसी दृढता और हौसले के साथ अब हमे शान्ति की लडाई लड़नी है, उस महापुरुष को भला कौन भूल सकेगा?

× × ×

शास्त्री जी का जीवन धूमायित कभी नही रहा; उनके ज्वलित जीवन की देदीप्यमान रश्मियों को कोटिशः प्रणाम।

फतहचन्द्रशर्मा 'आराधक'

भारतीय संस्कृति के उन्नायक

राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन् ने स्वर्गीय श्री लालबहादुर शास्त्री के प्रधान मन्त्री बनने पर आशा प्रकट की थी कि वे उन समस्याओ के समाधान मे विजय प्राप्त करेगे जो देश और भारत के मैत्री के सम्बन्ध मे अन्य देशो से सम्बन्ध रखने होगे। उस समय राष्ट्रपति ने स्वर्गीय शास्त्री के सम्बन्ध मे यह भी कहा था कि वे एक विश्वविख्यात प्रधान मन्त्री के उत्तराधिकारी रूप मे इस पद पर चुने जाने से वही काम करेगे जिस आशा के साथ उन्हे इस पद पर बिठाया गया है। राष्ट्रपति की इस आशा को स्वर्गीय श्री लालबहादुर शास्त्री ने अपने १८ मास के थोडे से ही प्रधानमन्त्रित्व-काल मे पूरी तरह से निभाया। यही कारण है कि उनके निधन पर सारे ससार के शान्तिप्रिय व्यक्ति और नेता दुखी हुए और उनके निधन को एक ऐसी क्षति बताया कि जो पूरी नही होने वाली है।

राष्ट्रपति ने स्वर्गीय शास्त्री के निधन पर जो हार्दिक श्रद्धाजलि अर्पित की, उसमें उन्होने यह माना कि शास्त्री जी ने देश की गम्भीर समस्याओ को सुलझाने मे दिलचस्पी ली। और ऐसे समय मे जब कि राष्ट्र सकट को घडी से गुजर रहा था तो उनके नेतृत्व ने देश की स्वतन्त्रता और अखण्डता की रक्षा की।

जनता के विनम्र सेवक!

स्वर्गीय शास्त्री जनता के विनम्र सेवक थे। वे एक सामान्य निर्धन परिवार मे जन्म लेकर अपनी सेवा के कारण प्रधान मन्त्री के पद तक पहुँचे थे। वे बडे बनने पर भी कभी जनता के हृदय से दूर नही हुए और सदैव जनसाधारण की मगल कामना के लिए प्रयत्नशील रहे। यही कारण था कि उन्होने थोड़े ही समय मे सारे देश का स्नेह प्राप्त कर लिया था। स्वाधीनता-सग्राम मे अनेक कठिन परिस्थितियो से गुजर कर भी वे देश के प्रति, अपने कर्त्तव्य के प्रति विमुख नही हुए थे। अपनी इस विशेषता के कारण उनका व्यक्तिगत जीवन राष्ट्रीय भावना, समाज-सेवा, धर्म के प्रति निष्ठा और उदार भावना का पूरी तरह से समावेशक रहा।

सादा जीवन!

एक गरीब देश का प्रधान मन्त्री किस ढग से रह सकता है, यह उन्होने अपने सादे जीवन से भली प्रकार व्यक्त कर दिया था। प्रशासन क्षेत्र मे सादा जीवन और उच्च विचार को पूरी तरह से उन्होने अपने जीवन मे उतार कर अनेक उन व्यक्तियो को यह सिखाया था जो बडे पदो पर रह कर टीप-टाप पसन्द करते है। इस सम्बन्ध मे स्वर्गीय शास्त्री जी की आस्था थी कि सादगी के साथ जो काम किया जा सकता है, वह दिखावटी जीवन से नही हो सकता है। उनका प्रधानमन्त्रित्व-काल जन साधारण के लिए इसलिए भी आकर्षक था कि उनसे अनेक नवयुवक यह प्रेरणा ले सकते थे कि एक गरीब घर मे पैदा होकर निष्ठावान् व्यक्ति बने रहने पर व्यक्ति प्रधान मन्त्री और राष्ट्रपति पद तक सेवा करने का अवसर प्राप्त कर सकता है। शास्त्री जी की सादगी का एक प्रमुख कारण यह भी था कि उनकी शिक्षा-दीक्षा भारत के प्राचीनतम सास्कृतिक केन्द्र काशी मे हुई थी। काशी भारतीय विद्या

और धार्मिक मर्यादा का सस्कृति संगम है। उसका प्रभाव उनके जोवन पर पड़ा था। इसके अतिरिक्त स्वर्गीय शास्त्री जो पर महात्मा गाधी, बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन, आचार्य नरेन्द्रदेव, डा० भगवानदास और युगपुरुष जवाहरलाल नेहरू का पूरा प्रभाव पड़ा था। उन सबके निकट रह कर श्रो शास्त्री जी ने अनेक गुणो को सीखा था। वे सब गुण समन्वित होकर उन द्वारा देश-सेवा के रूप में प्रकट हुए।

सत्ता के प्रति मोह नहीं !

स्वर्गीय शास्त्री जी राष्ट्र के उन नेताओ मे से एक रहे है जिन्हें कभी सत्ता का मोह छू नही गया था। उन्हे अनेक बार सत्ता का मोह छोड़ कर जनसेवा का व्रत लेना पड़ा। लगभग ३ बार उन्होने सबसे बडी सत्ता और उसके बडे पदो का मोह ठुकरा कर राजा जनक जैसा आदर्श प्रस्तुत किया।

स्वर्गीय नेहरू के उत्तराधिकारी !

स्वर्गीय शास्त्री जी ने अपने प्रधानमन्त्रित्व-काल मे उन सब आदर्शो को पूरो तरह से निभाने का यथाशक्ति प्रयत्न किया जिस परम्परा का उनके पथप्रदर्शक युगपुरुष स्वर्गीय जवाहरलाल नेहरू ने निर्माण किया था। उन्होने उत्तराधिकारो के रूप मे नेहरू जी के सिद्धान्तो का भली प्रकार पालन किया। उन्हे बहुत समय से चल रहे कई विदेशी मामलो को सुलझाने में सफलता मिली और उन्होने मन्त्रियों के लिए आचार-सहिता का निर्माण करा कर राजकीय प्रशासन मे भ्रष्टाचार की समाप्ति का प्रयत्न किया। इस प्रकार उन्होने अनेक मान्यताओ को अपने शासनकाल में प्रदान किया। वे पहले व्यक्ति थे जिन्होने भारत को यह पाठ पढाया कि भूखे रह कर भी अपने देश मे बनी चीजो से गुजारा करे और किसी भी तरह से अपने राष्ट्र का सम्मान न खोये।

सस्कृत के प्रति निष्ठा !

काशी विद्यापीठ से दर्शनशास्त्र मे शास्त्री की उपाधि प्राप्त करने के बाद इनका झुकाव भारतीय आध्यात्मिक परम्परा और मानवतावादी सिद्धातो के प्रति विशेष रूप से आकर्षित हुआ था। काशी और प्रयाग मे रहने के कारण उनका सम्पर्क अनेक सस्कृत विद्वानो से रहा था। वे यह चाहते थे कि सस्कृत की उन्नति के लिए राजकीय स्तर पर सब प्रकार की सुविधाये दी जाये और उनकी कामना थी कि प्रत्येक भारतीय व्यक्ति सस्कृत का सामान्य ज्ञान अवश्य प्राप्त करे। उनकी मान्यता थी कि जो संस्कृत नही जानता वह सच्चे अर्थो मे भारतोय नही है। उनका यह कहना सक्षेप मे यह अर्थ रखता था कि भारतीय सस्कृति और सभ्यता का सारा ज्ञान सस्कृत भाषा मे प्राप्त है, उसे पढे बिना किसी भी भारतीय नागरिक का चाहे वह किसी भी धर्म का अनुयायी हो, अपने देश की सभ्यता और संस्कृति की जानकारी प्राप्त नही कर सकता। इसी सस्कृत प्रेम के कारण स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री ने १९६३ मे अखिल भारतीय सस्कृत साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष पद पर कार्य करने का प्रस्ताव स्वीकार किया था। तब से लेकर अब तक उनके प्रयत्नो से संस्कृत साहित्य सम्मेलन कई अनेक महत्वपूर्ण योजनाओ को उनके नेतृत्व मे चला सका। वे चाहते थे कि भारत की राजधानो दिल्ली मे सस्कृत साहित्य सम्मेलन का एक इस प्रकार का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व का विद्यापीठ बनाया जाये जो केवल भारत में ही सस्कृत के ज्ञान के प्रचार-प्रसार का काम नही करे बल्कि विदेशों में भी सस्कृत के ज्ञान का व्यापक रूप से प्रसार करने मे सफल हो। इसी लक्ष्य को लेकर सम्मेलन की ओर से अखिल भारतीय संस्कृत विद्यापोठ और शोध सस्थान स्थापित किये गये। और भी कई मूल्यवान् प्रवृत्तियाँ श्री शास्त्री जी की प्रेरणा से चलाई गई। उनके प्रयत्न से गत २७ नवम्बर को नेपाल महाराज ने माल रोड़ पर संस्कृत सम्मेलन के भवन का शिलान्यास किया। स्वर्गीय शास्त्री जी इस समारोह

के अध्यक्ष थे। उस समय भी उन्होने यही आशा प्रकट की थी कि देश मे सस्कृत का प्रसार और प्रचार हो।

राष्ट्रभाषा हिन्दी के उन्नायक !

स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रभाषा हिन्दी के उन्नयन मे अपने स्वराष्ट्र मन्त्री तथा प्रधान मन्त्री काल मे पूरी तरह से प्रयत्नशील रहे और उन्होने अनेक अवसरो पर यह स्वीकार किया कि इस देश को एकता मे बाँधने का काम राष्ट्रभाषा हिन्दी ही कर सकती है। वे चाहते थे कि राजनैतिक दृष्टि मे जिन राज्यो मे हिन्दी का विरोध हो रहा है उस पर प्रेमपूर्वक विजय पाकर उन्हे हिन्दी के प्रति आकर्षित किया जाय। वे कठिन परिस्थितियो मे भी ऐसा मार्ग खोज लेते थे जिनसे उनका सौहार्द्र सभी क्षेत्रो मे बना रहता था। स्वर्गीय बाबू पुरुषोत्तमदास टडन का ससदीय समिति की ओर से अभिनन्दन करने का कार्य उनके प्रयत्न का ही परिणाम था। उन्होने पर्दे की ओट मे रह कर अपने राजनैतिक गुरु टण्डन जी का सम्मान कराने का उन लोगो से प्रयत्न कराया जो किन्ही राजनैतिक मतभेदो के कारण पण्डित जी से खिचे रहते थे।

सामयिक सन्देश !

स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री ने १५ अगस्त, १९६४ के दिन इतिहासप्रसिद्ध लालकिले पर राष्ट्र-ध्वज फहराते हुए जो देश के नाम सन्देश दिया था, उसमे उन्होने देशवासियो से कहा था कि यद्यपि हमारे मार्ग मे अनेक बाधाये आ रही है तब भी हम अपने देश की उन्नति के लिए पूरा प्रयत्न करेगे। यदि हम अपने देश मे सुख की समृद्धि करना चाहते है तो हमे विपत्तियो से घबराना नही चाहिए। उन्होने साहस के साथ खाद्य सकट सहन करने, अधिक अन्न उत्पादन करने, सारे राष्ट्र मे एकता बनाये रखने का अनुरोध किया था। उन्होने एक अवसर पर यह भी कहा था कि हम अपने सभी पड़ौसी देशो मे शाति चाहते है, युद्ध नही चाहते है। पर यदि हम पर कोई आक्रमण करे तो उसे हम सहन नही कर सकत।

सदाचार पालन !

उन्होने भ्रष्टाचार निवारण के लिए समय समय पर बल दिया था और प्रशासको से अनुरोध किया था कि वे जनता के प्रति उपेक्षा भाव न बरते। वे शासन कार्य मे कामो के निपटाने मे देरी के पक्षपाती नही थे और उनका कहना था कि कामो मे देरी करने के कारण भ्रष्टाचार होता है। उन्होने समय समय पर समान अधिकार, राष्ट्रीय एकता आदि पर बल दिया था।

राष्ट्रीय एकता !

राष्ट्रीय एकता के सम्बन्ध मे राष्ट्रीय एकता दिवस पर २० अक्टूबर, १९६४ के दिन भाषण करते हुए उन्होने अपने देश की रक्षा के साथ साथ सारे ससार मे शान्ति बनाये रखने के लिए अपील की थी। उन्होने समय समय पर इस बात पर बल दिया था कि जिस तरह से भी सम्भव हो अपने देश की स्वाधीनता की रक्षा के साथ साथ पडौसियो के साथ भी किसी प्रकार का ऐसा व्यवहार नही होना चाहिए, जो उन्हे अप्रिय लगे।

इस प्रकार अनेक मान्यताओ को स्वर्गीय शास्त्री ने इस देश पर अपनी विरासत के रूप मे जो छोड़ा है, उसे देशवासी कभी भूल नही सकते।

●

डा० पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'

योद्धा और संत

भारतवर्ष ऋषि-मुनियो का देश है। यहाँ त्यागी और तपसी व्यक्ति सदैव जन्म लेते रहते है। यही कारण है कि भारत को मानवता की जन्मभूमि अथवा सस्कृति का पालना कहा जाता रहा है। इसका यह अभिप्राय नही है कि विश्व के अन्य देशो में महापुरुषों ने जन्म नही लिया या वहाँ उनकी संभावना नही है—ऐसा कहना उचित नहीं होगा। महापुरुष सर्वत्र पैदा हुए है और होते रहेगे किन्तु भारत मे कुछ ऐसी विशेषता है कि यहाँ उनकी सख्या अपेक्षाकृत अधिक रही है। उसका रहस्य यहाँ की जलवायु और वातावरण मे निहित है। जीवन की समग्र आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए प्रचुर प्राकृतिक सम्पत्ति का भाण्डार यहाँ सदा से रहा है। पाश्चात्य देशो में जो खीच-तान भौतिक सुख-सुविधाओ के लिए मची रहती है वह इसलिए कि वहाँ प्राकृतिक दृष्टि से दारिद्र्य है। जब आपको रोटी के सवाल के हल करने मे ही सारा समय लग देना पड़ेगा तो आप जीवन के ऊपरी स्तर के चिन्तन के लिए समय कहाँ से लायेगे ? वैसी स्थिति मे आपको असन्तोष बराबर दबाये रहेगा। असन्तोष सब अनर्थो की जड़ है। इसलिए घातक अस्त्रो का निर्माण और मशीनीकरण का जोर पश्चिम मे बढे तो कोई बेजा बात नही है। इसके विपरीत भारत मे सन्तोष को ही परम धन माना गया है। कबीरदास ने लिखा है—

> गौधन, गजधन, बाजिधन, और रतन धन खान।
> जब आवे सन्तोष धन, सब धन धूरि समान ।।

सन्तोष को जीवन का मूलमत्र मान कर चलने वाले इस देश मे दर्शन और तत्व-चिन्तन के जिन क्षितिजो का उद्घाटन हमारे पुराने विचारको ने किया है वे आज भी बडे-बड़े मनीषियो के लिए आश्चर्य का विषय बने हुए है। सबसे बड़ी बात यह है कि भारत का एक साधारण नागरिक भी ईश्वर, धर्म और दर्शन के मूलतत्वो के विषय मे कुछ-न-कुछ जानकारी अवश्य रखता है। परिणामस्वरूप यहाँ का वातावरण ही आध्यात्मिक हो गया है। नई सभ्यता और भौतिक दृष्टिकोण के व्यापक प्रभाव के बावजूद हमारे देश मे आज भी उच्चकोटि की आध्यात्मिक साधना के प्रति ममत्व के दर्शन पग-पग पर होते हैं। स्वर्गीय प्रधान मत्री लालबहादुर शास्त्री इसी आध्यात्मिक वातावरण मे जन्मे और पालित-पोषित हुए।

एक साधारण से परिवार मे जन्म लेकर वे जिस ऊँचाई तक पहुँचे, वह कल्पनातीत है। जो बचपन मे पैसों के अभाव मे गगा को तैर कर पार करता हो पर किसी प्रकार की बेईमानी करने को उद्यत न होता हो या पिकनिक मे जाने के लिए पैसो के अभाव की बात स्पष्ट कर देता हो उसके आत्म-

वल की थाह कौन पा सकता है ? यह व्यक्ति वहुत ही छोटे कद का था और पहनावे-ओढावे से भी अत्यन्त सामान्य कोटि का प्रतीत होता था, चलने-फिरने या बातचीत मे भी कोई रौव-दौव नही दिखाता था लेकिन फिर भी उसको दृढता और चारित्रिक वल प्रकट हो ही जाते थे। उदाहरण के लिए एक साधारण-सी रेल दुर्घटना पर मंत्रिपद से त्यागपत्र दे देना उन्ही का काम था। फिर जब कामराज-योजना मे दूसरी वार राष्ट्रीय कार्य के लिए अलग होने की वात चली तो उसमे वे सवसे आगे थे। गरज यह कि सिद्धान्त-पालन के लिए वे कभी आगा-पीछा नही सोचते थे और न किसी की वात सुनते थे। पदो का ग्रहण और त्याग जितना आसानी से वे कर सकते थे, उतना कदाचित् ही कोई अन्य व्यक्ति कर सकता हो।

जिस समय उन्हे प्रधान मंत्री का पद सौंपा गया उस समय उनकी विनम्रता का ठिकाना न था। दिल्ली के रामलीला मैदान मे और आकाशवाणी से राष्ट्र के नाम संदेश प्रसारित करते हुए उन्होने जो पहले भाषण दिये वे उनकी विनयशीलता के ज्वलन्त प्रमाण है। उनका अभिप्राय कुछ ऐसा था—"मै वहुत कमजोर आदमी हूँ। जो भार मेरे दुर्वल कधो पर रखा गया है उसे वहन करने को सामर्थ्य मुझमे नही है। हाँ, जनता-जनार्दन के स्नेह का सवल पाकर ही मैं अपने इस उत्तरदायित्व का निर्वाह कर सकूँगा।" यह वात उस समय उन्होने इतनी वार दुहराई थी कि लोगों को उसमे उनकी कमजोरी का आभास मिलने लगा था और लगता था कि ये वहुत दिनो तक प्रधानमन्त्रित्व न कर पायेगे। लेकिन ज्यो-ज्यो समय वीतता गया, वे एक-एक समस्या को सुलझाते चले गये। धीरे-धीरे उनकी वाणी मे भी शक्ति आने लगी। न केवल शक्ति वरन् निश्चय पर दृढ रहने की ध्वनि भी झंकृत होने लगी। विनयशीलता का वह रूप जो लोगो को अति की सीमा तक पहुँचा हुआ लगता था, युद्ध-काल मे एक वीर की हुँकार मे वदल गया। अपने सेनानायको से एक वार उन्होने 'वढे चलो' कहा और फिर वे उसी पर दृढ रहे। जव-जव वे वोले, नपा-तुला उसी मंद-मंद स्वर से जिससे घर मे वातचीत की जाती है। लाखो की भीड़ उनके एक-एक वाक्य को स्वाति के लिए चंचु-पुट खोले चातक को भाँति उत्सुक होकर सुनती थी और अपना उल्लास 'शास्त्री जी की जय' 'लालबहादुर अमर हो' के गगनभेदी नारो से व्यक्त करती थी। उस समय समस्त देश की आवाज ही मानो उनकी आवाज थी। किसी भी अन्य नेता का स्वर कही नही सुनाई देता था। ऐसा आकर्षण था उनकी वाणी मे—उस वाणी मे जो उनके देशभक्ति एव वलिदान-भावसम्पन्न हृदय से नि सृत होती थी।

शास्त्री जी सादगी की प्रतिमा थे। काश्मीर मे जव उपद्रव हुआ और राष्ट्रनायक जवाहरलाल नेहरू ने उन्हे स्थिति का पता लगाकर समझौते के लिए भेजा तो उनके पास काश्मीर की सर्दी से वचने के लिए ओवरकोट नही था। चलते समय वे अपने पथ-प्रदर्शक नेहरू का ही कोट ले गये थे। इसी प्रकार एक वार रेलमत्री की हैसियत से दौरा करते हुए जव आरा मे गर्मी को अधिकता से उन्हे अपनी जवाहर जाकट उतारनी पड़ी तो समस्या उपस्थित हुई कि जाकट उतारने से गले पर फटे कुर्ते वड़े वुरे लगेगे। उस समय उनके व्यक्तिगत सहायक ने एक कुर्ते को फटवा कर शेष तीन कुर्तो के गले ठीक करवाये थे। शास्त्री जी को इस वात का पता तक न था। ताशकद की भयंकर सर्दी मे भी वे धोती पहन कर ही गये थे, यह भी उनकी सादगी का ही प्रमाण है।

और त्याग ? त्याग का क्या कहना ? किसी भी दीन-दुखी को देख कर उनका हृदय कातर हो उठता था। वे सभी की सहायता को दौड़ पड़ते थे। लोकसेवक मण्डल के आजीवन सदस्य रहे और

जितना रुपया नियमानुसार ले सकते थे उतना ही लेकर अपने बड़े परिवार का भरण-पोषण करते रहे। वे अपने परिवार वालों को भी सदैव यही बताते रहे कि वे सब देशसेवक के घर के सदस्यों की तरह रहना सीखे। अमीरों की नकल न करें। तभी तो एक बार घोर गर्मी मे अपने घर मे लगाया गया 'कूलर' उन्होने यह कह कर उखड़वा दिया था कि इससे बच्चों की आदत खराव हो जायगी। यही क्यो, उनके प्रधान मन्त्री आवास के निजी कक्ष मे कोई बहुमूल्य फर्नीचर या सजावट का सामान नही था। ऐसा निस्पृह और निर्लिप्त व्यक्तित्व रखने वाले शास्त्री जी को जो जनता का प्यार मिला वह उचित ही था।

शास्त्री जी के जोवन में सबसे बडा तत्व था प्रचार से दूर रहने का। वे जब प्रधान मत्री हुए तब लोग यह जानते थे कि वे एक ईमानदार व्यक्ति है और कर्त्तव्यपरायणता मे भी बढे-चढे है, लेकिन उनके उच्चकोटि मानवीय गुणो का पता किसी को नहीं था। धोरे-धीरे ही उनकी सुगन्ध लोगों तक पहुँची। एक प्रकार से यह अच्छ हो हुआ। ज्यो-ज्यो सकटकालोन परिस्थितियाँ विषम होती गई— काल-देवता का क्रोधानल भड़कता गया, शास्त्री जो के मानवीय गुण -धैर्य, वाक्सयम, सूझ-बूझ आदि निखरते चले गये और लोग उनकी क्षमता पर मुग्ध होते गये। युद्ध की विजय पर भी वे बहुत अधिक नही फूले। कारण वे जानते थे कि गर्व अच्छी वस्तु नही है। अपनो निरभिमानी प्रकृति के कारण ही वे ताशकन्द समझौते मे सफलता प्राप्त कर सके। न जाने कैसे उनके हृदय ने यह अनुभव कर लिया था कि शान्ति के लिए सर्वस्व की बाजी लगा देना भी कम वीरता का काम नही है। कितना अच्छा होता कि वह देवपुरुष हमारे बोच रहता। लेकिन विधाता को यह स्वीकार नही था, इसीलिए वह विश्व-शान्ति की वेदी पर अपने जीवन को आहुति देकर चल दिया।

कुछ लोग होते है जो योद्धा-प्रकृति के होते है, कुछ लोग होते है, जो संत-प्रकृति के होते है, पर शास्त्री जी उन लोगो मे थे जो योद्धा और सत दोनो की प्रकृति के धनी होते है। योद्धा और सन्त के सम्मिलित स्वरूप को लेकर देश का कार्य करने वाले उस महापुरुष को मेरा शत-शत नमन।

हरिराम आचार्य

महान् संस्कृत-सेवी

स्वर्गीय शास्त्री जी की यह स्पष्ट मान्यता थी कि भारतीय संस्कृति की धरोहर यदि किसी भाषा की गोद में सुरक्षित एवं सुपोषित रही है तो वह संस्कृत देववाणी ही है। भारत में संस्कृत का प्रचार-प्रसार अधिक से अधिक हो, अध्ययन-अध्यापन के माध्यम से संस्कृति की गौरववाहिका यह देवभाषा जन-जन के निकट आये इसके लिए वे सदैव प्रयत्नशील रहे और संस्कृत संस्थाओं को दिया गया उनका अपार स्नेह और सक्रिय सहयोग इस बात का प्रमाण है कि वे एक महान् संस्कृत-सेवी थे। उनके सुयोग्य नेतृत्व में संस्कृत को अपना खोया हुआ गौरव फिर से प्राप्त हो सका इस कथन में संदेह की कोई गुंजाइश ही नहीं है।

स्व० शास्त्री जी की शिक्षा-दीक्षा काशी में हुई। वह भी किसी आधुनिक पाश्चात्य-प्रभावपूर्ण संस्थान में नहीं, अपितु काशी विद्यापीठ में जिसकी स्थापना का उद्देश्य ही राष्ट्रीयता और सामाजिक जागृति के कर्णधार तैयार करना था। काशी प्राचीन काल से भारतीय विद्याओं, धार्मिक मर्यादाओं और नैतिक आदर्शों की प्रेरणास्थली रही है। शास्त्री जी में इन्हीं तीनों विशेषताओं का भण्डार मूर्तिमान् था। काशी विद्यापीठ से सन् १९२५ ई० में दर्शन शास्त्र में शास्त्री की उपाधि प्राप्त करके लालबहादुर श्रीवास्तव "लालबहादुर शास्त्री" बन गये और यह "शास्त्री" पद उनके संस्कृतानुराग का प्रतीक बन कर उनके भारतीय व्यक्तित्व का एक अंश बन गया।

सन् १९६३ ई० में संस्कृत-प्रचार की प्रतिनिधि संस्था—अ० भा० संस्कृत-साहित्य सम्मेलन की महासमिति ने सर्वसम्मति से श्री शास्त्री को सम्मेलन का सभापति निर्वाचित किया। वे उस समय भारत सरकार के गृहमन्त्री थे। लेकिन अपने व्यस्त कार्यक्रम में भी सम्मेलन के तत्वावधान में आयोजित अनेक आयोजनों में सक्रिय भाग लिया। संस्कृत के प्रति उनकी यह क्रियात्मक निष्ठा अभूतपूर्व थी। उन्होंने ३१ अक्तूबर १९६३ को दिल्ली में सम्मेलन द्वारा संचालित डा० राजेन्द्र-केन्द्रीय-पुस्तकालय का और २ नवम्बर १९६३ को जयपुर में "अखिल भारतीय संस्कृत शिक्षा विचारगोष्ठी" का उद्घाटन किया। संस्कृत साहित्य और शिक्षा के प्रचार की दृष्टि से इन दोनों उद्घाटनों का ऐतिहासिक महत्व रहा है। राजेन्द्र संस्कृत पुस्तकालय को एक अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तकालय और पुस्तकालय विज्ञान के प्रशिक्षण का केन्द्र बनाने की योजना है। भूतपूर्व राष्ट्रपति स्व० डा० राजेन्द्र बाबू जैसे विद्वान् की यही उपयुक्त श्रद्धांजलि होनी चाहिए।

शास्त्री जी की अध्यक्षता में ही अखिल भारतीय संस्कृत विद्यापीठ के प्रथम शासन निकाय का गठन और पंजीकरण हुआ। भारत की राजधानी में एक अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के संस्कृत एवं भारतीय

विद्याओं व भाषाओं के प्रमुख केन्द्र की स्थापना शास्त्री जी की ही वरद प्रेरणा से सम्भव हो सकी।

सन् १९६४ का वर्ष तो संस्कृत भाषा के लिए वरदान के रूप में आया। १ जनवरी को ही शास्त्री जी ने गाजियाबाद में सस्कृत सम्मेलन के २७वे अधिवेशन को, और २ जनवरी को अ० भा० संस्कृत विद्यापीठ के प्रथम दीक्षात-समारोह की अध्यक्षता की। वसन्त पंचमी के शुभ दिन, विश्व संस्कृत शताब्दी ग्रन्थ के प्रथम भाग की भेट उन्होंने आशीर्वाद सहित स्वीकार की तथा जम्मू, बग-प्रदेश के पंडित समाज की ओर से अभिनन्दन-पत्रों को स्वीकार किया। इस प्रकार अ० भा० संस्कृत साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष पद को अलंकृत करते हुए श्री शास्त्री जी ने सारे राष्ट्र के सास्कृतिक जगत् को महान् नेतृत्व प्रदान किया। उन्ही के नेतृत्व मे प्रत्येक राज्य मे सस्कृत विश्व-विद्यालय को स्थापना, सस्कृत-शिक्षा के सम्बन्ध मे केन्द्र और राज्य सरकारों को स्पष्ट नीति घोपित कराने व सस्कृत शिक्षा मे एक-रूपता लाने, सस्कृत के प्राच्य विद्वानो को सम्मानित करने के महत्वपूर्ण निर्णय लिये गये। इनसे स्पष्ट है कि शास्त्री जी अन्य अनेक भायाओ की जननी, भगिनी एव धात्री सस्कृत भाषा के प्रति कितने निष्ठावान् थे और विदेशीय प्रभाव से आक्रान्त भारतोयता के लिए प्राचीन सस्कृति एवं सस्कृत को कितना महत्वपूर्ण मानते थे।

आज शास्त्री जी हमारे बीच नही है। उनके असामयिक एव आकस्मिक निधन से राष्ट्र की जो क्षति हुई है वह अपूरणीय है। उनके परलोक-गमन पर समस्त सस्कृत परिवार का दु.खी होना भी स्वाभाविक है, क्योकि श्री शास्त्री के रूप मे उसने अपना शुभचितक, स्वजन, मार्गदर्शक नेता एव सस्कृति-प्राण युगपुरुष खो दिया है। लेकिन नियति का कठोर विधान, मूक भाव से स्वीकार करने के अलावा मनुष्य के पास और चारा ही क्या है? किंतु स्वर्गीय नेता के सन्देश और वरद प्रेरणाओ की थाती हमारे पास है, उसकी रक्षा हमारा पावनतम कर्त्तव्य है।

हरीश अग्रवाल

विज्ञान का दूसरा उपासक भी चल बसा

आज जब हमारे प्रिय प्रधान मन्त्री हमारे बीच नही है, तब हमे उनके वे अनेक शब्द याद आते है, जो उन्होने अपने प्रधान मन्त्री पद से समय समय पर कहे थे। वे भारत को प्राचीन सस्कृति और आधुनिकता के सुन्दर सम्मिश्रण थे। पिछले कुछ दिनो से ही हमारे वैज्ञानिको ने यह अनुभव करना आरम्भ कर दिया था कि जब तक विज्ञान और टेक्नालाजी के क्षेत्र मे हम अपने पैरो पर नही खडे होगे, तब तक हमारी प्रगति अवरुद्ध रहेगी। चाहे वह खाद्यान्न का क्षेत्र हो, चाहे रक्षा का, विज्ञान और टेक्नालाजी के सहारे ही हम आत्म-निर्भर हो सकते है।

शास्त्री जी ने अपना बाल-जीवन एक वैज्ञानिक के रूप मे आरम्भ किया और विज्ञान मे उनकी दिलचस्पी आरम्भ से रही। उन्होने रेडियम की आविष्कर्ता मेडम क्यूरी पर एक पुस्तक भी लिखी। राजनीति मे आने के बाद विज्ञान के पठन-पाठन में शायद वे इतना समय नही दे पाये हो, लेकिन इसका यह अर्थ नही कि विज्ञान मे उनको आस्था समाप्त हो गई। वास्तव मे श्री नेहरू की वैज्ञानिक परम्पराओं को इतनी कुशलता से निभाने वाला व्यक्ति और न मिलता।

प्रधान मन्त्री बनने के छह मास बाद ही मुझे उनका सर्वप्रथम वैज्ञानिक-भाषण सुनने का अवसर संसद् भवन मे भारतीय संसदीय व वैज्ञानिक समिति की वार्षिक बैठक मे मिला। वे लम्बे-लम्बे व्यक्तियो के बीच छोटे अवश्य लगते थे, लेकिन विचारो मे नही। देश मे वैज्ञानिक प्रगति और ससद् के वैज्ञानिक नीति प्रस्ताव की सफलता के सम्बन्ध मे उन्होने बड़ा ओजस्वी भाषण दिया। उन्होने देश मे विद्यमान संकट की घडी मे वैज्ञानिकों का कर्त्तव्य समझाया और कहा कि जब तक हमारे वैज्ञानिक जनता के सामने लाभ के लिए काय नही करेगे, तब तक देश का भला नही होगा।

भारतीयो ने आत्मनिर्भर बनने का जितना प्रबल पाठ श्री शास्त्री से पढ़ा, उतना किसी और से नही। उनकी वाणी मे मधुरता थी, वह कर्कश कभी नही हुई और इसलिए देश ने उनकी बात की ओर ध्यान दिया, उस पर अमल करने का प्रयत्न किया।

आज देश खाद्यान्न संकट से आक्रान्त है। हम इस सकट से कैसे उबर सकते हैं? केवल वैज्ञानिक प्रणालियों से ही। हमारी कृषि भूमि कम नही है, कमी यही है कि हम अपना उत्पादन नहीं बढा पा रहे है। यदि विज्ञान यह उत्पादन बढाने मे सफल हो तो देश विज्ञान के प्रति ऋणी रहेगा। लेकिन, यह कार्य कैसे हो? कृषि वैज्ञानिक और किसान निकट आएँ, तभी हमे सफलता मिल सकती है। ग्राम विज्ञान का जितना सुन्दर उदाहरण श्री शास्त्री ने प्रस्तुत किया, उतना और किसी ने नही। वे कहा करते थे कि—"गाँवो की ओर चलो। ये हमारे देश के स्तम्भ हैं। हम उद्योगो की ओर ध्यान देते हैं, लेकिन कृषि की ओर नही।"

उन्होने कहा था कि खाद्य समस्या को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से हल करने की जरूरत है। इसमें किसान, व्यापारी, उद्योगपति, जनता और वैज्ञानिक सभी का सहयोग अपेक्षित है।

परमाणु बम और शास्त्री

श्री शास्त्री के प्रधान मन्त्री काल में चीन ने दो बार परमाणु बम विस्फोट किया और सब ओर से यह पुकार होने लगी कि भारत भी परमाणु बम बनाये। लेकिन श्री शास्त्री ने श्री नेहरू की नीति को इस क्षेत्र मे भी निभाया और यह स्पष्ट कर दिया कि भारत परमाणु बम बनाने का निश्चय करके अपनी अर्थ-व्यवस्था को चौपट नही करना चाहता । हाँ, भारत परमाणु के रचनात्मक प्रयोग करता रहेगा। उन्होंने ट्राम्बे में परमाणु शक्ति संस्थान के प्लुटोनियम सयत्र का उद्घाटन करते हुए २२ अक्तूबर १९६४ को कहा था—"यह संयंत्र भारतीय वैज्ञानिको ने बनाया है। पिछले कुछ वर्षो में ससार में विज्ञान और टेक्नालाजी का पर्याप्त विकास हुआ है, इसलिए भारत को भी विज्ञान के क्षेत्र मे आगे बढने की जरूरत है। हमें सैद्धान्तिक ज्ञान के अलावा विज्ञान के क्षेत्र में व्यावहारिक ज्ञान को भी जरूरत है, जिससे हमे लाभ पहुँच सकता है। हमारा ट्राम्बे सस्थान हमारी शान्ति की नीति का परिचायक है। हमने इस संयत्र को परमाणु के रचनात्मक कार्यो के लिए बनाया है।"

श्री शास्त्री ने समय-समय पर यही कहा कि परमाणु शक्ति बमो से संसार की शान्ति भग होने का खतरा है। यह बुरी बात है कि परमाणु शक्ति का प्रयोग बम बनाने मे हो रहा है। यह आवश्यक है कि इन क्रांतिकारी आविष्कारों का प्रयोग ससार की भलाई के लिए हो। यदि परमाणु युद्ध हुआ, तो सारी मानव सभ्यता की ही समाप्ति हो जायगी। इसलिए हमे शान्ति के लिए कार्य करना चाहिए। मास्को की परमाणु परीक्षण सन्धि के बाद निरस्त्रीकरण की दिशा मे कोई प्रगति नही हुई। भूमि के अन्दर भी परमाणु विस्फोट नही होने चाहिए। यदि हम चाहते है कि परमाणु अस्त्रो का और अधिक प्रसार न हो, तो निरस्त्रीकरण समिति को अधिक सक्रिय और ईमानदार होना पड़ेगा।

वैज्ञानिक वातावरण

श्री शास्त्री ने विज्ञान और टेक्नालाजी मे अपनी आस्था प्रकट करते हुए एक बार शान्ति-निकेतन मे कहा था—"यह विज्ञान और टेक्नालाजी का युग है। विज्ञान के क्षेत्र में केवल कुछ भौतिक सुविधाएँ देकर और कुछ ही प्रयोगशालाओ में इन सुविधाओ को जुटाने से बहुत कम सफलता मिलेगी। विज्ञान का एक प्रभाव होता है, इसकी अपनी एक प्रणाली होती है। इन्हे हमे अपनाना होगा, इनमे अपने को ढालना होगा। हमे मूलभूत अनुसन्धान करना है और फिर इसका प्रयोग। हमारे यहाँ काफी प्रयोगशालाएँ, वैज्ञानिक सस्थान और तकनीकी स्कूल है। इनमे काम करने वाले वैज्ञानिको का यह कर्त्तव्य है कि विज्ञान के फल जनता तक पहुँचे और उन्हे उनका लाभ हो।

वैज्ञानिक अनुसंधान की जटिलताओ की ओर सकेत करते हुए श्री शास्त्री ने कहा था कि वैज्ञानिक अनुसंधान दलीय प्रयत्न बनता जा रहा है। जटिलताएँ इतनी अधिक हैं, ज्ञान के क्षेत्र इतने विशाल हैं कि कोई भी व्यक्ति अपने ही प्रयत्नो से कुछ ही वर्षो मे आवश्यक ज्ञान प्राप्त नही कर सकता। मूलभूत विज्ञान मे भी प्रगति इतनी तेजी से हो रही है कि विज्ञान की विभिन्न शाखाओं मे अलगाव नहीं रह सकता। इसलिए अनुसन्धान के लिए विशिष्ट कार्य-क्रम चुनते समय, इस बात पर भी विचार करना जरूरी है कि विभिन्न क्षेत्रो मे काम करने वाले वैज्ञानिक किस प्रकार एक ही योजना के लिए कार्य कर सकते है।

महान् उपासक

जब श्री शास्त्री जी ने १४ नवम्बर, १९६४ को स्वर्गीय नेहरू के ७५वे जन्म-दिवस पर राष्ट्र के नाम ब्राडकास्ट किया था, तब उन्होने कहा था कि जवाहरलाल जी विज्ञान के महान् उपासक थे। श्री नेहरू के विचारो का समर्थन करते हुए उन्होने कहा था कि विज्ञान और टेक्नालाजी द्वारा ही भारत शताब्दियो की गरीबी से मुक्त हो सकता है। विज्ञान द्वारा हो किसान खुशहाल बन सकता है और कारखाने अपना उत्पादन बढा सकते है।

श्री नेहरू का वैज्ञानिक दृष्टिकोण उनके मानवीय दृष्टिकोण से भिन्न नही था। वे जोवन की सब समस्याओ पर समान दृष्टि से ही विचार करते थे। वे द्रष्टा होने के साथ-साथ वैज्ञानिक भी थे। वैज्ञानिक भावना सत्य की खोज पर आधारित होती है, ऐसा सत्य जिसकी निरन्तर खोज की जाय, जिसमे कोई लागलपेट न हो, कोई रूढियाँ न हो और वास्तविक दैनिक प्रयोगो से प्रेरित हो। यहाँ यह उल्लेखनोय है कि गाँधी जी ने इसीलिए अपनी आत्मकथा को "सत्य के साथ मेरे प्रयोगो की कहानी" कहा था।

श्री शास्त्री जी के मन मे एक कर्मठ और सत्यान्वेषी वैज्ञानिक छुपा बैठा था। इसीलिए उन्होने कहा था—"हमे प्रयोग करने की क्षमता नही त्यागनी चाहिए। हमे अपने लिए सत्य को खोज करनी चाहिए। सत्य कोई चीज नही, जो विरासत मे मिले, यह ऐसा भी नही कि किसी अधिकार से प्रतिष्ठापित हो, विज्ञान अधिकार से परे है। कोई वैज्ञानिक किसी और सिद्धान्त को लेकर अपने सिद्धान्त की वकालत नही करेगा। गेलीलिओ, न्यूटन, आइन्स्टीन और अब नार्लीकर ने अपने पूर्व-वर्तियो के सिद्धान्तो को गलत सिद्ध किया। विज्ञान सदैव क्रान्तिकारी है। जो नारे राजनीति और रूढियो को घेरे रहते है और जो कभी-कभी हमारे दैनिक जीवन पर छाये रहते है, वे केवल वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ही हमारे से छूट सकते है।"

श्री शास्त्री ने श्री नेहरूजी के वे महत्वपूर्ण शब्द भी याद दिलाये थे, जिनमें उन्होने कहा था कि वैज्ञानिक को मानव मूल्यो से अलग नही किया जा सकता। अलगाव का कारण ही परमाणु बम की उत्पति है। यदि हमारे पास मानवप्रेमी हृदय नही है, तो वैज्ञानिक दृष्टिकोण से क्या लाभ ? विज्ञान के महान् पथ के लिए कुछ और भी चाहिए, और यह कुछ आध्यात्मिकता हो है।

आज हमारे बीच न जवाहरलाल है और न लालबहादुर, यदि कोई चीज है तो उनके बताये हुए वे मार्ग, जिन पर हमे चलना चाहिए।

रमेशचन्द्र गौड़ "विनोवा"

श्री शास्त्री' जी से एक भेंट

भारत के जननायक स्वर्गीय श्री लालबहादुर शास्त्री के दर्शन करने का सौभाग्य बहुत बार प्राप्त हुआ। परन्तु ३ बार सोद्देश्य मैने उनसे भेंट की। सम्प्रति प्रस्तुत विषयान्तर्गत प्रथम भेंट जो ३० नवम्बर १९६० इनके तत्कालीन निवासस्थान मोतीलाल नेहरू मार्ग पर की थी, का कतिपय दिग्दर्शन है।

मै २७ नवम्बर १९६२ को दिल्ली गया था। वहाँ श्री त्रिभुवननारायण सिह के (तत्कालीन आयोजना आयोग के सदस्य एवं सम्प्रति भारत शासन के भारी उद्योग मत्री) तत्कालीन निवासस्थान १६ अशोक मार्ग, नई दिल्ली में रुका था। २९ नवम्बर को मैने अपने अभीष्ट कार्यो को पूर्ण कर सायंकाल श्री त्रिभुवन सिह के निवास से स्वर्गीय श्री शास्त्री जी के (तत्कालीन गृह मंत्री) निवास पर मिलने गया। श्री शास्त्री जी सचिवालय मे व्यस्त थे, अतः उस दिन भेंट न हो सकी। ३० नवम्बर को सायकाल ४-३० बजे श्री शास्त्री जी से मिलने उनके निवास पर गया। निवास पर रहने वाले सचिव आदि मुझसे पूर्णरूपेण अनभिज्ञ थे। अतः उन्होने मुझे केवल मात्र नीचे सीढ़ियो के सन्निकट हो कतिपय क्षणो के लिए मिलने का सकेत किया। उनकी अनुमति मे मेरी मौन सहमति पूर्वमेव थी। अतः निर्देशानुसार तदुनुकूल प्रक्रिया अपनायी। जब श्री शास्त्री जी प्रकाशवीर शास्त्री तथा एक अन्य ससदसदस्य महोदय को विदा करने सीढ़ियो से नीचे आये तो मै उनके समक्ष उपस्थित हुआ। श्री शास्त्री जी मुझे अपने साथ अपने बडे आलिन्द मे ले गये। मैने अपने एक मित्र को जिनके पास कैमरा था, वाहर ही छोड़ दिया। कुशल समाचार एवं चर्चा के वाद मैने उनसे ३ प्रश्न किये और उन पर स्वर्गीय श्री शास्त्री के विचार जानना चाहे। उन्होने प्रश्न करने के लिए अनुमति दी। जो निम्न प्रकार है—

प्रश्न—आपके आर्य देश (भारत) और आर्य दर्शन (विशिष्ट रूप से वेदान्त) के प्रति क्या विचार है ?

श्री शास्त्री जी सहज स्वभाव मे उत्तर देते हुए वोले—

"प्रत्येक आर्य, आर्य देश (भारत है।) सम्पूर्ण भारतीय आर्य हैं। प्रत्येक आर्य हिमालय को अपना सिर, कन्याकुमारी को पैर, गंगा, यमुना और नर्मदा को वक्षस्थल, प्राच्य और प्रतीच्य दिशाओं

को दो विशाल वाहु और सतपुड़ा तथा विन्ध्याचल को दो बन्धक (बाँधने वाले नारे-इजारबन्द समझे। आर्यावत आर्यो का शारीरिक ढाँचा है। प्रत्येक आर्य को आत्मा आर्यावर्त की आत्मा हो।'

'आर्य दर्शन (वेदान्त) के प्रस्थापक शकर महान् आत्मा के व्यक्ति थे। वह उन व्यक्तियो मे से थे जो मानव जाति मे आध्यात्मिक और भौतिक जीवन के निर्माणार्थ इस विपय मे अवतरित होते हैं। शकर आर्य दर्शन के प्रथम और अन्तिम प्रस्थापक तो थे ही साथ ही आर्य दर्शन को विशिष्ट परिष्कृत रूप देने वाला सौष्ठव आत्मा थी। जो अपना पूर्ण प्रकाश देकर चन्द क्षणो में लुप्त हो गई। शकर की आत्मा और आर्य दर्शन का प्रकाश इस पृथ्वी पर सूर्य और चन्द्रमा की तरह स्थित रहेगे। आर्य दर्शन ने ससार की अज्ञात गहराई वालो नदी को अत्यन्त कठिनता से सत्य के तथ्यों का निराकरण कराते हुए पार जाने का मार्ग-प्रदर्शन किया। आर्य दर्शन ऐसा सुदृढ पुल है, जिस पर नेत्र-हीन चल सके और लगड़े रास्ता टटोल सके और सासारिक प्राणी जीवन मे सत-असत का ज्ञान कर सके।

आर्य देश और आर्य दर्शन के सम्वन्ध मे स्वर्गीय प्रधान मन्त्रो श्री लालबहादुर के उपर्युक्त मत से यह प्रमाणित है कि वह मनसा महान् दार्शनिक थे। ऐसे दार्शनिक थे जिसने दर्शन को अपने जीवन मे प्रयोगात्मक रूप मे उतारा। उनका जीवन ही दर्शन था। यदि इसकी विवेचना गम्भीर रूप से की जाय तो उनके दार्शनिक पहलू का और भी स्पष्ट रूप समक्ष आयेगा।

प्रश्न —मैंने दूसरा प्रश्न श्री शास्त्री जी के समक्ष प्रस्तुत किया कि साहित्यकार के सम्बन्ध मे आपके क्या विचार है ?

उत्तर '—श्री शास्त्री जी ने कहा—'असलियत मे साहित्यकार वही है जो सभो तथाकथित वादो से मुक्त होकर ऐसे साहित्य का सृजन करे जो स्रष्टा उन्नायक और परितोषिक है। साहित्य मे राष्ट्रभक्ति, श्रम की प्रतिष्ठा, राष्ट्रीय गौरव, कष्टसहिष्णुता और नैतिकता कूट कर भरी हो। आज के साहित्यकार को कालिदास नही वनना है और न ही विहारी। वल्कि उसे तो तुलसीदास वनना है। इसके वाद श्री शास्त्री ने निम्नलिखित सस्कृत वाक्य उच्चारित किये—

'कवयति सर्व जानाति, सर्व वर्णयतीति कवि ।"

कवि-साहित्यकार को समस्त विषयो का ज्ञाता और कर्त्ता होना चाहिए। 'कवनिय काव्यम्' 'कविर्मनीपी परिभू स्वयम्भू' साहित्यकार के सम्वन्ध मे भी शास्त्री के उपर्युक्त मत से ज्ञात होता है कि वह समयानुकूल साहित्यकार के दृष्टिकोण के ही समर्थक थे। उन्हे वादो से कोई स्नेह नही था। सस्कृत देवमाया का अच्छा स्थान था। कवि तथा साहित्यकार का उत्तरदायित्व समर्थक सर्वोच्च और सर्वोपरि मानते थे। स्वय ठोस साहित्य के समर्थक थे। दृष्टि के पैने थे। वस्तुत. स्वर्गीय श्री लालवहादुर शास्त्री विलक्षण साहित्यकार तथा विलक्षण विद्वान् थे। सरस्वती सुत थे।

यद्यपि मै जानता था कि श्री शास्त्री जी को एक जनसभा मे जाना था, तथापि अपने ज्ञानपिपासु इच्छाओ तथा लोभ पर संवरण न कर सका और तीसरा प्रश्न कर दिया। श्री शास्त्री जी को तीसरे प्रश्न का उत्तर देते समय असम के मुख्य मन्त्री का दूर भाप आया, परन्तु मेरी इच्छा पूर्ति करके ही मुख्य मन्त्री महोदय से दूरभाप पर सम्वन्ध स्थापित किया।

प्रश्न :—राष्ट्र और राजनीति के विषय में आपको क्या धारणाएँ है ?'

श्री शास्त्री ने तपाक से उत्तर दिया "कि सभी पूज्य देवो मे राष्ट्र भी पूज्य देव है। राष्ट्र जब तक पूज्य देव नही होगा तब तक सभी शिक्षा और ज्ञान निरर्थक है। जब तक राष्ट्र को देव मान कर पूज्य नही माना जायेगा तब तक हमारी प्रगतियां अपूर्ण रहेगी। किसी भी राष्ट्र के लिए राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करना और बात है और उसे सुरक्षित रखना और बात है। हासिल की राजनीतिक स्वतन्त्रता मे तरक्की करना और बात है। स्वतन्त्रता तरक्की के लिए हमसे भी कुछ अपेक्षा करती है। प्रत्येक भारतीय को अपने खुदगर्जी के स्वार्थो को तिलांजलि देकर ही सेवा करनी चाहिए। राजनीति मे मनुष्य सधर्म राष्ट्र की सेवा कर सकता है। जबकि व्यक्तिगत स्वार्थो को तिलाजलि देकर राष्ट्र-कल्याण कारी भावनाओ को मूर्त रूप दिया जाय और सम्वर्धन करे।

श्री शास्त्री जी के उक्त उत्तर से हम तर्कयुक्त कह सकते है कि वह वस्तुतः कमरगा कर्त्तव्य-परायण विशिष्ट राजनीतिक थे। वे दक्षिणपथी और वामपथी सभी वादो से मुक्त थे। राष्ट्र के विशिष्ट सेवक थे। शान्ति के दूत शान्ति-पाठ पढ़ा कर देश को असहाय छोड़ कर चिरन्तन शक्ति मे लीन हो गये।

लक्ष्मीचन्द्र जैन

दिवंगत लालबहादुर शास्त्री

मई १९६४ मे जब जवाहरलाल नेहरू का निधन हुआ तो राष्ट्र स्तब्ध और किंकर्तव्य-विमूढ रह गया था, इसलिए कि नेहरू का नेतृत्व हमारा बहुत बडा सहारा था—एकमात्र सहारा! आश्चर्य तो यह है कि जिस दमकते शौर्य की शिखा हमारे देखते-देखते क्षीण होती जा रही थी और जिस अन्धकार की आशका से त्रस्त होकर हम वर्षो से प्रश्न करते आ रहे थे 'नेहरू के बाद कौन ?'—उसका उत्तर खोजने से हम अन्त तक कतराते रहे। क्योकि इस एक प्रश्न मे से सैकडो ऐसे प्रश्न पैदा होते नजर आते थे जिनके सामने हम असहाय-सा अनुभव करते थे। इसलिए हमने त्राण इसी मे समझा था कि शुतुरमुर्ग की तरह रेत मे सिर दुबका कर बैठे रहे और हम बैठे रहे" और" और हमारे रत्नदीप का प्रकाश हमारे चारो ओर से सिमटता रहा और एक दिन उस केन्द्र पर आकर विलीन हो गया जहाँ स्वय दीपाधार अपने पादमूल मे सुरक्षित तमसे आत्मतुष्ट था—क्योकि वास्तव मे प्रत्येक अकेले दिव्य दीपक की यही नियति होती है।

अन्धकार मे घिरे-घिरे हमे एक दिन अचानक यह बोध हुआ कि रत्नदीप भी अमर नही होते!

जिस दिन लालबहादुर शास्त्री ने पण्डित नेहरू का उत्तराधिकार सँभाला था, काश उस दिन की डायरी उन्होने लिखी होती! और, यदि लिखी भी होगी तो क्या उसमे उस आकुलता का शताश भी आ पाया होगा जो उस क्षण उन्होने भोगी? राष्ट्र के नाम उन्होने जो पहला सन्देश ब्रॉडकास्ट किया उसमे हमारी शकालु बुद्धि ने नेहरू की वाणी की ओजस्विता देखनी चाही, किन्तु उसकी जगह एक हलकी-सी नकल को हमने उनके भाषण मे आरोपित कर लिया। बहुतो को पहली बार पता लगा कि लालबहादुर जी अग्रेजी बोल लेते है" पर सन्देह बना रहा कि क्या वह विदेशी राजनयिक खुर्राटो के आगे हकला न जायेगे?

दायित्व सँभालने के बाद लगा कि लालबहादुर जी टटोलवाँ चल रहे है। हमारी आँखे अभ्यस्त थी राष्ट्रनायक नेहरू की नि शक वेगवती चाल देखने की। हमने सोचा, लालबहादुर जी अगर इस तरह चले तो देश की मजिल मे और उनमे फासला बढता ही जायेगा।

आज सोच कर लज्जा आती है कि उनके प्रधान मन्त्रित्व के प्रारम्भिक काल को देखने वालो ने, लालबहादुर जी की भलमनसाहत और शिष्टता को दब्बूपन समझा, दूसरो की मूर्खतापूर्ण बातो को भी चुपचाप सुन लेने और उत्तर मे सकेतात्मक बात कहने की कला को उनकी रीढ-हीनता माना,

नेहरू के सांस्कृतिक व्यक्तित्व से प्रसूत वाणी के उदात्त स्फुलिगो की जगह शास्त्री जी के वक्तव्यो और भाषणो की निर्व्याज सादगी को निष्प्रभ व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति जाना।

मानो कि लालबहादुर के व्यक्तित्व की लघुता को रेखाकित करने के लिए पण्डित नेहरू के दीर्घाकार व्यक्तित्व का सन्दर्भ नाकाफी था ; अतः समान-से व्यक्तियो का एक गुट 'सिण्डोकेट' की संज्ञा लेकर राजनीति के क्षेत्र मे उतरा और पण्डित नेहरू की याद ही नहीं, उनके व्यक्तित्व की छाया तक इस नये गुट के उभरते प्रकाश में धूमिल होने लगी। किन्तु लालबहादुर उसी प्रकार लघुकाय लघु-आकार दिखाई देते रहे।

विशालकाय बरगद के धराशायी हो जाने के उपरान्त केन्द्रीय मण्डल के प्रमुख मन्त्री, राज्यो के मुख्य मन्त्री, कांग्रेस के अध्यक्ष, विरोधी दलो के नेता—सबको आकाश-भर फैलने-फूलने का नया और मुक्त अवसर मिला। केन्द्रीय शासन पर दक्षिण और पूर्व की ओर से पहला कूटनोतिक आक्रमण हुआ – भाषा-विवाद की ओट मे। हिन्दी के हृदय मे जिस नंगी तलवार की नोक को घुमाया गया, वह वास्तव मे राष्ट्र के किस मर्मस्थल को भेदने का प्रयत्न था उसकी चर्चा करना आज उचित नही। लालबहादुर जी ने जिस धीरज, दूरदर्शिता और राजनैतिक सूझ-बूझ से उस स्थिति का मुकाबला किया और विरोध के ज्वार को उसके अपने ही फेनो में टकरा कर मथ जाने, शान्त होने दिया, वह उसकी पहली विजयपताका थी जो दिल्ली के शासनालय मे फहरी। किसने किसका उपयोग किया—सिण्डीकेट ने शास्त्री जी का या शास्त्री जी ने सिण्डोकेट का – यह कहना आज कठिन है, किन्तु इतना स्पष्ट है कि यदि सिण्डीकेट को अपने अस्तित्व की सार्थकता मिली तो शास्त्री जी को विजय !

कल तक लालबहादुर जी के प्रधान-मन्त्रित्वकाल की सबसे बडी उपलब्धि थी—राष्ट्र को युद्ध की अग्नि-परीक्षा मे दीक्षित करके पश्चिमी सीमाओ से आने वाले आक्रमणकारी आततायियो को सदा के लिए नखहीन और दन्तहीन कर देना और देश के प्रत्येक नागरिक को नये दीप्त आत्मदर्प से ओतप्रोत करना। और आज जब ताशकन्द पर अचानक विषाद का तुषारपात हो गया, जब वहाँ के गली-कूचो मे सर्द हवा सिर धुनती फिर रही है, जब लालबहादुर जी की अरथी को कोसिजिन और अय्यूब कन्धा दे रहे हैं और रूसवासियो के गालो पर ढुलकने वाले आँसुओ मे भारत के जन-जन की विषण्ण मुखछवि प्रतिबिम्बित हो रही है, तो हम अपने शास्त्री जी को याद कर रहे है—एक ऐसे महान् महिमामय नेता के रूप मे जो युद्ध मे हमे विजय दिला कर स्वय शान्ति के लिए अपने प्राणो का उत्सर्ग कर गया।

लालबहादुर जी राष्ट्र को वह दे गये जो पिछली कई शताब्दियो मे कोई नही दे पाया था—और वह भी स्वय बडा बन कर नहीं हम सबको बडा बना कर।

भारत के इतिहास ने नयी करवट ली है। अब हमारे राष्ट्र को जरूरत नही ऐसे भव्य विशाल वटवृक्ष की जिसकी छाया ही हम सब का मूल धन हो। अब हमे आत्मतुष्ट रत्नदीपों के प्रकाश में मिच-मिचाती आँखों चलने की आवश्यकता नही। अब हममे से प्रत्येक एक सजीव अकुर है। जो सशक्त वृक्ष बन कर फूल-फल सकता है, अब हममे-से प्रत्येक एक जाज्वल्यमान दीप है जो अपनी ज्योति से नयी ज्योतियो को पुष्पित करेगा, लेकिन अपनी उद्दाम शिखा से किसी की निर्मल कोमल ज्योति को पराभूत नहीं करेगा।

लालवहादुर शास्त्री हमे वरदान-स्वरूप मिले थे। वे चले गये कि अब हम अपना पथ अपनी ज्योति से आलोकित करे, यही वे हमे सिखा गये है। हम कृतज्ञ है।

नेहरू जी के निधन से लगभग २० दिन पहले जब श्री लालबहादुर शास्त्री भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा आयोजित श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की चौथी पुण्य-तिथि के अवसर पर होने वाले समारोह मे 'हम विपपायी जनम के' काव्य-सकलन का ग्रन्थि-विमोचन करने पधारे तो अपने अध्यक्षीय भाषण मे वे नवीन जी की स्मृतियो मे डूबते-खोते चले गये। उन्होने कहा—उनके ही शब्द टेप पर से उद्धृत कर रहा हूँ—"शर्मा जी मे बड़ी भावुकता थी, प्यार की भावुकता जो दिल की सचाई और सफाई प्रकट करती है। मै तो उसे इसी रूप मे देखता हूँ। कभी-कभी सोचता हूँ कि लोग मुझे थोड़ा-बहुत सीधा-सादा मानते है, मगर मै कही ज्यादा चालाक हूँ। क्योकि वह भावुकता, वह इमोशनलिज्म मेरे अन्दर बहुत कम है। और जहाँ इमोशन कम हो वहाँ जरूर ही चालाकी ज्यादा होगी। तो इस दृष्टि से मै जब बालकृष्ण शर्मा की पैमाइश और उनकी जाँच-पडताल करता हूँ तो उन्हे मै बहुत ऊँचा व्यक्ति मानता हूँ।' वैसे मुझे लगता है कि दुनिया कोई खत्म तो होती नही—

खुदा जाने ये किसकी जल्वागाहे नाज है दुनिया
हजारो जा चुके लेकिन वही रगत है महफिल की!

यह दुनिया तो नही बदलती, रगत कुछ बदलती जाती है। मै कभी-कभी आजकल महसूस करता हूँ कि ऐसे लोग जो जाते है उनकी जगह हम भर नही पाते। जो भावनाएँ, जो बाते, उनमे थी—एक सुन्दरता थी, एक भेद था और जीवन मे थोड़ा-सा एक दूसरे ढग का रस था, वह जैसे फीका-सा पडता नजर आता है।"

लालबहादुर जी ने ये शब्द २९ अप्रेल १९६४ को उक्त समारोह मे कहे थे। उसके लगभग २० दिन बाद नेहरू जी नही रहे और उसके २० महीने बाद आज वे स्वय नही रहे!

बेशक इस जल्वागाहे नाज मे फिर कोई प्रधान मन्त्री बनेगा, फिर महफिले भरेगी, लेकिन हम जो अपने गाधी को वापिस न ला पाये जिसने राष्ट्रीयता को जन्म दिया, जो अपने नेहरू को वापिस न ला पाये जिसने राष्ट्र को दिशा दी तो हम अपने लालबहादुर जी को कहाँ से ला पायेगे जो हमारे राष्ट्र के साधारण व्यक्ति को भी असाधारण व्यक्तित्व दे गये, उसे आत्मसम्मान से सिर ऊँचा उठा कर चलने की शान दे गये!

१

डा० लक्ष्मीनारायण दुबे

मेरी सूरत बयां करती है शरहे दास्तां मेरी

स्व० श्री लालबहादुर शास्त्री के आन्तरिक व्यक्तित्व की झाँकी उनकी चिरस्थायी स्मिति से मिला करती थी। वे मृदुल एवं करुण भावनाओं के व्यक्ति थे। सीधे-सादे और 'धोती' पहनते हुए भी, उन्होंने भारत को गत वर्ष विजय-पर्व की स्थायी निधि दी थी। लोकदेव नेहरू के 'गुलाब' और शास्त्री जी की 'धोती' ने इतिहास के अध्यायों के लिए प्रचुर सामग्री छोड़ी है।

शास्त्री जी की सहजता तथा निश्छलता उनके कई कार्य-कलापों में फूट पड़ती थी। उन्होंने जहाँ गरीबी से उदारता का चिरन्तन पाठ सीखा, वहाँ उनका व्यक्तित्व वाचालता से भी सदा-सर्वदा दूर रहा। उन दिनों की बात है जब वे काशी विद्यापीठ में पढ रहे थे। उनके गुरुदेव आचार्य नरेन्द्र-देव ने उनकी उर्दू शायरी को स्फुरित किया। आचार्य ने शिष्य से कविता सुनाने के लिए कई बार कहा। बहुत कहने पर विद्यार्थी शास्त्री ने एक कवि की निम्न पंक्तियाँ सुनाई—

"खामोशी है जुबा मेरी—नजर है तरजुमां मेरी।
मेरी सूरत बया करती है शरहे दास्तां मेरी॥"

सचमुच उनकी जुबा खामोश रही। वे तो कर्मण्यता का मंत्र लेकर आए थे। कर्म में ही उनका जीवन रमा था और कार्य करते-करते ही वे चल बसे। आए थे किरण बन कर, गए तो सूर्यास्त हो गया।

उनकी तरुणाई जेलों ने खाई। परन्तु वहाँ भी उनकी सरलता तथा विनोदप्रियता में कोई कोर-कसर नहीं आई। सन् १९३२-३३ में वह फैजाबाद-कारागृह में थे। उनके संगी-साथियों में छोटे-बड़े सभी थे – सर्वश्री महावीर त्यागी, सादिक अली, गोपीनाथ 'अमन', चौधरी चरणसिंह, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', केशवदेव मालवीय, विश्वम्भरदयाल त्रिपाठी, मन्मथनाथ गुप्त तथा कमलापति त्रिपाठी आदि। कुछ पहले आए - कुछ बाद में।

कारागृह में शास्त्री जी और 'नवीन' जी का हास-परिहास चला करता था। 'नवीन' जी उन से वय में लगभग सात वर्ष ज्येष्ठ थे। उन दिनों समाजवाद-साम्यवाद आदि विषयों पर जोर-जोर से बहस चला करती थी। 'नवीन' जी इनमें बहुत भाग लेते थे। वह प्रगतिशील विचारों के व्यक्ति थे और शास्त्री जी को 'कंजरवेटिव' मानते थे। बाद में चल कर उनकी 'जूठे पत्ते' नामक कविता बड़ी प्रसिद्ध हुई, जिनकी निम्न पंक्तियां विशेष द्रष्टव्य है—

क्या देखा है तुमने नर को नर के आगे हाथ पसारे?
क्या देखे है तुमने उसकी आँखों में खारे फव्वारे?

'नवीन' जी भोजन करने के बाद विश्राम करने लगे। एक 'मफैया' उन पर पंखा डुला रहा था। शास्त्री जी चूकने वाले व्यक्ति नहीं थे। 'नवीन' जी के उठने के बाद, उन्होंने हँसते हुए कह दिया—

"जन को जन पर विजन डुलाते देखा।"

'नवोन' जी भी बहुत हँसे और इस बात का उन पर इतना प्रभाव पड़ा कि उन्होने इस कार्यक्रम को सदा के लिए वन्द कर दिया।

शास्त्री जी कविता के वड़े प्रेमी थे; वह अक्सर उर्दू के शेरों को अपने भाषण मे उद्धृत किया करते थे। नेहरू जी ने भी ससद् मे कभी-कभी यह कौशल प्रकट किया था। नवीन जी के 'हम विषपायी जनम के' नामक काव्य-सकलन का उद्घाटन करते हुए, शास्त्री जी ने पुनिया की असमाप्ति के प्रसग मे यह शेर कहा था—

"खुदा जाने ये किसको जल्वागाहे-नाज है दुनिया।
हजारो जा चुके, लेकिन वही रगत है महफिल को।"

शास्त्री जी हिन्दुस्तान की महफिल सूनी कर चले गए। वह जगद्गुरु शकराचार्य, प्रसाद और प्रेमचन्द की परम्परा के व्यक्ति थे, जिन्होने स्वल्प समय मे बहुत बड़ा कार्य किया। स्वाधीन भारत के प्रथम युद्ध को विजयश्री का सेहरा दिलवा कर, वे चले गए। प्राय. प्रत्येक महापुरुष अपने अभीष्ट कार्य की सम्पूर्ति के लिए ही आते है और जहाँ वह कृत्य पूर्ण हुआ कि चल देते है। उनके जीवन का एक वर्ष, एक युग की महत्ता से मडित होता है। 'प्रसाद' 'कामायनी' देकर चल बसे और 'गोदान' के वाद 'प्रेमचन्द' ने अपनी आँखे मूँद लो। महात्मा गाधी ने राष्ट्र को स्वतन्त्रता दिलवाई और वलिवेदो पर अर्पित हो गए।

शास्त्री जी की विरक्ति

शास्त्रो जो की 'स्व-विरक्ति' इन दिनो और भी अधिक वढ गई थो। खाने-पीने मे उनकी निरासक्ति तो थी ही, इन दिनो वह एकाको रहने को इच्छा व्यक्त करने लगे थे। वह कर्म केवल कर्म के लिए ही किया करते थे, पर इन दिनो उनकी आसक्ति कर्म मे भी नही रह गई थी। ऐसा लगता था कि वह कर्म की उपासना करते-करते थक गए थे, या अपनी कर्म-शक्ति से उस जाल को छिन्न-भिन्न करने मे अपने को असमथ पा रहे थे, जो उनके चारो ओर फैला हुआ था। उनकी विश्रान्ति और उनको असमर्थता कभी-कभी कुटुम्वियो के बीच मे उनके मुख से फूट पड़तो थी। राजनीति से पृथक् रह कर जीवन व्यतीत करने की वात तो समाचार-पत्रो तक मे छप चुकी है। आश्चर्य नही, यदि शास्त्री जो काल-कवलित न होते तो वे राजनोति से पृथक् हो जाते। शासन और दल की निष्क्रियता तथा भ्रष्टता उन्हे वहुत खलती थो। वे वहुत कुछ करना चाहते थे, पर करने मे अपने को असमर्थ पा रहे थे। वह अपने पीछे एक वहुत वडा प्रश्न छोड़ गए है। वह प्रश्न है—

"शास्त्रो जी के अनासक्त कर्मयोग का महान् पौरुप, और आज के शासन तथा राजनोति से उनको विरक्ति।"

हमे यहाँ इस प्रश्न का उत्तर नहो खोजना है। इस प्रश्न का उत्तर तो वह भविष्य खोजेगा, जिसके आगमन को कोई भी दुरभिसधि—कोई भी शक्ति रोक नही सकती। हमे तो यहाँ केवल यही कहना है कि शास्त्री जी जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त कर्म की ही उपासना मे रत रहे। उन्होने कभो फल की आकाक्षा न की। पर उन्हे फल प्राप्त हुआ। फल प्राप्त होने पर भी उन्होने फल का रसास्वादन न किया—यह उनके व्यक्तित्व की सवसे वड़ी विजय है। वह कर्म के लिए पैदा हुए थे, और कर्म के लिए ही चिर-निन्द्रा मे सो गए।

डा० रामधारी सिह दिनकर

वह भारत धर्म के अवतार थे

जब श्री लालबहादुर शास्त्रो प्रधान मन्त्री चुने गए, तब मैने भागलपुर से उन्हे एक पत्र लिखा था कि हिन्दुस्तान का प्रधान मंत्रित्व अमेरिका के राष्ट्रपति-पद और रूस के प्रधान मत्रित्व से ज्यादा मुश्किल काम है। आप सब तरह से उसके योग्य है। मुझे अगर चिन्ता है तो केवल आपके स्वास्थ्य की है। फिर भी आपका शासन-काल सबके लिए सुखकर होगा। मेरा अनुमान सही निकला। उनका राज्यकाल सबके लिए हितकर सिद्ध हुआ लेकिन स्वास्थ्य ने उनका साथ न दिया।

हिन्दुस्तान भयानक कठिनाइयो से भरा देश है और हिन्दुस्तान का ये कठिनाइयाँ हो उसके प्रधान मत्री के पद को कठिन बना देती है। जो आदमी कम से कम चौदह घटों तक डट कर काम नही कर सकता, वह इस देश का नेतृत्व नही सभाल सकता है। प्राइम मिनिस्ट्री का ताज काँटो का ताज है। प्राइम मिनिस्ट्री की गद्दी जीने की नही, मरने की गद्दो है। ये बाते लालबहादुर जी को भी मालूम थो और बीमारी के बाद उन्होने डाक्टरों के परामर्श के अनुसार कामो की भीड़ से थोड़ा बचना भो चाहा था। लेकिन वह सम्भव नही हुआ। अपने पोर्ट-फोलियो उन्होने कम कर दिये थे। लेकिन इसका इलाज क्या था? वह देश के प्रधान मन्त्री थे और देश मे जो कुछ होता है, उसकी जवाबदेही से प्रधान मत्रो भाग नही सकता।

जब लालबहादुर जी प्रधान मत्री चुने गए, तब कई महोनो तक लोगों में यह कानाफूसो चलतो रहो कि प्रधान मत्री तो वह चुन लिए गए हैं, लेकिन मुल्क को वह चला सकेगे या नही, यह मशकूक बात है। उस समय मैने एक छोटे से निबंध में यह इशारा किया था कि वो लोग गलती पर है जो लाल-बहादुर जी को दूध और बताशा समझ रहे है। यह वह बकरी है जिसकी टाँगे इस्पात को है। विनम्रता और सादगी लालबहादुर जी के सबसे बड़े गुण है, लेकिन वह इतने सीधे नही है कि लोग उन्हें चकमा दे जाएं, न वह इतने विनम्र है कि जो चाहे उन्हे झुका दे।

और ऐसा मै इसलिए समझता था कि मैने उन्हे काम करते देखा था। जब आसाम मे असमी और बगाली भाइयो के बीच दगा हुआ, पडित जी ने इस झगड़े को सुलझाने के लिए और किसी को न भेजकर लालबहादुरजो को भेजा। लालबहादुरजी वहाँ गए तो वातावरण को विषाक्त देख कर उनका कलेजा बैठ गया। लेकिन उन्होने कई दिन तक अपना प्रयास जारी रखा और अन्त मे उस झगड़े को निबटा कर हो वह दिल्ली वापिस हुए।

इसी प्रकार जब काश्मीर मे 'पवित्र बाल' को लेकर उत्पात खडा हुआ, तव इस आग को बुझाने के लिए पडित जी ने फिर शास्त्रीजी को ही काश्मीर भेजा। उस समय शास्त्रीजी को जो कठिनाइयाँ

झेलनी पड़ी, उसका किस्सा हम सब को याद है। शास्त्रीजी ने वहाँ अक्ल की जो खास बारीकी दिखलाई वह यह थी कि आदरणीय मुल्लाओ को एकत्र करके उन्होने उनसे यह बताने को कहा कि बाल ठीक वही है या नही, जो पहले से रखे थे। जब मुल्लाओ ने यह एलान कर दिया कि ये बाल असली बाल है, तब शास्त्री जी ने शाति की सास ली और वह दिल्ली वापिस हुए।

कैरम का स्ट्राइकर

ससद मे जब अंग्रेजी समर्थक विधेयक पेश हुआ था, उस समय भी शास्त्री जी की सूझ बूझ, नम्रता और चतुराई से हम लोग काफी प्रभावित हुए थे। यह घोर रूप से बदनाम विधेयक था और सदस्यो पर अगर सचेत की छडी टगी नही रहती, तो उसके पारित होने की सभावना नही थी। उन दिनो सदस्य काफी चिढे हुए थे। लेकिन पडित जी तो सबको उपलब्ध नही थे। जिसे भी अपनी भड़ॉस निकालनी होती, वह उसे शास्त्री जी के सामने ही निकालता था। मुझे याद है कि उन दिनो एक कवयित्री ससद-सदस्या ने शास्त्री जी पर छोटी सी एक व्यग्य कविता लिखी थी। उसे ससद के अनेक सदस्यो ने सुना था और वह कविता शास्त्रीजी ने भी सुनी थी। लेकिन वह हमेशा मुसकराते ही रहे।

लोग यह भी कहते थे कि शास्त्रीजी ने पडित जी को खुश करके अपनी तरक्की की राह बना ली है।

लेकिन ऐसी आलोचनाओ मे आखिर दम क्या होता है? जो भी बढता है एक या अनेक को खुश करके बढता है और पडित जी तो एक साथ ही एक और अनेक थे। क्या देश की जनता को खुश किए बिना कोई पडित जी को खुश कर सकता था? शास्त्री जी ने पडित जी को खुश कर लिया था मगर इसका कारण यह था कि पडित जी सच्चे जनसेवी की तलाश मे थे, जिसे अपनी गरज नही हो, जो निश्छल और विनम्र हो, जिसके हाथ मे देश की बागडोर सौपी जा सके। कामराज योजना के बाद जब शास्त्री जी फिर से मन्त्रिमडल मे बुला लिए गए तब शास्त्री जी के एक 'कामराजित' साथी ने मजाक किया था। "अरे वाह, यह तो कैरम का स्ट्राइकर निकला। बोर्ड से गिरा था हम लोगो के साथ, मगर अकेला बोर्ड पर फिर आ गया।"

लेकिन स्ट्राइकर, सच पूछिए तो कामराज खुद थे। स्ट्राइकर बनकर ही उन्होने बोर्ड से कई गोटियो को नीचे गिरा दिया। लेकिन वह तुरन्त स्ट्राइकर के पद से उठकर खिलाडी हो गया—एक ऐसा खिलाडी जिस पर सारी काग्रेस को नाज है। पडित जी ने जब 'कामराजित' साथियो मे से केवल एक को वापिस बुलाया, तब यह इस बात का स्पष्ट सँकेत था कि वह देश के सामने अपने उत्तराधिकारी को खडा कर रहे है।

शास्त्रीजी प्रधान मँत्री की गद्दी पर चाहे जैसे भी आए हो, किन्तु उस पद पर काम करके उन्होने यह प्रमाणित कर दिया कि इस पद के वह सर्वथा योग्य थे। और अपने आखिरी दिनो मे उन्होने दृढता, निर्भीकता, आत्म-निर्भरता, सूझ-बूझ और बहादुरी के जो चमत्कार दिखाए, उन्हे देखकर तो यही कहने को जी चाहता है कि भारत के सभी प्रधान मत्री अगर लालबहादुर जी के समान होते जाएँ तो फकत पच्चीस वर्ष मे यह देश ससार का अग्रणी देश हो सकता है।

लालबहादुर जी ने भारतवासियो के माथे पर जो ऋण छोडा है, उससे उऋण होने को हम क्या कर सकते है? वह जब प्रधान मत्री हुए उस समय भारत का मस्तक ग्लानि से झुका हुआ था।

वह जब स्वर्गीय होने को आए, भारत गौरव से गर्दन तान कर चल रहा था। उन्हें जो सेना मिली थी वह भी ग्लानि के भार से दबी हुई थी। उसके अधिकाश फूल नेफा के मैदान में कट गए थे। किन्तु शास्त्री जी ने उस सेना को माँज कर फिर से तरो-ताजा और जवान कर दिया।

बहुत दिनो के बाद उन्ही के समय मे भारतवासियों को यह एहसास हुआ कि हम भी वीर है हम भी मरने मारने मे माहिर हो सकते है, हम भी देश के लिए कुर्बानियाँ दे सकते है और देश के भीतर, अगर कोई शत्रु चढ़ आये तो हम भी उसे धुला चटा सकते है। एक यही दान कितना बड़ा दान है? स्वतन्त्रता के बाद के समय की तो बात ही क्या, हमारे सारे इतिहास में ऐसे कितने राजा और राजनीतिक हुए है जिनके छोटे से शासन काल मे देश ने वह चीज पाई हो, जो चीज उसे शास्त्रीजी के राज्य काल मे मिली?

भारत धर्म के अवतार

शास्त्री जी की दृढता और उनका आत्मविश्वास तो देखिये। जब अमेरिका ने पेच डाली कि अन्न हम तुम्हे महीने-महीने देगे, तब शास्त्री जी का कलेजा जल उठा। मगर वाणी उनकी गर्म नही हुई। उन्होने देश को बड़ी ही सजीदगी से सिर्फ यह सलाह दी कि 'पेट पर रस्सी बाँधो, साग-सब्जी ज्यादा खाओ, सप्ताह मे एक शाम उपवास करो। हमे जीना है तो इज्जत से जियेगे वरना भूखो मर जायेगे। बेइज्जती की रोटी से इज्जत की मौत अच्छी रहेगी।' नतीजा यह हुआ कि अमेरिका ने अन्न के कोटे को एक करोड़ से बढा कर डेढ करोड़ टन कर दिया। नेता तो अक्सर बकते ही रहते है, मगर उनकी बातो का असर नही होता। लेकिन दुनियाँ जानती थी कि शास्त्री जी जो कहते है, वही उनका करने का विचार होता है। इसीलिए उनकी बातों का असर होता था। युद्ध के समय जो मुस्तैदी शास्त्रीजी ने दिखलाई उसकी प्रशसा सारी जनता और सारी फौज करती है। लेकिन जब शाति का मौका आया, तब ताशकद मे शास्त्री जी ने चौहान साहब से कहा—"यह याद रखिये कि जिस दृढता से हमने युद्ध किया है, उसी दृढता के साथ हम शाति की भी खोज करेगे।" न जाने शास्त्री जी के भीतर कितने जन्मो की साधना पूजीभूत थी कि लगता है वह भारत धर्म के ही अवतार थे।

युद्ध के नेता

दूसरा महायुद्ध नही होता तो दुनिया को यह पता ही नहीं चलता कि चर्चिल केवल ओजस्वी वक्ता ही नही है वह युद्ध के भी बेजोड़ नेता हो सकते हैं। अगर भारत और पाकिस्तान का आक्रमण नही होता तो हमे भी पता नही चलता कि शास्त्री जी के भीतर युद्ध जीतने का भी माद्दा मौजूद है। वह इतने विनम्र थे कि लगता है विनम्रता उनके सभी गुणों को छिपाकर बैठ गई थी। जब पाकिस्तान ने खरोंच मारी, उस विनम्रता के आवरण को फाड़ कर युद्ध का नेता प्रकट हो गया। और भारत की जनता निहाल हो गई। हा, भारतवासियो! तुम्हें निराश होने की आवश्यकता नही है। लालबहादुर जी को प्रधान मत्री बना कर, उनसे युद्ध लड़वा कर, उनके द्वारा तुम्हे विजय दिलवा कर और फिर युद्ध की आग पर उनके हाथो पानी डलवा कर, भगवान ने तुम्हे ढाढस बँधवाया है। नेता पाने के लिए तुम्हे सुकरातों और बुकरातो के पीछे दौड़ना है, नफीस कपड़ो और शानदार अगरखो पर नही जाना है।

तुम्हारा नेता तुम्हारे बीच से प्रकट होगा, तुम्हो-सा भोला-भाला तुम्हो सा गरीब, तुम्हो सा सीधा-सादा और बिल्कुल तुम्ही सा अनाकर्षक और आभाहीन।

जो भी आदमी शास्त्री जी से मिल कर वापिस आता था, वह अपने मन मे एक बार यह जरूर सोचता था कि 'अरे यही भारत का प्रधान मन्त्री है ? इससे तो मैं ही कुछ तेज हूँ।' मगर जो आदमी सबसे सीधा, सबसे श्रीहीन और सबसे कम तेजस्वी दीखता था, सारा भारत उसी की आज्ञा मे रहना सीख गया था। कहते है कि जिन लोगो ने उनकी ताईद इसलिए की थी कि वह बहुत सीधे और कमजोर थे, उनका भ्रम ज्यादा दिन नही टिका और खुद वह ही लालबहादुरजी का मुँह जोहने लगे थे।

शास्त्री जो लगभग देहातो आदमो थे। लेकिन देहातो वह उस अर्थ मे थे, जिस अर्थ मे ऋषि देहाती होता है। वशिष्ठ ऋषि थे, जगल मे रहते थे, मगर सारी अयोध्या उनके अधीन थी। चाणक्य मौर्य-साम्राज्य के भाग्य विधायक थे, मगर खुद उनकी झोपड़ी पर लौकी को लती फूलती थी। शास्त्री-जी भी तीस वर्षो तक सत्तारूढ़ रहे, मगर अपना घर वह कही भी खडा नही कर सके। क्या ऋषि इससे बड़ा मनुष्य होता है ?

महावीर अधिकारी

दूब की अपराजेय शीतल ऊँचाई

लालबहादुर शास्त्री के बाल्यकाल का अध्ययन करने पर सहसा इस निष्कष पर पहुँचने का मन होता है कि जिन लोगों का प्रारम्भिक जीवन वैभव—विलास मे व्यतीत होता है, सम्भवतः वे जीवन के कटु यथार्थ की अनुभूतियो से वचित रह जाते है और गमलो में लगाये गये फूलों के समान जीवन को सम्पूर्णता को प्राप्त नहीं कर पाते। शास्त्री जी का जीवन-बाल-मनोविज्ञान की उन धारणाओं को भी पराजित करता है, जिनके अनुसार यह कहा जाता है कि कष्टो, अभावो और वचनाओ से आच्छादित बाल-मस्तिष्क अनेक कुण्ठाओ के शिकार हो जाते है और वे कुण्ठाएं जीवन-पर्यन्त सामान्य जीवन के मार्ग में बाधा उपस्थित करतो है। शास्त्री जी के पारिवारिक, सामाजिक और राजनीतिक जीवन मे आश्चर्य-जनक सन्तुलन का परिचय मिलता है।

शास्त्री जी का जन्म २ अक्टूबर १९०४ को मुगलसराय में हुआ था। इनके पिता शारदाप्रसाद श्रीवास्तव धनाढ्य नही थे, परन्तु उत्तर प्रदेश के कायस्थ-परिवारो की उच्च सास्कृतिक परम्परा, बौद्धिक विकास तथा उच्च जीवन व्यतीत करने के आदर्श से प्रेरित एक कुलीन परिवार के सदस्य थे। पेशे से वे एक शिक्षक थे। बाद मे उत्तर प्रदेश सरकार के राजस्व विभाग में क्लर्क पद पर नियुक्त हो गये थे। नन्हे (शास्त्री जी का प्यार में घरेलू नाम) अभी डेढ वर्ष का हुआ था कि उनके सिर से पिता का साया हमेशा के लिए उतर गया। उसे शायद यह भी जानने का होश नहीं था कि पिता के संरक्षण से हीन उसे अपने हो पैरों पर खड़े होकर जीवन का निर्माण करना है। माता रामदुलारी देवी अल्पावस्था मे वैधव्य को प्राप्त हो गयी। माता के लिये 'नन्हे' ही एकमात्र आश्रय और सहारा था। धर्मपरायणा माँ के लिए तो वे गगा माता की ही देन बन गये। गंगा के वरद पुत्र नन्हे के शैशवावस्था की दो कहानियाँ प्रचलित है। हो सकता है कि एक ही कहानी के दो रूप हो।

गंगा की निर्मलता व्यक्तित्व में बस गयी

एक कहानी है कि रामदुलारी देवी इलाहाबाद में पुण्यस्नान के लिए गयीं। नन्हें उस समय केवल दो माह का था। गंगा पार करते हुए बच्चा उनको गोद से फिसल पडा। माँ ने सोच लिया कि नन्हें गंगा मैया के अंक में समा गया, लेकिन नन्हें दूसरी नौका में बैठे हुए एक किसान की टोकरी मे गिर गया था। इधर माँ अपने शिशु के वियोग मे वेहाल हो रही थी, उधर किसान खुश था कि गगा मैया से उसे इतना मूल्यवान प्रसाद प्राप्त हुआ। इस कहानो के अनुसार बच्चा चार दिन वाद वापस मिला। दूसरी मान्यता यह है कि जब नन्हे तीन महीने के थे, तो उनकी माता गगा-स्नान के लिये गयी। वे बच्चे

को घाट पर नहला रही थी कि इतने मे भीड़ का रेला आया, वे स्वयं भी गिर गयी और बच्चा उनके हाथ से छूट कर एक किसान की टोकरी मे गिर गया। दुखी माँ अपने बच्चे को घर-घर खोजती फिरी। बाद मे पुलिस मे सूचना दर्ज कराई गयी और उसकी सहायता से नन्हे वापस मिल गये।

उनके बचपन से गगा का बेहद निकट का रिश्ता रहा था। उनके प्रारम्भिक जीवन को विपन्नावस्था के बारे मे एक कहानी यह भी प्रचलित है कि वे प्राइमरी स्कूल मे शिक्षा ग्रहण करने जाते समय गगा तैरकर पार किया करते थे। शायद इस कहानी मे अतिशयोक्ति ही अधिक है। अधिक विश्वसनीय कहानी यह है कि मेला देखने के लिये लालबहादुर शास्त्री अपने बाल मित्रो के साथ गगा पार करके गये। दिन भर मेले मे घूमने के बाद जब सब लोग लौटने लगे, तो लालबहादुर पीछे को ठिठक गया। जब एक-एक करके सभी साथी नौकाओ मे बैठ गये और घर के लिए रवाना हो गए, तो लालबहादुर गगा मे कूद पड़े और तैरकर घर जाने लगे। गगा पाट आधा मील चौडा था। चौड़ाई और गहराई की दृष्टि से किसी भी मौसम मे गगा पार करने वाले को वीर माना जाता है। लालबहादुर तो बच्चा ही था।

नन्हे ने अपने साथियो से कह दिया था कि अभी और मेला देखेगा, लेकिन वास्तविकता यह थी कि उसके पास नाव का किराया अदा करने के लिए पैसे नही थे। स्वाभिमानी लालबहादुर अपने मित्रो को अपनी स्थिति का भान नही होने देना चाहते थे। तैराकी मे केवल कौशल की प्राप्ति काफी नही होती। बाजुओ मे ताकत को जरूरत भी होती है। लालबहादुर को शायद अपनी कुव्वते-बाजू पर अभिमान था। इसीलिए जब कभी जेल को चुनौती उन्हे मिली, वे हमेशा कमर कस कर तैयार हो गये। वैसे दो बार वे डूबते-डूबते बचे थे। एक बार तो अपने शिक्षक का तीन वर्ष का बच्चा उन्होने अपने कन्धे पर बैठाया हुआ था। आश्चर्य है कि डूबने का अवसर तालाब के ठहरे हुए पानी मे आया, वेगवती सरिताओ ने उन्हे कभी धोखा नही दिया। उनके प्रारम्भिक जीवन के इन तत्वो का प्रभाव आगे चलकर उनके मित्रो और सहकर्मियो के चुनाव पर भी पडा। शायद नेहरू के रूप मे उन्हे वेगवती गगा का जीवन्त रूप मिला और उन्होने ऐसे महाशयो को जो ठहरे हुए जल के प्रतीक है, इसलिए प्रणाम कर लिया।

ननिहाल में

बाल्यकाल के सस्कार ही व्यापक जीवन का आधार बनते है। ये सस्कार उन्हे अपने ननिहाल मे प्राप्त हुए। पिता के देहावसान के बाद रामदुलारी देवी अपने पिता के घर चली गयी। बड़ी लड़की होने के कारण वे अपने पिता की प्रिय थी। लालबहादुर को भाई-भतीजो, नाती-पोतो और नातियो-पोतियो से भरा कुनबा मिला। स्वय शास्त्रीजी का कहना था कि उनके पिता जीवित होते, तो भी शायद उन्हे इतना प्यार न कर पाते। छठी कक्षा तक वे अपने नाना हजारीलाल के घर मुगलसराय मे ही रहे। इस जमाने की अधिक घटनाओ का लोगो को पता नही है। नाना के घर पर पलने वाले बच्चे प्राय उदासीन, कामचोर और झगड़ालू हो जाते है। उन्हे या तो अधिक प्यार मिलता है या निहायत उपेक्षा, लेकिन लालबहादुर के प्रारम्भिक जीवन मे ऐसी कोई कुण्ठा कभी देखने मे नही आयी।

दस वर्ष की आयु मे छठी कक्षा मे उत्तीर्ण होने के बाद उन्होने मुगलसराय छोड़ दिया और वाराणसी मे अपने मौसा रघुनाथप्रसाद के यहाँ चले आए, ताकि हाईस्कूल मे प्रवेश कर सके। रघुनाथ-प्रसाद एक आदर्श गृहस्थ थे। उनका जीवन निष्काम कर्म का आदर्श उदाहरण था। वे बनारस

म्युनिसपैलिटी मे हैड क्लर्क थे। उस जमाने मे हैड क्लर्क को गरीब नही कहा जा सकता था। यह बात दूसरी है कि वे अपने परिवार को उतनी सुख-सुविधा नही दे पाते थे, जितनी देना चाहते थे। बड़े परिवार का सचालन करना और लोभ का सवरण करना मुश्किल काम होता है। बनारस के जीवन मे प्राच्य विद्यार्थियो के अभ्युत्थान का यह वह युग था जबकि घर-घर मे योग-साधना, तपश्चर्या और दार्शनिक उपलब्धियाँ प्राप्त करने की ओर झुकाव था। बीसवी सदी के प्रारम्भिक चरण मे अनेक योगियो, सन्त और फकीरो का विचरण क्षेत्र रहा है। लालबहादुर के मौसा एक सद्‌गृहस्थ के रूप मे प्रेरक जीवन व्यतीत करते थे। साठ वर्ष की आयु में अवकाश ग्रहण करने के बाद उन्होने एक दूकान चलायी, ताकि अपनी आमदनी में वृद्धि कर सकें। विकट परिस्थितियो मे गृहस्थ जीवन के ऐसे संचालन को लालबहादुर ने खुली आँखो देखा था। सम्भवत: मौसा के निष्काम जीवन का ही प्रभाव है कि शास्त्रीजी तपे तो जी भर कर, लेकिन संग्रह की तरफ ध्यान देने का कभी विचार ही उनके मन मे नहीं आया। सन १९३५ और ४५ के बीच शास्त्रीजी के पारिवारिक जीवन की आर्थिक कठिनाइयों को जो लोग जानते है, उन्हे यह विश्वास करने मे कभी कठिनाई नही हुई कि वे पिछले जन्म मे अपरिग्रह-साधना, जो शायद अधूरी रह गयी थी, उसकी पूर्ति इस जन्म मे कर रहे है।

घर के प्रभाव और हरिश्चन्द्र हाई स्कूल के वातावरण ने नन्हे के जीवन को नवीन साँचे में ढाल दिया। डा० आर० मन्केकर ने शास्त्रीजी की जीवनी मे उल्लेख किया है कि इतनी छोटी उम्र मे ही उन्होने सन्तो की वाणी से एकात्म कर लिया था। गुरु नानक के एक पद को उन्होंने अपने जीवन का नियामक मन्त्र बना लिया था।

नानक नन्हे ह्वै रहो, जैसे नन्ही दूब
और रूख जल जायेगे, दूब खूब की खूब।

वास्तव मे नन्हे के लघु आकार ने सन्तोष और धीरज से काम लेने और खामोशी के साथ अपने अन्य गुणो का विकास करके सबकी प्रशसा अर्जित करने का संकल्प कर लिया था। उसे केवल लघु आकार-प्रकार का बोध ही नही था, उसे यह भी ध्यान रहता था कि पिता के न होने के कारण वह दूसरो की तरह अराजक और उदण्ड जीवन व्यतीत नही कर सकता। जब वह ६ वर्ष का था, तो बहुत से बन्धु-मित्रों के साथ एक सार्वजनिक उद्यान पर आक्रमण मे नन्हे भी शरीक हो गया। दूसरे साथियो ने फल-फूलो की नौरोज उडाई, लेकिन नन्हे ने एक फूल तोडा ही था कि माली इस बाल सेना की ओर शोर मचाता हुआ लपका। बडे छोकरे तो भाग गये। बेचारा नन्हे खडा रह गया। माली ने जब उसकी अच्छी मरम्मत करदी, तो उन्होने माली से कहा "मेरे पिता नही है, इसीलिए तुम मुझको इस तरह पीट रहे हो।"

"तब तो और भी जरूरी है कि बेटा तुम अच्छा आचरण करो।" माली ने कहा।

माली ने जिस कठोर यथार्थ की ओर सकेत किया था, लालबहादुर के जीवन मे तो वह जैसे रम गया था। पढ़ाई मे ही उसका ध्यान रहता। गणित मे उसकी गति दूसरे विषयो के समान नही हो सकी। ज्यामिति और अलजबरा मे निपुणता के कारण यह कमी वह पूरी कर लेता था। अंग्रेजी भाषा मे उसकी विशेष गति थी। खास तौर से उसका उच्चारण बहुत सही होता था। इन्सपैक्टर के मुआयने के अवसर पर अंग्रेजी पाठ का वाचन करने के लिए लालबहादुर को ही नमूने के तौर पर चुना जाता था और उसे प्रशंसा भी मिलती थी।

गुलामी की पीड़ा और गान्धी का जादू

शान्त स्वभाव और अपने काम से काम रखने की प्रवृति के कारण लालबहादुर को स्कूल के उद्धत लड़को के अत्याचारो से भी मुक्ति मिलो। असाधारण अध्यताओ मे गिनती न होने पर भी वे अपने शिक्षकों के अत्यन्त प्रिय पात्र रहे। लालबहादुर के मानसिक क्षितिज पर गुरु-कृपा से एक दूसरी ही दुनियाँ का उदय हो रहा था। स्वराज्य प्राप्ति की पुकार देश के कोन-कोने मे उठ रही थी। लालबहादुर उस समय के महान राजनीतिक नेताओ के भाषणो का पारायण करता और देश-भक्ति की भावना उसके हृदय मे हिलोरे पैदा कर देती। इन्ही दिनो मे उन्हे भारत के दो महान नेताओ के दर्शन करने और उनका राष्ट्रीय उद्‌बोधन सुनने का अवसर प्राप्त हुआ। सयोग था कि जिस समय लोकमान्य तिलक बनारस पधारे, लालबहादुर शहर से पचास मील दूर था। रेल यात्रा करके अपने प्रिय नेता के दर्शन करने और उनके प्रेरक विचारो को सुनने के लिए उसके पास पैसा नही था। वह हाथ मलकर इस असमर्थता पर दुखी हो हो कर रह जाता। लेकिन उसने साहस करके कुछ पैसा उधार ले ही लिया और बनारस आकर 'स्वराज्य हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है' के उद्‌बोधनदाता का भाषण सुनने का सौभाग्य प्राप्त किया।

भारतीय राजनीतिक सैद्धान्तिक सन्धिकाल मे लालबहादुर की प्रतिभा का सवर्धन हो रहा था। यह वह युग था जब गान्धीजी दक्षिण अफ्रीका से भारत आये ही थे। इससे पूर्व लोकमान्य तिलक का व्यक्तित्व भारतीय राजनीतिक रगमच पर राष्ट्र की स्वाधीन चेतना का प्रतीक बन चुका था। प्रथम विश्व युद्ध मे अग्रेजो की स्थिति सकटापन्न थी और ईवान डी०वेलरा ने आयरलैण्ड मे क्रान्ति का शख-नाद कर दिया था। लेकिन महात्मा गान्धी के आगमन से स्वाधीनता आन्दोलन का स्वर बदल गया। लालबहादुर ने १२ वर्ष की आयु मे ही गान्धीजी के भी दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त किया।

शास्त्रीजी के मानस पर गान्धीजी के व्यक्तित्व की अमिट छाप पड़ने का कारण भी शायद यही था। गान्धीजी सन् १९१६ मे बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के उद्‌घाटन के अवसर पर बनारस आये थे। लार्ड हार्डिंग्ज विश्व विद्यालय भवन का शिलान्यास करने आये थे। पण्डित मदनमोहन मालवीय की विशेष इच्छा से गान्धीजी पधारे थे। जाज्वल्यमान वेशभूषा से सम्पन्न अनेक महाराजा उपस्थित थे। अध्यक्षता दरभगा के महाराजा कर रहे थे। गान्धी जी ने ब्रिटिश सरकार और भारतीय महाराजाओ के विरुद्ध डटकर भाषण किया। उन्होने स्वदेशी और स्वराज्य की चर्चा की और भारतीय समाज की फूट की ओर ध्यान आकर्षित किया। उन्होने क्रान्तिकारियो के देश-प्रेम की चर्चा की, लेकिन रक्त-क्रान्ति के स्थान पर सत्याग्रह की स्थापना की, "राजाओ, जाओ और अपने-अपने रत्न बेच दो।" उनके खरे और पैने भाषण को सुनकर बड़े अहलकार और राजे-महाराजे सभा-भवन छोडकर चले गये थे। अन्त मे क्षुब्ध होकर सभा के अध्यक्ष दरभगा महाराज सभा-भवन से चले गये। श्रीमती एनीबेसेन्ट ने गान्धीजी के भाषण के प्रति क्षोभ प्रकट किया था, लेकिन जनता आदि से अन्त तक मन्त्रमुग्ध होकर उन्हे सुनती रही।

मोटी धोती, काठियावाडी अगरखा और सिर पर पगड़ी धारण करने वाले गान्धी का स्वर बनारस के विश्वनाथ मन्दिर से लेकर गली-गली मे गूँज रहा था। गान्धी देखने मे एक विपन्न काठिया-वाडी किसान से अधिक नही थे। लेकिन उनके स्वर मे गीता के भगवान की प्रतिच्छवि थी। लाल-बहादुर के कोमल मानस पर इस तेजोमय वातावरण का प्रभाव पड़ा। बीसवी शताब्दी के प्रारम्भिक

चरण म पिता का स्थान हर बालक के मनमें इन्हीं नेताओं ने ग्रहण कर लिया था। लालबहादुर का मन दृढ़ और संकल्पशील होता जा रहा था। वह अपने रूप में महाभारत के कृपाचार्य के दर्शन करने लगा था। लालबहादुर बालस्काउट मे भर्ती हो गया था। सरकार समर्पित बेडेन पावेल के स्काउट—दल में नहीं, वरन् भारत सेवा समिति के बालस्काउट-दल मे। इस दल के सदस्य की हैसियत से वह अपने साथियों के साथ शिक्षा और सेवा-शिविरो मे भाग लेता था। ब्रिटिश राज के परिणाम स्वरूप भारतीय जनता के कष्टों और दुखों के बारे मे अपनी राय जाहिर करता था। गान्धीजी की तेजोमय आत्मा ने उसके कोमल हृदय में वास कर लिया था।

लालबहादुर ने अपने को भावी जीवन की तैयारी के लिए इसी समय से ढालना शुरू कर दिया था। उनके बाल साथी त्रिभुवननारायण सिह ने सार्वजनिक रूप से यह कहा है कि लालबहादुर अपने कार्यो के लिए किसी दूसरे पर निर्भर करना पसन्द नही करते थे। "वे अपने जूतो को खुद ही गाठ लेते थे और अपने कपड़े भी स्वयं ही सी लिया करते थे।" विद्यार्थी जीवन काल मे वे भारी बाग्मी नही थे, लेकिन वे यह भली भाँति जानते थे कि उनके मस्तिष्क मे क्या है? १७ वर्ष की आयु तक वे हरिश्चन्द्र कालेज मे पढ़ते रहे। हालाकि अपने घर का वे ही एक मात्र सहारा थे। उन्ही को परिवार के दायित्वो की पूर्ति करनी थी। लेकिन समाज के दायित्वो के प्रति कर्तव्य-बोध की भावना ने उन्हे अकिंचन नहीं होने दिया, परिवार की सीमाएँ इतनी बलवान न साबित हो सकी कि वे हाई स्कूल कक्षा पास करके कहीं क्लर्की करने लग जाते और कोल्हू के बैल की तरह विदेशी शासन को सहन करते रहते। उनके विद्यार्थी काल मे और भी सैकडों साथी रहे होंगे लेकिन लालबहादुर ने अपनी दिशा शायद चुन ली थी। वह अपने पाठ्यक्रम के साथ इण्डियन नेशनल कांग्रेस की गतिविधियो का पारायण करता। गोपाल कृष्ण गोखले, विपिनचन्द्र पाल, सुरेन्द्र नाथ बनर्जी, बाल गगाधर तिलक और महात्मा गान्धी के भाषणो का भी अध्ययन करता। इन्ही नेताओं के पुण्य-प्रसाद से उसकी आत्मा मे प्रकाश पैदा हुआ। सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लेने के लिए जब उसने अध्ययन छोड़ा, तो बड़ी श्रद्धा के साथ लड़कों ने उसे घेर कर अभ्यर्थना की। यह अभ्यर्थना ही उसको एकमात्र पूंजी और शक्ति बनी।

गान्धीजी की पुकार पर सोया सिंह जागा

जल, पृथ्वी और आकाश तीनों तत्वों के विद्यमान रहते हुए भी घटका निर्माण तब तक नही होता, जब तक कि कुशल कुम्हार के हाथों द्वारा तीनों का समायोग न हो जाय। लालबहादुर के मन की स्थिति भी यही थी। निष्कामेश्वर मिश्र के रूप में उसे एक कुशल कुम्भकार की प्राप्ति हुई। वैसे तो निष्कामेश्वर मिश्र हरिश्चन्द्र हाई स्कूल मे गणित और अंग्रेजी के शिक्षक थे, लेकिन उनके अध्यापन के विषयो की कोई सीमा नहीं थी। मझोले कद, तेजोमय नेत्र और दीप्तिवान इस अध्यापक को भारतीय परम्परा के उन शिक्षकों की श्रेणी में रखा जा सकता था जो अपने शिष्यों को साक्षर ही नही वनाते, उनकी अन्तश्चेतना को भी संवारते है।

निष्कामेश्वर मिश्र अपने शिष्यो को प्राचीन भारतीय शौर्य की कहानियाँ सुनाते थे। स्काउट मास्टर की हैसियत से वे उन्हे बाहर ले जाते और शिविरों मे उन्हें महात्मा तिलक के 'स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार' का रहस्य समझाते। महाराणा प्रताप और शिवाजी द्वारा लड़े गये स्वाधीनता सग्रामों से लेकर वे उन्हे क्रान्तिकारियो के कारनामो से परिचित कराते। कहते हैं, इन्ही आग्नेय

विचारो के प्रभाव मे १६ वर्ष की आयु मे लालबहादुर का रुझान क्रान्तिकारी गतिविधियों को तरफ हुआ था। अगर सन् १९२० मे गान्धोजी फिर बनारस न आते, तो हो सकता था कि लालबहादुर क्रान्तिकारी दल में प्रवेश कर जाते। लालबहादुर शास्त्री जब कहते थे कि उनके जीवन पर सबसे अधिक प्रभाव गान्धी जी का है, तो यह वात गलत नही है। गान्धीजी भारतीय राजनीति में धूमकेतु की तरह आये और भारतीय राजनोतिक क्षितिजपर उनका इन्द्रधनुषी व्यक्तित्व एक छोर से दूसरे छोर तक छा गया। चम्पारन सत्याग्रह से गान्धी ने नील उगाने वाले किसानो को अंग्रेज प्रभुओ की दासता से मुक्त करने का श्रेय प्राप्त किया था। गुलामी की प्रथा के समाप्त होने पर ही ब्रिटिश सरकार ने अपने उपनिवेशो मे इण्डेचर्ड लेवर के रूप में ५ वर्ष के अनुबन्ध के बहाने भारतीय नागरिक मजदूरों को जवरन भर्ती करने की प्रथा को कायम रखा था। अफ्रीका मे सफल संघर्ष के बाद गान्धीजी ने इस प्रथा पर प्रहार किया। गान्धीजी ने चम्पारन सघर्ष मे सफलता प्राप्त करके एक ऐसा उसूल प्राप्त कर लिया था, जिसके सहारे भारत स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकता था।

गुजरात मे खेड़ा जिले के किसानो की मुक्ति के लिए गान्धी जी ने सफल हड़ताल की थी। रॉलेट ऐक्ट के विरोध के दौरान जलियावाला काण्ड घटित हो चुका था। इन्हीं दिनों १२ अप्रेल को रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने गान्धी जी को पत्र लिखा था "...... इस सकट की घड़ी मे आप एक महान नेता के रूप मे हमारे मध्य आये। आपने पुन. भारतीय विश्वास की पुनर्स्थापना की, जो कि गुप्त प्रतिहिंसा और भयजनित कायरता का विरोध करती है। आपने कहा है, जैसा महात्मा बुद्ध ने अपने समय में किया था. क्रोधपर अहिंसा की शक्ति से विजय प्राप्त करो, बुराई पर सच्चाई की शक्ति से विजय प्राप्त करो।" सन् १९२० मे महात्मा तिलक का देहावसान हुआ था और उनके अन्तिम शब्द भारत के प्राणो मे वस गये थे "जव तक स्वराज्य प्राप्त नही होगा, भारत समृद्ध नही हो सकता। हमारे अस्तित्व के लिए स्वराज्य अनिवार्य है।" लालवहादुर के कोमल मस्तिष्क पर इतिहास के इस महामहिम अध्याय का प्रभाव पड़ रहा था।

इण्डियन नेशनल कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन मे गान्धी जी का 'सिविल नाफरमानी' का प्रस्ताव भारो वहुमत से स्वीकार कर लिया गया। असहयोग आन्दोलन का उद्देश्य यह था कि लोग सरकारो पदवियों का परित्याग कर दे, सरकार को किसी प्रकार का सहयोग न दे, शिक्षा सस्थाओ, न्यायालयो, महाविद्यालयो का वहिष्कार किया जाय और हाथ की कताई वुनाई की जाय, ताकि राष्ट्रीय आन्दोलन की सफलता के लिए हर व्यक्ति अधिक से अधिक योगदान करे। गान्धी जी के इस आह्वान को देश ने सुना और उसे स्वोकार किया। इसी सन्देश को लेकर गान्धी जी फिर एक वार वनारस आये थे, लालवहादुर के सामने एक भारो चुनौती आयी। एक तरफ उनके नाते-रिश्तेदार उन्हे यह समझा रहे थे कि अध्ययन को छोड़कर वे अपने जीवन मे विनाश और विपत्तियो को न्यौता दे रहे हैं और दूसरी तरफ राष्ट्र की पुकार थी। सत्याग्रहियों का पहला जत्था जव हरिश्चन्द्र हाई स्कूल के सामने से गुजरा, तो लालवहादुर, त्रिभुवन नारायण सिंह और अलगूराय कक्षा का परित्याग करके असहयोग आन्दोलन मे शरीक हो गये। लालवहादुर की आयु उस समय १६ वर्ष की थी। हाई स्कूल सार्टिफिकेट के लिए परीक्षा मे वंठने के थोडे ही दिन वाकी रह गए थे, लेकिन उसके अन्तर का सोया सिंह जाग उठा था।

हरिश्चन्द्र स्कूल से विदा होते समय की झांकी उनके पुराने शिक्षक वैनीप्रसाद गुप्त ने इस प्रकार प्रस्तुत की है: "इन परिस्थितियो मे जव वालक लालवहादुर ने महात्मा गान्धी के आह्वान पर

स्कूल छोड़ने का निश्चय किया, तो सचमुच मुझे बड़ा आघात लगा।

"एक दिन हम लोग खेल के मैदान में बैठे हुए थे। वहाँ लालबहादुर और त्रिभुवन ने आकर चरण स्पर्श किया और कहा, "मास्टर साहब, अब आज्ञा दीजिए।"

"सन् १९२१ का महात्मा गान्धी का आन्दोलन शुरू गया था। उन्होने छात्रों को स्कूल छोड़कर असहयोग आन्दोलन में भाग लेने का आदेश दिया था। मै बहुत घबड़ाया। मेरे ये दोनों छात्र बहुत मेधावी और प्रतिभाशाली थे। अपनी कक्षा मे बहुत तेज थे। मैने समझाया, 'पहले हाई स्कूल पास करलो, तब स्कूल छोड़ो। तुम दोनो को स्कॉलरशिप भी मिल सकती है। उस समय सत्याग्रह करने पर तुम्हारा बहुत नाम होगा।'

"दोनो ने कहा—'अच्छा मास्टर साहब, विचार कर जवाब देगे।'

"दूसरे दिन फिर आये। बोले, "मास्टर साहब, हम लोगो ने विचार कर लिया है। गान्धीजी की पुकार है। अब हम लोगो का मन यहाँ नहीं लग रहा है।' दोनो बालको ने मेरे पैर छूए और हम लोगो ने सच्चे हृदय से आशीर्वाद देकर बिदा किया।"

काशी विद्यापीठ में

संकल्प को धारण करके फिर उसे पूरा करना, यह विशेषता लालबहादुर में प्रारम्भ से ही थी। असहयोग आन्दोलन में उनकी पहली शरकत अधिक महत्वपूर्ण नहीं थी। उन्हें पुलिस थाने ले जाया गया और पूछताछ करके छोड़ दिया गया। फिर भी जीवन में एक नया मोड़ आ चुका था। यह निर्णय करना कठिन हो रहा था कि वे आन्दोलन में कूद पड़े या फिर से विद्यारम्भ करे। इन दिनों उन्हे सुप्रसिद्ध दार्शनिक डा० भगवानदास के सम्पर्क में आने का अवसर मिला। उन्होने परामर्श दिया कि वे काशी विद्यापीठ मे दाखिल हो जाय और अपने अधूरे अध्ययन को पूरा करके भावी जीवन का कार्यक्रम निर्धारित करे।

काशी विद्यापीठ की स्थापना सुप्रसिद्ध देशभक्त, विद्वान और महापुरुष शिवप्रसाद गुप्त जी की प्रेरणा से हुई थी। असहयोग आन्दोलन के दौरान बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के पद त्याग करने वाले प्राध्यापकों ने इस विद्यालय को विशुद्ध भारतीय शैली पर संचालित करने का सकल्प किया था, जिसका उद्देश्य राष्ट्रीयता को जगाना था। डा० भगवानदास इसके प्रिन्सिपल थे। प्राध्यापको में आचार्य नरेन्द्र देव, डा० सम्पूर्णानन्द, आचार्य जे० बी० कृपलानी और श्री प्रकाश जैसे उद्भट विद्वान और राजकर्मी थे। इस विद्यालय के आँगन मे स्वतन्त्रता की उन्मुक्त वायु सचारित होती थी। विद्यार्थी पाठ्य-क्रम की रस्सी में फसे नही थे। वे निर्भीक होकर राजनीतिक मतवादो पर बहस करते। स्वाधीनता संग्राम के सचालन के लिए पं० तिलक और गाधी के मध्य इन दिनो यह विवाद चल रहा था कि हिसा मार्ग का अनुसरण किया जाय अथवा अहिसा का। शायद ही कोई विद्यालय, या महा-विद्यालय या विश्वविद्यालय ऐसा होगा, जहाँ पर इस विषय पर वादविवाद न होता हो। विद्यालय ही क्यों, शायद इस देश का कोई भी व्यक्ति या परिवार ऐसा होगा, जिसने इस विवाद से अपने को मुक्त रखा हो।

काशो विद्यापीठ इस दिशा मे अग्रणी था। वहाँ केवल इसी विषय पर ही वादविवाद नहीं होता था बल्कि विद्यापीठ के तत्कालीन आचार्यो मे एक भी ऐसा नही था, जिसने भारतीय राजनीति मे किसी

न किसी क्षेत्र मे अपनी छाप न छोडी हो। यहाँ के वाद-विवादो मे स्वाधीनता-आन्दोलन की मीमांसा ही नही होती थी, यहाँ स्वतन्त्र भारत की कल्पना को यथार्थ मानकर उसकी राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था पर भी विचार होता था। गाँधी जी के प्रभाव से स्वदेशी और उसके साथ कुटीर उद्योग की सकल्पना आयी थी। उन दिनो भी लालबहादुर अपने सुधीर स्वर से यह कहते हुए सुने जाते थे कि भारत को कुटीर उद्योग का विकास करते हुए अन्त मे भारी उद्योगो का ही निर्माण करना चाहिए।

वहुत कम लोगो को यह सौभाग्य मिलता है कि आचार्य के साथ उन्हे अच्छे सहपाठी भी मिले। लालवहादुर के सहपाठियो मे अलगुराय शास्त्री, त्रिभुवन नारायणसिह, बालकृष्ण केसकर, राजाराम शास्त्री, हरिहरनाथ शास्त्री, त्रिभुवनभूपण मिश्र जैसे विद्यार्थी थे। लालवहादुर ने चार वर्ष तक विद्यापीठ मे अध्ययन किया। हालाँकि विद्यापीठ की मुख्य प्रतिभा राजनैतिक थी, लेकिन लालबहादुर ने दर्शन विपय अपने लिए चुने थे। उस अवधि मे उसने खुली आँखो, समझदारी के साथ अध्ययन और जमकर घोटा भी लगाया। ताल्स्ताय के अध्ययन की ओर उसका ध्यान सर्वप्रथम गया। उसका कारण शायद यह था कि गाधी जी का सम्पूर्ण सत्याग्रह आन्दोलन महर्षि ताल्स्ताय के सत्य, प्रेम और अहिसा के आधार पर टिका था। स्वामी रामकृष्ण परमहस और विवेकानन्द के साहित्य और जीवन का भी उसने पारायण किया। अतिरिक्त पठन मे महात्मा लेनिन भी सम्मिलित थे। इस विराट अध्ययन का सुपरिणाम यह हुआ कि दर्शन विषय मे लालबहादुर को प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। फिर भी उनके जीवन पर डा० भगवान दास के समन्वयवाद का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। डा० भगवानदास के पवित्र जीवन, सौम्य, भव्य, व्यक्तित्व और दर्शन के उद्भट पाण्डित्य से प्रभावित होना स्वाभाविक था। डा० भगवानदास की दार्शनिक मीमासाओ ने लालबहादुर के मानस के समस्त प्रकोष्ठो को प्रकाशित किया और सभी वातायनो को उन्मुक्त कर दिया। उसका मन पूर्वाग्रहो से मुक्त हो गया और स्वतत्र चिन्तन की शक्ति उदय हुई। सकल्प धारण करने और उसकी पूर्ति के लिए सम्पूर्ण निष्ठा से प्रयत्नशील होने का सस्कार जागृत हुआ। लालबहादुर शास्त्री इन सुन्दर क्षणो को स्मरण करते समय सदैव डा० भगवानदास के प्रति श्रद्धा से अभिभूत हो जाया करते थे।

काशी विद्यापीठ मे अध्ययन की अवधि लालबहादुर के जीवन की आधार-शिला बनी। प्रतिदिन वह छह-सात मील पैदल चलकर कालेज पहुँचता था। कॉलेज से घर जाने के समय तो उसे सोलह मील पैदल चलकर जाना पड़ता था। उसका जीवन ऐसे टिमटिमाते हुए चिराग की भाँति जलता रहा था, आँधी और तूफान मे भी जिसकी वाती लरजकर रह जाती है, लेकिन बुझती नही। उसके जीवन मे उत्सर्ग और साधना के अतिरिक्त शायद कुछ नही था। कठिन-से-कठिन परिस्थितियो का हसकर मुकावला करना और फिर उन्हे आशीप के रूप मे शक्ति वना लेना ही उसकी एकमात्र शक्ति थी। उसकी पहली गिरफ्तारी शायद जवाहरलाल नेहरू से कुछ दिन पहले ही हुई थी। लेकिन वह बडे वाप का वेटा नही था। वह तो इस देश के उन कोटि—कोटि नवयुवको मे से था, जिसके सीनो मे कुछ कर गुजरने की उत्कट अभिलापा रहती है, लेकिन जिनके पद ससार के भार के नीचे असमय मे ही लड़खड़ा जाते है, पर लालवहादुर अपनी सकल्प-शक्ति के वल पर खडा हुआ था।

किसी के व्यक्तित्व की ऊँचाई इस वात से नही आँकनी चाहिए कि वह उन्नति के कितने ऊँचे शिखर पर पहुँचा, वरन् इस वात से आकनी चाहिए कि व्यक्ति कहा से चला और जीवन की कौन-

सी मंजिल तक पहुँचा। ये विचार अमरीका के सुप्रसिद्ध नीग्रो शिक्षा-शास्त्री बुकर टी० वाशिगटन के है। क्या यह बात भारतीय इतिहास में अभिमान के साथ उल्लिखित नही होनी चाहिए कि लालबहादुर शास्त्री मिट्टी में से उठा और हिमालय पवत के समान ऊँचे सामाजिक पद पर पहुँच गया। उसके समकालीन राजकर्मियों में शायद कोई भी शून्य को विराट का रूप देने के सौभाग्य को प्राप्त नही कर सका। लालबहादुर शास्त्री जी की लौकिक उपलब्धियों के पीछे सर्वाधिक सारगर्भित सत्य यह था कि उसने कोई योजना बनाकर व्यक्तिगत अथवा राजनीतिक जीवन के किसी पद पर आसीन होने की अभिलाषा को मन के किसी भी प्रकोष्ठ में ठहरने ही नहीं दिया था। यह भी कहा जा सकता है कि वह शायद अकिंचन आरम्भ से इतना अभिभूत था कि उसे यह स्वीकार करना पड़ा कि लालबहादुर तुझसे जो वन सकता है कर, राष्ट्रमाता के प्रति तेरा जो देय है, उसे समर्पित कर, तुझमे वह चमक कहाँ कि उषा बेला में उगे और दुनियाँ तेरी अरूणिमा के समक्ष नत मस्तक हो जाय। शायद वह सामान्य जन लालबहादुर ही था, जिसके प्रशान्त मुस्कानमय मुखमण्डल को देखकर नोबल लारिएट हरमन हेस ने लिखा था कि जीवन बोध की जटिलता से शून्य समान्य जन, और जीवन की समस्त ज्ञान गरिमा से सम्पन्न रागातीत परमहस के मुखमण्डल पर लिखने वाला निश्छल हास्य मूलतः एक ही होता है।

डा० कैलाशनाथ काटजू

जय जवान जय किसान

श्री लालबहादुर शास्त्री को हम अपनी श्रद्धाञ्जलियाँ अर्पित कर रहे है। वह सचमुच देश के जननायक थे। भारत माता के एक सीधे और सच्चे सपूत थे। उनका समूचा जीवन जनता और अपनी मातृभूमि की सेवा मे बीता और अपने इन्ही प्रयत्नो मे इन्होने अपने प्राण त्याग दिये। मै समझता हूँ कि ऐसे महान सपूत के महान योगदान को हम भूला बैठे तो यह लज्जा की बात होगी। वस्तुत. उनको सबसे सच्ची श्रद्धाञ्जलि इसी मे है कि हम उनके व्रत को पूराकर अपने राष्ट्र को सुदृढ़ बनाये। उन्होने देश को जीवत और सार्थक मन्त्र दिया—"जय जवान जय किसान।" यही उनका सबसे बड़ा व्रत था और इसे सफल बनाना ही हमारा आज सबसे पावन कर्तव्य है।

जय जवान की ओर हमने ध्यान दिया है। अपने निकटतम पडौसी और किसी समय निकटतम मित्र चीन के आकस्मिक और अप्रत्याशित बर्बर आक्रमणो और सीमातिक्रमणो के बाद जनमानस पर प्रतिरक्षा सम्बन्धी तीव्र आवश्यकता तथा प्राथमिकता व्यापक रूप से छा गयी है। चीनी आक्रमण के समय हम सर्वथा असावधान थे तथापि हमने आक्रमण होने पर अपनी पवित्र भूमि और सीमाओ की रक्षा के लिए यथासाध्य और हर सम्भव यत्न किया, और इस धूर्त पड़ौसी के आक्रमण से हमने बहुत कुछ शिक्षा ली। हमने यह अनुभव किया कि प्रत्येक दिशा मे सीमा पर सशस्त्र सेनाओ को शीघ्रता से भेजने के लिए सभी प्रकार से पर्याप्त कदम उठाये जाने चाहिए और कठोर साधना से प्राप्त स्वाधीनता व राष्ट्र की अखण्डता की रक्षा के लिए सकटकालीन कार्यक्रम बनाना चाहिए।

इस दृष्टि से हमारा इधर का समय सोद्देश्यपूर्ण गतिविधियो से युक्त रहा है। हमारी सशस्त्र सेनाओ की सख्या और युद्ध क्षमता को कुशल प्रशिक्षण तथा नवीन शस्त्रास्त्रो से सज्जित करके पर्याप्त मात्रा मे वढाया गया है, जिससे कि वे किसी भी विदेशी आक्रमण का सफल प्रतिरोध कर सके तथा समय आने पर उसका मुँह तोड़ उत्तर दे सके। यह सिद्ध हो गया है कि हमारे जवान वास्तव में वड़े वीर तथा साहसी है। जहाँ कही उनकी पुकार हुई—प्रत्येक क्षेत्र मे उनका शौर्य और साहस अनुपम रूप मे खरा उतरा। किन्तु यह हमारा कर्त्तव्य है कि हम उन जवानो को सभी आधुनिकतम शस्त्रास्त्रो और आयुधो व उपयोगी साज—सामानो से सज्जित करे। शास्त्री सरकार ने इस दिशा मे प्रत्येक सभव प्रकार के अधिकाधिक सक्रिय कदम उठाकर तथा सशस्त्र सेनाओ को प्रत्येक दिशा मे आवश्यक प्रशिक्षण व उपयोगी सामान जुटाकर अच्छा कार्य किया है।

पर जवान को विजयी बनाने के लिए प्रतिरक्षा कार्यो मे जनता का भी पूरा योगदान होना चाहिए। हमारे इस गणराज्य मे जनता ही वास्तविक शासक हे और यही अतत. सेनाओं के नैतिक वल

को उन्नत रखने व उनके कार्य व दायित्व को उन्नत रखने के लिए उत्तरदायी है। हमार जवान भारत माता के सपूत है, पर अन्तिम तथ्य यह है कि वे उसी जनता मे से आते है। ब्रिटिश शासकों ने भारत का सैनिक और असैनिक क्षेत्रो मे विभाजन किया था जो वास्तव मे तथाकथित असैनिक क्षेत्र का एक अपमान ही था। स्वतन्त्र भारत में इस प्रकार का विभेद नहीं रह गया है। अब तो इस पवित्र और स्वतन्त्र भूमि के प्रत्येक पुत्र को राष्ट्र रक्षा के लिए सक्रिय सेवा करने का पूर्ण व पैतृक अधिकार है। केवल सैनिक नियमानुसार अच्छा स्वास्थ्य तथा उपयुक्त शारीरिक बल होना आवश्यक है।

पुनः आधुनिक युद्ध केवल भूमि पर ही नहीं लड़े जाते है। वे राष्ट्र को उस समस्त भूमि पर लड़े जाते है जो युद्ध गतिविधियो मे सलग्न रहती है। बम वर्षा और हवाई यातायात ने युद्ध क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन ला दिया है। इसलिए जवानो के साथ जनता के हर वर्ग को, हर कस्बे व हर श्रमिको के प्रत्येक संभावित सकट से, सुरक्षार्थ पूरी तैयारी करने की ओर ध्यान देना आवश्यक है। इस दिशा मे नागरिक सुरक्षा दलो की भर्ती की गयी है व उन्हे प्रशिक्षित किया गया है।

सेना मे लड़ने वाले जवानो के साथ इजीनियर, फायरमैन, फोरमेन, किसान, विमान चालक, मोटर चालक आदि को भी आवश्यकता महत्वपूर्ण है। इसके लिए जनता को इन कार्यो मे प्रशिक्षण प्राप्त करने की ओर ध्यान देना चाहिए। उसका यह कर्त्तव्य है कि वह सैनिक असैनिक दोनों ही प्रकार के योग्य व पूर्णत. दक्ष कर्मचारियो की समूची आवश्यकता पूरी करे। यहाँ उपयुक्त व्यक्तियों की माग पूरी करने के लिए सरकार द्वारा प्रलोभन देने तथा अनिवार्य भर्ती की घोषणा की आवश्यकता सामने नही आनी चाहिए।

जवान के बाद प्रश्न आता है उत्पादन का। हमारी सेनाओ को सभी प्रकार के सामान व उपकरणों की सप्लाई आवश्यक होती है। अभी तक हमे इस ओर भारी आयात बाहर से करना पड़ता है। श्री शास्त्रीजी ने इस बारे मे १० अक्तूबर को राष्ट्र के नाम सन्देश में कहा था कि देश के बहादुर सैनिको ने हमें वीरता और त्याग का रास्ता दिखाया है। हमे अब अपना कर्त्तव्य निभाना है। हमे अपना आर्थिक ढांचा ऐसा बनाना है कि जरूरी चीजे हम अपने आप बनाये और पैदा करे।

वास्तव मे आत्मनिर्भरता का प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण है। हमे सभी आयात बन्द करने की ओर अग्रसर होना चाहिए। सरकारी क्षेत्रो के साथ निजी क्षेत्र मे भी व्यापारिक तथा औद्योगिक जनो का यह कर्त्तव्य है कि वे युद्ध तथा शान्तिकाल के सभी उपयोगी सामान अपने कल-कारखानो मे तैयार कर सप्लाई करें।

इस मोर्चे पर वर्तमान का सबसे कठिन मोर्चा है खाद्य उत्पादन का। इस दिशा मे पूर्णतः आत्म निर्भर बनने के लिए हमे हर सम्भव प्रयास करना चाहिए। हमारा खाद्यान्न उत्पादन किसी भी दृष्टि से विदेशों से आयातित खाद्य सामग्री पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। प्रत्येक भारतीय किसान को 'जय जवान जय किसान' के मन्त्र का महत्व समझ लेना चाहिए। उसे यह विचार लेना चाहिये कि वह राष्ट्र की सुरक्षा मे एक जवान की तरह ही महत्वपूर्ण भाग ले रहा है। उसे अपने खेत व फार्म में अधिकतम खाद्यान्न उत्पादन का वृत ले लेना चाहिए। इस ओर कोई अवसर नही खोना चाहिए और न केवल खाद्यान्न उत्पादन की ओर ही ध्यान देना चाहिए, अपितु कपास, गन्ना, तिलहन आदि अन्य आवश्यक सामग्रियो का उत्पादन भी बढाना चाहिए।

सक्षेप में जनता द्वारा शांतिकाल मे राष्ट्र की सशस्त्र सेनाओं की प्रभाव पूर्ण सुव्यवस्था और सुसंगठन के लिए तथा युद्ध काल में सभी प्रकार की सैनिक कार्यवाहियों के कुशल संचालन के लिए और

उनकी सफलता के लिए अपने को ही उत्तरदायी मानना चाहिए। वे सरकार को राष्ट्र रक्षा सम्बन्धी उनके दायित्वो व कर्त्तव्यो को पूर्ण करने का एक निमित्त साधन मात्र समझे।

यह सन्तोष की बात है कि आज हमारे नौजवान राष्ट्र-रक्षा मे आगे आ रहे हैं। हाई स्कूलो व कालेजो मे एन० सी० सी० व अन्य कार्यक्रमों द्वारा छात्रो को अपना दायित्व निभाने के लिए सक्षम बनाया जा रहा है। पर इसके लिए भी यह आवश्यक है कि समुचित दूध व घी उन्हे पर्याप्त मात्रा मे मिले। दुर्भाग्यवश दुग्ध उत्पादन का कार्य हमारे देश मे अत्यन्त असन्तोषजनक है। इसके परिणाम-स्वरूप दूध, घी जैसी आवश्यक चीजे उपलब्ध नही हो पाती। इससे जन स्वास्थ्य प्रभावित होता है और युवा पीढी का विकास स्वाभाविक रूप मे नही हो पाता। सरकार व जनता दोनों को इस स्थिति के सुधार का यत्न करना चाहिए।

आशा है, हम देश की सुरक्षा को सर्वोपरि महत्व देते हुए, 'जय जवान, जय किसान', के मन्त्र को समझेंगे और उसे पूर्ण निष्ठा से क्रियान्वित करेंगे।

●

सुमंगल प्रकाश

जब लालबहादुरजी सीढ़ी पर बैठ गए

दुबला-पतला नन्हा-सा आदमी, गेहुँआ रंग, सिर पर साफ और सफेद टोपी और वैसा ही साफ सुथरा इस्तरी किया हुआ कुरता और नीचे पाँवो तक लटकती हुई करीन के साथ पहनी हुई वैसी ही साफ खद्दर की धोती और नगे पाँवो मे नन्ही-सी जूतियाँ। सिर के बाल काफी पक गये है और बारीक छटी हुई मूछे भी काली से ज्यादा सफेद ही है। साठ साल की उम्र के बाकी सभी लक्षणों के बावजूद जो ज्यादा बड़ा नही दिखाई देता, और जिसके सामने जाने पर कोई दहशत नही होती, उसके बड़प्पन के कारण। और अगर आपके साथ कभी का थोडा भी परिचय है, तो आपको देखते ही उस गोल, मुलायम, स्निग्ध चेहरे पर एक हल्की मुस्कराहट खिल जाती है और वह इस तरह आपके साथ पेश आता है जैसे उसके और आपके बीच कोई दूरी नही।

और यही था वह नन्हा-सा दुबला-पतला आदमी, जिसके कमजोर दिखाई देने वाले कन्धों पर देश का जुआ उस दिन जा टिका था, अचानक और शायद अनायास।

२ जून, १९६४ का वह सबेरा। ठीक ९ बजे, संसद-भवन के सेन्ट्रल हाल में, पूर्व निश्चय के अनुसार कांग्रेस संसदीय दल की बैठक कांग्रेस अध्यक्ष कामराज की अध्यक्षता मे शुरू हो गई थी, एक बहुत ही गम्भीर और अभूतपूर्व वातावरण मे। भारत के इतिहास मे ऐसा अवसर पहले कभी नही आया था। पण्डितजी की छाया जब हम पर थी कामराज कह रहे थे, तब हमसे जो भी गलतियाँ होती थी, उन्हे सुधार देने का भार उन्ही पर था, हम निश्चिन्त रहते थे। पर अब पण्डितजी नही है और हमारी छोटी-से छोटी गलतियो को भी देश माफ नही करेगा, वह हम पर बहुत कडी नजर रखेगा।

एक अजीब सन्नाटा था वातावरण मे और लोगो को पता ही नही लगा कि कब वह दुबला-पतला नन्हा-सा आदमी, जिसके कमजोर दिखाई देने वाले कन्धो पर देश की सबसे बड़ी जिम्मेदारी का बोझ डालने के लिए वे वहाँ इकट्ठे हुए थे, अन्दर आ पहुँचा है और बैठने की कोई भी जगह खाली न देख धीरे-से सीढ़ी पर ही बैठ गया है। कुछ ही दूर एक प्रमुख कैबिनेट मिनिस्टर बैठे थे और उन्होने उस आदमी के लिए अपनी जगह खाली भी कर दी थी, पर उनके निमन्त्रण की भद्रतापूर्ण उपेक्षा करते हुये वह आदमी उस सीढी पर ही बैठ गया था और वहाँ से तभी उठा था जब वह कैबिनेट-मिनिस्टर भी उसी के साथ वही सीढी पर जा बैठे थे।

इतना लिख चुकने पर बाद को घटनाओ के बारे में अपनी स्मृति ताजी करने के लिए मैंने प्रधान मन्त्री भवन मे लालबहादुरजी के एक सेक्रेटरी को फोन किया। कारण, २ जून, १९६४ की उस बैठक के बारे मे मेरी जानकारी प्रत्यक्ष नही, सुनी-सुनायी थी।

मुझे यह देखकर ताज्जुब हुआ कि लालबहादुरजी के स्टाफ के जिससे भी मैने बात की, किसी को भी उस दिन लालबहादुरजी का वहाँ सीढी पर ही बैठ जाने का बिल्कुल पता नही था। मैने फिर भवानी बाबू को फोन किया जो अखिल भारतीय कॉंग्रेस कमेटी के तत्कालीन स्थायी मन्त्री की हैसियत से उस बैठक मे उपस्थित थे और जिन्होने ही उस बैठक से लौटने के बाद वह घटना मुझे सुनाई थी।

"हॉ-हाँ, बिलकुल ठीक बात है, मुझे पूरी तरह याद ....हाँ, मैने खुद अपनी आँखो से देखा था," भवानी बाबू ने फोन पर उस घटना की पुष्टि पूरा जोर देकर की।

यह बात सवेरे ९ बजे की थी और मेरा आगे का लिखना रुका हुआ था। मै हैरानी मे था कि इतनी बडी बात जब हुई, तब लालबहादुरजी के साथ जाने वाले लोगो की नजर कैसे छिपी रह सकी।

और अन्त मे यही निश्चय किया कि तुरन्त ही प्रधानमन्त्री भवन जाकर स्वय लालबहादुरजी से इसके बारे मे पूछूँ, जबकि दस बजे के करीब वह अपने घर से निकल कर १०, जनपथ के अपने सरकारी निवास-स्थान मे आते है और दफ्तर जाने के पहले उन कुछ मुलाकातियो से एक-एक दो-दो मिनट बात कर लेते है, जो उस वक्त अनौपचारिक रूप मे जा पहुँचते हैं।

"दो मिनट का वक्त मुझे चाहिए ही आज इसी वक्त।" लालबहादुर जी ज्योही अन्दर से बाहर की ओर आये, मैने जल्दी से उनके पास जाकर उन्हे नमस्कार करते हुए कह डाला।

"आज ही ? इसी वक्त ?" लालबहादुरजी ने कुछ मुस्कराते हुए कहा और आगे बढ गये। दूसरी ओर मिलने वालो की काफी भीड जमा थी, खासतौर से सुरक्षा कोष के लिये धन और सोना देने वालो की।

मै जानता था कि मुझे आखिर मे ही वक्त मिलेगा और इसलिए चुपचाप एक कुरसी पर जा बैठा और मिलने वालो की भीड़ के धीरे-धीरे छटते जाने को रोज की प्रक्रिया को दिलचस्पी के साथ देखता रहा।

इसी बीच दो परिचित ससद सदस्य वहाँ जा पहुँचे। मैने अपनी समस्या उनके सामने भी रखी। पर उनसे भी मुझे निराशा ही मिली। उनमे से भी किसी को उस घटना का पता नही था।

तो क्या भवानी बाबू की आँखे उन्हे इतना बडा धोखा दे सकती है ?—मेरे मन मे बार-बार प्रश्न उठ रहा था और मै और भी अधीर होता जा रहा था, लालबहादुरजी से उसी दिन इस बात के बारे मे सफाई कर डालने के लिए।

आखिर जब वह अपना काम निपटाकर मेरी ओर आये, तब सीधे अपनी समस्या उनके सामने रख देने के बजाय, जो लिखा था, उसे उन्हे सुना डालने का आकर्षण ही अधिक प्रबल हो गया मेरे लिए, और जब वह लॉनमे मेरे साथ टहलने लगे तब मैंने जेब से उन कागजो को निकालकर पढना शुरू कर दिया—"दुबला-पतला नन्हा-सा आदमी, गेहुँआ रग सिर पर साफ और सफेद गाँधी टोपी . . . ..।"

"क्या है यह सब ? ·.......... यह सब सुनायेंगे इस वक्त ?" लालबहादुरजी ने मुझे टोका और शायद रोकना भी चाहा। पर मै तुला हुआ था उतना सुना देने के लिए।"बस दो मिनट लगेंगे।" मैने कहा —"संस्मरणों का दूसरा भाग (पहला भाग तब तक धारावाही रूप मे 'धर्मयुग' मे छप चुका था और लालबहादुरजी को उसकी जानकारी थी)। एक जगह छपने की बात है, उसी के लिए यह भूमिका लिखी है।" और बिना उन्हे फिर कुछ कहने का मौका दिये मैने फिर शुरू किया—"दुबला-पतला नन्हा-सा आदमी ·· ·····।"

उनका टहलना जारी था। और उनके साथ टहलता-टहलता मेरा सुनाना जारी था। और वह जब पूरा हो गया, तब मैने उनके चेहरे की ओर देखा। एक हल्की सी प्रच्छन्न मुस्कराहट थी उस पर।

और तब मैने बताया कि वहाँ सीढ़ी पर उनका बैठ जाना—बहुतो को नही मालूम, उनके तत्कालीन किसी सेक्रेटरी को भी नही।

वह कुछ देर चुप रहे और फिर मानो याद करने की कोशिश करते हुए बोले—"थोड़ी-सी देर हो गयी थी मुझे वहाँ पहुँचने मे··· ····सब कुरसियाँ भरी हुई थी और कामराज बोल रहे थे।, · ···मैने नही चाहा कि किसी का ध्यान खीचे और इसी कारण सीढी पर ही बैठ गया था।"

"पर कुछ लोग कहते है कि आप एक कुरसी पर बैठे थे ?" मैने कहा।

"थोडी ही देर नीचे बैठा था", उन्होने बताया,"बाद को तो लोगो ने देख ही लिया और मुझे वहाँ से उठना ही पडा।"

और मै अपने कार्य मे सफलता पा उन्हे नमस्कार कर चला आया।

यह घटना १६ अक्टूबर १९६५ की है, लालबहादुरजी की मृत्यु के लगभग तीन महीने पहले की।

त्रिभुवननारायण सिह

ज्यों की त्यों धरि दीनी चदरिया

बनारस मे राजा तालाब स्टेशन के पास एक छोटा-सा गाँव दोपापुर है। सन् १९१८ या १९ की बात है, मै और लालबहादुरजी अपने गुरु-पण्डित निष्कामेश्वरजी के साथ उस गॉव मे गये और वहाँ एक महीने साथ-साथ रहे। पण्डित निष्कामेश्वरजी के मामा अच्छे गायक थे। वे अक्सर कबीर का निम्नलिखित भजन बडे भाव-विह्वल होकर गाया करते थे।

झीनी-झीनी बिनी चदरिया
काहे कै ताना, काहे कै भरनी
कौन तार से बिनी चदरिया
इगला पिगला ताना भरनी
सुषमन तार से बिनी चदरिया
आठ कवल दस चरखा डोले
पाँच तत, गुन तिनी चदरिया
साईं को सीयत मास दस लागे
ठोक-ठोक के बिनी चदरिया
सो चादर सुर नर मुनि ओढी
ओढि के मैली कीनी चदरिया
दास कबीर जतन से ओढी
ज्यो की त्यो धरि दीनी चदरिया

लालबहादुरजी 'अक्सर इस भजन की आखिरी पक्ति दास कबीर जतन से ओढी, ज्यो का त्यो धरि दीनो चदरिया' मन ही मन गुनगुनाया करते थे। लगता है कि उन्होने इस भजन को अपने मे सचमुच उतार लिया था। जैसे पवित्र और निर्लेप वे बाल्यकाल मे थे वैसे ही उन्होने अपने को सदा रखा। अपने पर कोई गदा वातावरण आने नही दिया और उसी तरह अपनी काया-रूपी चादर को उज्जवल अवस्था मे छोड गये।

मैंने उनको पहले-पहल आज से करीब पचास वर्ष पूर्व एक समवयस्क बालक के रूप मे देखा था। उनकी मुसकान जैसी सरल और मधुर उस समय थी, वैसी ही मुसकान मैने उस दिन भी देखी थी जब मै उनसे तीन जनवरी को पालम हवाई अड्डे पर अन्तिम बार मिला था। वे ताशकन्द के लिए प्रस्थान कर रहे थे।

जब से लालबहादुरजी १६२०—२१ के असहयोग आन्दोलन में सम्मिलित हुए तभी से उन्होंने स्वदेशी का व्रत ठान लिया था। उन्होने जीवन भर आत्मनिर्भरता और स्वदेशी-व्रत का पालन किया। उनकी डेढ़ वर्ष की अवस्था मे ही पिता का देहान्त हो गया था। उनके स्नेही मौसा बाबू रघुनाथप्रसाद ने उनकी शिक्षा का भार कई वर्ष वहन किया, लेकिन मालूम होता है कि उसी समय उन्होंने निश्चय कर लिया था कि वे सदा आत्मनिर्भर रहेगे। केन्द्र मे रेलवे मंत्री हुए और बाद को गृह मत्री भी हुए, लेकिन उस जमाने मे भी वे अपने कपड़े अपने हाथ से साफ कर लिया करते थे और जूते भी अपने हाथ से पोंछ लिया करते थे। ये सब मैने अपनी आँखो से देखा है।

जब पाकिस्तान का हमला हुआ, उस समय भी उन्होने हमारे मुल्क के सामने आत्म-निभरता और स्वदेशी का प्रोग्राम रखा। स्वराज्य होने के बाद हम इस प्रोग्राम को कुछ भूल-से गये थे। लालबहादुरजी ने हमारे सामने यह प्रोग्राम रख कर हमे सचेत किया। पाकिस्तान के हमले के बाद मेरी उनसे कई बार बाते हुई और उन्होने बड़ी दृढता के साथ कहा – देश को अब अपने ही बल पर आगे बढ़ना है। बाहर से हमे सहायता मिले या न मिले, हम अपने को हर दृष्टि से अपने ही बल पर मजबूत बनाने के लिए यत्न करते रहेगे। कैसा दृढ निश्चय था, कैसा वीर सकल्प !

सन् १६२० मे गाँधी जी के आन्दोलन में शामिल होने के बाद मैने लालबहादुरजी मे एक नयी प्रतिभा का उदय होते देखा। मालूम होता है कि उस समय उन्होने निश्चय कर लिया था कि बिना किसी के भरोसे अपने ही बल पर वे अपने जीवन को सफल बनायेगे। मै भी आन्दोलन मे सम्मिलित हो गया था और हम दोनो ने काशी विद्यापीठ से 'शास्त्री' पास किया। वे बड़े सकोची थे। क्लास मे ज्यादा तर चुप बैठते थे और बहुत सवाल-जवाब नही करते थे। अतः जब उन्होने शास्त्री परीक्षा प्रथम श्रेणी मे पास की तो उनके कई सहपाठियो को बड़ा आश्चर्य हुआ। वे इतने चुपचाप रहते थे कि किसी को अन्दाजा नहीं था कि इतने तेज भी है।

कद मे छोटे और नन्हे, दुबले पतले, लालबहादुरजी शारीरिक परिश्रम भी काफी करते थे। १६२३ मे गया-काग्रेस का अधिवेशन था। विद्यापीठ से कुछ छात्र, जिनमे लालबहादुर जी भी थे, काग्रेस का काम करने के लिए वहाँ गये। वहाँ हृष्ट-पुष्ट नौजवान काँग्रेस-कार्यकर्त्ताओ के साथ लालबहादुर जी मिट्टी खोदने का काम करते। करीब पन्द्रह दिन तक हम सब लोगो ने यह काम किया। जब देखा कि काग्रेस का पडाल बनाने का काम बहुत धीरे-धीरे चल रहा है, जमीन कई जगह काफी ऊँची-नीची है, तो आजादी के दीवाने स्वयसेवक, जिनमे लालबहादुर जी भी थे, इस काम मे लग गये और सबने मिलजुल कर अधिवेशन से पहले ही पडाल बनाकर तैयार कर दिया। आज इतने वर्ष के बाद उस समय की पुरानी बात याद आ गयी। हमारे प्रधान मत्री बड़े उत्साह से मिट्टी खोदने और ढोने का का काम करते थे क्योकि अपनी राष्ट्रीय सस्था के अधिवेशन को सफल बनाना था। आजकल के नौजवान तो मिट्टी छूने से भी नफरत करते है।

गाधी जी के नेतृत्व में देश आगे बढा। सन् १६३० और ३२ के आन्दोलनों में लालबहादुरजी कई बार जेल गये। उनकी पत्नी ललिताजी उस समय बहुत बीमार रहा करती थी। डाक्टरों को संदेह था कि उन्हें टी० बी० हो गयी है। लेकिन लालबहादुर जी ने कभी यह नहीं सोचा कि जेल न जाकर उन्हे अपनी पत्नी की देखभाल करनी चाहिये। वे जेल से छूटते ही फिर जेल चले गये।

सन् १९३५ में लालबहादुरजी उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी के मंत्री चुने गये। उन्हे लखनऊ में आकर काम करना पड़ा। कुछ ऐसी बात हुई कि मै भी सन् १९३० से १९३४ तक जेल में रहने के कारण उनसे कुछ अलग रहा था, परन्तु फिर १९३५ मे हम दोनो लखनऊ मे एक साथ मिले। करीब दो महीने तक तो वे मेरे ही घर पर रहे। वहा वे प्रातीय काग्रेस कमेटी के दफ्तर से लौटने के बाद भी रात को ग्यारह बारह बजे तक काम करते रहते थे। मेरी छोटी भतीजी ने एक दिन उनसे पूछा कि आप इतनी देर तक काम क्यो करते है? ऐसे प्रश्नो के उत्तर मे वे मुसकरा भर देते और फिर काम मे लग जाते। इतने छोटे से-शरीर मे कहाँ की शक्ति थी? काम से कभी थकते ही नही थे। जब कभी मै उनसे कहता कि तुम्हे अपने स्वास्थ्य का खयाल रखना चाहिये तो वे मुसकरा देते और कहते कि वे अपनी तन्दुरुस्ती का पूरा ख्याल रखते है, ख्याल तो मुझे अपनी तन्दुरुस्ती का करना चाहिये, मै कुछ मोटा था।

लोगो को शायद स्मरण नही कि किसानो का उद्धार करने मे लालबहादुरजी का बड़ा गहरा हाथ है। उत्तर प्रदेश मे जमीदारी उन्मूलन कमेटी के १९३५ मे ही वे सेक्रेटरी नियुक्त हुए और उन्होने एक रिपोर्ट पेश की। उसी रिपोर्ट के आधार पर उत्तर प्रदेश मे जमीदारी उन्मूलन कानून पास किया गया और उसके बाद तो और प्रान्तो मे भी उसी प्रकार के कानून बने।

फिर १९५१ मे लालबहादुरजी अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी, दिल्ली के सेक्रेटरी होकर आये। मै भी सयोग से उस समय ससद सदस्य के नाते दिल्ली रहता था। लालबहादुर जी पहले दो-तीन महीने मेरे ही मकान न० ८, फिरोजशाह रोड़ पर रहे। वे अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी मे भी, जैसी उनकी आदत थी, दिन रात मेहनत करते रहते थे। आज तक भी उस जमाने के अखिल भारतीय कमेटी के दफ्तर के कार्यकर्ता उन को बडे प्यार से, आदर से याद करते है। न जाने क्या बात थी— जो भी उनके सम्पर्क मे आता, वही उन से स्नेह करने लगता था। ए० आई० सी० सी० के सभी कर्मचारी बडी खुशी-खुशी अधिक-से-अधिक समय तक उनके साथ काम करते थे। मै भी ग्यारह-बारह बजे रात तक उन्ही के साथ ए० आई० सी० सी० मे काम किया करता था। बड़ा कठिन काम था। हजारो आदमियो को काग्रेस का टिकट देने का काम। आखिर सबको तो टिकट मिल नही सकता था। लेकिन कुछ ऐसी बात थी कि जिनको टिकट नही मिला, वे भी लालबहादुरजी से अप्रसन्न नही हुए। उनमे न जाने कौन सा जादू था कि यदि वे किसी के खिलाफ भी निर्णय देते थे तो भी वह व्यक्ति उनसे खफा नही होता था। उनके विरोधी और समर्थक दोनो ही उनसे खुश रहते थे। मेरी समझ मे इसका मुख्य कारण यह था कि उनमे जरा भी स्वार्थ भाव और अहकार नही था।

कदाचित कुछ ही लोगो को मालूम है कि वे दर्शन-शास्त्र के अच्छे ज्ञाता थे। विद्यापीठ मे डा० भगवानदास जी के चरणो मे उन्होने वेदान्त की शिक्षा पायी थी। अभी-अभी जब जुलाई १९६४ मे उन्हे हृदय-रोग का दौरा हुआ तो कुछ तबीयत सभलने के बाद, उन्होने एक दिन मुझसे कहा कि कबीर के उस भजन को तो दोहराओ, 'साधो सहज समाध भली।'

मैंने भजन दोहराया और उन्होने बड़े प्रेम से सुना। वह भजन इस प्रकार है:—

साधो सहज समाध भली
गुरु प्रताप जा दिन से जागो
दिन-दिन अधिक चली

जहँ-जहँ डोलो सो परिकरमा।
जो कुछ करो सो सेवा
जब सोवो तब करो दडवत
पूजौ और न देवा
कहौ सो नाम, सुनो सो सुमिरन
खावे पियो सो पूजा
गिरह उजाड एक सम लेखौ
भाव मिटावो दूजा
आँख न मूँदो, कान न रूँधौ
तनिक कष्ट नही धारो
खुले नैन पहिचानी हँसि-हँसि
सुंदर रूप निहारो
सबद निरतर से मन लागा
मलिन वासना त्यागी
उठत-बैठत कबहुँ न छूटे
ऐसी तारी लागी
कह कबीर, यह उनमुनि रहनी
सो परगट करि गायो
दुख-सुख से कोई परे परमपद,
तेहि पद रहा समायी।

उनका मत था कि आदमी जो कुछ काम करे वह भगवान को अर्पण करके करे, [illegible] हो कि उठते-बैठते, चलते-फिरते वह भगवान की ही पूजा कर रहा है। और [illegible] जीवन इसी तरह से बीता। वे हमेशा निर्लिप्त भाव से काम करते थे।

आज लालबहादुरजी नही है, लेकिन उनकी आत्मा को [illegible] का विकास सादगी और आत्म-निर्भरता के आधार पर होगा। [illegible] और आत्मनिर्भरता दो पैर है, इन्ही के आधार पर हम आगे [illegible] प्रधान मंत्रित्व-काल तक गाव-गाव पहुँचने की कोशिश की। [illegible] देश को इस रास्ते पर चलने की शक्ति दे।

अशोक मेहता

शास्त्रीजी

यह विश्वास करना अब भी कठिन है कि वाद-विवाद के उन्माद के बीच अब तर्क की वाणी सुनाई नही देगी और यह कि शास्त्री जी जीवित नही रहे। दो वर्ष से कम की अवधि मे योजना आयोग के हम लोगो को दो बार अपने नेता का वियोग सहना पडा है। इस बार हमारी क्षति ऐसी है जिसमे हमे सान्त्वना नही मिल सकती क्योकि वह सर्वथा अप्रत्याशित है। इस समय हमे जो गहरा धक्का लगा है और हमारी जो क्षति हुई है, उससे उबरने मे समय लगेगा। हम मे से अधिकाश लोगो के लिए रिक्तता की यह भावना और भी अधिक दु.खद है क्योकि पिछले वर्ष सितम्बर के प्रारम्भ के कठिन दिनों मे हमे शास्त्री जी की महानता को नजदीक से देखने का विशेष अवसर प्राप्त हुआ था। जब हमारी सीमाओ पर युद्ध जारी था और देश का भविष्य भी खतरे मे था और सब प्रकार की अनिश्चितताओ से हमारी दृष्टि धूमिल हो रही थी, उस समय घोर विश्वास के साथ, जो बडे से बडे नेताओ मे भी दिखाई नही देता, शास्त्री जी ने बडी शान्ति से २१,००० करोड़ रुपये की चौथी योजना की सिफारिश की, क्योकि वह इस योजना को हमारी प्रतिरक्षा और विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक समझते थे। शास्त्री जी के लिए आत्म-निर्भरता एक बुनियादी आर्थिक दर्शन था। वह आर्थिक विकास और उससे सम्बन्धित प्राथमिकताओ को आत्म-निर्भर आर्थिक विकास की स्थिति के लिए एक आवश्यक शर्त मानते थे। इस दृष्टि से आर्थिक आयोजन मे उनको भी उतना ही गहरा विश्वास था जितना कि आयोजन के कट्टर समर्थक हम लोगो का। किन्तु वह हम मे से अधिकाश लोगो की अपेक्षा आर्थिक आयोजन और आर्थिक विकास को ऐसा समझते थे, जिसके अधिक ठोस परिणाम निकलने चाहिये। चू कि वह आयोजन के मूर्त परिणामो के लिए अदम्य रूप से आतुर थे, इसलिए जन-साधारण और ग्रामीण लोगो के प्रति उनका गहरा स्नेह था और उनके लिए गहरी चिन्ता थी और इसी के परिणाम-स्वरूप उनका यह पक्का विश्वास था कि खेती मे सुधार करके ही जन-साधारण की समृद्धि बढाई जा सकती है। उनका यह विश्वास था कि भविष्य मे होने वाली बिजली और सिचाई की सुविधाओ से हमारे किसान आगे बढ सकेंगे और इसलिए उन्हे आगे बढने के अवसरो से वंचित नही रखना चाहिए। इसी कारण उन्होने चौथी योजना मे कृषि को सबसे अधिक प्राथमिकता दी। उनका "जय किसान, जय जवान, जय हिन्द" यह नारा अब भी हमारे कानो मे गूँज रहा है।

खेती के बाद वह शिक्षा को सबसे अधिक महत्व देते थे। यह शिक्षा सामान्य प्रकार की या सजावटी ढंग की शिक्षा नही थी, जो समाज के चमकीले वर्गो को आकृष्ट करती है, बल्कि यह शिक्षा वह थी जिससे आत्म-निर्भरता एक असलियत हो जाती है अर्थात् सबके लिए प्रारम्भिक शिक्षा और

उन लोगों के लिए तकनीकी शिक्षा जो हमारी खेती और उद्योगों के लिए महत्वपूर्ण उपकरण बन सकते है। वह चाहते थे कि शिक्षा को व्यापक रूप से उपलब्ध कराया जाए ताकि अधिकार हीन नागरिक अपने अधिकारो और कर्त्तव्यो के प्रति जागरूक हो सके और आगे बढ़ कर उन अधिकारो को मॉग कर सके और अपने उन कर्त्तव्यों की पूर्ति कर सकें। परिवर्तन के समस्त साधनो मे वह मानवीय मशीन को पूर्ण बनाने में विश्वास रखते थे और उनका ध्यान इस बात की ओर अधिक था कि एक सर्वोत्तम योजना बनाने की अपेक्षा एक अच्छी योजना को भली-भाँति पूरा किया जाए। परिवर्तन की मशीनरी के बारे में अपने गहरे ज्ञान के आधार पर वह कलैक्टर को आर्थिक विकास का सबसे महत्वपूर्ण साधन मानते थे। और इसीलिए उन्होने प्रशासनिक सुधारों को इतना महत्व दिया।

शास्त्री जी राष्ट्रीयकरण के विरुद्ध थे, फिर भी सार्वजनिक उद्यम के क्षेत्र को निरन्तर विस्तृत करने के पक्षपाती थे। वह निश्चय ही एक शान्तिवादी व्यक्ति थे और वह किसी भी व्यक्ति को अनावश्यक रूप से आघात पहुँचाना नही चाहते थे। वह यह समझते थे कि वर्तमान निजी उद्यम और सार्वजनिक उद्यम में निरन्तर विकास के लिए देश में काफी गुंजाइश है।

उन्होने राजनीतिक दृष्टि से कार्य साधक बातो का आयोजन प्रणाली की युक्तियुक्तता पर प्रभाव नही पड़ने दिया। आर्थिक आयोजन को वह तर्क-सम्मत मानते थे जिसका उद्देश्य हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति करना था और इसलिए आर्थिक आयोजन उनके लिए राजनीतिक आन्दोलनों का कोई आलेखनपट नही था।

योजना आयोग के हम लोगों में से जिन्होने उनके साथ काम किया है, वे यह जानते है कि उनके अधीन काम करना एक विशेषाधिकार था। जब कभी पथ-प्रदर्शन की आवश्यकता होती थी तो वह बड़े स्पष्ट रूप से पथ-प्रदर्शन करते थे, और जो लोग उनके साथ काम करते थे,उनमें पूरा विश्वास रखते थे। अत्यधिक पेचीदा आर्थिक समस्याओं की उनकी गहरी पकड़ थी और वे जब अत्यन्त घरेलू तरीके से उन समस्याओं के समाधान सुझाते थे, तो उन सबको सुनना बड़ा आनन्ददायक होता था। किसी भी व्यक्ति के जीवन में १८ महीने की अवधि बहुत छोटी अवधि है, किन्तु ये १८ महीने उन लोगो के लिए जिन्होंने योजना आयोग में उनके साथ काम किया है, एक अविस्मरणीय अनुभव रहेगा। हमारे इस अनुभव का कारण यह है कि वह सदा तर्क-संगत बात कहते थे और लोगों को आसानी से मनवा लेना उनका सहज गुण था।

प्रकाशवीर शास्त्री,

स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री

अठारह महीनो के प्रधानमत्रित्व काल मे श्री लालबहादुर शास्त्री ने जो लोकप्रियता प्राप्त की उसकी मिसाल कम ही देखने को मिलेगी। नेहरू जी के वाद जब वह प्रधान मत्री बने तो तरह-तरह की आशकाए व्यक्त की गई थी। काग्रेस दल के नेता के रूप मे उनका चुनाव जिस तरह हुआ, उससे भी यह सन्देह और बढ गया था कि पता नही शास्त्री जी कहाँ तक स्वतंत्र निर्णय ले सकेंगे। जो समस्याएँ उन्हे विरासत मे मिली वह भी कुछ कम नही थी, पर अपनी सूझ-बूझ और निष्ठा के साथ वह उनके सुलझाने मे धीरे-धीरे सफल होते जा रहे थे। भारत और पाकिस्तान का सघर्ष उनके नेतृत्व को सबसे वडी चुनौती थी। लेकिन इसमे वह न केवल खरे ही उतरे अपितु इसमे शानदार विजय पाकर उनका व्यक्तित्व पहले से भी अधिक चमक उठा। समूचे देश का हार्दिक समर्थन उन्हे मिला, जिसने उ अपने सगठन मे भी हाथ खोलकर काम करने का अवसर दिया। इसी से कुछ महत्वपूर्ण निर्णय भी उन्होने स्वतत्र रूप मे लिए।

वह बदले नहीं

एक सामान्य परिवार मे जन्म लेकर कोई व्यक्ति अपने घोर परिश्रम, मधुर स्वभाव और सेवाओ से उन्नति की चरम सीमा तक कैसे पहुँच सकता है, शास्त्री जी इसके प्रमाण थे। प्रधान मत्री वनने के वाद उनमे कोई विशेष परिवर्तन नही हुआ। मिलने जुलने का वह ही पुराना ढग, कही भी कोई उन्हे पकड कर खड़ा हो जाए, दिल की वात करले। उनका यह सिलसिला अन्त तक चालू रहा। नेहरू जी और शास्त्री जी मे प्रधान मत्री के रूप मे एक बड़ा स्पष्ट अन्तर दिखाई देता था। यह आवश्यक था कि पडित जी से मिलते हुए वात थोड़ी और तत्व की जाए। मिलने वाला विस्तार मे अथवा वाक् चातुरी दिखाने मे यदि समय लगाता था तो वे कुछ ऐसे सकेत दे देते थे, जिनसे वह अपनी स्थिति समझ जाता था। पडित जी किसी-किसी को तो झुंझलाकर स्पष्ट कह भी देते थे। पर शास्त्री जी की सरलता का लाभ उठाकर कुछ लोग उनकी जिम्मेदारी, समय और स्वास्थ्य का भी ध्यान नही रखते थे। लेकिन जो जीवन भर सवको सुनने का आदी रहा हो, आखिर वह अपने स्वभाव मे एक दम कैसे परिवर्तन कर लेता।

जीवन में स्वयँ जैसे वह कृत्रिमताओ से परे थे, उसी प्रकार शासन मे भी उन्हे वनावट से वेहद चिढ थी। फाइलो मे लम्वा उलझना उन्हे पसन्द नही था। भारत का अधिकाश भाग गावो मे रहता

है। स्वतन्त्रता के अठारह वर्ष बाद भी ग्रामीण जीवन में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। गाँवों का जीवन-स्तर ऊँचा उठाने में जो धन लगता है उसका अधिकांश भाग बीच में ही रह जाता है। जो अधिकारी गाँवों की उन्नति के लिए नियुक्त होते हैं वह भी अपनी पैंट को पहले दाग और सलवटों से बचाने का प्रयत्न करते हैं। शास्त्री जी इस बात को अच्छी तरह समझ गए थे। कई बार इसके संकेत भी उन्होंने भिन्न भिन्न स्थानों पर दिए। लेकिन शासनतंत्र में जब तक ऊपर से ही आमूल परिवर्तन न हो, तब तक इस समस्या का समाधान कठिन था। सम्भव है इसीलिए एक मजबूत प्रशासनिक सुधार आयोग भी कुछ दिन पूर्व उन्होंने नियुक्त कराया था। पर उसके सुझाव [illegible] उन पर अमल करने को वह जीवित न रह सके।

आत्मोत्सर्ग

जान-बूझ कर संघर्ष मोल लेना बुद्धिमत्ता नहीं है। लेकिन यदि संघर्ष स्वयं सिर [illegible] पड़े, तो उससे भागना भी कायरता है। कच्छ में हुए पाकिस्तानी आक्रमण को उन्होंने एक बार टालना ही उचित समझा। पर पाकिस्तान तो इसे भारत की दुर्बलता समझ बैठा। विवश होकर कुछ ही समय बाद फिर उसे दूसरा सबक देना भी तय हुआ। पिछले संघर्ष में देश ने निकट से उन्हें देखा। वह नाम के ही बहादुर नहीं थे, काम में भी बहादुर थे। समस्याओं को दूर तक लटकाए रखना कुशल शासक का परिचय नहीं माना जा सकता। भले ही उनके कुछ साथी सहमत न हों पर प्रश्नों का हल इधर या उधर करके आगे बढ़ने में शास्त्री जी अधिक विश्वास रखते थे। देश और व्यक्ति समस्याओं का संग्रह करते-करते कभी-कभी उनकी भारी गठरी के बोझ के नीचे दब जाते हैं। उन्होंने उसी भार को हल्का करने के लिए पाकिस्तान के सामने शस्त्र भी साहस से उठाए और ताशकन्द जाकर सम्मानपूर्ण समझौते तक पहुँचने के लिए रूस का आमन्त्रण भी स्वीकार किया। लेकिन जो समझौता हुआ उससे लगता है उन्हें गहरा आघात पहुँचा। समझौता होते ही मन्त्रियों और परिवार वालों से उसकी प्रतिक्रिया पूछना तथा अगले दिन के समाचार-पत्र काबुल मंगवाना इसी बात का प्रमाण है। यह आखिरी धक्का ही उनका जीवन ले बैठा।

ताशकन्द में विचारणीय विषयों के बारे में निर्णय भी कोई सामान्य नहीं था। आखिर जिस धरती को लेने के लिए हजारों माताओं की गोद खाली हुई, हजारों बहिनें विधवा बनीं, उस पर इसकी क्या प्रतिक्रिया होगी, यह ध्यान रह-रह कर उन्हें चुभ रहा होगा। शास्त्रीजी ने सुरक्षा परिषद का युद्ध-विराम सम्बन्धी प्रस्ताव भी ऊ थान्त को लिखे अपने १४ सितम्बर के पत्र में इन शर्तों पर माना था कि "काश्मीर भारत का अभिन्न अंग है। पाकिस्तान जब तक वहाँ से घुसपैठियों को वापिस नहीं बुलाता तब तक हमारे सुरक्षा सैनिक इन हमलावरों के खिलाफ कार्यवाही करते रहेंगे।" सम्भव है कि इसी सोच-विचार में उन्हें रात को नींद नहीं आई हो, हो सकता है कि इस समझौते से उन्होंने किन्हीं दूरगामी परिणामों की कल्पना की हो। जिन लोगों के बीच में बैठकर कभी उन्होंने यह कहा था कि दुनियाँ भी एक बार काश्मीर में यदि ५ अगस्त की रेखा पर लौटने को कहेगी तो भी हम उसे नहीं स्वीकार कर सकते, उन सब को भी तो कोई सन्तोषजनक जवाब देना होगा। दायित्व की भावना से इस देश के प्रति उनकी निष्ठा का तो स्पष्ट पता चलता है। परिस्थितियों से विवश होकर जिस समझौते पर उन्हें हस्ताक्षर करने पड़े, भारत आकर उसकी प्रतिक्रिया जानने के लिए वह जीवित न रह सके।

शास्त्रीजी की मृत्यु का एक सर्वाधिक दुखद प्रकरण जो देर तक हम सबको कष्ट देता रहेगा वह यह है कि डाक्टर बुलाने भी उन्हे स्वयं जाना पड़ा। साढे ११ बजे जब उन्होने दिल्ली से फौन पर गृह मन्त्री और अपने घर वालो से बाते की लगता है कि उसके बाद ही उनकी तकलीफ बढ़ गई। पर जैसा उनका स्वभाव था, वे सोचते रहे होगे कि अभी किसी को क्यो कष्ट दिया जाए। हो सकता है आराम करने से दर्द जाता रहे। जब तकलीफ बहुत बढ गई तब फिर बगल के कमरे मे सोए डाक्टर को स्वयं जाकर उन्हे जगाना पड़ा। समझ मे नही आता कि एक इतने बड़े राष्ट्र का प्रधान मन्त्री जिस कमरे मे सो रहा था उसमें न कोई उनका सहायक था और न पास मे कोई ऐसी घन्टी ही लगी थी जिसे बजाकर बाहर से वह किसी को बुला लेते। अन्तिम समय की यह घटना ऐसी है जो विस्तृत जॉच की अपेक्षा रखती है। भले ही उनके भाग्य की रेखा वहॉ समाप्त हो गई हो, पर यह असावधानी जिनसे हुई है वे क्षमा नही किए जायेगे।

कठिन मोड़

ताशकन्द समझौते से देश एक बड़े मोड़ पर आकर खड़ा हो गया है। इनको कार्यान्वित करने मे कैसे और कौन-से कदम उठाने थे, अब उन्हे बताने वाला कोई नही रहा। पाकिस्तानी प्रवक्ता ने यह तो ताशकन्द मे ही कह दिया था कि सेनाओ को वापिसी में घुसपैठिए शामिल नही है। अब पाकिस्तानी विदेश विभाग के दूसरे प्रवक्ता ने रावलपिडो में कहा है कि काश्मीर उन स्थानो मे नहीं है जो असदिग्ध रूप से भारत का भू-भाग माने जाते है। पाकिस्तान धीरे-धीरे और भी शर्तो से बाहर निकलने का प्रयत्न करेगा। नेहरू-लियाकत समझौते और कच्छ समझौते की जो स्थिति पाकिस्तानियों की निगाह मे थी, ताशकन्द समझौते की भी वही स्थिति नही होगी, इसकी क्या गारंटी है? समझौतो के इतिहास मे सदा भले आदमी और राष्ट्र ही घाटे मे रहते आए है। अब देखना है कि इसका क्या परिणाम होगा? शास्त्री जी के उत्तराधिकारी और जिस सगठन के वह नेता थे, उनका दायित्व अब बहुत बढ गया है।

एक-एक करके पुरानी पीढी के सभी नेता उठ रहे है। गाधी जो, सरदार पटेल, राजेन्द्र बाबू, टडन जी और नेहरू जी के साथ एक युग समाप्त हुआ। उसके बाद को दूसरी पीढी भी शास्त्री जी के निधन से रिक्त होने लगी। जिस दिन शास्त्री जी गए उसके अगले दिन ही काका साहब गाडगिल भी चले गए जो चलता जा रहा है, उसकी जगह आसानी से भरी नही जा रही है। देश को अब अपना दायित्व समझने और निभाने के लिये तैयार हो जाना चाहिए।

सिद्धेश्वर प्रसाद

शास्त्री जी : तब और अब

शास्त्री जी का प्रधान मन्त्री चुना जाना जब निश्चित-सा हो गया था, तब मुझे अकबर इलाहाबादी का यह शेर अनायास स्मरण हो आया था—

> हुजूम बुलबुल हुआ चमन में
> किया जो गुल ने जमाल पैदा ;
> कमी नहीं कद्रदां की 'अकबर'
> करे तो कोई कमाल पैदा ।

तब :—

निश्चय ही दुनियां के सबसे बड़े प्रजातंत्र में निर्विरोध रूप से नेता का चुनाव सारे विश्व के लिए एक ऐतिहासिक महत्व की बात थी । शास्त्री जी के प्रधान मंत्री बनने के कुछ ही महीने बाद, दो अक्टूबर १९६४ को, मैने लिखा था—

घर-बाहर ऐसी दृढ आस्था वाले व्यक्तियों को उंगलियों पर गिना जा सकता था, जो जवाहर-लाल जी के बाद इस देश के नेतृत्व के प्रति आशंकित नही थे । भारत में भी, और भारत के बाहर भी, ऐसे व्यक्ति काफी संख्या में थे, जो अक्सर भारत के भविष्य के बारे में गम्भीर चिन्ताजनक बाते करते थे । विदेशियों के मन में ऐसी आशंका व्यक्त करते समय अज्ञात रूप से यह भावना काम करती थी कि यदि भारत ने प्रजातांत्रिक ढंग से अपने विकास का मार्ग ढूँढ़ लिया तो यह निश्चय है कि ससार के देशों में अत्यन्त विशिष्ट स्थान का अधिकारी हो जायगा । पश्चिमी राष्ट्रों को भय था कि यदि ऐसा हुआ तो उनका नेतृत्व खतरे मे पड़ सकता है, अथवा प्रजातन्त्र के सम्बन्ध में उनकी जो मान्यताएँ और आदर्श है उनमें बुनियादी तौर पर परिवर्तन की जरूरतें पड़ सकती है । इसी आशंका से भारत के मामले में दिलचस्पी लेने वाले विदेशियों के अहं पर चोट पहुँचती थी और उन्हें अक्सर भारत में चारों ओर विघटन और तनाव के ही लक्षण नजर आते थे । इस भावना से प्रेरित होकर विदेशी जो लिखते-बोलते आए हैं, उसका भारतीयों पर भी थोड़ा-बहुत असर अवश्य पड़ा है । अभी अनेक भारतीयों मे राष्ट्रीय हीनता की जो भावना देखने को मिलती है, उसका कारण ऐसे विदेशी चिंतन का प्रभाव ही है ।

पंडित जी के उत्तराधिकारी के संबंध मे भारत में लोग दूसरे कारण से चिन्ता व्यक्त करते रहे है । भारत के सामाजिक आर्थिक जीवन पर सामन्तवादी व्यवस्था का अभी तक गहरा प्रभाव है

जिसके कारण अनजान मे लोग अभी भी चरित्र और पौरुष के बदले कुलीनता को महत्व देते हैं। दूसरी तरफ स्वतन्त्रता-सग्राम के दिनो से भी हम भारतीयो को लोकमान्य तिलक, महात्मा गाधी और पडित जवाहरलाल-नेहरू जैसे अति-विशिष्ट व्यक्तियो के नेतृत्व मे चलने की आदत पड गई है। लेकिन न तो अब सामन्तवादी व्यवस्था को लौटाया जा सकता है और न स्वतन्त्रता-सग्राम की तरह असामान्य स्थिति उत्पन्न की जा सकती है जिसके लिए अति-विशिष्ट व्यक्तियो को आवश्यकता हो।

सच बात तो यह है कि प्रजातन्त्र अति विशिष्ट नही, सामान्य विशिष्ट व्यक्तियो के बल पर चलता है। जवाहरलाल जी के उत्तराधिकारी लालबहादुरजी ऐसे ही सामान्य विशिष्ट व्यक्ति है। लोकमान्य, महात्माजी या पडित जी की तरह अतिमानवीयता से समन्वित न होना ही उनकी विशिप्टता है।

शास्त्री जी के निकट सम्पक मे आने वाले व्यक्तियो को अक्सर इस बात का अनुभव होता है कि उनकी सामान्यता कभी-कभी असामान्यता की सीमा तक पहुँच जाती है और विनम्रता, समन्वय के लिए मार्ग खोज निकालने का साधन बन जाती है। उनकी सामान्यता इतनी सहज है कि वे असामान्य प्रतीत होने लगते है। यदि शास्त्री जी के भीतर अपने को विशिप्ट समझने की कही लेशमात्र भी भावना होती, तो यह उनके लिये बोझ बन जाती और वह जब-तब खीझ या आक्रोश के रूप मे प्रकट होती। लेकिन शास्त्री जी की वह सहज-साधना अब उनके स्वभाव का ही एक अग बन गई है। कबीरदास जी ने कहा था— 'हरिजन ऐसा चाहिए, जैसा हरि ही होय।'

शास्त्री जी की विनम्रता तो ऐसी है कि इसके लिए वह कभी-कभी आलोचना के शिकार भी हो जाते है। लेकिन विनम्रता और दब्बूपन एक ही नही है। जो लोग उनकी विनम्रता को दब्बूपन का पर्याय मानते थे, उनका भ्रम बहुत कुछ दूर हो गया है। और अवसर आने पर बचा-खुचा भ्रम भी मिट जायगा। शास्त्री जी की विनम्रता इस बात मे है कि वह हर किसी की बात को सुनने के लिए, उसके दृष्टिकोण को समझने के लिए, सदा तत्पर रहते है। इसलिए कभी इस बात का कोई भय नही रहता कि शास्त्री जी जल्दबाजी मे कोई कदम उठायेगे। दूसरा लाभ यह है कि उन्हे अपने निर्णय को बदलने की नौबत शायद कभी ही आती हो।

शास्त्रीजी स्वभाव से मेल-जोल पसन्द करने वाले आदमी है। दो अतिवादो के बीच मार्ग निकाल लेने मे कुशल। राजेन्द्र बाबू ने कई बार काग्रेस को टूटने से बचाया था, स्वतन्त्रता के बाद सरकार को सकट मे पडने से रोका था। जब शास्त्री जी गृह-मन्त्री थे, तब उन्होंने जिस कौशल से आसाम के भाषा विवाद को निपटाया उसे सभी जानते है। अपनी इस विशिष्टता के कारण शास्त्रीजी कॉंग्रेस मे उस स्थान पर खड़े है, जिसे मेरू दड की सज्ञा दी जा सकती है।

शास्त्रीजी व्यवहार कुशल आदमी है और बडी-बडी बातो या नारे बाजियो के बदले काम की बाते करना पसन्द करते है। किसी गुत्थी को सुलझाने मे उन्हें जितना रस मिलता है उतना सैद्धान्तिक चर्चा मे नही, और कार्यकर्ताओ की सभा उन्हे जितना आकृष्ट करती है उतना पडितो की गोष्ठी नही और इसका कारण यह नही है कि सैद्धान्तिक चर्चा या गोष्ठी को वह महत्व नही देते बल्कि यह कि अक्सर हमे चर्चाएँ और गोष्ठिया कर्म की ओर प्रेरित करने के बदले उसके प्रति उपेक्षा का भाव उत्पन्न करने या उलझन पैदा करने का कारण बन जाती हैं। हा यदि चितन या चर्चा कर्मोन्मुखी हो तो उसमे शास्त्री जी को बड़ा रस मिलता है।

मानवतावादी होते हुए भी शास्त्रीजी भारतीयता के प्रवल पोषक है। उनका भोजन-वस्त्र ही नहीं, उनके आचार विचार भी ठेठ भारतीय हैं। लेकिन उनमे एक ऐसी चीज भी है जिसके कारण पश्चिम के कद्रदां निश्चय ही उनका सम्मान करेगे। वह है उनका स्वनिर्मित व्यक्तित्व। इतने साधारण और करीव-करीव विपन्नता पर जीवन आरम्भ कर ऐसे असाधारण पद पर पहुँचने वाले किसी दूसरे भारतीय का नाम अनायास याद नही पड़ता। एक इसी घटना ने भारत के उन करोड़ों उपेक्षितो और असम्पन्नो के मन मे आत्म-विश्वास और भविष्य के प्रति आस्था का सचार कर दिया है, जो अत्यन्त विपम परिस्थितियों में भी प्रकाश ढूँढ रहे है।

भारत की घरेलू समस्याएँ भी है और वैदेशिक भी। मेरा अनुमान है कि शास्त्री जी की दृष्टि में घरेलू समस्याओ के समाधान पर ही वैदेशिक समस्याओं का समाधान भी निर्भर करता है। इसलिए उन्होने घर और उसके आस-पास विशेप ध्यान देना शुरू किया है। मेरे विचार से उनका यह ढग सर्वथा उचित और व्यावहारिक है। यदि हमारा घर ठीक-ठीक है और पडौसी भी हमारे है, तो दुश्मन भीतर झाँकने की हिम्मत भी नही कर सकता। घर और वाहर मुझे एक ही वात का खतरा दीखता है—वह है अतिवादी प्रवृतियो मे वृद्धी। चीन को अतिवादिता के कारण विश्व के रगमच पर जो तनावपूर्ण स्थिति उत्पन्न हुई है, वह कव विश्वयुद्ध का रूप ले लेगी, यह कहना कठिन है। यदि दुर्भाग्य-वश ऐसा हुआ तो उस विश्वव्यापी विस्फोट से हमारी तटस्थता हमारी रक्षा नही कर सकती। ऐसी ही अतिवादी प्रवृतियो का घरेलू मामलो मे भी शोर-गुल वढता जा रहा है। ऐसा लगता है कि पूँजीपति वर्ग और मजदूर वर्ग के समर्थक प्रजातत्र की गाड़ी को सहज रूप से चलने देना नही चाहते। हर वुनियादी वात पर इस या उस वर्ग की धमकी ही आती रही, तो विकास का कार्य तो दूर, सामान्य प्रशासन का कार्य भी नही चल सकेगा। धमकी पैसे की हो या हड़ताल की—दोनो वर्तमान स्थिति मे हमारे स्वस्थ विकास के लिए समान रूप से वाधक है। इस खतरे से मार्ग निकालने के लिए उन्नतम स्तर पर प्रयत्न किया जाना चाहिए। यह वडे दु ख की वात है कि दोनो मे से कोई भी वर्ग वस्तु-स्थिति को समझने की उदारता नही दिखा रहा है। यह सम्भव है कि समन्वय की अद्भुत क्षमता के कारण शास्त्री जी दोनों समस्याओ का समाधान ढूँढने मे सफल हो। शायद समय ने इसीलिए यह दायित्व उन्हे सोपा भी है। इस दुर्गम मार्ग मे अकड़ से नही, वल्कि विनम्रता से ही प्रवेश प्राप्त हो सकता है।

और अव

११ जनवरी, १९६६ को वह मनहूस सुवह। ग्रैंड ट्रक ऐक्सप्रेस सिकन्दरावाद पहुँचने ही वाली थी कि किसी ने दवी जवान से कहा कि शास्त्री जी का स्वर्गवास हो गया। विश्वास नही हुआ और मन मे आया कि उस आदमी के कान पकड़ कर खीच लूँ। तभी गाडी स्टेशन पर रुकी और वहाँ भी अनेक लोगो के मुँह से यही वात सुनी। विश्वास नही हो पा रहा था कि आखिर यह क्या हो गया? तो क्या शास्त्री जी केवल ताशकन्द घोपणापत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए ही रुके थे? क्या इस अनोखे कार्य को करने के लिये प्रकृति ने उन्हे नियत किया था।

शास्त्री जी केवल उन्नीस महीने तक प्रधान मंत्री रहे। अव तक सवमे कम समय में सवसे अधिक काम करने वालो मे शेरशाह का नाम लिया जाता था। निश्चय ही अव इस दृष्टि से शास्त्री जी का स्थान सर्वोच्च हो गया। अपने नेतृत्व काल मे न केवल शास्त्री जी ने राजनैतिक दृढ़ता और [illegible] विश्वास वल्कि घर-वाहर सर्वत्र सुयश और गौरव भी दिया। पाकिस्तानी हमले के वाद [illegible]

सर्वमान्य राष्ट्रीय नेता के रूप मे अवतरित हुए थे और लोग धीरे-धीरे नेहरू जी के दुःख और अभाव को भूलने लगे थे। यह आश्चर्य की बात है कि स्वभाव से विनम्र और शान्ति-प्रिय होने पर भी वे एक सफल युद्ध नेता प्रमाणित हुए। लेकिन वस्तुतः वह शान्ति के भी उतने ही बडे नेता थे। ताशकन्द के घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किए जाने के बाद उन्होने प्रतिरक्षा मन्त्री श्री चव्हाण से कहा था कि हमे शान्ति के लिए भी उसी प्रकार से जुटकर काम करना है जिस प्रकार से देश की रक्षा के लिए किया। वस्तुतः शास्त्री जी फूल से कोमल दिखने पर भी वज्र से कठोर थे। बात भ्रष्ट व्यक्तियों को पदच्युत करने की हो या पाकिस्तानी और चीनी चुनौती का जवाब देने की, बात आत्म-सम्मान की हो या राष्ट्र के सम्मान की—वह सर्वत्र साहस, दृढता और सूझ-बूझ का परिचय देते थे।

महात्माजी राष्ट्र पिता थे, पडित जी नेताओं के नेता थे, सरदार सूत्रधार थे, लेकिन शास्त्री जी जनता के प्रधान मत्री थे। सादगी और विनम्रता मे शास्त्री जी ठेठ गाँधी युग के प्रतीत होते थे। गाँधी-जी द्वारा स्थापित काशी विद्यापीठ मे उन्होने शिक्षा पाई थी और अपने कार्यो से भली भाँति सिद्ध कर दिया था कि व्यक्तित्व के विकास के लिए न तो पश्चिमी ढग के पब्लिक स्कूलो की आवश्यकता है, न ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज के चरणो मे बैठने की। उनके गुण एक ठेठ भारतीय थे और उनकी सफलता एक ठेठ भारतीय सफलता थी। इसीलिए उनके स्वागत मे देश के कौने-कौने मे जितनी भीड जमा हुई उतनी आज तक किसी के स्वागत मे नही हुई। शास्त्री जी की सबसे बडी देन है आत्म-विश्वास—महात्मा जी के बाद भारत धीरे-धीरे अपना आत्म-विश्वास खोता जा रहा था। शास्त्री जी उसे पुनः जगाने मे सफल हुए थे। आत्म-विश्वास की इस ज्योति को जलाए रखकर ही भारत शास्त्री जी को सच्ची श्रद्धाजलि अर्पित कर सकता है। यह एकदम स्पष्ट है कि बलवत भारत ही यशवन्त हो सकेगा। यदि भारत मे बड़ी समस्याएँ हैं, तो भारत मे बड़े लोग भी है क्योकि भारत माता की गुदडी में बडे-बडे लाल छिपे है। आत्म-विश्वास के अभाव मे न तो भारतीयता पनप सकती है, न राष्ट्रीयता की भावना। स्वधर्म का पालन करते हुए शास्त्री जी ने अपना नश्वर शरीर छोड़ा। हिन्दू धर्म-दर्शन के अनुसार इससे श्रेयस्कर मृत्यु दूसरी नही है। कर्म करने मे ही उनका विश्वास था। फल की उन्होने कभी चिन्ता नही की। इसीलिए उन्हे हर दृष्टि से परम सफलता की प्राप्ति हुई। यह कर्मयोगी अब हमारे बीच नही रहा परन्तु कर्म योगी की साधना कभी व्यर्थ नहीं जाती। भारत का कण-कण शास्त्री जी के प्रति ऋणी रहेगा।

●

अक्षयकुमार जैन

युद्ध और शांति का विजेता लालबहादुर

लालबहादुर चले गये या कहें भारत के बहादुर लाल चले गये। ऊपर से [illegible] दृढ चट्टान, पस्ता कद, पर विशाल हृदय, छोटे-बड़े सबकी समान रूप से सुनने [illegible] शास्त्री जब अपनी प्रसिद्धि के चरम उत्कर्ष पर पहुँचे मानो नियति को उनसे ईर्ष्या [illegible] छीन लिया।

उनको वृद्धा माँ को विश्वास नहीं कि उनका और भारत [illegible] वे बराबर यह कहती रही कि 'उसका देहान्त कैसे हो सकता है, [illegible] अविश्वास मनमें तब तक रहा जब तक सोवियत विमान एयरो[illegible] शरीर भारत के सर्वोच्च जनरलों ने तोपगाड़ी पर न रख [illegible] लिया।

शास्त्री जी के अनेक चित्र मस्तिष्क में घूमने लगे। [illegible] थी। वे सस्मरण वैयक्तिक थाती के रूप में सुरक्षित रहने [illegible] को नष्ट करना होगा।

भारत सरकार के योग्यतम मन्त्रियो मे उनकी गिनती थी। विनम्रता, बन्धुत्व, दूसरे की बात ध्यानपूर्वक सुनने और प्रभाव-मुक्त रहकर उचित निर्णय करने मे वे उदाहरण के रूप मे प्रस्तुत किये जाने लगे।

अन्याय और तुष्टीकरण दोनो से वे दूर रहे और रेलमन्त्री के रूप मे दूसरे आम चुनावो से पहले उन्होने अरियालूर रेल दुर्घटना के लिए अपने आपको सवैधानिक रूप से जिम्मेदार मान कर मन्त्रि-पद इस प्रकार त्याग दिया मानो वस्त्र बदल लिये हों। इसके बाद आम चुनाव मे मत्री के दायित्व से भी अधिक सगठन का दायित्व निभा कर उन्होने अपने व्यक्तित्व को और भी प्रखर कर लिया।

नेहरू जी ने इस तप पूत साथी को फिर मन्त्रिमण्डल मे लिया और प० गोविन्दवल्लभ पन्त के निधन के बाद वे भारत के स्वराष्ट्रमत्री के पद पर आसीन हुए। भारत के स्वराष्ट्रमत्री का पद काँटो की सेज से कम नही, फिर भी इस व्यक्ति को कभी खरोच तक नही आयी और योग्यतम स्वराष्ट्रमन्त्री के रूप मे नेता नेहरू के दिल मे बस गये।

असम के भाषायी दगो को शान्त करना मामूली बात न थी। नेपाल के साथ मधुर सम्बन्ध स्थापित करके उन्होने कूटनीतिक भूमिका मे एक सफल अभिनेता का परिचय दिया। काश्मीर मे हजरतबल मसजिद से बाल गुम हो जाने के सिलसिले मे फूटते हुए ज्वालामुखी पर उन्होने अपनी योग्यता से शीतल शिला रख कर एक कुशल प्रशासक का परिचय दिया। इस प्रकार देश और विदेश के अनेक महत्वपूर्ण काम करके उन्होने नेहरू के उत्तराधिकारी बनने की पात्रता सिद्ध की।

कामराज योजना के अनुसार मन्त्रि पद छोड़ कर उन्होने दुबारा वस्त्र बदल लिये। किन्तु नेहरू जी उनकी योग्यता, निष्ठा, राष्ट्रभक्ति, दृढता के इतने कायल थे कि उन्होने फिर से उन्हें अपने मत्रिमण्डल मे ले लिया। और जब देश के महान नेता श्री जवाहरलाल का निधन हुआ तो बिना किसी वैमत्य के सर्वसम्मति से वे प्रधान मत्री पद पर आसीन हुए।

कैसा दु खद सयोग है कि जन्म के १८ महीने के बाद उनके सिर से पिता श्री का साया उठ गया और और ठीक १८ महीने के प्रधान मत्रित्व के बाद देश से उनका साया उठ गया।

जनमानस के प्रतीक शास्त्री जो जनता से निकल कर आये थे और जनता के हृदय को खूब समझते थे। गाधी जी की तरह पवित्र सिद्धान्तवादी, दरिद्रनारायण के सरक्षक और सेवक, नेहरू की तरह लोकतन्त्री समाजवाद, तटस्थता और शान्ति मे अटूट विश्वास रखने वाले, पन्त की तरह कुशल प्रशासक और टण्डन जी की तरह भारतीय सस्कृति मे आस्थावान, श्री लालबहादुर शास्त्री भारतीयता के प्रतीक थे।

मिष्टभाषी किन्तु दृढ सकल्पी शास्त्री जी युद्ध और शाति दोनो के विजेता और नेता बने। वह भी कुछ महीनो के अन्तर से। अपने प्रधान मन्त्रित्व काल के अल्प समय मे उन्होने कुछ हिमालय जैसे बडे और चट्टान जैसे मजबूत निर्णय किये। कच्छ के रन का फैसला जहाँ उनकी शान्ति की नीति का परिचायक था, वहाँ काश्मीर मे पाकिस्तानी हमले के बाद उन्होने युद्ध लद जाने पर बहादुर की तरह लड़ने का फैसला किया, वह उनकी दृढ़ता का द्योतक था।

वे यह जानते थे कि चीन और पाकिस्तान दोनों मिल कर घात कर रहे है। उनके साथ इण्डोनेशिया आदि कुछ अन्य देश भी शामिल हैं और भारत का प्रायः समूचा सीमान्त आग की लपटों से झुलस रहा है, पर शूरवीर की तरह उन्होंने हथियार का जवाब हथियार से ही देने का निश्चय किया और संसार जानता है कि सितम्बर १९६५ के इस युद्ध मे भारत की विजय उनकी दृढ़ता और संकल्प की नीति थी जिसने भारत को अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में शिखर पर ले जा बिठाया।

भारत के कलकत्ता, बम्बई आदि नगरों मे उनका जिस ढंग से और अभूतपूव जनसमूह ने स्वागत किया, उससे उनका धवल यश और भी मुखरित हो गया। किन्तु साढ़े तीन महीने बाद ही ताशकन्द मे जहाँ वे प्रभु के प्यारे हुए, उन्होने शाति के मसीहा होने का पूर्ण परिचय दिया। शान्ति के उस शिखर सम्मेलन मे दोस्ती का हाथ पहले उन्होने बढ़ाया और सप्ताह के भीषणतम मानसिक एव शारीरिक सघर्ष मे प्रकृति ने उनके निर्बल स्वास्थ्य पर रहम न खाया, सहानुभूति न दिखायी और वे भारतीय जनता के हृदय में एक गहरी टीस छोड़ कर सदा के लिए चले गये।

भारत का अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे मान बढ रहा है। युद्ध की जीत से भी बढकर ताशकन्द की शाति की जीत ने भारत और उसके प्यारे पूत लालबहादुर की प्रतिष्ठा को ऊँचा उठाया। अब समय आ रहा था जब भारत संसार के बडे-बड़े देशों के समकक्ष बैठ कर अपनी शांति नीति को प्रभावकारी ढग से बढ़ाता। सच तो यह है कि जब उनके कृतित्व की कलिका पल्लवित एव पुष्पित हो रही थी तभी क्रूर काल ने उसकी पंखड़ियाँ भूमि पर झार दी।

उनका डेढ़ वर्ष का कार्यकाल इतिहास मे अपना अत्यन्त विशिष्ट स्थान रखेगा और उनके उत्तराधिकारी का मार्ग-दर्शन करेगा।

हरिकृष्ण त्रिवेदी

पृथ्वी-पुत्र

सामान्य अर्थ म सभी मानव प्राणी पृथ्वी-पुत्र है, किन्तु वास्तविक अर्थ मे वही व्यक्ति सच्चा पृथ्वी-पुत्र है जो अपनी माता पृथ्वी को अपना सब कुछ अर्पण कर दे। श्री अरविन्द के शब्दो मे 'मानव को अपने जीवन का बीज बो कर तथा आँसुओ से सीच कर इस पृथ्वी को समृद्ध बनाना चाहिए।" गाँधी जी तथा नेहरू जी के आदर्शो से प्रेरित होकर तथा उनके नेतृत्व मे जिन कई लोगो ने भारत माता की सेवा का अखड तथा आजीवन व्रत भी लिया उनमे श्री लालबहादुर शास्त्री भी थे। देश की सेवा मे ही उन्होने अपनी सबसे बडी वस्तु प्राणों को भी उत्सर्ग कर दिया। भारत माता का यह वीर पुत्र (जिस 'लाल' के साथ जन्म से ही 'बहादुर' जुड़ गया था) केवल अठारह-उन्नीस महीनो के प्रधान मत्रित्व-काल मे ऐसा प्रकाश फैला गया है कि वह जटिल समस्याओ तथा सकटो की अँधियारी मे भारत के भावी शासको को भी उचित राह खोजने मे मदद करेगा।

जवाहरलाल जी के जीवनकाल मे ही 'नेहरू के बाद कौन' तथा 'नेहरू के बाद क्या' प्रश्न उठने लगे थे। और नेहरू जी की अस्वस्थता मे वृद्धि के साथ तो यह प्रश्न और भी प्रखर बन गया था। लेकिन प्रधान मन्त्री का पद सम्हालने के बाद शास्त्री जी ने अपने कार्यो से सिद्ध कर दिया कि वह नेहरू के सच्चे उत्तराधिकारी है। 'कौन के साथ क्या' की कुशका भी विलीन हो गई। भारत के शत्रु तो यह समझे हुए थे कि नेहरू जी के देहावसान के साथ ही भारत छिन्न-भिन्न हो जायगा। भारत मे भी कई लोगो को यह आशंकाए थी कि शास्त्री जो राष्ट्रीय एकता को पूर्ववत् अटूट न रख पायेगे। नेहरूजी के महान व्यक्तित्व तथा उनकी राष्ट्रव्यापी अपार लोकप्रियता को देखते हुए यह शका निराधार भी नही थी। लेकिन श्री लालबहादुर शास्त्री ने इस एकता की रक्षा करने के अतिरिक्त उसे पहले से अधिक सुदृढ भी किया है।

समस्याओं का पहाड़

प्रधान मन्त्री का पद ग्रहण करने के साथ ही श्री लालबहादुर शास्त्री ने देखा कि समस्याओ का पहाड़ सामने खडा है। इस दुर्गम पर्वत पर विजय करना आसान नही था। खाद्य-सकट मुँह बाये खडा था। अग्रेजी-समर्थक हिन्दी-विरोधी आन्दोलन खडा कर देश मे भाषायी उन्माद का विष-वमन कर रहे थे और इसके परिणामस्वरूप मद्रास राज्य के कुछ स्थानों मे हिंसात्मक उपद्रव भी हुए। पाकिस्तान तथा चीन धमकियाँ देने के साथ भारत की सीमाओ पर अतिक्रमणकारी हलचले बढाने लगे।

पाकिस्तान ने तो पहले कच्छ पर और फिर काश्मीर पर ही भारी सशस्त्र आक्रमण कर दिया। भारत के शत्रु उसको उसके मित्र देशो से भी अलग-अलग करने को कूटनीतिक कुचेष्टाओ में जुट गये। देश में अन्न-सकट तथा दिन-प्रतिदिन बढती हुई महगाई के साथ राज्य भी केन्द्र को इधर-उधर खीचने लगे और ऐसा जान पडने लगा कि राज्यों को स्वच्छन्दकारी मनोवृत्ति केन्द्र को कमजोर बना देगी। शास्त्री जी पर कांग्रेस दल के भीतर से ही यह आरोप सुनाई पड़ने लगा कि अनिर्णयकारी मनोवृत्ति ने प्रधान मन्त्री के हाथ जकड़ दिए है।

ऐसी स्थिति में शास्त्री जी के बदले और कोई व्यक्ति, प्रधान मन्त्री की कुर्सी पर होता तो वह विचलित हो जाता, किन्तु शास्त्री जी ने अपना धैर्य तथा मानसिक संतुलन नही खोया। उन्होंने इस आरोप को भी निराधार सिद्ध कर दिया कि वह ढिलमिल मनोवृत्ति के है और कोई फैसला नही कर पाते। प्रधान मन्त्री बनने के करीब दस दिन बाद ही तो दास आयोग की रिपोर्ट उनके सामने आ गई थी, लेकिन उन्होने सरदार प्रतापसिह कैरो को जो कि वस्तुत पजाब के लौहपुरुष थे, पदच्युत करने मे कोई बिलम्ब न किया। उन्होने रिपोर्ट पर विचार करने में अनावश्यक समय न लगाया।

शास्त्री जी की स्थितप्रज्ञता

स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री को स्थितप्रज्ञता की बहुत कुछ देन प्राप्त थी। वह वाक्शूर नहीं, कर्मशूर थे। काम करने का उनका अपना ढंग था। पृथ्वी-पुत्र मे यह निर्णय करने का स्वाभाविक गुण होता है कि उसे पैर कहाँ रखना चाहिए और कहाँ नही। शास्त्री जी में व्यक्तियों तथा स्थितियों को परखने की विलक्षण प्रतिभा थी। उनकी सरलता, विनम्रता तथा उनके मितभाषण से यदि किसी को यह भ्रम हो गया हो कि शास्त्री जी में सक्रियता का अभाव है तो उसको कुछ समय बाद अपनी गलती भी जरूर महसूस करनी पड़ी।

शास्त्री जी पर गाधी जी, नेहरू जी, पन्त जी तथा टंडन जी का बहुत प्रभाव पड़ा था और इन सभी नेताओ से उन्होने जो कुछ सीखा उससे लाभ उठाने का पूरा प्रयत्न किया। सेवा, त्याग-तपस्या तथा सादा जीवन का अमोघ मत्र तो वह गांधी जी की प्रेरणा से बचपन मे ही ग्रहण कर चुके थे। नेहरू जी से वैज्ञानिक चितन, समाजवाद तथा आधुनिक कार्य प्रणाली के सम्बन्ध मे उन्होने बहुत कुछ सीखा। पन्त जी की प्रशासन-पटुता को निकट से देखने पर उन्होने जो कुछ प्राप्त किया, उसका भी पूरा उपयोग किया।

पिछले अठारह-उन्नीस महीनो में इतनी अधिक तथा प्रचंड समस्याओं से वह साहसपूर्वक इसीलिए जूझ सके कि प्रधान मन्त्री का पद सम्हालने के पहले वह समस्याओ से संघर्ष का दीर्घकालीन अभ्यास कर चुके थे और उन्हें बहुमूल्य अनुभवो की प्राप्ति हो चुकी थी। शासन विज्ञान तथा राजतन्त्र की कला सीखने के लिए वर्षो कार्य करना पड़ता है और शास्त्री जी ने लोक सेवा के आदर्श को दृष्टि मे रखते हुए पूर्व निष्ठा से यह किया। लोक-सेवक मडल (सर्वेन्ट्स आफ पीपल सोसायटी) की सदस्यता की सीढी से उन्होने जीवन-उत्थान का कार्यक्रम प्रारम्भ किया था। जिन विभिन्न सीढ़ियो को पार कर वे प्रधान मन्त्री बने उनमे से मुख्य-मुख्य इस प्रकार है—उत्तर प्रदेश कांग्रेस के महामन्त्री, उत्तर प्रदेश विधान सभा के सदस्य, उ० प्र० सरकार के गृह तथा परिवहन मंत्री, कांग्रेस महासमिति के महामंत्री, राज्य सभा के सदस्य, रेलवे तथा परिवहन मत्री, लोकसभा के सदस्य, सचार मत्री, वाणिज्य-उद्योग मत्री, गृह मत्री और फिर नेहरू जी के कार्य मे मदद करने वाले बिना विभाग के मत्री।

दृढ़, किन्तु हठी नहीं

श्री लालबहादुर शास्त्री की सफलताओ का सबसे बड़ा रहस्य उनके स्वभाव मे निहित था। वे अपने आदर्शो पर पूर्ण आस्था रखते हुए सुदृढ विचारो के व्यक्ति थे। किन्तु उनकी दृढता ने हठधर्मिता का रूप कभी न लिया। दूसरे की बातो को सुनने के लिए उनके कान सदैव खुले रहते थे। उन्होने यह कभी नही सोचा कि दूसरा पक्ष सही नही हो सकता। विचारो के आदान-प्रदान के बाद यदि वे दूसरे पक्ष के दृष्टिकोण के सम्बन्ध मे आश्वस्त हो जाते तो उस बात को मान लेते थे। उन्होनें काग्रेस पार्टी मे कितने ही विवादो को हल किया। संगठन के लिए जहाँ कर्मठता आवश्यक है सूझ-बूझ तथा स्वभाव की अनुकूलता भी आवश्यक है। ये सब गुण शास्त्री जी मे थे। असम के भाषायी विवाद को दूर करने अथवा केरल की समस्या को हल करने मे भी उन्होने मध्यस्थता से अपने विशिष्ट गुण का परिचय दिया था।

भारत के भावी शासको के लिए यह हितकर होगा कि वे शास्त्री जी की रीति-नीति मे निहित विशेषताओ को समझे। उन्होने जल्दबाजी मे कोई कदम नही उठाया, लेकिन सोच-समझ कर पग उठाने के बाद वे फिर पीछे नही हटे। सकट के समय निर्भीकता तथा साहस से कदम उठाने मे वे कदापि पीछे न रहे। एक सफल शासक के लिए यह चारित्रिक विशेषता आवश्यक है।

कश्मीर मे जब हजरतबल काड के सिलसिले मे स्थिति बहुत गम्भीर हो गई थी तो उन्होने 'पवित्र बाल' के दर्शनो की व्यवस्था कर लोकमानस को शान्त किया। शेख अब्दुल्ला को रिहा करवा कर उन्हे सही रास्ते पर लौटने का मौका शास्त्री जी ने दिया। उनकी आपत्तिजनक हरकते बर्दाश्त कर विदेश भी जाने दिया, लेकिन शेख वहाँ भारत-विरोधी षड्यन्त्र करने लगे तो उन्हे नजरबन्द करने मे फिर शास्त्री जी बिलकुल नही हिचके।

शान्ति और युद्ध—दोनों में नेता

ऐसे व्यक्ति विरले ही होते है जो शान्तिकाल तथा युद्धकाल दोनो मे देश का नेतृत्व कर सके। शास्त्री जी इन्ही विरले व्यक्तियो मे थे। शान्ति के सतत प्रयत्नो मे कुसुम से कोमल, किन्तु आक्रमण का सामना करने के लिए वज्र समान कठोर। पाकिस्तान के साथ एक पडौसी के अच्छे सम्बन्ध स्थापित हो—इसके लिए उन्होंने भरसक कोशिश की। जनता की भावना को कुछ ठेस पहुँचा कर भी उन्होने कच्छ समझौता किया। लेकिन जब पाकिस्तान ने कश्मीर पर आक्रमण किया तो उन्होने सेना को यह आदेश देने मे कोई विलम्ब न किया कि वह पाकिस्तानी प्रदेश मे प्रवेश करे। पाकिस्तानी शासक दिल्ली मे जाने की सोच रहे थे, किन्तु उन्हे लेने के देने पड़ गये। भारतीय सेना लाहौर के पास ही पहुँच गई। शास्त्री जी के सफल तथा साहसिक नेतृत्व से भारतीय जनता तथा सेना मे अभूतपूर्व उत्साह उमडा। राष्ट्र एकजुट हो गया। त्याग-तपस्या की लहर उमड पड़ी। सरकार तथा जनता एक-दूसरे के बिलकुल निकट आ गई। भारतीय सेना ने अपने शौर्य तथा सूझ-बूझ से जो विजय प्राप्त की उससे दुनिया की नजरो मे भारत बहुत ऊँचा उठ गया। १९६२ के चीनी आक्रमण मे भारत को जो अपमान सहना पडा था उसकी कालिमा भी धुली।

पाकिस्तान मे लडाई के उन सकटपूर्ण दिनो मे शास्त्री जी ने निर्भीकता, आत्म-गौरव तथा दृढता का अद्भुत परिचय दिया। चीन के दोनो अल्टीमेटमो की उन्होने उपेक्षा की और टाँय-टाँय फिस

हुए। चाऊ तथा माऊ ने भी देखा कि लालबहादुर तो किसो दूसरो हो मिट्टो का बना है। देश में भयंकर खाद्य सकट होने पर भी उन्होने स्पष्ट घोपित किया कि भारत अमरीका या अन्य किसी देश से उस स्थिति मे अन्न न लेगा, यदि उस पर कोई कूटनीतिक दबाव डाला जाय। उन्होने देशवासियो को यही बुलन्द सन्देश दिया कि आजादी के लिए भूखा मरना पड़े तो उसके लिए तैयार होना पड़ेगा।

सुरक्षा परिषद् ने तथा दूसरे देशो ने बार-बार जो दबाव डाले, वे भी व्यर्थ ही गये। ब्रिटेन को काली करतूतो का भी उन्होने मुँह-तोड़ जवाब दिया है। भारत तो शान्ति से रहकर जनता का जीवन-स्तर उठाने के लिए निर्माण कार्यो मे जुटा रहना चाहता है। और जब श्री कोसीजिन ने ताशकन्द मे श्री शास्त्री-अयूब वार्ता के लिए अनुरोध किया तो शास्त्री जी ने शान्ति-प्रयत्न से मुँह नही मोड़ा। वे दोनों देशो के मध्य शान्ति तथा मैत्री की स्थापना के लिए कितने उत्सुक तथा प्रयत्नशील थे, इसके साक्षी कोसीजिन है। इस सम्बन्ध मे शास्त्री जी की ईमानदारी की तो अयूबखाँ ने भी दाद दी है। इस समझौते के गुणावगुण के बारे मे यहाँ हम कुछ नही कहते, यदि पाकिस्तान इस पर ईमानदारी से अमल करे तो दोनो देशो के बीच अच्छे सम्बन्धो का मार्ग खुल सकता है। नन्दा जी ने समझौते के पालन का आश्वासन दिया है। लेकिन भारत सरकार को बहुत सतर्क तथा सजग रहना होगा।

शास्त्री जी ने देश को "जय जवान जय किसान" का जो नारा दिया है उसकी सफल क्रियान्विति ही शास्त्री जी को सच्ची श्रद्धाजलि होगी। रक्षात्मक, खाद्य तथा औद्योगिक तीनो आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए आत्मनिर्भर बनना है। श्री लालबहादुर शास्त्री ने जहाँ जनता का पथ-प्रदर्शन किया, वहाँ वह जनता की आवाज को भी बराबर सुनते रहे। किसी भी प्रधान मन्त्री के लिए यह आवश्यक है कि वह जनता का अपना बने। तभी वह सफल नेतृत्व भी कर सकता है। सबको साथ लेकर आगे बढ कर ही वह सफलता प्राप्त कर सकता है। महत्वपूर्ण समस्याओ पर विरोधी, दलो से विचार-विमर्श कर उनका सहयोग लेने की शास्त्री जी ने जिस परम्परा का सूत्रपात किया है, वह आगे ही बढनी चाहिए।

विष्णु प्रभाकर

एक नन्हा सा आदमी

भारतोय परम्परा की जय हो। एक और महान आत्मा शान्ति को बलिवेदो पर विसर्जित हो गयी, गाँधो-नेहरू की परम्परा पर एक और अमिट हस्ताक्षर अकित हो गया, शान्ति के मार्ग पर एक और मसीहा अवतरित हुआ, जिसने सदा की तरह अपने प्राणो को ज्योति से प्रकाशस्तम्भ का निर्माण किया—वह प्रकाशस्तम्भ जो इस देश की निराली थाती है और जो हमे युग-युग तक पथभ्रष्ट होने से बचाता रहेगा।

यह सचमुच ही सयोग है, परन्तु निश्चय हो अद्भुत सयोग है कि इस युग मे शान्ति के अमर उपासक महात्मा गाधी का जन्म और मरण, जिस मास मे हुआ उसी मास मे नये मसोहा श्री लालबहादुर शास्त्री के जन्म को तो तारीख भी वही थी। गाँधो जी २ अक्टूबर को इस ससार मे आये, शास्त्री जी का जन्म भी २ अक्टूबर को ही हुआ। गाँधी जी ३० जनवरी को शहीद हुए, शास्त्री जी ११ जनवरी को असमय मे ही चल बसे। गाँधो जी शान्ति के लिए जिये, शाति के लिए उन्होने प्राणो को चिन्ता नही की। शास्त्री जी ने शान्ति के लिए ताशकन्द मे अथक सघर्ष किया और जब मार्ग मिल गया तो अपने को उस पर विसर्जित कर दिया, जिससे उनके देशवासी उस मार्ग से कभी न भटके। गाँधी जी की मृत्यु ने बटवारे से उत्पन्न हिन्दू-मुसलमान वैमनस्य को कम करने मे जादू का सा असर किया था। शास्त्री जी का निधन भारत-पाक की इस नयी शान्ति कामना को और भी सघन करेगा। यश के चरम शिखर पर उनका जाना जैसे पूर्व नियोजित था। नियति के रहस्यमय लोक मे विचरने वाले उसके नाना अर्थ लगा सकते है, पर जो स्पष्ट ही सबको दिखायी देता है, वह यही है कि शान्ति की खोज मे उन्होने ईमानदारो से अथक परिश्रम किया और उसे उसी भावना से पाया जो भारत की परम्परा है। उन्होने एक सुलझे हुए द्रष्टा के रूप मे मुक्त मन से "ताशकद घोपणा" के निर्माण मे भाग लिया। वे पूर्वाग्रह से मुक्त थे। बदले की भावना उन्हे छू भी नही गयी थी। वे शब्द के नही, अर्थ के कामी रहे। इसीलिए हो सकता है, कुछ लोग उनको गलत समझे, वैसे गलत समझ जाना महानता का लक्षण है, पर शान्ति के इस मसोहा की दृष्टि तो क्षणिक और शाश्वत के अन्तर को पहचानता थी। श्री नेहरू को यहो विशेपता थी। इसीलिए विशेपता का परिचय श्री शास्त्री ने ताशकन्द मे दिया। इसीलिए तो एक दिन श्री नेहरू ने मानो भविष्यवाणी के रूप मे उन्हे आदेश दिया था "तुम्हे मेरा काम करना होगा।" श्री शास्त्री ने भारत-पाक के बीच सद्भावना स्थापित करने तथा विश्वशाति की नीव दृढ़ करने मे आत्मोत्सर्ग करके महात्मा गाधो तथा लोकनायक नेहरू के आदेश का पालन ही तो किया हे। उनके आदर्श को ही तो लिया है। इसलिए उनकी मृत्यु, उनको

मित्र बन कर ही तो आयी थी। मृत्यु से बड़ा और कोई मित्र नही—यह गाँधी जी ने कहा था और गुरुदेव ने कहा था, "मरणेर तुहुँ मम ताप धुन्याओ।"

गाँधी-युग की राजनीति मे डा० राजेन्द्रप्रसाद संकट-काल के व्यक्ति के रूप में प्रसिद्ध हुए। नेहरू-युग में वह गौरव श्री लालबहादुर शास्त्री को मिला। अपने युग मे भी श्री लालबहादुर शास्त्री जी झझाओं से जूझते रहे, पर उनका जूझना किसी खीझे व्यक्ति या इन्सान का जूझना नही था। क्रोध या घृणा तो जैसे इस छोटे से इन्सान को छू भी नही गये थे। परम शाति और धैर्य व विनम्रता से वह वड़ी से बडी समस्या का सामना करते थे और उसे सुलझा कर ही शान्त होते थे। पुरुष जब नारी के गुण पा लेता है तभी वह पूर्ण पुरुष होता है। विनम्रता, मृदुता, स्नेह और सौजन्य उनकी दुर्बलता के प्रतीक नही थे। वे उनकी फौलादी दृढता की नीव थे, उनके सम्बल थे। इसलिए बडे से बड़ा झझावात भी उन्हे डिगा नही सका, वल्कि उन्होने झझावातो को ही पा लिया।

जनता की स्मृति बड़ी दुर्बल है। एक दिन असम-बगाल के सम्बन्धो को लेकर इस भू-भाग में संकट के बादल घिर आये थे। तब श्री नेहरू ने श्री शास्त्री को वहाँ भेजा था और विना शोर मचाये उन्होने धीरे-धीरे वहाँ के घायल जनमानस को शान्त और स्वस्थ किया था। और जब दो चिरमित्र देशो, भारत और नेपाल मे किन्ही गलतफहमियों के कारण वैमनस्य उभरता दिखाई दे रहा था, तब भी श्री नेहरू ने अजातशत्रु शान्तिदूत को नेपाल भेजा था। और सभी जानते है, उसी दिन से गलतफहमियाँ तूफान के काले बादलो की तरह छँटती चली गई। आज फिर हम वही चिरमित्र है। दास कमीशन पर निर्णय लेकर सरदार प्रतापसिह कैरों को मुख्य मत्री के पद से मुक्त करना क्या कम साहस का काम था और जब काश्मीर में पवित्र बाल की चोरी को लेकर झझावात उमड़ा था, तव उस भयकंर भीड में यही छोटा सा नार्युचित्त गुणो वाला इन्सान शान्त मन अडिग खड़ा हुआ था। और लंका के भारतीयों को लेकर जो समझौता उन्होने किया उसकी गौरवमयी कहानी बहुत पुरानी नही है।

यह सूची न जाने कितनी लम्बी है पर अपने १९ माह के प्रधान मत्री पद काल में तो वह जैसे झंझावातों के बीच ही में जिये। श्री नेहरू जैसे व्यक्तित्व के बाद वह प्रधान मन्त्री बने। नेहरू अनेक कारणो से विश्व में मानव की महानता का प्रतीक वन गये थे। उनके स्थान पर आकर उस महानता का वरण करना एक आश्चर्य ही लगता था। उस पर उत्तर के अमित्र पड़ौसी का निरन्तर चुनौती देना और पाकिस्तान से दुर्भाग्यपूर्ण सघर्ष—पहले कच्छ में और फिर पूर्वी पश्चिमी सीमा पर युद्ध, एक के वाद एक भयकर झझावातो ने उन्हे घेरा, पर वह तनिक भी उत्तेजित नही हुए। इसी तरह शान्त और मृदु, पर दृढ स्वर मे कहा कि हम शाति के उपासक है, परन्तु दुर्बलता के नही। जो शान्ति चाहता है उसके हम मित्र है। पर जो हमारी शक्ति की परीक्षा लेने को उत्सुक है, उसे हम निराश नही करेगे। और किया भी नही। विश्व ने भारत की शक्ति को फिर से देखा और पाया कि गाधी की अहिसा सचमुच शक्तिशाली की अहिसा है। और नेहरू का सह-अस्तित्व का सिद्धान कायरता का प्रतीक नही, वह स्वाभिमान का आदर्श है।

भारत की प्रतिष्ठा को उसका वास्तविक गौरव प्रदान करके वे उसकी परम्परा की ओर मुड़े और शाति की राह में ताशकद जाकर शुद्ध हृदय से पाकिस्तान के सदर श्री अय्यूब से मिले और

अन्त मे रूस के प्रधान मंत्री श्री कोसीजिन की सहायता से शाति के उस मार्ग को ढूँढ ही लिया । उनका काम मानो इतना ही था । देश के नाम 'ताशकद' घोषणा को समर्पित करते हुए उन्होने कहा—'युद्ध के समय हमने पूरी शक्ति से युद्ध लड़ा था, अब उसी शक्ति से शाति के लिए प्रयत्न करेंगे । शाति की राह मे व्यक्तिगत प्रश्न और प्रतिष्ठा के झूठे मापदण्ड कोई अर्थ नही रखते ।' इसी भावना से उन्होने शाति के सधिपत्र पर अपने देश की ओर से हस्ताक्षर किये और कहा,—"यह अच्छा काम हुआ ।" ये सीधे-सादे कवित्वहीन शब्द है, पर वह हृदय की भाषा है । इसमें निश्छल सत्य तथा छलकता प्रेम भरा है । इसमे उनका अन्तर बोलता है ।

उनका कद छोटा था । छोटा कद बहुत से इतिहास-पुरुषो को परेशान करता रहा है । परन्तु श्री शास्त्री तो मानो पौराणिक अवतार वामन के प्रतिरूप थे, जिसने दो पग मे समूचे ब्रह्माण्ड को नापकर तीसरे पग मे दानव राजा बलि का मानभग करके उसे पाताल भेज दिया था । पर इतना कुछ करने वाले को अपनी अमर मुक्ति भी दी थी । अपने को ही उसको समर्पित कर दिया था । उसका अर्थ यही है वामन की शक्ति अथाह थी तो हृदय शान्त बने रहते थे ।

सुखबीर

अमन का देवता

दस जनवरी का ठिठुरता हुआ दिन था। गत दो दिनों की तरह उस दिन भी मोर्चो पर बिल्कुल शान्ति थी। न पाकिस्तानी सैनिको ने युद्ध-विराम का उल्लंघन करते हुए गोली चलाई थी और न ही भारतीय जवानों ने जवाबी कार्रवाई मे कोई फायर किया था। वही क्षेत्र, जो दो-तीन दिन पहले तक कार्रवाई और जवाबी कार्रवाई में रह-रह कर गोलियों की दनादन से गूंजता रहता था, आज शांत एव मौन था। दोनो ओर के सैनिक अपने-अपने मोर्चो से बाहर निकल कर धूप में टहल रहे थे। उनके हाथो में बन्दूके नही थी, मशोनगने-स्टेनगने नही थी, और हथगोले भी नही थे। आज वे बिल्कुल निहत्थे थे, मानो आज उन्हे यह भय नही रहा था कि यदि उन्होंने मोर्चे से सिर निकाल कर जरा भी बाहर झाँका तो शत्रु की गोलियाँ उन्हें भून डालेगी। आज उनके मन में एक उद्विग्नता, एक चिन्ता एव उत्सुकता थी और वे सभी सोच रहे थे कि यदि ताशकन्द-वार्ता असफल हो गई तो क्या होगा? क्या युद्ध फिर से शुरू हो जायगा...... या फिर वे इसी तरह अपने घरो और सगे-सम्बन्धियों से दूर, अपनी जान हथेली पर रखे, इन पहाड़ियो पर पड़े रहेगे। क्या एक बार पुनः यह धरती इन्सानों के खून से अपनी प्यास बुझाएगी? क्या फिर वायुमण्डल गोलियो और तोपों की भयानक आवाजो तथा घायलो और मरने वालों की हृदय-विदारक चीखों से गूँजेगा? क्या ...?

सूर्य काफी ऊँचे चढ़ आया था। जनवरी का ठिठुरता दिन किंचित् गरमा-सा गया था और सैनिको के शरीरो से फूटती हुई कँपकँपियाँ भी समाप्त हो चली थी। आज प्रथम बार एक दूसरे के आमने-सामने खड़े सैनिक यों देख रहे थे, मानो वे कोई गैर न होकर एक ही हों। दोस्त और भाई हो। उनका खून एक हो। उनके पूर्वज एक हो। उनका धर्म तथा आस्था एक हो। उनकी सभ्यता, सस्कृति और....उनकी हर बात एक हो। आज उनकी आँखो मे क्रोध नही था, घृणा नही थी, वैर एव शत्रता का भाव नही था।

"साथी!" एकाएक भारतीय कम्पनी के कमाडर मेजर दत्ता को खड़ा देख कर पाकिस्तानी कमाड़र मेजर हमीद ने दूर से पुकारा।

मेजर दत्ता ने चौंक कर सामने देखा और मुस्करा कर बोला—"क्या है, मेजर?" यह कह कर वह कुछ गज आगे बढ़ आया।

मेजर हमीद भी अपनी जगह से आगे बढ़ा, वह डरते-डरते। उनके डर को भाँप कर मेजर दत्ता ने कहा—"बेखटके बढ़े आओ, कोई खतरा नही है।"

"शुक्रिया !" मेजर हमीद और आगे बढ आया और दोनो के बीच केवल इतना अन्तर रह गया, जितना कि परस्पर बाते करने वाले दो मनुष्यो के बीच रहना आवश्यक है। दोनो ने एक-दूसरे से हाथ मिलाया और दोनो की देखम-देख दोनो ओर के कुछ और सैनिक भी एक-दूसरे के निकट चले आए। उनमे परस्पर बातें होने लगी।

"साथी !" मेजर हमीद ने आत्मीय भाव से मेजर दत्ता की ओर देखा और फिर किंचित विह्वल स्वर से बोला—

"आज दस जनवरी है।"

"हाँ।" मेजर दत्ता ने मुस्करा कर उत्तर दिया—

"आज ताशकन्द कान्फ्रेंस का आखिरी दिन है?"

"हाँ।"

"तुम्हारा क्या ख्याल है?"

"किस बारे मे?" मेजर दत्ता ने किंचित् आश्चर्य से पूछा। परन्तु दूसरे ही क्षण वह मुस्करा दिया और बोला—"ओह, समझा! ... ताशकंद कान्फ्रेंस के बारे मे न?"

"हाँ," मेजर हमीद ने नेत्र झुका कर कहा—"मुझे तो इसकी कामयाबी पर शक है।"

मेजर दत्ता फिर मुस्कराया, पर फिर उसी क्षण गम्भीर होकर दृढता से बोला—"पर मुझे बिल्कुल शक नही है। यह कान्फ्रेन्स जरूर कामयाब होगी।"

"खुदा तुम्हारी जबान मुबारक करे!" मेजर हमीद ने आँखे उठा कर उसकी ओर देखा। फिर बुझे-से स्वर मे बोला—"हालात तो यह बता रहे है कि इस कान्फ्रेन्स की कामयाबी बड़ा दुश्वार है।"

"हालात?" मेजर दत्ता खिलखिला कर हँसा और बोला—"इन्सान हालात बनाता है या हालात इन्सान को?"

"दोनो एक दूसरे के गुलाम है," मेजर हमीद ने गम्भीरता से कहा—"कभी हालात इन्सान को बनाते है और कभी इन्सान हालात को।"

"पर हालात का वार तो चल चुका," मेजर दत्ता तनिक भावुक होकर बोला—"यह सब कुछ इन्ही हालात ही का करा-धरा तो है, जो हम इस तरह एक-दूसरे के खून के प्यासे बने एक-दूसरे के सामने खडे है! ... इन हालात की मेहरबानी से ही तो इतनी खून-खराबी और तबाही हुई है! .. इस सब के बावजूद इन्सान ने खुद को सभाल लिया और वह हालात से टक्कर लेने के लिए छाती तान कर खडा हो गया। और इन्सान की इस हिम्मत और बहादुरी का नतीजा जगबन्दी की शक्ल मे तुम्हारे सामने ही है।" यह कह कर मेजर दत्ता चुप हो गया और गौरवपूर्ण नेत्रो से मेजर हमीद की ओर देखने लगा।

मेजर हमीद जैसे कुछ सोच मे पड़ गया। फिर वह बोला—"लेकिन इससे आगे तो कुछ नही। हालात तो अब भी अपनी शिकस्त को फतह मे बदलने की कोशिश कर रहे है।"

"अब वह समय चला गया," मेजर दत्ता ने दृढ़ विश्वास के साथ कहा—"अब तो हालात को इन्सान के सामने पूरी तरह हथियार डालने ही पडेगे।"

"अगर यह सब न हुआ तो ... ?" मेजर हमीद ने भय एवं आशका से कहा।

"तो हम सब मिट जायेंगे।" मेजर दत्ता के स्वर में आवेश था। वह फिर बोला—"दुनियां के इस हिस्से से इन्सान और इन्सानियत सदा के लिए खत्म हो जायगी।"

मेजर हमीद मौन रहा। मेजर दत्ता ने भी और कुछ न कहा। दोनों एक-दूसरे की ओर देखते रहे। फिर एकाएक मेजर दत्ता ने मौन को भंग करते हुए कहा—"तुम ऐसा क्यों सोचते हो, मेजर ?"

"हालात ......और दोनों मुल्कों के लीडरों के बयानात की रोशनी में और सोचा भी क्या जा सकता है ?" मेजर हमीद खिन्न स्वर में बोला—"ताशकंद में होने वाली अब तक की बातचीत से तो ऐसा ही जाहिर होता है कि यह कान्फ्रेन्स किसी भी सूरत में कामयाब नहीं होगी।"

मेजर दत्ता मुस्कराया। फिर तत्क्षण गम्भीर होकर बोला—"लेकिन मैं अब भी नाउम्मीद नहीं हूँ। कम-से-कम अपने लीडरों पर तो पूरा यकीन है कि वे जंग नहीं चाहते। वे भारतीय अवाम के नुमाइन्दे हैं और भारतीय अवाम सदा से अमन-पसन्द है। जब अवाम जंग नहीं चाहते, तब फिर उनके नुमाइन्दे कैसे जंग चाह सकते हैं!

"तो जंग तो हमारे अवाम भी नहीं चाहते," मेजर हमीद ने गम्भीरता से कहा।

"और तुम्हारे लीडर......"

"वे......वे......" मेजर हमीद हकलाते हुए बोला—"वे क्योंकि अवाम के नुमाइन्दे नहीं हैं, इसलिए वे अवाम के जज्बात की तरजमानी नहीं कर सकते। यह जंग उन्हीं के इरादों का नतीजा थी ताकि उनकी गद्दियाँ महफूज रहें। अवाम चाहे तबाह हो जायें, उन्हें तो अपने हलवे-माँडे से काम।" कह कर वह खिन्नता से हँसा। फिर व्यंग्य से बोला—"अपने अवाम को तो हक्के-खुदइख्तियारी देते नहीं और काश्मीर के लोगों के लिए हक्के-खुदइख्तियारी की दुहाई देते हैं। मजहब के नाम पर पाकिस्तानी अवाम को उल्लू बनाते हैं और......!"

मेजर हमीद अधिक भावुक हो चला था और आवेश में कांपने-सा लगा था। अतः मेजर दत्ता ने उसे शान्त करने के लिए उसकी बात काट कर मुस्कराते हुए कहा—"लीडरों की बात छोड़ो मेजर, हमें तो अवाम की बात को लेना है। जबकि दोनों तरफ के अवाम जंग नहीं चाहते तब फिर अब जंग होगी भी नहीं।"

"अवाम तो पहले भी जंग नहीं चाहते थे, लेकिन जंग हुई और हमारे इन डिक्टेटरों ने अपना उल्लू सीधा करने के लिए मजलूम पाकिस्तानी अवाम को जंग की भट्टी में धकेल दिया।" मेजर हमीद का स्वर पूर्ववत क्रोध एवं आवेश में डूबा हुआ था।

"लेकिन अब उन्हें पाकिस्तानी अवाम के जज्बात का एहतराम करना ही पड़ेगा।" मेजर दत्ता ने उसे समझाते हुए कहा—"उन्होंने जंग भी कर के देख ली और उन्हें अपनी जंगी ताकत का भी पता चल गया। अब उनमें और जंग करने का दम नहीं रहा। अगर होता तो वे न तो जंगबन्दी को मंजूर करते और न ताशकंद कान्फ्रेंस में शामिल होना पसन्द करते।" कह कर मेजर दत्ता मुस्कराया। फिर बोला—"तुम इतमीनान रखो मेजर, यह कान्फ्रेंस जरूर कामयाब होगी। मुझे इसकी कामयाबी का पूरा यकीन है।"

"वक्त ही बताएगा कि यह तो ....।" मेजर हमीद ने निराशा-भरे स्वर में कहा—"मेरे लिए तो इस कान्फ्रेंस की कामयाबी पर यकीन करना मुश्किल है।"

"वह क्यों" मेजर दत्ता ने आश्चर्य से पूछा।

"इसलिए कि हमारा यकीन, यकीन नहीं, बल्कि गलतफहमी या खुशफहमी है।" मेजर हमीद ने एक निःश्वास छोड कर उत्तर दिया।

"क्या कह रहे हो तुम ?"

"सच्चाई।" मेजर हमीद ने नेत्र ऊपर को उठा कर दृढ़ता से कहा—"हमारा यह यकीन कि हम जग मे तुम लोगो को हरा देने और काश्मीर पर बजोरे-शमशीर कब्जा कर लेने, हमारी खुशफहमी ही साबित हुआ। हमारे पैंटन, सेबर और इसी तरह के दूसरे तमाम खूँख्वार हथियार, जिन्हे दुनियाँ के बेहतरीन हथियार कहा और समझा जाता है, कुछ भी हमारा साथ न दे सके। हमारा मजहब के नाम पर तुम्हारे मुल्क के मुसलमानो को भड़काना, सिखो और दूसरे कम गिनती के लोगो को अपने मुल्क से गद्दारी करने के लिए उकसाना, और मुख्तसर यह कि हमारी हर डिप्लोमेसी और झूठा प्रोपेगेण्डा बेकार साबित हुआ। तुम लोग हिन्दू, मुसलमान, ईसाई वगैरह के फर्क को बिल्कुल भूल गये और हमे मैदाने जग मे हिन्दुस्तानियो का सामना करना पडा, सिर्फ हिन्दुस्तानियो का, किसी खास मजहब या फिरके के लोगो का नही। हवलदार अब्दुल हमीद ने भी हमारे दॉत खट्टे किये और मेजर आशाराम त्यागी ने भी। हमने लैफ्टीनेन्ट कर्नल तारापोर के हाथो भी मार खाई और कैप्टन गुरचरनसिंह के हाथो भी। हमारे सेबरो और स्टार फाइटरो के गिराने वालो मे कीलर, पठानिया, त्रिलोचनसिंह, हुसैन वगैरह सभी हवाबाज शामिल है। तुम हिन्दुस्तानियो ने वतनपरस्ती और कौमी इत्तिहाद की वह नादर मिशाल कायम की है, जो दुनिया की तारीख मे न कही मिलती है और न मुस्तकाबिल मे कभी मिलेगी। तुम लोगो की बेमिसाल बहादुरी और कुरबानियो ने हमारे इस ख्याल को भी गलत साबित कर दिया कि तुम हिन्दुस्तानी बुजदिल हो और मैदाने जग मे हमारे सामने नहीं टिक सकते। ... और इस सबके नतीजे के तौर पर हमे शिकस्त का मुँह देखना पड़ा।" कहते-कहते मेजर हमीद का स्वर ग्लानि से भर गया और नेत्र झुक कर जमीन पर आ रहे। एक क्षण रुक कर वह धीरे-से बोला—"हमारे सभी यकीनो के परखचे उड़ गये। तुम जग जीत गए और हम ..." "लेकिन हम अमन भी जीतेंगे" मेजर दत्ता ने बात काट कर दृढता से कहा—"जिस तरह हमने जग को जीता है, उसी तरह अमन को भी जीतेंगे और जरूर जीतेंगे।" "खुदा तुम लोगो को यह ताकत भी दे।" मेजर हमीद ने नेत्र झुकाए-झुकाए कहा—"लेकिन मुझे अमन के मोर्चे पर तुम्हारी कामयाबी मशकूक नजर आती है"

"वह क्यो ?"

"इसलिए कि हमारे लीडर अमन नही चाहेंगे," मेजर हमीद ने गम्भीरता से उत्तर दिया। फिर भावुक स्वर मे बोला—"वे तो इसी तरह जगी हालात जारी रखना चाहते है ताकि इनके सहारे उनकी गद्दियाँ बनी रहे। पिछले दो-तीन साल से, जबसे कि उन्होने सुर्ख चीन की जहनी गुलामी कबूल की है और माउ, चाउ को अपना पीर माना है, तब से तो उनके होश-हवाश जाते रहे है और उन्हे जग के अलावा कोई दूसरी बात सूझती ही नही।" यह कह कर वह रुका और फिर एक क्षण बाद वह बोला—"यह अपने-आलम का दुश्मन चीन ही है, जिसकी वजह से हमारी यह दुर्गति हुई है। और हमारे ये जंगबाज लीडर अभी तक उनके नाम का कलमा पढ़ते है।"

"जज्बाती न बनो मेजर," मेजर दत्ता ने उसे शान्त करते हुए कहा– "दोनो मुल्को के लोग अमन चाहते है, इसलिए अमन जरूर कायम रहेगा।"

"और हमारे लीडर ......?"

"वे भी मान जायेंगे।"

"कैसे ?" मेजर हमीद ने आश्चर्य से पूछा। फिर गम्भीरता से वह बोला—"तो क्या तुम लोग काश्मीर हमे दे दोगे।?"

"सौ जन्म में भी नही।" मेजर दत्ता आवेश मे भर कर बोला—"तुम लोग काश्मीर को भूल जाओ।"

"हम या हमारे लीडर ?"

"दोनो ही," मेजर दत्ता ने उसी तरह आवेश से कहा—"मेरा मतलब हे कि वे सब जो कि कश्मीर को भारत का अटूट हिस्सा नही समझते।"

"तो फिर जब तक पाकिस्तान में मौजूदा लीडरशिप बरसरेइक्तदार है, तुम लोग भी अमन को भूल जाओ।" मेजर हमीद ने निःश्वास छोड़ कर कहा—"जब तक उन्हे काश्मीर नहीं मिल जाएगा वे अमने-आलम के लिए हमेशा खतरा बने रहेगे।"

मेजर दत्ता गम्भीरता से मुस्कराया। फिर वह बोला—"लेकिन जब उन्हे अमन के मैदान मे भी हथियार डालने ही पड़ेंगे।"

"बिना काश्मीर हासिल किए ?"

"और नही तो क्या ?"

"नही, वे ऐसा हरगिज नही करेगे।" मेजर हमीद ने दृढ़ता से कहा– "अगर वे ऐसा कर लेगे तो फिर उनके पास पाकिस्तानी अवाम को उल्लू बनाने और अपनी गद्दियो को बनाए रखने के लिए और कौन-सा स्टट रह जाएगा ?"

"तो तुम्हारे ख्याल मे दोनो मुल्को के बीच अमन कायम नही होगा, यानी ताशकद कान्फ्रेंस कामयाब नही होगी ?"

"हाँ !"

"तुम यह बात यकीन से कह रहे हो ?"

"हाँ, बिल्कुल।"

मेजर दत्ता मुस्कराया। फिर वह गम्भीरता से बोला—"फिर तो यह कान्फ्रेंस जरूर कामयाब होगी।...... तुम्हारे अपने कहने के मुताबिक तुम्हारा हर यकीन गलतफहमी साबित हुआ है। इसलिए तुम्हारे इस यकीन को कैसे ठीक समझा जाए ?"

मेजर हमीद पराजित एव निरुत्तर-सा हो गया।

इसके बाद कुछ देर तक दोनो अपने-अपने देश और देशवासियो के बारे मे बातें करते रहे। युद्ध तथा शान्ति के बारे मे विचार-विनिमय करते रहे। फिर दोनों ने हाथ मिलाया और अपनी-अपनी नियंत्रण-रेखा की ओर पीछे हट गये। उनका अनुकरण करते हुए दोनों ओर के सैनिक भी अपने-अपने स्थानो मे लौट आए।

ताशकन्द कान्फ्रेस के बारे मे अभी तक कोई समाचार नही आया था और जैसे-जैसे समय वीतता जा रहा था, दोनों ओर के सैनिको की धड़कने तेज होती जा रही थीं। वे युद्ध तथा शान्ति के दोराहे पर खडे अपने भविष्य के बारे मे सोच रहे थे।

फिर दिन समाप्त हो गया और जनवरी की बर्फानी भयानक रात को कालिमा वातावरण मे मंडराने लगी। दोनो ओर के सैनिक रेडियो पर झुके ताशकन्द कान्फ्रेस के परिणाम की प्रतीक्षा कर रहे थे कि एकाएक रेडियो पर घोषणा हुई कि कान्फ्रेस सफल हो गई है। दोनो देशो के नेताओ ने एक घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किए है, जिसमे यह निश्चित हुआ है कि दोनो देश के आपस के सारे झगडो को भविष्य मे युद्ध की बजाय शान्ति एव परस्पर बातचीत द्वारा निपटाया जाएगा। दोनो देशो के सशस्त्र लोग वापस उन इलाको मे पहुँच जाएँगे जहाँ वे ५ अगस्त सन् १९६५ को थे। इत्यादि · और रेडियो के इस प्रसारण के साथ ही वातावरण तालियो से गूँज उठा। दोनो ओर से एक दूसरे को बधाई दी जाने लगी।

"मुबारिक हो, साथी !" मजर हमीद ने उच्च स्वर से मेजर दत्ता को पुकारते हुए कहा—"ताशकन्द कान्फ्रेस कामयाब हो गई।"

"हाँ, दोस्त !" मेजर दत्ता ने हाथ हिला कर उत्तर दिया—"मुझसे ज्यादा तुम्हे मुबारिक हो इसकी कामयाबी। मुझे तो इसकी कामयावी की पहले ही उम्मीद थी। लेकिन तुम ··।"

"हाँ, दोस्त !" मेजर हमीद ने नेत्र झुका कर बात काटते हुए कहा—"मै सचमुच इस कान्फ्रेस की कामयाबी को नामुमकिन समझे हुए था, लेकिन अल्लाह पाक का लाख-लाख शुक्र है कि उन्हे अक्ल आ गई।" कह कर वह रुका और फिर बोला—"इस कान्फ्रेस की कामयाबी दरअसल भारतोय अवाम और उनके हरदिल-अजीज लीडरो खास कर मुहतरिम शास्त्री जी की अमनपरस्ती की कामयावी है। यह तुम्हारे यकोन की फतह है। मेरा यकीन यहाँ भी झूठा साबित हुआ। अमन के मोर्चे पर भी तुम्हारे लीडर अपने तदव्वुर और हिकमत अमली से हमे मात दे गए।" कह कर उसने अपने नेत्र ऊपर उठाए और प्रेम एव श्रद्धा से मेजर दत्ता की ओर देखने लगा।

मेजर दत्ता मुस्कराया और वोला—"ताली दोनो हाथो से बजती है, मेजर ! इस कान्फ्रेन्स की कामयाबी के जिम्मेदार हम अकेले नही, आप लोग भी इसमे वराबर के शरीक है। ·· हमारे लीडरो को भी मानना पडा कि जग से कोई गुत्थी नही सुलझ सकती और दोनो मुल्को को बेहतरी इसी मे है कि आपस मे अच्छे पडोसियो की तरह अमन और सकून से रहे।"

"हाँ साथी," मेजर हमीद ने नि श्वास छोड कर गम्भोरता से कहा—"अल्लाह पाक का शुक्र है कि उन्होने इस हकीकत को पहचान लिया कि हिन्द और पाक की इमारत की बुनियाद एक है। ·· हम और तुम कोई दो नही, वल्कि एक ही टहनी के दो फूल है। हमारी तहजीव एक है, तमद्दन एक ही है। हमारी रगो मे एक खून दौड़ रहा है। हम एक थे और एक ही रहेगे।" कहते-कहते मेजर हमीद का स्वर हर्पातिरेक से भारी हो उठा और वह चुप होकर प्रेम एव अपनत्व से भरे नेत्रो से मेजर दत्ता की ओर देखने लगा। मेजर दत्ता भी मौन रहा और फिर कुछ क्षण वाद दोनो अपने-अपने साथियो के आनन्दमय कोलाहल मे खो गए।

सूर्य डूब चुका था और रात्रि का अन्धकार गहरा होता जा रहा था। दोनों ओर के सैनिक

ाकन्द-सम्मेलन को सफलता की खुशी में आनन्द-विभोर होकर नाच और गा रहे थे। वातावरण एक विचित्र उन्माद, एक अकथनीय हर्ष एवं उल्लास के दीपक जगमगा रहे थे।

सुवह जब पौ फटी तब रात की सारी खुशी एवं आनन्द शोक में वदला हुआ था। दोनों ओर झण्डे झुके हुए थे और दोनो ओर के सैनिक सिर झुकाए आमने-सामने उदास खड़े थे। मेजर हमीद भीगे नेत्रों से मेजर दत्ता की ओर देखा और भारी आवाज मे बोला—"अमन का देवता हम लोगों छोड कर चला गया, साथी !"

"हाँ दोस्त !" मेजर दत्ता ने आँसू पौछते हुए कहा—"और सारी दुनिया के अमनपसन्द लोगों रुला गया।

"आह !" मेजर हमीद ने एक नि.श्वास छोडा। फिर वह वोला—"तुम लोग सचमुच एक ीम (महान्) कौम हो और तुम्हारे लीडर भी दुनिया मे अपना जोड़ नही रखते।...... सच, मेजर, रश्क होता है आप लोगों पर। ......अजीम कौम, अजीम लीडर !......काश ! हमारे मुल्क मे मरहूम नेहरू जी और मरहूम शास्त्री जी जैसा कोई रहनुमा होता ! ... उफ ! कितनी अजीम ीनी दी है तुम्हारे मुल्क ने अपने जीतने के लिए ! जंग को जीतने के लिए तो मुल्क ने अपने हीरे-ी कुर्बान किए ही थे, पर अमन को जीतने के लिए तो उसने अपने लाल को, अपने सारे हीरे तयों के सिरताज को कुर्बान कर दिया ! ... क्या इस अजीमतरीन कुर्बानी की मिसाल दुनिया की ीख मे कही मिल सकती है या कभी मिल सकेगी ? .. नामुमकिन है मेजर, विल्कुल नामुमकिन !.... तक दुनिया मे और अमन के पुरस्तार रहेगे, अमन के देवता शास्त्री जी का नाम वेपनाह अकीदत लिया जाता रहेगा, बिल्कुल उसी तरह जैसे मरहूम लिंकन, कैनेडी और नेहरू जी के नाम की स्तिश होती है। ... ...अल्लाह पाक हम लोगों को इतनी ताकत दे कि हम उस फरिश्ते के वताए हुए ते पर चले और अपने कौल और फेल से कोई भी ऐसा काम न करे जिससे मरहूम की रूह को कोई लीफ पहुँचे।" कहते-कहते उसका गला रुँध गया और वह सुवकने लगा।

मेजर दत्ता ने स्वय को सभाला और अवरुद्ध कंठ ने वोला—"मेजर ! ...... अमने आलम और ानियत की अपनी हिफाजत के लिए शायद शास्त्री जी जैसी अजीम हस्ती की ही जिन्दगी की जरूरत । ..... आह कितने वदकिस्मत है हम लोग।"

मेजर हमीद वोला—"वदकिस्मत तो अमन और इन्सानियत के सभी पुरस्तार हैं, जिन्होने ना हकीकी रहनुमा और मावूद खो दिया ... मुझे खौफ है कि हम लोग उस फरिश्ते की कुर्वानी कदर नही कर सकेंगे। शक है कि ताशकन्द मुआहिदा अव कामयाव भी होगा।"

"तो क्या तुम्हारे ख्याल ने हम भारतीय वेवकूफ है कि जो चीज हमने इतनी वड़ी कुर्वानी र हासिल की है उसे यों गँवा देगे ?"

"नही, मेजर नही !" मेजर हमीद ने गम्भीरता से कहा—"मुझे गलत मत समझो।........ ारा गलत मत समझो। ... .. मेरा मतलव तुम लोगो से नही था। मुझे तुम लोगों की अमन-पसंदी-, सचाई और ईमानदारी पर विल्कुल शक नही है। मुझे तो खुद अपने लोगों और लीडरों की नीयत एतवार नही।"

"तो सुनो मेजर, हम इस बात के लिए तैयार है।" मेजर दत्ता ने भावावेश से कहा—"तुम लोगो ने जग और अमन दोनो मोर्चो पर हमसे टक्कर कर देख लिया है। शास्त्री जी नही रहे, लेकिन उनके ४५ करोड़ पुजारी तो सलामत है, जो जग और अमन दोनो को जीतने की ताकत रखते है।'

मेजर हमीद बोला—"हम सब जानते है। ''' और हम क्या सारी दुनिया तुम्हारे मुल्क की अजमत और अमनपरस्ती का लोहा मानती है। तुम लोग एक ऐसी कौम हो, जिसके जज्बए-वतन-परस्ती और कुर्बानी का कोई कौम मुकाबला नही कर सकती। तुम लोग शहीदो की कौम हो, ऐसे शहीदो की कौम, जो अपनी शहादत से जग और अमन दोनो ही को जीत सकते हैं। अल्लाह पाक हमे तौफीक दे कि हम तुम्हारे मुल्क और तुम्हारी कौम की अजमत को पहचान सके।" कहते-कहते उसके नेत्र टपकने लगे और वह दोनो हाथ बाँध कर आकाश की ओर देखने लगा।

मेजर दत्ता भी मौन बना रहा। सभी सिर झुकाए मूर्तिवत् खड़े थे।

११ जनवरी का सूर्य सहमा-सहमा सा क्षितिज मे रुका खड़ा था और वायुमडण्ल में उसकी निष्प्रभ किरणे तडप रही थी। एकाएक वातावरण मे जोर की ध्वनियाँ गूँज उठी—"लालबहादुर शास्त्री जिन्दाबाद!''''' लालबहादुर शास्त्री अमर रहे !'''''' अमन का देवता जिन्दाबाद ! ''' शान्तिदूत अमर रहे ! ''''फिर मोर्चे के एक ओर के सैनिक नमाज के लिए झुक गए और दूसरी ओर के वातावरण मे रामधुन के स्वर गूँजने लगे।

रामशंकर अग्निहोत्री

यदि शास्त्री जी भारत लौट आते !

राष्ट्रधर्म का वर्ष १ : अंक १२ मास नवम्बर का अक प्रधान मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री को समर्पित किया गया था। बहुत हार्दिक इच्छा थी कि यह अङ्क उनके हाथों में स्वयं जाकर प्रेषित करूँ। इस अवसर की साध लिये मै दिल्ली गया भी था किन्तु उन्ही दिनो विदेशो से आए कुछ महत्वपूर्ण व्यक्तियों से भेट मे व्यस्त होने के कारण शास्त्री जी का समय मै प्राप्त नही कर सका और उन्होने सूचित किया था कि किसी अन्य समय पर यह भेट हो सकेगी। यही विचार मन मे किये था कि ताशकन्द से वापिस आने के बाद उनसे भेट करूँगा। किन्तु उस दिन जब हम उत्सुकता से यह सुनने के लिए आतुर थे कि प्रधान मन्त्री ताशकन्द से दिल्ली की ओर रवाना हुए हमने सुना कि वे स्वर्ग के रास्ते पर अनायास चल दिये। अनेक प्रश्न उस समय मस्तिष्क में छा गए। आज भी वे ज्यो के त्यों बने है कि हमारे प्रध न मत्री को ऐसा क्या हुआ जिसके धक्के को वे सहन नहीं कर सके।

यद्यपि मै इस प्रकार के तर्क और उनसे निकलने वाले मनगढन्त अर्थो का चाहे वे कितने हो बुद्धि-विलास के प्रदर्शनकर्ता हों मूलतः विरोधी हूँ जिनके अन्दर ऐसा कहा जाता है कि यदि ऐसा हुआ होता तो ऐसा होता। यदि कंस लड़की होती, यदि सिकन्दर भारत पर आक्रमण न करता, यदि राजपूत अपनी अकारण शत्रु को क्षमा करने की अहमन्यता प्रकट न करते आदि, आदि 'यदि' इसी श्रेणी में आते है और इन 'यदियों' पर रचे ग्रन्थ मिलते भी हैं। किन्तु प्रधान मन्त्री श्री शास्त्री के ताशकन्द से वापिस न लौटने की घटना पर मेरा 'यदि' शान्त नही रहा। आज भी जब यह 'यदि' उपस्थित हो जाता है तो मस्तिष्क के सामने अनेक चित्र उपस्थित हो जाते है। इसका कारण है उनका सरल, सौम्य और परिपूर्ण शुद्ध राष्ट्रभक्ति का वह साकार स्वरूप जो 'लालबहादुर शास्त्री' के नाम से हमारे बीच उपस्थित हुआ था। देश के सामान्य और अति साधारण नागरिक का वे प्रतिनिधित्व करते थे। उनमे भारतवर्ष की दीन-हीन, शोषित-पीड़ित किन्तु अपने अस्तित्व के लिए सघर्षरत कोटि कोटि जनता का दुःख-दर्द प्रतिबिम्बित होता था। भारतवर्ष की पराधीनता के गत युगो की भूलो की कसमसाहट उनके व्यक्तित्व मे निखर उठती थी। साथ ही भारतवर्ष के वैभवशाली अतीत के स्वाभिमान का तेज उनकी वाणी मे प्रकट होता था। मनुष्य ही नही, सृष्टि के प्रत्येक प्राणी के लिए सहानुभूति का अत्यन्त सवेदनशील भारतीय अन्त करण उनमे झंकृत होता था। हमे उनमे देश का हृदय, देश का मस्तिष्क, देश की वाणी स्पष्ट अनुभव मे आती थी। जब जब उनको देखा एक ही भाव दृढ हुआ था कि इस व्यक्ति में भारत की दुर्दमनीय, सर्वचेतन और सर्वानुभूती आत्मा विराजमान है। छोटा सा स्वरूप किन्तु उसके पीछे भारत की एकता साकार हो कोटि कोटि भुजाओं के चित्र खीचती थी। लगता था

कि देश का स्वाभिमान सुरक्षित है, परम्परा अक्षुण्ण है और विजय निश्चित है। हृदय उछल पड़ता था कि यह व्यक्ति 'माँ' के सम्मान पर सब कुछ न्यौछावर कर सकता है। प्रजातन्त्र की इतनी सही अभिव्यक्ति हमने नेहरू जी में भी नहीं देखी थी। नेहरू जी भी देश की सामान्य जनता के उत्थान के लिए बेचैन रहते थे। किन्तु उनकी स्थिति उस देवदूत जैसी थी जो आकाश में आह्वान कर रहा हो और हमें हमारी गलतियो को बता रहा हो। इसीलिए वे अधिकांश समय जनता के प्रति झुंझला पडते थे। उनके वाक्य थे—'यह क्या वाहियात बात है, यह बेमायने है, यह बेबुनियाद है' आदि, किन्तु देश के उत्थान के लिए वैसा ही तड़फता हुआ अन्त.करण पाकर भी शास्त्री जी हमारे लिए देवदूत नहीं थे। वे हमारी असमर्थताओं के बीच प्रोत्साहन और प्रेरणा थे। उनका स्थान अंगुलिनिर्देश करने वाला नहीं था, अंगुली पकड़ने वाला था। शास्त्री जी के राष्ट्रक्षितिज पर प्रधान मन्त्री के नाते उपस्थित होते ही देश-विदेश के बुद्धिविलासी उच्चस्तरीय मस्तिष्को ने भले ही शकाओ और सम्भावनाओं के बड़े-बड़े डरावने 'किन्तु', 'परन्तु', 'लेकिन' खड़े किए हो किन्तु देश का सामान्य जन निश्चिन्त था। उसे भरोसा मिला था कि यह व्यक्ति सामान्य जीवन से उठकर खडा हुआ है, इसलिए यह द्रवित हो पास आकर सदैव हमारी बाहे थामे रहेगा और हम सदैव उसकी भुजाओ मे अपनी ताकत दे सकेंगे। हर व्यक्ति को लगता था कि यह व्यक्ति है जो कभी नहीं झुकेगा। नही हटेगा। इसीलिए बार बार मन को समझाने पर भी कि अब जब शास्त्री जी नही रहे, 'यदि शास्त्री जी ताशकन्द से वापिस आते तो' का तर्क बेकार है, फिर भी लगता है इस 'यदि' को हमने नहीं समझा तो उनके अधूरे छूटे कार्य के प्रति हम अपना कर्त्तव्य निभा न सकेंगे।

इसीलिए बरबस यह प्रश्न उपस्थित हो जाता है कि यदि शास्त्री जी ताशकन्द से वापिस आते तो…! हृदय कहता है कि वे शान्ति के मोर्चे पर विश्व की भारत-विरोधी कूटनीतिक ताकतो को एक ऐसी करारी हार देते कि विश्व अचम्भित होता और भारतीय जन-मन प्रमुदित। वे अवश्य ही यह सिद्ध कर देते कि जो बात रण के मैदान मे शस्त्रो के द्वारा सिद्ध हुई है वही विश्व के विभिन्न देशो के पारस्परिक वार्ता-विमर्श से सिद्ध होती है। भारतीय हृदय की सत्य के प्रति अविचल आस्था ही उनके ताशकन्द समझौते के आड़े-टेढ़े घेरे को मान लेने में निहित थी। ताशकन्द में उन्होंने अवश्य सोचा होगा कि कुटिलता यदि नाटक के लिए ही क्यों न हो यदि शालीनता का मुखौटा ओढ़कर आई है तो उसे विश्व के चौराहे पर अपने हाथो मुखौटा उतारना होगा। सत्य नही छिपता। सत्य को प्रकट होने देने के लिए अवसर दिया जाना चाहिए। सत्य के प्रति उनकी इस भारतीय आस्था ने उनके हाथो मे हस्ताक्षर की लेखनी पकड़ा दी होगी। वे शताब्दियो के बाद युद्धक्षेत्र मे हुई एक उल्लेखनीय भारतीय विजय के प्रतीक थे। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद अनेकानेक सहे गये राष्ट्रीय अपमानो एवं अनाचारों का वे एक कड़ा और वास्तविक जवाब थे। उनके साथ सम्पूर्ण राष्ट्र उठ खड़ा हुआ था। वे यदि ताशकन्द मे ऐसा सोच रहे होंगे कि "ठीक है दुनिया फिर एक बार देख ले कि आततायी कौन है और यदि इतने पर भी आततायी अपनी करनी से बाज नहीं आता तो काश्मीर तो क्या, लवपुर ही नही सिन्धु तक पहुँच कर इस नाटक का रहस्यभेदन करेंगे।" …तो क्या आश्चर्य। इसीलिए समझौता होने के बाद घबडाए हुए एक पत्रकार के द्वारा पाकिस्तान की नियत ठीक न होने की सम्भावना प्रकट होने पर उन्होने विश्वास से कहा था—

'ठीक है तब हम देख लेंगे।'

मैने उनका अन्तिम भाषण रुडकी मे सुना था। आसपास के गाँवो से हजारों की संख्या में लोग उनकी उस सभा मे उपस्थित हुए थे। जो व्यक्तित्व उनकी वाणी मे से उस दिन वहाँ प्रकट हुआ था वह आज भी बहुत स्पष्ट रूप से मन चक्षु के सामने अंकित है। वे हर मोर्चे पर, युद्ध हो या शान्ति, अनाचार, आक्रमण आततायीपन, और अन्याय को चारो खाने चित्त करने की धुन लेकर ताशकन्द गये थे। उन्होने रुड़की मे कहा था कि "अनीति के साथ हमारा कोई समझौता नही हो सकता।" काश ! वे हमारे बीच लौट आते तो अपनी सम्पूर्ण प्रतिभा से वे इस कार्य को पूरा करते।

किन्तु वे आज नही है। फिर भी 'यदि' हमारे सामने उपस्थित है। इस 'यदि' के छोर को पकड़ कर हम उठ सकते है। वे सामान्य जन के बीच से ऊपर उठे थे। उनको सामान्य जन मे आस्था थी और सामान्य जन उनमे समाहित था। अस्तु, यह कार्य भी अब देश के सामान्य जन के ही हाथों आ पडा है। श्री लालबहादुर शास्त्री हमारे बीच नही किन्तु उनका यह 'यदि' हमारे आसपास मडरा रहा है और हमसे कर्त्तव्य-पूर्ति का आश्वासन चाहता है। उनकी इस स्मृति को ही हृदय मे सजोए उनके प्रति श्रद्धावनत अनेकानेक देशवासियो मे से मै भी एक हूँ।

श्री अवनोन्द्रकुमार विद्यालकार

दरिद्रनारायण के सच्चे प्रतिनिधि

राजनीति मे गरम मिजाज, कडवी वाणी, स्पष्टवादिता, परोपदेश एक राजनीतिज्ञ के लिए ही नही, प्रत्येक व्यक्ति के लिए दुर्गुण है। दिवगत प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री इनसे मुक्त थे, यह कहने की आवश्यकता नही है।

श्री लालबहादुर शास्त्री मूर्तिमान 'शील' थे, यह कहना अत्युक्ति न माना जायगा। उनकी विनम्रता इस सीमा तक पहुँची हुई थी कि पहली मुलाकात मे उनको परखा नही जा सकता था। वेल्स हैमण ने तो उनको 'चपरासी' ही समझ लिया था, बहुत समझा तो क्लार्क या कारकुन। पाँच फीट के शास्त्री जी कमजोर प्रतीत होते थे। वह आलू उबाल कर खाने वाले मास्टर ही सदा बने रहे।

श्री शास्त्री जी के पिता अध्यापक थे। उनके शिक्षक डा० भगवानदास, आचार्य नरेन्द्रदेव, डा० सम्पूर्णानन्द, श्री श्रीप्रकाश आदि रहे, अत शास्त्री जी का पिण्ड 'अध्यापक' का था। अध्यापक स्वभाव से नम्र होता है। शिष्ट होता है। शिष्टाचार उसके स्वभाव का एक अग है। सद्भाव और सद्व्यवहार उसकी वृत्ति है।

गृहमन्त्री श्री शास्त्री जी से भेट करने वाले उस समय चकित होते, जब वे अपने कमरे मे आए व्यक्ति का उठ कर स्वागत करते, और बात समाप्त होने पर दरवाजे तक छोड़ने आते। उस व्यक्ति से वे हाथ मिलाते, हाथ जोड कर नमस्कार करते, थैक्स शुक्रिया के जवाब मे "नो मेशन प्लीज' कहते। एक राजनीतिज्ञ से इस प्रकार के व्यवहार की, फिर सत्ताधारी से, यह अपेक्षा नही की जाती।

स्त्री-दाक्षिण्य मे शास्त्री जी समाजसुधारको से भी आगे जाने वाले थे। उत्तर प्रदेश सनातनी प्रवृत्ति का गढ माना जाता है। परन्तु शास्त्री जी ने बसो मे महिलाएँ कडक्टर नियुक्त की। सर्वत्र हल्ला मचा। शास्त्री जी जब प्रधान मन्त्री हुए, तब महिलाओ का एक प्रतिनिधिमण्डल उनसे मिलने गया। उसने उनसे प्रार्थना की कि श्रीमती ललिता देवी को सामाजिक कार्यो के लिए उन्हे सौप दे। प्रधान मन्त्री हँस पड़े। वे बोले—"मेरी पत्नी का बहुत सा समय रसोईघर मे बीतता है, शेष देवघर मे जाता है। यदि वे आप लोगो के समान घर से बाहर जाने लगी तो मेरा और मेरे कुटुम्ब का क्या हाल होगा ?" लखनऊ मे शास्त्री जी की एक प्राइवेट सेक्रेटरी महिला थी।

दरिद्रनारायण के प्रतिनिधि

१५ अगस्त १९६५ को लालकिले से भाषण करते हुए शास्त्री जी ने कहा था . 'हम रहे या न रहे, पर देश बना रहे।' यह उन्होने स्वय करके दिखा दिया। ताशकन्द का घोषित शान्ति सन्धि-पत्र और

घोषणा का भविष्य-फल भले ही कुछ हो, परन्तु उसने स्व० प्रधान मन्त्री की तत्वनिष्ठा, शान्ति-प्रेम, विश्व-बन्धुत्व और विश्व-प्रेम का जीता-जागता प्रमाण दे दिया। भारत खण्ड के ६० करोड़ लोग सुख-शान्ति से रहे, इसके लिए उन्होने अपना बलिदान कर दिया, अपने प्राणो का उत्सर्ग कर दिया। यह बलिदान उच्च भावना और मानवता के प्रति श्रद्धा के कारण दिया गया। दस लाख लोगो ने दरिद्रनारायण के नेता को अश्रु पूरित नयनो के साथ विदाई दी। देवदुर्लभ दृश्य दिखाई दिया। विशालतम देश सोवियत रूस के प्रधान मन्त्री श्री कोसीजिन और पाक अधिनायक मार्शल अयूब खाँ ने अर्थी को कंधा दिया। अन्त्येष्टि-संस्कार मे सम्मिलित होने के लिए नई दिल्ली मे विश्व के अनेक शीर्षस्थ राजनीतिज्ञ और नेता पधारे। विश्व-शान्ति की स्थापना मे शास्त्री जी ने प्राण उत्सर्ग किये, इसका यह ज्वलन्त प्रमाण है। दरिद्रनारायण के प्रतिनिधि का सारा जीवन समर्पित जीवन था।

'क्लब' मे बैठ कर पाँवो मे मक्खन मलते-मलते भारत के लाखों निरीह गरीबो की चर्चा करने वाले राजनीतिज्ञ वे नही थे। जन्म से गरीबी मे पले। स्कूल जाने के लिए कई मील पैदल चल कर जाना पड़ता था। गरीब होते हुए भी स्कूल-कालेज के बहिष्कार मे सम्मिलित हुए, कितना साहस था और दृढ़ निश्चय था। भविष्य की आशाओ को आग लगा दो। काशी विद्यापीठ से शास्त्री हुए। लोकसेवकमण्डल के सदस्य हुए। सेवावृत्ति मिली पहले ६० रु० और फिर वह १०० रु० तक पहुँची।

हाकी खेलने का शौक! हाकी और गेंद के लिए पैसे कहाँ? अश्वत्थामा को दूध की जगह चावल का माड पिला कर सन्तोष दिया गया था। शास्त्री जी ने पेड़ की शाख काटी और चिथड़े तथा लीद से गेंद बनाई। हाकी खेलने का शौक पूरा किया।

इस गरीबी ने शास्त्री जी को विनम्र बनाया। पर, अजीजी और 'भिक्षां देहि' वृत्ति का नहीं। स्वाभिमानी सदा रहे, पर किसी पर कभी गुस्सा नही किया। 'बाबू जी' ने कभी किसी बच्चे को थप्पड़ भी नही मारा। एक बार बहुत गुस्सा आने पर उन्होने छड़ी पकड़ी थी, लेकिन उस समय भी उन्होने लड़के से कहा—'देख, मुझे क्रोध आया हुआ है, झट-से स्नानगृह मे छिप जा!' ऐसा था उनका कोप। क्रोधी मनुष्य अन्धा होता है, यह उनको उनकी माता ने शिक्षा दी थी। माता श्रीमती रामदुलारी ने उनको बताया था—'आँधी आने पर बड़े-बड़े वृक्ष गिर पड़ते है, परन्तु दूब बची रहती है।'

दफ्तर में बड़ा बाबू

इस वीर माता ने कहा था—'मै लालबहादुर से यही चाहती हूँ कि 'चाहे जान चली जाए, मगर देश बना रहे।' आज्ञाकारी विनम्र पुत्र ने माता की इस आज्ञा का अक्षरशः पालन किया।

शास्त्री जी जब गृहमन्त्री हुए और जब यह संवाद उनकी मा को दिया गया, तब मातुश्री बोली—"हाँ जी, लोग बोलते है कि वह दिल्ली के दफ्तर मे बड़ा बाबू हो गया है जी!"

बच्चो को चोरी से बाग मे घुस कर फल तोड़ कर खाने का शौक होता है। शास्त्री जी भी बचपन मे अपने दोस्तो के साथ एक बाग पर धावा बोलने से नही चूके। माली आया, उसकी आवाज सुन कर सब लड़के भाग गये। मास्टर का लड़का ही उसके हाथ में आया। उसने बच्चे को उस समय तक पीटा, जब तक उसके हाथ थक नही गये। बालक ने माली के आगे हाथ जोड़ दिये और कहा—"मुझे क्यों मारते हो? मै गरीब हूँ, मेरे पिता नही है, मुझे आप क्यो नही छोड़ देते है?" पर वह माली निर्दयी था। यह सुन कर उसने और कई छड़ियाँ बालक पर फटकार दी और साथ ही यह उपदेश

दिया—"तेरे पिता नही है, इसलिए तुझे और भी अधिक अच्छी तरह से रहना चाहिए" माली के ये शब्द छोटे बालक के अन्तःकरण मे समा गये। माली की सीख को इस बालक ने कभी भुलाया नहीं।

यह सुन कर कौन विश्वास करेगा कि जेल मे वह बेडमिन्टन खेलते थे। वह एंग्लोइण्डियन अधिकारियो को 'शॉट्स' मार कर गेद देते थे। वालीबाल, हॉकी और क्रिकेट का भी उन्हे शौक था। पॉच फीट की आकृति का किशोर या तरुण लालबहादुर जब क्रीडाक्षेत्र मे उतरता होगा, तब दर्शक क्या सोचते होगे। लोग हँसते और यही कहते मेढको को भी जुकाम हो गया है।

पुलिस-मन्त्री

उत्तर प्रदेश सरकार मे शास्त्री जी मन्त्री थे। दौरा करते हुए एक स्टेशन पर उतरे और तीसरे दर्जे के 'गेट' से निकलने लगे। पुलिसमैन ने उनको रोक दिया। उनको पहचानने वाले ने पुलिसमैन के कान मे कहा – 'यही पुलिस-मन्त्री है।" वह खिलखिलाकर हँस पडा और बोला—"बेवकूफ! यह छोटा आदमी और पुलिस-मन्त्री।" 'जाव-जाव' कह कर उसने जाने दिया। बेचारे लालबहादुर क्या कहते। सत्ता होते हुए भी उस पुलिस वाले को उन्होने कुछ कहा नही। उसकी नौकरी बरकरार रही।

क्रिकेट के मैदान मे एक बार छात्रो और पुलिस के बीच झगडा हो गया, मामला बढा तो पुलिस-मन्त्री क्रीडागण मे पहुँचे। छात्रो को बुलाया, पूछा, आप लोग क्या चाहते है? विद्यार्थियो ने कहा—"यहाँ लाल पगड़ी नही आनी चाहिए।" पुलिस-मन्त्री ने तुरन्त कहा—"मन्जूर!" छात्र सतुष्ट हो गये। पर विजय से उनका माथा फिर गया था। खेल के मैदान मे इन्तजाम करने के लिए पुलिस न हो, यह भी मुमकिन नही था। शास्त्री जी ने पुलिस से कहा – "खाकी पगडी बाँध लो।" रात ही रात मे पुलिस की खाकी पगड़ी हो गई। पुलिस मैदान मे हाजिर। छात्रो ने जब नये ड्रैस मे पुलिस को देखा, तब उन्होने समझा, वे ठगे गये है। पुलिस-मन्त्री शास्त्री जी ने उनसे कहा—"आप लोगो की माँग थी, ग्राउन्ड मे लाल पगडी नही आनी चाहिए। आपकी माँग सोलह आने मैने पूरी की, बोलो की या नही?" छात्र बेचारे इस पर क्या बोलते।

शास्त्री जी अनुशासन-पालक थे। इसलिए श्री नेहरू ने उनको अपना वारिस बनाया। बिनविभाग के जब वे मन्त्री बनाये गये तब श्री नेहरू से उन्होने पूछा– "क्या काम मै करूँ?" उत्तर मिला—"वह सब काम जो मैं करता हूँ।" यह विश्वास नया नही था। प्रयाग म्यूनिसीपैलिटी मे जब श्री नेहरू, श्रीमती पण्डित, श्री सीताराम, रणजीत पण्डित और श्री लालबहादुर थे उसी समय से था। श्री नेहरू श्री लालबहादुर को जिला काग्रेस कमेटी मे लाये, जिला काग्रेस कमेटी का क्रम से मन्त्री और अध्यक्ष बनाया। जमीदारी उन्मूलन और कृषि सुधार समिति का गठन श्री नेहरू ने किया। इसका सयोजक श्री लालबहादुर को बनाया। सीढी-सीढी वे उनको उठाते गए।

शास्त्री जी को जो काम दिया जाय, वह सहर्ष और सारी शक्ति से करने को उद्यत देख कर पन्तजी बहुत प्रभावित हुए। काग्रेसी मन्त्रिमण्डल बनने पर उनकी दृष्टि श्री लालबहादुर पर पडी। फलत. वह पार्लमिट्री सेक्रेटरी बनाए गए। यहाँ से आगे चढते-चढते वह पुलिस-मन्त्री बने। पन्त जी के सान्निध्य मे रह कर उन्होने व्यावहारिक राजनीति की शिक्षा पाई। पन्त जी की प्रसिद्ध सूक्ति "ठण्डा करके खाओ," का दिवगत प्रधान मन्त्री ने अक्षरश पालन किया।

नासिक कांग्रेस के राजर्षि ठण्डन अध्यक्ष थे। श्री नेहरू इस चुनाव के विरोधी थे। श्री शास्त्री भारी धर्म-संकट में थे। श्री नेहरू उनको बड़ा स्नेह करते थे। राजर्षि टण्डन लोक-सेवक मण्डल के अध्यक्ष थे, उनको वे अपना गुरु मानते थे। दोनों उनको अपनी-अपनी ओर लेना चाहते थे। दोनों का विश्वास उनको प्राप्त था। प्रामाणिक रहते हुए, उन्होंने दोनों मे मेल कराने का असफल प्रयास किया, किन्तु एक की बात दूसरे से कभी नहीं कही। यदि कही कह देते तो कितना भारी अनर्थ हो जाता। विवाद क्या रूप धारण करता? टण्डन जी नेहरू जी से रुष्ट थे। इस झगड़े का अन्त हुआ, टण्डन जी के त्यागपत्र के साथ। इस समय किसी ने टण्डन जी से शिकायत की—"बाबू जी, लालबहादुर ने आपके विरुद्ध बोट दिया।" टण्डन जी एक क्षण के लिए स्तब्ध रह गए। पर शीघ्र ही सम्भल गए। बड़ी उदारता से उन्होंने कहा—"उसको यह मैने ही सलाह दी थी।"

चुनावों का मोर्चा

नेहरू जो कांग्रेस के अध्यक्ष तो हुए, काग्रेस-सगठन का सारा भार उन्होंने श्री लालबहादुर शास्त्री पर डाल दिया। १९५१ मे वे नई दिल्ली आए। इसके बाद फिर लौट कर लखनऊ नही गए। अनेक बार यू० पी० में राजनीतिक संकट आए, लेकिन नेहरू जी ने उनको कभी लखनऊ जाने को नही कहा, १९५२ का चुनाव काग्रेस ने लड़ा तो श्री लालबहादुर के सेनापतित्व मे। ऐसा ही १९५७ और १९६२ मे भी हुआ। सम्पूर्ण काग्रेस सगठन पर श्री शास्त्री छाए रहे।

१९५२ मे नेहरू मन्त्रिमण्डल बनने पर उनको रेलवे मन्त्री बनाया गया। मन्त्रिमण्डल मे उनका स्थान पांचवा निर्धारित किया गया। १२ लाख रेलवे कर्मचारी उनके अधीन थे। दरिद्रनारायण के इस नेता ने पहला दर्जा उड़ा दिया। दूसरा दर्जा ही पहला हो गया। डाइनिग कार मे बैठ कर हरेक यात्री को थाली मॅगा कर खाने को सुविधा दी। 'डीलक्स' दिल्ली से बम्बई, कलकत्ता, मद्रास चलने लगी। यह कल्पना भी श्री शास्त्री की ही रही।

श्रेष्ठ और उच्च पार्लमेंट्री परम्परा डाली। महबूबनगर की रेलवे दुर्घटना मे ११२ लोग मरे। इस दुर्घटना के लिए नैतिक उत्तरदायित्व मान कर शास्त्री जी ने त्यागपत्र दिया। श्री नेहरू ने त्यागपत्र वापस कर दिया। दुर्भाग्य से नवम्बर १९५६ मे अरियालूर मे पुन. दूसरी भारी रेलवे दुर्घटना हो गई। इसमे ११४ व्यक्ति मर गए। शास्त्री जी ने त्यागपत्र दे दिया। वापस लेने को तैयार नही हुए। १९५७ का चुनाव निकट था। श्री नेहरू ने भी फिर आग्रह नही किया।

डाक-तार मन्त्री हुए। फिर उद्योग-व्यवसाय मन्त्री बने। पन्त जी के निधन पर गृहमन्त्री बने। १९५७ मे उन पर हृदय-रोग का पहला झटका आया। इधर काम बढता गया। पजाव के सिखो की समस्या, असम में भाषा-दगा, हिन्दी-अंग्रेजी प्रश्न, मद्रास में अग्रेजी प्रेमियो का दंगा, द्रविड़-मुनेत्र कषगम का विद्रोह—इन सब समस्याओ का शास्त्री जी ने शान्ति से समाधान किया।

पाकिस्तानी हमले का जवाब देते हुए शास्त्री जी ने कहा—"तलवार का जवाव तलवार से दिया जाएगा।" परन्तु शान्ति-प्रयासों का उन्होने त्याग नही किया। लड़ाई वन्द करने की वात पाकिस्तान से पहले उन्होने स्वीकार की। शान्ति-प्रियता का परिचय दिया। ताशकन्द-सम्मेलन उनके शाति-प्रेम का अकाट्य प्रमाण है। शास्त्र-और शस्त्र, युद्ध और शान्ति, दुनिया और विराग का यह महान् संयोजक समन्वयकारी भारत-रत्न क्रूर काल ने छीन लिया। भारत की आशाओ पर तुषारपात हो गया।

माया

ललिता जी के सुख-सुहाग शास्त्री जी

माथे पर लाल वड़ी सी विन्दी, माग मे सिन्दूर की मोटी-सी रेखा, भरे हाथ कॉच को चुड़िया और चौडे किनारे की साडी सादी—एक हिन्दु नारी के लिए यही चार सौभाग्य चिह्न होते है—और इन्हे ही ललिता जी अपना अलकार वना अपने 'सुख-सुहाग' शास्त्रोजी की मगलकामना मे जीवन भर लगो रही, जैसे वही उनके जीवन की सार्थकता थो। और उनकी यह पूजा-प्रार्थना : उनकी यह मूक साधना हमेशा शास्त्रोजी के गिर्द कवच की तरह लिपटी रही, उनकी रक्षा करती रही, उन्हे शक्ति देती रही और कठिन मार्ग पर चलने की दृढता देती रही। ऊपर से अत्यन्त विनीत, कोमल, 'ढुल-मुल' से लगने वाले शास्त्री जी के वडे दृढ और स्पष्ट निर्णय लोगो को आश्चर्य मे डाल देते थे। लोग उनका तरह-तरह से मजाक उडाते थे, पर इन खिल्लियो ने कभी उनके अहम् को कु ठित नही किया, उनके आत्म-विश्वास को डिगाया नही, वे स्वय भी उन पर हँसते थे, लेकिन कहाँ था उनकी इस दृढता और क्षमता का स्रोत ? वह था उनका छोटा-सा परिवार और भक्ति की सीमा तक उन्हे प्रेम करने वाली उनकी पत्नी। वे जानते थे उस स्थान पर सबसे बडी हस्ती भो कोई मानी नही रखती और वे ही वहाँ सर्वोत्कृष्ट है, पूज्य है, श्रद्धेय है। अपने घर मे वे सुखी थे, सतुष्ट थे, आश्वस्त थे, इसीलिए संसार पर हँस सकते थे। इसीलिए वडी से वडी परेशानी मे भी अडिग, शात और स्वस्थ रह पाते थे। जीवन के बडे से वड़े खतरो मे भो निर्णय लेते समय उन्हे निरन्तर विश्वास था कि ललिता—उनकी जीवन-सहचरी, उनकी 'शक्ति' उनके साथ और विश्वास के साथ स्नेह से मुस्कराती हुई यही कहेगी, "यही करना ठीक था—तभी तो आपने किया है। अरे, सुख-दुख तो जिन्दगी के साथ लगे रहते है उनकी क्या चिन्ता।" इस विश्वास, इस आश्वासन ने कभी उनके आगे वढ़ते पाँव वाँधे नही, उनमे दृढता, विश्वास और उत्साह ही भरा।

वहुत पहले जव ललिता जो शायद १७-१८ वर्ष की थी, कि एक दिन उनकी भाभी ने एक लडके का फोटो दिखलाते हुए उनसे पूछा था "ववुनी, देखो तो यह लड़का तुम्हे पसन्द है ?" ललिता जो ने कनखियो से फोटो देखते हुए लजा कर कहा था "धत् ! हम क्या जानें।" इस पर भाभी ने गम्भीर होकर कहा था "नही ववुनी, वहुत सोच-विचार कर कहो। वात यह है, यह लड़का तो वहुत अच्छा है, पर इसका एक पैर हमेशा जेल मे रहता है। इन लोगो पर कभी डडे वरसते है, कभो गोली वरसती है तो कभी घोड़े दौडते है–पता नही कव क्या हो जाय—ऐसे में वहुत सोच-समझकर ही काम करना चाहिए। तभो तो तुम्हारे भैया ने हमे तुमसे पूछने को कहा है," ललिता जी ने पैर के अगूठे से जमीन कुरेदते हुए दृढता से जवाव दिया था "भौजी, तुम लोग मेरी जनम के साथी हो, करम के साथी नही। अगर मेरे

भाग्य में सुख होगा तो मुझे हर हालत में सुख मिलेगा और अगर दुःख होगा तो तुम लोग मुझे सुख दिला नहीं सकते। बड़े जो ठीक समझें, करे।" किशोरी ललिता को तब भी अपने भगवान् पर पूर्ण विश्वास था। भाभी ने जाते-जाते एक शरारती मुस्कान फेंक अपनी ननद को चिढ़ाते हुए कहा था "हाँ, औरत चाहे तो आदमी से क्या नही करा सकती।"

और ललिता जी की शादी लालबहादुर जी के साथ हो गयी। पति को देखने-समझने के बाद ललिता जी ने यही तय किया कि पति का पथ बदलवायेगी नहीं—उनकी अनुगामिनी बनेगी। पति को उनकी मदद की जरूरत थी।

और उस दिन के बाद से ललिता जी शास्त्री जी के मन और विचारों की छाया बन गई। उन्होने सारे कष्ट अपने ऊपर चुपचाप ले लिये, पर शास्त्री जी के पथ मे बाधा नही आने दी। यहाँ तक कि परिवार अभाव मे जर्जर होकर टूटने लगा, उनके दो नन्हे बच्चे उसकी बलि चढ गये, पर ललिता जी अडिग रही। उनके सम्बन्धी उनको सुझाते "इस बार जब लालबहादुर जी से जेल मे मिलने जाओ तो उनसे सब कुछ बतलाना और कहना कि कोई इन्तजाम करें।" पर जब जेल मे मिलने जाने पर शास्त्री जी उनसे परिवार की समस्याओं के बारे मे पूछते तो वह सहज हास के साथ कहती—"बाहर तो सब बिल्कुल ठीक चल रहा है, वहाँ की चिन्ता करने की जरूरत नहीं, बस आप अपना खयाल रखिये, अपनी तन्दुरुस्ती का ध्यान रखिये।" लौटने पर जब सम्बन्धी उन्हें भला-बुरा कहते तो वे कहती—"क्या कहती मैं उनसे ? कोई वह नौकरी करने तो गये नहीं है, जो मै कहती कि आप इतनी तनख्वाह पाते है और हमें इतना ही क्यों देते है, हमारा काम नहीं चलता। वे तो बेचारे खुद वहाँ दुश्मन के हाथ में लाचार बन्द पड़े हैं, मै जाकर उन्हें यह सब कह कर और परेशान करूँ ?" और उन्होंने जीवन भर कभी अपने अभावों की छाया लालबहादुर जी की राजनीति पर नहीं पड़ने दी।

एक बार वे कुछ बीमार चल रही थी, बच्चे छोटे थे इसलिए यह तय हुआ कि रात को वे एक ग्लास दूध पी लिया करे। पर जब रात को हारे-थके लालबहादुर जी सोने जा रहे थे तो ललिता जी उनसे एक ग्लास दूध पीने को जिद करने लगी। लालबहादुर जी ने पत्नी से कहा "दूध पीने की जरूरत तो तुम्हे है—पिलाने लगी मुझको, भाई कमाल है।" इस पर ललिता जी बोली "आप भी खूब हैं, सोच रहे है मै अपने हिस्से का दूध आपको पिला रही हूँ—मैने तो पहले ही एक ग्लास दूध पी लिया, यह तो ज्यादा था।" और पति ने हमेशा सच बोलने वाली पत्नी पर विश्वास कर दूध पी लिया। यही क्रम काफी दिन तक चलता रहा, तब तक दिन यह रहस्य खुला कि बच्चों के खेलने का एक टीन का नन्हा-सा ग्लास था जिसमे मुश्किल से दो घूँट दूध आता था और कसम खाने के लिए वे वही एक ग्लास दूध रोज पी लेती थी।

सकटों और अभावों की आँधियो के बीच भी वे सन्तोष की ओट किये अपने परिवार को सुखी रखने का प्रयास करती रही। दिन भर भजन गुनगुनाती घर के कामों में लगी रहती और कभी कोई खास चटनी बना कर कभी आलू भून कर या तल कर पति के लिए रुचिकर खाना बनाती रही और पति के भोजन करके चले जाने पर उसी थाली मे बड़े प्रेम से स्वय खाती रही। जिस दिन से व्याह कर आयी, यह उनका प्रिय नियम था। बहुत बाद में जब शास्त्री जी को इस बात का पता चला तो उन्होने इसे बहुत—'दकियानूसी और गलत' बात कह कर इसका विरोध किया। सयोग की बात है कि इस बातचीत के बाद ही शास्त्री जी को काम से कही बाहर चले जाना पडा। चार या छ दिन बाद जब वे लौट कर

आये तो पता चला कि उसी दिन से ललिता जी भोजन नही कर रही थी, बस एक समय कुछ फलाहार कर लेती या भगवान् का प्रसाद खाकर ही पानी पी लेती। शास्त्री जी के कारण पूछने पर उदास ललिता जी ने छलछलाई आँखो से देखते हुए कहा—"जो काम आप नही चाहते वह तो मै नहीं करूँगी, लेकिन मेरे भी कुछ संकल्प हैं जिसमे फेर-बदल नही हो सकता। अन्न तो मै आपकी जूठी थाली मे ही खाऊँगी।" मजबूर होकर शास्त्री जी को उनकी बात माननी पड़ी और ललिता जी उसी क्षण प्रसन्न हो बच्चों की तरह सरलता से हँस पड़ी।

अभाव के दिन बीते। शास्त्री जी मत्री बने—फिर प्रधान मन्त्री, परन्तु इन लोगो के निजी जीवन मे कोई विशेष अन्तर नही आया। जब भी, परिवार के सब सदस्य सो जाते, नौकर भी सोने चले जाते पर ललिता जी खाना लिये शास्त्री जी के आसरे बैठी रहती। रात को एक-डेढ-दो बजे जब भी शास्त्री जी दफ्तर से काम खत्म कर अन्दर घर में आते तो वे खाना गर्म कर बडे प्रेम से बैठ कर उन्हे खिलाती, इधर-उधर की बातें करती और फिर स्वयं खाती। जब भी उनका अधिकांश समय घर परिवार की देखभाल, काम-काज और शास्त्री जी का मनपसन्द खाना बनाने मे ही बीतता था। एक दिन मैंने कहा भी "माताजी अब तो आप अपना यह चौके-चूल्हे का मोह त्याग दीजिए और बहुओ को सौप दीजिए अपनी यह राजगद्दी" तो हँसती हुई बोली "हाँ बेटी! तुम लोग आजकल की पढी लड़कियो से चलेगा उस ढग से खच जैसे मैं चला लेती हूँ? तुम तो यही सोचती होगी कि शास्त्री जी मुझे ढेर सारा रुपया देते होगे खर्च करने को।" फिर हँसती हुई बोली "प्रधान मन्त्री हो गये होगे अपने लिए, मेरे लिए तो अभी भी वही तगी बनी हुई है। तनख्वाह मिलती है तो हिसाब बतला देते हैं 'फला साथी के घर तगी थी, फला साथी को जरूरत थी, फला विद्यार्थी संकट मे था—इतना-इतना रुपया भेजना पड़ा,—बस यही बचा है, अब इसी में सम्भालो।' तो बिटिया हमको तो हर महीने इसी मे चलाना पड़ता है।" और वे खिलखिला कर हँस पड़ी। उनकी बातो मे न कही असन्तोष की गन्ध थी और न कड़वाहट की छाया, बस एक मीठा सा उलाहना था जिसमें उनकी अपनी भी स्वीकृति थी।

मैंने इसी बात को आगे बढाते हुए कहा, "नही माता जी, ऐसे टालने से नही चलेगा। अब आप घर के ये छोटे-मोटे धन्धे छोड कर शास्त्री जी का हाथ बँटाइये बडे-बडे कामो मे।" इस पर गम्भीर हो गयी और बोली, "वही तो मै कर रही हूँ। मेरी कोशिश है कि शास्त्री जी जो कुछ लोगो से करने को कहते है, उसी को घर मे बरतूँ, जिससे कोई यह न कह सके कि "शास्त्रीजी हवा मे बात करते है। जो कहते है, वह उनके अपने ही घर मे तो चलता नही है, मेरे घर मे एक दाना अन्न का बरबाद नही जाता, एक धेले की चीज नष्ट नही होती, हम लोग सीधे-सादे ढग से रहते है। मेरा तो यह पक्का विश्वास है कि जो स्त्रियाँ अपना घर छोड़ कर बाहर की भलाई करने चलती है, वह बाहर तो कुछ विशेष कर नहीं पाती, हाँ अपना घर भी चौपट कर लेती हैं। अगर हर स्त्री अपना-अपना घर, परिवार अच्छा बनाये तो सारे ससार मे कही कोई बुराई या दु ख रह ही न जाय।"

एक दिन बातो-बातो मे उन्होने किसी बात पर कहा, "हम लोगो को डर लगा कि शास्त्री जी बिगडे गे।" मुझे यह सुन कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि बाहर इतने विनीत, सदा खुश नजर आने वाले शास्त्री जी घर के अन्दर लोगो से नाराज भी हो सकते हैं, सख्त सुस्त भी कह सकते है? मैंने कुतूहलवश पूछा, "नाराज होते हैं, तो शास्त्री जी क्या करते हैं?" उन्होने बड़ी सरलता से कहा कि लोग उनके

नाराज होने से बहुत डरते रहते है। जिससे नाराज हो जाते हैं, उससे बस 'आप' कह कर बात करने लग जाते है। मुझे सुन कर इतना अच्छा लगा कि कितना सरल, सवेदनशील और आपस मे गुँथा हुआ परिवार है यह जहाँ 'आप' का काँटा भी चुभ जाता है।

उम्र में उनकी बेटियों से छोटी होने पर भी मंने शेतानी मे पूछ ही लिया, "माताजी, कभी आपसे भी शास्त्री जी ने 'आप' कहा ?" तो लजाती हुई बोली, "अरे हमसे तो जिन्दगी भर उन्होने 'आप' कहा है बिटिया।" और वे एक अल्हड़ बच्ची की तरह खिलखिला कर हँस पड़ीं।

घर के काम के अलावा ललिता जी का अधिकाश समय पूजा-पाठ मे हो बीतता है। एक दिन मंने पूछा, "माता जी आप इतनी पूजा करती है, भगवान् से क्या माँगती है?" सुन कर वे चुप रही, शायद यह सोच रही थो कि यह इतनी बड़ी बात इन बच्चो को बतलाऊँ या नही। फिर गम्भीरता से बोली, "बिटिया जीवन भर भगवान् की मुझ पर बड़ी कृपा रही है। अब तो भगवान् से बस दो बातें ही माँगती हूँ – एक तो यह कि शास्त्री जी ने जो बड़ा काम उठाया है, जो जिम्मेदारी उन पर है, उसको वे अच्छी तरह निभाये, भगवान् उनके मुँह की लाली बनाये रख, उनके नाम को बट्टा न लगे कि फलाने ने अपनी जिम्मेदारी को पूरी ईमानदारी से नही निभाया। दूसरो यह कि मै सुहागिन ही इस ससार से विदा लूँ।" और उनकी आँखे छलछला आयी। उन्होने आँखे बन्द कर अपने दोनो हाथ जोड़ अपने आराध्य को प्रणाम किया।

निःस्वार्थ जन-सेवा की इस वृत्ति ने जीवन को एक यज्ञ समझा, जिसको पूर्णाहुति उन्होने ताशकन्द मे आत्मोत्सर्ग कर दी।

कीर्ति के जिस शिखर पर जाकर जिस "ड्रमेटिक" ढग से शास्त्री जी अपने राजनीतिक जीवन से विदा हुए है, शायद कोई निपुण कलाकार भी इसी 'क्लाइमैक्स' पर लाकर अपनी कलाकृति का पटाक्षेप करता। इस कर्मरत साधक का इससे अधिक सुन्दर अन्त हो नही सकता था। यहाँ आकर भी शायद ललिता जी ने अपनो साधना का फल पति को दे दिया और सुहागिन जाने की अपनी साध को न्यौछावर कर दिया।

आज, वेदी से गिर भू-लुण्ठित पुष्प की तरह ललिता जी को देख कर कलेजा फटने लगता है। विधवा वेष, बिखरे बाल, सदा चमकती बड़ी लाल बिन्दी की जगह चन्दन का टीका—उनका यह वेष देखा नही जाता। सदा हँसती हुई उनकी आँखें, सूजी पलको से ढको, सूनो-सूनो-सी नीले आसमान मे कुछ ढूँढती रहती है—जैसे भक्ति से उसका आराध्य छिन गया हो और अब वह जीने का सम्बल खोज रही हो।

दीवान चमनलाल

एक दुःखद घटना

ऐतिहासिक समझौते पर हस्ताक्षर करने के बाद प्रधान मत्री लालबहादुर शास्त्री ने सोवियत प्रधान मत्री श्री कोसोजिन द्वारा दिये गये भोज मे, जिसमे पाकिस्तान के राष्ट्रपति अय्यूब खाँ भी थे, भाग लिया और इसके बाद वे सोने चले गये। कुछ समय बाद उनके साथ गये विलिंगडन अस्पताल के डाक्टर चुग दर्द के तीखे आर्तनाद से जाग गये। ज्ञात हुआ कि शास्त्री जी के दिल मे तीखा दर्द है। डाक्टर चुग ने स्थानीय सोवियत डाक्टरों को भी बुला लिया और शास्त्री जी के हृदय को पुन: चालू करने का प्रयत्न किया, पर कुछ नही किया जा सका और भारत का एक महान् सपूत अपने देश की जनता की आँखे आँसुओ से भीगी छोड़ गया।

कितना समय बीता है जब उसके देश की जनता जवाहरलाल नेहरू की आकस्मिक मृत्यु के महान् शोक से अपने को उबार पायी थी। और अब पुन यह प्रहार हुआ है। लालबहादुर शास्त्री ने नेहरू की नीतियो का पूर्ण विवेक व समझ के साथ जिस निष्ठापूर्वक अनुसरण किया है, वह अतीव स्तुत्य बात रही है। यही नही, नेहरू जी महान् प्रतिभा व क्षमता के नाते अपने पीछे भारत के राजनीतिक दृश्य मे एक शून्यता छोड़ गये थे तो शास्त्री जी भी अपनी कार्यशीलता और कुशलता के नाते एक अभाव का आभास करा गये है।

लोग कहा करते थे नेहरू के बाद क्या, पर शास्त्री के आते ही वे अपना यह प्रश्न भूल गये। भारत का यह प्रधान मन्त्री राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय रगमच पर अपने उठाये प्रत्येक कदम के साथ-साथ प्रतिष्ठा व महत्व प्राप्त करता चला गया। वे एक ऐसे व्यक्ति थे, जिनका मूल्याकन हमे उनकी कार्यशीलता से करना चाहिए। यह सोचना भूल होगी कि उन्होने कोई भी नवीन नीतियो का निर्माण किया। उन्होने अपने स्वर्गीय नेता द्वारा प्रतिष्ठापित नीतियो को ही निष्ठापूर्वक क्रियान्वित किया। उन्होने शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व, तटस्थता व मैत्री और स्वाधीनता की पूर्व नीतियो को ही दृढ किया। अभी जब मै रोडेशिया के सीमायी राज्य जम्बिया गया तो शास्त्री जी ने इन्ही नीतियो के अन्तर्गत मुझे यह कहने का अधिकार, दिया कि यदि अफ्रीकी एकता संघ रोडेशिया के १,७०,००० गोरो के विरुद्ध ४० लाख अफ्रीकियो द्वारा बनायी गयी अफ्रीकियो की सरकार को अपना समर्थन प्रदान करेगा तो भारत निश्चय रूप से ऐसी निर्वासित सरकार को मान्यता प्रदान करेगा। जब मैंने लुसाका मे यह घोषणा की तो इस बात ने काफी हलचल उत्पन्न की और लन्दन के पत्रो व राजनीतिक क्षेत्रो ने यह महसूस किया कि भारत स्वाधीनता के सिद्धान्तो के प्रति पूर्ण रूप से दृढ है।

शास्त्री जी के ताशकन्द जाने से पूर्व सोवियत सांस्कृतिक समिति द्वारा दिये गये उनके स्वागत समारोह में उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति जी खोल कर हँसा। निस्सदेह इस समारोह मे शास्त्री जी ने एक श्रेष्ठतम भाषण दिया।

शास्त्री जी से मै अन्तिम बार हवाई अड्डे पर मिला, जब भारतीय वायु सेना का विमान उन्हें तेहरान होते हुए ताशकन्द ले जाने वाला था। मैने उन्हे उससे पूर्व रात्रि को ब्रिटिश अनुदार दल के नेता श्री हीथ के साथ हुई अपनी महत्वपूर्ण वार्ता से अवगत कराया। मैने उन्हे श्री हीथ के पाक राष्ट्रपति के सम्बन्ध मे प्रस्तुत मूल्याकन के बारे मे बताया तो उन्होंने इसमे भारी दिलचस्पी जाहिर की। श्री हीथ ने जो इस मध्य राष्ट्रपति अय्यूब खाँ से मिलने वाले अन्तिम व्यक्ति थे, मेरे पूछने पर बताया 'राष्ट्रपति अय्यूब खाँ एकदम हिल गये है पर वे शान्ति चाहते है।' यह मूल्याकन सही सिद्ध हो गया है। श्री शास्त्री जी के ताशकन्द रवाना होने से कुछ दिन पूर्व मै उन्हे अफ्रीकी यात्रा के बारे मे परिचित कराने के लिए मिला था। मैने उनसे कहा कि यदि श्रीमती ललिता शास्त्री श्रीमती जोमो केन्याता को भारत आने को आमन्त्रित करे तो अच्छा होगा। उन्होने इस बारे मे तत्काल कार्यवाही की और मैं समझता हूँ कि केनिया को इस बारे मे निमंत्रण चला गया। मैने इसी भेंट मे उन्हे सुझाव दिया कि ताशकन्द मे बहुत सर्दी पड़ती है, अतः वे इस बारे में सावधानी वरतें। मैंने उन्हे सुझाव दिया कि वे वहाँ धोती के बदले चूड़ीदार पजामे का उपयोग करे। इस पर शास्त्री जी हँस पड़े और बोले कि ताशकन्द की जनता उन्हे धोती में ही देखने की अभ्यस्त है, पर वहाँ अपने साथ ले जाने के लिए उन्होने हाथ व पाँव के गर्म मौजे खरीद लिये है और एक ओवर कोट भी रख लिया है। जो हो, ताशकन्द का मौसम इस वष बहुत नर्म ही रहा।

पर जो चीज उनके लिए घातक रही है, वह है भारत के हर प्रधान मन्त्री के कन्धों पर सवार खतरनाक कार्यभार। मै नहीं जानता कि जवाहरलाल कैसे १७ वर्षो तक यह सब सहन कर सके। लालबहादुर शास्त्री के लिए १६ माह का समय अत्यन्त तनाव व कष्टपूर्ण भार का रहा। इस तरह नेहरू के बाद भारत का एक और सपूत चल बसा। विश्व मे सद्‌भावना-प्रेमी प्रत्येक व्यक्ति उनके इस निधन पर हमारे देश वासियो की ही तरह शोक महसूस कर रहा है। लालबहादुर शास्त्री ने भारत के लिए गौरवमय मार्ग प्रशस्त किया और पाकिस्तान के साथ शान्ति व मैत्री प्राप्त करने की उनकी उपलब्धि किसी भी रूप मे कम महत्व नही रखती। शास्त्री जी उन कतिपय व्यक्तियो में से थे, जो स्वाधीनता, मैत्री, शान्ति के त्रय स्तम्भो की रक्षा करते हुए बलिदान हो गये। वे एक ऐसे व्यक्ति थे, जिनका कोई दुश्मन नहीं था। वे एक ऐसे व्यक्ति थे जो एक शासक थे, दृढ़ पर सरल। सौभाग्यवश उनकी मृत्यु से पूर्व ही भारत के राष्ट्रपति ने उन्हे इस बात की सूचना दे दी थी कि देश के प्रति उनकी अनुपम सेवाओ के नाते देश ने उन्हे 'भारत-रत्न' से सम्मानित करने का निर्णय किया है। अब यह सम्मान उन्हे मृत्युत्तर सम्मान के रूप मे प्रदान किया जायगा।

रत्नसिंह शाण्डिल्य

बापू के आदर्शों की साकार मूर्ति

महात्मा गाँधी कहा करते थे कि असली भारत गाँवो मे बसता है, और इसीलिए उन्होने देश का राष्ट्रपति एक किसान को बनाने की इच्छा किसी सीमा तक भारत-रत्न स्व० राजेन्द्रप्रसाद के प्रथम राष्ट्रपति बनने से पूरी हुई। यद्यपि प्रथम प्रधान मत्री श्री जवाहरलाल जी नेहरू भी गाव वालो और गरीबो की हिमायत किया करते थे, परन्तु महात्मा गाँधी के असली भारत के प्रधान मन्त्री के रूप मे सामने आए श्री लालबहादुर शास्त्री ही, जिन्होने प्रधान मन्त्री पद सम्भालते ही मन्त्रियो और उच्च अधिकारियो को सलाह दी कि वे महीने मे कम से कम एक बार अपने दफ्तरो की शान-शौकत छोड़ कर गाँवो मे जाये और वहाँ किसानो से मिल कर उनकी दिक्कते सुने तथा उन्हे दूर करे। वास्तव मे यदि सरकारी अधिकारी एव मन्त्री स्व० श्री लालबहादुर शास्त्री की इस सलाह पर चले तो देश मे खाद्य-उत्पादन बढाने मे बहुत मदद मिलेगी और तब देश को लगभग ३॥ अरब रुपये की सालाना विदेशी मुद्रा अन्य देशो से अनाज मँगाने पर खर्च नही करनी पडेगी।

श्री शास्त्री जी अच्छी तरह से समझते थे कि जब तक ग्रामीणों की समस्याये हल नही होती, तब तक देश की समस्या हल हुई यह नही माना जा सकता। यद्यपि पिछले १० वर्षो मे औद्योगीकरण के नारे ने देश मे कृषि को उपेक्षित बना दिया था परन्तु शास्त्री जी ने प्रधान मन्त्री पद सम्भालते ही योजना-निर्माताओ एव देश के अन्य नेताओ को स्पष्ट कर दिया कि भारत की आर्थिक प्रगति कृषि विकास के बिना सम्भव नही है। उसी का परिणाम यह हुआ कि देश-विदेश के विशेषज्ञो ने भारत की कृषि-व्यवस्था ठीक करने पर विचार करना शुरू किया।

प्रशासन में सुधार

श्री लालबहादुर शास्त्री यह भी समझते थे कि जब तक वर्तमान प्रशासन मे आमूल-पूर्ण परिवर्तन नही किया जाता, तब तक यह ब्रिटिशकालीन परम्पराओ पर आधारित शासन देश मे कोई चामत्कारिक प्रगति नही ला सकता। यदि के २५ करोड ग्रामीणो को प्रतिदिन प्रति व्यक्ति आय ६८ पैसे रही तो भारतीय समाज का स्तर ऊँचा उठा नही माना जा सकता। इसलिए शास्त्री जी ने पिछले दिनो ही श्री मोरारजी देसाई की अध्यक्षता मे एक आयोग नियुक्त किया था जो प्रशासन मे सुधार के लिए सुझाव देगा ताकि देश की जनता को प्रशासन एव अपने मध्य दूरी का अनुभव न हो और उसे लगे कि यह शासन उसका है तथा उसके द्वारा चलाया जा रहा है। वे स्वय तो हर प्रकार के सरकारी कार्य मे अत्यन्त तत्परता दिखाते थे।

प्रशासन सुधारने के दृष्टिकोण से शास्त्री जी ने मन्त्रियों और अधिकारियों को गाँवों में जाने की सलाह दी थी, परन्तु जब देखा कि उस सलाह पर अधिक अमल नहीं किया जा रहा, तब उन्होंने स्वयं उस ओर पहल की और वह स्वय जिला मेरठ, मुजफ्फरनगर एवं बुलन्दशहर के कितने ही गाँवों मे प्रधान मन्त्री पद की शान-शौकत छोड़ कर गए तथा वहाँ को जनता की मुसीबतें सुनीं।

श्री जवाहरलाल नेहरू से जब कभी उनके उत्तराधिकारी के सम्बन्ध में पूछा गया, तब उन्होंने सदा एक सच्चे लोकतन्त्रवादी के रूप में यही उत्तर दिया कि समय आने पर जनता और दल स्वयं इसका उत्तार देंगे। इसी के साथ वे श्री शास्त्री से यह आशा करते थे कि उनके बाद शास्त्री जी उनके कामों को सही रूप में सभाल सकेंगे। शास्त्री जी ने अपने प्रधान मन्त्री काल में श्री नेहरू की इच्छा तो पूरी करने की कोशिश की ही, साथ ही उन कोटि-कोटि भारतीयों की भावनाओं को भी मूर्त रूप देने का प्रयास किया जो १९६२ मे चीनी आक्रमण के समय से अपनी छोटी-सी पराजय की पीड़ा हृदय में लिये था। उन्होने अगस्त, १९६५ में पाकिस्तानी आक्रांताओं को भारतीय सेना द्वारा जो मुँह-तोड़ उत्तर दिलाया, उससे सारे विश्व में भारत का गौरव बढ़ा :

साधारण नागरिक की अनुभूति

शास्त्री जी ने अपने जीवन-काल के आदि से अन्त तक साधारण नागरिक की कठिनाइयों को महसूस किया। वास्तव मे शास्त्री जी को भारत का ऐसा पहला साधारण नागरिक कह सकते है जिसे देश का प्रधान मन्त्री बनने का सौभाग्य मिला। उन्होंने वाराणसी (उत्तर प्रदेश) के एक छोटे-से गाँव के अत्यन्त साधारण परिवार मे जन्म लिया। उनके जीवन मे यह दु:खद सयोग ही रहा कि जिस प्रकार उनको १८ महीनों का छोड़ कर उनके पिता स्वर्ग सिधार गये थे, उसी प्रकार वे अपने प्रधान मन्त्रित्व को १८ महीनों का छोड़ कर इस ससार से चले गये। उन्होंने राजनीतिक जीवन भी १८ वर्ष की आयु से ही शुरू किया था।

कुमारेन्द्र

कुछ उजली तस्वीर

अनेक दुघटनाएँ देखने मे 'साधारण लगतो है पर उनमे एक व्यक्ति, राष्ट्र या समाज का मर्म निहित रहता है। वस्तुत वे एक दर्पण का कार्य करती है और उनकी कसौटी पर खरे उतरने वाले चरित्र को किसी भी वज्ञानिक मूल्याकन से श्रेष्ठ माना जा सकता है।

शास्त्री के निर्मल, सरल और साधनापूर्ण चरित्र के उजले पक्ष का चित्रांकन करने वाली घटनाओ की भी कमो नही है।

वे धन, पद, प्रतिष्ठा सभी मामलो मे पूर्ण निष्काम थे। इसका प्रमाण अनेक घटनाओ सेहबा चुका है। १९५६ मे महबूबनगर, हैदराबाद मे हुई रेल दुर्घटना को अपनी नैतिक जिम्मेदारी मान कर उन्होने उस समय केन्द्रीय रेल मन्त्री पद से त्यागपत्र दिया, जिसे सम्भवत किसी भी देश के इतिहास मे अनुपम त्यागपूण घटना म ाना जा सकता है। बताया जाता है कि कामराज योजना के पश्चात् ज वे केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल से हटे तो नेहरूजी को इस बात की चिन्ता हुई कि लालबहादुर जी का खर्चा किस तरह चलेगा, क्योकि उन्होने कोई सग्रह नहो किया है। और वस्तुत. यह एक तथ्य था।

उनको दरिद्रता से नफरत थी पर धन और सुखो से मोह नही था। विद्यार्थी थे तो स्कूल की ओर से पिकनिक कार्यक्रम मे भाग लेने को उत्सुक बालक लालवहादुर ने सरल भापा से कहा था— "पर मास्टर साहब, मेरे पास ता एक ही पैसा है।"

और यह भी प्रसिद्ध है कि कैसे पैसे की कमी के कारण स्कूल से उनको नदी तैर कर जान पड़ता था।

आदत बिगड़ जायेगी

और वडे हुए। यहाँ तक मत्रो भी वन गये। १९४८ मे उत्तर प्रदेश के गृहमन्त्रो। एक दिन पी. डब्ल्यू डी. वालो ने उनके बगले के कमरे का हिस्सा, खोद कर कूलर फिट करने की व्यवस्था की। वच्चे-वड़े सभी प्रसन्न थे कि अव गर्मी के दिन यहाँ वितायेगे। रात को जव शास्त्री जी आफिस से वगले को लौटे तो पूछा—"यह सव क्या है?" वताया गया कि कूलर लग रहा है। शास्त्री जी वोले—"नही यह सव कुछ नही लगेगा। आवश्यकता पड़ने पर लू-धूप मे निकलना हो है, लड़कियाँ शादी के वाद न जाने किस स्थिति मे रहे। हमको भी इलाहावाद मे कटघरे वाले मकान मे रहना है। इससे आदत विगड़ेगी।" और फोन करके पी. डव्ल्यू. डी. को आज्ञा दे दी गयी कि इस कोठी मे कूलर नही लगेगा।

उनके इस निर्णय से उनके उस सकल्प का स्मरण हो जाता हैं, जो उन्होने लाला लाजपतराय द्वारा स्थापित पोपुलस सोसाइटी का सदस्य वनते समय किया था कि सारी जिन्दगी वे सादगी व गरीवी से देश की सेवा करते रहेगे।

और वह गरीबी

और निस्संदेह देश को सेवा के लिए उन्होने गरीबो का विषपान हँसते-हँसते बिना कोई कड़वाहट को मन मे लाये किया। यह स्वाधीनता संग्राम के दौरान की बात है। शास्त्री जी ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध संग्राम में जूझे रहते और प्राय: जेल जाते। इस बीच उनकी पत्नी श्रीमती ललिता शास्त्री जैसे-तैसे घर का खर्चा चलाती और शास्त्री जी के एक जेल जीवन के दौरान ऐसा भी अवसर आया, जब कि उनकी एकवर्षीय पुत्री मोतीझरे का शिकार होकर मर गई, क्योंकि डाक्टर के पास जाने के लिए उनके पास पैसे नहीं थे।

रेलमंत्री के कुर्ते

देश स्वाधीन हुआ और उन्हे मन्त्री बनना पडा। राज्य ही नही, वे अब केन्द्र में आ गये। १९५३-५४ मे केन्द्रीय रेलमन्त्री थे। उन्ही दिनो सासाराम एक मीटिंग मे गये। वे जवाहर जाकट पहन कर आये थे। पर यहाँ का मौसम गरम था, अत: जवाहर जाकट उतारना जरूरी था। सूटकेस मे केवल चार कुर्ते साथ थे। और चारों का कालर फटा था। जवाहर जाकट में तो छिप जाता था किन्तु केवल कुर्ता पहनने पर फटे कालर एकदम दिखाई देते थे। अब क्या किया जाय? शास्त्री जो के पो ए. श्री कैलाशनारायण सक्सैना को एक तरकीब सूझी। शीघ्र ही वे एक दर्जी के यहाँ गये और एक कुर्ते का कपडा काटकर उससे शेष तीनो कुर्तो के कालर ठीक करा दिये। दर्जी ने समझा कि कोई परदेशी है पर जब उसने ड्राइवर से पता लगाया तो उसको यह जान कर आश्चर्य हुआ कि ये रेलमन्त्री के कुर्ते है।

पोते की स्लेट

पन्तजी के देहावसान के पश्चात् वे भारत सरकार के गृहमन्त्री के पद पर काम कर रहे थे। महीने का अन्तिम सप्ताह था। पोते ने एक नई स्लेट ला देने की फरमायश की। दादा का उत्तर मिला, दो दिन किसी तरह काम चलाओ। पहली को पैसे मिलते ही ला दूँगा। यह उत्तर एक क्लर्क का नही, एक केन्द्रीय मन्त्री का था जिसकी आय का साधन केवल मन्त्री पद का मासिक वेतन था।

होल्डाल की खोज

१९६३ में मन्त्रिमण्डल के हटने के पश्चात् वे इलाहाबाद गये। हवाई जहाज से उतर कर मोटर पर चढ़ कर उन्होने होल्डाल की खोज की। मित्रो ने कहा कि पीछे से जायेगा। शास्त्रीजी ने कहा, —"नहीं, अब मै मन्त्री नही हूँ कि उसकी दूसरे देखभाल करेंगे। इसका मुझे कटु अनुभव है। और होल्डाल लेकर ही वे डेरे पर रवाना हुए।

आपसे नहीं रेल मन्त्री से

वे मन्त्री थे, भारत के उच्च प्रशासक थे पर कोई भी अनजान व्यक्ति उन्हें एक व्यक्ति रूप से अधिक नही देख पाता था। शास्त्री जी सम्भवत इससे आत्मसन्तोष पाते थे। बम्बई की बात है। उस समय वे रेलमन्त्री ही थे। एक सज्जन उनसे मिलने आये और घण्टी बजाई। शास्त्री जी निकल कर बाहर आये और उनका स्वागत किया। वे सज्जन शास्त्री जी के चेहरे से परिचित नही थे और भारी भरकम चेहरे व वस्त्र-विन्यास की कल्पना के विपरीत छोटे से कद और साधारण वस्त्र वाले व्यक्ति को देखकर बोले—"मै रेल मन्त्री महोदय से मिलना चाहता हूँ।"

शास्त्री जी कुछ बोले नही। भीतर आये। सचिव को कहा—आगन्तुक सज्जन को भीतर ले आओ जब उन्हें रेलमन्त्री के कमरे मे ले आया गया तो कुर्सी पर शास्त्री जी को देख कर वे दंग रह गये।

अटलबिहारी वाजपेयी

अद्वितीय देशभक्त और कुशल राजनेता

अब हमको वह मुस्कराता हुआ हँसमुख चेहरा, विनम्रता को सजीव प्रतिमा और साहस का चलता-फिरता लौहस्तम्भ देखने को नही मिलेगा। शास्त्री जी के निधन से न केवल भारत की अपूरणीय क्षति हुई है, अपितु विश्व-शान्ति को भारी आघात पहुँचा है। वह न केवल युद्धकाल के सफल नेता सिद्ध हुए, प्रत्युत शातिकाल के भी कुशल नेता थे। उन्होने अपने अन्तिम क्षणो मे भारत की प्रतिष्ठा का ध्वज इतना ऊँचा उठा दिया कि वह आकाश से जा लगा था। अतः उनके निधन से करोडो देशवासियो का शोकपीड़ित होना नितान्त स्वाभाविक है।

प्रतिष्ठा की पुनः स्थापना

हम शास्त्री जी को स्मरण करते रहे है और करते रहेगे। जब तक भारत का इतिहास रहेगा, उन्हे हमेशा स्मरण किया जाता रहेगा। उन्होने अपने सक्षिप्त कार्यकाल मे ऐसा कर दिखाया जैसा आजादी के बाद १८ वर्षो मे नही हो सका था। उन्होने हमे हमारी लुप्त प्रतिष्ठा वापस लाकर दी, चीनी आक्रमण ने भारत की प्रतिष्ठा को जो क्षति पहुँचाई थी, उसकी पूर्ति स्व० शास्त्री जी ने पूर्ण गौरव के साथ की, वह सकट की घड़ियो मे भी कभी बेचैन न हुए। उन्होने हर तूफान को सतुलित, सयमित दृष्टि से देखा, परखा और उसका सफलतापूर्वक सामना किया। लघु काया मे इतना विराट् व्यक्तित्व अब और कहाँ देखने को मिल सकता है?

सच्चे लोकतन्त्रवादी

शास्त्री जी सच्चे लोकतन्त्रवादी थे, वे हमेशा लोकभावना का सम्मान करते रहे, उन्होने राष्ट्रजीवन के विभिन्न तत्वो और परम्पराओ को कायम रखने का भरसक प्रयास किया और इसमे उन्हे सफलता भी मिली। वे कभी तानाशाह नही बने, उनके आचरण और स्वभाव मे विनम्रता और दृढता का चमत्कारी समन्वय था। वह राष्ट्रीय महत्व के विषयो पर निर्णय करने से पूर्व हमेशा अपने साथियो, सहयोगियो और विरोधी नेताओ से परामर्श लिया करते थे।

देशभक्त

शास्त्री जी ईमानदार और सच्चे देशभक्त थे, वे देशभक्ति को सर्वोपरि मानते थे। इसी कारण जब-जब देश ने उन्हे पुकारा, वे अपने व्यक्तिगत कष्टो को भूल कर देश मे आ उपस्थित हुए। दिल की बीमारी के बावजूद वे शाति की पुकार पर ताशकन्द गए और अपनी क्षमता से अधिक कार्य-

रत रहे, वे देश के लिए कार्य करते समय अपने स्वास्थ्य की भी उपेक्षा कर देते थे। भारत-पाक युद्ध के दौरान और उसके बाद शाति-वार्ता के दौरे मे लगातार व्यस्तता उनकी देशभक्ति का ज्वलंत प्रमाण है। ऐसा निष्काम, निष्ठावान और सर्वस्व दानी देशभक्त मिलना दुर्लभ ही है।

कुशल नेतृत्व

शास्त्री जी ने भारत को अच्छा नेतृत्व प्रदान किया। जब नेहरूजी के निधन के बाद में देश में तरह-तरह की आशकाएँ और चिन्ताएँ फैली तो उन्होने साहस से आगे बढकर देश की बागडोर सँभाली और इस भ्राति को खण्डित कर दिया कि नेहरूजी के बाद भारत खण्ड-खण्ड हो जायेगा। जब-जब देश मे विघटनवादो तत्वो ने जोर पकड़ा, तब-तब शास्त्री जी ने दृढ़ता से उनका दमन किया और देश की एकता को अक्षुण्ण रखा।

शास्त्री जी ने हमको यह सिखाया है कि हम शांति के लिए हमेशा प्रयत्नशोल रहें, लेकिन शांति की रक्षा के लिए हथियार उठाने के लिए भी तैयार रहे। उन्होने हमे यह शिक्षा दी है कि राष्ट्रीय एकता कायम ही नहो रखी जानी चाहिए, बल्कि उसकी नीव और ज्यादा मजबूत बनानी चाहिए।

यह बहुत वडी बात है कि विरोधी नेताओ को भी उनमे और उनकी ईमानदारी में पूरा विश्वास था। हालांकि विरोधी सदस्यों और शास्त्री जी के बीच कभी-कभी गभीर मतभेद हुआ करते थे। पर शास्त्री जी की देशभक्ति और सत्य निष्ठा में कभी किसी को किंचित् भी संदेह नही रहा।

आज जब हमारे बीच नही रहे तो हमको उनकी कीमत मालूम हुई है। उसका अभाव हमें कसक रहा है।

गाँधी जी ने हमे स्वदेशी का जो मंत्र दिया था, वह आज भी उतना ही ठोक और सच्चा है, जितना चालीस साल पहले था। स्वदेशी के लिए हमें आज भी पहले जैसो भावना और पहले जैसा जोश पैदा करना है।

—लाल बहादुर शास्त्री

रामकृष्ण शर्मा

कुछ पावन प्रसंग

यह शायद पहले आम चुनाव के समय की घटना है। उस समय पद-प्राप्ति के लिए कांग्रेस में भारी फूट पड गई थी। बहुत-से कांग्रेसी नेता कांग्रेस को छोड़कर समाजवादी दल मे जा मिले थे। परिस्थिति बड़ी ही विषम थी।

शास्त्री जी अपने चुनाव क्षेत्र का दौरा करते हुए जसरा नामक स्थान पर पहुँचे। देखा कि सर्वत्र लाल झंडा और लाल टोपियो का ही बोलबाला है। शास्त्री जी की जीप एक स्थान पर रुकी तो लोगो ने उन्हे चारों ओर से घेर लिया।

भीड मे कुछ लोग सौदेबाज भी थे। चुनाव के समय नेताओ के सामने जायज और नाजायज मांगो का रखा जाना स्वाभाविक ही है। एक सज्जन ने तपाक से कहा, "शास्त्री जी, हम लोग तो मजबूरन कांग्रेस को छोडकर इन लोगो के साथ ही रहने में प्रसन्नता अनुभव करेगे; यदि आप हम लोगो का एक छोटा-सा काम करा दे।"

शास्त्री जी बोले, "काम कराने के लिए तो हम हैं ही, परन्तु मालूम तो हो काम क्या है? उस व्यक्ति ने कहा, "हम लोग तो चाहते हैं कि हमारे जसरा स्टेशन पर डाक-गाड़ी भी रुका करे।"

और कोई स्वार्थी नेता होता तो तुरन्त वायदा कर लेता कि यह भी कोई बड़ी बात है, परन्तु शास्त्री जी तनिक मुस्कराये और बोले "भाई, जो माग तुम्हारी है वह दूसरे गांववालो की भी हो सकती है। फिर अगर हमने डाक-गाड़ी को हर स्टेशन पर रुकवाना शुरू कर दिया तो डाकगाड़ी और पैसेंजर गाड़ी मे फर्क क्या रहेगा?"

शास्त्री जी की इस निश्छल स्पष्ट वाणी को सुनकर लोगों पर ऐसा प्रभाव हुआ कि वे उसी क्षण शास्त्री जी के साथ हो लिये।

हृदय की कोमलता

वसंत बीतने को था। गर्मी की शुरुआत होने वाली थी। पकती हुई फसल ने अपनी हरी चूनर को सुनहरी रँगना शुरू कर दिया था। ऐसे मौसम मे शास्त्री जी लहराते-इठलाते खेतो को देखते हुए जीप मे चले जा रहे थे।

एक स्थान पर जौ-चने के एक खेत को देखकर उन्होने जीप रुकवाई, उनका मन चने खाने को हुआ था। साथियो मे से एक सज्जन जीप मे से उतरे और कुछ चने के पेड़ उखाड़ने लगे। शास्त्री जी वही से चिल्लाये, "नही भाई, यो नही।"

उस भाई के बढे हाथ रुक गये और शास्त्री जी की बात सुनने लगे। शास्त्री जी बोले, "पेड़ को उखाड़ो नहीं, डालियाँ भी मत तोड़ो, केवल कुछ पके-पके टाट तोड़ लो; इससे न फूल नष्ट होंगे न अधपके फल।"

सचमुच इतनी कोमलता के साथ कौन सोचता है।

जनता का आदमी

इलाहाबाद के पास नैनी की बात है। यहाँ पर पुरानी बस्ती के साथ एक औद्योगिक नगर भी है। लिपटन की चाय का डिब्बाबन्दी कारखाना यही पर है। शास्त्री जी एक साधारण-से समारोह में इसी कारखाने में गये।

आयोजकों ने एक लम्बी-चौड़ी छत पर दरी बिछा दो। सामने कुछ कुर्सियाँ बिछा दी थीं, जिन पर कुछ विशिष्ट लोग बैठ सकें। मजदूर और साधारण लोग पहले से ही दरियों पर बैठे थे।

शास्त्री जी आये और उन्हे एक कुर्सी पर बैठ जाने को कहा गया, परन्तु वह इस प्रस्ताव को टाल कर सामने की दरी पर बैठे। बोले, "मेरा सही स्थान तो जनता के बोच मे है। उससे अलग कभी बंठना तो पड़ता है, पर रुचता नही।"

सादगी

उत्तरप्रदेश के गृहमन्त्री के रूप मे श्री लालबहादुर शास्त्री रेल से आगरा पधार रहे थे। आगरा नगर के अधिकारियो तथा नागरिकों को उनके आगमन की सूचना थी। स्वागत की पूरी तैयारो भी थो। विशेषतः पुलिस अधिकारी एव कास्टेबल बहुत हो सजे-सवरे चुस्त भाव से इधर-उधर खड़े थे।

संयोग की बात है कि शास्त्री जी का डिब्बा उस स्थान से बहुत आगे निकल गया, जहाँ उनके स्वागत की तैयारी मे लोगो की भीड़ खड़ी थी। गाड़ी रुकते ही शास्त्रो जी उतरे और बाहर जाने लगे।

दरवाजे पर पहुँचते हा एक लम्बे तगड़े सिपाही ने उन्हे रोककर कहा, "कहाँ जाते हो जी ठहर जाओ" शास्त्री जी, सरलता से बोले, मुझे बाहर जाना है।

सिपाही ने कहा, "जानते नही हमारे पुलिस मंत्री इस गाड़ी से आये है, एक तरफ ठहर जाओ।"

यह वार्ता तो चल रही थी कि स्वागत के लिए आई भीड़ ने शास्त्री जी को घेर लिया। सिपाही के देखते ही देखते शास्त्री जी को मालाएँ पहनाई जाने लगी। सिपाही अपनी अज्ञानता पर लज्जित था। परन्तु शास्त्री जी उसे देख कर मुस्करा रहे थे।

सहिष्णुता

यह घटना उन दिनों की है, जब श्री शास्त्रो जी गृहमंत्रो उत्तर प्रदेश थे। एक बार कार द्वारा कोई मामूली दुर्घटना हो गई। इसकी सूचना समयानुसार पुलिस स्टेशन मे लिखानी थी। इस काम के लिए वे स्वय कार छोड़कर पैदल पुलिस स्टेशन की ओर चल पड़े।

थाने पर जो दीवानजी उस समय ड्यूटी पर थे, उसे रिपोर्ट लिखने को फुर्सत नही थी। उसने उपेक्षा के भाव से कह दिया "बैठ जाओ, अभी रिपोर्ट नहीं लिखो जायगो।"

शास्त्री जी ने समझा अवश्य कुछ जरूरी काम होगा। वे एक घंटा बैठे, फिर उन्होंने दीवानजो से पूछा, "थानेदार साहब कहाँ है ?

दीवान ने फिर शास्त्री जी को डाट दिया। बोले, "क्या करोगे थानेदार का ?"

शायद वह कुछ और भी ऊटपटांग बकता, परन्तु तभी दरोगा आ गये। उन्हें शास्त्री जो को पहचानते देर नही लगी। तुरन्त एक जोरदार सलाम ठोका और आने का कारण पूछा।

दीवान जी को काटो तो खून नही, शास्त्री जी शांत बने रहे।

रतनलाल जोशो

दर्पण में जिनकी अब परछाईं ही रह गई

तीस बरस बोत गए, शास्त्री जो से पहलो भेट इलाहाबाद मे आनन्द-भवन में हुई थो। यह १६३६ के अप्रेल महोने की बात है। मै यूनिवर्सिटी मे पढता था, और शास्त्री जी कर्मठ काग्रेस कार्यकर्ता के रूप मे व्यापक आदर पा चुके थे, स्वर्गीय पडित जी उन्हे 'लालबहादुर' कहते थे और बाकी बुजुर्ग 'शास्त्री'।

किन्तु शास्त्रो जो का सर्वाधिक सम्बन्ध नवयुवको से रहता था। वे कहते थे—"बड़ो के सामने बड़े बधन रहते है—डर भो लगता है। नवजवानो से मन मेल खाता है। दिल जवान रहता है।" इस पर जब उनसे पूछा गया कि एक दिन बुजुर्ग तो आप भी होगे, तब ऐसी बाते आपके बारे मे भी नवयुवक करेगे, तब आप क्या कहेगे उनसे ? वे मुस्कराहट मे खिल गये और आँखो मे शरारत झलकाते बोले—"मगर यह तो होगा न जब मै बूढा हो जाऊँगा, अगर मै बूढा ही न हुआ तो ?"

बू-ए बहार

और सचमुच शास्त्री जी ६१ साल की उम्र तक बूढे न हुए। वचन के पक्के निकले; जो कहा सो कर गुजरे। ६१ साल के इस नोजवान की जब यह बात याद आती है तो दिल पर साप लोटने लगते है। मन का पाप फूट निकलता है। जब आँखो मे उनकी व्यग्य-परिहास-चचल मुद्रा सतरण करने लगतो है—वाणी विह्वल हो उठती है :

तेरे ख्याल से,
बू-ए बहार आतो है।

उसके वाद शास्त्री जी से सैकड़ो मुलाकाते हुईं—बनारस मे, प्रयाग मे और लखनऊ मे। मैं इन्हे मुलाकाते कैसे कहूँ ? 'मुलाकात' 'शब्द' से तो द्वैत (परायेपन) की बू आती है—शास्त्री जी तो द्वैत के ग्रहण से हमेशा परे रहे, परायापन उनसे सदैव पनाह मागता रहा। बनारस की ही बात है। इक्के से उतरे तो बोले—'पैसे मत देना, मैने इक्के वाले के पास खाता खोल रखा है।' इक्के वाला मुस्करा दिया—'बाबूजी, मेरा तो इक्का ही कौम के खिदमतगारो के लिए है। इन मास्टर जी से आप इतना कह दीजिए कि जब मुल्क आजाद हो जाए तो वे इस इक्के को न भूले।' देश आजाद हो गया। शास्त्री जी मत्री वन गए और जब वे मत्री की हैसियत से पहली बार बनारस गए तो स्टेशन पर भरत-मिलाप या राम-केवट-प्रसग जैसा एक ड्रामा ही हो गया—शास्त्री जी स्टेशन के वाहर उस इक्के वाले को खोजने चल पड़े और वह इक्के वाला सब सवारियो के पीछे खड़ा अपनी आन पर अड़ा था कि देखूँ मेरे इक्के के विना मास्टर जी शहर जाते कैसे है ?

गहरे गोताखोर

राज्य के मन्त्री पद पर धवल-धौत कीर्ति कमाने के बाद शास्त्री जी केन्द्र में आए—मगर वे अपने भीतर और बाहर जैसे पारदर्शी थे, यहाँ भी उनकी पारदर्शिता पर औपचारिकता हावी नही हो सकी। तडक-भड़क की काई का लेश भी उनके उज्ज्वल व्यक्तित्व पर अपनी छाप नही छोड़ सका। एक बार जब स्वर्गीय पंडित नेहरू ने उनसे 'कुछ ढग के कपड़े' सिलवाने का आग्रह किया तो वे अपने सुपरिपक्व व्यंग्य की भाषा मे बोले—'ढग के कपड़े आप जैसे ढंग के शरीर मे हो फबते है, मेरे जैसे बेढंगे बदन पर तो ढंग के कपड़ो का भी मजाक बन जाएगा।' आत्मगोपन की यही आदत उनकी विद्वत्ता के प्रसग में चरितार्थ होती रही। वे कोरे नाम के या उपाधि के शास्त्री नही थे, शास्त्र के प्रकांड पडित थे, भारतीय दर्शन की मुक्तासीपियों के गहरे गोताखोर थे. किन्तु उनकी विद्या-सम्पत्ति का यह तहखाना राजनीति के छलिया ताले से ऐसा बन्द रहा कि अब देवलोक में देवता ही उससे कृतार्थ होंगे। हम मानवो का यह जगत तो अभागा ही रहा।

ब्रह्मतेज

उनके पांडित्य की एक झलक एक दिन हमने साश्चर्य देखी थी। तीन वेदांत शास्त्र-प्रवीण पंडितों के सामने वे बैठे थे और ऋग्वेद के 'नासदीय सूक्त' की मोमासा चल रही थी। मै उनके तर्कपूर्ण निरूपण को सुनकर आवाक् रह गया। व्याख्या करते समय उनके चहरे पर जिस तेजस्विता के दर्शन मैने किये, उसके प्रकाश मे मेरी कल्पना ने मुझे बताया कि वेदपाठी मुनियों का ब्रह्मतेज क्या हो सकता है?

"नासदोय सूक्त के" अनादि अव्यक्त को व्यक्ति की अनुभूति में उतारते हुए जैसे उन्होंने अपना संकल्प व्यक्त किया—

न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दुःखम्,
न मंत्रो न तीर्थं न वेदा न यज्ञा:
अहं भोजन नैव भोज्यं न भोक्ता,
चिदानदरूप: शिवोऽहं शिवोऽहम्:

मेरे न कोई पुण्य है, न पाप; न सुख, न दुःख, मेरे लिए मंत्र, तीर्थ, वेद या यज्ञ कुछ भी नही है। मै न भोजन हूँ, न भोज्य और न भोक्ता मै कुछ भी नही हूँ। मै तो चिदानन्दस्वरूप शिव हूँ, मै ही शिव हूँ।

प्रतिभा-पुत्र

अपने वाणी-वैदग्ध्य का मुझे एकात मनोयोग के साथ रसपान करते देख, अपनी आदत से लाचार, वे सकोच मे सिमट गये। मदहास के साथ बोले—

बाग्वैखरी शब्दझरी
शास्त्रव्याख्यानकौशलम्;
वैदुष्य विदुषा तद्वद
मुक्तयें न तु मुक्तये।

धारा-प्रवाही रूप मे सुन्दर-सुन्दर वाक्यो की रचना, शास्त्र व्याख्या करने के चमत्कारी कौशल–ये सब सिर्फ पडितों के मनोरजन के लिए ही है, इनके द्वारा मनुष्य को मुक्ति-लाभ नही हो सकता।

मुस्कान की कली से चातुर्य की यह सुगंध बिखेर वे फिर अपने आत्मगोपन के ऐसे पाषाण-शिल्प बन गये कि प्रतिभा के चन्द्रोदय होते हुए भी सबकी नजरों को 'बेढगे किसान,' अनघड़ मूर्ति ही दिखलाई देते रहे। स्वर्गीय पतजी ने उनके राज-नीतिक कौशल के बारे मे जब उनके सामने हो कहा कि राजनीति मे हम तो टेलीग्राफ के तार ही रहे, मगर लालबहादुर वायरलैस बन गये। तो शास्त्री जी की हाजिर-जवाबी एक क्षण का विलम्ब किये विना ही यो मुखर होकर सबके हृदयो मे चॉदनो की तरह बिछल गयो—'बड़ो को सब शोभा देता है, अपने हाथ से हो पतग की डोर काट देते है और जब बेठिकाने होकर पतग आकाश मे गोते खाने लगती है तो कहते है, पुष्पक-विमान उड़ रहा है।'

कुफ्र और ईमान

वाणी का यह चातुर्य उनकी रीति-नीतियो मे भी इसो प्रकार कभो परोक्ष और कभो प्रत्यक्ष प्रकट हो जाता था।

जव वे प्रधान मत्री बने तो बधाई देने के लिए उन तक पहुँचने मे मुझ तोन दिन लग गये। देखते ही सव्यग्य बोले—'कुफ्र के पास ईमान कभी-कभी हो जाता है।' मेरे पास ही एक राजनेता खडे थे, कहने लगे—राजनीति को तो कुफ्र नही कहना चाहिए, उसके बिना जीवन कही चल पायेगा भला? शास्त्री जी ने तत्काल जवाब दिया— 'उलझन को ही जीवन समझते है तो आपको बात मान ली जा सकती है। क्योकि आपकी राजनीति जीवन को चलाती नही, उलझाती ही है।'

राजनीति के इस रूप को शास्त्री जी अपने मन की गगा से आजीवन धोकर निमल बनाते रहे। मन की यह गगा ही उनकी सबसे बड़ी शक्ति थी। ऐसो शक्ति जिसकी सजीवनी ने राष्ट्र के हृदय—दौर्बल्य को महान् से महान् त्याग और महान् से महान् शौर्य के लिए प्रेरित कर दिया था।

वरदान नहीं वज्र

किन्तु हमारे लोकतन्त्र के बगीचे मे अभी तो यह फूल अपनो पखुडियों को बाहर फैलाने, अपनी सुगन्ध को प्रसारित करने की शुरुआत कर ही रहा था कि माली ने उसे तोड़ लिया—लोकहृदय के सिंहासन पर प्रतिष्ठा प्राप्त कर अभी-अभी तो लोकतन्त्र के नायक लालबहादुर ने प्रधान मन्त्री के सिहासन की सीढिया चढ़ना प्रारम्भ को थी। और, अभो-अभी हमारे भाग्य की क्रूरता ने उससे हमे वचित कर दिया।

मुद्दत के वाद तो इज्ने—
तबस्सुम मिला था,
वह भो कुछ ऐसा तल्ख,
कि आँसू निकल पड़े।

वड़े लम्वे इन्तजार के बाद तो हमे मुस्कराने को इजाजत मिलो थी, मगर यह वरदान भो ऐसा तीखा सावित हुआ कि हम रो-रो दिये।

•

सतोशकुमार

मोम की तहों में फौलाद का दिल

एक प्रमुख दार्शनिक ने कहा है—"विनम्रता पुरुष का गुण नहीं, दुर्गुण है। इस विचार से जो असहमत है और जिनके लिए अपने-अपने व्यक्तित्व से विनम्रता का गुण निकाल देना प्रायः असम्भव है, उनमें लालबहादुर शास्त्री भी थे। शास्त्री जी सबसे समान व्यवहार करते थे। चाहे गरीब हो या अमीर, सभी को समान आदर मिलता था। वह बच्चो की तरह निश्छल और अपने दैनिक जीवन में बहुत सादा थे। जरा-सा भी किसी को दुखी देखकर उनका हृदय द्रवित हो जाता था, उनकी आखें छलछला आती थी।

शास्त्री जी ने जब रेल मन्त्री पद से त्यागपत्र दिया तो सभी स्तब्ध रह गये। विश्व के इतिहास में यह एक आश्चर्यजनक घटना थी कि किसी मन्त्री ने अपने विभाग की दुर्घटना का दायित्व अपने ऊपर लिया हो। परन्तु शास्त्री जो जैसे निष्कपट और सरल हृदय के लिए तो यह एक साधारण-सी घटना थी। ट्रेन दुर्घटना का असर शास्त्री जी पर बहुत पड़ा था। इस दुर्घटना के लिए इन्हें किसी ने भी दोषी नही ठहराया था, परन्तु शास्त्री जी के आदर्श और आत्मा की पुकार ने उसे स्वीकार न किया।

शास्त्री जी का शरीर मानो फौलाद का बना था। कद चाहे छोटा था, परन्तु उनके कार्य करने की क्षमता को देखकर किसी को भी आश्चर्य होना स्वाभाविक था। देश की गम्भीर समस्याओ और राजकाज के अनेको कामों से घिरे रहने पर भी उनके होठों की मुस्कान नहीं मुरझाती थी और न ही कभी उन्हें झुंझलाहट होती थी। सच तो यह है कि शास्त्री जी को गुस्सा होते कभी किसी ने देखा ही न था। वे अपना संतुलन हमेशा बनाये रखते थे।

सन् १९४२ के आन्दोलन मे शास्त्री जी ने महत्वपूर्ण कार्य किया था। उन दिनों मे वे भूमिगत रहकर संगठन और देशव्यापी आन्दोलनों का संचार कर रहे थे। २० अगस्त को घण्टाघर पर संगीनधारी सैनिक पहरे पर तैनात थे और जरा-सी भी गलत कार्रवाई से जान पर बन सकती थी, गोलियाँ चलने का डर था। परन्तु शास्त्री जी वहाँ पहुँचे और हजारो आदमियों की सभा मे एक तागे पर खड़े होकर उन्होने कहा "अंग्रेजी सरकार को यहाँ रहने का कोई अधिकार नही है, इसे फौरन भारत से जाना चाहिए।"

इतना ही कहना था कि पुलिस के अफसरो ने शास्त्री जी को गिरफ्तार कर लिया।

स्वतन्त्रता के पश्चात् भी अपने अथक परिश्रम से तथा सत्कार्यो से शास्त्रीजी ने जनता के हृदय में अपने लिए स्थान बना लिया। गृह और यातायात मन्त्री के रूप मे शास्त्री जी ने पुलिसवालो मे एक

नवीन सेवा का दृष्टिकोण उत्पन्न करने का प्रयास किया। आदर्श थानों की स्थापना आपकी ही बुद्धि की उपज थी।

१९५२-५३ के आम चुनावो मे शास्त्री जी प्रतिदिन बीस घण्टे काम करते थे, मगर उनके माथे पर शिकन तक नही पडती थी। रेल एव परिवहनमंत्री के रूप मे आपने जनता की जो सेवा की, उसका अपना एक स्वर्णिम इतिहास है। इस पद से त्यागपत्र देने पर प्रधान मन्त्री जवाहरलाल नेहरू के पास हजारो पत्र तथा तार आए थे और उनके मुँह से बरबस निकल पड़ा था—"लालबहादुर कितने लोकप्रिय है।"

प्रधान मन्त्री जवाहरलाल नेहरू के पश्चात् शास्त्री जी ने अठारह महीनो मे जनमानस मे जो स्थान अपने लिए वना लिया था वह उनके अपूर्व त्याग, सरलता एव अथक परिश्रम का ही परिणाम है। प्रधान मन्त्री वनते ही राष्ट्र के नाम सदेश देते हुए उन्होने कहा था "कलह और छिद्रान्वेषण के वातावरण का अत होना चाहिए। हमारे सामने जो कठिन समस्याएँ उपस्थित है, उन्हे एकता, लगन और साहस के साथ हल करने मे रचनात्मक प्रयास होना चाहिए।"

यही उन्होने किया भी। उनकी वृत्ति हमेशा रचनात्मक कार्य मे रहती थी। पाकिस्तान के आक्रमण के समय भी जो साहस, वीरता और कार्यपरायणता का परिचय श्री शास्त्री ने दिया, वह प्रशसनीय है।

शास्त्री जी की वाणी मे बडा ओज था। कोई भी बात जोश मे आकर उन्होने नही कही। जो कुछ उन्होने कहा, वही करके भी दिखलाया। प्राय. देखा गया है कि बडे लोग छोटी-छोटी बातो पर ध्यान नही देते। वे प्राय उपेक्षा किया करते है, किन्तु शास्त्री जी इसका अपवाद थे। कही भी दफ्तर मे या कमरे के बाहर कोई आलपीन या सादे कागज का टुकड़ा पड़ा होता था तो वे उठा कर रख देते थे। चपरासियो की लापरवाही से यदि अनावश्यक बिजली जली रहती तो वे बुझा देते थे। यह सब छोटी जरूर लगती है, मगर इनके पीछे जो भावना छिपी है, उसका मूल्य बहुत अधिक है।

शास्त्री जी जनसाधारण की समस्याओ, उनके अभावो और आवश्यकताओ की पूर्ति मे सदैव संलग्न रहते थे। वे हठधर्मी नही थे। यदि उन्हे यह ज्ञात हो जाय कि उनकी कार्यशैली मे कही कोई कमी है, तो वे उसे सुधारने के लिए तुरन्त तैयार हो जाते थे। सुख व शान्ति और विजय का उनके जीवन मे कोई मूल्य न था। वे दुर्गम और कँटीले मार्ग पर चलकर अपने देश की परिस्थितियो से जूझते रहे। अपने इन्ही गुणो के कारण वे भारतवासियो के हृदय-सम्राट वन गये। जहाँ कही भी वे जाते, जनसमुदाय उन्हे घेर लेता। सारे नर-नारी उनके पीछे हो लेते। वे भी जनता के समूह मे हँसते और सवको मत्रमुग्ध कर लेते थे।

ताशकन्द वार्ता के ही साथ शास्त्री जी के जीवन का सुनहरी अध्याय समाप्त हो गया, मगर जो कुछ उन्होने अपने जीवन मे किया वह किसी भी तरह भुलाया नही जा सकता। आज मोम-से दिल और फौलादी शरीर वाला महामानव हमारे बीच से उठ गया है, मगर जो कुछ हमारे लिए छोड गया है, उसीसे अभी तो वहुत कुछ सीखना है।

शास्त्री जी की अकस्मात् मृत्यु से हम सव अपने-आपमें एक रिक्तता महसूस कर रहे है, किन्तु वडे साहस और दृढता से इस कमी को हमे पूरा करने की कोशिश करनी चाहिए।

योगराज थानी

शांति का एक और सेवक उठ गया

मृत्यु के क्रूर हाथो से कोई नही बच सकता, यह एक कटु सत्य है। परन्तु मरने के बाद भी जो जीते रहते है, उनकी सख्या बहुत कम है। भारत के प्रधान मंत्री स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री भी उन्ही गिने-चुने आदमियों मे से एक थे जो मरने के बाद भी नहीं मरते। उन्होने एक परिवार, एक जाति, एक सम्प्रदाय, एक देश या एक राष्ट्र का प्रतिनिधित्व किया। उन्होंने भी उसी शाश्वत सिद्धात के लिए अपने जीवन का होम कर दिया जिसका आज सम्पूर्ण मानव जाति अनुकरण करने को तैयार है और वह सिद्धांत था 'शाति का सिद्धांत'। शास्त्री जी शाति के सच्चे सेवक थे। शांति के इस सिद्धांत का सही अर्थ उन्होंने अपने गुरुभाई जवाहरलाल नेहरू से सीखा और समझा था। वे शांति की खोज में ताशकन्द गये और भारत-पाक समझौते पर हस्ताक्षर करके (जो उनके अंतिम हस्ताक्षर बन गये) उन्होने यह सिद्ध कर दिया कि शाति और युद्ध के दो अलग-अलग पथ है और मैं केवल शांति के पथ का राही हूँ।

युद्ध और शांति

भारत हो नही, दुनियां के सभी देश आज अच्छी तरह से यह समझ गये है कि युद्ध और शांति के रास्ते अलग-अलग है। युद्ध विनाश करता है, शाति निर्माण करती है। यदि ससार से युद्ध का नामो-निशान मिटा दिया जाय और मानव की सारी विध्वसिनी शक्तियों को निर्माण में जुटा दिया जाय तो यह धरती स्वर्ग बन सकती है। भारतीय लोकनायक लालबहादुर शास्त्री भी यही मानते थे और यही चाहते थे। वे यह अच्छी तरह जानते थे कि आज का ससार, जो शस्त्रीकरण और अणुबमों के निर्माण मे व्यस्त और मस्त है, गलत रास्ते पर यानी युद्ध के रास्ते पर चल रहा है। शास्त्री जी को यह डगर यानी अणु बम की डगर भी नापसन्द थी। वे इस डगर पर इसलिए भी चलना नही चाहते थे, क्योंकि वे यह अच्छी तरह जानते थे कि शस्त्रो से अन्त मे युद्ध ही है।

लालबहादुर शास्त्री उन व्यक्तियो मे से थे जो मरने के बाद भी जनता का पथ प्रदर्शन करते है। उन्होंने जीते-जी तो जनता का पथ प्रदर्शन किया हो, मरने के बाद भी उन्होने एक प्रदीप 'शान्ति का प्रदीप' हमारे हाथ मे रख दिया है, जिससे हम अपना पथ खुद भी खोज सकते है।

मोम की तरह नरम और इस्पात की तरह कठोर

शास्त्री जी के व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि वह मोम की तरह नरम और इस्पात की तरह कठोर था। उन्हे उनके सिद्धांतों और आदर्शो से थोड़ा परे हटा सकना किसी के वस की बात

नहीं थी। उन्होने अपने आदर्शों को अपने जीवन से भी अधिक महत्व दिया। पाकिस्तान ने जब भारत पर आक्रमण किया, तब शास्त्री जी ने वज्र की तरह कठोर बनकर कहा कि, 'हम रहे या न रहे, पर यह देश अवश्य रहेगा।' उन्होने जनता के सामने यह स्पष्ट कर दिया कि मै अपने प्राण दे सकता हूँ, पर अपने देश की एक इंच भूमि भी नही दे सकता। मै ताकत का जवाब ताकत से भी देना जानता हूँ। और जो लोग यह सोचते है कि हम ताकत से भारत को झुका सकते है, वे भूल रहे हैं क्योकि भारत का प्रधान मंत्री तन का भले ही कमजोर हो, पर वह मन से कमजोर नही है।

सिद्धान्तवादी

लालबहादुर शास्त्री जनता के नेता थे। अपनी सादगी के कारण उन्होने डेढ वर्ष मे ही जनता का विश्वास प्राप्त कर लिया था। कच्छ के समझौते पर एक बार जनता का विश्वास डगमगाया, परन्तु पाकिस्तानी आक्रमण के दौरान शास्त्री जी ने जिस दिलेरी और साहस का परिचय दिया, उससे भारत-वासियो के दिल मे आनन्द का सागर उमड़ पडा। शास्त्री जी शात स्वभाव के व्यक्ति थे। निष्ठावान्, सकल्पस्थिर, त्यागमूर्ति, न्यायप्रिय शास्त्री जी थोड़े ही समय मे जनता के लोकप्रिय नेता बन गये। उनकी सादगी की देश-विदेश में चर्चा होने लगी। एक बार नेहरूजी ने भी हँसी-हँसी मे उनसे कह दिया था कि ढग से कपडे पहना करो। परन्तु उन्होने भी हसी-हसी मे उत्तर दिया कि ढग के कपड़े आप जैसे आदमी पर ही अच्छे लगते है क्योकि आपका शरीर भी ढग का ही है, मेरा तो शरीर ही ढग का नही है, फिर ढग के कपडे पहन कर क्या करूँगा। शास्त्री जी ने गम्भीर से गम्भीर समस्या को इतनी समझ-दारी से सुलझाया कि किसी को उनसे कोई शिकायत नही रही। भाषा की समस्या, सूबे की समस्या, खाद्य समस्या, विद्रोही नागाओ की समस्या, वियतनाम की समस्या आदि। इस प्रकार उन्हे कई कठिन परीक्षाओ मे बैठना पड़ा, परन्तु वह किसी भी परीक्षा मे असफल नही हुए। पाकिस्तान के सीमा-विवाद पर शास्त्री जी का कडा रुख, अमरीका की यात्रा रद्द करके जानसन को करारा जवाब, ब्रिटिशसरकार की आलोचना, आदि कई महत्वपूर्ण मामलो को उन्होने जिस ढग से सुलझाया उससे लोगो की यह धारणा भी बनी कि शास्त्री जी देखने मे कमजोर है, पर मन के शेर है। उन्होने अपनी सादगी के कारण भारत के प्रत्येक वर्ग का मन मोह लिया। जनता के सामने खडे होकर खुले दिल से वे सारी राज की बाते बता देते, जैसे वह जनता से कुछ भी छिपाना न चाहते हो।

विरोधी दलो का उनसे विरोध नही था। उनका एक ही सकल्प था कि भारत को एक सूत्र मे बाँधा जाय। भारत को एकता के सूत्र मे बाधने के जिस यज्ञ मे शास्त्री जी ने इतनी विराट और महान् पूर्णाहुति दी, यदि आज उसी यज्ञ मे देश की सम्पूर्ण साम्प्रदायिकता दग्ध हो जाय, समस्त सकीर्णता और स्वार्थान्धता नष्ट हो जाय, तो समझिए कि शास्त्री जी का बलिदान सार्थक हो गया है। शास्त्री का जीवन गाधी जी की तरह त्याग का रूप था। उन्हे किसी शक्ति, किसी पद, किसी पदवी, किसी दौलत या किसी यश का लालच नही था। इसीलिए उन्होने एक रेल-दूर्घटना मात्र पर इसलिए अपना त्यागपत्र दे दिया कि उस दूर्घटना के लिए वह भी अशत: उत्तरदायी हैं।

मेरा आखिरी प्रणाम

लालबहादुर शास्त्री की शव-यात्रा में जिन लोगों ने भाग लिया उनमें से एक मैं भी था। शोकातुर जनता की भीगी पलको को देखकर ऐसा लगा कि भगवान ने हमारा नेता हमसे इतनी जल्दी छीन कर अच्छा नही किया। जनता के उदास चेहरे और सिसकती हुई आहो से ऐसा लगा कि भारतीय जनता मन ही मन यह स्वीकार कर रही है कि हम अनाथ हो गये है। लालबहादुर शास्त्री ने भारत रूपी मंदिर मे 'शाति की मूर्ति' की केवल डेढ़ वर्ष ही पूजा की कि विधाता ने पुजारी की पूजा से प्रसन्न होकर उसे अपने यहाँ बुला लिया। लोकतंत्र के इस उद्यान को शास्त्री जी ने केवल १८ मास तक सींचा, पर जब उससे सुगध आने लगी और फल-फूल लगने लगे तो भगवान ने उस माली को ही उठा लिया। जनता अपने रक्त के आँसुओं से अपने नेता को श्रद्धांजलि अर्पित कर रही थी। मानों बिना चिल्लाये और शोर मचाये चिता के पास बैठे पडितों से यह कह रही हो कि ए पडितों, थोड़ी देर के लिए तो रुक जाओ। इस पुण्यात्मा को एक बार चरण-धूलि तो ले लेने दो, पर नहीं, यह आस भी बहुत कम लोगों की पूरी हुई। हाँ, उनमे से बहुतेरों ने उस पुण्यात्मा के अतिम दर्शन अवश्य कर लिये। शास्त्री जी के अन्तिम दर्शन। वह पुण्यात्मा मुंह से तो कुछ नही कह रही थी, पर बिना कहे भारत की उदास जनता से यह पूछ रही थी कि मैने कहीं कोई भूल तो नही की और यदि की हो तो मुझे माफ कर देना। नेहरू जी ने जो पताका मेरे हाथ में थमाई थी, मैने उसे झुकने नही दिया है। अब यह पताका मै तुम्हारे हवाले किये जा रहा हूँ। तुमसे मेरा इतना निवेदन है कि यह पताका कभी झुकने न पाय।

वह चेहरा मैने भी देखा। दो बूंद आँसू भी मैने गिराये और हाथ जोड़कर मैने भी कहा—"शांति के सेवक को मेरा आखिरी प्रणाम।"

लड़ाई से समस्याएं सुलझती नहीं, और पैदा होती है, इससे सुलह-समझौते में बाधा है। शाति के वातावरण मे ही आपस के मतभेद दूर किये जा सकते है।

—लाल बहादुर शास्त्री

हरिदत्त शर्मा

ताशकन्द में ऐसा फूल अब तक न खिला होगा

रात के तीसरे पहर टेलीफोन की घण्टी वजी और देर तक बजती रही। मैं जगा और टेलीफोन के दूसरे छोर से पता चला कि शास्त्री जी इस ससार से चल बसे। यह एक वाक्य ही मुझे मर्मान्तिक पीडा दे गया। मुझे लगा कि मेरा रोता हुआ दिल ताशकन्द मे है और उसके एक कक्ष मे शास्त्री जी सदा के लिए सोये पडे है। यह भी विचार उठ आया कि अव क्या होगा? देश की नाव का कौन खेवनहार बनेगा? मैं इस वेदना मे डूवा हुआ था कि घर के दूसरे लोग भी जगकर इसी वेदना मे डूबकर हतप्रभ हो गये। जगकर शायद वेदना ही मिलती है।

रात सुबह मे वदल गयी और सुबह दोपहर मे। सूरज की गर्मी के साथ-साथ यह समाचार, नसो को ठण्डा कर देने वाला, सूरज को तपिश से भी ज्यादा तपाने वाला यह समाचार, सारी दुनियाँ मे आग को तरह फैल गया। क्या मेरा घर, क्या पड़ोसी का घर, क्या दफ्तर और क्या दिल्ली की सड़कें, सभी इस समाचार मे बँधती चली गयी और मैने देखा कि लाखों आदमी पालम हवाई अड्डे की तरफ जा रहे है और आदमियो की कतार शास्त्री जी के निवासस्थान दस जनपथ को जनाकुल बनाती चली जा रही है। आवाल-वृद्ध, नर-नारी सब चलते चले जा रहे है, जैसे सबने चलते रहने का औपनिपद मन्त्र हृदय से ग्रहण कर लिया हो। पालम हवाई अड्डे पर 'शास्त्री जी' आये और अपने अतिम दर्शन देते हुए अपनी कोठी पर चले गये। वह क्या नही रह गया था, जो कोठी पर रुदन था, हाहाकार था शोक था, और वे दो आँखे तो विल्कुल पथरायी हुई थी। वे माँ की आँखे थी। मा कैसे यकीन करती कि उसका वेटा इस दुनिया से चला गया है। माँ अपने वेटे की मौत अपनी आँखो से नही देखती, वह वेटे से पहले इस दुनिया से चली जाती है, लेकिन बेटा पहले जा चुका था और यही अचरज, यही शोक उन आँखो मे था, आँखे पथरायी थी!

इस मा के साथ-साथ जनता रूपी मा भी अजीव परेशानी मे खोयी थी। समझ मे न आता था कि आखिर शास्त्री जी को हुआ क्या? कही किसी ने कुछ दे तो नही दिया? खुशी के वातावरण मे उन्हे दिल का दौरा क्यो पड़ता? अय्यूब के साथ उन्होने सुलहनामे पर दस्तखत किये थे, इस उप महा-द्वीप को जनता को राहत और खुशी का सदेश दिया था, वदनुमा लड़ाई की जड़ो पर शान्ति की कुल्हाड़ी चलायी थी। अमन की रोशनी को उजागर करते-करते आखिर वह चिराग खुद जल कैसे गया? दर्रा हाजीपीर और तिथवाल के काटे इस सुलह के गुलाव को हाथ मे लेते हो उनके दिल मे तो कही न जा चुभे! अय्यूव के साथ खुदा हाफिज वनाकर उन्होने खुशियो की वेल वोयी थी, फिर ये नाखुदाई का जहरीला मौत का काटा उनके कहाँ से आ लगा? सात दिन तक वह ताशकद मे मनोवैज्ञानिक युद्ध वड़ी

कुशलता के साथ लड़ते रहे, तब तो कुछ भी बाल बांका न हुआ और इस लड़ाई में जब उन्होंने जीत पा ली तो जिन्दगी उनके कैसे आडे आ खड़ी हुई ? शंकाएं होती है, लेकिन इनसे क्या आता-जाता है। इनका उत्तर कौन दे ? मौत हकीकत है और मौन को कौन खोले ? मौत आती है, पदार्थ जलकर पदार्थ मे समा जाता है और ज्योति ज्योति मिल मे जाती है। मेरे सामने, सबके सामने अब शास्त्री जी नही है, है तो उनका नाम है सिर्फ नाम ! यह भी कैसा व्यग्य है !!

नाम उनका अमर हो गया है और वह भी १८ महीनो में ही। यह भी एक करिश्मा ही है। जब वे प्रधान मत्री बने ही बने थे तो लोग उनको देखकर हँसते थे। उनका छोटा कद दुनिया के कद्दावर नेताओ को समझ मे मजाक ही पैदा करता था, लेकिन वह मजाक देखते ही देखते न जाने कहाँ काफूर हो गया और वह छोटा कद लोगो की निगाहो मे आसमान को छूता हुआ नजर आने लगा। इस चमत्कार के मूल मे दौलत भी नहीं हो सकती, क्योकि दौलत उनके पास थी कहाँ ? सर से बस्ता बांध कर वे गगा में कूद पड़ते थे, क्योकि मल्लाह को वे दो पैसे भी नही दे सकते थे। कोई बहुत बड़ा सरपरस्त इन दिनो उनके सर पर भी न था जिसके सहारे वह नाव से जा सकते, या कद्दावर हो सकते।

काम और नाम के लिए शायद ये बहुत जरूरी चीजे नही है। अगर हो भी, तो शास्त्री जी के यहां तो वे थी ही नहो। गरीबो के देश और उसके सघर्ष ही उनके चारों ओर थे। शायद जो इन्हे ओढ लेता है, झेल लेता है, वह कोई सिद्धि पा लेता है। जिन्दगी के सघर्षों में और बाद को हिन्दुस्तान की लड़ाई के संघर्षो मे उन्होंने यह सिद्धि पा ली थी। यह सिद्धि भी मोज नही देती, आनन्द नही देती, देती है तो महज काम देती है और शास्त्री जी बस काम करते चले गये। काम ही उनका जीवन हो गया और काम ही उनका जीवन-दर्शन। काम ही उनकी दिलचस्पी हो गयी और काम ही उनका हौसला। इसलिए जब पाकिस्तान ने हिन्दुस्तान पर लड़ाई थोपी तो शास्त्री जी दिलचस्पी और हौसले से लड़ने लगे और जब कोसीजन ने सुलह की बात उठायी तो शास्त्री जी दिलचस्पी और हौसले से शान्ति के अभियान मे जुट गये। जूस्तजू और लगन सफलता देते है और वह सफलता उन्हे मिली। ताशकद मे रक्षामत्री चह्वाण से मौत की रात को उनका यह अन्तिम वाक्य इस सिलसिले में क्या प्रमाण नही है—"हमने बहादुरी के साथ लड़ाई लड़ी थी और अब उसी बहादुरी के साथ शान्ति के लिए भी लड़ेगे।" शास्त्री जी की यह बहादुरी शास्त्री जी सरीखे लोगो को ही मिलती है। ऐसा बहादुर हमेशा तनाव मे रहता है और साथ ही उस तनाव से ऊपर भी। यो ही बहादुरी से लड़ते-लड़ते वह गुलाब के फूलो के शहर ताशकन्द मे जा पहुँचा और खुद गुलाब के फूल की तरह सुर्ख हो गया। ताशकद खूब फूला और खूब महका ! और आखिर हवा, पानी और धूप के खतरे उठाकर गुलाब भी तो उस पूर्ण यौवन मे आता है जबकि वह पूरा खिल जाता है, उसकी पखुड़िया पूरी चमक-दमक मे आ जाती है। लेकिन इस उत्फुल्लता मे वह खील-खील होने के लिए भी तैयार रहता है। पूरी तरह से खिला हुआ गुलाब का फूल बहादुरी के चरमोत्कर्ष मे होता है और इस दौरे मे जिन्दगी का चला जाना भी उसके लिए मात्र खेल होता है। गुलाबी नगर ताशकन्द में भारत का यह गुलाब जिन्दगी के उसी दौरे में आ गया था। वहाँ वह मौत के झोके से बिखर गया, शान्ति की गन्ध बिखेरते हुए मिट्टी मे, जो हर फूल के लिए अन्तिम सत्य है। लेकिन यह भी सत्य है कि ताशकंद की मिट्टी में ऐसा गुलाब अब तक न खिला होगा !!

इस गुलाब के फूल का यह काम गुलाबों के सबसे बडे मद्दाह जवाहरलाल नेहरू की वसीयत

के मुताबिक ही हुआ। दो साल पहले जब नेहरू ने उन्हें दुबारा अपने मन्त्रिमण्डल में लिया था तो कहा था—"शास्त्री जी, तुम्हे मेरा काम सभालना होगा।" नेहरू का काम शान्ति का काम था, सुलहो-अमन का काम था, और उस गुलाबो शहर मे शास्त्री जी ने, गुलाब वरो शास्त्री जी ने, नेहरू का काम सभाला और खूब सभाला। शान्ति की खोज मे वे सदा के लिए शान्त हो गये, शान्तिमय हो गये। दिल के बहलाने के लिए तो यह ज्ञान-तर्क ठीक है, लेकिन ताशकद मे क्या कम गुलाब रह गये थे, जो यह गुलाब वही पर सदा के लिए रह गया।

लोग कहते है कि शास्त्री जी बड़े सादा थे, सादा होने के अलावा वे और हो भी क्या सकते थे! लोग कहते है वे बडे नेक थे, नेक-कहते है वे इन्सान थे, इन्सान के अलावा और हो भी क्या सकते थे? लोग कहते है कि वह बड़े विपद्धीर थे, विपद्धारो के अलावा वह और हो भी क्या सकते थे? लोग कहते है कि वे गरीब-हमदर्द थे, गरीब-हमदर्द के अलावा वे और हो भी क्या सकते थे? लोग कहते है कि वे वचन-कृपण और कर्मशूर थे, वे इनके अलावा और हो भी क्या सकते थे? जिसकी जिन्दगी की मुस्कारहट घायल होकर भी हसना जान ले, जो मुसीवत को जिन्दगी की दौलत मे तब्दील करना जान ले, उसमे ये गुण सहज भाव से ही आने लगते है।

यह बहुधा कहा जाता है कि जो घर का होता है, वह बाहर का नही हो सकता; और जो बाहर का हो जाता है, घर का नही रहता। शास्त्री जी घर और बाहर – दोनो के थे। उनका भरापूरा-परिवार और उनका राजनीतिक जगत – दोनो उनके दाये-बाये पहलू थे। घर के छोटे बच्चो से लेकर बाहर के दिग्गजो तक उनका व्यवहार चलता था, सरल स्निग्ध व्यवहार। भारवाही भाषा मे अगर कहा जाय तो यह सस्कृति की सबसे बड़ी उपलब्धि है, मन-मस्तिष्क का ऊँचे से ऊँचा उत्कर्ष है। कहते हैं कि इसे पाने के लिए बड़ा तप करना पडता है। गलकटो की इस दुनिया मे उन्होने यह सिद्धि कैसे पायी? घावो मे वे यह मधुर मुस्कान कैसे ढूँढ कर ले आये? उदारता के इस महासागर को कैसे उन्होने अगस्त्य की तरह अपने मे समा लिया? इसका उत्तर वे खुद ही थे, उनकी अपनी जिन्दगी ही थी। विचारशक्ति, सहनशक्ति और धैर्य से परिपुष्ट कर्मशक्ति उनमे एकाकार हो गयी थी। यह महान् उपलब्धि दम्भ से एकदम वचित थी और विनय से पूरी तरह सिचित। इसी स्थल पर वे भारतीय थे, पूर्ण भारतीय! भारत का अध्यात्मवाद उनका अन्त स्रोत था और इसी स्रोत के जल से उनका मन और उनकी बुद्धि अमल-धवल रहते थे। इस भाव की तपश्चर्या अन्दर ही अन्दर होती रहती थी, बाहरी दिखावा उसमे कही नही आता था। उनकी जिन्दगी का फूल गुलाबी फूल, मन्द-मन्द-मुस्काता फूल अपने पादप की जड़ो से ओज और शक्ति लेकर स्वत ही खिलता रहता था।

वह फूल अब नही है! भारत का मानस इस नियति पर रोता है! वैसे तो जो आता है, सो जाता भी है, लेकिन जो मुस्करा कर जाता है, वह रुला कर जाता है।

बांकेनन्दन प्रसाद सिन्हा

भारत अचानक जड़ हो गया

जनपथ अकस्मात्, जड हो गया, एक भयानक मनहूस रात की जडता से, दुर्दैव की दुर्दमनीय कठोरता से। एक हृदय-द्रावक असमय की खबर ने जनपथ को जड़ बना दिया। जनपथ पर अवस्थित एक निवास पर, नही सम्पूर्ण भारत पर एक भयानक वज्रपात हो गया। जनपथ जड़ हो गया ; जननेता-विहीन हो गया।

ग्यारह जनवरी की वह मनहूस रात। कराल काल के तरकश से विष-बुझा तीखा तीर छोड़ने वाली वह मनहूस रात! कितनी मनहूस थी वह काली-कलूटी रात ? जिसने जन-जन का हृदय छेद डाला, जिसने ससार की उन तमाम लोगो की छाती बींध डाली जो विश्व-शान्ति और जन-कल्याण की प्रतिमूर्ति हमारे जन-नेता की ओर आशा भरी दृष्टि से देख रहे थे। सचमुच वह रात कालो नागिन बन कर हमे डसने आई थी।

और जन-नेता का जनपथ निवास! अभी-अभी तो उन्होने टेलीफोन पर पत्नी, पुत्रों और दामाद से बात की थी। ताशकद से काबुल होते हुए दिल्ली आने की सूचना दी थी उन्होने। लेकिन, उस मनहूस रात को एक पारिवारिक सूचना भी बरदाश्त न हो सकी। उसने भयानक परिहास किया। धोखेबाजी की। उसने हमें लूट लिया, कुछ घण्टे पहले की बातचीत को अपनी-काली चादर से ढक दिया। उसकी कालिमा की डोर पकडे एक काली खबर पहुँची। श्री लाल बहादुरशास्त्री इस ससार मे नही रहे। जनपथ जड़ हो गया।

भव्य राष्ट्रपति-भवन ने भी इस हृदयद्रावक काल-सदेश को सुना और स्तब्धता तथा खामोशी के वातावरण मे डूब गया। कालिमाच्छन्न रात की खामोशी काट खाने लगी। लेकिन, उस मनहूस रात की खामोशी के बावजूद भारत के जन-जन तक यह खबर बिजली की तरह सम्पूर्ण राष्ट्र मे फैल गई। सारा राष्ट्र जड़ हो गया। सोये मनुष्यों को भयानक सपनो ने जगा कर जड बना दिया। जागते ही दुर्दैव की इस काली करतूत को सुना, सब जड़ हो गये।

किसने पहली बार विश्वास किया ? किसी ने नहीं, न देशवासियों ने, न संसार ने। ऐसा भी क्या हो सकता है ? अभी-अभी शाम को उन्होने विश्व को शान्ति-सधि की देन दी थी। उन्होने विश्व को बताया था कि शान्ति की ज्योति जलती रहेगी—लेकिन, शान्ति की ज्योति जलाये रखने वाली ज्योति आप ही आप बुझ गई। लेकिन नही—

> नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि, नैनं दहति पावकः।
> न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः॥

सच तो है आत्मा अमर है, वह शाश्वत है।

लेकिन वह काया अब आत्मा से अलग हो गई तो जन-जन के मन मे वस चुकी थी, जो विश्व-मन को मोहे हुए थी और जो युग-युग तक विश्व-मन मे अकित रहेगी।

कैसा परिहास है दुर्दैव का ? हमारा जन-मन का नेता, जिसने हर वर्ग, हर अवस्था और हर परिस्थिति को अपनी अद्भुत देन से अलकृत किया था, जिसने अपने राष्ट्र के साथ-साथ विश्व को अपनी कर्त्तव्यपरायणता, सकल्प और मानवता की भावनाओ का सदेश दिया था, अचानक, असमय हमसे छिन गया। एक अति सामान्य परिवार का लाल, सघर्षों से जूझ रहे मां-वाप का दुलारा, एक दिन सम्पूर्ण राष्ट्र का लालवहादुर वना और उसने ससार के ऐसे अनेक परिवारों को यह सतोष दिया कि तुम अपने सघर्षो और अभावो से जूझ कर भी ऐसे राष्ट्रनायक का निर्माण कर सकते हो, जो एक राष्ट्र का नही विश्व के जन-मन का दुलारा बन सकता है। और कर्मयोग का ऐसा साधक ससार के लाखो परिवारो से विलग हो चुपचाप चला गया। एक अध्यापक पिता श्री शारदाप्रसाद अपने नन्हे को ड़ेढ़ वर्ष की अवस्था मे ही यतीम वनाकर ससार से चले गये थे। माता श्रीमती रामदुलारी देवी जो आज भी इक्यासी वर्ष की अवस्था मे जैसे सव कुछ देखने के लिए मौजूद है। उन्होंने देखा, ससार ने देखा कि एक पितृहीन वालक अभी तो अपनी विधवा मा की छत्र-छाया मे, उसको गरीबो और अभावो की दुनिया मे जीकर भी इस संसार के इतिहास में स्वर्णाक्षरो मे अपना नाम लिखाने का अधिकारी वना गया और अब ससार का कोई भी यतीम वालक, पितृहीन वालक, सघर्ष से जूझने वाला वालक महान् वनने का सपना देख सकता है, क्योकि सघर्षो के विजेता श्री लालवहादुर शास्त्री जी ने उनका मार्ग-दर्शन कर सिद्ध कर दिया है कि असम्भव कुछ नही है। और अब सिद्ध कर वह चला गया और सवका साक्ष्य करने वाली माता रामदुलारी देवी पर आज क्या गुजर रहा है ? शायद दुर्दैव का कलेजा भी पिघल जायगा।

लालवहादुर जब विद्यार्थी थे, तब उन्होने किन अभावो का सामना नही किया था ? खाना-कपड़ा, किताव और यहा तक कि मार्ग-व्यय के लिए भी पैसो का अभाव था उन्हे। पतित-पावनी गगा की पावन धारा को अपने लघु हाथो से तैर कर पार करने वाले लालवहादुर शास्त्री के जीवन ने ससार के प्रत्येक विद्यार्थी को कौन-सी शिक्षा नही दी है ? उन्हे कौन-सी प्रेरणा से नही भरा है ? अब ससार का कोई भी विद्यार्थी अपने अभावों और संघर्षो से घवराएगा नही, उनसे विचलित नही होगा, वल्कि उनसे जूझेगा सकल्पो के साथ, दृढता के साथ। उनके सामने विद्यार्थी लालवहादुर को सफलता साधना का उदाहरण होगा। और अब वह ऐसा उदाहरण वन कर रह गया ससार के लिए।

सघर्षों से जूझते हुए सरस्वती की साधना कर रहे विद्यार्थी लालवहादुर शास्त्री ने वाराणसी मे एक आह्वान सुना था। राष्ट्र-निर्माता महात्मा गाधी का आह्वान—"भारत माता दासता की वेडियो मे जकड़ी है। जरूरत है नौजवानो की, जो इन वेड़ियो को काटने के लिए सव कुछ वलिदान कर दे।" सोलह-सत्रह वर्ष का किशोर देश माता की गुलामी की जंजीरो को काटने के लिए ,स्वतन्त्रता-सग्राम मे कूद पड़ा। उसने अपना सर्वस्व वलिदान किया। वन्दी जीवन की सारी यातनाएँ झेलीं और भारत का ही नही ससार के सभी किशोर नौजवानो का आदर्श वन गया। युग-युगान्तर तक ससार के नौजवानो और किशोरो को प्रेरणा देने वाला कर्मयोगी आज इतिहास वन चुका है।

डा० भगवानदास, आचार्य नरेन्द्रदेव और डा० सम्पूर्णानन्द जैसे विद्वान् अध्यापकों के शिष्य लालबहादुर शास्त्री संसार के तमाम अध्यापको के लिए प्रेरणा बन गये है, क्योकि उन्होंने उनसे जो कुछ पाया उसे भव्यतम रूप में साकार किया। ससार का कोई भी अध्यापक आज शास्त्री जी के अध्यापको से स्पृहा कर सकता है और साथ ही प्रेरणा लेगा कि वह भी कोई ऐसे नवरत्न का निर्माण करे और ऐसे नवरत्नों का आदर्श आज प्रेरणा बन चुका है।

जन-जन की सेवा करने वाले युवक ने देश-सेवा, त्याग, ईमानदारी, कर्मठता और सादगी को अपने जीवन का मूलमत्र बना लिया था, अपने वैवाहिक जीवन मे उन्होने अपनी पत्नी श्रीमती ललिता शास्त्री से वचन लिया था कि वे उन्हे स्वतन्त्रता सग्राम में भाग लेने से—देश-सेवा करने से कभी नहीं रोकेंगी। और उस सती ने सच्ची अर्द्धांगिनी के रूप मे उन्हे देश—सेवा से कभी नही रोका, सदा उनका सहयोग किया। लेकिन काश! वे आज उन्हे रोक पाती। सती सावित्री ने सत्यवान के सम्मुख यमराज को फटकने नही दिया था, क्योकि वह सत्यवान के साथ थी। पर हाय रे दुर्दैव, तुमने सचमुच मे यदि तुम मे हिम्मत होती तो श्रीमती ललिता शास्त्री के सम्मुख अपना बल तुमने तो सावित्री से सत्यवान को तब छीन लिया जब सत्यवान अजग था, जब वह दे विश्व-शान्ति के लिए, अपनी सावित्री ही नही, अपने समस्त देशवासियो से दूर, बहु और शायद इसीलिए जनपथ मे वह सती क्षण-क्षण जड़ हो जाती, क्योकि दुर्दैव के ने सबको जड बना दिया। सारा वातावरण अमोघ जडता में डूब गया।

मामलों के मन्त्री स्वर्णसिंह के हृदय मे उस समय कोंध रहा होगा, जब वे ताशकन्द से लौट कर भारत आये कि वे क्या लेकर गये थे, क्या वहाँ पाया और क्या लेकर लौटे ?

अपार जन-समूह पालम हवाई अड्डे पर उपस्थित। प्रधान मन्त्री के परिवार के सदस्य दु खो के पारा-वार मे डूबे हुए और सारा जन-समुदाय भी तो सताप सागर मे डुबाता-उतराता हुआ। कैसा हृदय-विदारक दृश्य था। वे कहा स्वागत की तैयारी करते होते सब, और गम मे डूबे हुए थे वे ही। लम्बी अनुशासनबद्ध कतार, उन पर नागरिको की जिनके हृदय मे उन्होने अपना अन्यतम स्थान बना लिया था, दर्शनो के लिए पालम के दस जनपथ तक लगी हुई थी। लाखो की भीड थी। जन-समूह का सागर उमडता आ रहा था चारो ओर से। और इस सबके मध्य चिरनिन्द्रा मे लीन प्रधान मन्त्री शास्त्री पालम से दस जनपथ की ओर आ रहे थे, राजकीय सम्मान के साथ। कैसी विडम्बना है ? सब कुछ उलट गया। दुर्दैव के क्रूर हाथो ने सबकी आँखो मे उगली गडा कर आँसू बहा दिया। रोती आँखो से अपने प्यारे प्रधान मन्त्री के दर्शनो के लिए लोग उमडते रहे। रात की भयानकता और ठण्ड का प्रकोप भी उमडते हुए जन-समुदाय को रोक नही सका। रात भर लोग अपने जन-नेता के अन्तिम दर्शनो के लिए आते रहे। ताता बधा रहा, अन्तिम झलक पाने के लिए लालायित जन-समूह का। सारी रात और दूसरे दिन दस बजे दिन तक।

बारह जनवरी दिन के दस बजे अन्तिम यात्रा आरम्भ हुई और एक बार फिर जनपथ बिलख उठा, जन-मानस आकुल हो उठा। पेड-पौधे, धरती-आकाश और जड-जगम सब दु.ख के सागर मे डूब गये। अन्तिम यात्रा के साथ लाखो की भीड़ उमडती चली गई। वहाँ जहाँ देश के दो महान् सपूत पास-पास पहले से चिर-निद्रा मे सोये है। विश्व-वन्द्य बापू राजघाट की समाधि से और जननायक जवाहरलाल नेहरू शान्तिवन से अपने अनुयायी और उत्तराधिकारी को चिर-निद्रा मे सोये देखते रहे। जनता—मातम के आलम मे डूबी हुई जनता अपने उन दो महान् नेताओ के निकट तुरन्त के बिछुडे स्वर्गीय प्रधान मत्री का शव लिये आ पहुँची। लाखो लोग अपने प्यारे प्रधान मन्त्री की अन्त्येष्टि मे शामिल हो रहे थे। सब की आँखे गीली, देश के नागरिको और विदेशी राजनयिको सबका हृदय भरा हुआ। लेकिन नियति के नियमो मे सब बँधे थे। सब विवश थे। वह सब देखने के लिए जिसे देखते हुए उनका हृदय विदीर्ण हो रहा था।

आखिर वह समय आ गया, जब फूल से कोमल शरीर को अग्नि की ज्वाला मे सौप दिया गया। १२ बज कर ३२ मिनट पर समस्त विधि-विधानो के साथ श्री हरि जी ने अपने पिता की चिता को अग्नि के हाथो सौप दिया। चन्दन की चिता धधक उठी और अपने से भी अधिक यश की सुगन्ध फैलाने वाले श्री लालवहादुर शास्त्री के भौतिक शरीर को चन्दन के टुकडो ने समाप्त कर दिया और स्वय भी भस्मसात् हो गये।

और 'जय जवान—जय किसान' का नारा देकर सम्पूर्ण देश के जन-निर्माण मे सन्नद्ध रहने वाले प्रधान मन्त्री का पार्थिव शरीर का शेष भी न रहा। विश्व को शान्ति की सन्धि देने वाले महापुरुष की भौतिक देह का कण-कण मिट गया और सारा वातावरण जड हो गया, जन-जन जड़ हो गया, जनपथ जड़ हो गया। लेकिन नही, वह ज्योति अमरज्योति मे मिल कर दिव्य बन गई है और युग-युग तक हमे, हमारे राष्ट्र को, विश्व को आलोकित करती रहेगी।

●

कमलनयन बजाज

देवपुरुष

'नेहरू के बाद कौन ?' प्रश्न का उत्तर जानने के लिए ससार उत्सुक था। यह महसूस किया जा रहा था कि देश मे राजनीतिक असुरक्षा और आर्थिक सकट व्याप्त हो जाएगा। किन्तु शास्त्री जी ने देश को नैराश्य और शून्यता से निकाल कर जनता मे सुरक्षा, शक्ति और गर्व की भावना भरी।

ससार मे महान् प्रधान मन्त्री हुए है। बहुत से महान् व्यक्ति भी प्रधान मन्त्री हो चुके है। किन्तु वर्तमान शताब्दी मे किसी भी देश मे ऐसा प्रधान मन्त्री पाना कठिन होगा जो भलेपन, सादगी और सज्जनता मे लालबहादुर जी से बढ़कर हो।

वे सामान्य जनता के व्यक्ति थे और सदा उन्ही के रहे। नेहरू जी की मृत्यु के बाद एक निजी वार्तालाप मे श्री मोरारजी देसाई जैसे व्यक्ति ने लालबहादुर जी की तुलना स्वय से करते हुए कुछ इस प्रकार के शब्द कहे थे :

"लालबहादुर जी उसी प्रकार सोचते है जिस प्रकार मै सोचता हूँ और काम भी उसी प्रकार करते है जैसे मैं करता हूं। किन्तु जहाँ मुझे 'नही' कहना होता है वहाँ लालबहादुर जी केवल मुस्करा भर देते है। मै पुरुष हूँ, किन्तु लालबहादुर जी देवपुरुष है। उनका देवत्व सदा उनमे एक महान् गुण बना रहा, हमारे राष्ट्रीय जीवन के संकटकाल मे तो और भी विशेष रूप से।

विपक्षियों का योग

ससदीय लोकतन्त्र मे सरकार के प्रधान मन्त्री की हैसियत से उन्हे विपक्ष को भी सन्तुष्ट करना पड़ता था। यद्यपि वे अपने विचार बिना किसी डर, पक्षपात या प्रभाव के बनाते थे, किन्तु विपक्षी के विचारों को भी वे बड़े धैर्य से सुनते तथा उनकी दृष्टि से भी समस्या के सभी पहलुओं को समझते थे, जिसके फलस्वरूप विपक्ष के लाग यह महसूस करते थे कि उनसे भी सलाह ली गई तथा इस समस्या के समाधान मे उन्होने भी अंशदान किया। इस प्रकार वे अक्सर विपक्ष के डक को तोड़ने और उसे लगभग निरस्त्र करने मे सफल होते थे।

यद्यपि वे अपने विचारों मे दृढ थे तथा अपनी स्थिति से हिलने को तैयार नही होते थे, किन्तु वे विनम्र इतने थे कि वे किसी भी सूत्र से व्यक्त किये जाने वाले उन विचारों को सुनने के लिए तैयार रहते थे जिनमे जरा भी बल या सच्चाई होती थी। उनकी स्थिति, पूर्व धारणाएं या भावनाएं उन्हें

तर्क के प्रति उदासीन नहीं बनाती थी। वाद-विवाद में सौहार्द का वातावरण रहता था और विपक्षी सदस्यो मे इस प्रकार की भावना पैदा हो जाती थी कि अन्तिम निर्णय मे उनका भी योगदान है।

लालबहादुर जी भगवान् हनुमान की तरह थे जो शक्तिशाली कुम्भकर्ण से लड़ते हुए पर्वत को भांति अडिग और वज्र के समान कठोर थे। बहस के समय मैने उन्हे अपनी बौद्धिक श्रेष्ठता का परिचय देते, और जहाँ आवश्यक बातो का सम्बन्ध होता वहाँ शक्ति और दृढ़ता दिखाते, भी देखा। किन्तु जहा विवरणो और प्रतिक्रिया या मानवीय दृष्टिकोण का सम्बन्ध था वे वीर हनुमान की तरह अपना लघुरूप रख लेते थे, जिसे कुम्भकर्ण पकड नही सकता था। परिस्थितियो के अनुसार अपने को ढाल लेने की उनमे अद्भुत क्षमता थी।

जूता और कालीन

लाल बहादुर जी की स्थिति, शक्ति और सम्मान उनके स्वभाव, दृष्टिकोण तथा रहन-सहन के ढग को प्रभावित नही कर सकते थे। जिस कमरे मे वे रहते थे वह बहुत ही छोटा था। फर्नीचर के नाम पर उसमे शायद ही कोई चीज मिले। पहनने के लिए कपड़े बहुत ही कम थे। प्राचीन काल के ऋषियो की भॉति वे अपरिग्रही थे। दिखावे से बहुत दूर। एक बार सर्दियो मे उन्हे किसी ने मोजे पहनने की सलाह दी। किन्तु उनके पास केवल एक जोडी जूता था। और यदि वे खद्दर के मोजे पहनते तो जूतो के बढ जाने का डर था जिसके बाद मोजो के बिना, उनका इस्तेमाल करना सम्भव न होता। किन्तु जब उनके एक रिश्तेदार उनकी आवश्यकता महसूस करके जूतो की एक जोडी ले आए तो लालबहादुर जी उन पर नाराज होने लगे कि यह सब खर्च वे कैसे वहन करेगे ? बड़ी कठिनाई से लालबहादुरजी को तैयार किया जा सका।

एक बार उनके परिवार के किसी सदस्य ने उनके कमरे मे एक छोटा-सा कालीन बिछा दिया ताकि सर्दी से बचाव हो सके। उन्होने जब देखा तो उसे उठवा दिया और कहा, "यह मै कैसे इस्तेमाल कर सकता हूँ और क्यो करूं जब इसके बिना काम चल सकता है ?"

लाल बहादुर जी का जन्म २ अक्तूबर को हुआ था जो महात्मा गाधी का भी जन्म दिन था। इस बात को उन्होने भरसक छिपाने का प्रयत्न किया। एक बार गाधी जी के जन्म दिन पर स्वर्गीय श्री पुरुषोत्तमदास टडन ने भाषण करते हुए यह तथ्योद्घाटन भी कर दिया। शास्त्री जी वहाँ मौजूद थे। सभा के बाद टडन जी से बोले, "आपने मुझ पर यह अत्याचार क्यो किया।"

लालबहादुर जी उपदेश कभी नही देते थे, वे कर्म मे विश्वास करते थे। उनके जीवन से पाठ सीखा जा सकता है कि कठिन परिश्रम ही आराधना है। शायद ही कोई ऐसा समय हो जो उनका अपना हो। जीवन मे निजी रूप से रहने का अवसर तो उन्हे शायद ही कभी मिला हो और जहाँ तक उनके अपने जीवन का प्रश्न है उन्होने कभी कोई चीज गुप्त नही रखी। उन्होने इतना अधिक परिश्रम किया कि इस प्रक्रिया मे वे अपने प्राण तक दे बैठे।

वी० गोपाल रेड्डी

जनता के नेता

स्वर्गीय श्री लालबहादुर शास्त्री के दाह-सस्कार के तुरन्त बाद दिल्ली के रामलीला मैदान में उन्हें दी गई श्रद्धाजलियाँ पूर्व और पश्चिम दोनो के नेताओ में उनकी लोकप्रियता का अलौकिक प्रमाण रही है। इस श्रद्धाजलि मे रूस और अमरीका, ब्रिटेन, प० जर्मनी, फ्रास, जापान तथा सयुक्त अरब [illegible] का प्रतिनिधित्व वहाँ के महान् व्यक्तियो ने किया। उन्होने उस सरल व्यक्ति के प्रति [illegible] श्रद्धाजलि अर्पित की जो अपने १८ माह के अल्प प्रधान मन्त्रित्व-काल में ही महानता [illegible] गया था।

शिकायत का मौका दिये हुए चतुरतापूर्वक निपटाते रहे। वे सदस्यो को पूरी ढील देते । उनके विचारो को धैर्य से सुनते तथा जहॉ तक सम्भव होता उसे क्रियान्वित करने का प्रयत्न करते। वे समस्याओ के हल मे गाधीवादी पद्धति तथा नेहरू जी के आधुनिक दृष्टिकोण का तालमेल बैठाने का यत्न करते थे।

मुझे उन्हे शान्तिनिकेतन मे विश्वभारती के कुलपति के रूप मे भी देखने का अवसर प्राप्त हुआ, जहाँ उन्होने रवीन्द्र की इस महान् सस्था के प्राध्यापक और कार्यकर्ताओ मे अपने आपको पूर्णत. आत्मसात् कर लिया था। उनकी सरलता तथा विनम्रता ने सभी राज्यो की जनता का हृदय जीत लिया था। अपने सक्षिप्त प्रधानमन्त्रित्व मे विशेषकर भारत-पाक युद्ध के अवसर पर वे जनता के और भी निकट आए। इस मध्य अभूतपूर्व जन-समूह उनके दर्शन करने तथा सुनने के लिए एकत्रित होता। उन्होने अन्ततः सिद्ध कर दिया था कि वे जनता का पूर्ण विश्वास पाने मे सफल हो गए है।

शान्ति और राष्ट्रीय हित

अपने आचरण एव व्यवहार मे वे शत-प्रतिशत एक शान्त पुरुष थे। वे कभी भी कठोर वचन नही बोलते। अपने सहयोगियो की भावनाओ को भी कभी भी आघात नही पहुँचाते। उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व शान्ति के माधुय-स्रोत से आप्लावित था।

मातृभूमि के सम्मान एव अखडता की रक्षा के लिए अपनी सेना को युद्ध विराम रेखा या अन्तर्राष्ट्रीय रेखा पार करने की आज्ञा देने मे वे किञ्चित् भी नही हिचकिचाए। ऐसा करते वक्त वे दुखी थे, पर राष्ट्रीय हित को देखते हुए उन्हे ऐसा करना पडा। उन्होने जनता की भावनाओ को ही साकार किया। भारतीय सेना को उसका खोया हुआ गौरव पुन प्राप्त हुआ और विपुल हर्ष के मध्य उन्होने एक राज्य से दूसरे राज्य का दौरा किया। पर उनके यश का चरम विन्दु १० जनवरी को प्राप्त हुआ, जब कि निराशा भरी स्थिति परिवर्तित हो गई। राष्ट्रपति अयूब खा को शान्ति समझौते पर हस्ताक्षर करने के लिए राजी करवा कर उन्होने अपने शान्ति मिशन मे महान् सफलता प्राप्त की। उन्होने अयूबखा को यह मानने के लिए तैयार कर लिया कि शस्त्र और सेनाए किसी समस्या का हल नही होती, उनसे तनाव और घृणा मे वृद्धि ही होती है जबकि पारस्परिक वार्ता तथा समझौते प्रत्येक को प्रसन्न बनाते है। आज भारत तथा पाकिस्तान की जनता इसलिए प्रसन्न है कि तनाव मे बहुत कुछ कमी आ गई है तथा यदि ताशकन्द समझौते को क्रियान्वित किया गया तो भारतीय उपमहाद्वीप के ६० करोड़ व्यक्ति सामान्य व्यापारिक स्थिति कायम करने, सास्कृतिक आदान-प्रदान तथा सचार एव कूटनीतिक सम्बन्धो की दिशा मे एक नया अध्याय प्रारम्भ करेगे। भारत और पाकिस्तान के मध्य चाहे जो भी मतभेद हो, पर हमे यह नही भूलना चाहिए कि हम एक ही परिवार के है, कुछ ही समय पूर्व विभक्त हुए थे तथा हमने अपने पूर्वजो से एक समान विरासत प्राप्त कर ली है।

महान् परम्पराएँ

प्रायः हम देखते हैं कि जो व्यक्ति महान् कार्य करते है, उसका फल चखने का अवसर उन्हे नही मिलता। गांधीजी ने देश की स्वतन्त्रता के लिए कार्य किया तथा सत्य एवं अहिंसा के सहारे जनता को बीहड़ पथ से गुजरने को तैयार किया। उनके नेतृत्व मे जिन लोगो ने काय किया, उन्हे अतुलनीय

पूर्ण राष्ट्रीय सम्मान के साथ हमने उसी भूमि मे उनका अन्तिम संस्कार किया, जहाँ शान्ति के दो और देवता पहले से ही चिर-निद्रा में मग्न है। लालबहादुर शास्त्री के रूप में भारत का साक्षात् प्रतीक मिला था और इस परम्परा और सस्कृति के अनुरूप में वह अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक भारत के कल्याण में ही रत था। राष्ट्र को अनेक जटिल समस्याओं के समाधान की दिशा में शास्त्री जी प्रयत्नशील ही थे कि पाकिस्तान के आक्रमण से उत्पन्न स्थिति का सामना उन्हें करना पडा। इस कठिन समय मे श्री शास्त्री जी ने देश का सफल नेतृत्व ही नही किया, देश को विजयी बना कर उसकी प्रतिष्ठा और गौरव को इतना वढाया कि संसार शान्तिप्रिय देश के रूप मे ही नहीं, शक्तिशाली होते हुए भी शान्ति की आकांक्षा रखने वाले राष्ट्र के रूप मे भारत को पहचान सका। इस सफल और सुदृढ़ नेतृत्व के कारण समूचे विश्व का ध्यान भारत ने आकृष्ट किया और एशिया मे शक्ति-सन्तुलन की दृष्टि से भारत को एक नया ही स्थान मिला।

जन्म और शिक्षा-दीक्षा

श्री लालबहादुर शास्त्री का जन्म अक्टूबर १९०४ मे उत्तर प्रदेश के वाराणसी जिले में मुगलसराय में हुआ था। उनके पिता श्री शारदाप्रसाद एक स्कूल मे साधारण अध्यापक थे और बाद में उन्होने एक सरकारी नौकरी कर ली। डेढ वष की अवस्था में ही लालबहादुर पर से पिता की छत्र-छाया उठ गयी, तब उनका और उनकी दो बहनो का लालन-पालन का भार उनके नाना पर आ पड़ा। उन्होने श्री शास्त्री की प्रारम्भिक शिक्षा का प्रबन्ध वाराणसी के 'हरिश्चन्द्र स्कूल' में किया। श्री शास्त्री ने इस स्कूल मे केवल सत्रह वर्ष की आयु तक शिक्षा पायी। इसके बाद छात्रो द्वारा स्कूल और कालेजों का बहिष्कार करने की महात्मा गांधी की अपील पर वे भी अपनी शिक्षा अधूरी छोड़ कर असहयोग आन्दोलन मे कूद पड़े और गिरफ्तार कर लिये गये। सन् १९२१ मे जेल से छूटने के बाद वे काशी विद्यापीठ मे प्रविष्ट हुए। इस अवधि मे वे महान् दार्शनिक डा० भगवानदास से प्रभावित हुए। यहीं से उन्होने शास्त्री की डिग्री प्राप्त की। शास्त्री हो जाने के बाद वे फिर सक्रिय राजनीति में आ गये।

दिसम्बर १९२९ मे कांग्रेस के जिस ऐतिहासिक अधिवेशन मे मुकम्मिल आजादी का प्रस्ताव पास हुआ, उसमें श्री लालवहादुर शास्त्री पच्चीस वर्ष के एक नवयुवक के रूप मे उपस्थित थे। किसे यह मालूम था कांग्रेस के इस ऐतिहासिक अधिवेशन का दर्शक किसी दिन स्वतन्त्र भारत का प्रधान मन्त्री होगा।

श्री लालबहादुर शास्त्री ने कांग्रेस के सभी जन-आन्दोलनो मे सक्रिय रूप से भाग लिया। सन् १९२१ से ४२ तक वे सात बार जेल गये। नौ वर्ष से अधिक समय जेल मे बिताया। सन् १९४६ में वे उत्तर प्रदेश विधान सभा मे आ गये और मुख्य मन्त्री के ससदीय सचिव बने, इसके बाद जल्दी ही उत्तर प्रदेश के गृह और परिवहन मन्त्री का कार्यभार सौपा गया, जिस पर वे पांच वर्ष तक रहे।

उत्तर प्रदेश के गृहमन्त्री पद पर कार्य करते हुए श्री नेहरू ने उनकी राजनीतिक सूझ-बूझ को और राज्य का पद छोड़ कर अधिक व्यापक क्षेत्र मे उनसे काम करने को कहा। सन् १९५१ मे स स्वतन्त्र भारत का पहला आम चुनाव लड़ने वाली थो तो एक ऐसे कांग्रेस-नेता की आव-जो सारे देश का चुनाव कार्य का सगठन कर सके। श्री नेहरू ने शास्त्री जी को ही इस कार्य

श्यामलाल शर्मा

शांति का दूत 'शांति की गोद' में

ताशकन्द समझौता पर हस्ताक्षर करने के तुरन्त बाद रक्षामन्त्री श्री चह्वाण से अपने संक्षिप्त वार्तालाप में श्री शास्त्री ने कहा—"जिस तत्परता से हमने अपने देश की रक्षा के लिए संघर्ष किया था अब उसी तत्परता से शान्ति के लिए संघर्ष करना है" यही शब्द श्री शास्त्री के अन्तिम शब्द है जो भारत की आकांक्षा को समूचे विश्व पर व्यक्त करेगे। भारत की भावी राजनीति का मार्ग-दशन भी यही शब्द करेगे। स्वाधीनता मिलने के बाद भारत के प्रथम प्रधान मन्त्री के रूप मे श्री जवाहरलाल नेहरू ने शान्ति-प्रिय देश के रूप मे भारत का समूचे विश्व मे जो सम्मान और प्रतिष्ठा दिलायी, श्री शास्त्री ने अपने सक्षिप्त-से कार्यकाल मे उसे नया हो रूप दिया। उन्होने भारत की शान्तिप्रियता को एक सुदृढ और अपनी रक्षा मे समर्थ राष्ट्र की शान्तिप्रियता का रूप प्रदान किया और अपने जीवन के अन्तिम क्षण मे उसे एक और शानदार मोड़ देकर चले गये।

समझौता के वाद उन्होने ताशकन्द मे ही कहा "यह समझौता कोरा राजनीतिक दस्तावेज नही है" वास्तव मे उन्होने इसे कोरा राजनीतिक समझौता समझ कर ही इस पर हस्ताक्षर नही किये, वल्कि इससे अधिक कुछ मान कर इस पर अपनी स्वीकृति प्रदान की।

भारत की समृद्धि और लोगो की खुशहाली का एक नक्शा श्री शास्त्री के दिमाग मे था और उनके सभी कार्यो मे यह नक्शा कभी धुँधला नही पडा। वही महत्वाकांक्षा उन्हे देश में सामान्य स्थिति लाने को प्रेरित करती रही और इसी आकाक्षा से प्रेरित होकर उन्होने ताशकन्द समझौते को स्वीकार किया। अपने थोड़े समय के शासनकाल मे ही वे अपने उन महान् गुणो और उस कार्यक्षमता का परिचय दे गये जिनकी आवश्यकता देश को इस समय थी और आगे आने वाले वर्ष तक और भी अधिक होती। राष्ट्र को जिस समय जिस चीज की आवश्यकता थी, श्री शास्त्री ने अपने जीवन काल मे ही उसे अपनी ओर से दी, और भारत-पाकिस्तान के हाल हो के सघर्ष के वाद जब राष्ट्र को शान्ति की जरूरत पड़ी तो अब वे ताशकन्द समझौता के रूप मे राष्ट्र को शान्ति देकर स्वयं शान्त हो गये।

सादगी

अपने छोटे कद, साधारण व्यक्तित्व और सादगी मे उन्होने मन और मस्तिष्क मे जो भी चीजे छिपा रखी थी, वे सव हमने आवश्यकतानुसार उनसे ली और इसके वदले मे हमने उन्हे स्नेह दिया।

पूर्ण राष्ट्रीय सम्मान के साथ हमने उसी भूमि मे उनका अन्तिम संस्कार किया, जहाँ शान्ति के दो और देवता पहले से ही चिर-निद्रा मे मग्न हैं। लालबहादुर शास्त्री के रूप मे भारत का साक्षात् प्रतीक मिला था और इस परम्परा और संस्कृति के अनुरूप में वह अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक भारत के कल्याण में ही रत था। राष्ट्र को अनेक जटिल समस्याओं के समाधान की दिशा में शास्त्री जी प्रयत्नशील ही थे कि पाकिस्तान के आक्रमण से उत्पन्न स्थिति का सामना उन्हे करना पडा। इस कठिन समय मे श्री शास्त्री जी ने देश का सफल नेतृत्व ही नही किया, देश को विजयी बना कर उसकी प्रतिष्ठा और गौरव को इतना वढाया कि संसार शान्तिप्रिय देश के रूप मे ही नही, शक्तिशाली होते हुए भी शान्ति की आकांक्षा रखने वाले राष्ट्र के रूप मे भारत को पहचान सका। इस सफल और सुदृढ़ नेतृत्व के कारण समूचे विश्व का ध्यान भारत ने आकृष्ट किया और एशिया मे शक्ति-सन्तुलन की दृष्टि से भारत को एक नया ही स्थान मिला।

जन्म और शिक्षा-दीक्षा

श्री लालबहादुर शास्त्री का जन्म अक्टूबर १९०४ मे उत्तर प्रदेश के वाराणसी जिले मे मुगल-सराय मे हुआ था। उनके पिता श्री शारदाप्रसाद एक स्कूल मे साधारण अध्यापक थे और बाद में उन्होंने एक सरकारी नौकरी कर ली। डेढ वर्ष की अवस्था मे ही लालबहादुर पर से पिता की छत्र-छाया उठ गयी, तव उनका और उनकी दो बहनो का लालन-पालन का भार उनके नाना पर आ पड़ा। उन्होने श्री शास्त्री की प्रारम्भिक शिक्षा का प्रवन्ध वाराणसी के 'हरिश्चन्द्र स्कूल' में किया। श्री शास्त्री ने इस स्कूल मे केवल सत्रह वर्ष की आयु तक शिक्षा पायी। इसके बाद छात्रों द्वारा स्कूल और कालेजों का बहिष्कार करने की महात्मा गाधी की अपील पर वे भी अपनी शिक्षा अधूरी छोड़ कर असहयोग आन्दोलन मे कूद पड़े और गिरफ्तार कर लिये गये। सन् १९२१ मे जेल से छूटने के बाद वे काशी विद्या-पीठ मे प्रविष्ट हुए। इस अवधि मे वे महान् दार्शनिक डा० भगवानदास से प्रभावित हुए। यहीं से उन्होने शास्त्री की डिग्री प्राप्त की। शास्त्री हो जाने के वाद वे फिर सक्रिय राजनीति मे आ गये।

दिसम्बर १९२९ मे कांग्रेस के जिस ऐतिहासिक अधिवेशन मे मुकम्मिल आजादी का प्रस्ताव पास हुआ, उसमे श्री लालबहादुर शास्त्री पच्चीस वर्ष के एक नवयुवक के रूप मे उपस्थित थे। किसे यह मालूम था कांग्रेस के इस ऐतिहासिक अधिवेशन का दर्शक किसी दिन स्वतन्त्र भारत का प्रधान मन्त्री होगा।

श्री लालबहादुर शास्त्री ने कांग्रेस के सभी जन-आन्दोलनो मे सक्रिय रूप से भाग लिया। सन् १९२१ से ४२ तक वे सात वार जेल गये। नौ वर्ष से अधिक समय जेल मे बिताया। सन् १९४६ मे वे फिर उत्तर प्रदेश विधान सभा मे आ गये और मुख्य मन्त्री के संसदीय सचिव वने, इसके वाद जल्दी ही उन्हे उत्तर प्रदेश के गृह और परिवहन मन्त्री का कार्यभार सौंपा गया, जिस पर वे पांच वर्ष तक रहे।

उत्तर प्रदेश के गृहमन्त्री पद पर कार्य करते हुए श्री नेहरू ने उनकी राजनीतिक सूझ-बूझ को पहचाना और राज्य का पद छोड़ कर अधिक व्यापक क्षेत्र मे उनसे काम करने को कहा। सन् १९५१ मे जब कांग्रेस स्वतन्त्र भारत का पहला आम चुनाव लडने वाली थी तो एक ऐसे कांग्रेस-नेता की आवश्यकता थी जो सारे देश का चुनाव कार्य का संगठन कर सके। श्री नेहरू ने शास्त्री जी को ही इस कार्य

का सचिव चुना। उन्हे कांग्रेस का मुख्य सचिव चुना गया और इन चुनावों मे कांग्रेस को जो अभूतपूर्व सफलता मिली उसका बहुत कुछ श्रेय श्री शास्त्री जी के नेतृत्व और उनकी संगठन-प्रतिभा को ही था। सन् १९५२ मे श्री लालबहादुर शास्त्री नयी ससद मे राज्यसभा के सदस्य के रूप मे आये। उसी वर्ष वे केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल मे परिवहन और रेलवे मन्त्री नियुक्त किये गये, लेकिन नवम्बर, १९५६ की एक भीषण रेल-दुर्घटना मे अपनी आत्मा को पुकार पर स्वय अपने को दोषी मान कर उन्होने इस्तीफा दे दिया। इस दुर्घटना मे डेढ सौ आदमी मारे गये थे। इस अवसर पर श्री शास्त्री जी की कर्त्तव्य निष्ठा और उनकी सहृदयता मुखरित हुई और देश के लोग और राष्ट्रीय नेता उनको इस महानता के आगे नतमस्तक हो गये।

फिर मन्त्रिमण्डल में

सन् १९५७ के आम चुनावो मे श्री शास्त्री लोकसभा के लिए चुने गये और सत्रह अप्रेल, १९५७ को परिवहन तथा सचार मन्त्री और मार्च, १९५८ को वाणिज्य और उद्योग मन्त्री बने। अपने इस कार्य-काल मे उन्होने अनेक नयी योजनाएँ शुरू की। पं० गोविन्दवल्लभ पन्त की मृत्यु के बाद उन्हे चार अप्रेल, १९६१ को स्वराष्ट्र मन्त्री नियुक्त किया गया। स्वराष्ट्र मन्त्री के रूप में उन्होंने देश की अनेक जटिल समस्याओ को सुलझाया।

अगस्त सन् १९६३ मे कामराज योजना के अन्तर्गत उन्हे मन्त्री पद छोड़ कर कांग्रेस सगठन का कार्यभार सौपा गया। लेकिन चौबीस जनवरी, १९६४ को बिना विभाग के मन्त्री के रूप मे उन्हे फिर मन्त्रिमण्डल मे शामिल कर लिया गया। अपने इस कार्यकाल मे उन्होने काश्मीर मे हजरतबल में पवित्र बाल की चोरी से उत्पन्न स्थिति को बड़ी ही बुद्धिमानी से सभाला, जिससे कश्मीर और समूचे देश को उन्होने एक बड़ी ही गम्भीर विपत्ति से बचा लिया। श्री लालबहादुर शास्त्री श्री नेहरू के सबसे अधिक विश्वासपात्र लोगो मे से थे। विनम्रता सदाशयता की मूर्ति श्री लालबहादुर शास्त्री दृढ़ता और साहस के पुज थे, श्री नेहरू के बाद वे भारत के लिए उज्ज्वल भविष्य और आशा की ज्योति बन कर आये थे। यह ज्योति सदा के लिए बुझने से पहले इतनी प्रकाशमान हुई कि सबकी आखे चौधियां गयी और फिर वह अमर ज्योति मे विलीन हो गयी। हमारे सामने, अधेरा छा गया।

सद्गुरुशरण अवस्थी

सरल व्यक्तित्व

छुटपन से लेकर बहुत समय तक मेरा स्वभाव बन गया था कि मै बहुत जल्दी किसी के प्रतिकूल हो जाया करता था। बड़े से बड़े व्यक्ति के विषय मे जहाँ भी कोई अपवाद की बात सुनी, झट से उस पर विश्वास कर लेता और व्यक्ति की बुराई करने लगता। उसी प्रकार किसी को बड़ाई सुन कर भी उसी उतावलेपन से उसके निन्दको से लड़ने के लिए तैयार हो जाया करता। मेरे राग द्वेष की प्रतिमाएँ प्रतिदिन बनती-बिगड़ती थी। न कोई श्रद्धा में टिक पाता था और न कोई घृणा में।

कानपुर की राजनीति मे मेरे एक निकट मित्र थे। उनका नाम था श्री हरिहरनाथ शास्त्री। वे और मै बहुधा बैठ कर देर तक विचार-विनिमय किया करते थे। मै उनकी बुद्धि और प्रतिभा से प्रभावित था। इसीसे हम दोनो की पटती थी। वैसे कानपुर को राजनीति मे वे उन लोगो के प्रतिकूल ही रहा करते थे, जो मेरे बहुत निकट थे और जिस दल का काग्रेस मे मै समर्थन करता था, शास्त्रीजी उसके विरोध मे रहा करते थे। मुझसे शास्त्री जो की मेरे दल के लोग बड़ी बुराई करते थे। मै शास्त्री जी से भी उनकी चर्चा कर दिया करता था और बहुधा उनसे रुष्ट हो जाया करता था, परन्तु शास्त्री जी पर न मेरे रोष का और न किसी की बुराई का कोई प्रभाव पड़ता था। शास्त्री जी मेरे मित्र अवश्य थे, परन्तु मुझे ऐसा मालूम पड़ता था कि वह दुरगे व्यक्तित्व वाले चतुर नेता है। सयोगवश जिस विश्वविद्यालय के शास्त्री जी स्नातक है, वहाँ के और दो-चार स्नातक मेरे परिचित है। उन सबके स्वभाव मुझे बहुत पसन्द न थे। मेरो कुछ ऐसी धारणा बन गई थी कि इन शास्त्रियो को शिक्षा-दीक्षा मे कुछ ऐसा बुद्धि-छल प्रविष्ट हो जाता है, जो साधुता से दूर है। विचार ही तो है, दृढ होता गया। हाँ, बहुत समय बाद राजर्षि स्वर्गीय बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन के दृढ़तापूर्वक श्री हरिहरनाथजी शास्त्री की प्रशसा करने पर मेरे मन मे परिवतन हुआ। वैसे वे मेरे मित्र थे ही। शास्त्री लोगों के प्रति मेरा भाव शुद्ध नही था, जिस समय श्री लालबहादुर शास्त्री के सम्पर्क मे मै पहले-पहल आया।

उनका माधुर्य : मेरा विरोध

श्री लालबहादुर शास्त्री उत्तरप्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद् के लिए व्यवस्थापिका सभा से सदस्य निर्वाचित होकर आए। मुझे परिषद् ने अपने वार्षिक अधिवेशन में उसकी हिन्दी कमेटी का सदस्य निर्वाचित कर दिया था। इस कमेटी के पाँच सदस्य थे और श्री लालबहादुर शास्त्री इस कमेटी के सयोजक थे। मुझे आज सन् और सम्वत् स्मरण नही है। उस समय इस बात का बहुत हल्ला हो रहा

था कि परिषद् मे कायस्थों ने मुसलमान सदस्यों से मिलकर बहुमत कर लिया और वे इस बात की चेष्टा कर रहे है कि सारे प्रबन्धक जहाँ तक हो सके, उन्ही के दल के हो और सारी पाठ्य-पुस्तके भी उन्ही के दल वालो की हो। श्री लालबहादुर शास्त्री कायस्थ है, श्री हरिहरनाथ शास्त्री भी कायस्थ थे, अतएव मेरे मन मे श्री लालबहादुर शास्त्री की दलबन्दी और उनकी फिरकापरस्ती का जो चित्र बन गया था, उसमे गहरा रग भर गया। ऐसा प्रतीत होने लगा कि जैसे उनके समस्त कार्य किसी चाल से और किसी दलगत पक्षपात से भरे है। कुछ मित्र मेरी भावुकता, मेरे उतावलेपन और मेरी नासमझी का लाभ उठा कर मुझे भड़का दिया करते थे और मुझे आगे कर दिया करते थे। एकात मे मुझे न जाने क्या-क्या समझा कर मुझे ही लडा दिया करते थे। मै शास्त्री जी की हर बात का विरोध करता था और उनके काम मे अड़ गा लगाया करता। उस समय अजब मेरी समझ थी और अजब मेरी बुद्धि थी। मुझे समय स्मरण नही और न पूरा प्रसग ही आज याद है, परन्तु एक बार कमेटी मे कुछ ऐसी बात बढ गई कि श्री लालबहादुर जी ने मुझसे कहा—"देखिए श्री अवस्थीजी आपका सुझाव बिलकुल ठीक नही।"

मै ताव मे भरा था, कहने लगा—"देखिए श्री लालबहादुर शास्त्री जी, मेरा सुझाव बिल्कुल ठीक है और आपको वैसा ही करना होगा।"

मेरा वाक्य केवल वाच्यार्थ व्यक्त कर रहा था। लालबहादुर जी बिलकुल ही चुप हो गए। उनकी आकृति कुछ तमतमा तो गई, परन्तु वे कुछ बोले नही। मुझे आश्चर्य इस बात पर हुआ कि मुझे सिखला कर भिडा देने वाले लोग उन्ही की जैसी बाते करने लगे। मेरी आँखे थोडी बहुत खुल गई।

मैने एक बार आचाय नरेन्द्रदेव जी से कहा—श्री लालबहादुरजी का कार्य पक्षपातपूर्ण होता है। उन्होने तुरन्त कहा—आप शान्ति से उनके कार्य समझिए। जहाँ तक मेरा ख्याल है वह ऐसे व्यक्ति नही है। मन पूरा-पूरा न माना। एक बार मैने यही बात स्वर्गीय राजर्षि बाबू पुरूषोतमदास टण्डन से कही। उनका वात्सल्य मेरे ऊपर हमेशा पुत्रवत् रहा है। वह थोडा रोष मे बोल उठे—लालबहादुर कभी पक्षपात अथवा जातिवाद नही कर सकते। यदि तुम एक भी बात का प्रमाण बतला सको तो मै उन्हे इटरमीडिएट बोर्ड से आज ही बुला लूँगा। इतनी दृढता का उत्तर मै सुनने के लिए तैयार न था। मै प्रमाण क्या देता? मै तो उडी-उडी बातो और हवा के आधार पर उन्हे बुरा समझ रहा था।

जहाँ एक ओर मुझे बुरा लगा वहाँ दूसरी ओर मैने लालबहादुरजी के प्रति अपनी धारणा बदलने की भी चेष्टा की। कानपुर मे श्री हरिहरनाथजी ने भी मुझ से उनके गुणो की चर्चा की थी। उधर मैने दूसरो के कहने पर उत्तजित होने के अपने स्वभाव को मद करने की चेष्टा की। कमेटी के आगे के अधिवेशनो के उनके काम उचित दिखाई देने लगे, फिर भी मेरे मन से एक बात न निकली। मैने एक मीटिग मे अशिष्ट और अनौपचारिक ढग से उनसे बाते की थी। वे इसे मन मे अवश्य रखे होगे। वास्तव मे यदि कोई मुझसे इस लहजे से बाते करता, जैसे उनसे मैने की थी तो उस समय मै तो उन्हे कभी न भूलता।

मेरी लालबहादुरजी को इतनी निकटता नही रही कि मै उनके मन की स्थिति के बारे मे उनसे ही पूछता। सम्भव है कि आज के लालबहादुर जी दूसरे हो गए हो और उस समय वे वैसे ही हो, जैसा कि उस समय मै था। यह जानने का बड़ा मन होता है।

लालबहादुर जी से बराबर भेंट होती रही। कभी किसी दावत में अथवा कभी किसी समारोह में वे मिल जाया करते थे। मुझे भी लोग बुला लिया करते थे। मै उनको दूर से देखा करता था कि क्या उनके नेत्रों मे अनिर्मल वर्तन के चिह्न है? क्या उनके मन में मेरे लिए उपेक्षा है? कभी-कभी किसी अज्ञात लालसा से उनके बहुत निकट पहुँच जाता और सोचता कि यदि उनके मन मे कुछ नही है, तो वह मुझसे अवश्य कुछ कहेगे। कभी-कभी मै सफल होता और कभी विफल। कभी-कभी वे चलताऊ ढंग से मेरे नमस्कार करने पर पूछ लिया करते थे—कहिए अवस्थीजी आप कुशल है? यह औपचारिक प्रतीत होता और केवल रगा हुआ मन यह सहानुभूति के साथ न समझ पाता कि इतने व्यस्त क्षणो मे इतना व्यस्त मानव और कह ही क्या सकता था। मुझे विश्वास जम गया था कि मेरे पुराने व्यवहार ने उनके मन मे मेरे प्रति उपेक्षा भर दी है।

एक बार की एक घटना ने मेरे भ्रम को और पुष्ट किया। लालबहादुर जी एक साधारण कांग्रेस-जन से खड़े-खडे बड़ी देर तक बाते करते रहे। मुझे भी उनसे कानपुर को एक आवश्यक बात करनी थी। उनकी प्रतीक्षा मे मै खड़ा हूँ ऐसा वे मेरी समझ से जानते थे। मै कुछ और निकट पहुँचा। मै समझा कि उन्होने यह पसन्द नही किया। सम्भव है कि वे कोई गोप्य बाते कर रहे हो। उन्होने कुछ रूखी चितवन से कहा—कहिए यहाँ कैसे आ गए? वे उपेक्षा भरे भाव से मुझे यह कह रहे है कि यहाँ कैसे आ गए, यह सारी मेरी मन की कल्पना थी, जिसे मै बहुत काल तक सत्य मानता रहा और सम्भव है सत्य भी हो, परन्तु मेरा दब्बू स्वभाव, मिलने मे महा-सकोची मेरी प्रवृत्ति, आज की सभ्यता में मिलनसारी की दिखावटी परिपाटी का सर्वत्र दैनिक परिचय और उस समय के शास्त्रीजी के व्यवहार मे उसका अभाव, किसी के व्यस्त जीवन मे भी नागरिकता की अवाँछनीय उपेक्षा है—इन बातों ने मिल कर मुझे कुछ-का-कुछ समझा रखा था।

मन एकदम पलट गया

लालबहादुर जी के प्रति मेरा मन बिल्कुल कैसे पलट गया, यह एक विचित्र घटना है। कुछ रेलें लड़ी। इतनी संख्या में रेले अक्सर ही लड़ जाया करती थी। लालबहादुर जी रेल-मंत्री थे। उन्होने अपना त्याग-पत्र देकर अपनी अक्षमता और अपनी अयोग्यता को सामने लाकर खड़ा कर दिया, जैसे उनके ही पाप के कारण इतनी रेले लडी हों। मुझे तो ऐसा प्रतीत होने लगा कि जैसे वे इस भारतीय परम्परा को मानते है कि शासित की पीड़ा शासक की अयोग्यता है और उसका पाप है। राम-राज्य में शूद्र मुनि शम्बुक द्वारा व्यवस्था भंग की गई और एक ब्राह्मण के पुत्र की अकाल-मृत्यु हुई। रेलो की व्यवस्था में भी कही ऐसी भारी त्रुटि प्रविष्टि हो गई है, जिसके कारण ये दुर्घटनाएँ होती है और सर्वोपरि शासक होने के नाते सारा दोष रेल-मत्री का है, अतएव उसे अवश्य बदलना चाहिए।

बहुत-से मित्रो से मेरी इस सम्बन्ध मे बाते हुईं। कुछ सज्जनों के अतिरिक्त सबने ही शास्त्री जी के त्यागपत्र को कोरी भावुकता की प्रेरणा, बुद्धि और विवेकशून्यता, अव्यावहारिक आदर्शवाद का विस्फोट, जन-रुचि को फाँसने वाली सस्ती योजना तथा त्याग और बलिदान का प्रचार बतलाया, परन्तु मेरे मन मे इस काम की सात्विकता और मत्री पद पर लात मार देने वाली फकीरी स्वभाव की गरिमा निकल न सकी। लालबहादुर जी के प्रति मेरा सम्मान उत्तरोत्तर बढ़ने लगा।

लालबहादुर जी एक बार किसी काम से कानपुर पधारे। वह भारतीय शासन के गृहमन्त्री थे। उनको दावत मे सम्मिलित होने के लिए मुझे भी बुलाया गया। मैं उनसे थोड़ी दूर पर बैठा था। चाय-पानी करने के बाद लालबहादुर जी उठ कर मेरे पास आकर बैठ गये और कुशल-वार्ता के बाद मेरे स्वास्थ्य का हाल पूछा और यह पूछा कि पदनिवृत्ति के बाद समय कैसे कटता है। मैं आजकल क्या करता हूँ यह वे सुनते रहे। मेरे यह कहने पर कि मुझे दस-बारह वर्षो से मधुमेह (डायबटीज) है, वे उपचार की बाते करने लगे। उन्होने मुझे दिल्ली मे बुलाया और कहा कि वह स्वयं मुझे एक योगासन-वेत्ता के यहाँ ले चलगे जिसने बहुतो की डायबटीज आसनो द्वारा ठीक कर दी है। मैने दिल्ली जाना स्वीकार कर लिया। बात समाप्त हो गई। लालबहादुर जी के कार्यक्रम को जानकारी प्राप्त किये बिना मै दिल्ली पहुँच गया और उनके निवासस्थान पर पहुँचा। वे दिल्ली नगर मे नही थे और दिल्ली मे आने का कार्यक्रम उनका चार दिन बाद था। मैं इतना रुक नही सकता था; परन्तु जिस समय मैंने अपने जाने का पूरा वृत्तान्त उनके वैयक्तिक सचिव को बताया, वह जैसे सदर्भ से पूरा परिचित-सा था और उसने मुझे शाम को योगिराज के यहाँ चलने का आमन्त्रण दिया। सम्भव है लालबहादुर जी ने उससे कुछ चर्चा कर रखी हो। सम्भव है अपने सदृश जनसेवक साम्य स्वभाव वाला सचिव उनके सम्पर्क का वरदान हो, परन्तु उसका व्यवहार बिलकुल आत्मीय-जैसा था। न उसमे पद की ठसक थी और न यो ही टाल देने वाली शासकीय शुष्क परिचालना।

वह छोटा-सा प्रसंग

एक और बहुत छोटा-सा प्रसग है। मैने जिस दिन कालेज के आचार्य-पद से अवकाश ग्रहण किया, कालेज के टेलीफोन करने का हम सब घर वालो का ऐसा स्वभाव बन गया था कि बिना उसके काम नहीं चल रहा था। इधर मै कुछ रुग्ण भी रहने लगा था। टेलीफोन द्वारा डाक्टरो को बुलाने के पहले जैसे साधन न थे। बार-बार मोटर भेजना और न मिलने पर मोटर का वापस आना भी अब संभालना सम्भव न था। और फिर बहुत-सी बातें केवल फोन मे ही निश्चय हो जाया करती थी, आने-जाने का बखेड़ा बच जाता था। मैने टेलीफोन अधिकारी को अपनी कठिनाइयाँ बतलाई। प्रार्थना-पत्र भी अधिकारी को भेजा। उसकी पंजीकृत सख्या भी आ गई। टेलीफोन की स्थानीय समिति के सभी सदस्यों से मिला। वे सभी मेरे अच्छे मित्र है। सभी ने मेरी आवश्यकता को अनुभव करके टेलीफोन लग जाने की संस्तुति की। सभी ने मेरी आवश्यकता को अनुभव करके टेलीफोन लग जाने की सस्तुति की। सभी ने कहा कि टेलीफोन परामर्शदात्री समिति की बैठक हुई नहीं कि पहला टेलीफोन मुझी को मिलेगा। परन्तु टेलीफोन कमेटी महीनो तक नही हुई। सहायको को व्यावहारिक सहायता देने का अवसर ही नही आया। मेरी कठिनाइयाँ दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जाती थी। मित्रो ने परामर्श दिया कि मै तीन महीनो के लिए अस्थायी टेलीफोन ले लूँ और तब तक कमेटी होगी ही और उसे स्थायी कर देंगे। मैने ऐसा ही किया। इसमे काफी खर्चा हुआ। मेरी कठि-नाइयाँ थोड़े काल के लिए समाप्त भी हो गईं। दो महीने व्यतीत हो जाने के बाद जब मै टेलीफोन अधिकारी से मिला, तब उन्होने बतलाया कि अभी कमेटी के अधिवेशन के लिए चार-पाँच महीने तक कोई आशा हो नहीं है। यह भी मालूम हुआ कि इस अस्थायी टेलीफोन की अवधि का बढ़ाना असम्भव

है। इतने मित्र होने पर भी काम होता दिखाई नहीं दिया। मेरे मन में एकाएक यह ध्यान आया कि श्री लालबहादुर जी शास्त्री केन्द्रीय शासन में गृहमन्त्री हैं। यदि उन्होंने डाइरेक्टर जनरल पोस्ट एण्ड टेलीग्राफ को संकेत कर दिया तो सम्भव है मुझे स्थायी रूप से टेलीफोन मिल जाए। मैंने श्री लाल-बहादुर शास्त्री को एक पत्र लिख कर अपनी कठिनाई की चर्चा की। उसका उत्तर तो नही आया परन्तु थोड़े समय के बाद पोस्ट मास्टर जनरल, उत्तर प्रदेश का एक आदेश कानपुर के टेलीफोन अधिकारी के नाम आया कि मेरा अस्थायो टेलीफोन स्थायी कर दिया गया है, अतएव वह इस सम्बन्ध में समुचित कार्यवाही करें। इस पत्र की प्रतिलिपि मेरे पास भी आई और उसमें यह संकेत था कि मैंने जो केन्द्रीय गृहमन्त्री को पत्र लिखा है, उसकी पूर्ति के लिए यह आदेश भेजा गया है। मै श्री लालबहादुर जी का बड़ा ही कृतज्ञ हो गया और मैने पत्र द्वारा उन्हें इसका ज्ञापन भी किया। इस घटना ने मेरे मन में उनके सम्बन्ध मे एक सच्चे जन-नायक की धारणा उत्पन्न कर दी। मै अपने पुराने भाव के लिए लज्जित था।

सादगी की प्रतिमा

अपनी पवित्रता और सूझ-बूझ के कारण लालबहादुर जी धीरे-धीरे प्रदेशीय शासन में और फिर केन्द्रीय शासन मे मन्त्री बने और उन्हे ऊंचे से ऊंचा काम मिला। यदि उनमें मानसिक सन्तुलन पर्याप्त न होता तो काग्रेस के उच्च वर्ग मे उनका उतना सम्मान न होता जो आज है। सारे झगड़ों को मिटाने और मेल कराने मे वे नेहरू के दाहिने हाथ ही रहे।

स्वर्गीय पण्डित गोविन्दबल्लभ पन्त ने जिस परिस्थिति और जिस सम्मानित पद को अपने बुद्धि-वैभव, अपनी सूझ-बूझ, अपनी समन्वयकारिणी प्रतिभा और अपनी अद्वितीय कार्यक्षमता के कारण उपलब्ध किया था, उसे लालबहादुर जी ने अपनी सरलता, अपनी अनुपम विनम्रता, अपने प्रेम, मेल कराने वाले अपने स्वभाव और सबसे अधिक अपनी ईमानदारी के कारण प्राप्त कया। पडित जवाहरलाल नेहरू का महत्व विश्व मे कोई साधारण महत्व न था। ऐसे पद को प्राप्त कर लेना किसी साधारण योग्यता का अधिकार नही। भारतीय इतिहास मे उनका नाम सदैव आदर के साथ स्मरण किया जायगा।

वियोगी हरि

हमारा बार-बार वन्दन

शिखर पर से, उसने सोचा, अब उतरना क्या ? बल्कि उस शिखर से वह ऊँचा और भी ऊँचा चढ गया। यश की उस ऊँचाई को कौन नापने जाय।

मजाक करते थे बहुतेरे कि यह छोटा-सा आदमी कैसे शिखर को छू सकेगा। उनके लेखे, क्योकि, उसकी आँखो मे वैसी तेजस्विता, बुद्धि मे वैसी प्रखरता और पैरो मे वैसी शक्ति नही दीख पड़ती थी।

वह आदि से ही साधनहीन-सा रहा था। पगडण्डियों पर ही वह चला था और ग्रामो को ही उसने जाना-पहचाना था। अपनी पोटली को कधे पर रखकर, बिना ही लाठी लिये पहाड़ पर वह चढने लगा। बडों-बड़ो ने उसकी यात्रा पर व्यग्य किये, पर उसकी सरल मुस्कराहट पर कुछ भी असर न हुआ।

आवेश और रोष को हिम्मत न हुई उसके अन्तर में पैठने को। वह कटुता को पी गया और धीरज का हाथ कस कर पकड़ लिया।

अपनी वेश-भूषा पर उसे सदा गर्व रहा। अपने घर मे ही नही, बल्कि बाहर भी-वाहर तो उस वेश-भूषा को और भी प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखा उसने।

कितनी ही गुत्थियो को उसने अपने ढग से सुलझाया, और वड़े से बड़े संकटों का हँसते-हँसते सामना किया।

विरुद्ध मतो की कठोरता को उसने कई बार मोम मे पलट लिया, और प्यार को ही भरपूर पाया।

औरो के घरों में भी उसने अपना ही घर देखा,—जहाँ पर उसने अपना चोला उस रात को उतार कर रख दिया, वहाँ क्या उसने नही कहा था कि "यह तो मुझे वैसे अपना ही घर मालूम दे रहा है।" शान्ति को स्थापित करने मे उसने अपने तन का एक-एक तार खीच कर लगा लिया, और सारा वातावरण जैसे 'नन्दन वन' की सुगन्ध से भर गया।

जिस शिखर पर वह उस दिन खड़ा था, अदृष्ट को वह बहुत छोटा-सा प्रतीत हुआ। तब देखते ही देखते, सात मिनट के अन्दर ही, सारा लेखा-जोखा वेबाक करके वह देश-विदेश के हजारो, लाखो की श्रद्धा-भावना का देवता बन गया।

उस दिवंगत को हमारा बार-बार वन्दन।

डा० दुबे

अमृत-पुत्र

स्व० लालबहादुर शास्त्री उपनिषदों के 'अमृतस्य पुत्रः' के आदर्श का अनुगमन करते थे। झोंपड़ी मे पले और बढे, आतप और लू से गढे। दु ख-दर्दो के साक्षी। सामान्य अध्यापन के आत्मज शिक्षक के गृह के वातावरण ने उनके रक्त मे नैतिकता तथा मनुष्यता के संस्कार बना दिये। विपन्नता ने उन्हें सयमी और आत्मावलम्बी बनाया। अपने पैरो पर खडे होना वे बचपन से ही जान गये।

दरिद्रता दुनिया की सबसे बड़ी पाठशाला है। मनुष्य अनजाने ही समझदार हो जाता है। किसी को सिखाने या बताने की आवश्यकता नही पड़ती। वह प्रलोभनो मे नही आता। मनुष्य को परखने की क्षमता पैदा हो जाती है। 'अपना हाथ जगन्नाथ।' तो फिर वे क्यों नही जनता के जगन्नाथ बनते ?

पितृहीन बालक प्राय सकोची होता है। यह संकोच उसे गम्भीर तथा परिश्रमी बनाता है। शास्त्री जी ने बाल्यावस्था से ही साधना को अपना सखा बनाया। सघर्ष तथा आपदाओ को झेल कर वे बड़े हुए। इसलिए उदार तथा त्यागमूर्ति बने। वे स्वय वेदना तथा दीनता से गठबन्धन जोड़ चुके थे, इसीलिए उन्होने अपना सब-कुछ समर्पित कर दिया—राष्ट्र की स्वाधीनता के लिए, राष्ट्र के निर्माण एवं शान्ति-स्थापनार्थ।

१७ वर्ष की उम्र में 'गांधी बाबा' के अनुगामी बने। समन्वय की शिक्षा यहीं ग्रहण की। पंजाब-केसरी लाला लाजपतराय से उन्होने उत्सर्ग का सूत्र लिया। राजर्षि टडन से निष्ठा ग्रहण की। अपने गुरुओं से राष्ट्रभक्ति की शक्ति ली। लोकनायक जवाहर से जीवन की सदाशयता ली। अजातशत्रु राजेन्द्र बाबू से विनम्रता का तत्व जोडा। सबको घोल कर अपना आसव बनाया।

शहीद की परिभाषा बदली।

अठारह मास का उनका कार्यकाल, धनजय की चिडिया की आँख का लक्ष्य-भेद करने के समान रहा। १८ वर्षो का काम वे १८ महीनो मे कर गए। छिन्द्रान्वेषण को कोई स्थान नहीं। मातृभूमि के लिए कैसे जीना और कैसे मरना—इसे वे दिखा गये। वे युद्ध मे सेनापति बने और शान्ति-दूत बन कर जीवन होम गए। उन्होने शहीदो की परिभाषा ही बदल दी। उन्हें हम 'शान्ति का शहीद' कह सकते है।

शास्त्री जी लाल होते हुए भी किसी भी दल के प्रति दुराग्रही नही थे। बहादुर होते हुए भी दयालु थे और शास्त्री होते हुए भी सकीर्णता अथवा एकागिता से पीड़ित नही थे। वे सबको साथ लेकर

चलते थे। अपने विचारो को दूसरो पर आरोपित नही करते थे। दूसरो को सुनते थे और उचित मार्ग स्वोकार करते थे।

जय जवान—जय किसान :

लोकमान्य की सिह-गर्जना थी 'स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है।' महात्मा गांधी ने कहा था, 'करो या मरो।' नेताजी ने गरज कर कहा था, 'तुम मुझे खून दो, मै तुम्हे आजादी दूँगा।' इन सवके पूर्ववर्ती स्वामी विवेकानन्द कहते थे : 'फौलाद का शरीर बनाओ।' नेहरू ने मन्त्र पढ़ा था : 'आराम हराम है' विनोवा ने व्यापकता को समेटा : 'जय जगत्।' इस भूमि-पुत्र तथा कर्मयोगी ने कहा 'जय जवान, जय किसान'। सवका सामंजस्य शास्त्री जी के उद्घोष मे है। राष्ट्रीय सुरक्षा एव स्वावलम्वन की दोनो धुरियो को समेट लिया।

भारत मे भरत थे राजेन्द्र बावू तो लाल वहादुर शत्रुओ का विनाश करके शत्रुघ्न वने। उन्होने समयोचित कार्य किया। भारतीय जनता की निष्क्रियता को भगाया। हथियार का जवाव हथियार से दिया। 'शठं प्रति शाठ्यंम' को अपना कर विदुर-नीति तथा चाणक्य-नीति को सफल कया।

वे सही अर्थो मे राजनीतिज्ञ थे। वे भोले भी थे और चालाक भी। एक वार उन्होने भाषण देते हुए कहा था 'कभी-कभी सोचता हूँ कि लोग मुझे बहुत सीधा-सादा मानते है, मगर मै कही ज्यादा चालाक हूँ।' वे नम्र थे तो लौहपुरुष भी। सकट-काल मे उनमे वल्लभ भाई पटेल को आत्मा आ विराजी। रेल मन्त्री के रूप मे उन्होने कहा था : 'शायद मेरे छोटे कद और नम्रता के कारण लोग यह समझते है कि मै सख्ती से पेश नही आ सकता।'

यद्यपि मै शारीरिक रूप से बलवान् नही हूँ, परन्तु दिल से कमजोर भी नही हूँ।

'न भूतो न भविष्यति'

धोती ने अमरीकी पैटन टैक तोड दिए और सेवर जेट धूल मे मिला दिए। इतना भीषण युद्ध हुआ, परन्तु समूचे देश मे कही भी साम्प्रदायिक दगे नही हुए। शास्त्री जी का नेतृत्व आपत्कालीन स्थिति मे स्वर्ण-सा निखरा। वे राष्ट्रार्पित जीवन जिए। न यश की लिप्सा और न विलासिता के प्रति अनुरक्ति। उनके आदर्श जीवन ने यह प्रमाणित कर दिया कि भारतीय लोकतन्त्र सफलता के निकट पहुँच रहा है।

वे अपनी मेधा तथा अथक श्रम से पर्ण-कुटीर से प्रधान मन्त्री की विश्व-विश्रुत कोठी तक पहुँचे। वहादुर लोग युद्ध मे वलि देते है। इस वहादुर ने शान्ति को अपनी वलि दी। शान्ति की शहादत की ऐसी मिसाल—'न भूतो न भविष्यति।'

हरिदत्त शर्मा

भारतीय संस्कृति के प्रतीक

ऊपरी तौर पर स्वर्गीय श्री लालबहादुर शास्त्री की संस्कृति और साहित्य के क्षेत्र में न विशेष सेवाएँ हैं, न विशेष उपलब्धियाँ। उन्होने न तो दर्शन के क्षेत्र मे कोई नया दृष्टिकोण प्रस्तुत किया और न दार्शनिक दृष्टिकोणो का आधुनिक युग के सन्दर्भ मे विश्लेषण किया, न ही उन्होने कोई ऐसी कृति रची जिससे उनका किसी भी तरह के लेखकों मे नाम लिया जा सके। वे आद्यन्त राजनीति के व्यक्ति रहे और उनकी राजनीतिक उपलब्धिया है और वे ही उनके व्यक्तित्व का विशेष अग है।

जिस युग में शास्त्री जी ख्याति में आये, वह युग भी उनके आचार-विचार, रहन-सहन, खान-पान के सर्वथा विपरीत ही था। उन्हे देखकर यही लगता था कि शास्त्री जी इस युग मे सर्वथा अनुपयुक्त है। आज की खोखली सस्कृति और सभ्यता सब तरह से उनके विरुद्ध ही बैठती है। हमारा समकालीन जीवन बीते युग की दृष्टि से अनाचार और भ्रष्टाचार का युग है, समाज मे सर्वत्र पैसे का बोलबाला है, कृत्रिम साज-सज्जा से युक्त जीवन ही सभी को इष्ट होता जा रहा है, टीप-टाप ही हमारे उच्चस्तरीय जीवन की पहचान है, पिछला धर्म आज तिरोहित है और नया अधर्म आज चारों ओर व्याप्त है। इन परिस्थितियो मे जब शास्त्री जी प्रधान मन्त्री पद पर आसीन हुए तो वह अजनबी से महसूस हुए। वे सचमुच समाज और समकालीन पाश्चात्य संस्कृति से आवृत जीवन के सामने एक प्रश्नचिह्न के रूप मे आ खड़े हुए। नये वातावरण की समझ मे यह बिलकुल न आ रहा था कि इस यन्त्र-युग मे पुराने कुटीर उद्योगो का प्रतीक यह पुरुष कौन है और इतने बड़े पद पर यह कैसे आसीन हुआ है ?

जब सम-सामयिक जीवन व्यग्य और हास्य के साथ उन्हे पहचानने की कोशिश कर रहा था तो उसे धीरे-धीरे स्वय यह आश्चर्य हो रहा था कि यह कैसा व्यक्ति है जो हमारे हास्य और व्यग्य को ओढ कर दिल मे जगह बनाता चला जा रहा है ? इमे युग के व्यग्य तो छूते ही नही, यह अपने से भी व्यग्य करने से नही चूकता। और सबने देखा कि जब भारत घोर सघर्ष मे जुटा, मौत की काली छायाए जब भारत के आगन मे नाची, तब वह व्यक्ति एक क्षण मे ही वामन से विराट् बन गया, सारे युग का प्रतिनिधित्व करने लगा। यही तक नही वह समकालीन खोखले जीवन को कुछ भरता-सा नजर आया, कुण्ठा और निराशा लुप्त होकर उसके नेत्रों मे आशा और उत्साह भरकर चमकने लगी, भारत उमगों का सागर बन गया और उस सागर मे इस समकालीन संस्कृति के फनियर के फन पर वह कृष्ण की तरह नृत्य करने लग गया।

शान्तिका अग्रदूत

जनता ने उसे युद्ध का नेता पुकारा। उसकी वाणी मे लोगो को राणा प्रताप, गुरु गोविन्दसिंह, शिवाजी, टीपू सुलतान, सुभाष जैसे महावीरो की हुंकार सुनाई देने लगी। युगों के बाद आत्महीनों का

आत्मविश्वास जागा और भारत के क्षितिज पर आत्मगौरव के सूर्य की लालिमा छा गयी। इस नये उल्लास में जब जनता मग्न थी तो वह शान्ति की खोज करने लगा और देखते ही देखते युद्ध का नेता शान्ति का अग्रदूत बन गया। यह उसका चरमोत्कर्ष था और अपने सर्वाधिक नाटकीय उत्फुल्ल काल मे वह फूल की तरह बिखर कर अमर हो गया। जब से दुनिया शुरू हुई है दुनिया ने – शान्ति की गुहार लगाई है, लेकिन उसे कभी नसीब नही हुई पर, वह उन लोगो की कुर्बानियों से ही तोष प्राप्त करती रही है जो शान्ति की राह मे समर्पित और विसर्जित होते रहे है।

शान्ति के लिए उसे नन्हे से सरल व्यक्ति का बलिदान भारत की जनता के लिए बहुत बडे तोष का कारण बना है और इस तोष को उसने अपने गरम-गरम आँसुओ से अर्घ्य दिया है। इतनी बड़ी ऊष्मा का इतना बडा अर्घ्यदान बिरलो को ही प्राप्त होता है। ऐसा बिरल व्यक्तित्व मानवीय सस्कृति की कितनी बडी उपलब्धि है ? अपनी राजनीति का सत्व शान्ति की ज्वलन्त दीप शिखा के रूप मे थाती के तौर पर छोड़ कर यह मनोहर व्यक्तित्व अमरो की पाँति मे जा बैठा है। इस तरह उसने भारत की सास्कृतिक परम्परा के ध्वज को आकाश मे और भी ऊँचा कर दिया। उसने दर्शन न बघारा सही, साहित्य न लिखा सही लेकिन दर्शन और साहित्य, सस्कृति और सभ्यता का वह प्रख्यात नायक बन गया है। सस्कृति की ऐसी-लक्ष्य सिद्धि उन्हे भी कहाँ मिल पाती है जो जीवन भर जीवन की इस सूक्ष्म वृत्ति का आराधन, मनन और भजन करते रहते है।

ऐसा लगता है कि यह व्यक्तित्व इस 'उपदेशकुशल' देश मे उपदेशहीनता का सन्देश लेकर आया था। उसने शायद यह महसूस किया कि खोखली सभ्यता के इस युग मे शब्द अपना अर्थ खो बैठते है, इसलिए उसने शब्दहीनता को, मौन को अर्थ देकर सार्थक किया। यह उपलब्धि कितनी बडी है, इसे वे ही लोग जान सकते है जो रात-दिन शब्दो के ससार मे रहकर अपनी शाब्दिक रचनाओ से त्रस्त रहते है। हमारे देश के महामनीषियो ने कहा है कि मानवधर्म शब्दो मे खो जाता है, यह साधना मे प्रखर होता है और समपरण मे प्राप्त होता है। इसका अधुनातन उदाहरण इस व्यक्ति ने अपना सर्वस्व न्यौछावर करके दिया है।

आदमी अपना सबसे बहुमूल्य माणिक्य बहुत छिपा कर रखता है, इसीलिए यह व्यक्ति अपने समर्पण भाव को बडी कुशलता से अपने विनय मे ढक रखता था। वह सदा यही कहता रहा कि मेरे पास कुछ नही। न मेरे पास विद्या है, न मेरे पास दर्शन है, न मेरे पास ज्ञान है और न मेरे पास विज्ञान है। अपनी इस विनय-भावना से ही वह सत्य की साधना करता रहा है और आखिर उसने सत्य पाया और उससे अबीर-गुलाल की तरह दशो दिशाओ मे लुटा कर वातावरण को रगीन कर दिया।

यह देश अच्छी तरह जानता है कि सत्यान्वेषी कर्तव्यनिष्ठ कर्मी भी होते हैं। उन्हे न कामैषणा व्यापती है और न अर्थैषणा। काम और अर्थ के बीच रह कर भी वे जल के समान रहते हैं। राजाओ मे जनक का और राजनीतिज्ञो मे चाणक्य का नाम इस तौर पर बड़ा प्रसिद्ध है। अर्वाचीन युग मे भी विवेकानन्द, तिलक, अरविन्द, गाधी, नेहरू और सुभाष इस राह चले हैं। यह कर्मयोगी भी इसी राह का मुसाफिर था। आया, कर्म किया और चल दिया। उसे ठाठ बाँधने की फुर्सत भी न मिली। फुर्सत भी कैसे मिलती, वह तो भारत की मिट्टी से इत्र निकालने लगा था। जब इत्र मिल गया तो उसने अपने आपको सुवासित किया और उस लोक को चला गया, जहाँ जाकर कोई वापस नही आया।

लोकनायक

राजनीति के छद्म वेष में जब वह साधना कर रहा था तो कभी-कभी उसके सांस्कृतिक अन्वेषण की झलकियाँ तो मिलती थी, लेकिन उन झलकियों से उसके व्यक्तित्व का पूर्ण मन्तव्य समझ में नहीं आता। यह देख कर अचरज तो होता था कि वह जब जनता के बीच जाता है तो जनता उसके चारों ओर इस तरह घिर जाती है कि जैसे सुगन्धित मदभरे फूल के चारों ओर भौंरे इकट्ठे हो जाते हैं, अपनी पत्नी के साथ उसका व्यक्तित्व शिव-पार्वती की तरह जनता की दृष्टि में नयनरंजनकारी हो जाता है। सत्तारूढ दल के छली, प्रपंची, राजनीतिज्ञ यह स्थिति देख कर अपनी ईर्ष्या को समेट लेते थे और यह सोच लेते थे कि इसकी मार्फत चुनाव जीता जा सकता है।

देश में ही नही विदेशों में भी यह सरल, साधारण व्यक्तित्व लोगों का ध्यान आकर्षित करता था। उसके दिल की सादगी, आँखो और ओठों पर बन्द मधुर मुस्कान बन कर विदेशियों को अपनी ओर खीच लेती थी, और वह उस अकेले अथवा सपत्नीक देख कर भारत की संस्कृति और सभ्यता को देख लेते थे। विदेशो से लौट कर भारत के पत्रकार और लेखक यही बतलाते रहे है कि विदेशी लोग अपने यहा भारतीयो के रूप मे पश्चिम की नकल नही चाहते, भारत की असल सुगन्ध चाहते है; शास्त्री जी से वे इसीलिए प्रभावित है कि उनमें और उनकी पत्नी मे उन्हे हिन्दुस्तान की झलक मिलती है। इस तरह यह आदमी भारत की आम जनता का, उस जनता का जिस पर पश्चिम का रंग नही चढा और जो देश मे रहकर देश मे ही जीती और देश मे ही साँस लेती है, प्रतिनिधि बन गया था। वह समकालीन सभ्यता जो जीवन के नकलीपन को अपना लक्ष्य बनाकर छल-प्रपंच की श्रंखलाओ मे मानव-समुदाय को बदी बना रही है, जो ऊपर से चमकदार है लेकिन अंदर से रिक्त; जो ऊपर के दम्भ से गरजती है लेकिन अदर से रोती है; इस व्यक्ति के सामने पस्त हो गयी। उसे यह महसूस हुआ कि मानव जीवन ऊपरी रौनक का मुहताज नही, अन्दरूनी रोशनी का मद्दाह है। वे विदेशी भी जिनकी सांगोपांग अनुकृति को ही यह सभ्यता-सस्कृति मानती है, भारत से भारतीयता चाहते है और इसके अलावा अगर कुछ चाहते है तो बस मानवीयता। दुनिया मे विचारो का मूल्य है, अलकारों का नही।

मानवीय संस्कृति

भारत की संस्कृति व्यक्तित्व के उन्नयन और आत्मा के विकास पर बल देती आयी है। यहा शिक्षा का अर्थ संस्कारो के विस्तार से रहा है, जानकारी के भडार से नही। बड़ा बनने के बजाय अच्छा बनने की कोशिश यहाँ का मूल मत्र रही है। भारत के इस प्रतिनिधि का भाव-विकास इसी आधार पर हुआ। काशी विद्यापीठ के इस स्नातक ने मानवीय मूल्यो को सहेजा और आत्मप्राप्ति की दिशा में अपने प्रयत्नों को सार्थक किया। दर्शनो का अध्ययन भी इसी भाव को लेकर किया, इसलिए न वे दर्शनाचार्य बने और न दार्शनिक, वे बने तो केवल मानव बने, क्योकि भारतीय संस्कृति को यही इष्ट है। आत्मप्राप्ति अथवा अखड व्यक्तित्व का निर्माण ही इस देश की शिक्षा का ध्येय रहा है। अंग्रेजों की शिक्षा-प्रणाली ने इसे नष्ट-भ्रष्ट किया, जिससे आधुनिक विकृतियाँ इस व्यक्ति से दूर रहीं क्योंकि वह भारत के बहुमूल्य परम्परागत उत्तराधिकार की प्राप्ति मे दत्तचित्त था।

अपने राजनीतिक जीवन में भी वह इसी उत्तराधिकारी को संजोता रहा, क्योंकि राजनीतिक दीक्षा उसे गांधीजी से मिली थी। १९६४ के वर्षान्त में शान्तिनिकेतन में दीक्षान्त भाषण करते हुए उसने कहा था :—

'बहुधा यह कहा जाता है कि सरकार की कार्य-प्रणाली और उसके निर्णयों में नैतिकता नही बरती जा सकती। इटली के मुक्तिदाताओं में से एक काउण्ट केवाउर ने एक जगह कहा है कि जो कुछ हम देश के लिए करते हैं यदि वह हम अपने लिए करने लगे, तो हम कितने बड़े अनाचारी बन जायें। लेकिन मैं फिर भी यही कहूँगा कि जो सरकार नैतिकता और मानवीयता की भावनाओ से मुँह मोड लेती है, वह विश्व-शांति और मानवता को खतरे में डाल देती हैं। हमारे लिए ऐसी राह का सोचना भी असंभव है।'

वे नये वातावरण मे जन्मी नयी पीढ़ी के दर्द से परिचित थे, लेकिन भारत की परम्परागत प्रेरणा लेकर वे उसे एहसास कराना चाहते थे कि विद्रोह को दायित्वों की भावनाओं से सराबोर किया जाय जिससे कि नयी पीढ़ी उत्तरदायी नागरिकों के रूप में विकसित हो। इसी जगह वह अंग्रेजी के महत्व को स्वीकार करते हुए भी भारतीय भाषाओं के यथाशीघ्र विकास और प्रचलन पर बल देते रहे। हिन्दी की हिमायत और वकालत का यही रहस्य था।

जो व्यक्ति संस्कृति और दर्शन को अपनी साधना का अंग बनाता है, जो सम्यक् कर्म करता है, वह पीड़ित मानवता को नही भूल सकता और विशेषकर तब जबकि उसका देश कंगाली और पामाली के पाश मे जकडा हुआ हो। प्रधान मंत्री बनने से पूर्व ही नेहरू के निधन पर हुई विशाल सार्वजनिक सभा मे उसने बड़े एहसास के साथ समाजवाद की बात की थी। यह बात जीवन की अन्तिम घड़ी तक उसकी वाणी से प्रस्फुटित होती ही रही।

ताशकन्द सम्मेलन मे गरीबी, अशिक्षा और बीमारी से लड़ने के भाव ने ही तो उसके कदम शांति की राह पर तेजी से चलाये थे। वह गरीब था, उसने गरीबी झेली थी, उसके पैरो में बिवाई फटी थी, इसीलिए जनता का दर्द उसके लिए सिर्फ हमदर्दी की चीज नहीं थी, बल्कि उखाड़ फेकने की चीज थी। उसके हृदय मे बड़ो की करुणा नही थी, बल्कि निर्धनता से जूझने की बलवती भावना थी। इसीलिए उसके यहाँ भौतिक समृद्धि का नाम पूँजीवाद नही था, उसका नाम उसके यहाँ समाजवाद था, लेकिन हठधर्मियो और क्रूर नेताओ का समाजवाद नहीं बल्कि इन्सानो का समाजवाद।

भारत की संस्कृति तथा अन्य भाषाओ के झरनो से निकले ज्ञान-वारि को पीकर वह सस्कारी बना था और इस स्थिति ने उसने आधुनिक दृष्टिकोण सहेजा था। इस तरह वह संतुलित और व्यावहारिक सम्यक्कर्मी और सम्यक् द्रष्टा था। इसलिए उसके यहाँ न भौतिक समृद्धि अनपेक्षित थी और न आध्यात्मिकता, इसीलिए वह बुद्धिजीवियो को भी प्यार करता था और सर्वसाधारण को भी। जनता का हर वर्ग उसकी न्याय-बुद्धि की तुलपर संतुलित था और इसीलिए उसमेनिर्णय करने की क्षमता थी।

संस्कृति को ऐसा बड़ा पाया बड़ी मुश्किल से ही मिलता है। कह सकते हैं कि भारत की आत्मवती सस्कृति उसे पाकर धन्य हुई।

८

डा० लक्ष्मीमल सिंघवी

भारतीय राजनीति के अजातशत्रु

यह भारतीय जनतन्त्र के सामर्थ्य का सबूत है कि पंडित जवाहरलाल नेहरू के बाद श्री लालबहादुर जी शास्त्री प्रधान मंत्री के पद पर आसीन हुए। यद्यपि वे पंडित नेहरू के निकटतम विश्वासपात्र रहे, तथापि लालबहादुर जी की वैयक्तिक पृष्ठभूमि पंडित नेहरू से सर्वथा भिन्न थी। पंडित नेहरू एक सम्भ्रान्त परिवार के इकलौते कुलदीपक थे, पं० मोतीलाल नेहरू की प्रतिष्ठा और उनका प्रभाव उन्हें विरासत में मिले थे, पश्चिम की शिक्षा का सीधा प्रभाव उनके तरुण जीवन और मनस्तत्व पर पड़ा था, कांग्रेस दल का मानस और कार्यक्रम उनके हर मूड और इंगित पर बनता और बदलता था। लालबहादुर जी का जन्म हुआ एक निर्धन शिक्षक के घर मे और उनके अबोध शैशव मे ही पिता के संरक्षण का साया उनके सिर से उठ गया। गरीबी और संघर्ष के बीच उनकी शिक्षा-दीक्षा हुई और कांग्रेस के संगठन में भी वे बढ़े एक कार्यकर्ता के रूप में। शास्त्री जी न केवल भारतीय स्वातन्त्र्य-संग्राम की परम्परा के प्रतीक थे, बल्कि देश के आम आदमी की तकलीफों और अभावों की दुनिया से अन्तरंग परिचय भी रखते थे। वे सुविशाल गरीब देश की महाकाय जनसत्ता के सही माने में एक सार्थक प्रतिनिधि थे।

उनके व्यक्तित्व का मिठास, उनकी सादगी, उनकी सौम्य चिंतनशील गम्भीरता और उनकी सहज सरलता, राजनीति मे व्यक्ति और उनके मनोभावों को समझने और परखने की उनकी अद्भुत क्षमता, विरोध को सहानुभूति में और सहानुभूति को सहयोग में बदल देने की उनकी कला, कठिन समस्याओं का सामना करने मे धैर्य, आत्मविश्वास और संकल्प का समन्वय इन सब विशेषताओं ने लालबहादुर जी के व्यक्तित्व और कृतित्व में एक अपूर्व अभिव्यक्ति पायी, जो हमारे समकालीन इतिहास का एक स्वर्णिम अध्याय है। जबसे शास्त्री जी दिल्ली आये, तभी से यह स्पष्ट था कि देश की राजनीति में उनका सक्रिय भाग रहेगा। उन्हें पद-प्रतिष्ठा से लगाव नही था, किन्तु ऐसा लगता है कि राजनीति में उनके व्यक्तित्व की लोकप्रियता कुछ ऐसी थी कि वे बहुत कम ही पद और प्रतिष्ठा से दूर रहे। आत्म-विज्ञापन से कोसों दूर, लज्जाशील इस राजनीतिज्ञ के लिए यह प्रसिद्ध था कि कठिन समस्याएँ इनके पास कुछ अजीब तरह से सहल हो उठती थी और प्रशासन में इनकी योग्यता की कोई सानी नहीं रखता। केन्द्रीय सरकार मे शास्त्री जी ने रेलवे, यातायात, संचार, उद्योग, वाणिज्य, गृहकार्य इत्यादि विविध मन्त्रालयों का कौशल के साथ संचालन किया और सर्वत्र उन्होंने अपनी योग्यता और लोकप्रियता की अमिट छाप अंकित कर दी। १९५६ में रेलवे मंत्री पद से जब उन्होंने त्यागपत्र दिया तब पं० जवाहरलाल नेहरू ने उनके लिए चिरस्मरणीय शब्दों मे कहा था, "वे एक बहुत ऊँचे दर्जे के आदमी है, ऊँचे आदर्शों के प्रति उनकी भक्ति और आस्था है, मेहनत से कार्य करने मे उनका विश्वास है। वे एक जाग-

एक आत्मा के धनी हैं। वास्तव में उनसे बढ़कर किसी साथी अथवा सहयोगी की कल्पना भी नहीं की जा सकती।"

१९५७ में सारे देश में कांग्रेस की ओर से निर्वाचन के संचालन का काम शास्त्री जी को सौंपा गया। १९५९ में केरल में विविध राजनीतिक दलों के बीच एकता और समझौता करने का कठिन काम उनके जिम्मे आया। १९६१ में शास्त्री जी पंडित गोविन्दवल्लभ पन्त के निधन पर उनके स्थानापन्न होकर गृहमंत्री नियुक्त हुए। इस अवधि में मुश्किल से मुश्किल समस्यायें उनके सामने आयीं, किन्तु उन्होंने अपनी सहज योग्यता से उनको अनायास ही सुलझा दिया। गृहमंत्री के रूप में उन्होंने शासकीय सुधारों का सूत्रपात भी किया, सन्थानम समिति की नियुक्ति की और केन्द्रीय जाँच-ब्यूरो की स्थापना की। मार्च १९६३ में उनकी नेपाल-यात्रा और भारत-नेपाल सम्बन्धों में अभूतपूर्व सुधार उनके राजनीतिक जीवन की अविस्मरणीय घटना है।

यद्यपि अगस्त, १९६३ में शास्त्री जी ने कामराज प्लान के अन्तर्गत सरकार से इस्तीफा दे दिया, किन्तु ४ महीने के बाद ही पंडित नेहरू ने उन्हें केन्द्रीय सरकार में मंत्री नियुक्त किया और प्रधान मन्त्री की हैसियत से अपनी स्वयं की जिम्मेदारी सौंप दी। तभी यह आभास होने लगा था, कि शास्त्री जी को पंडित जी ने अपना उत्तराधिकारी चुन लिया था। पंडित नेहरू के निधन के बाद जो चुनाव हुआ, उसमें शास्त्री जी को सहज रूप से चुन लिया गया।

शास्त्री जी के प्रधान मंत्री बनने पर भी कई लोगों को शंका रही कि वे पंडित नेहरू के उत्तराधिकारी होने का गौरव और दायित्व समुचित रूप से निभा सकेंगे या नहीं। किन्तु अपने १८ महीने के कार्यकाल में ही उन्होंने भारतीय राजनीति में अपने लिए एक स्थायी स्थान बना लिया। पाकिस्तान के साथ हमारे युद्ध ने न केवल देश को आत्म गौरव और खोई हुई प्रतिष्ठा वापस लौटा दी, बल्कि इस युद्ध ने देश को शास्त्री जी के तेजस्वी व्यक्तित्व से परिचित कराया और देश ने उन्हें अतुल सम्मान और स्नेह से अभिषिक्त किया।

शास्त्री जी प्रचार से सदैव विमुख रहे। बड़ी से बड़ी प्रतिष्ठा के अधिकारी होने पर भी सामान्यतया रंगमंच से वे हिचकते थे। अभी दिसम्बर के महीने में संसद् के केन्द्रीय कक्ष में संसदीय और संवैधानिक अध्ययन संस्थान के उद्घाटन के अवसर पर जब वे आये थे, तो दूसरे अतिथियों के साथ बैठने लगे, मंच पर राष्ट्रपति जी के साथ, जहाँ उनके लिए स्थान नियत था, वहाँ नहीं बैठे। समारोह के कार्याध्यक्ष के रूप में मैंने उनसे अनुरोध किया, फिर राष्ट्रपतिजी की ओर से उन्हें मञ्च पर बैठने के लिए कहा, तो वे आये तो अवश्य, किन्तु जैसे कुछ संकोच के साथ। राष्ट्रपति जी कहने लगे—"लालबहादुर जी, आप अभी तक इस संकोच से मुक्त नहीं हुए।" शास्त्री जी ने कहा—'मैं वहीं ठीक था। फिर भी आपका आदेश सर माथे पर।" समारोह के बाद मुझे कहने लगे—"आपने मुझे यों ही इतने लम्बे-चौड़े शब्दों में धन्यवाद दे डाला। जहाँ अपनापा है, वहाँ धन्यवाद की क्या जरूरत।

साहित्यकारों के साथ उनका स्नेह विशेष रूप से उल्लेखनीय था। रांगेय राघव जब बीमार हुए तो तत्काल शास्त्री जी ने उनके लिए सारी व्यवस्था स्वतः ही कर दी। अभी पाकिस्तान के साथ संघर्ष के बाद दिल्ली में जब एक विशाल कवि-सम्मेलन का आयोजन हुआ तो वे आये तो आधा घंटे का कार्यक्रम बना कर थे, किन्तु कवि-सम्मेलन में लगभग ढाई-तीन घण्टे ठहरे। कुछ अर्से पहले राजस्थान के एक विद्वान् कोष-प्रणेता ने उनसे मिलना चाहा, तो मुझे लिखा, आप जब चाहें, अपने साथ में लेते

आय। और जब उनको लेकर मैं गया तो उनका जैसा भावभरा सत्कार उन्होंने किया, वह भुलाया नहीं जा सकता।

शास्त्री जी का निर्मल निश्छल स्वभाव उनकी विनोदप्रियता में प्रस्फुटित होता था। उन्हें बच्चों से बातें करते देखना या सुनना एक नयी ताजगी देने वाला होता था। किसी स्थान पर वे जाते, तो सबसे पहले वे बच्चों की तरफ अपना ध्यान देते और उनके साथ इतने सहज भाव से बातें करते कि देखते ही बनता, जैसे गम्भीर चिन्तनशील पटु, राजनीतिज्ञ का कहीं पता ही नहीं लगता था।

१९६२ के चीन के आक्रमण के बाद पंडित नेहरू का जोधपुर आने का कार्यक्रम था। वे न आ सके, तो उन्होंने शास्त्री जी को अपनी जगह भेज दिया। जोधपुर में कार्यक्रम था पंडित जी को तोल कर उनके बराबर सोना देने का। शास्त्री जी कहने लगे कि अगर यह बात है, तो मैं बहुत घाटे में रहूँगा। यदि पंडित जी की जगह मुझे ही सोना देने का निश्चय कर लिया, तो अब मेरे स्थान पर किसी ऐसे व्यक्ति को तोला जाय, जो मेरी पसन्द का हो और थोडा समय मुझे दे, ताकि कुछ भारी-भरकम आदमी आपके सामने उपस्थित कर सकूँ।

इस बार अक्टूबर में जब जोधपुर आये, तो उन्होंने कहा—"पिछली बार तो मैं सोने का दान ग्रहण करने के लिए जोधपुर आया था। तब राजस्थान ने भारतवर्ष में सबसे अधिक सोना दिया। इस बार में सोना सिर्फ उधार चाहता हूँ, इसलिए आशा है कि और भी ज्यादा सोना आप एकत्र कर सकेंगे।

गर्म दोपहर की धूप में जनता ने जिस तरह उनकी प्रतीक्षा की और जैसा उनका अपूर्व स्वागत किया, उसकी छाप उनके हृदय पर बहुत गहरी पड़ी। वे एक अत्यन्त भावुक व्यक्ति थे। जोधपुर से लौटते समय हवाई जहाज में उन्होंने कहा—"इस अथाह प्रेम और विश्वास के ऋण से कभी कोई मुक्त हो सकता है। उससे तो बस जिया जा सकता है। या कोई करे तो उसे सार्थक किया जा सकता है।"

भारत की जनता इस सत्य से सुपरिचित है कि शास्त्री जी ने हर क्षण उस प्रेम और विश्वास को सार्थक किया। उनका व्यक्तित्व भारत की उदात्त परम्परा के उत्कृष्ट फूलों का हार था, इन उन्नीस महीनों में शास्त्री जी का व्यक्तित्व उनके कृतित्व के माध्यम से निखरा, वे कुसुम से भी कोमल और वज्र से भी कठोर सिद्ध हुए। संकट में धैर्य, दृढता और साहस का परिचय देते हुए, विजय में विनम्रता ही उनकी विशेषता रही, इस थोडे-से समय में वे एक प्रधान मंत्री के स्थान से उठ कर युगपुरुष बन गये, एक ऐसे युगपुरुष जिन्होंने देश में एक नये चैतन्य का शंखनाद किया, देश को एक नयी दिशा, एक नया संकल्प दिया। आज समग्र देश उनकी पुनीत स्मृतियों को चिरश्रद्धा के सुमन समर्पित करता है और उनके कृतित्व के साफल्य में अपने को कृतकृत्य मानता है।

डा० महेशनारायण

चकाचौंध से दूर : शास्त्री जी

दिल्ली-त्रिमूर्ति-स्थित प्रधान मन्त्री का निवास । शीतकालीन दोपहरी । दूब पर मीठी धूप मे ससद् के सदस्यगण और मित्रमण्डली बैठी है । कुर्सी पर जवाहरलाल जी विराजमान है । भुवनेश्वर कांग्रेस मे बीमार पड़ने के पश्चात् आज पहले-पहल डाक्टरो ने उन्हे बाहर आकर मित्रो से सामूहिक रूप से मिलने की अनुमति दी है । हँसी ठहाका-मनोविनोद । लोग अपने प्रधान मन्त्री को स्वस्थ रूप मे पुन अपने मध्य पा, फूले नही समा रहे है । प्रसगवश अपनी हाल की कश्मीर यात्रा की चर्चा करते हुए श्री लालबहादुर शास्त्री ने कहा— "इस बार यदि मै पण्डित जी से एक गर्म कोट मॉग कर वहाँ नही ले गया होता, तो शीत के मारे एक दिन भी टिकना मुश्किल हो जाता । १६-१६ कपडो के पहने रहने पर भी ठण्ड के मारे बुरा हाल हो रहा था ।" श्री महावीर त्यागी भी वही बैठे थे । यह सुनते ही वह बोल उठे, "अब वह कोट शास्त्री जी हरगिज मत लौटाइए ।" यह कह उन्होने पण्डित जी की अचकन से उनका कीमती फाउन्टेन पैन निकाल लिया और कहा—"इससे आप बहुत लिख चुके, अब हम लोगो को काम करने दीजिए । आप आराम कीजिए ।" बडे जोरो का ठहाका लगा और पण्डित जी को सिवाय इसके कि यह तो पाकिटमारी है, कुछ कहते नही बन पडा । कोट जिनको मिला वह भारत के प्रधान मन्त्री हुए, और फाउन्टेन पैन हथियाने वाले सज्जन मन्त्रिमण्डल के सदस्य । जवाहरलाल जी की पोशाक और व्यवहार की चीजो मे कैसा जादू भरा था ।

शास्त्री जी नाटे कद के आदमी है । गाधी टोपी, कुर्ता, धोती, चप्पल या पपशू । उनकी वेश-भूषा-आकृति बहुत कुछ गाधी जी के सत्याग्रह के आरम्भिक दिनो की याद दिलाती है । सीधे-सीधे, सादे रहन-सहन के व्यक्ति, स्पष्टवक्ता, मधुर भाषी । शुरू से आज तक उनके जीवन मे एक बात रही, पद या आकाक्षा के कभी शिकार न हुए । सेवक बने रहे, दत्तचित्त से, जो काम दिया गया, सभाला चाहे वह सर्वेन्ट आफ इण्डिया सोसाइटी का काम हो जिसके सदस्य बन उन्होने १९२५ मे राष्ट्रीय जीवन मे प्रवेश किया था या आगे चल कांग्रेस का । १९४६ मे उत्तर प्रदेश मे पन्त जी ने उन्हे पहले-पहल अपना ससदीय सचिव बनाया । एक वर्ष के भीतर ही उनके मन्त्रिमण्डल मे वह पुलिस विभाग के मन्त्री हुए । १९५२ मे केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल मे सम्मिलित हुए । और तब से किसी-न-किसी रूप मे सिवाय कुछ अल्पकालीन अवधि के, इस बार प्रधान मन्त्री चुने जाने के पूर्व तक शास्त्री जी मन्त्रिमण्डल के सदस्य बने रहे ।

सन् १९५६ मे महबूब नगर, हैदराबाद मे रेल दुर्घटना हुई, जिसमे अनेक व्यक्ति मारे गये । शास्त्री जी उस समय रेलवे मन्त्री थे । उन्होने उस दुर्घटना की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ली और बिना किसी से कुछ कहे-सुने चुपचाप अपना इस्तीफा प्रधान मन्त्री को पेश कर दिया । केन्द्रीय और प्रान्तीय मन्त्रिमण्डलो मे जाने की एक होड़-सी लगी रहती है, और इसमे स्थान पाना बडे गौरव की बात समझी जाती है । पर केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल का सदस्य होकर कोई उसे, साधारण नैतिक दृष्टिकोण

से छोड़ भी सकता है—इसकी कल्पना भी स्वाधीन भारत में असम्भव है। श्री लालबहादुर शास्त्री ने ऐसा कर दिखाया और इससे जनता की नजरों में उनका स्थान बहुत ऊँचा हो गया।

गृहमन्त्री की स्थिति

एक पत्रकार उनकी ईमानदारी और सरल स्वभाव का बड़ा सुन्दर वर्णन कर रहे थे। कामराज योजना के पूर्व, पन्त जी के देहावसान के पश्चात् वह भारत सरकार के गृहमन्त्री के पद पर काम कर रहे थे। महीने का अन्तिम सप्ताह था। पोते ने एक नई स्लेट ला देने को फरमायश की। दो दिन किसी तरह और काम चलाओ। पहली को महीना मिलते ही ला दूंगा—यह दादा को हैसियत से उनका उत्तर था। एक साधारण किरानी ऐसा उत्तर दे, तो कुछ समझ में बात आ सकती है; पर यह उत्तर भारत के गृहमन्त्री का था। यह एक छोटी-सी घटना उनके जीवन पर सम्यक् प्रकाश डालती है। सुनते है, कामराज-योजना के पश्चात् जब वे केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल से हटे तब जवाहरलाल जी को इस बात की चिन्ता हुई कि लालबहादुर जी का खर्चा किस तरह चलेगा, क्योकि उन्होने कोई संग्रह तो अब तक किया नही है। अपने मकान के नाम पर आज भी इलाहाबाद मे एक किराये का मकान है जिसमें परिवार के लोग रहते है। यह ठीक है, कामराज योजना में हटने वाले मन्त्रियों की जो सूची जवाहरलाल जी ने बनाई थी, उसमे शास्त्री जी का नाम नही था। शास्त्री जी ने स्वय ही जोर देकर, प्रधान मन्त्री से उसमे अपना नाम रखवाया था।

उनकी दृष्टि बड़ी पैनी है। थोड़े समय में जानकारी की सभी बातों से वे अवगत हो जाते है। कुछ वर्ष पूर्व की बात है—डाक विभाग के वे मन्त्री थे। उस विभाग के अपने अनुभव पर प्रकाश डालते हुए उन्होने कहा था—"जब कभी तीसरे पहर चार-साढे चार बजे के बीच सेक्रेटेरिएट के अपने विभाग मे जाता हूँ, तब देखता हूँ बूढे तो जल्दी जल्दी अपना काम निबटाने में लगे है, पर जवान घर भागने की तैयारी मे लीन है। अतः मुझे जवान से अधिक बूढे कर्मचारी ही प्रिय लगते है।"

१९६२-६३ मे अंग्रेजो को १९६५ के बाद भी जारी रखने सम्बन्धी एक बिल संसद् में पेश हुआ। देश मे विशेषकर हिन्दी भाषा-भाषियों द्वारा इसका प्रबल विरोध हुआ। शास्त्री जी गृहमन्त्री थे। उस अवसर पर दिल्ली की एक साहित्यिक गोष्ठी मे अपने विचार प्रकट करते हुए उन्होने कहा—"मै छोटा-सा आदमी हूँ। मेरी भारतीय वेशभूषा (धोती-कुर्ता) को देख कर आप विश्वास रखें, मै हिन्दी का कोई अहित नही कर सकता।" उनकी इस निर्मल स्पष्ट वाणी ने बिल का विरोध करने वालो को कुछ समय के लिए-मोह सा लिया था।

व्यावहारिक दृष्टिकोण

जवाहरलाल जी की उन पर सदा स्नेह छाया रही, अतः अक्सर लोग उनको उनका अंधभक्त मुंशी भी कहने मे सकोच अनुभव नहीं करते थे, जिसका अर्थ यह हुआ कि स्वतन्त्र चिन्तन का उनमें सर्वथा अभाव है। यह बात पिछले साल मैने प्रयाग के एक प्रमुख साहित्यकार के मुँह से सुनी थी; पर त्रावणकोर की एक घटना ने लोगो के इस भ्रम को दूर करने में बहुत कुछ सहायता पहुँचाई। पोतुम पिल्लई पुराने कांग्रेसी थे जो प्रजा सोशलिस्ट पार्टी मे सम्मिलित हो गये थे। केरल विधान सभा में उनकी पार्टी के १०-११ सदस्य थे। वहाँ कम्युनिस्ट मन्त्रिमण्डल के हटाने मे कांग्रेस को उनकी पार्टी का पूर्ण सहयोग मिला था। अतः जब नया मन्त्रिमण्डल बना, तब वह कांग्रेस-प्रजा सोशलिस्ट पार्टी का सम्मिलित मन्त्रिमण्डल था और श्री पिल्लई ही मुख्यमन्त्री बनाये गये। कुछ दिनों तक तो यह सब ठीक

डा० महेशनारायण

चकाचौंध से दूर : शास्त्री जी

दिल्ली-त्रिमूर्ति-स्थित प्रधान मन्त्री का निवास । शीतकालीन दोपहरी । दूब पर मोठी धूप मे ससद् के सदस्यगण और मित्रमण्डली वैठी है । कुर्सी पर जवाहरलाल जी विराजमान है । भुवनेश्वर काग्रेस मे वीमार पड़ने के पश्चात् आज पहले-पहल डाक्टरो ने उन्हे बाहर आकर मित्रो से सामूहिक रूप से मिलने की अनुमति दी है । हँसी ठहाका-मनोविनोद । लोग अपने प्रधान मन्त्री को स्वस्थ रूप मे पुन अपने मध्य पा, फूले नही समा रहे है । प्रसगवश अपनी हाल की कश्मीर यात्रा की चर्चा करते हुए श्री लालवहादुर शास्त्री ने कहा— "इस वार यदि मैं पण्डित जी से एक गर्म कोट माँग कर वहाँ नही ले गया होता, तो शीत के मारे एक दिन भी टिकना मुश्किल हो जाता । १६-१६ कपड़ो के पहने रहने पर भी ठण्ड के मारे वुरा हाल हो रहा था ।" श्री महावीर त्यागी भी वही बैठे थे । यह सुनते ही वह बोल उठे, "अव वह कोट शास्त्री जी हरगिज मत लौटाइए ।" यह कह उन्होने पण्डित जी की अचकन से उनका कीमती फाउन्टेन पैन निकाल लिया और कहा—"इससे आप बहुत लिख चुके, अब हम लोगो को काम करने दीजिए । आप आराम कीजिए ।" वडे जोरो का ठहाका लगा और पण्डित जी को सिवाय इसके कि यह तो पाकिटमारी है, कुछ कहते नही वन पड़ा । कोट जिनको मिला वह भारत के प्रधान मन्त्री हुए, और फाउन्टेन पैन हथियाने वाले सज्जन मन्त्रिमण्डल के सदस्य । जवाहरलाल जी की पोशाक और व्यवहार की चीजो मे कैसा जादू भरा था ।

शास्त्री जी नाटे कद के आदमी है । गाधी टोपी, कुर्ता, धोती, चप्पल या पपशू । उनकी वेश-भूषा-आकृति बहुत कुछ गाधी जी के सत्याग्रह के आरम्भिक दिनो की याद दिलाती है । सीधे-सीधे, सादे रहन-सहन के व्यक्ति, स्पष्टवक्ता, मधुर भाषी । शुरू से आज तक उनके जीवन मे एक बात रही, पद या आकाक्षा के कभी शिकार न हुए । सेवक बने रहे, दत्तचित्त से, जो काम दिया गया, सभाला चाहे वह सर्वेन्ट आफ इण्डिया सोसाइटी का काम हो जिसके सदस्य बन उन्होने १६२५ मे राष्ट्रीय जीवन मे प्रवेश किया था या आगे चल काग्रेस का । १६४६ मे उत्तर प्रदेश मे पन्त जी ने उन्हे पहले-पहल अपना ससदीय सचिव वनाया । एक वर्ष के भीतर ही उनके मन्त्रिमण्डल मे वह पुलिस विभाग के मन्त्री हुए । १६५२ में केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल मे सम्मिलित हुए । और तव से किसी-न-किसी रूप मे सिवाय कुछ अल्पकालीन अवधि के, इस वार प्रधान मन्त्री चुने जाने के पूर्व तक शास्त्री जी मन्त्रिमण्डल के सदस्य वने रहे ।

सन् १६५६ मे महवूव नगर, हैदरावाद मे रेल दुर्घटना हुई, जिसमे अनेक व्यक्ति मारे गये । शास्त्री जी उस समय रेलवे मन्त्री थे । उन्होने उस दुर्घटना की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ली और विना किसी से कुछ कहे-सुने चुपचाप अपना इस्तीफा प्रधान मन्त्री को पेश कर दिया । केन्द्रीय और प्रान्तीय मन्त्रिमण्डलो मे जाने की एक होड-सी लगी रहती है, और इसमे स्थान पाना वडे गौरव की वात समझी जाती है । पर केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल का सदस्य होकर कोई उसे, साधारण नैतिक दृष्टिकोण

से छोड़ भी सकता है—इसकी कल्पना भी स्वाधीन भारत में असम्भव है। श्री लालबहादुर शास्त्री ने ऐसा कर दिखाया और इससे जनता की नजरों में उनका स्थान बहुत ऊँचा हो गया।

गृहमन्त्री की स्थिति

एक पत्रकार उनकी ईमानदारी और सरल स्वभाव का बड़ा सुन्दर वर्णन कर रहे थे। कामराज योजना के पूर्व, पन्त जी के देहावसान के पश्चात् वह भारत सरकार के गृहमन्त्री के पद पर काम कर रहे थे। महीने का अन्तिम सप्ताह था। पोते ने एक नई स्लेट ला देने को फरमायश की। दो दिन किसी तरह और काम चलाओ। पहली को महीना मिलते ही ला दूंगा—यह दादा को हैसियत से उनका उत्तर था। एक साधारण किरानी ऐसा उत्तर दे, तो कुछ समझ में बात आ सकती है; पर यह उत्तर भारत के गृहमन्त्री का था। यह एक छोटी-सी घटना उनके जीवन पर सम्यक् प्रकाश डालती है। सुनते है, कामराज-योजना के पश्चात् जब वे केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल से हटे तब जवाहरलाल जी को इस बात की चिन्ता हुई कि लालबहादुर जी का खर्चा किस तरह चलेगा, क्योकि उन्होने कोई सग्रह तो अब तक किया नही है। अपने मकान के नाम पर आज भी इलाहाबाद में एक किराये का मकान है जिसमे परिवार के लोग रहते है। यह ठीक है, कामराज योजना में हटने वाले मन्त्रियों की जो सूची जवाहरलाल जी ने बनाई थी, उसमे शास्त्री जी का नाम नही था। शास्त्री जी ने स्वयं ही जोर देकर, प्रधान मन्त्री से उसमे अपना नाम रखवाया था।

उनकी दृष्टि बड़ी पैनी है। थोड़े समय में जानकारी की सभी बातों से वे अवगत हो जाते है। कुछ वर्ष पूर्व की बात है—डाक विभाग के वे मन्त्री थे। उस विभाग के अपने अनुभव पर प्रकाश डालते हुए उन्होने कहा था—"जब कभी तीसरे पहर चार-साढे चार बजे के बीच सेक्रेटेरिएट के अपने विभाग मे जाता हूँ, तब देखता हूँ बूढे तो जल्दी जल्दी अपना काम निबटाने में लगे है, पर जवान घर भागने की तैयारी में लीन है। अतः मुझे जवान से अधिक बूढे कर्मचारी ही प्रिय लगते हैं।"

१९६२-६३ मे अग्रेजो को १९६५ के बाद भी जारी रखने सम्बन्धी एक बिल ससद् में पेश हुआ। देश मे विशेषकर हिन्दी भाषा-भाषियों द्वारा इसका प्रबल विरोध हुआ। शास्त्री जी गृहमन्त्री थे। उस अवसर पर दिल्ली की एक साहित्यिक गोष्ठी में अपने विचार प्रकट करते हुए उन्होंने कहा—"मै छोटा-सा आदमी हूँ। मेरी भारतीय वेशभूषा (धोती-कुर्ता को देख कर आप विश्वास रखें, मै हिन्दी का कोई अहित नही कर सकता।" उनकी इस निर्मल स्पष्ट वाणी ने बिल का विरोध करने वालो को कुछ समय के लिए-मोह सा लिया था।

व्यावहारिक दृष्टिकोण

जवाहरलाल जी की उन पर सदा स्नेह छाया रही, अतः अक्सर लोग उनको उनका अंधभक्त मुंशी भी कहने मे सकोच अनुभव नहीं करते थे, जिसका अर्थ यह हुआ कि स्वतन्त्र चिन्तन का उनमे सर्वथा अभाव है। यह बात पिछले साल मैने प्रयाग के एक प्रमुख साहित्यकार के मुँह से सुनी थी; पर त्रावणकोर की एक घटना ने लोगों के इस भ्रम को दूर करने मे बहुत कुछ सहायता पहुँचाई। पोतुम पिल्लई पुराने कांग्रेसी थे जो प्रजा सोशलिस्ट पार्टी मे सम्मिलित हो गये थे। केरल विधान सभा मे उनकी पार्टी के १०-११ सदस्य थे। वहाँ कम्युनिस्ट मन्त्रिमण्डल के हटाने मे काग्रेस को उनकी पार्टी का पूर्ण सहयोग मिला था। अतः जब नया मन्त्रिमण्डल बना, तब वह काग्रेस-प्रजा सोशलिस्ट पार्टी का सम्मिलित मन्त्रिमण्डल था और श्री पिल्लई ही मुख्यमन्त्री बनाये गये। कुछ दिनों तक तो यह सब ठीक

चला। पर पीछे फूट पैदा हो गई। दोनो पार्टियो के दिनों-दिन के झगडे बढते गये। केन्द्रीय पार्लिया-मेन्टरी बोर्ड बहुत आतकित हो गया कि वहाँ फिर कही तखर-बखड़ न हो। झगड़ा मिटाने और दरार पाटने की जब तब कोशिश की गई पर उसका स्थायी हल नही हो पा रहा था। जवाहरलाल जी राष्ट्र-मण्डल सम्मेलन के सिलसिले मे विलायत के दौरे पर गये हुए थे। झगडा सुलझाने श्री लालबहादुर शास्त्री को भेजा गया। उन्होने सब की बातो को सुन यह अन्दाज लगाया कि काग्रेसी बहुमत मे है। वे यह नहीं चाहते कि पोनुम पिल्लई उनके मुख्यमन्त्री के पद पर बने रहे। बस, शास्त्री जी ने पोतुम पिल्लई से एकान्त मे बातचीत की। उन्हे पजाब की गवर्नरी का मोह दिखा, पद त्याग करने को राजी कर लिया। प्रधान मन्त्री से यूरोप से सम्बन्ध स्थापित कर उनकी स्वीकृति प्राप्त कर ली। दूसरे दिन तत्सम्बन्धी राष्ट्रपति राधाकृष्णन् का आदेश जब आ पहुँचा तब कही जनता इस समाचार से अवगत हुई। सारी बातो को इस प्रकार गोपनीय रखा गया था कि जब यह खबर अखबारो मे छपी तब काग्रेसी ही नही, प्रजा सोशलिस्ट पार्टी वाले भी सुन कर दग रह गये थे। पोतुम पिल्लई को अपने साथियो से परामर्श करने तक का अवसर नही दिया गया जिससे उनकी पार्टी के लोग उनसे बहुत नाराज भी हुए थे। इसका सारा श्रेय श्री लालबहादुर शास्त्री के स्वतन्त्र चिन्तन एव व्यावहारिक दृष्टिकोण को ही था जिन्होने बिना किसी की राय-मशिवरा के एक महान् समस्या का हल स्वतः निकाल प्रान्त को डावाडोल होने से बचा लिया। यह घटना सन् १९६२ की है।

नेपाल ने जब से चीन से अभिसधि की और ल्हासा-काठमांडू सड़क के निर्माण की बात पक्की हुई, भारत से उसका सम्बन्ध बिगडता चला जा रहा था। कोइराला मन्त्रिमण्डल के भग और उसके सदस्यो की गिरफ्तारी के पश्चात् सुवर्ण शामशेर के नेतृत्व मे नेपाल मे राजा महेन्द्र के खिलाफ जो सत्याग्रह और विध्वसक कार्यवाही चल रही थी, उसने उस सम्बन्ध को बिगाड़ने मे आग मे घी का काम किया। यह एक बहुत ही खतरनाक स्थिति थी जिससे केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल ही नही, भारत का प्रत्येक स्वाभिमानी नागरिक चिन्तित था, पर कोई समाधान निकलता नही नजर आ रहा था। ऐसे ही अवसर पर शास्त्री जी ने नेपाल की सद्भावना-यात्रा की। यह सन् १९६३ की फरवरी की बात है। वह पटना आये। राजेन्द्र बाबू से परामर्श किया। काठमाडू रवाना होने ही वाले थे कि पूज्य राजेन्द्र बाबू का २८ फरवरी की रात्रि मे अचानक देहावसान हो गया। यात्रा स्थगित कर उनकी शव-यात्रा मे सम्मिलित हुए। नेपाल पहुँचे। वहाँ पर अपने सद्व्यवहार, मधुर वाणी और सरल स्वभाव से उन्होने नेपालियो को ऐसा मोह लिया कि भारत के प्रति उनकी सारी आशका और दुर्भावना बदल कर सद्भाव मे परिणत हो गई। यह शास्त्री जी के व्यावहारिक और स्वतन्त्र बुद्धि का दूसरा चमत्कार था।

उनके नाम के साथ जो शास्त्री शब्द जुडा है उससे अक्सर ब्राह्मण होने का बोध होता है, पर बात ऐसी नही है। वे कायस्थ हैं। काशी विद्यापीठ अपने स्नातको को शास्त्री की उपाधि देता है और वहाँ के छात्र होने के नाते यह उपाधि उनके नाम के साथ भी लगी है। उनके समय में (१९२१-१९२६) डाक्टर भगवानदास, आचार्य नरेन्द्रदेव एव सम्पूर्णानन्द जैसे दार्शनिक, विद्वान् और शिक्षाशास्त्री वहाँ अध्यापक थे जिनके निकट सम्पर्क और साहचर्य मे आ, उनको बहुत कुछ सीखने और जानने का अवसर मिला। नवराष्ट्र के संस्थापक और सम्पादक श्री देवव्रत शास्त्री वहाँ उनके सहपाठियो मे थे। कुछ दिन पूर्व देवव्रत जी के सम्पादकत्व में नवराष्ट्र प्रेस, पटना से हिमालय सदेश नामक एक साप्ताहिक का प्रकाशन हुआ। उसका उद्घाटन करते हुए शास्त्री जी ने अपने मित्र देवव्रत जी की ओर सकेत कर

कहा था—'नवराष्ट्र में कभी-कभा ऐसी टिप्पणियाँ प्रकाशित हुई हैं जो मुझे पसन्द नहीं आई किन्तु इससे नवराष्ट्र और देवव्रत जी के प्रति मेरे भाव में कोई अन्तर नहीं आने का।'

काश्मीर में इस साल हजरत मुहम्मद के बाल की चोरी हुई—इस भीषण समस्या को शास्त्री जी ने जिस कुशलता से सुलझाया और साथ ही नये मन्त्रिमण्डल को सिहासनारूढ़ कराया—यह किसी से छिपा नही है।

'मैं मन्त्री नहीं हूँ'

शास्त्री जी की बातों मे अक्सर हास्य का भी पुट वर्तमान रहता है। पिछले साल मन्त्रिमण्डल से हटने के पश्चात् वे इलाहाबाद आए। हवाई जहाज से उतर, मोटर पर चढ़ कर उन्होने अपने होलडाल की खोज की। मित्रो के यह कहने पर कि पीछे से आ जायेगा। शास्त्री जी ने कहा—"नही, अब मै मन्त्री नही हूँ कि उसकी दूसरे देखभाल करेंगे। इसका मुझे कटु अनुभव है।" और होलडाल लेकर ही वे डेरे पर रवाना हुए। इस एक वाक्य मे अनेक तथ्य छिपे है। बच्चो पर उनका स्वाभाविक स्नेह है। वे कहते हैं—मेरे नाटे कद के कारण मुझे अपना समकक्ष समझ कर मेरे पास आने मे वे सकोच नहीं, आनन्द अनुभव करते है।

मुगलसराय के पास एक छोटे-से गरीब परिवार मे सन् १६०४ मे श्री लालबहादुर शास्त्री का जन्म हुआ। पिता एक छोटी-मोटी दूकान चलाते और मास्टरी करते थे। लालबहादुर जी की अल्पावस्था में ही पिता का स्वर्गवास हो गया। मा ने बड़ी गरीबी मे उनका और उनको बहनों का पालन-पोषण किया। बनारस हरिश्चन्द्र हाई स्कूल और बाद मे काशी विद्यापीठ में लालबहादुर जी की शिक्षा-दीक्षा हुई। विद्यार्थी जीवन में कई ऐसे अवसर आए जब पैसे की कमी के कारण स्कूल से उनको नदी तैर कर घर जाना पड़ता था। इस बार प्रधान मन्त्री चुने जाने के पश्चात् उनकी ८१ वर्षीया वृद्धा माता ने कहा था—"मैं लालबहादुर से यही चाहती हूँ कि जान चली जाये, पर देश न गिरे।" प्रत्येक मां अपने लाल से ऐसे ही कार्य की आशा रखती है।

निर्विभागीय मन्त्री

श्री नेहरू शास्त्री जी को बहुत मानते थे। जब कभी विदेशी या देशी पत्रकार उनसे पूछते कि आपका उत्तराधिकारी कौन होगा तो वे एक ही उत्तर देते—'जनता स्वयं चुन लेगी, जनतन्त्र में उत्तराधिकारी चुना नही जाता। कुछ ऐसा भी अनुमान करते थे कि शायद वह इन्दिरा जी को चाहते है और इसी कारण कुछ बोलते नहीं। भुवनेश्वर कांग्रेस मे श्री नेहरू अचानक बीमार पड़े। उसी अवस्था मे दिल्ली लाये गये। प्रश्न उठा, प्रधान मन्त्री की बीमारी की अवधि मे उनका कार्यभार कौन सँभाले? क्या वरिष्ठ मन्त्रियो की एक समिति बना दी जाये? नही। श्री नेहरू की इच्छा हुई कि श्री लालबहादुर शास्त्री इस काम को करें। कई महीनों से वे कामराज योजना के कारण मन्त्रिमण्डल से बाहर थे। शपथ-ग्रहण कर जवाहरलाल जी के पास पहुँचे। बोले—मुझे क्या करना होगा? पंडित जी ने मुस्करा कर सिर्फ यही कहा—'मेरा काम।' अतः उस दिन से श्री नेहरू की मृत्युपर्यन्त सारे कार्यो को निर्विभागीय मन्त्री रह कर भी वे बड़ी खूबी से सभालते रहे। श्री नेहरू अच्छे हो स्वास्थ्य-लाभ के निमित्त दो दिन के लिए देहरादून गए। २६ मई को सध्या-समय दिल्ली लौटे। शास्त्री जी उनकी अगवानी के निमित्त पालम हवाई अड्डे पर उपस्थित थे। उन्हे देखते ही श्री नेहरू ने कहा—'दो चूड़ीदार पजामा और दो अचकन आप जल्द तैयार करवा ले। ४ जुलाई को राष्ट्रमण्डल सम्मेलन मे मेरे साथ लन्दन चलना होगा।' श्री नेहरू का यही अन्तिम आदेश शास्त्री जी के लिए था।

जवाहरलाल जी की मृत्यु के पश्चात् जब यह प्रश्न उठा कि उनका उत्तराधिकारी किसे चुना जाए, तब सब लोगो को दृष्टि एक हो व्यक्ति पर गई और वह थे श्री लालबहादुर शास्त्री। काग्रेस-अध्यक्ष श्री कामराज नाडार ने ससत्सदस्यो, मन्त्रियो और वरिष्ठ काग्रेसी नेताओ से अलग-अलग भेट कर राय ली। पलड़ा शास्त्री जी की ओर ही झुका रहा। शास्त्री जी के निर्विरोध निर्वाचन के बारे मे यह भी सुना जाता है, यद्यपि अखबारो मे उसकी चर्चा बहुत ही कम आई है। अधिक लोगो का इन्दिरा जी को ओर झुकाव था, दूसरा नम्बर शास्त्री जी का आता था। एक छोटी सी सख्या तीसरे व्यक्ति की ओर सकेत करती थी। जब इन्दिरा जी को यह समाचार सुनाया गया तब उन्होने कहा—'नही, बाबूजी शास्त्री जी को चाहते थे।' पिता का यह रहस्य केवल पुत्री ही जानती थी। और लोगो का रास्ता साफ हो गया। शास्त्री जी उनके स्थान पर सर्व सम्मति से नेता चुने गये। श्री नेहरू को मृत्यु के पश्चात् यह विवाद एक सप्ताह तक चलता रहा था। शास्त्री जी ने इन सारे विवादो के मध्य स्वय को अलिप्त और स्थिर रखा जब तक कि काग्रेस पार्टी ने इस काटे के ताज को उनको स्वय पहना नही दिया। नेता चुने जाने पर जो पहला कार्य उन्होने किया वह था बापू और श्री नेहरू की समाधियो पर पुष्पार्पण।

योग्य उत्तराधिकारी

अजब सयोग है। राजेन्द्र बाबू लम्बे थे, जवाहरलाल जी उनसे कद मे छोटे। इस बार भी डा० राधाकृष्णन शास्त्री जी से कद मे लम्बे हो है। तब कायस्थ राष्ट्रपति थे (राजेन्द्र बाबू)। ब्राह्मण प्रधान मन्त्री (जवाहरलाल जी)। इस बार ठीक उल्टा है ब्राह्मण राष्ट्रपति, कायस्थ प्रधान मन्त्री।

शास्त्री जी का रहन-सहन सादा, व्यवहार सरल एव किसी तरह के अभिमान की भावना उन्हे छूई तक नही। यदि यह कहा जाए कि उनके आचार-विचार राजेन्द्र बाबू से एव आदर्श नेहरू जी से मिलते थे तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी। १९६२ मे राष्ट्रपति-भवन मे पद से अवकाश ग्रहण करने के पूर्व पूज्य राजेन्द्र बाबू के अभिनन्दन समारोह मे बोलते हुए शास्त्री जी ने कहा था—'आने वाली पीढी शायद यह विश्वास भी नही करेगी कि राजर्षि जनक के समान कोई साधुमना राष्ट्रपति इस राष्ट्रपति-भवन मे कभो निवास भी करता था।'

कुछ लोग यह कहते नही चूकते कि काग्रेस पूंजोपतियो की सस्था है। अगर यह बात होती तो देश के राष्ट्रपति और प्रधान मन्त्री राजेन्द्र बाबू और लालबहादुर शास्त्री जैसे व्यक्ति कभी न बन पाते।

बम्बई की बात है। उस समय शास्त्री जी रेलवे मन्त्री थे। एक सज्जन उनसे मिलने आए और पुकारने वालो घण्टी बजाई। शास्त्री जी ने निकल कर उनका स्वागत किया। वह शास्त्री जी के चेहरे से परिचित नही थे। उनके छोटे कद और साधारण वेशभूषा को देख, उन्हे विश्वास नही हुआ कि ये रेलवे मन्त्री ही है। अत वे बोले—'मैं आप से नही, रेलवे मन्त्रो महोदय से मिलना चाहता हूँ।' शास्त्री जी कुछ बोले नही। भीतर आए, सचिव को कहा—'आगतुक सज्जन को ले आओ। जब उन्हे रेलवे मन्त्री के कमरे मे ले जाया गया तब कुर्सी पर शास्त्री जी को देख कर वे दग रह गये और क्षमा मांगो। ६० वर्षीय ऐसे सीधे-सादे, सरल, व्यावहारिक, धीर-गम्भीर स्पष्टवक्ता प्रधान मन्त्री जवाहरलाल जी के योग्य उत्तराधिकारी सिद्ध हुए जो अपनो ही उपलब्धियो मे जीए क्योकि उनमे कोई चकाचौंध नही थी।

हीरालाल चौबे

शास्त्री-प्रशासन का एक वर्ष

फ्रांस के बादशाह लुई चौदहवें ने कहा था—"मेरे बाद महाप्रलय।" युगपुरुष नेहरू के बाद भी कुछ लोगों की ऐसी ही धारणा थी। उन्हे भय था कि भारत तितर-बितर हो जाएगा, कांग्रेस छिन्न-भिन्न हो जाएगी, देश की एकता संदेहास्पद हो जाएगी और न जाने क्या-क्या होगा।

एक महान् जननायक के उठ जाने पर यह आशका बेबुनियाद थी, ऐसा नही कहा जा सकता। पर कांग्रेस ने विवेक से काम लिया और श्री लालबहादुर शास्त्री बड़े ही सौम्य वातावरण में सर्वसम्मति से प्रधान मंत्री चुने गए। २ जून १९६४ को प्रधान मंत्री मनोनीत होने पर शास्त्री जी ने अपनी पहली प्रेस-कान्फ्रेंस मे कहा—"हम नेता लोग गलती कर सकते हैं, किन्तु जनता का दृष्टिकोण ठीक होता है।" इन शब्दो मे शास्त्री जी ने अपनी सफलता-असफलता की कसौटी स्पष्ट कर दी।

शास्त्री जी को प्रधान मंत्री का पद सँभाले पूरा एक वर्ष हो गया है। इस एक वर्ष मे देश ने बड़े-बडे उतार-चढाव देखे है, संकटों और समस्याओं ने और भी गम्भीर रूप धारण किया है। अतः पिछले एक वर्ष की घटनाओ की पृष्ठभूमि में हमे भारत की वह तस्वीर देखनी है, जिसे शास्त्री-प्रशासन ने खीची है।

एक वर्ष की अवधि बहुत छोटी होती है। इतने बड़े देश की विविध समस्याओ के हल की पृष्ठभूमि में किसी असफलता की सारी जिम्मेदारी शास्त्री जी के सिर मढ़ देना उचित न होगा। जो समस्याएँ पिछले १७ वर्षो मे नही सुलझ सकी, उन्हें एक वर्ष में सुलझाने की क्षमता के आधार पर शास्त्री-प्रशासन को कसौटी पर खरा उतरते न देख, अफसोस नही करना चाहिए। परन्तु समस्याओ को समझने और उनके हल की दिशा-दृष्टि ढूँढने के परिप्रेक्ष्य मे एक वर्ष कम भी नही कहा जा सकता। आप कह सकते है कि १७ वर्षो मे नेहरू जी ने जो बोया उसे शास्त्री जी अब तक काट रहे हैं। नेहरू जी कितनी ही समस्याओ को बिना सुलझाए ही छोड़ गए। जब शास्त्री जी ने प्रधान मंत्री का पद संभाला तब वे और भी उलझी हुई थी, या यों कहिए कि एक महान् व्यक्तित्व के कारण जो समस्याएँ दबी हुई थी, वे उस व्यक्तित्व के उठते ही उठ खड़ी हुईं। शास्त्री जी ने नेता चुने जाने के बाद "समाजवाद, गुट-निरपेक्षता और दिवगत नेहरू जी के आदर्शो को चरितार्थ करने के संकल्प" की घोषणा की। परन्तु उन्होने ऐसा भी कहा था कि हमारे तरीके भिन्न होंगे। आर्थिक क्रांति की आवश्यकता को महसूस करते हुए भी उसकी क्रियान्विति को शांतिपूर्ण तरीके से सम्पन्न होने की इच्छा उन्होंने व्यक्त की।

व्यवहार मे सिद्धान्तों का स्वरूप समझने में सम्भव है कुछ भूल हो जाए। संसद् मे वामपंथी साम्यवादियो ने शास्त्री जी पर अगस्त १९६४ मे पेश अविश्वास प्रस्ताव पर हुई बहस के संदर्भ मे यह आरोप लगाया कि शास्त्री जी, नेहरू जी की नीति से अलग चल रहे हैं। जवाब मे शास्त्री जी ने इससे इन्कार करते हुए नेता के लीक-लीक न चलने के सिद्धान्त की व्याख्या की। शास्त्री जी कार्यरूप मे भी नेहरू जी की नीति से अलग चल रहे है या नहीं, इस विवाद मे न पड़ कर हम इतना जरूर कहेंगे कि

यह सही है कि कार्यरूप मे नेहरू जी स्वयं महात्मा गाधी की नीति पर नहीं चले, तो यह भी सही है कि शास्त्री जी भी नेहरू नीति पर लीक-लीक नही चल रहे है, परन्तु सिद्धात मे और गाधीवाद के आदर्शों की पृष्ठभूमि मे नेहरू जी और शास्त्री जी मे कोई फर्क नही है। व्यक्तित्व नेतृत्व, समय और परिस्थितियाँ इन सबमे सबसे अधिक निर्णायक होती है और चूँकि इन चारो दृष्टियो से नेहरू जी और शास्त्री जी मे अन्तर होना स्वाभाविक है, इसलिए धारणाएँ बदल सकती है। नेहरूजी के समय जहाँ केवल एक महान् नेतृत्व की बात थी वही शास्त्री जी के प्रधान मत्री होने पर सयुक्त नेतृत्व से इन्कार नही किया जा सकता। फर्क नेतृत्व का हो सकता है, नीतियो का नही।

आंतरिक समस्याएँ : मंहगाई

प्रधान मत्री मनोनीत होने के बाद श्री शास्त्री ने कहा था—"मेरे सामने इस समय सबसे बडी समस्या मूल्य-वृद्धि रोकने की है। तीन-चार और भी आवश्यक समस्याएँ है। देश की सुरक्षा की समस्या, गरीबी और बेकारी की समस्या कम महत्वपूर्ण नही हैं। आर्थिक प्रश्न हमारे लिए जीवन-मरण का प्रश्न है। मैं अनुभव करता हूँ कि इस देश को एक नई समाज-व्यवस्था की आवश्यकता है। हमारी ऐसी समाज-व्यवस्था होनी चाहिए कि थोडे-से लोग सब चीजो पर एकाधिकार न कर ले और दूसरे लोगो को कष्ट भोगना पडे।" महगाई और खाद्य-सकट की समस्या हल करने मे खाद्यमत्री ने वक्तव्य अधिक दिया, ठोस प्रयत्न कम किये। महत्वाकाक्षी खाद्यमत्री ने संभवत. सोचा कि इसकी जिम्मेदारी तो प्रधान मत्री पर है। और वह इससे भी अहम मसला भाषा विवाद को समझ बैठे। खाद्यमंत्री ने कहा था—"यदि मै महगाई और खाद्य सकट की समस्या शीघ्र हल न कर सका तो इस्तीफा दे दूँगा।' और उन्होने एक बार इस्तीफा भी दिया, पर इस बात पर नही कि वह महगाई की समस्या हल न कर सके, बल्कि भाषा के प्रश्न पर, सरकार की अस्पष्ट भाषा-नीति के कारण—भले ही वह इस्तीफा राजनीतिक रहा हो और बाद मे उन्होने वापस भी ले लिया। एक ओर जहाँ प्रधान मत्री महगाई रोकने और खाद्य सकट सुलझाने का फतवा देते हैं और उसे खाद्यमंत्री ने उस समस्या को गम्भीर रूप मे नही लिया, जिस रूप में उन्हे लेना चाहिए था। यही कारण है कि आवश्यक वस्तुओ का मूल्य घूम-फिर कर उसी केन्द्रबिन्दु के आस-पास मडरा रहा है, जो महगाई और बढी कीमतो का प्रतीक है। आज एक वर्ष हो गया, पर खाद्य सकट और महगाई मे कोई ऐसा पर्याप्त सुधार नही हुआ कि जनता राहत की सास ले सके। १५ अगस्त, १९६४ को लालकिले से श्री शास्त्री ने प्रधान मत्री के रूप मे दिये अपने पहले भाषण में कहा था—"खाने का सवाल, अन्न का सवाल कठिन हो गया है। .... आज कीमते बढ़ रही हे, मूल्य बढे हुए हैं, जरूरी सामान भी ज्यादा कीमतो पर मिलता है ...... ।

मुझे विश्वास है कि अगले दो वर्षो के भीतर हम अपनी ऐसी हालत बना सकेंगे, जिसमे आज जैसी स्थिति का मुकाबला न करना पड़े"।

पिछले एक वर्ष मे, घुमा-फिरा कर चाहे जो दलीले दी जाएँ, पर महगाई और खाद्य-सकट टस-से-मस नही हुआ। भाषा-विवाद, पाकिस्तानी आक्रमण आदि से ध्यान जरूर उधर हट गया हैं। श्री शास्त्री ने मुख्य मन्त्रियो के सम्मेलन मे कहा था—"मुनाफाखोरो को तत्काल दड देने की व्यवस्था की जाय।" पर कितने मुनाफाखोर दडित हुए? सरकार ने जो नीति और कार्यक्रम सुझाए, उन पर कितना अमल हुआ? स्वय शास्त्री जी के वक्तव्य का एक उदाहरण इस संदर्भ मे देना अनुचित न होगा—"नीति बनने के बाद उस पर पूरी तरह अमल होना ही चाहिए।" उसे अमल मे लाने मे कितनी

प्रगति हुई हैं, इस पर बराबर नजर रखनी होगी। नीतियाँ और कार्यक्रम कागज पर तो ठीक लगते है, लेकिन उनकी सही जाँच तभी हो सकती है, जब वे अच्छी तरह चलाये जाएँ। महंगाई और खाद्य संकट की सारी जिम्मेदारी प्रत्यक्ष रूप से भले ही खाद्यमंत्री की हो, पर प्रधान मंत्री मुख्य रूप से उत्तरदायी हैं। क्या इस समस्या को निराकरण में नीतियों और कार्यक्रम की सफल क्रियान्विति से प्रधान मंत्री को संतोष है ? उन्होने खाद्यमंत्री को जितनी लिफ्ट दी है, उस पर वह देश में एक अनुकूल वातावरण बनाने में सफल नहीं हो सकता है और महंगाई और खाद्य-संकट की गम्भीरता यथापूर्व है। आज भी हम अन्न के लिए विदेशों के मोहताज है और अन्न की बढ़ती कीमतों को उस स्तर पर न ला सके जो स्तर मई, १९६४ के पूर्व था।

भाषा-विवाद

२६ जनवरी, १९६५ के बाद राष्ट्रभाषा के पद पर हिन्दी को पूर्ण रूप से स्थापित करने का संकल्प शास्त्री जी पूरा न कर सके। अंग्रेजी को सहभाषा बनाए रखने के बावजूद भी दक्षिण में भाषा-विवाद का प्रश्न जिस तरह से उठा और कांग्रेस के वरिष्ठ लोगों ने भी जिस तरीके से उसे प्रश्रय दिया, उसका प्रतिरोध श्री शास्त्री जी उतनी दृढ़ता से न कर सके, जिसकी अपेक्षा थी। दक्षिण जिसे शास्त्री जी को प्रधान मंत्री बनाने का गलत-सही श्रेय प्राप्त है शास्त्री जी पर छा गया। मानाकि राष्ट्रीय एकता कोसर्वोपरि रख कर उन्होने विवेक से काम लिया, पर यदि जनता का दृष्टिकोण ही ठीक होता है तो यह मानना पड़ेगा कि भाषा के मामले में स्पष्ट रूप से दूरदर्शिता, देशहित और दृढता तीनों का अभाव रहा हैं। चाहते हुए भी शास्त्री जी किन्ही कारणों से भाषा की समस्या सुलझा नही पा रहे है। वह उत्तर-दक्षिण, हिन्दी-अहिन्दी भाषा-भाषियों का सद्भाव लेकर बीच का रास्ता अख्तियार करना चाहते है। कांग्रेस हाई कमान और मुख्यमन्त्रियो के सम्मेलन ने इस समस्या का हल कुछ निकाला जरूर। पर नेहरू जी के आश्वासनों को कानूनी रूप दने वालों का दुराग्रह शास्त्री जी से हिन्दी का और कुछ अहित करा बैठे तो आश्चर्य नहीं।

पार्टी—संचालन और भ्रष्टाचार

कांग्रेस-पार्टी चाहे संसद में हो या उससे बाहर, पार्टी नेता की नीतियो की सफलता क्रियान्विति मे बहुत ही बड़ा पार्ट अदा करती है। उसमे क्या भूले और क्या कमिया है, उन सब पर सजग दृष्टि आवश्यक होती है। गुटबाजी समाप्त करने की दिशा मे क्या प्रयत्न हुए और क्या प्रतिफल रहा, इससे भी सतर्क होना पड़ता है। आज नेहरु जी के बाद परस्पर गुटबाजी काग्रेस मे कम होने की बजाय अधिक बढी है। जिस तथाकथित 'सिण्डीकेट' के समर्थन पर शास्त्री जी को पदारूढ होने की चर्चा अब खुल कर होने लगी हैं, इसके अस्तित्व से इन्कार नही किया जा सकता। गुटबन्दी कितने अंशो मे समाप्त हुई है या बढ़ी है, यह भी पार्टी के हित मे पार्टी नेता को सफलता-असफलता का एक मानदंड है। शासन की गाड़ी खीचना एक बात है और दोनो गुटो में संतुलन बनाए रखना, काग्रेस सरकार पर पार्टी की लगाम कितनी है, अनुशासन की भावना कितनी दृढ हुई है। केन्द्र स्तर पर और राज्य स्तर पर संगठन और सत्ता मे काग्रेस की क्या स्थिति है। विद्रोह की भावना कितनी बढी है। (केरल संघ का प्रमाण है) इन तमाम बातो की पृष्ठभूमि मे ही सफलता-असफलता नाप सकते है। शास्त्री जी सरकार मे संयुक्त नेतृत्व की भावना कहाँ तक सफल हुई हैं। इन सारी बातो को देखना होगा। खुल कर शास्त्री की नीतियो मे असहमति प्रकट करने या पार्टी के भीतर विद्रोह करने की नौबत अब तक नही आयी

या यो कहे असन्तुष्ट होने पर भी केन्द्र स्तर पर कोई शक्तिशाली असन्तुष्ट गुट न बन सका यह शास्त्री जी की सफलता अवश्य है। पर राज्य स्तर पर उड़ीसा, बिहार, उत्तरप्रदेश, मैसूर, पजाब, मध्यप्रदेश मे ऐसी शक्तियाँ आज भी पूर्ववत् हैं। कभी इन्हे, कभी उन्हे दबा कर, धमका कर, अनुशासन की चेतावनी देकर वात भले ही जहाँ की तहाँ रोक दी जाय, पर आखिर नतीजा नही हुआ। पजाव मे सरदार कैरो के वाद रामकिशन पदारूढ जरूर किये गये पर नाव ठीक से नही चल रही है। उड़ीसा मे भ्रष्टाचार के प्रश्न को लेकर पटनायक-मित्रा पदमुक्त कर दिया है। पर आज भी पार्टी और सत्ता पर उन्ही का एकाधिकार है। पर यह तो किसी समस्या का हल नही हुआ। और तो और शास्त्री जी के स्वय के प्रदेश—उत्तर प्रदेश मे परस्पर की गुटबाजी क कारण न केवल एक दूसरे को नीचा दिखाने का क्रम चल रहा है, वल्कि खुलेआम अनुशासन-भग और विद्रोह की स्थिति हो गई है। श्री शास्त्री जी गुटवन्दी का अन्त नही कर सके और सिण्डीकेट पर उनकी निर्भरता और उभर कर सामने आ गई है। केन्द्र से लेकर राज्य स्तर क्या जिला स्तर तक काग्रेस के भीतर गुटबाजी पनपी है। इसे कम समझना अपने साथ घातक होगा।

भ्रष्टाचार मिटाने का राग बहुत अलापा गया, पर सी० बी० आई० की रिपोर्ट पर शास्त्री जी सरकार की जो फजीहत हुई लीपा-पोती की गई उससे देश मे कोई अच्छा वातावरण न बन पाया। दो वर्षो मे भ्रष्टाचार न मिटा देने पर इस्तीफा देने का वचन गृहमन्त्री ने दिया था। अगस्त मे दो वर्ष पूरे हो गये। पर भ्रष्टाचार जहाँ का तहाँ है। प्रशासन सुधार और भ्रष्टाचार निवारण का शोरगुल बहुत हुआ, पर स्थिति वही है—"पचो की बात सिर-माथे, पर नालो वही गिरेगी।" आर्थिक सुधार जरूर कुछ हुआ है, चौथी योजना का प्रारूप शास्त्री-सरकार का पहला कार्य है, जो काफी यथार्थ के धरातल पर तैयार किया गया है। चौथी योजना के पश्चात् २७ अक्टूबर को राष्ट्रीय विकास परिषद् की २१ वी बैठक मे कहा गया था—"हमारी योजना का सार होना चाहिए कि हम आज की समस्या और भावी उन्नति-साधनो और आवश्यकताओ के बीच सन्तुलन रखे। ...... चौथी योजना का ध्येय क्या होना चाहिए ? हमारी योजना उतनी ही वडी होनी चाहिए जितने के लिए हम साधन ढूँढ सके। साफ है शास्त्री जी के विचार स्पष्ट और सुलझे हुए है पर उनकी क्रियान्विति और प्रक्रिया पर ही सारी सफलता निर्भर रहती हे। जन साधारण को जब तक जीवन की आवश्यक वस्तुएँ सस्ते मूल्यो पर सुलभ नही होती, किसान सुखी नही होता तव तक देश की आर्थिक स्थिति को सुधारने का स्वप्न साकार नही हो सकता। श्री शास्त्री जी से जिस कडाई की अपेक्षा थी, सभवत उनके सरल स्वभाव व विनम्रता के कारण सभव नही हो सका। शास्त्री जी ने प्रशासनिक व्यय मे एक-तिहाई कटौती की वात कही थी, पर वर्ष मे उस दिशा मे कुछ विशेष प्रगति नही हुई।

नागालैण्ड के वारे मे शास्त्री सरकार ने प्रतिपक्षी दलो को आलोचना करने का मौका दिया। लगाम ढीली कर दी गई, पर इनसे कोई वाछित परिणाम की आशा नही करनी चाहिए। नागालैण्ड मे लडाई चल रही है, शान्ति भी जारी है, पर स्थिरता तो नही आई।

काश्मीर के मामले मे मिश्रित प्रतिक्रिया है। शेख अब्दुल्ला की सयुक्त मोर्चा पार्टी की हरकते अभी भी वातावरण को विषाक्त कर रही है। सादिक सरकार कितनी मजबूत हुई है यह नही कहा जा सकता, पर जम्मू काश्मीर मे काग्रेस की इकाई की स्थापना निस्सदेह एक रचनात्मक कदम है। देखिये धारा ३७० कव हटाई जाती हे, और जम्मू-काश्मीर पूर्ण रूप से व्यावहारिक रूप मे भारत का अविच्छिन्न

अंग बनता है। शेख अब्दुल्ला के विदेशों में देशद्रोही भाषणों पर उन्हें नजरबन्द कर लेने का फैसला और काश्मीर न जाने देना शास्त्री जी का उचित और उपयुक्त कदम कहा जा सकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय जगत में

श्री नेहरू ने निःसंदेह भारत को दुनिया के मानचित्र में अपनी पर-राष्ट्र नीतियो के वल पर एक महत्वपूर्ण स्थान दिलाया। विभिन्न पहलू से नेहरू जी की पर-राष्ट्र नीति की आप चाहे जो आलोचना करें, पर गुट-निरपेक्ष और तटस्थता की नीति का ही भारत के लिए एकमात्र रास्ता रह गया है।

पिछले एक वर्ष मे नेपाल के साथ सम्बन्ध निश्चित रूप से सुधरे है। शास्त्री जी की नेपाल-यात्रा से नजदीकी रिश्ता बढा है। लका की प्रधान मन्त्रिणी से वहाँ प्रवासी भारतीयो के समय मे कुछ समझौता जरूर हुआ है। पर उनके पदच्युत हो जाने से वह प्रश्न अभी उलझा हुआ है और उस पर नये सिरे से लंका, के साथ शास्त्री-सरकार की वार्ता होनी है। शास्त्री जी कहाँ तक अपना पक्ष प्रतिपादित कर पाते है, यह अभी कुछ कहना ठीक नही होगा। अगस्त १९६४ मे पर-राष्ट्र मन्त्री को शास्त्री जी ने वर्मा भेजा। बर्मा के प्रधान मन्त्री विन भी भारत आए। वर्मा के प्रवासी भारतीयों के बारे मे शुरू मे ढिलाई की गई। विन से हुई वार्ता के फलस्वरूप वहाँ बसे भारतीय किसानो को कुछ आश्वासन भी दिया गया, पर कोई सार्थक हल उन्हे अभी तक नही मिला।

रूस की भी अभी हाल ही की यात्रा से भारत-सोवियत संघ के बीच सद्भाव बढा है और हमारी योजनाओ की सफलता क्रियान्विति मे वड़ा भरोसा दिलाया है। रूस ने भारत का जो सम्मान किया है और इस कष्ट मे उसने जो सहानुभूति दिखाई है, उससे भारत का मनोवल वढ़ा है। इसे शास्त्री जी की कुशलता मानी जायगी, पर अमेरिका के साथ भारत का सम्वन्ध उत्तरोत्तर कटु होता जा रहा है। यह चिन्ता की वात है।

काहिरा मे हुआ तटस्थ राष्ट्रों के सम्मेलन में शास्त्री जी का इतना प्रभाव नही पड़ा चाहे कारण जो भी हो, इण्डोनेशिया, चीन की चकवन्दी के कारण या अपनी किसी कमी के कारण। शास्त्री जी को ब्रिटैन की यात्रा से और नये प्रधान मन्त्री के रूप में विल्सन के चुने जाने से भारत को वडी आशायें थी। पर भारत-पाक विवाद में ब्रिटेन की मध्यस्थता से कलई खुल जायगी कि उनके दिल मे हमारे प्रति कितनी सहानुभूति है। काश्मीर, गोवा आदि के प्रश्न पर उनकी हम नेकनीयत देख चुके है। देखिये भविष्य मे इनसे हमारा सम्बन्ध कैसा होता है?

चीन और पाकिस्तान

अक्तूवर, १९६२ में भारत पर चीनी आक्रमण से भारत की प्रतिष्ठा पर जो गहरा धक्का लगा है, उससे हमारा उद्धार होना तो दूर हम फिर गफलत मे, आपसी विवाद मे पड़ गये, राष्ट्रीय एकता को ताक पर रख कर। चीन द्वारा अनाधिकृत ढंग से कब्जा की गई भूमि लेने की दशा में हमने पिछले ढाई-तीन वर्षों से कोई ठोस प्रयत्न नहीं किया। सामरिक ढंग से देश की सुरक्षा की जिम्मेदारी हमने महसूस जरूर की, पर चीन के दो-दो परमाणु वमों का परीक्षण पिछले एक वर्ष मे चीन की जहा उपलब्धि है, वहीं कच्छ सिन्ध-सरहद पर पाकिस्तान ने चीन के इशारे पर उसी ढग पर जो आमक्रण किया है

उससे शास्त्री सरकार का फिर सतक होना जरूरी हो गया। हमें इसे इसी रूप में देखना होगा जैसे नेहरू सरकार के समय चोन ने भारत पर आक्रमण किया वैसा ही शास्त्री सरकार के समय पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण किया है। इस समय आवश्यकता है चीन पाकिस्तान दोनो के खतरो को समझ कर भागीरथ प्रयत्न की। आज असम से उत्तरी सीमा की पूरी सरहद नागालैण्ड, सिक्किम, भूटान, नेफा, लद्दाख, जम्मू, काश्मीर, राजस्थान, कच्छ, सिन्ध सरहद तक चीन पाकिस्तानी फौजो जमाव का खतरा बना हुआ है। स्वय शास्त्री जी के शब्दो मे "चीन और पाकिस्तान हमारे दो पड़ौसियो ने हमारे खिलाफ आक्रमण का रुख अपनाया है।" इन दोनो की साठ-गाठ से भारत को नीचा दिखाने की कोई बहुत बडी साजिश है। ऐसे मे हमे बडी दूरदर्शिता, दृढता और सतर्कता से काम लेने की आवश्यकता है। श्री शास्त्री जी का एक वक्तव्य, जो उन्होने ससद् मे १२ अप्रैल को दिया था यहाँ उद्धृत करने योग्य है। उन्होने कहा था—"जहा तक कजरकोट की बात है हमारा पक्का इरादा है कि उनका स्टैंडिग पोस्ट हम वहाँ नही रहने देगे। यह ठीक है कि उसको हटाने मे हम अपनी जरूरत की सब बाते पूरा करके ही उस पर कार्यवाही करेंगे इस बीच मे अगर कोई बातचीत होती है और उसके बन्द करने की बात कही जाती हैतो उसमे यह शर्त होगी कि कजर कोट खाली किया जाय वैसे हम बात करने के लिए तैयार नही है।" शास्त्री जी का यह पहला वर्ष अग्नि-परीक्षा का वर्ष रहा है।

अपनी जरूरत भर का अनाज पैदा करना आज मैं उतना ही जरूरी समझता हूँ, जितना रक्षा का प्रबन्ध करना। अनाज के लिए बाहर के देशो के सहारे रहना न केवल देश को अर्थ-व्यवस्था के लिए बुरा है, बल्कि इससे हमारे आत्मविश्वास और स्वाभिमान को भी ठेस पहुँचती है। हमे अपने पैरो पर खड़ा होना है। आज अनाज का मोर्चा लगभग उतना ही महत्त्वपूर्ण है, जितना फौजो मोर्चा।

—लाल बहादुर शास्त्री

एक अनासक्त योगी

गीता में श्री कृष्ण ने जिस अनासक्त कर्मयोग की महत्ता चित्रित की है, स्व० श्री लालबहादुर शास्त्री ने उसको पूर्ण रूप से हृदयगम कर दिया था। वह गीता के अनन्य उपासक थे। वह गीता-वाचको की तरह केवल गीता पढ कर ही सन्तोष नही कर लिया करते थे, वरन् और भी आगे बढते थे, अपने को कर्म के साँचे मे ढालते थे। यही उनकी पूजा थी—यही उनकी आराधना थी। वह लोगों के आग्रह पर देवालयो मे चले जाते, मूर्तियो के सामने मस्तक झुका देते, संकीर्तन-गोष्ठियों मे बैठ जाते, पर उन की आस्था केवल कर्म मे थी। वह कर्म को ही ईश्वर और कर्म को ही 'सत्य' मानते थे।

जोवन के प्रथम चरण से लेकर अन्त तक शास्त्री जी कर्म की उपासना में ही रत रहे। उन्होंने उस समय कर्म की कठोर साधना की, जब वह काशी मे निराश्रित और निरावलम्ब विद्यार्थी के रूप मे अपना जीवन व्यतीत कर रहे थे, और उन्होने उस समय भी कर्म की आराधना की, जब वह प्रयाग मे रहकर देश की स्वतन्त्रता के लिए ब्रिटिश शासन से जूझ रहे थे। उन्हे काशी और प्रयाग के अपने साधना-क्षेत्रो मे जिन अभावों और जिन आपदाओ के मार्ग पर चलना पड़ा था, उन पर वह तपःपूत योगी ही चल सकता है, जिसकी आत्मा के भीतर जन्म-जन्म की साधना की ज्योति हो—अखण्ड शक्ति हो।

इतिहास के पृष्ठों मे ऐसे अनेक महान पुरुष मिलते है, जिन्होंने देश की स्वतन्त्रता के लिए मृत्यु की विभीषिकाओं का आलिगन किया है। पर ऐसे महान पुरुष बहुत कम मिलेगे, जिन्होने अपनी धर्मपत्नी, अपनी माँ और अपने छोटे-छोटे सुकुमार बच्चो को अभावो की गोद मे छोड़ कर, देश-सेवा के तीर्थ की यात्रा की हो। शास्त्री जी उन बहुत 'कम' लोगों मे से एक थे। जानने वाले जानते है कि शास्त्री जी जिन दिनो प्रयाग मे अपनी कर्मोपासना मे रत थे, उनके कुटुम्बियो को किस प्रकार अभावो के मार्ग पर चलना पड़ता था। शास्त्री जी भी जानते थे कि उनकी स्वदेश-सेवा से, उनकी कर्मोपासना से उनके छोटे-छोटे बालको को अभावो की आग मे जलना पड़ता है। वह केवल जानते ही न थे, उनकी आँखों के सामने उनके सुकुमार बच्चो के दयनीय जीवन के चित्र भी आते थे, पर फिर भी उनका धैर्य न हिलता था, न आसन डगमगाता था। जब अरावली पर्वत के जंगलों मे, महाराणा प्रताप की पुत्री के हाथ से घास की बनी हुई रोटी जगली विलार छीन कर ले भागा था, और उनकी पुत्री भूख से तड़प उठी थी तब उस दृश्य ने महाराणा प्रताप जैसे दृढ़-निश्चयी के हृदय को भी विचलित कर दिया था, और वह व्याकुल हो कर अकबर से सधि करने के लिए तैयार हो गए थे। शास्त्री जी के जीवन मे भी इस प्रकार के कई अवसर आए, पर उनका बज्र का वना हुआ हृदय विचलित न हुआ। उन्होने एक क्षण के लिए भी कर्म की उस साधना को छोड़ने का विचार तक न किया, जिसका उन्होने 'शिव' को महानगरी काशी मे अनुष्ठान किया था।

जेल जाना ही चाहिए

शास्त्री जी नैनी जेल मे थे। उनकी पुत्री पुष्पा बीमार हुई। कुछ ही दिनो मे उसकी दशा चिन्तनीय हो गई। प्रयाग के साथियो ने शास्त्री जी पर दवाब डाला कि वह जेल के बाहर जाकर अपनी पुत्री की देख-रेख करे। शास्त्री जी राजी हुए। उनकी पैरोल भी स्वीकृति हो गई, पर शास्त्री जी ने उस पैरोल पर छूटने से अस्वीकार कर दिया, क्योकि उसके अनुसार शास्त्री जी को यह लिख कर देना था कि वह जेल के बाहर जाकर आन्दोलन के समर्थन मे कुछ न करेगे। उधर लडकी जीवन और मृत्यु को लहरो मे गोते खाने लगी, इधर शास्त्री जी अपने स्व० देशाभिमान पर दृढ थे। आखिर जिलाधीश शास्त्री जी की नैतिक और चारित्रिक दृढता पर द्रवित हो उठा। उसने शास्त्री जी को विना किसी शर्त के मुक्त कर दिया। शास्त्री जी घर पहुँचे, पर उसी दिन बालिका के प्राण पखेरू उड़ गए। शास्त्री जी उसकी अन्तिम क्रिया करके लौटे—घर के भीतर किसी से मिलने भी न गए, सामान उठा कर तागे मे वैठ गये। लोगो ने बहुत कहा, अभी तो पैरोल बाकी है। पर शास्त्री जी ने उत्तर दिया—"मै जिस कार्य के लिए पैरोल पर छूटा था, वह खत्म हो गया है। इसलिए सिद्धान्तत अब मुझे जेल जाना ही चाहिए।" और वह जेल चले गए।

एक वर्ष पश्चात् शास्त्री जी का बडा पुत्र 'हरि' बीमार पडा। शास्त्री जी पुनः एक सप्ताह के पैरोल पर छूटे। जाने का दिन आया—बच्चे को १०४ डिगरी बुखार था। शास्त्री जी कुछ देर तक उसकी चारपाई के पास खड़े होकर देखते रहे। जिलाधीश का सन्देश मिला कि शास्त्री जी यदि लिखित वचन दे कि वह आन्दोलनकारियो से सम्पर्क न रखेगे, तो उनकी पैरोल बढाई जा सकती है। पर शास्त्री जी ने जिलाधीश की शर्त अस्वीकार कर दी। ज्वराक्रान्त हरि 'बाबूजी, बाबूजी' कह कर चीख उठा। पर शास्त्री जी ने पुन मुडकर बच्चे की ओर न देखा।

पुत्र के प्रति ऐसी कठोर अनासक्ति इतिहास के पृष्ठो मे भी बहुत कम दिखाई पडती है। पर शास्त्री जी अपनी सन्तानो को कष्टो की आग मे आह-ऊह करते हुए देख कर भी, कर्म की साधना मे सदा रत रहे। यही वह विशेषता है, जिसने शास्त्री जी को कभी वैभव, प्रचार, आत्म-रति और जाति तथा बधु-बाधवो के मोह मे आग्रस्त होने नही दिया। जिसने कर्म की वेदिका पर पुत्र, धर्मपत्नी और माँ की ममता भी चढा दी हो, उस वीर पुरुष को बधु-बाधवो का मोह कैसे अपने कर्त्तव्य से विचलित कर सकता था? कितने ही मित्र, निकट सम्बन्धी शास्त्री जी से अप्रसन्न हो गए, पर शास्त्री जी चारो ओर से दृष्टि खीचकर बडी कठोरता के साथ अपने कर्म पथ पर ही चलते रहे।

शास्त्री जी की अनासक्ति कर्मोपासना का क्रम उस समय भी न टूटा, जब वह मन्त्री हुए। और उस समय भी न टूटा, जब वह भारत जैसे विशाल और महान देश के प्रधान मन्त्री-पद पर प्रतिष्ठित हुए। वह केवल जीवित रहने के लिए भोजन करते थे। उन्होने कभी ऐसे वस्त्रो, ऐसे भोजन, और ठाट-बाट के ऐसे साधनो का उपयोग नही किया, जिससे यह लगता कि वह मन्त्री है। वही सादा भोजन, वही सादे कपडे, और सादा रहन-सहन जो कभी काँग्रेस के एक सिपाही के रूप मे था, मन्त्री के रूप मे भी ज्यो का त्यो बना रहा। वह केवल अकेले ही नही, अपने कुटुम्बियो को भी अपने साँचे मे ढालकर चलते थे, पर कठोरता से नही, मृदुता से। किसी को कभी सादगी के पथ से पृथक होता हुआ देखते, तो अपने लहजे मे व्यंग्य कस दिया करते थे।

शास्त्री जी ने क्या लखनऊ और क्या दिल्ली, कहीं भी रहते हुए अपने लिए, अपने सम्बन्धियों के लिए कुछ नही किया। यही कारण है कि वह आज जब नही है, तब उन के कई घनिष्ठ सम्बन्धी साधारण पदों पर अपने कर्त्तव्यों का पालन करते हुए उनकी अनासक्तता की घोषणा करते है। इसी दिल्ली मे बड़े-से-बड़े महान नेता के भी स्वात्म मोह के चित्र मिलते है, पर ऐसा एक भी चित्र नहीं मिलता, जिससे यह प्रकट होता हो कि शास्त्री जी में भी स्वजनों के प्रति मोह था।

अपनी कलम से कुछ नहीं

लखनऊ की बात है। वह मन्त्री-पद पर प्रतिष्ठित थे। उनकी ज्येष्ठ कन्या, कुसुम के पाणि-ग्रहण को बातचीत श्री कौशल कुमार (जो उसके पति है) से चल रही थी। श्री कौशल कुमार पी. सी. एस. की परीक्षा मे उत्तीर्ण हो चुके थे। पर उस वर्ष डिप्टी कलक्टरो के कुछ ही स्थान रिक्त थे। अतः कुछ उत्तीर्ण छात्रो को डिप्टी कलक्टरो के पदो के लिए निर्वाचित करके शेष को अन्य विशिष्ट पदो के लिए चुना जाना था। श्री कौशल कुमार का नाम दूसरे वर्ग के उत्तीर्ण छात्रो की सूची मे अच्छे स्थान पर था। किन्तु जब शास्त्री जी के पास यह सूची गई, तब शास्त्री जी ने दूसरे छात्रो के नामो के सामने चिन्ह लगा दिए पर श्री कौशल कुमार का नाम छोड़ दिया। कदाचित भूल हो गई हो, तत्सम्बन्धी अफसर ने दूसरी बार पुन. सूची शास्त्री जी के सामने प्रस्तुत की पर शास्त्री जी ने पुनः दूसरी बार भी श्री कौशल कुमार के नाम के आगे चिन्ह नही लगाया। किसी प्रकार शास्त्री जी के मामा श्री पुरुषोत्तम लाल जी के कानो मे यह खबर पड़ी। उन्होने शास्त्री जी के पास जाकर कहा कि यदि लडके को यह बात मालूम हो गई कि उसका होने वाला श्वसुर, उसे उसके न्यायोचित अधिकार से भी वञ्चित कर रहा है, तो फिर विवाह होने से रहा। किन्तु शास्त्री जी रंच मात्र भी न हिले। उन्होने यह कह कर अपने मामा को निरुत्तर कर दिया कि चाहे जो हो, पर मै अपनी कलम से कुछ न करूँगा। और उन्होने कुछ न किया। आज भी श्री कौशल कुमार को गर्व से यह कहने का अवसर प्राप्त है कि वह जो कुछ बने है, केवल अपनी योग्यता से बने है। उसमे उनके श्वसुर स्व. शास्त्री जी का कुछ नही है।

एक दूसरी घटना दिल्ली की है। इसका सम्बन्ध शास्त्री जी के सगे भानजे श्री बाबू से है। श्री बाबू आई. ए. एस. की परीक्षा मे उत्तीर्ण हो चुके थे और साक्षात्कार मे भी निर्वाचित हो चुके थे। पर उस वर्ष कुछ ही उत्तीर्ण छात्रो के लिए स्थान रिक्त थे। शेष सुरक्षित सूची मे रखे जाने वाले थे। श्री जी का नाम भी इसी दूसरी सूची मे था। पर श्री जी की माँ, श्रीमती सुन्दरी देवी जो शास्त्री जी की सगी बहन है, चाहती थी कि श्री जी चालू वर्ष मे ही काम मे लग जाय। वह शास्त्री जी के पास पहुँची और उन्होने अपना मन्तव्य उन पर प्रकट किया। श्री शास्त्री जी ने सुना और सुन कर मौन हो गये। वह हफ्तो टिकी रही। जब उन्हे अवसर मिलता, वह शास्त्री जी पर अपना मन्तव्य प्रकट करती। शास्त्री जी भी सुनकर मौन हो जाते। आखिर उनका धैर्य हिल उठा। वह दुखी होकर पटना लौट गई। पर शास्त्री जी ने कुछ न किया। वह अब इस घटना को बड़े गर्व से याद करती है।

और की तो और, वह कर्त्तव्य-पालन के मार्ग पर अपनी धर्मपत्नी और अपनी माँ की भी चिन्ता नही करते थे, वह वही करते थे, जिसे ठीक समझते थे। किसी की सिफारिश, किसी का स्नेह और किसी का मोह उन्हें झुठला नही सकता था। वह चाहते थे कि लोग कर्मनिष्ठ और कर्त्तव्यनिष्ठ

वने। पर वह इसके लिए किसी को डाट नही सकते थे। वह अपने इस मतव्य को उन व्यक्तियों की प्रशसा करके प्रकट किया करते थे, जो ससार की सूची मे कर्म और कर्त्तव्यनिष्ठा के लिए प्रसिद्ध है।

स्वात्म की तो वात क्या, शास्त्री जी को 'स्व' से भी आसक्ति नही थी। विद्यार्थी अवस्था से लेकर प्रधान मन्त्री वनने तक वह बरावर शरीर-पोषण के उद्देश्य से भोजन किया करते थे। उनके भोजन मे स्वाद की चीजे होती तो भी वह उन्हे स्वाद से खा लिया करते थे और नही होती थी तो भी वह उन्हे स्वादिष्ट चीजो की भाँति ही खा लिया करते थे।

शास्त्री जी अपने काम अपने हाथो से ही किया करते थे। जीवन भर उनकी यही नीति रही, कि उनके कार्यों का भार किसी दूसरे पर न पड़े। अपनी इस नीति के फलस्वरूप वह अपना छोटा-सा-छोटा काम तक अपने हाथो से ही कर लिया करते थे। जेलो मे या जेलो के बाहर भी अपने कपडे स्वय साफ कर लेते थे। जेलो मे उनका गर्म तसला कपडो और टोपी पर गर्म लोहा करने के काम आता था। मत्री और प्रधान मत्री होने पर भी वह कभी-कभी अपने कमरे मे झाड़ू लगा लिया करते थे। नौकर जव तक विस्तर विछाने के लिए पहुँचता, वह अपना बिस्तर विछा चुके होते थे। इसी प्रकार नौकर जव उनके जूठे बर्तन उठाने के लिए पहुँचता, तब वह अपने बर्तन स्वय उठा चुके होते थे।

कभी-कभी कोई आगतुक उनके इस कार्य को देख कर उन्हे टोक दिया करता था। पर वह यह कह कर उसे निरुत्तर कर दिया करते थे—'भई, जो आदत जन्म से बनी है, उसमे क्यो परिवर्तन किया जाए? ईश्वर ने जब हाथ-पैर दिए है, तब क्यो दूसरों को कष्ट दिया जाए।'

शास्त्री जी की विरक्ति

शास्त्री जी की 'स्व-विरक्ति' इन दिनो और भी अधिक वढ गई थी। खाने-पीने मे उनकी निरासक्ति तो थी ही, इन दिनो वह एकाकी रहने की इच्छा व्यक्त करने लगे थे। वह कर्म केवल कम के लिए ही किया करते थे, पर इन दिनो उनकी आसक्ति कर्म मे भी नही रह गई थी। ऐसा लगता था कि वह कर्म की उपासना करते-करते थक गए थे, या अपनी कर्म-शक्ति से उस जाल को छिन्न-भिन्न करने मे अपने को असमर्थ पा रहे थे, जो उनके चारो ओर फैला हुआ था। उनकी विश्रान्ति और उनकी असमर्थता कभी-कभी कुटुम्वियो के वीच मे उनके मुख से फूट पडती थी। राजनीति से पृथक रह कर जीवन व्यतीत करने की वात तो समाचार-पत्रो तक मे छप चुकी है। आश्चर्य नही, यदि शास्त्री जी काल-कवलित न होते तो वह राजनीति से पृथक हो जाते। शासन और दल की निष्क्रियता तथा भ्रष्टता उन्हे वहुत खलती थी। वह वहुत कुछ करना चाहते थे, पर करने मे अपने को असमर्थ पा रहे थे। वह अपने पीछे एक वहुत वडा प्रश्न छोड गये है। वह प्रश्न है—"शास्त्री जी के अनासक्त कर्मयोग का महान पौरुप, और आज के शासन तथा राजनीति से उनकी विरक्ति।"

हमे यहाँ इस प्रश्न का उत्तर नही खोजना है। इस प्रश्न का उत्तर तो वह भविष्य खोजेगा, जिसके आगमन को कोई भी दुरभि-सन्धि—कोई भी शक्ति रोक नही सकती। हमे तो यहाँ केवल यही कहना है कि शास्त्री जी जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त कर्म की ही उपासना मे रत रहे। उन्होने कभी फल की आकाक्षा न की। पर उन्हे फल प्राप्त हुआ। फल प्राप्त होने पर भी उन्होने फल का रसास्वादन न किया—यह उनके व्यक्तित्व की सवसे वडी विजय है। वह कर्म के लिए पैदा हुये थे, और कर्म के लिए ही चिर-निद्रा मे सो गये।

जयप्रकाश भारती

सर कटा सकता हूँ लेकिन सर झुका नहीं सकता

दस नम्बर जनपथ पर पहुँचता हूँ—दरवाजे पर ही जाकर ठिठक जाता हूँ। कही भाग-दौड़ और चहल-पहल नही है। अभी दो महीने ही मुश्किल से गुजरे है, जब यहाँ आने-जाने वालों का ताता लगा रहता था, देश-विदेश के राजनीतिज्ञ होते, पत्रकार, फोटोग्राफर होते, मन्त्री तथा वरिष्ठ अधिकारी होते और सामान्य-जन होते, जिनका सही-सच्चा प्रतिनिधित्व करते थे श्री लालबहादुर शास्त्री।

सहमा-सहमा-सा देखता हुआ बढ़ता हूँ और एक दीर्घा में प्रवेश करता हूँ—फिर ड्राइङ्ग-रूम मे। यहाँ शास्त्री जी लोगो से मिला करते थे। दुनियाँ के किसी भी देश के प्रधान-मंत्री का ऐसा सादा ड्राइङ्ग-रूम हो सकता है, यह विश्वास नही हो पाता। यहाँ चार नमूनो की चार मेजें पड़ी है और कुछ सोफे। राजस्थानी ढंग की पीढे-नुमा कुछ कुर्सियाँ भी है। सिवाय कुछ फूलदानों के यहाँ सजावट के नाम पर और कुछ भी नही है—माली ने उनमे ताजे फूल लगा दिये, है, शायद अभ्यासवश ही। जिधर नजर उठती है, उधर ही लगता है कि कही कमी है, कोई अभाव है। दो-चार कर्मचारी इधर-उधर आ-जा रहे है, अन्य लोग भी, लेकिन उनकी चाल मे कोई स्वाभाविकता नही है, तेजी भी नही है, वे यन्त्र-चालित से है।

यह छोटा-सा भवन वडा उदास-उदास है, जोर-जोर रोकर अभी चुप हो गया है। शायद इसमे निवास करने वाले जिस नन्हे-से आदमी ने इसे दुनियाँ के मानचित्र पर अमरता दिलवाई, वह सदा के लिए चला गया और यह खड़ा है। एक पुरानी लोककथा है कि एक बादशाह का महल चूने लगा तो उसने अपने मन्त्री से इसका कारण पूछा। मंत्री बोला – 'हुजूर यह रोता है, क्योकि इसमे रहने वाले मरते जाते है और यह नही मर पाता। इसकी अमरता ही इसके लिये जैसे अभिशाप बन गई हो। महल का रुदन उस माँ की वेदना जैसा ही है जो अनेक बच्चो को जन्म देती है और वे बच्चे उसके सामने ही काल-कवलित हो जाते है।

दस जनपथ पर अथाह दुख-दर्द का समुद्र सिमटा है ८७ वर्षीय माता रामदुलारी के हृदय मे— जिन्होंने असमय ही अपने पति को जाते देखा और भरी जवानी (प्रसिद्धि के शिखर) मे पुत्र को जाते देखा। तभी तो उन्हे यह विश्वास नही होता कि उनका पुत्र अब नही रहा। शास्त्री जी का शव जब ताशकंद से आया था, तब इस जीजाबाई ने कहा था—'अरे जरा भय्या (शास्त्री जी) को अच्छी

तरह देख लो, अच्छी तरह देख लो।' जबसे उनका शिवा चला गया है, तब से वह घण्टो स्नानागार में बैठी रहती हैं और भगवान मे यह मनौती करती हैं कि उनका भय्या जहाँ हो, वहाँ खुश रहे। सपने मे तो प्राय: रोज ही अपने शिवाजी से वह मिल लेती है और वह कहता है—'अम्मा हम यों देखने को आते हैं कि तुम ठीक तो हो।'

हर सुबह को अपनी 'दुलहन' का मुंह देखकर उठने वाली माता रामदुलारी का अधिकांश समय अब भगवत स्मरण मे ही बीतता है।

माता रामदुलारी ने अपने लालबहादुर को घुट्टी मे ही वीरता, धीरता और सादगी के गुण दे दिये थे। शास्त्री जी को सूरदास और कबीर के कुछ पद याद थे जिन्हें वह सुबह उठकर गुनगुनाया करते थे। गीता और गीतांजलि उनकी प्रिय पुस्तकें थी। गीता के कुछ अंश का पाठ तो वह प्राय: रोज ही करते थे और उन्होंने गीता के निष्काम कर्मयोग को जीवन मे भी ढाल लिया था, तभी तो वह सबकी परवाह करते थे लेकिन अपने प्रति लापरवाही दिखाते थे।

हरी दूब और लान है और सामने वही कुर्सी पर सादगी और सौजन्य की मूर्ति श्रीमती ललिता देवी शास्त्री बैठी हैं। उनके चरण स्पर्श कर मैं भी वहाँ जा बैठता हूँ। पास ही बैठे हैं शास्त्री जी के बडे सुपुत्र श्री हरिकृष्ण। बहुत-सी नई-नई बातें शास्त्री जी के बारे मे सुनने को मिलती हैं। यह पता चलता है कि श्रीमती शास्त्री ने पति के चरण धोकर जो जल रक्खा है, वह उसे ही पीती है।

दो दिन पहले ही संसद मे शास्त्री जी की डायरी के बारे मे बड़ी चर्चा हुई थी, मैं उसके बारे मे पूछता हू। पता चलता है कि शास्त्री जी कई डायरियाँ इस्तेमाल में लाते थे लेकिन एक छोटी डायरी (नोटबुक) उनकी चिरसंगिनी थी। उसे वह अपने कोट की अन्दर की जेब मे रखा करते थे और सोते समय भी प्राय. सिरहाने रख लेते थे, वह नही मिल रही है।

ताशकंद वार्ता के बारे मे हरि बाबू कहते है—"मैंने जाने से पहले बाबूजी से कहा था कि यदि पाकिस्तान ने आपकी सब बातो को मान लिया तो क्या होगा?" बाबूजी ने कहा—"यह बात भी सोचने की है।" शाम को जब वह लौटकर आये थे तब उन्होंने मुझसे कहा था—"तुम्हारी उस बात का फैसला भी हो गया।"

हरि बाबू अपने पिता की व्यस्तता के बीच उनसे विस्तार से न पूछ पाए कि क्या फैसला हो गया, इसका स्मरण कर ही उनकी आँखे गीली हो आईं।

शास्त्री जी की मृत्यु से अनेक प्रश्न अनुत्तरित ही रह गए हैं, संसद में भी इस बारे मे जो चर्चा हुई उससे भी सभी को सन्तोष नहीं हो गया।

श्रीमती ललिता शास्त्री पूरे विश्वास के साथ कहती हैं कि शास्त्री जी ताशकद जाने तक पूरी तरह स्वस्थ थे, पाक आक्रमण के बाद उनमे न जाने कैसा संकल्प जगा था कि व्यस्तता बढ़ जाने पर भी उन्हे कोई शिकायत न थी। ताशकन्द मे भी अन्तिम दिनो मे वह ठीक-ठीक थे।

८ जनवरी को फोन पर उन्होंने ललिता जी से कहा था—'तुम्हे भी मेरे साथ अमेरिका चलना है।'

मैं देखता हूँ कि इस चर्चा के बीच ललिता जी की आँखो से बेशकीमती मोती झरने लगे हैं।

श्रीमती शास्त्री का विश्वास है कि ताशकन्द-समझौता शास्त्री जी ने दबाव से नहीं माना। वह किसी के दबाव में आने वाले नही थे, यह बात नेहरू जी भी अच्छी तरह जानते थे।

शास्त्री जी के निकट के लोगो का यह कहना है कि उनके प्रधान मन्त्री बनने के बाद भी कतिपय लोग और वरिष्ठ अधिकारी उनके प्रति उपेक्षा वृत्ति रखते थे। लोकतन्त्र में एक सामान्य व्यक्ति की उपलब्धियाँ कितनी अधिक हो सकती है, शास्त्री जी का प्रधान मंत्री-पद पर पहुँचना जहाँ इस बात का प्रतीक है, वहाँ ऐसी उपेक्षा की मनोवृत्ति उसकी जड़ो पर कुठारघात करने वाली भी है।

श्रीमती ललिता शास्त्री की किताबी शिक्षा भले ही अधिक न हो, लेकिन वह जीवन की पाठशाला मे खूब पढ़ी हुई है। उनसे दो मिनट बातचीत करने पर ही यह पता चल जाता है कि उनके अन्दर विचारो की स्पष्टता, सादगी, सचाई और निश्छलता का झरना बहता है। वह अपने पतिदेव के निधन से सम्बन्धित अनेक उलझे प्रश्नों का समाधान कर देती है—'भगवान को मजूर था, वही हुआ। हाँ, इतना ही हम कह सकते है कि जो भूल हो गई, वह आगे न हो, यही ध्यान रखना चाहिए।'

शास्त्री जी के समाधि स्थल की चर्चा होती है, जिसके लिए अलग-अलग लोगो ने अनेक नाम सुझाए है। ललिता जी को 'विजय घाट' ही उपयुक्त प्रतीत होता है। उनका कहना है—'उन्होने जिस काम मे हाथ लगाया, उसीमे उन्हे सदा विजय मिली। लड़ाई मे जीत हुई और ताशकन्द में भी उन्होने विजय के साथ प्राणों का उत्सर्ग किया।'

भारत माता की प्रतीक उस तपस्विनी के सम्मुख श्रद्धानत होकर मै डबडबाए नेत्रो के साथ वहाँ से चल दिया—विजय घाट की ओर।

यह 'विजय घाट है'—जहाँ युद्ध और शान्ति का विजेता चिर निद्रा में सो गया है। करोड़ों देशवासियो की अथाह श्रद्धा और अटूट विश्वास जिस नन्ही-सी काया मे सिमट गये थे, वह यहीं अग्नि को भेट कर दी गई।

सड़क के उस पार लाल किले का दीवाने खास है, जिसमे लिखा है—'धरती पर यदि कही स्वर्ग है तो वह यही है, यही है।' और दूसरी ओर अमृतमयी यमुना की धारा है। लेकिन लालबहादुर ने कभी न अमरता की चाह की और न स्वर्ग की। वह इस धरती के आदमी थे, उन्हें इस देश की माटी से बेहद प्यार था। लाल किले की प्राचीर से बोलते हुए ही उन्होने कहा था—

'हम रहे या न रहे, लेकिन यह झण्डा रहना चाहिए और देश रहना चाहिए। मुझे विश्वास है कि यह झण्डा रहेगा, हम और आप रहे या न रहे, लेकिन भारत का सिर ऊँचा होगा।'

शास्त्री जी भारत का भाल ऊँचा करके चले ही गए। सैकड़ो लोग रोज इस समाधि पर पुष्पाजलि अर्पित करते है और श्रीमती ललिता शास्त्री प्रति दिन यहाँ अपनी श्रद्धा के पुष्प चढ़ाने जाती है।

आसपास के लोगों से बाते करता हूँ। वे इस समाधि की उपेक्षा के बारे में शिकायत करते है। कहते है कि शुरू मे तो १५-२० दिन यहाँ रोशनी भी नहीं रहती थी रात को। कहा जाता है कि एक किशोर वय का दुबला-पतला लड़का जो वहाँ की चौकीदारी करता है, डेढ़ महीने से उसका कोई

वेतन भी तय नही हुआ। समाधि पर बारह आने वाली कनस्तरी रखी है जिसे दान-पात्र बताया जाता है। लालफीताशाही मे सब कुछ अब भी वह होता है जिसे शास्त्री जी खत्म करना चाहते थे।

श्रीराम नामक पुलिस हवलदार का छोटा-सा तम्बू एक ओर यहाँ गड़ गया है, तीन सिपाही उसके साथ रहेगे यहाँ ड्यूटी देने के लिए। वह अनेक राष्ट्रनेताओ की सेवा मे रह चुका है। शास्त्री जी के जीवन-काल मे कुछ महीने वह उनकी कोठी पर भी रह चुका है। कहता है—'गरीबो के लिए उनके दिल मे बडी हमदर्दी थी बाबूजी।'

समाधि-स्थल कुछ निचाई पर है। नेहरू जी और गाँधी जी की समाधियाँ भी थोडी-थोडी दूरी पर हैं। इस सारे क्षेत्र मे भराव कराने की योजना है। महात्मा गाधी की समाधि पर मिट्टी को इधर-उधर कराने मे ही न जाने कितना खर्च हो गया और वह जिस रूप मे आज है, वह न कलात्मक है, न सुरुचिपूर्ण ही। देखना यह है कि 'शान्तिवन' और 'विजय घाट' को हम अपने राष्ट्र-नेताओ के गौरव के अनुरूप कैसा स्वरूप प्रदान कर पाते है।

मै लौट पड़ता हूँ, तो इकतारे की गूँज पर कुछ स्वर मेरे कानो से टकराते है—'दास कबीरा जतन ते ओढी, ज्यो की त्यो धरि दीनी चदरिया' शास्त्री जी भी ये पंक्तियाँ प्राय. गुनगुनाया करते थे, और उनके लिए वे कितनी खरी उतरी, यही सोचता रह जाता हूँ। विनय-मूर्ति शास्त्री जी ने एक साहित्यिक समारोह मे राष्ट्र के स्वाभिमान को अभिव्यक्ति देते हुए कहा था—"मै सर कटा सकता हूँ, लेकिन सर झुका नही सकता' सचमुच वह आत्मोत्सर्ग करके भी राष्ट्र का मस्तक ऊँचा कर गये।

ब्रजभूषण मिश्र "ग्रामवासी"

मीरजापुरी नन्हकू

शास्त्री जी और मीरजापुर दोनों का एक दूसरे से अन्योन्याश्रय सम्बन्ध था। अपने पूज्य पिता मुंशी शारदाप्रसाद के सहसा दिवंगत हो जाने के समय शास्त्री जी केवल डेढ वर्ष के थे। परिवार उनका बहुत बड़ा था। उनके पिता जी कुल ८ भाई थे। उनके परिवार का सम्बन्ध काशी नरेशो से कई पीढी से चला आ रहा था। रामनगर में एक कच्चा-पक्का मकान था, जो आज भी प्राय: उसी अवस्था में खड़ा है। शास्त्री जी स्वयं तो बढ़ते-बढ़ते भूमि से आकाश छू गए, किन्तु पुश्तैनी मकान जहाँ का तहाँ ही रह गया। उन्हें न इस मकान को बनाने की लालसा हुई और न अन्यत्र ही कही आज तक बनाया। ऐसा लगता है कि शास्त्री जी ससार मे अपने लिए या अपने बाल-बच्चो के लिए कुछ करने भूतल पर नही आये थे। उनका मिशन, जीवन सन्देश, जीवन-लक्ष्य या कार्य नियति ने कुछ दूसरा ही बनाया था। अपना कोई घर न बना कर भारतमाता का घर आपने नन्हे-नन्हे हाथो से बनाने के लिए ही नन्हकू (घर मे पुकारने का नाम) मानो ससार में आये थे। शास्त्री जी के जीवन में घर-बनाने या घर भरने के एक से एक बढकर अवसर आए, पर उनका जीवन ही मानो भगवान ने कुछ ऐसा बनाया था कि धन-मोह, गृह-मोह तथा अन्य कोई ऐहिक मोह उन्हे छू ही नही गया था। जब से होश संभाला, चुपचाप अपने ढंग पर अपने मूक मार्ग पर चल कर काम करना ही उनके जीवन का ध्येय था।

शास्त्री जी ने छल, कपट, धूर्तता, तिकड़म, झूठ, विश्वासघात, जाल-फरेब, झांसापट्टी तथा दुराव-छिपाव आदि प्रचलित राजनीति के हथकण्डो मे तनिक भी, कभी विश्वास नही किया। उन्होंने यह सिद्ध करके दिखा दिया कि राजनीति बदमाशो का (गेम आफ स्काउण्ड्रल्स) नही है, वरन अत्यन्त सही और सच्चे सन्त का मार्ग है। राजनीति को काजल की कोठरी कहा गया है, परन्तु शास्त्री जी ऐसे राजनीतिज्ञ पुरुष थे जिनकी राजनीति बचपन से ही, जब वह केवल हाई स्कूल में एक साधारण छात्र थे, प्रारम्भ हो गई और अन्तिम सास तक ताशकद तक वह राजनीति की ही काजल की कोठरी में बैठे रहे। परन्तु क्या मजाल कि इस काजल की कोठरी की कोई लकीर शास्त्री जी को तनिक भी छू सकी हो। इसका एक मात्र कारण यही है कि उन्होने पैर कभी गड्ढे में नही जाने दिया। वह सब मामलो मे अत्यन्त ही सतर्क रहा करते थे। सग-साथ का असर उन पर नही आने पाया। वह सदा याद रखते थे कि वह क्या है और उनका मार्ग क्या है ? वह कहा करते थे कि आदमी कही भी रहे, कितना भी ऊँचा उठ जाये या नीचे गिर जाये पर उसे अपनी असलियत को, अपने साधारणपने को नही भूल जाना चाहिये।

शास्त्री जी के साथ रह कर अन्दर से झाँक कर देखने मे, वह इतने साधारण थे कि रहस्य नाम की कोई वस्तु उनके पास थी ही नही। कम बोलना, प्रिय बोलना, तौल कर बोलना, व्यावहारिक बात बोलना तथा सूझ-बूझ की बात बोलना उनका सहज, सरल स्वभाव था। वह गूढ धार्मिक वृत्ति के थे। धर्म का वाह्य आकर्षण जैसे पूजा-पाठ, तिलक लगाना, गगा-स्नान, देव-दर्शन, माला तथा राम-राम भजना यह सब काम तो मानो प्रकृति ने उनकी पूज्य माता तथा पतिपरायणा श्रीमती ललिता देवी को सुपुर्द कर दिया था। उन सब कृत्यो तथा कर्मकाण्डो का तत्व निचोड़ कर धर्म का सूक्ष्म रूप जैसे सचाई, परोपकार, सेवा आदि धर्माचरण छन कर शास्त्री जी को मिल गया था। इस प्रकार धर्म का बाहरी तथा भीतरी पल्ला दोनो छोर से परिवार के सदस्य पकड़ कर जगत मे एक आदर्श की स्थापना करने मे लगे हुये थे।

शास्त्री जी भारतीयता से पूरी तरह ओत-प्रोत थे, विदेशीपन उनको छू तक नही गया था। आज जब, साधारण अग्रेजी पढे क्लर्क तक के घरो मे (आई ए. एस. पी. सी एस आदि का क्या कहना) बच्चो से माता जी, पिता जी, दादा, अम्मा, बापू आदि न कहलाकर डेर्डा, मम्मी और पापा आदि कहलवा कर सभ्य बनने का ढोग रचा जाने लगा है, तब शास्त्री जी के घर मे यह सब आधुनिक पश्चिमी बीमारी कभी नही घुसी। वहाँ तो अम्मा-बाबू आदि ही का उच्चारण देखने-सुनने को मिलता है। शास्त्री जी अत्यन्त सरल भाषा बोलते थे। मीरजापुर वालो से घर वालो से तो ठेठ मीरजापुरी बोली मे ही बोलते थे। 'कब आए, कहाँ ठहरा हय घरे क का हालचाल बा' आदि बोली मे उनकी सारी बाते होती। खडी बोली तथा किताबी बोली तक का प्रयोग आपस मे नही होता था।

शास्त्री जी जाति-पाँति के बन्धन से परे बचपन ही से थे। स्कूल मे उनका नाम लालबहादुर वर्मा लिखाया गया था। होश सभालते ही उन्होने अपने नाम से 'वर्मा' शब्द निकलवा दिया और केवल 'लालबहादुर' रखा। यह घटना तब की है जब वह केवल ७वी कक्षा मे थे।

शास्त्री जी बहुत बारीक सुन्दर अक्षरो मे लिखते थे। उनका लेखन बहुत सुन्दर, सुपाठ्य तथा स्पष्ट होता था तथा बहुत बड़े-बडे अक्षर लिखकर अधिक कागज बर्बाद करने की उनमे आदत नही थी। शास्त्री जी की एक-एक बात को निकट से देखने से ऐसा लगता था कि मानो यह व्यक्ति ससार मे उससे कम-से-कम लेकर अधिक-से-अधिक देने का दृष्टान्त और उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए ही नियन्ता द्वारा भेजा गया है। जन्म लिया उन्होने छोटे-से घर मे, काया पाई उन्होने छोटी-सी, पढे-लिखे बहुत कम, खर्च मे निहायत छोटे-से घर वाले बालको की ही भाँति। वही मुगलसराय का प्राइमरी स्कूल, काशी का हरिश्चन्द्र हाई स्कूल तथा अन्त मे श्री शिवप्रसाद गुप्त द्वारा स्थापित छोटी-सी सस्था काशी विद्यापीठ।

कर्मठ जीवन

खुराक भी उनकी बहुत कम थी—साधारण भारतीय शुद्ध शाकाहारी भोजन था उनका। इधर काम तो करते पहाड़-सा, दिन भर सुबह ५ बजे से रात १२ बजे तक, पर खाते थे कभी दो टुकडे टोस्ट, एकाध प्याला चाय, दो चपाती, चुटकी भर चावल, थोड़ी सब्जी, थोड़ा-सा घी दाल मे। इधर तो ज्यो-ज्यो ऊँचे उठते जाते थे, मालूम पड़ता था खुराक उनकी और भी सात्विक तथा हल्की होती

जा रही थी, अब तो वह थोडी साक-सब्जी आदि ही खाकर तृप्त हो जाते थे। भोजन करने में उनको मानो कोई समय लगता ही नही था। शास्त्री जी से कभी मिलने जाइए तो आपको यह कहता हुआ कभी कोई नहीं मिलता था कि साहब अभी बाथ रूम में है, सो रहे है, पूजा पर है, भोजन पर है या कपड़े पहन रहे हैं, जैसा कि आज एक साधारण से साधारण व्यक्ति के यहाँ फौन करने पर मिलता है। उनके यहाँ फोन करने पर उत्तर मिलता था तो यही कि 'शास्त्री जी फाइल देख रहे है। अमुक से मिल रहे अथवा डिक्टेशन दे रहे हैं।' शास्त्री जी के पास पहनने को कपड़े कई जोड़े नहीं रहते थे। केवल कामचलाऊ कपडे वह रखते थे। बहुत दिनो तक तो स्वय साबुन लगाकर अपने हाथ के ही धुले कपड़े पहनते थे। उनके कपड़े धोबी का मुँह कम देखते थे।

शास्त्री जी के घर में फर्नीचर का शौक नही बढा। वही साधारण खटिया, मचिया, पीढा, पाटा, चूल्हा-चक्की थाली-कटोरी, लोटा, गिलास जो एक साधारण भारतीय के घर में होता है। सवारी शास्त्री जी को असली थी साईकिल, पैदल, रिक्शा या इक्का। मोटर, हवाई जहाज आदि तो उनके पदो की आवश्यकता की सवारिया थी। रेलमत्री हुए, पर सेलून का प्रयोग नही करते थे। केवल सीट रिजर्व करा कर ही प्रायः चलते थे। प्रधानमत्री होने से पहले नेहरूजी के इतने निकट होते हुए और वरिष्ठ मत्री रहते हुए भी कभी उन्होंने विदेश-यात्रा का लालच नही किया। बाहर गये तो प्रधानमंत्री बनने के बाद वह भी प्रयोजन से।

लेखक का एक पुत्र अमेरिका में कुछ वर्षो से है। शास्त्रीजी के अमेरिका जाने की चर्चा चली। मैने धृष्टता की और शास्त्री जी से कहा—"लड़का कई वर्षों से अमेरिका मे पड़ा हुआ है, घर आना चाहता है, घर वाले भी उत्सुक हैं, आते समय अपने साथ उसे लिवाते आइएगा।' शास्त्रीजी ने हंस कर कहा "यह कैसे हो सकेगा किराया तो उसका भरना पड़ेगा—चाहे वह दे या मैं दूँ।"

एक दूसरा दृष्टान्त उनके सगे मामा श्री पुरुषोत्तमलाल—लल्लनबाबू का है। शास्त्रीजी रेल मंत्री थे, पटना गए थे, लल्लन बाबू भी गए थे। लौटने को हुए तो वह अपने फर्स्ट क्लास में जाकर बैठ गए और लल्लन बाबू तृतीय श्रेणी मे टिकट लेकर बैठे। थोड़ी देर बाद याद आई कि 'मामाजी कहां हैं?' पता चला कि वह तीसरे दर्जे मे बैठे है। खुद उतर पडे, उनके पास जाकर बोले—"एक आदमी को अपने साथ ले चलने का मुझे अधिकार है। आपने टिकट क्यों ले लिया—मेरे साथ आप चल सकते थे।' पर अब तो टिकट ले लिया गया था और गाड़ी चल भी पड़ी थी।

शास्त्रीजी की सादगी तथा गरीब भारत मे गरीबी की जिन्दगी बिताने की भावना उनकी धर्मपत्नी लालमनी (श्रीमती ललिता का घर मे पुकारने का नाम) मे भी कूट-कूट कर भरी है। घर में दाल-चावल बिनना, पछोरना, दलना, झाडू-बुहारू, भोजन आदि काम वह स्वय अपने हाथ से करती रही है और इसमें आनन्द भी मानती है। शास्त्रीजी चाहे कभी पद पर रहे, पद से बाहर रहे अथवा बिना पद के रहें पर ललिताजी की गृहस्थी का तौर-तरीका अपना वही का वही प्राय. बना रहा।

मैं तो ललिता रह गई........

लखनऊ की बात है। शास्त्रीजी गृहमंत्री थे। एक दिन अपराह्न में एक दूसरे मत्री की धर्मपत्नी, जो जरा कुछ मनचली थीं, और अंग्रेजी रग-ढंग मे रंगी थी, शास्त्रीजी के घर मे घुसती चली

गईं। देखा कि श्रीमती शास्त्री चक्की में दाल दल रही हैं। आगन्तुक देख कर दंग रह गई और बोली—"अरे शास्त्रीजी की बहू—यह तुम क्या कर रही हो? गृहमंत्री की पत्नी चक्की मे दाल दल रही हो। हम मत्री-पत्नियों की नाक कटा रही हो?" सुनकर हंस पड़ी ललिताजी और सहज नम्रता से बोली—"मन्त्री होंगे शास्त्रीजी, मैं तो ललिता ही रह गई। चूल्हा-चक्की छोड़ दूँ तो कहाँ की रहूँगी, फिर यह मत्री-वत्री का पद कोई स्थायी चीज थोड़े ही है। अपनी आदत और पद्धति क्यो बदली जाए।" लौट गई वह इस उत्तर से लज्जित होकर।

शास्त्रीजी ने जीवन भर कभी किसी धनी-मानी, सेठ-साहूकार, महाजन तथा पूँजीपति का पल्ला नहीं पकड़ा। सदैव साधारण छोटे वर्ग वाले लोग ही उनके लंगोटिया यार रहे। मीरजापुर मे लल्लन बाबू, विल्सन साहब, नारायणदास, गुद्दरराम, राजबहादुरसिंह, हनुमानप्रसाद पाण्डेय तथा लेखक आदि ही उनके ऐसे साथी रहे, जिनके साथ वह इक्के पर बैठ कर बाहरी तरफ टांडादरी, विढम आदि मीरजापुर के रमणीक सैरगाहो मे जाते। उधार होकर मालिश होती, ठंडाई छनती (ठंढाई मीरजापुर की शास्त्रीजी को बहुत पसन्द थी, पर उसमे भांग नही होती थी) साफा पानी होता, बाटी-दाल बनती और हा-हा, हू-हू होता।

शास्त्रीजी के एक चचेरे मामा श्री विन्ध्येश्वरीलाल थे, वह अब नही रहे। शास्त्रीजी मीरजापुर मे अपने ननिहाल मे थे ही। ५-६ वर्ष की आयु की घटना है। श्री विन्ध्येश्वरीलाल बड़े मांसाहारी थे। उन्होने बहुत-से कबूतर पाल रखे थे। एक दिन एक कबूतर को उन्होने पकड़ा। वह बेचारा उनके पंजे मे जकड़ा मायूसी से उनकी ओर कातर परवश दृष्टि से ताक रहा था। मामाजी ने कहा—"आज सरहू तोहे हम खाब-खाईके छोडब" (अर्थात् साले आज तुझे खाऊंगा—खाकर ही छोड़ूंगा।' दो-तीन-बार कह कर उसे छोड़ दिया, वह उड़ गया। शाम को सब कबूतर लौटे, वह नहीं आया शास्त्रीजी ने मामा को यह कहते सुना था। सवेरे खपरैल मे नारिया के नीचे एक जानवर दुबका दिखाई पड़ा। मामा ने शास्त्री (तब के नन्हकू) से कहा—"जा, वोके पकड़ि लिवाय।" (जाओ उसे पकड़ लाओ) नन्हकू ने डरते हुए कहा—"नाहीं, न जाव, तू ओ के खाइ लेबे" (नही, न जाऊंगा, आप उसे खा लेंगे) मामा ने डांट कर कहा—"जा, अच्छा न खाव, ओ के लइ आव।" यह कहकर नन्हकू को उठाकर खपरैल पर चढा दिया और वह कबूतर को पकड़ लाए, मामा को दे दिया। कबूतर वही था। मामा ने कहा—"मरऊ भाग गवा रह। अच्छा एकर मजा तोहे चखाउब।" यह कह कर उन्होने कबूतर को नोच डाला और पकाकर खा गए। नन्हकू फूट-फूट कर रोने लगा—दिन-भर खाना नहीं खाया—घर भर मे कुहराम मच गया और उस दिन घर मे चूल्हा नही जला। सबको उपवास करना पड़ा। अन्त मे परिणाम यह हुआ कि मांसाहारी मामा ने सदा के लिए मासाहार त्याग की प्रतिज्ञा की। अन्त मे आर्यसमाजी बने और फिर कभी मांस छुआ नही।

शास्त्रीजी हद दर्जे के सहनशील, विनम्र तथा विनयशील थे। लखनऊ की बात है। शास्त्री जी गृह-मंत्री थे। इलाहाबाद से उनका एक पुराना जेल का साथी उनके पास आया—अपने लड़के को थानेदारी मे चुनाव कराने के मामले को लेकर। लेखक भी वहीं बैठा था। शास्त्री जी से वह बोला—"आधी इंच लम्बाई लड़के की कम पड गई है। नीचे वाले कहते हैं—वह नही लिया जाएगा। इसलिए आपके पास आया हूँ, उसे ले लिया जाए।" शास्त्रीजी ने कहा कि लम्बाई कम है तो वह कैसे लिया जा सकता है। वह बिगड़ गया, कुछ क्रोधी भी था वह। खड़ा हो गया और बड़े तपाक से ऐसे बोला,

मानो मंत्री से नहीं अपने हलवाहे से बात कर रहा हो—"तू मेटना (इलाहाबादी बोली में मेटना कहते है- नाटे को) अस होइ के पुलिसमंत्री होइ सक थ अउ हमार लडिका आधी इंची छोटाई से पुलिस दरोगा नही होइ सकत? बड़ा अन्धेर बा" (अर्थात् तुम नाटे-छोटे हो कर पुलिसमत्री बन सकते हो और मेरा लड़का केवल आध इंच छोटा होने पर थानेदार नही हो सकता ? बडा अन्धेर है)। शास्त्री जी पर इस कड़ी बात का कोई असर दिखाई नही दिया। हस कर वैसी ही नम्रता के साथ वह बोले—"पंडितजी, बात तोहार सही नाही बा। हम मेटना अस होइक पुलिसमत्री तो बनि सकिथ लेकिन हम चाही तो पुलिस दरोगा नाही बनि सकित। ऐसई तोहार लड़िकऊ पुलिसमंत्री छोटा कद होते भये भी बनि सकथ, पर पुलिस दरोगा नाहीं होइ सकत।"

शास्त्रीजी को क्रोधित होते कभी देखा नही गया। किसी की बात पर नाराज होते तो उससे आप कहकर बाते करने लगते। शास्त्रीजी लोगो की भावनाओं की इतनी कद्र करते थे कि कभी-कभी तो ऐसा लगता था कि मानो वह उससे डर-से रहे है। पर असल बात तो यह थी कि किसी को किसी बात के लिए नाही भी उन्हे करनी पडती थी तो उसे इस ढग से सभाल कर बोलते थे कि नाही की चोट उसे न लगने पाए। उनका तरीका बडा ही कोमल होता। सन् १९६४ की बात है। लेखक दिल्ली गया था। वह राज्यसभा अथवा विधानपरिषद की सदस्यता के लिए काग्रेस का टिकट चाहता था। शास्त्रीजी के यहाँ गया। शास्त्रीजी निकले, सबसे पहले मिले और मिलते ही कहा—"ग्रामवासी जी, यह बार हम तोहके टिकट न देई, तो हमरे ऊपर विगड़ा मत, हम एक आदमी से पहले ही कहि चुका हई (अर्थात् ग्रामवासी जी, इस बार मै तुम्हें टिकट न दूँ तो मुझ पर विगड़ना मत। मैं एक दूसरे आदमी को कह चुका हूँ)।" शास्त्री जी सरीखे बड़े आदमी के मुँह से ऐसी बात सुन कर मै तो गद्‌गद् हो उठा और मैने कहा—"शास्त्री जी, जब एतना बडा आदमी होइ के आप ऐसन लाचारी देखाई रहा हय और हमते अइसन लची जबान मे बोलि रहा हय, तो हमे सन्तोष बा।"

शास्त्रीजी जब प्राइमरी स्कूल मे पढते थे तब उनके एक उस्ताद श्री अब्दुलगनी मास्टर तथा दूसरे श्री देवनाथ (विश्वकर्मा) थे। शास्त्रीजी रेलमत्री हुए। दौरे मे मुगलसराय गए। वहा उन्होने अपने दोनो गुरुओ की तलाश कराई। पता चला कि देवनाथ बूढे होकर जीवित है। अब्दुलगनी अब नही रहे। शास्त्रीजी दोनो के घर गए और देवनाथ से मिलकर कुछ मुह जुठारी तथा मर्यादा का दृष्टान्त उपस्थित किया। प्रधानमंत्री होने के बाद हाईस्कूल के अध्यापक श्री मनकामेश्वर पण्डित के घर गए। बाल-बच्चो सहित तग कचौडी गली और सरस्वती फाटक के सकरे मुहल्ले के उनके औषधालय मे बैठे। गुरू घराने के स्त्री-पुरुषो के बीच बैठकर बडी देर तक बाते की, खाना खाया और खुल कर सबसे मिले। विद्यार्थी जीवन मे शास्त्रीजी इस घर मे रहते तथा खाते-पीते थे। शास्त्री ने गुरू ऋण से उऋण होने का भरसक प्रयास किया। शास्त्रीजी के एक हिन्दी अध्यापक मुगलसराय मे श्री हनुमानप्रसाद पाण्डेय भी थे। शास्त्रीजी जब मीरजापुर आते तब पाण्डेय जी से गुरूभाव से मिलते। पाण्डेय जी को विधान परिषद का सदस्य बनाया गया। अभी भी मीरजापुर मे वह एक सम्मानित राजनीतिक आचार्य के रूप मे विद्यमान है।

शास्त्रीजी के जीवन पर मीरजापुर की बडी छाप पडी। मीरजापुर के लोग उन्हे अपना अभिन्न आत्मीय मानते थे। न जाने कितने लडको की शास्त्रीजी ने सहायता की है, न जाने कितनो की सहायता करके पढाया-लिखाया है, न जाने कितनी लड़कियो का ब्याह अपने खर्च से कराया है—ये सब ऐसी

कथाएँ हैं जिन्हे बाहरी जगत बहुत कम जानता है, न शास्त्रीजी ने कभी कही जताने-बताने का नाम लिया। श्री रामस्वरूप एम० पी० (राबर्टसगंजपरिगणित) शास्त्रीजी की दीनबन्धुता, हरिजन-प्रेम के साक्षात् दृष्टान्त हैं, जिनका लालन-पालन, संस्कार और विद्याध्ययन आदि सभी शास्त्रीजी के घर मे घर के लडको की तरह हुआ।

मीरजापुर का लाड़-प्यार

मीरजापुर को शास्त्रीजी का मातृकुल तथा पितृकुल दोनों ही कुल बनने का सौभाग्य मिला। मीरजापुर शास्त्री जी को कितना अपना मानता था, इसका यो तो सदैव दर्शन मिलता रहा पर १७ दिसम्बर, सन् १९६५ को, मृत्यु के तीन सप्ताह पूर्व बहुत बुलाने पर केवल तीन घन्टे के लिए रात मे शास्त्रीजी जब मीरजापुर पहुँचे तब मीरजापुर ने उन्हे किस प्रकार आनन्द-विभोर हो कर गले लगाया तथा उनके प्रति एक छोटे से शहर मे कड़ाके की शीत मे खुले मैदान में ५-५ घण्टे ७०-७५ हजार की संख्या मे बैठ कर उनका स्वागत किया वह सब मीरजापुर के इतिहास का अमर अध्याय बन गया है। समर्पित मानपत्र की पंक्तिया शास्त्रीजी के प्रति मीरजापुर के अगाध प्रेम की एक ऐसी झांकी देती है कि उनके उद्धरण का मोह संवरण सम्भव नही हो रहा। मानपत्र का पूर्वांश इस प्रकार है—

भारत के सफल कर्णधार, जगत के नए रखवार, करुणा के अवतार, मीरजापुर के लाड़-प्यार-परमप्रिय तप पूत, प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री को अभिनन्दन-हार सस्नेह, सादर ससम्मान समर्पित—प्राण धन। आज मीरजापुर का नगर एवं जनपद अपनी गोद में खेली हुई आनन्दमयी 'दुलारी' भगिनि की पावन कोख से जन्मे तथा अपनी ही 'ललिता' के सुहाग आपको भारतवर्ष के महानतम पद पर विराजमान होने के पश्चात् बारम्बार न्योता देते-देते थककर अन्त मे केवल ३॥ घण्टे के लिए पाकर आपका स्वागत करने मे कितना प्रफुल्ल हो रहा है, हमारे उमड़ते हृदय तथा छलकते चक्षु इस के स्वयं साक्षी हैं। कल जिसको यहीं धूल में लौटाया, आज उसीको प्रधानमंत्री के रूप मे पाया, हमारा यह आनन्द शब्दो मे कैसे पिरोया जाए। पावन मूर्ति ! आपके रक्त में बाबा विश्वनाथ की भक्ति, शरीर मे विन्ध्यवासिनी की शक्ति तथा संस्कार मे प्रयाग त्रिवेणी की अनाशक्ति का संगम है। पिता मान्य मुन्शी शारदाप्रसाद की पवित्रता, गुरु गाधी की दीक्षा, लाजपत की लालसा, टन्डन की तपस्या, जवाहर की ज्योति, पन्त की पटुता और अपनी निज की सरलता आप मे है। इस सम्बल को लेकर लघुकाय आप आज इस विशाल भारत के संकट काल मे कर्णधार एवं जगत के आशा सूत्र बने हैं। पाकिस्तान के नापाक गर्व-गुमान को आपने चूर्ण कर दिया। चीन जो 'न' पहले था तथा 'च' पीछे सादिन हुआ, उनका होश-हवाश आपने अपनी नीति और हमारे वीर जवानो तथा शहीद शिरोमणियों के शौर्य से ठिकाने ला दिया। आपकी इस कार्य नीति की महिमा इतिहासकार आगे गाएंगे। आपकी बदौलत स्वतन्त्र भारत की साख संसार की महान शक्तियो से भी ऊपर उठी है।

पंच परमेश्वर के पुजारी ! आपकी कार्य-सफलता का एक महान गुर है—पंच परमेश्वर के प्रति आपकी विनम्र भक्ति एवं आस्था। आप 'डिक्टेटर' प्रकृति के नही हैं। सबको समेट कर ले चलने तथा सबकी राय से राय मिलाकर आगे बढने की आपकी सहज प्रकृति है। कहावत है—'पंच लिहे करी काज। हारे-जीत नाहीं लाज।'

अजातशत्रु, राष्ट्रनेता ! अपने इसी गुण के कारण आज आप पार्टी नेता से ऊपर राष्ट्र-नेता बन गए है। सभी दल आपके प्रशंसक ही नही, समर्थक बन गए है। उनकी कट्टरता आपके प्रति कोमलता मे बन गई है। सभी की सद्भावना और बल बटोर कर आप भारत की भाग्य-शिला पर अमिट अभिलेख लिख रहे हैं। भारत आपके तथा आपके ही समान निचली साधारण श्रेणी से उठे कर्मठ कामराज के हाथों अपने को सुरक्षित सुनीति पथ पर अग्रसर होता महसूस कर रहा है। जन-भावना आपके साथ है और आज आप सच्चे अखिल जननायक है। धोतीधारी ! आप न होते तो संसार मे धोती धक्के ही खाती रहती। आपने ससार मे दिखा दिया कि धोती, पेंट, पाजामा अथवा पतलून से किसी प्रकार कम या हेठ नही है। धोतीधारी भारत विश्व के रग-मच पर जादू चला रहा है। दुनिया दग है। हमे भरोसा है कि यह धोती ताशकद या वाशिगटन मे अवश्य कमाल करेगी।

स्फटिक हृदय ! आपके जीवन की सफलता का दूसरा अकाट्य गुर है आप का निर्मल मन होना तथा कपट, छल-छिद्र से दूर रहने की आपकी भावना। इसीसे आप भगवान को ही मानो पा गए है। कहा है—

निर्मल मन जन सो मोहि पावा।
मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥

यही कारण है कि भगवान के दरबार से आपके लिए कुछ 'अदेय' नही रहा। पुत्र-कलत्र यश-वैभव तथा परोपकार का परम-पद भगवान ने सब आपको दिया। पुनः कहा है—

जन कहूँ नहि अदेय कछु मोरे। अस विश्वास तजहु जनि भोरे॥

आप इस विश्वास के साक्षात दृष्टान्त है। अतः आपको प्रणाम है।

शास्त्रीजी को अपने दीर्घ कालिक सम्बन्ध मे मैने अन्दर से झांक कर बराबर देखा तो उन्हें एक छोटा गाधी ही मैने पाया। गाधी को उन्होने अपने मे उड़ेल लिया था। २ अक्तूबर की अमर देन यह दोनो बड़े और छोटे गाधी है, यह मै अन्तःकरण से मानता हूँ। मेरा अन्त.करण यही बोलता है।

विमला शर्मा

श्रद्धास्पद ललिता जी के नाम मेरा पत्र

पूज्यास्पदा श्रद्धामयी वहनजी,

सादर नमस्ते।

परम माननीय श्रद्धेय शास्त्रीजी के निधन से दु:खी होकर संसार भर के बड़े-बडे प्रतिनिधियों, राजनेताओं, राजदूतो आदि ने आप के पास पत्र भेजे होगे। इसी शृंखला मे मैं भी अपनी समवेदना के दो शब्द आप तक पहुँचाने की अनुमति मागती हूँ।

शील, सौजन्य तथा विनम्रता की मूर्ति शास्त्री जी ने अपनी सादगी, सचाई और ईमानदारी से कोटानुकोटि भारतीय जनता के अन्त स्तल की गहराइयो तक अपना प्रभाव डाला था। भारत की गरीब जनता ने उन्हे अपने सच्चे प्रतिनिधि के रूप में जाना-पहचाना था। गरीब भारत की आत्मा बहुत समय से अपना एक सच्चा प्रतिनिधि पाने को तड़प रही थी—एक ऐसा प्रतिनिधि जो वास्तव में उसके दु खो एव अभावो को कोरे शब्द-जाल से नही, उससे केवल सहानुभूति दिखाने के लिए भी नही, अपितु सच्चे हृदय से अनुभव करे। ऐसा नेता उसे शास्त्री जी के रूप में मिला। उसका हृदय आशा की उमगो से भर गया, उसने राहत की एक ठडी सास ली। इस प्रकार सच्चे अर्थों मे शास्त्री जी भारत के अभावग्रस्त जनतत्र के जननायक बने। जब वह प्रधानमत्री बने तब पश्चिमी रंग से रगे हुए कुछ मुट्ठीभर सूटेड-बूटेड लोगो को यह एक मजाक सा लगा और चतुर, स्वार्थी, अवसरवादी राजनीतिज्ञो को आश्चर्य हुआ कि यह छोटा-सा दुबला-पतला, सीधा-सादा सच्चा आदमी राजनीति के शतरजी अखाड़े के पैतरो का मुकाबला कैसे कर सकेगा। परन्तु वे भूल गए कौपीनधारी मुट्ठी-भर हड्डी वाले शास्त्रीजी के गुरु गाधी को, जिसके त्याग, तपस्या, निष्ठा, सेवा और कर्त्तव्य का सारे ससार ने लोहा माना था, जिसके स्पर्श को पाते ही राजनीति की मलिनता और कुटिलता धुल गई थी। उसी गांधी का सच्चा मूर्तिमन्त रूप शास्त्री जी मे प्रकट हुआ। गाधी-परम्परा की पताका शास्त्री जी ने विदेशो मे फहराई।

शास्त्रीजी के साथ-साथ जब आप भी विदेशो मे गई तब वहाँ के लोगो ने इस 'शक्ति और शिव की जोडी' के रूप मे भारतीय सभ्यता, भारतीय सस्कृति एव भारत के सच्चे गौरव की झलक देखी। आपके रूप मे भारतीय नारी की साड़ी और सौभाग्य-सिन्दूर को भी विदेशो मे गौरवान्वित होते देख हमारा गया गौरव वापस आया और भारत की जो पीढ़ी अपनी सभ्यता, संस्कृति और मर्यादाओ के प्रति हीन भावना की शिकार हो रही थी उसमे महत्त्व की भावना जाग उठी।

अभी जब हमारे देश में सचमुच ही एक राष्ट्रीय वातावरण जाग्रत हो ही रहा था कि अभागे भारतीयो पर दुर्भाग्य टूट पड़ा। शास्त्रीजी हमसे छिन गए। पर कैसा शानदार अवसान हुआ उनका! क्रान्ति के समय उस दुर्बल काया ने फौलादी सकल्प और हिम्मत से दृढ़तापूर्वक क्रान्ति में भी भाग लिया और अन्त मे अपने जीवन के तथा देश के आधारभूत धर्म 'शान्ति यज्ञ' मे भी अपने को होम दिया।

शास्त्री जी तो अमरत्व पा गए, परन्तु आपके दुःख को देखकर मुझ जैसी आस्तिक नारी का

हृदय उद्वेलित हो उठा। बहन रिहाना तैयब जा ने इस शास्त्रोक्त वचन के अनुसार 'पंच कन्याम्स्मरेत् नित्य अहिल्या, मन्दोदरी, तारा, कुन्ती, द्रौपदी तथा इस युग की पतिव्रताओ की एक सूची बनाई है। उसमे कस्तूरबा, कमला जी और राजवंशी देवी के साथ आपका भी नाम है। और यह ठीक ही है। पश्चिमी सभ्यता के पीछे भागने वाले आज के युग मे आप भारतीय नारियो के लिए मार्ग-ज्योति है। प्राचीन भारत की नारियों के गौरव गर्व को आज भी आप-जैसी सतिएँ अक्षुण्ण बनाये हुये है। आप को देखकर लगता है कि भारत की मर्यादायें अभी निःशेष नही हो पाई है। किन्तु एक प्रश्नवाचक चिह्न मेरे हृदय पटल पर अंकित हो गया है—"आप जैसी पतिव्रता सहधर्मिणी पर यह वज्राघात कैसे हुआ ?" मेरी ऐसी मान्यता रही है कि हम सब अपने कर्मो का ही फल भोगते है, यही ईश्वरीय न्याय है और न्याय ही उनकी दया है। परन्तु वैज्ञानिक युग के विद्वानो का कथन है कि प्रकृति का कठोर नियम है कि अग्नि मे हम हाथ डालेगे तो जलेगे ही, उस समय सर्वशक्तिमान को शक्ति भी हमे नही बचा सकती। यदि यह सत्य है तो फिर १० पैसे का सिक्का डालने पर बचन का टिकट बाहर फेंक देने वाली भावना शून्य मशीन और भगवान में क्या अन्तर रह गया ? यदि भगवान बहरे है और हमारी पुकार-गुहार को नही सुन सकते तो उनके अस्तित्व से लाभ ही क्या ? किन्तु क्या गीध, गणिका, अजामिल, अहिल्या, ध्रुव, प्रहलाद, शबरी और द्रौपदी को सारी कथाएँ असत्य है ? भगवान का गीता मे दिया हुआ स्वयं का वह आश्वासन 'तेषा नित्याभियुक्ताना योगक्षेम वहाम्यहम्' और 'मामेक शरण व्रज' क्या असत्य है ?

मै आस्था और अनास्था की लहर मे यों ही बह रही थी कि एक दिन रात मे मेरे अन्तर्मन में अन्तर्यामी ने कहा—"आस्था और श्रद्धा के सिंहासन को चलायमान मत होने दो, जिस पर विश्वास की मूर्ति आराध्यदेव आसीन है। उस तपस्विनी सती-साध्वी को विधवा मत समझो। यही उस स्त्री के तप का परिणाम है कि शास्त्री जी मर कर अमर हो गये। दुनिया के लोग जीवित रहते हुए भी मरे रहते है, किन्तु शास्त्री जी ने मर कर अमरत्व पाया है। ललिता जी ने अपनी तपस्या का फल उस दिन शास्त्री जी की निर्जीव काया के पास बैठे सफलीभूत होते अपनी भौचक्की आँखो से देखा और अपने कानों से सुना, जब लाखों लोगो की अबाध भीड़ लालबहादुर शास्त्री जिन्दाबाद के गगनभेदी नारे लगा रही थी। ४६ करोड़ भारतवासियों ने ही नही, बल्कि सारे ससार के अगणित स्वर ने एक साथ मिल कर 'लालबहादुर शास्त्री जिन्दाबाद' की वीणा बजाई। क्या अब उस बहादुर लाल को कभी कोई मार सकेगा ? मीरा ने कहा था—'उसे ऐसा पति चाहिये जो अजर-अमर हो, अक्षय अनश्वर हो।' इसी तरह ललिता के पति भी जीवन मे व्यसनो और वासनाओं से, लोभ और लालसाओ से, स्वार्थ और शत्रुओं से अपराजेय रहे, अजेय रहे। उनका यश अक्षय है। उन्होने अपने उत्कर्ष के सर्वोच्च शिखर पर प्राणोत्सर्ग किया। यही ललिता जैसी देवी को पूजा का पुण्य फल है। वह दो ही बाते तो चाहती थी, एक यह कि जो भार देश ने शास्त्री जी के कन्धो पर डाला है उसे वह ईमानदारी मे निभा पाएँ और जो तिलक उनके मस्तक पर देश ने लगाया है उसकी लाली को लाज बनी रहे। उनकी यह आकाक्षा पूरी हो गई है।

पूज्या बहन जी ! मै आप-जैसी समझदार देवी से क्या कह सकती हूँ, किन शब्दो मे आपको सान्त्वना दे सकती हूँ ? बस, इतना ही कह सकती हूँ कि आपको शास्त्री जी अवश्य मिलेंगे। आपका, उनका मिलन होगा और अवश्य होगा। वह अब भी आप से दूर नही गये। पहले कुछ दूर भी थे अब तो वह आप मे ही आत्मसात् हो गये है।

शाह् अभयराम

आर्थिक क्षेत्र में वह व्यावहारिकतावादी थे

स्वर्गीय प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री राजनीतिक दाव-पेचो को समझने के साथ-साथ देश की आर्थिक समस्याओ की उलझनो को भी समझते थे। इन समस्याओ के सम्बन्ध मे उनका अपना दृष्टिकोण था, जो बहुत कुछ महात्मा गाधी एव जवाहरलाल नेहरू के आर्थिक आदर्शो पर आधारित था। वे हृदय से एक सच्चे समाजवादो थे और उनका प्रयत्न हमेशा यही रहा कि देश की राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक सभी नीतियाँ समाजवाद स्थापित करने मे सहायक हो। १८ सितम्बर, १९६४ को लोकसभा मे सरकार के विरुद्ध अविश्वास के प्रस्ताव पर विवाद का उत्तर देते हुए उन्होने कहा था—"मेरी समझ मे, भारत मे समाजवाद का अर्थ है, अधिकाधिक लोगो की भलाई जो कृषि मे लगे है, अथवा जो कारखानो मे काम कर रहे है तथा मध्यम वर्ग के लोग।"

गरीबी का बोझ कम हो

उनके मतानुसार भारत मे योजनाओ का उद्देश्य जनता पर से दरिद्रता का बोझ कम करना ही होना चाहिए। परन्तु दरिद्रता दूर करके समृद्धि लाने का तरीका क्या हो? इस सम्बन्ध मे श्री शास्त्री के विचार वडे ही स्पष्ट थे। १९ अक्टूबर, १९६४ को रेडियो से एक सन्देश प्रसारित करते हुए उन्होने कहा—"लम्बे अर्से मे देश की आर्थिक अवस्थाएँ तब सुधर सकती है जब हम विवेक एव विज्ञान के तरीको से अपनी अर्थ-व्यवस्था को योजनान्वित करे। हम चौथी पचवर्षीय योजना तैयार कर रहे है। कृषि को तो ऊँची प्राथमिकता मिलनी ही है, परन्तु उद्योग भी उतना ही आवश्यक है और उद्योग एव कृषि का समन्वय ही देश को उसके वर्तमान सकट से मुक्ति दिलायेगा और हमारे लोगो के समक्ष एक हँसती तसवीर रखेगा।"

न्यूनतम जीवन-स्तर की प्राप्ति

११ दिसम्बर, १९६४ को निजी क्षेत्र के महत्व को दर्शाते हुए दिल्ली मे व्यापारियो एव उद्योगपतियो की एक सभा मे वोलते हुए उन्होने कहा—"अगले दस वर्षो मे हमारी यह चेष्टा रहेगी कि हमारे लोगो को एक न्यूनतम जीवन-स्तर की प्राप्ति हो। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए निजी क्षेत्र को निश्चय ही एक आवश्यक योगदान देना है, चूँकि कृषि समेत लगभग सभी उपभोक्ता-उद्योग निजी क्षेत्र मे ही पडते है। खास आवश्यकता इस वात की होगी कि लागत कम करके एव क्षमता वढा कर आधिक्य को वढाने के प्रयत्न किये जाय और उस आधिक्य (सरप्लस) को अर्थ-व्यवस्था के हित मे पुनः

विनियोजित कर दिया जाये। इस दृष्टिकोण से प्रत्येक व्यापारी एवं उद्योगपति का अपना महत्व है, परन्तु उन्हे अपनी सामाजिक तथा नैतिक जिम्मेदारियाँ समझनी होगी।

वाणिज्य के उत्तरदायित्व पर आयोजित एक गोष्ठी मे बोलते हुए उन्होंने कहा—"आर्थिक कार्य-कलापो का एकमात्र ध्येय मुनाफा नही है। व्यापार एव उद्योग में लगे हुए व्यक्तियो को स्वेच्छा से अपने लाभो पर रोक लगानी होगी। ऐसा करना कुछ सीमा तक निश्चय ही उस भावना को दूर करने में सहायक होगा जो सन्तुष्ट हुए लोगों और आवश्यकताएँ पूर्ण न होने वालो मे विभेद करती है। दूसरे, मजदूरो को प्रभावकारी ढग से प्रबन्ध मे हिस्सा लेने देना होगा, जिससे देश के निर्माण मे भाग लेने का अभिमान उनमे जागृत हो सके।"

विविध उद्योगों में सन्तुलन

श्री शास्त्री समझते थे कि कृषि-प्रधान भारत देश एक क्रांतिकारी समय मे से होकर गुजर रहा है और औद्योगीकरण की ओर तेजी से अग्रसर हो रहा है। इस प्रकार के परिवर्तन के समय होने वाली कठिनाइयाँ स्वाभाविक ही है, पर उन्हे आवश्यक समझदारी से दूर किया जा सकता है। श्री शास्त्री गांधी जी के इस दृष्टिकोण से सहमत थे कि भारत मे ग्रामीण एवं लघु उद्योगो की स्थापना पर बल दिया जाना चाहिए, परन्तु बड़े उद्योगो की स्थापना एव उन्नति को भी वह आवश्यक समझते थे।

ससद् के एक सदस्य को एक पत्र मे उन्होने लिखा—"मै यह नही समझता हूँ कि बड़े उद्योगो की स्थापना तथा जनसाधारण के कल्याण मे कोई विरोध है। परन्तु स्पष्ट है, भारी उद्योगो पर किये जाने वाले खर्चो एव उन खर्चो के बीच जो सर्वसाधारण के लिए जल्दी फलगामी है, किसी प्रकार का सन्तुलन होना चाहिए।

इस तरह देश के आर्थिक विकास के लिए वे हर प्रकार के उद्योगो को, चाहे वे लघु हों या बडे उद्योग हो, चाहे भारी उद्योग हो या उपभोक्ता उद्योग हो, आवश्यक समझते थे, परन्तु साथ ही वे यह भी जानते थे कि हमारे साधन सीमित है और यही कारण था कि वह सर्वदा जीवन के हर क्षेत्र मे बचत के महत्व पर जोर देते थे। उस ससद्-सदस्य को अपने पत्र मे उन्होने आगे लिखा—"मै अनुभव करता हूँ कि केन्द्र तथा राज्यो की सरकारों को अपने खर्चो मे काफी कमी करनी चाहिए। बड़े उद्योगो की स्थापना मे कई प्रकार की कमियाँ जैसे सीमेंट, इस्पात, विदेशी मुद्रा, आयात की गई मशीनो इत्यादि की कमी, अवरोध पैदा करती है। मुझे पूरा विश्वास है कि यह कोई अक्लमन्दी नही होगी कि हम बहुत-सी नई-नई योजनाओं को आरम्भ करके अपने साधनों को उनमे उलझा दे। इसके विपरीत हमे उपलब्ध साधनो को चालू योजनाओ को प्रभावकारी ढग से समाप्त करने मे इस्तेमाल करना चाहिए।"

उनका विचार था कि देश की वास्तविक आर्थिक उन्नति का अन्दाजा आधारशिलाओं की संख्या से नही, वरन् उत्पादन की मात्रा से लगाया जाना चाहिए। १९६४-६५ मे जो बजट पेश किया गया था, वह उनके आर्थिक आदर्शो का प्रतिबिम्ब था। व्यक्तिगत करो मे कमी की गई थी और ऐसे कदम उठाये गये थे कि उद्योगो की उन्नति को प्रोत्साहन मिले।

आत्मनिर्भरता की भावना

देश की गम्भीर खाद्य-स्थिति के प्रति वे विशेषतः चिन्तित थे, परन्तु इसके लिए जिम्मेदार कौन है? कोई विशेष व्यक्ति नही, हम सभी। अक्तूबर, १९६४ को राष्ट्रीय योजना-आयोग की २१वीं

वैठक मे वोलते हुए उन्होने कहा—"हमेशा इस बात को शिकायत को जाती है कि हमारे पास खाद की कमी है, चूँकि न तो हम उसे पर्याप्त मात्रा मे उत्पादित करते हैं, न ही पर्याप्त मात्रा मे आयात करते है। परन्तु प्रश्न यह है कि क्या उपलब्ध खाद्य सामग्रियों-जैसे कम्पोस्ट इत्यादि का भी हम पूरा-पूरा उपयोग कर रहे है? हमने वडी-वड़ी सिचाई योजनाएँ वनाई है, परन्तु क्या हम लघु-सिचाई के क्षेत्र मे वह सब कुछ कर रहे है जो हम कर सकते है? क्या और अधिक कुएँ नही खोदे जा सकते? क्या तालावो और पोखरो को और अधिक गहरा नही किया जा सकता? सिचाई की जो योजनाएँ पूरी हो चुकी हे, उनसे प्राप्त जल का अधिक प्रभावकारी उपयोग नही हो सकता? ये सब बाते हमारे वश की हे, वशर्ते हम अपने काम को आत्मनिर्भरता की भावना से करे।"

खाद्य की समस्या की गम्भीरता को कम करने के लिए उन्होने कुछ उपाय वताये, उदाहरणार्थ, सप्ताह मे एक वक्त खाना नही खाना तथा खाने की आदतो मे परिवर्तन जिससे अनाज को कुछ बचत हो सके। वे मानते थे कि खाद्य की समस्या का वास्तविक फल इन उपायो से प्राप्त नही हो सकता, परन्तु इस सम्वन्ध मे उन्हे कोई सदेह नही था कि ये उपाय देश मे एक राष्ट्रीय चेतना जागृत करेगे, जिसमे देश का प्रत्येक नागरिक अपनी जिम्मेदारी को समझेगा और देश की समस्याओ को सफलतापूर्वक सुलझाने मे अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग देगा। विभिन्न राज्यो के मुख्यमंत्रियो को एक निर्देश-पत्र मे उन्होने लिखा—"खाद्य समस्या का वास्तविक हल न तो आयात है और न ही अन्य तरीको से कमी को पूरा करना। एकमात्र हल उत्पादन को वढाना है। अगर कृषक, सरकार एवं सार्वजनिक सस्थाएँ आपस मे मिल-जुल कर काम कर सके तो हमारे उत्पादन मे काफी बढोत्तरी असम्भव नही है।"

इस सिलसिले मे उन्होने सुझाव दिया कि नेताओ को व्यक्तिगत रूप से गाँवो मे जाकर वास्तविक स्थिति का अध्ययन करना चाहिए। उन्होने स्वय भी ग्रामीण क्षेत्रो मे सामयिक भ्रमण का वादा किया।

सुरक्षा और आर्थिक विकास

श्री शास्त्री देश की नाजुक परिस्थिति से पूर्णतया परिचित थे। एक तरफ चीन को हरकते, दूसरी तरफ पाकिस्तान का आक्रमण, देश को अपनी सुरक्षा के साथ-साथ आर्थिक विकास का कार्य करना है। सीमित साधनो के वीच यह तब तक सम्भव नही, जव तक त्याग, लगन और देश-सेवा की भावनाओ से प्रेरित होकर काम न किया जाये। श्री शास्त्री निश्चय ही शान्ति के मसीहा थे। इस कारण वे केवल लडाई से घृणा नही करते थे या खून-खरावो से डरते थे, वलिक चूँकि उन्हे मालूम था कि जो देश लड़ता है वह अपने नागरिको का कभी भी भला नही कर सकता। २० अक्टूबर, १९६४ के दिन सेना के जवानो को एक सदेश देते हुए ये शव्द कहे—"हमे शान्ति एव शान्तिपूर्ण प्रगति मे विश्वास है, यह प्रगति हम केवल अपने लिए नही, वरन् ससार के तमाम लोगो के लिए चाहते है। हमारा मुख्य कार्य देश की आर्थिक एव सामाजिक प्रगति तथा अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एव मित्रता की स्थापना हे।"

यह दृष्टिकोण एक मॅजे हुए राजनीतिज्ञ का ही नही, वरन् एक समझदार अर्थशास्त्री का भी हे।

●

नरेन्द्र वर्मा

'पड़िए गर बीमार तो कोई न हो तीमारदार !'

'बाबू जी' अर्थात् स्व० श्री लालबहादुर शास्त्री अपनी व्यस्तता के बावजूद अपना कुछ समय पढ़ने-लिखने को भी देते थे। साहित्य विशेषकर कविता मे उनकी विशेष रुचि थी। उनका यह रुझान विद्यार्थी-जीवन से ही था। विद्यार्थी-जीवन से ही वे उर्दू गजलो और कविताओं मे विशेष रुचि रखते थे। काशी मे समय-समय पर होने वाले कवि-सम्मेलनो मे बाबू जी उपस्थित रहना नही भूलते थे। कई बार तो ऐसा होता था कि कवि-सम्मेलन होने वाले स्थानो पर पहुँचने वालो मे प्रथम और जाने वालो में अन्तिम व्यक्ति बाबू जी ही होते थे। जितनी देर कवि-सम्मेलन और मुशायरा चलता, वह बड़े एकाग्र चित्त होकर सुनते थे। विद्यार्थी-जीवन मे कितनी ही बार उनके मुख से श्रेष्ठ काव्य-पंक्तियाँ सहज ही फूट पड़ती थी और उनके राजनीतिक जीवन मे प्रवेश करने के बाद भी कभी-कभी वह उर्दू शायरी सुना दिया करते थे। हाल ही मे दिल्ली के चेम्सफोर्ड क्लब मे सुरक्षा-कोष हेतु आयोजित मुशायरे में बाबूजी की उपस्थिति ही इस बात को सिद्ध करती है कि उन्हे शेरो-शायरी और काव्य-रचना से कितना प्रेम था। एक बार बाबूजी ने अपने मित्रो को उर्दू की कुछ पंक्तियाँ सुनाई जिन्हे उनके अभिन्न मित्र श्री अलगूराय शास्त्री ने लेखबद्ध कर लिया था। वे पंक्तियाँ है—

दाने अलग-अलग हो तब भात का मजा है !

०००

कोई नासूर बेशक है, जिगर मे हो कि दिल मे हो !
बराबर खूँ बहा जाता है, मेरी चश्मे गिरिया से !
तुम्हारे नाम की माला, जपी जाती है देखो तो !
मुसलसल दाना-हाए अश्क, मेरी चश्मे गिरिया से !

एक बार बाबूजी जेल मे थे और उनकी डेढ वर्षीया पुत्री पुष्पा बहुत बीमार हो गई। उस समय शास्त्री-परिवार के पास उस बच्ची के औषधोपचार के लिए भी पैसे नही थे। अम्मा यानी श्रीमती ललिता देवी ने बहुतेरे प्रयास किये, किन्तु वे पैसे न जुटा सकी और औषध के अभाव मे उसका देहान्त हो गया। अम्मा बड़ी दुखी हुई। बाबूजी भी अपना धैर्य खो बैठे, किन्तु फिर उन्होने अपने को काफी सभाला और जेल से ही अम्मा को धैर्य बँधाने के लिए एक कविता लिख कर भेजी। यहाँ वह कविता ज्यो-की-त्यो प्रस्तुत है, स्वर्गीय पुष्पा की स्मृति मे—

पुष्पा तो बन गई हमारी अमर देश की सुन्दर रानी ;
वोती याद बनाती पागल शेष रही बस एक कहानी ;
बड़े प्यार से पुष्पे ! जब मै तुम्हे अक मे लेती थी ;
कमनीय कमल-से हाथ चूम कर स्वर्गिक सुख पा लेती थी !
मुझ गरीबिनी दुखिया माँ को क्यो अब पुष्पे ! छोड़ चली;
पहले तो बधन मे बाधा फिर इसको तुम ही तोड़ चली !
क्या यही खेल इस निठुर नियति का, जो तुमने भी खेला है;
यह कह कर बधन तोड चली कि 'जग तो एक झमेला' है !

उक्त कविता बाबू जी ने अम्मा को इस सदेश के साथ भेजी थी कि 'इसको पढने से तुम्हारे हृदय को शान्ति मिलेगी और तुम अपने आप को सभाल सकोगी !'

बाबू जी कुछ शेर हमेशा गुनगुनाते रहते थे, जैसे—

पड़िए गर बीमार तो कोई न हो तीमारदार,
और गर मर जाइए तो नौहा-ख्वा कोई न हो !

बाबू जी की मृत्यु पर ये दोनो मिसरे काफी हद तक सही उतरे।

वह अक्सर कबीर के इस भजन 'झीनी-झीनी बीनी चदरिया' की आखिरी पक्ति 'दास कबीर जतन से ओढ़ी, ज्यो की-त्यो धरि दीनी चदरिया,' मन-ही-मन गुनगुनाया करते थे। उन्होने यह सिद्ध भी कर दिया कि उन्होने इस भजन को अपने मे सचमुच उतार लिया था। वह दर्शन-शास्त्र के अच्छे ज्ञाता थे।

बाबू जी अक्सर कहते थे कि—'देखो, जो कुछ भी काम करो वह भगवान को अर्पण करके करो ताकि उठते-बैठते, चलते-फिरते तुम भगवान की ही पूजा कर सको, उसे स्मरण कर सको !' इस सम्बन्ध मे कबीर का 'साधो सहज समाध भली' वाला भजन उन्हे बहुत प्रिय था।

अम्मा को भजन लिखने की प्रेरणा भी बाबूजी से ही मिली और अक्सर अम्मा के भजनो को अन्तिम रूप तभी मिलता था जब तक कि बाबूजी उन पर एक दृष्टि न डाल लेते।

"बडे शौक से सुन रहा था जमाना, तुम्ही सो गये दास्ता कहते-कहते।" बाबूजी की हर बात को लोग गौर से सुनते थे और सारा विश्व ताशकन्द-समझौते पर आस लगाये बैठा था, लेकिन दास्ता कहते-कहते ही हमारे बाबू जी हमेशा-हमेशा के लिए सो गये।

■

अनन्त मिश्र

शान्ति के महान् योद्धा

गुलाबो के फूलो और अगूरो के गुच्छो के लदे ताशकन्द शहर मे, जिस दिन विश्व-शान्ति के अग्रदूत लोकनायक लालबहादुर शास्त्री की मृत्यु हुई, उस दिन भारत के राजनीतिक क्षितिज से एक देदीप्यमान नक्षत्र टूट कर धरती पर गिर गया। वस्तुतः दिवगत प्रधान मन्त्री लालबहादुर शास्त्री प्रबुद्ध भारत की आत्मा थे और उनकी मृत्यु से भारत निष्प्राण हो गया।

प्रधान मन्त्री का पद-भार ग्रहण करने के पश्चात् लालबहादुर शास्त्री ने कहा था कि भारत के साधारण नागरिक के लिए भोजन, वस्त्र, आवास और चिकित्सा की आवश्यकता सर्वप्रथम है। जब तक ये आवश्यकताएँ पूर्ण नही होती तब तक चैन नही लिया जा सकता। अतः प्रधान मन्त्री के रूप में उनके जीवन का प्रत्येक क्षण उन गरीबो और निराश्रितो की चिन्ता मे व्यतीत होता था, जो गाँवों के झोंपड़ो से लेकर नगरो की गन्दी बस्तियो में निवास करते थे। १८ माह के शासन-काल मे राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के प्रश्नो पर दिवंगत प्रधान मन्त्री ने जो निर्णय किये उनसे यह सिद्ध हो गया कि उनमे स्वतन्त्र निर्णय लेने और लोक-मगल के लिए कार्य करने की अपूर्व क्षमता थी।

संकट-काल के योद्धा

श्री लालबहादुर शास्त्री ने जिन परिस्थितियो के अन्तर्गत देश का शासन-सूत्र ग्रहण किया, वे बहुत ही गम्भीर और चिन्ताजनक थी। एक ओर पाकिस्तान और चीन के आक्रमणात्मक रुख के कारण जहाँ देश की क्षेत्रीय अखडता और सार्वभौमिकता पर भयकर खतरा उपस्थित था, वहीं दूसरी ओर आन्तरिक परिस्थितियाँ भी खाद्याभाव और वित्तीय सकटो के कारण कम गम्भीर न थीं। हजरत मोहम्मद साहब के खोये हुए अवशेषो को लेकर काश्मीर मे जो उत्तेजना व्याप्त थी, वह पूर्णतः शान्त नही हो पाई थी और सत्तारूढ दल में कामराज-योजना के कार्यान्वयन के फलस्वरूप एक ऐसी विघटनकारी प्रक्रिया चल रही है, जिससे देश के कई राज्यो मे गम्भीर राजनीतिक संकट व्याप्त थे। शास्त्री जी ने जिस दृढता, निष्ठा, सकल्प और ईमानदारी के साथ इन समस्याओ का सामना किया, उससे सर्वत्र आत्मविश्वास की भावना फैली।

प्रधान मन्त्री बनने के पश्चात् उन्होने सर्वप्रथम पजाव की उलझनपूर्ण समस्या के समाधान की ओर ध्यान दिया। पजाब के तत्कालीन मुख्यमन्त्री सरदार प्रतापसिह कैरो के विरुद्ध एक बहुत बड़ा राजनीतिक तूफान उठ खड़ा हुआ था। सरदार प्रतापसिह कैरो पजाव के लौहपुरुष माने जाते थे, किन्तु प्रथम प्रधान मन्त्री स्वर्गीय जवाहरलाल नेहरू के जीवन-काल मे ही उनके विरुद्ध भ्रष्टाचार और पक्ष-

पात के अनेक आरोप लगाए गए थे, जिनकी जॉच का भार भारत के भूतपूव प्रधान न्यायाधीश श्री सुधिरजनदास को सौंपा गया था। न्यायाधीश श्री सुधिरंजनदास का प्रतिवेदन् जव प्रकाश मे आया, तव उसे कार्यरूप मे परिणत करने का दायित्व प्रधान मन्त्री के रूप में श्री लालवहादुर शास्त्री को ग्रहण करना पड़ा और उनके निर्देशानुसार ही सरदार प्रतापसिह कैरो को मुख्यमन्त्री के पद से त्यागपत्र देना पड़ा, किन्तु उनके राजनीतिक उत्तराधिकारी को ढूँढ निकालने मे कुछ कम कठिनाई नही हुई। श्री रामकिशन को पजाव के मुख्यमन्त्री का पद-भार ग्रहण कराया गया और कांग्रेस उच्च-सत्ता के सहयोग तथा समर्थन से वह राज्य की राजनीतिक स्थिति पर विजय पाने मे सफल हुए।

जम्मू एवं काश्मीर मे वख्शी गुलाम मोहम्मद के उत्तराधिकारी के रूप मे जनाव शमशुद्दीन मुख्यमन्त्री के पद पर प्रतिष्ठित थे, किन्तु हजरत मोहम्मद साहव के अवशेषो की चोरी के वाद जनाव जी० एम० सादिक को मुख्यमन्त्री का पद-भार सौपा गया। काश्मीर एव जम्मू के इस परिवर्तन मे स्व० लालवहादुर शास्त्री का वहुत वड़ा हाथ था। उन्होने काश्मीर की स्थिति नियन्त्रित करने को पूरी चेष्टा की और वहाँ शेख अब्दुल्ला की कारामुक्ति से लेकर उनकी पुन: गिरफ्तारी तक जितनी भी घटनाएँ घटी, उनसे शास्त्री जी भली-भाति अवगत थे। शेख अब्दुल्ला की आपत्तिजनक गतिविधियो के वावजूद उन्हे पाकिस्तान और मक्का जाने को अनुमति दी गई तथा इस अवसर से लाभ उठाकर वे अलजीरिया मे तत्कालीन राष्ट्रपति वेनवेला और चीन के प्रधान मन्त्री श्री चाऊ एन-लाई से भी मिलने में सफल हुए। जिन दिनों शेख अब्दुल्ला विदेशो मे भारत-विरोधी प्रचार-कार्यो मे लगे हुए थे, उन दिनो शास्त्री-सरकार को देश मे कठोर आलोचनाओ का सामना करना पड़ रहा था, किन्तु प्रधान मन्त्री शास्त्री कभी विचलित नही हुए और उन्होने शेख अब्दुल्ला को तभी गिरफ्तार करने का आदेश दिया जबकि उनकी गतिविधियाँ आवश्यकता से अधिक खतरनाक सिद्ध हुई। शास्त्री जी ने पजाव और जम्मू-काश्मीर मे जिस सुदृढ शासन की नीव दी, उससे वहाँ की जनता मे आत्मविश्वास की भावनाएँ उत्पन्न हुई तथा उनके इस आचरण से भ्रष्टाचारियो के हृदय कॉप उठे। उड़ीसा मे भूतपूर्व मुख्य मन्त्री श्री विजयानन्द पट्टनायक और श्री वीरेन मित्र के विरुद्ध भी प्राय वही अभियोग थे, जो स्वर्गीय सरदार प्रतापसिह कैरो के विरुद्ध थे। दिवंगत प्रधान मन्त्री ने उडीसा के मामले मे भी वही दृढता प्रदर्शित की, जिसे वे पजाव एवं जम्मू तथा काश्मीर के मामले मे प्रदर्शित कर चुके थे। श्री विजयानन्द पट्टनायक और श्री वीरेन मित्र को महत्वपूर्ण पदो से हटना पडा तथा पडित सदाशिव त्रिपाठी उस राज्य के मुख्य मन्त्री वनाये गये। शास्त्री जी ने राज्यो को प्रशासनिक व्यवस्थाओ मे न केवल आवश्यक परिवर्तन किये, वलिक विभिन्न राज्यो के सत्तारूढ गुटो मे जो सघर्ष चल रहे थे उन्हे भी मिटाने की उन्होने पूरी चेष्टा की।

हिन्दी-विरोधी आन्दोलन और शास्त्री जी

२६ जनवरी, १९६५ से हिन्दी के राजभापा होने पर दक्षिण भारत और पश्चिम वगाल मे जो उपद्रव हुए उनसे भी दिवगत प्रवान मन्त्री श्री शास्त्री कभी निरपेक्ष नही रहे तथा दक्षिण भारत की जनता को शान्त करने मे वे सफल हुए। मद्रास मे हुए हिन्दी-विरोधी आन्दोलन के समय जव श्री सुब्रह्मण्यम् जैसे वरिष्ठ मन्त्री ने भी कृषि एव खाद्य मन्त्री के पद से त्यागपत्र दे दिया तथा स्वय कांग्रेस अध्यक्ष श्री कामराज ने अपना सतुलन खो दिया, तव भी शास्त्री जी चट्टान की तरह दृढ रहे। पजावी सूवे की मांग को लेकर उन्हे जटिल परिस्थितियो तथा गम्भीर चुनौतियो का सामना करना

पड़ा, किन्तु कूटनीतिक कौशल और विचार-विमर्श के जरिए वे समस्याओं के समाधान के लिए सचेष्ट रहे। मात्र १८ माह की शासनावधि मे उन्हे राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के प्रश्नों पर ऐसे निर्णय करने पड़े, जिनसे इतिहास की धारा ही बदल गई। पूर्व पाकिस्तान में हुए उपद्रवों के फलस्वरूप जो आठ-दस लाख अल्पसख्यक भारत आए, उन्हें आशा-भरोसा देना तथा उनके पुनर्वास का प्रबन्ध करना, यह शास्त्री जी का ही काम था। जब पाकिस्तान ने कश्मीर मे घुसपैठिए भेजे तथा उसने विधिवत् भारत के विरुद्ध आक्रमणात्मक कार्यवाहियाँ शुरू की, तब शास्त्री जी ने प्रधान मन्त्री के रूप में स्थल सेना के प्रधान जनरल चौधरी को आगे बढ़ कर शत्रु का सामना करने का आदेश दिया।

'जय किसान, जय जवान'

५ अगस्त, १९६५ के बाद पाकिस्तान ने काश्मीर-घाटी में निरन्तर हमलावर भेजे, किन्तु भारतीय सेना के जवानों की सुदृढ व्यूह-रचना और सतर्कता के समक्ष उसकी एक न चली तथा उसी प्रकार उसे विफलमनोरथ होना पड़ा, जिस प्रकार उसे कच्छ के रन मे विफलमनोरथ होना पड़ा था। प्रधान मन्त्री के रूप मे शास्त्री जी को कच्छ और कश्मीर पर हुए आक्रमणो के समय ऐसे निर्णय करने पड़े, जिनसे भारत का इतिहास प्रभावित हुआ और सम्पूर्ण राष्ट्र ने उन्हे वीर-पुरुष के रूप मे सम्मानित किया। शास्त्री जी ने देश को 'जय जवान और जय किसान' का नारा दिया और बड़े-बड़े राष्ट्रों के दबाव तथा प्रभाव से भी वे विचलित न हुए। कच्छ के मामले मे ब्रिटेन और कश्मीर के मामले मे सोवियत रूस के प्रधान मत्रियों की मध्यस्थता स्वीकार करके विजयी होने पर भी उन्होने अपनी शान्ति-प्रियता का ही परिचय दिया और यही यह स्वीकार करना पड़ता है कि शास्त्री जी के जीवन पर महात्मा गाधी के व्यक्तित्व और उपदेशो का गहरा असर पड़ा था।

शास्त्री जी का जीवन अत्यन्त संघर्षमय रहा है तथा गरीब परिवार में जन्म लेकर भी वे कभी धन के लोभ मे न फँसे। काशी विद्यापीठ के स्नातक के रूप में उन्होने जो कुछ ज्ञान प्राप्त किया था, उसे राष्ट्र के चरणों मे न्यौछावर कर दिया। स्वर्गीय पडित गोविन्दवल्लभ पन्त, बाबू पुरुषोत्तम-दास टंडन और जवाहरलाल नेहरू जैसे महान् व्यक्तियों के निकट सम्पर्क मे रहते हुए उन्होने शासन और राजनीति के क्षेत्र मे जो अनुभव प्राप्त किये उससे राष्ट्र का बड़ा हित हुआ।

पारिवारिक जीवन में वह एक आदर्श पति, आदर्श पिता और पुत्र थे। माता के प्रति अपार भक्ति, पत्नी के प्रति निष्कलुष प्रेम और परिवार के प्रति असीम अनुरक्ति, यह उनके चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता थी। ईमानदारी और सच्चरित्रता मे भी वे अद्वितीय थे। काग्रेस सगठन और शासन के महत्वपूर्ण एव सर्वोच्च पदो पर काम करने के बाद भी वे अपने कुटुम्बियो के लिए एक 'रैन-बसेरा' या 'आश्रयगृह' न बनवा सके थे तथा परिवार के लिए केवल कुछ ऋण भी छोड़ कर मरे थे। वे ईश्वर-भक्त, धर्मपरायण और सुसस्कृत व्यक्ति थे तथा मातृभूमि से प्यार करते थे। दुखियो और दलितों के लिए उनका हृदय रक्त के आँसू बहाता था। भारतीय वेश-भूषा का उन्होने कभी परित्याग नही किया और प्रधान मन्त्री के रूप मे वे लन्दन गये तो केवल धोती धारण किये रहे। वह लन्दन गये या काहिरा, मिस्र के पिरामिडो के बीच रहे हो या टेम्स के किनारे, मास्को गये हों या बेलग्रेड सर्वत्र उनकी धोती उनके साथ रही। उनकी धोती की ख्याति विदेशो मे भी रही। मासाहार से परहेज करते हुए वे पूर्ण शाकाहारी भोजन बहुत पसन्द करते थे। जसा उनका शाकाहारी भोजन था वैसी ही उनकी सात्विक प्रकृति भी थी।

उनको विनम्रता उन्हो के शब्दो मे व्यक्त होती है। शास्त्री जी लिखते है—"आरम्भ से ही पंडित जी मेरे प्रति बहुत ही उदार और अच्छे थे। उनके जिन गुणो को मै बहुत पसन्द करता था, वह गुटबन्दो की राजनीति से निरपेक्ष रहने की उनकी भावना थी। उनसे और गाधी जी से मैने यही सीखा था कि किसी को सत्ता या अधिकार के पीछे नही भागना चाहिए, बल्कि बिना किसी पुरस्कार की अपेक्षा किये शान्त भाव से कर्म करते जाना चाहिए। अपने अनुभवो से मैने यह सीखा है कि यदि किसी मे प्रतीक्षा करने के लिए धैर्य हो और निष्ठा तथा मनोयोग के साथ वह कर्म करे तो राजनीतिक क्षेत्र मे सफलता अवश्य प्राप्त होती है।

श्री लालबहादुर शास्त्री का बचपन का नाम नन्हे था। अत. उनके सम्बन्ध मे नानक की निम्नलिखित पक्तियो का उल्लेख किया जाता है—

नानक नन्हे होय रहो
जैसे नन्ही दूब!
और रूख सूख जायेंगे,
दूब खूब की खूब।

●

हमारे मन मे अपने देश की हिफाजत की बात है लेकिन न्याय के साथ, इन्साफ के साथ हम सच्चाई से काम करना चाहते है। हमे बडे धीरज और शान्ति के साथ अभिमान से नही काम लेना है। हम शान्ति बनाये रखते हुए इस बात का भी मन मे पक्का इरादा रखेगे कि हमारे देश पर कोई सकट आये तो हम सब मिलकर, एक आवाज से बोले, एक साथ खडे हो। फिर हम जानते है हमारे देश का कोई बाल बाका नही हो सकता।

—लालबहादुर शास्त्री

कमलेश कान्ति

उनकी स्मृति सदा प्रेरणा देती रहेगी

शास्त्री जी का शासन-काल इतना अल्प रहा कि देश के हर कोने के लोग उनका दर्शन न कर सके। परन्तु सागर के तट पर बसा सौराष्ट्र का छोटा-सा ग्राम बालाचड़ी वास्तव मे भाग्यशाली था, जहाँ के निवासियो ने ७ मार्च, १९६५ को उनके दर्शन किये।

बालाचड़ी के लिए यह कहा जाता है कि यह श्रीकृष्ण की लीला-भूमि थी। कुछ लोगों का विश्वास है कि बालाचड़ी ही वास्तविक द्वारिका है। श्रीकृष्ण जी के माता-पिता की मृत्यु यहाँ हुई थी, और उनकी अन्त्येष्टि भी यहाँ हुई थी। उसी समय से इस स्थान का महत्व हो गया था। बाद मे जामनगर के महाराजा ने यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य से मुग्ध होकर इसे अपना ग्रीष्मकालीन निवास बनाया और सुन्दर भवनों का निर्माण करवाया। द्वितीय महायुद्ध के समय मे पोलैण्ड के शरणार्थियों और उनके बच्चों को यहाँ रखा गया था तथा उनके लिए शिक्षा का भी प्रबन्ध किया गया था। १९६१ मे प्रतिरक्षा मन्त्रालय ने सैनिक स्कूलों का प्रयोग प्रारम्भ किया और गुजरात राज्य के सैनिक स्कूल की स्थापना यहाँ हुई। स्कूल का उद्‌घाटन हमारे प्रिय भूतपूर्व प्रधान मन्त्री, भारत-रत्न श्री लालबहादुर शास्त्री के कर-कमलो में सम्पन्न हुआ।

उद्‌घाटन-समारोह मे भाषण देते हुए उन्होने कहा था कि वास्तव मे आप सबका प्रेम मुझे यहाँ खीच लाया। मुझे यहाँ आकर, विशेष रूप से सैनिक स्कूल के चुस्त विद्यार्थियो को देख कर—आगे चल कर जिन पर राष्ट्र की रक्षा की जिम्मेदारी होगी—बहुत खुशी हुई। गुजरात वास्तव मे देश के अन्य क्षेत्रा से अधिक सम्पन्न है। यहाँ के निवासियो को धन-धान्य की कमी नही। देश के व्यापार को बढ़ाने मे इनका बहुत अधिक सहयोग रहा है, परन्तु मुझे आज यह देख कर और भी अधिक प्रसन्नता हो रही है कि यहाँ की जनता ने देश की रक्षा को सर्वोपरि महत्व दिया है। यही कारण है कि उन्होने अपने घर के कुसुमो को देश की रक्षा के लिए यहाँ रखा है। यहाँ का हर कुसुम प्रशिक्षण के पश्चात् एक सूरमा होगा, जो शत्रुओ से देश की रक्षा करेगा और अपने पौरुष से देश को उन्नति के मार्ग पर अग्रसर करेगा।

स्कूल को ध्वज प्रदान करते हुए उन्होने विद्यार्थियो को सन्देश दिया—"इस ध्वज की प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए तन और मन से प्रयत्न करना। स्कूल से निकलने के पश्चात् देश की ध्वजा के मान और प्रतिष्ठा को बढाये रखने का भार तुम्हारे ऊपर पड़ेगा। मुझे आशा ही नही, वरन् पूर्ण विश्वास है कि आप जीवन-पर्यन्त राष्ट्रध्वज के मान और प्रतिष्ठा की रक्षा करेंगे।"

शास्त्री जी के ये शब्द विद्यार्थियो और अध्यापको को बराबर प्रेरणा देते रहे है। गत सितम्बर मे जब पाकिस्तानियो का बर्बर हमला जामनगर पर हुआ और पाकिस्तानियो ने अमेरिकी जेट विमानो के द्वारा जामनगर को ध्वस्त करना चाहा था तब जामनगर को निहत्थो जनता पर आतंक-सा छा गया था। भय के बादल मडरा रहे थे। स्कूल और कालेजो को बन्द करने की योजना बनाई जा रही थी, परन्तु सैनिक स्कूल के विद्यार्थियो मे भय न था। शास्त्री जी के शब्द उनके कानो मे गूंजते थे कि हमे अपने देश की शान को बनाये रखना है, देश की मर्यादा को ऊँचा रखना है, चाहे हमारी जान ही क्यो न चली जाय। इसी भाव ने विद्यार्थियो को तटस्थ रखा। अभिभावको के बुलाने पर भी विद्यार्थी न गये। दिन मे थोड़ा सा आराम का समय जो मिलता था उसे भी त्याग कर रात के कार्य को भी उस समय मे करने लगे। ६, १२ और १८ सितम्बर की बमबारी उन्हे लेशमात्र भी भयभीत न कर सकी और वे दर्शको की भाँति बमबारी को आतिशबाजी का खेल समझ कर उसका आनन्द उठाते रहे।

आज शास्त्री जी का पार्थिव शरीर इस ससार मे नही है। आज गुजरात राज्य के मुख्यमन्त्री अमर शहीद बलवन्तराय भी हमारे बीच नही है। अब बालाचडी भारत माता के इन दो रत्नो का स्वागत कभी न कर सकेगी। परन्तु बलवन्त राय जैसे देशसेवी, और लालबहादुर जैसे बहादुरो का निर्माण यहाँ निरन्तर होता रहेगा जो कि देश की स्वतन्त्रता और अखण्डता को कायम रखने के लिए सदैव अपनी जान की बाजी लगाने के लिए तत्पर रहेगे।

अपने देश मे हम शान्ति और सुलह चाहते हैं, हम दुनियाँ मे सुलह और शान्ति चाहते है, और इसीलिए हम पीसफुल कोएक्जिस्टेंस की बात का मानते है कि दुनिया मे अलग-अलग मुल्क अलग-अलग विचार रखे, लेकिन तब भी वे मिलकर रह सकते हैं। हरेक मुल्क आजाद है अपने ढग पर चलने के लिए लेकिन उसके मायने ये नही कि कोई आपस मे लड़े। हम शान्ति से रहे, आजादी से काम करे, लेकिन तब भी मेल रखे, दोस्ती रखे जिससे कि दुनियां मे शान्ति बनी रहे।

—लालबहादुर शास्त्री

जगदीशचन्द्र खन्ना

जो नेकदिल इन्सान थे

वे सन् १९६३ मे भोपाल आए थे। उस समय वह केन्द्रीय गृह-मन्त्री थे। उन दिनों चीनी-हमले ने देश मे एक हलचल पैदा कर दी थी। राजनीति विषयक भाषण सुनना विशेषतया औसत नेताओ के उपदेशों की पुनरावृत्ति सुनना कुछ दिलचस्प नही लगता था और उनके स्वागत मे आयोजित सार्व-जनिक सभा मे जाने का भी विशेष उत्साह नही था। केवल मै ही नही, प्राय. मेरे बहुत से साथी केवल इसीलिए गए थे कि हमारे कालेज के छात्रों को वहाँ जाने के लिए कहा गया था। और फिर 'महा-पुरुषों को देखने की लालसा' तो स्वाभाविक ही है। पर जब मंच पर श्री शास्त्री को देखा, तब मालूम हुआ कि 'व्यक्तित्व का जादू' किसे कहते है। और जब वे बोलने लगे तब जैसे सब पर एक सम्मोहन-सा छा गया। बोलने का इतना अच्छा ढग सचमुच कभी किसी मे नही देखा। और चद पलो के बाद वातावरण इतना सरल बन गया, जैसे अपनो में हो से कोई बोल रहा हो—इतनी अपनत्व मे डूबी वाणी! दिल की गहराइयो से निकली बाते जो दिलो में उतर जाती है। भीड़ पर घूमती उनकी निगाहें यदि कुछ क्षणो तक आप पर अटक जाएं तो आपको ऐसा महसूस होगा कि उनसे स्नेह-वृष्टि हो रही हो। उनके भाषण मे एक और विशेषता थी—उनका मधुर हास्य का पुट देकर गम्भीर बातों को भी एक सरल वातावरण बनाए रख कर इस तरह कहते जाना कि राह चलते व्यक्ति रुक कर कुछ सुने। वक्तव्य को पूरा सुनने का मोह वे इस तरह नही छोड़ सकते जिस तरह बच्चे रास्ते में हो रहे मदारी का खेल देखना नही छोडते।

उस छोटे-से शरीर मे एक फौलादी जिगर था, किसी भी कार्य को करने के पूर्व वे अच्छी तरह सोच लेते थे और फिर पूरी तरह उससे चिपक जाते थे—अपने राजनीतिक जीवन मे, सामाजिक जीवन मे! उनकी सादगी और सद्व्यवहारपूर्ण जीवन उनके व्यक्तित्व का एक प्रभावकारी तत्व बन गया दुनिया के लिए। और वे 'योद्धा' जो उनकी योग्यता पर इस कारण से विश्वास नही कर पा रहे थे कि उनमें 'चर्चिलियन ग्लेमर' नही था या उनमे 'नेपोलियन-परसनेलिटी' का अभाव था, समय के दौरान अपने विचार से बदले, क्योकि उन्होने देखा कि विकट-विकट समस्याएँ भी शास्त्री जी की राजनीति से टकरा कर चूर-चूर हो गई।

तनावपूर्ण समस्याओ को सुलझाने मे जितनी सफलता इस व्यक्ति ने प्राप्त की, उतनी शायद दूसरो को नसीब न होती! काश्मीर मे 'हजरत के बाल' की चोरी का प्रपच, भाषावाद के पेचीदे मसले और कच्छ का उपद्रव—इन सब का उन्होने सुन्दर ढग से समाधान किया। पंजाबी सूबा समस्या और

नागा-समस्या के विपय में भी वह सतर्क रहे। 'सोना आग मे पड़ कर निखरता है' वाली कहावत उन्होंने पिछले कुछ महीनो मे चरितार्थ की, जिस समय देश को पाक-हमले का सामना करने के लिए विवश होना पड़ा।

वह शान्ति और सहयोग के भी प्रबल समर्थक थे। पडोसी देशो से सम्बन्धो को सुधारना और और मजबूत बनाने के उनके प्रयास प्रशसनीय है। प्रधान मत्री बनने के पश्चात्, अपने प्रथम रेडियो-प्रसारण मे उन्होने कहा था—"हमारा रास्ता साफ और सीधा है—राष्ट्र मे स्वतत्र और सम्मान के साथ सबके लिए समाजवादी प्रजातत्र की स्थापना और विश्व के समस्त देशो के साथ हमारे शान्ति और मित्रता के सम्बन्ध बनाए रखना। इस सीधी राह और इन चमकते आदर्शो के प्रति हम पुन स्वय को समर्पित करते है।" मित्रता के इस सदेश को लेकर उन्होने कुछ देशो की यात्रा भी की, जिनमे नेपाल, वर्मा, रूस आदि उल्लेखनीय है और वे जिससे मिले उसने हार्दिक बात कही अपने 'एक नेक और सच्चे मित्र' से। राष्ट्रपति टीटो, राजा महेद्र, राष्ट्रपति नासिर, श्री कोसीजिन, प्रधान मत्री ने विन आदि सभी का हृदय उन्होने जीता। हमारे पड़ोसी देशो से हुई मित्रता मे सराहनीय वृद्धि, उनकी शाति-प्रियता का एक ज्वलत उदाहरण है।

उनकी लोकप्रियता मे एक महत्वपूर्ण सूत्र यही है कि उनके समय अपने विचार प्रकट करने में किसी को झिझक अनुभव नही होती थी। साथ ही वे सदैव महत्त्वपूर्ण समस्याओ के विपय मे अपने साथियो की सलाह जरूर लेते रहे। इतना ही नही, उन्होने एक ऐसी परम्परा को अपनाया, जो राज-नीति मे एक नया और प्रशसनीय मोड था, और वह मोड था उनका विरोधी दलो को भी प्रत्येक उचित एव महत्त्वपूर्ण विपय पर विचार-विमर्श मे आमन्त्रित करना। पाकिस्तानी हमले के समय उन्होने इस नीति को विशेप रूप से अपनाया। विरोधी दलो का जितना समर्थन उनके पद-काल मे शासन को प्राप्त हुआ या दोनो के मध्य जितना कम विरोध रहा, वह इसके पूर्व नही रहा था।

सच है इतना दृढ़ व्यक्तित्व, इतना प्रभावशाली और मिलनसार स्वभाव और सबसे बढकर इतना नेकदिल तथा सवेदनशील व्यक्ति किसी भी देश के लिए अनुपम गौरव का विपय है।

शान्ति भटनागर

उस दिन मैं धन्य हो उठी

कल्पना कीजिए एक ऐसे स्वस्थ, सुन्दर और गोरे मुख को, जो प्रसन्नता से दमक रहा हो, जिसको सुन्दर दन्त-पक्ति की शोभा को खिलो हुई मुस्कान द्विगुणित कर रही हो और जिसके माथे पर सिन्दूर का बड़ा-सा टीका अलौकिक गरिमा और सौम्यता प्रदान कर रहा हो। इसके विपरीत कल्पना कोजिए एक ऐसे उदास, मुर्झाए हुए मुख को जिस पर दुःख को घनीभूत छाया घिर आई हो और जिसका सूना माथा देख कर हृदय में टीस उठती हो।

उस दिन जब मै श्रीमती ललिता शास्त्री से मिली तब मेरे हृदय में ऐसे ही टीस उठी। दूर बगीचे मे उन्हे कुर्सी पर बैठा देख कर सहसा मुझे विश्वास ही नही हुआ कि वह ललिता जी है। उनका शरीर एकदम दुबला हो गया है और उनका मुख .... कोई उन्हे देखे बिना अनुमान भी नहीं कर सकता कि वह कितना बदल गया है। जब मै उनके पास पहुँची तब अनायास ही मेरे हाथ श्रद्धावश उनके चरणों की ओर बढ़ गए। बड़े स्नेह से उन्होने मुझे पास वाली कुर्सी पर बैठाया। इस समय वहाँ शास्त्री जी के बड़े पुत्र हरिकृष्ण और बड़ी पुत्री भी उपस्थित थे।

एक-दो क्षण तक मेरी समझ मे ही नही आया कि मै बातचीत का आरम्भ कैसे करूँ। लेकिन मै उनसे भेंट करने गई थी और बातचीत का आरम्भ मुझे ही करना था, इसलिए उन्हें अपना परिचय देते हुए मैने उनसे शास्त्री जी के पारिवारिक जीवन के विषय में कुछ प्रश्न करने की अनुमति माँगी।

मैने उनसे पूछा—"शास्त्री जी सदैव बाहर के कार्यों में अत्यन्त व्यस्त रहते थे। ऐसी दशा में क्या उन्हे कभी इतना समय मिल पाता था कि वे अपने बच्चों की शिक्षा-दीक्षा और रहन-सहन पर कुछ ध्यान दे सके, या उन्हे मन भर कर प्यार कर सके।

ललिता जी ने सहज भाव से उत्तर दिया—"बच्चों का पालन-पोषण और उनको शिक्षा आदि की व्यवस्था का पूरा भार तो मेरे ऊपर ही रहा, लेकिन जो कुछ भी होता था वह शास्त्री जी की सलाह से होता था। उनकी जो इच्छा होती थी, मै उसी पर अमल करती थी। बच्चों के साथ रहने का समय तो उन्हे प्रायः नही के बराबर मिलता था, लेकिन उन्हे अपने बच्चो से प्यार बहुत था।"

फिर हरिजी की तरफ देख कर उन्होने कहा—"अब इसी को ले लो। यह बारह बरस की उम्र तक शास्त्री जी के पास सोता था। शास्त्री जी को यह पसन्द था कि उनकी सारी चीजें ठीक जगह पर रहें, लेकिन यह उनके कमरे में सोता था तो कभी अपना पाजामा उनकी खूँटी पर टांग देता था कभी उनके हैंगर मे अपनी कमीज लटका देता था। शास्त्री जी को यह अच्छा नहीं लगता था। लेकिन

जब यह विलायत गया तब कई बार उन्होने मुझसे कहा—'हरि का अपने कमरे में इधर-उधर चीजे रख देना मुझे बुरा लगता था, लेकिन अब लगता है कि उन चीजो से ही कमरा अच्छा लगता था। हरि की चीजे यहाँ न देख कर उसकी बहुत याद आती है।' "

मैने हरिजी से पूछा कि जब वह विलायत गये थे तब कितने बडे थे। उन्होने बताया कि यही कोई पन्द्रह वर्ष के थे। जिन दिनो शास्त्री जी को पहली बार दिल का दौरा पड़ा था, उन दिनो हरि जी विलायत मे थे। उस समय की एक घटना हरि जी ने बताई—"जब पहली बार बाबूजी को दिल का दौरा पडा था तब अच्छे होने के बाद भी बहुत समय तक उन्होने मुझे अपने हाथ से पत्र नही लिखा था। वह टाइप कराके पत्र भेजा करते थे। जब उन्होने अपने हाथ से मुझे पत्र लिखा तब अपने हृदय का सारा प्यार उसमे उडेल दिया। पत्र मे सबसे पहले उन्होने यही लिखा कि मै अपने हाथ से तुम्हे इतने दिन तक पत्र नही लिख सका, इसका बुरा न मानना। डाक्टरो ने मना किया था, इसलिए इच्छा रहने पर भी मै विवश था।"

बच्चो का शास्त्री जी को कितना ख्याल था, इस सम्बन्ध मे ललिता जी ने बताया कि शास्त्री जी तब तक नही सोते थे जब तक हर बच्चे को चारपाई के पास जाकर यह नही देख लेते थे कि वह अच्छी तरह ओढ-ओढ कर सो रहा है। घर मे रहने पर उनका यह प्रतिदिन का क्रम था।

एक बड़ा ही नाजुक-सा प्रश्न मै उनसे कर बैठी—"आजकल बच्चो का रहन-सहन का स्तर बड़ा ऊँचा होता जा रहा है, विशेषकर उन बच्चो का जिनके पिता बडे अफसर या धनी उद्योगपति है। इसीलिए उनकी फरमाइशे भी दिन प्रतिदिन बढती जा रही है। क्या शास्त्री जी अपने बच्चो की इन फरमाइशो को पूरा करते थे?"

ललिता जी ने बताया—"साधारणतः वह बच्चो को किसी बात के लिए मना नही करते थे, लेकिन अगर उनकी कोई फरमाइश ऐसी होती थी जिसे या तो हम पूरी नही कर सकते थे या जो हमे उचित नही लगती थी तो शास्त्री जी मुझसे यही कहते थे कि बच्चो को मना करो, लेकिन प्यार से, क्रोध से या झुझला कर नही। उन्हे समझा कर मना करोगी तो उन्हे बुरा नही लगेगा। असल मे वह बच्चो का दिल दुखाना सहन नही कर पाते थे। यो भी बच्चे कभी ऊटपटाग फरमाइशे करते भी नही थे।"

शास्त्री जी की बडी पुत्री ने बात का सूत्र पकड़ते हुए कहा—'बात यह है कि जिस समय मे, हरि भाई और कुसुम (शास्त्री जी की छोटी पुत्री) बच्चे थे उस समय बाबूजी और परिवार के रहन-सहन का स्तर कुछ और था। ये जो तीन छोटे भाई है, इन्होने जब से होश सभाला है तब से इन्हे घर मे भी और बाहर भी दूसरी तरह का वातावरण मिला है। इसलिए हममे और इनमे अन्तर तो होना ही है। हम तीनो बचपन मे बहुत सीधे थे।"

मैने कहा—"दिल्ली जैसे बड़े नगर मे रहने का भी प्रभाव पड़ता है। यहाँ की सोसायटी कुछ और ही ढग की है।"

इस पर ललिता जी बोली—"लेकिन ये तीनो भी बहुत समझदार है। शास्त्री जी के न रहने पर इन्होने बिल्कुल अपने मन से ही तय कर लिया था कि अब वे स्कूल-कालेज कार मे नही, बस मे जाया करेगे। मैने ही उन्हे ऐसा नही करने दिया। मैने कह दिया कि मै ऐसा नही होने दूँगी। दामाद

के पास कार है और मेरे पास भी कार है, उसकी कीमत का पूरा भुगतान भले ही अभी न हुआ हो, लेकिन मैं उसे बेचूंगी नही, जैसे भी होगा उसकी कीमत चुका दूंगी।"

और फिर ठंडी सास लेकर बोली—"शास्त्री जी ने इसे बड़े शौक से खरीदा था।"

कुछ देर को सब चुप हो गये। मैने चुप्पी तोड़ते हुए कहा—"आप तो बहुत धर्मपरायणा हैं, क्या शास्त्री जी भी आपकी तरह पूजा-पाठ और उपवास आदि रखते थे।"

ललिता जी ने कहा—"पूजा-पाठ तो वे नहीं करते थे, लेकिन बरस में तीन दिन उपवास अवश्य रखते थे—देवउठनी एकादशी, शिवरात्रि और जन्माष्टमी के दिन। इस दिन वे चाय भी मेज पर नही पीते थे, क्योंकि मै कहती थी—'मेज पर सब बैठ कर खाते है। वह झूठी रहती है। मै आपकी झूठी थाली में खाती हूँ, इसलिए व्रत के दिन मेज पर मत खाया-पिया करो।' यह बात उन्हें सदा याद रहती थी। वे नौकर से कहते थे - 'अपनी बहू जी से पूछ कर जहाँ वे कहे खाने-पीने का प्रबन्ध कर दो।' उपवास के दिन शुद्धता का इतना ध्यान रहता था कि चाय के पानी का बर्तन भी अलग रहता था। रोज के बर्तन मे चाय नही बनती थी।"

उनकी पुत्री ने कहा—"पूजा तो नही करते थे वे, लेकिन उन्हे भजन बहुत अच्छे लगते थे। प्रातःकाल के समय वह कबीर, सूरदास, टैगोर आदि के भजन गाया और गुनगुनाया करते थे। कबीर का – 'ज्यो की त्यो धरि दीनी चदरिया' पद तो उन्हे बहुत ही प्रिय था।"

एक प्रश्न मेरे मस्तिष्क मे बहुत समय से चक्कर काट रहा था। वह यह कि शास्त्री जी श्रीवास्तव कायस्थ थे और श्रीवास्तव कायस्थो मे विवाह के अवसर पर करारदाद का रिवाज है। सो शास्त्री जी ने अपने पुत्र और पुत्रियो के विवाह के अवसर पर इस रिवाज को निभाया या तोड़ दिया।

मैने ललिता जी से इस विषय मे पूछा तो वे बोलीं—"शास्त्री जी ने न बेटे के विवाह में कुछ लिया, न बेटियों के विवाह में कुछ दिया। आप तो जानती ही है कि विवाह में कलेऊ के समय सब लोग वर को उपहार या नकदी देते है, लेकिन शास्त्री जी ने अपने विवाह मे डेढ़ रुपये के एक लकड़ी के चर्खे, एक खादी के थान और एक रुपये के अतिरिक्त कुछ नही लिया। हरि जी के विवाह के अवसर पर मैने किसी अनुष्ठान के लिए उसकी ससुराल वालो से जरा-सा सोना (आधा या एक तोला) मांगा था। इस अनुष्ठान में वर और वधू दोनों के घर का जरा-जरा सा सोना मिला कर कोई चीज (शायद जौ) बनवा कर उसकी पूजा की जाती है। यह भी शास्त्री जी को बहुत बुरा लगा। मेरे बहुत ही समझाने पर वे माने।"

मैने पूछा—"शास्त्री जी की माता के विचार तो पुराने होगे और शास्त्री जी के विचार दूसरी तरह के थे। ऐसी हालत मे आपके सामने यह समस्या रही होगी कि आप किसका कहना माने, किसे खुश रखे।"

ललिता जी बोली—"मैने तो सोच लिया था कि सास को भी खुश रखना है और पति को भी। पर्दे की ही बात लो, जब बाहर जाती थी तब मुँह खोल लेती थी, जब अन्दर आती थी तब घूँघट काढ़ लेती थी। यो, हमारी सास तो स्वय सभाओ आदि मे जाती थी और उनके विचार बिल्कुल पुराने नहीं थे।"

बातों का रूख शास्त्री जी की पूज्जा माता जी की ओर मुड़ गया। मैने उनके दर्शन करने की

इच्छा प्रकट की तो हरिजी उन्हे बुलाने अन्दर गए। शास्त्री जी की पुत्री ने कहा—"उनसे बाबूजी के बारे मे कुछ पूछना मुश्किल है। उन्हे कुछ याद ही नही आता है। हॉ, जब रोती है तब न जाने कब-कब की और क्या-क्या बाते कहती रहती है। उस समय यदि कोई नोट-बुक लेकर बैठ जाय तो अनगिनत बाते नोट की जा सकती है।"

मैने सोचा—जिस मॉ ने डेढ वर्ष के पितृविहीन नन्हे को अपने प्यार, त्याग और सूझ-बूझ के बल पर इतना योग्य बना दिया कि वह केवल भारत का प्रधान मंत्री ही नही बना बल्कि अठारह महीने मे ही जिसने अपनी दृढता और दूरदर्शिता के बल पर सारे विश्व मे अपनी कीर्ति की ध्वजा फहरा दी, वह शिवाजी महाराज की माता जीजाबाई से क्या कम यशस्विनी है? क्या उसका नाम भी इतिहास मे जीजाबाई की तरह सुनहले अक्षरो मे नही लिखा जाएगा?

तभी हरि जी ने आकर बताया कि वह स्नान कर रही है। ललिता जी ने कहा—"अब तो वे तीन घटे तक गुसलखाने मे से नही निकलेगी, न जाने इतनी देर तक वहा क्या करती रहती है?"

उनकी पुत्री ने कहा—"पूछते है कि इतनी देर तक क्या करती रहती हो तो कहती है कि कुछ नही, भजन करती हूँ।"

शास्त्री जी की माता का प्रसग छिड़ते ही मेरा मन कुछ अनमना-सा हो गया था। मैने धीरे-से पूछा—"यह खबर सुन कर तो न जाने उनकी क्या दशा हुई होगी।"

ललिता जी ने रुंधे गले से कहा—"उन्हे तो यकीन ही नही आया। यही कहती रही कि तुम झूठ बोल रहे हो ऐसा नही हो सकता। ऐसा हो ही नही सकता।"

जिन आँसुओ को मै अब तक बरबस रोके हुए थी, वे मा के इस दारुण दुःख की बात सुनकर आँखो से बाहर आ ही गए। ललिता जी की आखे भी बरस पड़ी। आगे की बातचीत आँसुओ के बीच ही हुई। उन्होने कहा—"उनकी आदत है कि जब तक सुबह मै उनके पास न जाऊँ वे आँखे नही खोलती। वह मेरा मुँह देखकर उठना चाहती है। एक सुबह जब मै उनके पास गई तब वह आखे खोल कर उठ बैठी और एकटक मेरा मुँह देखने लगी। मैने पूछा—"क्या देखती है?" तो बोली—"दुल्हन, तुम्हारा मुँह काहे उतरा है? टीका यो न लगा लै है?" मै रुलाई रोक कर वहाँ से चली आई।"

कुछ रुक कर ललिता जी ने कहा—"अक्सर कहती रहती है—'हम कभी न सोचे थे कि हमें तुम्हारा बिना टीका के माथा देखना पडेगा।" एक दिन वे ड्राइ ग-रूम मे गईं। वहाँ मेरा और शास्त्री जी का बड़ा रगीन चित्र रखा है। मै भी पीछे-पीछे गई तो देखा वह शास्त्री जी के चित्र के माथे पर बड़े स्नेह से हाथ फेर रही है और कह रही है—"तू ने टीका लगा रखा है? कैसा अच्छा लग रहा है। दुल्हन के दाँत कैसे चमक रहे है। दात देखकर ही तो हमने ब्याह करा था इससे।' (वह रगीन चित्र अन्दर से मँगवा कर ललिता जी ने दिखाया। उस चित्र मे शास्त्री जी के माथे पर भी टीका लगा हुआ है और हँसने के कारण ललिता जी के दात अनार के दाने जैसे चमक रहे है।)

हम लोगो ने चित्र देखकर मन-ही-मन शास्त्री जी को प्रणाम किया।

ललिता जी ने प्रसग को चालू रखते हुए कहा—"उन्हे तो अब कुछ भी याद नही रहता। उस दिन कुसुम (छोटी पुत्री) जा रही थी तो मुझ से बोली—'दुल्हन, कुसुम को तुम सिन्दूर लगा दो,'

मैं झिझकी, लेकिन उनके बार-बार कहने पर मैंने सिन्दूर लगा दिया तो कहने लगीं—'दुल्हन, अपने माथे पर भी सिन्दूर लगा लो !' "

यह कहकर ललिता जी की आँखे फिर बरसने लगीं। मेरी समझ में नही आ रहा था कि मै क्या कहूँ, क्या पूछूँ। शास्त्री जी की पुत्री ने परिस्थिति को समझते हुए कहा—"वैसे अम्मा कहती है कि मुझे रोज सपने मे नन्हा दीखता है और कहता है कि मै तुम्हें रोज देखने आता हूँ।"

ललिता जी ने आँखे पोछते हुए कहा—"एक दिन वह सो रही थीं। हम सब भी उसी कमरे में बैठे थे कि एकाएक वह चिल्लाई—'नही-नही,' और उठ कर इधर-उधर देखने लगी। हमारे पूछने पर उन्होंने बताया—'नन्हा आया था। मै उसे रोक रही थी कि दुल्हन से तो मिल कर जाओ। वह जाने लगा तो मैने कहा नही, नही जाओ।"

कुछ क्षण रुक कर बात को नया मोड़ देने के लिए मैने कहा—"युद्ध के दिनों में तो आपके बंगले में भी खाइयां खोदी गई होंगी ?"

ललिता जी ने कहा—"हाँ, लेकिन शास्त्री जी कभी खाई में नहीं गए। हम सब चले जाते थे, लेकिन वे खाई के पास कुर्सी बिछाए बैठे रहते थे। अधेरा होने पर भी वह बाहर बरामदे में बैठे रहते थे और यह देखते रहते थे कि सब बच्चे और नौकर आदि आ गए हैं या नही।"

"नौकरों की तो उन्हे बहुत ही चिन्ता रहती थी। उनके लिए भी खाइयाँ खुदवा कर उन्होने उन्हे सारी बातें समझाई थी।" उनकी पुत्री ने कहा।

ललिता जी बोली—"नौकरो से वह कभी नही बिगड़ते थे। यदि मै किसी बात पर नौकरो पर बिगड़ती थी तो मुँह से तो कुछ नही कहते थे, लेकिन गर्दन हिला कर यह प्रकट कर देते थे कि ऐसा करना ठीक नही है। जब मै कहती कि नौकर बहुत बिगड़ गये है, ढग से कोई काम नहीं करते, सिर पर चढ़ते जा रहे है, तब हमेशा एक ही बात कहा करते थे—

कुदरत को नही पसद है सख्ती बयान मे,
इसीलिए है दी नही हड्डी जबान मे।

यह शेर सुन कर मैने सोचा कितनी ममता थी उन्हे गरीबो के प्रति ! कितना महान् था उनका आदर्श ! तभी तो वह जन-जन के प्यारे बन गए थे।

देर हो चुकी थी, लेकिन एक अन्तिम प्रश्न पूछने से मै अपने आपको नही रोक सकी। मैने पूछा—"आप सब जगह उनके साथ जाती थी। ताशकन्द न जाने का क्या कोई विशेष कारण था ?"
ललिता जी बोली—"ऐसा ही होना था और क्या कहे। पहली तारीख तक भी मेरे न जाने की बात पक्की नही थी। शास्त्री जी ने कहा था—'तुम न चलो तो अच्छा है, वहाँ बहुत ठड होगी।' मैने कहा भी कि आपको तो ठड ज्यादा नुकसान करेगी, इस पर वे बोले—'तुम्हारी गाँठो का दर्द बढ़ जाता है ठड में। फिर पता नही मुझे कब तक वहाँ रहना पड़े, तुम जाओगी तो मुझे तुम्हारी ओर से चिन्ता रहेगी। तुम अमेरिका चलना। ताशकन्द तो तुम हो भी आई हो। 'बस मेरा जाना रुक गया। और जब मैने उनसे कहा कि ताशकन्द मे न जाने क्या बाते हो, आपको सफलता मिले या न मिले, तब इस पर वे कुछ नही बोले, बस रामायण की ये लाइनें दुहरा दी—

"हानि-लाभ, जीवन-मर ,
पश-अपयश विधि हाथ।"

ललिता जी ठडी सांस लेकर चुप हो गई। मैने कहा– "ताशकन्द से आप से फोन पर बाते करते रहे होगे। कभी अपने स्वास्थ्य के विषय मे कुछ कहा था उन्होने ?"

"वे तो यही कहते रहे हम अच्छी तरह है" ललिता जी ने उत्तर दिया—"आठ तारीख को मुझसे पूछा था—'अमेरिका तो तुम चलोगी, न ?' मैने कहा था – 'हाँ चलेगे, जरूर चलेगे।' "

"यहा तो उनका खाना आप ही बनाती थी न ?" मैने पूछा।

वे बोली—"हाँ, मै ही बनाती थी। कभी लड़कियाँ या कोई और बनाता था तो वे कहा करते थे—तुम्हारी मा बहुत बढ़िया बनाती है, तुम वैसा नही बना पाती। वह बहुत थोड़ा और सादा भोजन करते थे, इसलिए मै एक ही चीज को कई तरह से बनाती थी जिससे उन्हे अरुचि न हो, वह पेट भर कर खा ले। कही हम खाने के लिए जाते थे और वहा कोई नई चीज शास्त्री जी को पसन्द आ जाती तो मै वैसी ही चीज बिना किसी से पूछे घर पर आकर बना देती थी उनके लिए। मास्को मे एक तरह का शर्बत उन्हे बहुत पसन्द आया। मैने कहा—"मैं ऐसा ही बना सकती हूँ।" उन्हे विश्वास नही हुआ। लेकिन यहा आने पर एक अवसर पर मैने वैसा ही शर्बत बना कर जब शास्त्री जी को चखाया तब उन्हे बहुत अच्छा लगा। तब मैंने उन्हे याद दिलाई कि यह वैसा ही शर्बत है जैसा हमने मास्को में पिया था। वैसे वे खाने-पीने के अधिक शौकीन नही थे। जो बनता था वही चुपचाप खा लेते थे।"

मै मन्त्रमुग्ध-सी उस कुशल गृहिणी और उस सरल मानव की बाते सुन रही थी। ललिता जी कुछ याद सा करते हुए बोली—"उनके ताशकन्द जाने से पहले मैंने कुछ सब्जियाँ डाल कर खिचड़ी बनाई थी। वह उन्हे बहुत पसन्द थी। मैं पास बैठी थी और वे खा रहे थे। खा कर उठे तो बोले—'तुम नमक डालना शायद भूल गई ?' मैंने कहा—'कम होगा, डाला तो होगा।' कहने लगे—'नही, बिल्कुल नही है; चख कर देखो।' मैंने चखा तो सचमुच बिल्कुल नही था। मैं उठती हुई बोली—'मैं अभी नमक मिला कर लाती हूँ, थोडी सी और खा लो।' उन्होने मुझे रोक दिया"— 'मैने पेट भर कर खा लिया है। तुम मत उठो। इसी से तो पहले नही बताया था कि तुम्हे उठना पड़ेगा।'

कहते-कहते ललिता जी की आँखे फिर भर आई। फिर जैसे अपने आप से ही कह रही हो, वे बोली—"मैंने निश्चय कर लिया है अब वैसी खिचड़ी कभी नही बनाऊँगी। बनानी भी पड़ गई तो मैं खाऊँगी नही। और खाने के लिए किसी ने बहुत ही हठ की तो बिना नमक के खाऊँगी।"

वातावरण फिर बोझिल हो उठा। तभी बच्चो की एक टोली वहाँ आ गई। हरि जी बोले—"रोज ही यहाँ स्कूलो के सैकड़ो बच्चे आते हैं।"

ललिता जी, उनके पुत्र और पुत्री उनके साथ कुछ समय के लिए अपना दु:ख हल्का कर सकें, इसलिए मैंने उनसे विदा माँगी।

चलते समय मैने ललिता जी के चरण-स्पर्श किये तो उन्होने मेरे सिर पर हाथ रख कर कुछ कहा—शायद आशीर्वाद दिया होगा। ऐसी देवी और पतिपरायणा नारी के आशीर्वाद से मै धन्य हो उठी।

केशवदेव मिश्र 'कमल'

शौर्य, शान्ति और देशभक्ति के पुंज

उनका सारा जीवन निरन्तर लोक-सेवा में ही वीता। उन्होने मनसा, वाचा, कर्मणा, लोक-सेवा की। 'सादा जीवन और उच्च विचार' का सम्बल लेकर हर परिस्थिति का सामना करते हुए अविचलित लक्ष्य की ओर निरन्तर बढ़ते रहना, मार्ग में कहो विश्राम नही, अनवरत कर्म--यह था उनका जीवन-कार्य। वे सस्कार से सुसज्जित, कर्मठ और संयमी व्यक्ति थे। यश उन्होने नहीं चाहा, न वैभव कमाया, जीवन भर अपने को मानवता की फसल मे सीचते रहे। जीवन को उसकी विपुलता और गहनता को अपनी अनुभूति से उन्होने माप कर शाकर वेदान्त को अपने जीवन मे ढाला। वे ऐसे व्यक्ति थे, जिन्हे देश का हर ग्रामीण वास्तविक अर्थो मे अपना साथी समझ कर सम्मान देता था, क्योकि जनता के दिल और दिमाग को उन्होने एक अद्भुत सीमा तक जीत लिया था।

उनमें न केवल गांधो-दर्शन दर्शित था, बल्कि एक कर्मयोगी को साधना भो थो। समय की पुकार पर शान्ति की खोज मे वह गगा से वोल्गा तक गये और ताशकंद मे मानवता के प्रति उनमे जो तड़प प्रकट हुई, उसमें उनकी महान् आत्मा का प्रमाण मिला।

काशी विद्यापाठ मे उन्होने दर्शन एवं भारतीय सस्कृति का गहन अध्ययन किया। चरित्र-निर्माण एव देश-प्रेम की भावना जागृत करना वहाँ की शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य था। किशोर शास्त्री भी उसी रग मे रँग गये और केवल १६ वर्ष की आयु मे ही वे भारत के स्वतन्त्रता-आन्दोलन मे कूद पड़े।

सार्वजनिक जीवन

उन्होने महात्मा गांधी द्वारा चलाये गए प्रत्येक आन्दोलन मे भाग लिया और लगभग ९ वर्षों तक विभिन्न जेलो मे रहे। १९२६ मे वह 'लोक-सेवक-मण्डल' के आजीवन सदस्य बने और देश की राज-नीति में गहरे पैठते चले गये।

शास्त्री जी उत्तर प्रदेश मे और उसके बाद केन्द्र मे ऊँचे-से-ऊँचे अनेक पदो पर रहे और प्रत्येक जिम्मेदारी को उन्होने योग्यतापूर्वक निभाया। देश मे, सेवामें उनका आत्म बलिदान अनुकर-णीय आदर्श बन गया था। काग्रेस-नेतृत्व को सर्वश्रेष्ठ परम्पराओ को निभाते हुए ही वे काग्रेस के साधारण कार्यकर्त्ता से उसके सगठनात्मक तथा संसदोय दोनो मोर्चो पर विभिन्न उच्च पदो पर आसीन

हुए और स्व० राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन तथा स्व० पं० जवाहरलाल नेहरू जैसे देश के बड़े नेताओं के विश्वासपात्र बने और फिर प्रधान मन्त्री के रूप मे सम्पूर्ण राष्ट्र के विश्वासपात्र।

कुशल प्रशासक

वे कुशल प्रशासक थे और प्रशासन का उन्हे १९ वर्षो का अनुभव था। प्रशासन का प्रारम्भिक अनुभव उन्हे १९४७ मे उस समय हुआ, जबकि वे उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्य मत्री श्री गोविन्दवल्लभ पंत के सभा-सचिव नियुक्त हुए। उनकी योग्यता और कार्यकुशलता से प्रभावित होकर पंतजी ने उन्हे शीघ्र ही पदोन्नति पर परिवहन तथा गृहमत्री बनाया। १९५२ के प्रथम आम चुनाव के बाद नेहरू जी ने उन्हे केन्द्र मे खीच लिया और रेल तथा परिवहन मत्री का दायित्व सौपा और उसके बाद संचार, वाणिज्य एव उद्योग, गृह तथा निर्विभागीय मत्री के रूप मे कार्य किया।

महान् राजनीतिज्ञ

राजनीति मे वह बड़ी सूझ-बूझ से काम लेते थे। राजनीतिक उलझनें कभी उन्हे विचलित न कर सकी। काम-काज के सूक्ष्मतम विवरणों पर उनकी पकड़ विस्मयकारी होती थी। वह किसी भी समस्या की तह मे बैठ कर उसका समाधान निकाल लेते थे और बड़े-बड़े अधिकारी उनकी बुद्धिमत्ता और कार्य-कुशलता को देखकर आश्चर्यचकित रह जाते थे। कितनी ही गुत्थियो को उन्होने अपने ढग से सुलझाया, और बडे-से-बडे सकटो का हँसते-हँसते सामना किया, और विरुद्ध मतों की कठोरता को उन्होने कई बार मोम मे पलट लिया। वे राजनीति के पण्डित तो थे ही, परन्तु व्यावहारिक राजनीति मे भी अपना सानी नही रखते थे। परिस्थिति का उनका अध्ययन पूर्ण होता था। किसी भी विचार के लिए उनकी ग्रहण-शक्ति असाधारण थी। बुद्धि और कर्त्तव्य की कसौटी पर जो बात उन्हे ठीक जँचती थी उसे ही मानते थे। किसी भी मसले की यथार्थता को वे बहुत जल्दी समझ लेते थे। सामाजिक विषयो पर जनता की ठीक सम्मति जान लेने में वे कभी नही चूके। मुख्य और केन्द्रीभूत बात को स्पष्ट करके जटिल प्रश्नो को सरल बनाने की कला में वे पारंगत थे।

अजातशत्रु

शास्त्री जी अजातशत्रु थे। उनका कोई विरोधी नही था। अपनी कर्त्तव्य-निष्ठा और सादगी के कारण उन्होने भारत के प्रत्येक वर्ग का मन मोह लिया था। लाखो और करोड़ो देशवासियों की उन पर अपूर्व भक्ति और श्रद्धा थी। वे सत्य और अहिंसा में विश्वास रखते थे और उनकी लौकिक इच्छाएँ बहुत सीमित थी। हिन्दू संस्कृति और सभ्यता पर उन्हे अभिमान था। वे सीधे-सादे, ईमानदार और शान्तिप्रिय व्यक्ति थे। लोगो को अपनी तरफ बड़ा कुशलता से आकर्षित करते और मनुष्य को बहुत अच्छी तरह समझते थे। वे ऐसे नेता थे, जो अपने साथियो को नेतागिरी का बोझ मालूम नहीं होने देते थे। वे अपने साथियो की रहनुमाई करते थे, लेकिन उनके साथी यह बात जल्दी महसूस नहीं करते थे कि लालबहादुर जो उनको रास्ता दिखा रहे हैं। वे अपना काम नम्रता और खामोशी से करते थे।

महान् व्यक्तित्व

शास्त्री जी का व्यक्तित्व महान् था। उनके लिए राष्ट्र ही सर्वोपरि था। वे अपने हृदय से देश और देशवासियों से प्रेम करते थे। स्वदेश-प्रेम के सिवा वे दूसरी बात नहीं जानते थे। स्वदेश के लिए वे जिस इच्छाशक्ति से काम लेते थे, वह बड़ी प्रबल थी।

आत्मविश्वास उनमे गजब का था। उन्हे अपनी शक्ति में, अपने कार्य की धार्मिकता और पवित्रता मे, अपने राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य मे दृढ विश्वास था। शास्त्री जी ने इतिहास के कठिन क्षणो में देश को सर्वोत्तम सेवाएँ दी। वे बहुत कम दिनो तक प्रधान मन्त्री रहे, पर इस दौरान उनका व्यक्तित्व ऊँचा उठता गया। श्री जवाहरलाल नेहरू ने एक बार शास्त्री जी का अभिनन्दन करते हुए उन्हे 'उच्चतम व्यक्तित्व वाला, चेतनावान् तथा कठोर परिश्रमी व्यक्ति' कहा था।

शास्त्री जी का जीवन हम लोगो के लिए एक सबक है। उनकी उत्कृष्ट देशभक्ति, अपूर्व त्याग और निष्काम कर्म हम भारतीयों के लिए आदर्श बने रहेगे और हमे प्रेरित करते रहेगे।

एक दूसरे के बजाय, आइए हम गरीबी, बीमारी और अभाव से लड़ें। दोनों देशों के मामूली लोग यह चाहते है कि उनको शान्ति से तरक्की करने का मौका मिले। वे लडाई-झगड़ा नही चाहते। उनकी जरूरत गोला-बारूद और अस्त्र-शस्त्र की नही, खाना, कपड़ा और मकान की है।

—लालबहादुर शास्त्री

देवप्रकाश गुप्त

काया जल गई, पर कीर्ति शेष है

समय वह जाता है। स्मृतियाँ रह जाती है। लोकनायक स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री ने गत ४ जनवरी को ताशकद मे शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व, सद्भावना और विश्व-मैत्री की आधारशिला रखने की ओर इ गित करते हुए कहा था—

"लड़ाई से समस्याए सुलझती नही और पैदा होती हैं। इससे सुलह-समझौते मे बाधा पड़ती है। शान्ति के वातावरण मे ही आपस के मतभेद दूर किये जा सकते है। एक-दूसरे से लड़ने के बजाय, आइए हम गरीबी, बीमारी और अभाव से लडें। भारत और पाक दोनो ही देशो के मामूली लोग यही चाहते है कि उनको शान्ति से तरक्की करने का मौका मिले। वे लडाई-झगड़ा नही चाहते। उनको जरूरत है—गोला-बारूद और अस्त्र-शस्त्र की नही, बल्कि खाने-कपडे और मकान की।" ताशकद मे कहे गये उनके ये हृदयोद्गार सिद्ध करते हैं कि स्वल्पकाय स्वर्गीय शास्त्री निश्चित रूप से विराटता से पूर्ण एक युद्धहीन विश्व की रचना मे समग्र भाव से सलग्न थे। युद्ध से दूर एव शान्ति के सन्निकट अनत विनयी, स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री का जीवन एक अलक्ष्य सगम हो चला था, जिस मे अनेक संस्कृतियाँ, अनेक सकल्प और अनेक मगलमयी आस्थाये तिरोहित हो गई थी। स्वर्गीय शास्त्री जी ने चूँकि गरीबी किताबो मे नही पढी थी वरन् दिल से अनुभव की थी, इसलिए वे बराबर अपार धैर्य से मुसीबतो और अभावो के साथ कदम-से-कदम मिला कर चलते रहे।

इसी आधार पर जब मै स्वर्गीय शास्त्री जी के कार्य-कलाप और राजनीतिक जीवन से सम्बन्धित कुछ जिज्ञासाए लेकर उनकी सहधर्मिणी श्रीमती ललिता जी के पास पिछले दिनो गया तब मैने अनुभव किया कि वह भारतीय महिला पहले हैं और बाद मे है स्व० प्रधान मत्री की पत्नी। स्व० शास्त्रीजी के शयन-कक्ष के बरामदे के बाहर बगीचे मे ललिता जी नितान्त सरल वेश-भूषा मे अपने ज्येष्ठ पुत्र हरिकृष्ण और श्रीमती रामदुलारी देवी के साथ बैठी थी। बहुत सहज बहुत साधारण पहनावा। पतली किनारी की सादी साडी और लगभग पुरानी हो रही एक शाल। चेहरे पर उभरी सिलवटे, बातचीत का गम्भीर ढग। मैंने अनुभव किया कि उन्होने अपनी पीड़ा का अथाह सामुद्रिक रूप अपने भीतर छिपा लिया है।

मेरा पहला प्रश्न था—उनके प्रधान मन्त्रित्व-काल मे आपका सहयोग केवल व्यक्तिगत था या वह राजनैतिक रूप भी ले चुका था? उनके विभिन्न उत्तरदायित्वो को ऊपर उठाने मे आपका सहयोग उन्हे किन-किन रूपो मे प्राप्त हुआ।

उन्होने विनम्र भाव से कहना शुरू किया—"जी हाँ, मेरा सहयोग बहुत हद तक व्यक्तिगत ही

था। उसका कोई ज्यादा राजनोतिक रूप में नहीं कह सकती। हाँ, अखबारों में जब-तब जो गम्भीर राजनीतिक खबरे छपती थीं मै उन सबों पर उनका ध्यान जरूर दिलाया करती थी। कभी-कभी छोटा-मोटा तर्क हो जाता था तब वे कहने लगते थे—"आप बहुत बोलने लग गई है" और तब मै उनके सामने प्रायः चुप पड़ जाती थी। लगातार शासन में रहते आने के कारण शास्त्री जी को इस बात का पूरा और पक्का अनुभव हो गया था कि कौन बात कहाँ पर ठीक लागू हो सकती है। इसलिए यों भी राजनीतिक मसलों पर मुझ से ज्यादा पूछताछ नही करते थे। रहा व्यक्तिगत कामो मे मेरी मदद की बात तो उन्होने घर की सारी जिम्मेदारी मुझ पर रख छोड़ी थी।"

ताशकद-संदर्भ मे उनसे मुझे कुछ विशेष प्रश्न पूछने थे। इसी सदर्भ में मैंने उनसे जिज्ञासा की—

"ताशकद घोषणा को क्या आप शास्त्री जी की सफलता मानती हैं? चूँकि जनता और कुछेक राजनीतिक क्षेत्रों मे आज तक भी इस बात की भ्रान्ति है कि रूस के दबाव में आकर स्वर्गीय शास्त्री जी ने उक्त समझौते पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये। आप तो उन्हे हर पहलू से जानती है, इस बारे मे आपको क्या धारणा है?"

"ताशकद-वार्ता को मै अपने विचार से आज को स्थिति मे अच्छा समझती हूँ"।

"शास्त्री जी देश के खातिर जन्मे और देश की खातिर गये, ताशकंद-घोषणा ने इस बात का प्रमाण दे दिया। भारत और पाकिस्तान के बीच रूस को मौजूदगी मे जो घोषणा हुई, उससे हित ही होगा ऐसा मै निजी तौर पर समझती हूँ। जहाँ तक रूस के दबाव मे शास्त्री जी के आने का सवाल है, मैं ऐसा कभी नही मानती। जब तक उनका दिल किसी भी बात पर नही करता, वह उस पर कभी 'हाँ' नही करते। इसलिए मै फिर कहती हूँ कि दबाव में आने की बात गलत है। शास्त्रीजी किसी के दवाब मे आने वाले व्यक्ति नही थे। अगर घोषणा के मुताबिक सही माने में कार्य नहीं हुआ तो इससे शास्त्री जी की आत्मा को अशान्ति मिलेगी। मै तो इस बारे मे अपनी ओर से चुप रहना ही अच्छा समझती हूँ।"

"अगर आप से मदद माँगी गई तो?"

"उचित मदद दे सकती हूँ, पर ताशकद घोषणा को कोई खिलाफत करेगा, नारे लगाएग तो मै कर ही क्या सकती हूँ।" इसलिए चुप रहना ही अच्छा है। यही है कि शास्त्री जी ने थोड़े दिनों में जितना कुछ किया, हम उसी को मजबूती से निभाएँ तो देश का सिर ऊँचा उठेगा।"

"अनेक राजनीतिक कार्यो मे उलझे रहने के बावजूद जब शास्त्री जी आप लोगों से मिलते थे तब उस वक्त मे किस प्रकार की बाते करते थे? क्या उस वक्त भी राजनीतिक बाते होती थी?"

इस पर उन्होने कहा—"उस वक्त सबसे घुल-मिल कर ज्यादातर घरेलू बाते करते थे। कभी-कभी घरेलू बातो के बीच 'एयररेड' से बचने की शिक्षाभरी बात भी चल पड़ती थी। युद्ध के समय वे कहा करते थे—'अभी कहाँ लड़ाई शुरू हुई है? अरे तुम लोग घबराई हो। अभी तो तुम लोगों को तैयार होना है।' उन्हे पूरा विश्वास था कि हम हर तरह से सफल होगे। जब कभी उन्हे लड़ाई के उग्र रूप धारण करने की अग्रिम सूचना मिलती थी, वे अधिक नही बोलते थे, सिफ इतना कहते थे—देखना, कल शायद बहुत बड़ा काम होगा।' लड़ाई के दिनो मे उन्हे सफलता मिलने के ख्याल

पूजा-पाठ और बढा दिया था। इस पर वे कहा करते थे—'आपने पूजा इतनी क्यों बढ़ा दी ?' तो मै उनसे कहा करती थी—'आप देश की सेवा 'उस' रूप मे कर रहे है तो मै 'इस' रूप मे कर रही हूँ। इसमे आपको क्या आपत्ति होती है।' इस पर वे चुप हो जाते थे और कहते थे—'जैसी आपकी मर्जी।' हाँ, वह अक्सर गम्भीर होकर उन दुखी परिवारो के लिए अफसोस करते जिनके जवान लडाई मे वीर-गति प्राप्त हो गये थे। कहा करते थे—'उन दुखी परिवारो के दर्द की सोचता हूँ, तो मेरा मन घबरा जाता है। क्या बीतता होगा उन लोगो पर। जरा लडाई वगैरह थम जाये तो सरकार से उनकी उचित मदद की व्यवस्था जरूर करवाऊंगा।"

"उन्हे अपने पुत्रो के भविष्य की कोई चिन्ता थी ?"

"यह सब उन्होने मुझ पर छोड़ रखा था। मै आज भी अपने लड़को से यही कहती हूँ कि तुम लोग नेक बनो और दुनिया मे अपने पिता का नाम ऊँचा करो।"

"उनके अधूरे कार्यक्रमो को पूरा करने के बारे मे अब आपकी क्या योजना है ?"

"शास्त्री जी बराबर कहा करते थे- अपने से नीचे की ओर देखो, तभी तुम्हे जीवन का सच्चा आनन्द मिलेगा। उनके इन विचारो का मुझ पर पूरा-पूरा प्रभाव है। और मै भी यही मानती हूँ कि महत्वाकाक्षाओ के पीछे भागने से कोई लाभ नही। आदमी अपनी कमजोरी को पहचाने और उसे जड़ से दूर करने मे जुट जाए, यही भावना उसे शान्ति दे सकती है। मै उनके अधूरे कार्यक्रम को पूरा करना चाह रही हूँ। गरीबो, अनाथो की सेवा, सामाजिक और ग्राम-सुधार तथा राष्ट्र-निर्माण के कार्यो को आगे बढाने मे मेरी रुचि है।"

"क्या आपके सामने कोई ऐसा भी प्रस्ताव आया है कि उनके ससदीय क्षेत्र से आपको या आपके परिवार के किसी सदस्य को नामजद किया जाए ?"

"बहुत दूर-दूर से इस आशय के पत्र आये है। इलाहाबाद से कुछ डेलीगेशन भी आ चुके है। मन्त्रिमडल के कुछ सदस्यो ने भी इस ओर ध्यान दिलाया है, पर मै निश्चय कर चुकी हूँ कि न तो मुझे राज्य सभा की सदस्या बनना है और न लोक सभा की। मैं मूक सेवा मे विश्वास रख कर चलने वाली एक साधारण महिला हूँ।"

समय अधिक हो गया था। मै उन्हे प्रणाम कर वहाँ से चल पड़ा। बराबर के कमरे से बच्चो कीसम्मिलित आवाजे सुनाई दे रही थी—'बाबूजी अमर है, बाबूजी अमर है।' उनके निवास के लॉन की खेती, टूटते तरु-पत्र, उदास वातावरण तथा स्नेह का उन्मुक्त कोप—सब कुछ मुझे यह अहसास दे रहा था—काया जल गई, पर कीर्ति अब भी शेष है।

माणकचन्द भगत

शास्त्री जी राष्ट्र को जगा गये

श्रद्धा व बुद्धि का समन्वय सफलता तथा आनन्द की कुंजी है। इस कुंजी को प्राप्त करने पर ही कोई व्यक्ति महान बन सकता है। श्रद्धा भावलेपन का कार्य करती है और बुद्धि द्वारा विभेद उपस्थित किए जाते है। किसी भी पदार्थ को सूक्ष्म व छिन्न-भिन्न रूपो मे देखने का कार्य बुद्धि का है और बुद्धि द्वारा डाली हुई इन दरारो को मिलाकर लेपन करने का कार्य श्रद्धा का। इस प्रकार श्रद्धा व बुद्धि द्वारा पदार्थो का वास्तविक ज्ञान और अनुभूति हो जाती है। यह ज्ञान व अनुभूति ही जीवन को सफल व आनन्दपूर्ण बनाती है। इसे ही भाव, ज्ञान व कर्म की समरसता कहते है।

आज का युग बुद्धि प्रधान है। व्यक्ति की श्रद्धा और भावनाओ पर खूब गहरी परते जम गई है। अतः वह किसी अच्छी बात पर भी शीघ्र विश्वास नही करता। परन्तु महापुरुष कुछ ऐसे विलक्षण होते है कि जनता उनकी बात को शीघ्र शिरोधार्य कर लेती है। श्री शास्त्री जी भी ऐसे ही लोकनायक महापुरुष थे। जिन्होने हमें केवल पाकिस्तान पर ही विजय न दिलाई अपितु समस्याओ के समाधान के लिए श्रद्धा व तर्क पूर्ण उपाय प्रदान किये।

जब खाद्य सकट से जनता त्राहि-त्राहि कर रही थी, तब शास्त्री जी ने सोमवार का व्रत रख कर खाद्यान्न बचाने का अमोघ अस्त्र हमारे हाथों मे दिया। आज भी करोड़ों बुद्धिवादी भारतीय इस व्रत का पालन दृढ श्रद्धा के साथ कर रहे है। इस बौद्धिक युग में श्रद्धा व बुद्धि के समन्वय का यह ज्वलन्त प्रमाण है जो किसी भी युग के इतिहास मे लक्षित नही होता।

अतः श्री शास्त्री जी को यदि हमे जीवित देखना है तो उनके द्वारा बताये हुए इस महान व्रत का पालन करे। वास्तव मे शास्त्री जी स्वयं सदा के लिए सो गये, परन्तु उन्होने भारत के जन-जन को जगाकर भारत मा का बहादुर लाल बनाकर अपने नाम को सार्थक कर दिया। 'यथा नाम तथा गुण' वाले ऐसे महापुरुष को कोटिशः प्रणाम।

यशवन्त राय चव्हाण

आदर्श पुरुष

शास्त्री जी का निजी व्यक्तित्व और राष्ट्र के प्रति उनकी सेवाए हमारे परम्परागत आदर्शों के अनुरूप है। उन्हे प्रधानमन्त्री की हैसियत से यदि युद्ध का आश्रय लेना पडता तो वह केवल शान्ति स्थापन के लिए था। इसीलिए जब भी पाकिस्तान के साथ बातचीत का पहला अवसर मिला, शास्त्री जी ने अनेक कठिनाइयो और विघ्न-बाधाओ के होते हुए वार्ता को सफल बनाने मे अपूर्व योगदान दिया।

हम सब लालबहादुर जी की याद को बनाये रखे और उनके दर्शाये हुए मार्ग पर चलने का यत्न करते रहे, तभी उनके ऋण से उऋण हो सकते है।

माखनलाल चतुर्वेदी

नेहरू जी के सच्चे उत्तराधिकारी

जिस प्रकार राष्ट्रपिता बापू प जवाहरलाल नेहरू को अपना राजनीतिक उत्तराधिकारो बना गये थे, उसी प्रकार प० नेहरू ने भो श्री लालबहादुर शास्त्री को अपना उत्तराधिकारी बनाने को इच्छा व्यक्त की थी और उन्हे अपना अधूरा काम पूरा करने का आदेश दिया था। स्व० श्री शास्त्री जी ने अपने प्रिय नेता की आज्ञा का पालन पूर्ण श्रद्धा एव दक्षता से जीवनपर्यन्त किया, देशसेवा करते-करते ही उन्होने अपने को बलि कर दिया। वह नेहरू जी के सच्चे उत्तराधिकारी थे।

वैसे शास्त्री जी शान्ति के पुजारी थे, किन्तु साथ ही वह यशस्वी योद्धा भी थे। वह स्वभाव से सौम्य किन्तु विचारो मे दृढ थे। उनकी एक और विशेषता यह थी कि एक बहुत साधारण परिवार के व्यक्ति होने के बाद भी वह भारत-जैसे विशाल गणतन्त्र के प्रधान मन्त्रिपद पर पहुँच गये।

●

पुष्पा राकेश

बच्चों के हितचिन्तक

२७ मई, १९६४ को चाचा नेहरू के अचानक निधन से सारे विश्व के बच्चे स्तम्भित रह गये, क्योंकि चाचा नेहरू को वच्चो से विशेष लगाव था। उस दिन बच्चो को लगा था जैसे बेरहम 'होनी' ने उनकी खुशो को उनसे छीन लिया है। उनके उस सुख गुलाब को डाल से तोड़ कर अलग कर दिया है, जो सदा वच्चो को अच्छे बनने की प्रेरणा दिया करता था। वच्चे उदास हो गये थे।

लेकिन २ जून, १९६४ को भारत की फुलवाड़ी मे एक नया गुलाव का फूल फिर महक उठा। चाचा नेहरू के उत्तराधिकारी श्री लालबहादुर शास्त्री ने उदास वच्चो को अपने अक मे समेट लिया। वच्चे फिर से मुस्करा उठे।

मुझे वच्चो की एक सस्था को सहयोगी होने के नाते स्वर्गीय प्रधान मंत्री श्री लालवहादुर शास्त्री से कई वार मिलने का अवसर मिला और मैने उन्हे हर वार बच्चो के वहुत ही निकट पाया। वच्चो को अपनी ओर खीच लेने का विशेष गुण सरलता तथा सादगी होता है, क्योकि वच्चो के हृदय शीशे की तरह साफ और फूल की तरह कोमल होते है। और शास्त्री जी मे सरलता और कोमलता ही थी जिसके कारण वह वच्चो के लाड़ले बन गये।

मुझे याद है जव पहली वार १४ नवम्वर, १९६४ को शास्त्री जी हमारे 'वाल मेले' में आए थे, उस समय शाम ढल चुकी थी। मै श्रीमती गुलजारीलाल नन्दा को मेले के स्टाल दिखा रही थी। तभी अचानक एक अजीब-सी गूज वातावरण मे फैल गई। घूम कर देखा तो मेरे पीछे के स्टाल पर शास्त्री जी खडे किसी बच्चे से वाते कर रहे थे और उनके पीछे हजारो वच्चे उनका स्नेह पाने के लिए सीमा तोड आगे वढने की कोशिश मे थे। उस वक्त वच्चो के खुशी के स्वर एक साथ उभर रहे थे। स्टालों को देखते हुए शास्त्री जी कभी किसी वच्चे के वाल सहलाते, कभी किसी वच्चे के गाल थप-थपाते तथा किसी बच्चे को मुस्कराती निगाह से देखते जाते थे।

जव शास्त्री जी, श्रीमती नन्दा तथा मै एक फोटोग्राफी के स्टाल के भीतर गए तव वहाँ एक छोटी लड़कियो का झुरमुट शास्त्री जी के इर्द-गिर्द वन गया। तभी छोटी लड़कियाँ कहने लगी—"शास्त्री मामाजी, हमारे साथ एक फोटो खिचवा लीजियेगा।"

और शास्त्री जी उन रग-विरंगी कलियो के वीच मुस्कराते हुए फोटो का पोज देने के लिए वैठ गये।

जव फोटो खिच गई तव मैंने शास्त्री जी से कहा—"अभी-अभी प्रधान मंत्री-निवास से फोन आया था कि आपको ससद-भवन मे देर हो गई है और आपको अभी विज्ञान-भवन भी जाना है, इस-

लिए आप बाल मेले मे नही आ रहे हैं। जब हम लोगों ने मेले में आए हुए बच्चों को बताया कि आप मेले मे नही आ रहे है तब दोपहर से उतावले बच्चो के चेहरे मुर्झा-से गये। अब लगता है कि जैसे कोई शक्ति आपको यहाँ ले आई है।"

"हाँ, मै भी बच्चो से मिलना चाहता था। और यह समय मै अपने आराम के समय मे से निकाल कर आया हूँ। अभी मुझे विज्ञान-भवन जाना है," शास्त्री जी ने मुस्कराते हुए कहा। इसी तरह दूसरे वर्ष यानी १४ नवम्बर, १९६५ को वह दूसरी बार हमारे मेले मे अपने आराम के समय मे से ही समय निकाल कर आए। १४ नवम्बर बाल-दिवस होने की वजह से किसी प्रधान मत्री के लिए सबसे व्यस्त दिन होता है। उस दिन प्रधान मत्री को राजधानी के बहुत-से प्रोग्राम देखने होते है। शायद शास्त्री जी भी चाचा नेहरू की तरह सोचते थे कि व्यस्त जीवन की थकान बच्चो के बीच पहुँच कर हल्की हो जाती है। सचमुच, कोमल-हृदय परन्तु दृढनिश्चयी शास्त्री जी बच्चो के प्रति उतनी ही रुचि लेते थे जितनी चाचा नेहरू।

एक बार मुझे अपनी सस्था के बहुत-से बच्चो को लेकर शास्त्री जी के निवास-स्थान पर जाना पडा। वहाँ पर बहुत-से और लोग उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। जब शास्त्री जी आये तब सबसे पहले वह उसी ओर घूम आये जहा मुस्कराते बच्चो की भीड खडी थी। उन्हे आते देख कर बच्चे फूल-मालाएँ देने को उत्सुक हो उठे। जब शास्त्री जी ने उनमे से कुछ बच्चो को फूल-मालाएँ लेकर उन्ही के गले मे पहना दी तब बच्चे पुलक उठे। फिर शास्त्री जी बच्चो से बाते करने मे व्यस्त हो गये। बच्चो की नन्ही-नन्ही बाते जो केवल उदारहृदय व्यक्ति ही सुन सकता है, शास्त्री जी सुनते रहे। उस समय वे कुछ देर के लिए भूल गये कि लान पर बहुत-से राजनीतिक दलो के लोग उनकी प्रतीक्षा कर रहे है जब बच्चो की बाते खत्म हुईं तब शास्त्री जी ने हँसते हुए कहा—

"अच्छा बच्चो, मै तुम्हे तुम्हारे चाचा नेहरू की ओर से आशीर्वाद देता हूँ कि तुम खूब पढो, लिखो, खेलो और खुशहाल बनो।"

वास्तव मे शास्त्री जी बच्चो को खुशहाल देखना चाहते थे। शायद इसी कारण वह ताशकंद-घोषणा मान गये। खुशहाली सहज उपलब्ध नही है, उसके लिए शान्ति का वातावरण तैयार करना पडता है। युद्ध के तो भयकर परिणाम होते है, भूख और बीमारी। शास्त्री जी अक्सर कहा करते थे— "युद्ध मे इतने मनुष्य नही मरते जितने कि भूख से मर जाते है।"

और है भी यही सही। युद्ध मे यदि सबसे ज्यादा नुकसान किसी का होता है तो वे है निर्दोष बच्चे। बच्चे ही युद्ध मे अनाथ होते है और अनाथ बच्चो का जीवन कितना कटु होता है, इसका अनुभव शास्त्री जी को स्वय था। शास्त्री जी स्वय दुखभरी अनुभूतियो के भण्डार थे। उनका बचपन बडा सघर्ष मे बीता था। शायद इसीलिए वे सवेदनशील थे। तभी तो वह विजयी होकर भी शान्ति का मार्ग खोजने दूर देश ताशकद गये, ताकि बच्चे जो इस धरती पर आये है, शान्तिपूर्ण वातावरण मे जी सके। बच्चे चाहे भारत के हो या पाकिस्तान के या किसी और राष्ट्र के उन्हे युद्ध की लपटो से बचाना है।

तिलकराज वर्मा

श्री लालबहादुर शास्त्री का बचपन

प्यारे बच्चो,

तुमने अभी-अभी पिछले दिनो प्रिय प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री को देखा होगा, जो अब हमारे बीच मे नही रहे। लेकिन क्या तुम यह बता सकते हो कि वह इतने महान् कैसे बने तथा उनके प्रारम्भिक जीवन मे उन्हे किन-किन कठिनाइयो का सामना करना पड़ा। यदि नही तो हम तुम्हे उनके बचपन की बाते बताते है।

हमारे प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री जी का जन्म २ अक्तूबर, १६०४ को वाराणसी (उत्तर प्रदेश) के मुगलसराय नगर मे हुआ था। दुर्भाग्य से इनके पिताजी की मृत्यु जब यह डेढ वर्ष के थे, तभी हो गई थी। इनकी माताजी का नाम श्रीमती रामदुलारी देवी है। माताजी बड़ी धार्मिक प्रवृत्ति की है। उन्होने इनको बड़े लाड़-प्यार से पाला। घर मे बड़ी गरीबी थी। हर चीज की बड़ी तंगी थी। फिर भी इनकी माताजी ने इनकी प्रत्येक आवश्यकता को पूरा करने का प्रयास किया। वह इन्हे कभी भी अपनी आखो से ओझल नही होने देती थी। अगर कही खेलते-खेलते जरा इधर-उधर हो जाते तो माताजी विचलित हो जाती। दूर-दूर तक खोज होती, तब वह अपने लाल को पाती।

एक बार की बात है कि गगा-स्नान का पवित्र पर्व था। माताजी नन्हे बहादुर को गोद मे लेकर गंगा-स्नान के लिए गई। मेले मे बड़ी भीड़ थी। स्नान के बाद जब वापस आने लगी तब भीड़ की धक्का-मुक्की मे नन्हा बालक गोद मे से फिसल कर नीचे एक ग्वाले की टोकरी मे जा पडा। ग्वाला उस बालक को लेकर चलता बना। उसने समझा कि यह तो गगा मैया की पवित्र भेट है। और बड़े लाड़-प्यार से वह उस शिशु को पालने लगा। इधर नन्हे बहादुर की बड़ी उत्सुकता से खोज होने लगी। सारा परिवार बालक की चिन्ता मे डूब गया। बड़ी खोज-बीन के बाद आखिर पुलिस ने बालक का पता लगा ही लिया। वह बालक उसी ग्वाले के पास मिला। बड़ी कठिनाई से ग्वाले ने बालक वापस किया।

शास्त्रीजी ठेठ गॉव की धूल भरी गलियो मे खेले-कूदे और बड़े हुए। वह अपने सिर के बाल बचपन से ही छोटे रखते थे। इसी वजह से उन्हे कघे की कभी जरूरत नही पड़ी। यही नही, छात्र-जीवन मे उन्होने चश्मा, बरसाती तथा छाते की कभी जरूरत नही समझी। सर्दी हो या गर्मी, बरसात हो या कड़ी धूप वह बस सादे वस्त्र ही पहनते थे। जब शास्त्री जी बनारस के हरिश्चन्द्र स्कूल मे पढ़ते थे तब स्कूल घर से काफी दूर पड़ता था। वहाँ तक वह अक्सर पैदल चल कर ही पहुँचते थे। घर मे

गरीबी तो थी ही, इसलिए जेब-खर्च के लिए बहुत ही कम पैसे मिलते थे। रास्ते में लम्बी-चौड़ी गंगा नदी पड़ती थी। एक बार जब वे स्कूल से घर वापस आने लगे तब जेब मे पैसे नही थे। घर लौटना जरूरी था। शास्त्री जी मे अपार साहस था। उन्होने धोती की लाग ऊपर चढ़ाई, बस्ता सिर पर रखा और तैर कर नदी पार कर ली।

एक बार ऐसे ही सारे स्कूल मे पिकनिक मनाना निश्चित हुआ। कक्षा के सभी छात्रो ने तो अपने-अपने नाम अध्यापक को दे दिये। जब शास्त्रीजी से पूछा गया तब उन्होने कहा—"मास्टरजी, मेरे पास तो सिर्फ एक पैसा है।" उनके छात्र-जीवन में ऐसे अनेक अवसर आये, जब उन्हे भूखा रहना पडा, क्योकि उन्हे अपना भोजन अक्सर स्वय बनाना पड़ता था। वे कहा करते थे—"कई बार तो मेरा अधिकतर समय भोजन और दाल बनाने मे ही व्यतीत होता था।" लेकिन माँ के बहादुर लाल ने इन कठिनाइयो की तनिक सी परवाह न की और उन्हे हँसते-हँसते सहन किया।

छात्र-जीवन मे शास्त्री जी पढने-लिखने मे बड़े तेज थे। वे सभी विषयो मे ऊँची श्रेणी वाले छात्र गिने जाते थे। प्रत्येक विषय को समझ-समझ कर याद करते थे। यदि कोई विषय कठिन होता तो अध्यापक जी से सहायता मागते। उन्ही दिनों देश में स्वतन्त्रता-आन्दोलन की लहर दौड़ रही थी। महात्मा गाधी का असहयोग आन्दोलन जोरो पर था। उस समय शास्त्री जी की आयु १६ वर्ष की थी। तभी गाधीजी के आह्वान पर वे आन्दोलन मे कूद पड़े। अपनी हाई स्कूल की परीक्षा त्याग दी। कई बार जेल गये। देश-प्रेम के कारण उन्होने अनेक कठिनाइयाँ सही परन्तु लालबहादुरजी की शिक्षा की भूख नही मिटी। जेल मे रहते हुए भी उन्हे ज्ञानार्जन का ध्यान रहता। फिर अवसर मिलते ही काशी विद्यापीठ से उन्होने शास्त्री की परीक्षा उत्तीर्ण की।

उनकी इस कठिन बाल्यावस्था ने उन्हे सकटो से जूझना और आगे बढ़ते जाना ही सिखाया था। यह उनके जीवन का तपस्या-काल था। परिस्थितियाँ चाहे कैसी भी रही हो, घर मे अशान्ति हो अथवा बाहर युद्ध, हर स्थिति मे उनके चेहरे पर आशा की नई मुस्कान चमकती थी। वास्तव मे लालबहादुर जी का प्रारम्भिक जीवन ऐसा सकटपूर्ण जीवन था जो हमे कर्मशील, परिश्रमी तथा दृढ-निश्चयी होने की प्रेरणा देता है।

त्यागी शास्त्री जी

"साड़ियाँ तो बहुत ही बढ़िया हैं, क्या मूल्य है इनका ?"

"जी, यह ८०० रु० की है और यह १ हजार रु० की।"

"ये तो बहुत कीमती है, इनसे कम मूल्य की बताइये।"

"यह देखिए, यह ५०० रु० की है और यह ४०० रु० की।"

"अरे भाई, यह तो बहुत ही कीमती है, मुझ-जैसे गरीब के लिये तो कम मूल्य की बताइये तो मै खरीद सकूँ।"

"वाह सरकार, आप तो हमारे प्रधान मंत्री है, गरीब कैसे ? हम तो आपको ये साड़ियां भेट कर कहे है।"

"नही भाई, मै भेट नहीं लूँगा।"

"क्यो ? आप तो हमारे प्रधान मत्री है, हमे यह अधिकार है हम अपने प्रधान मंत्री को भेट करे।"

"हाँ, मै प्रधान मत्री हूँ, पर इसका यह अर्थ नही कि जो चीज मै खरीद नही सकता वह भेट मे लेकर अपनी पत्नी को पहनाऊँ। यह ठीक है कि मै प्रधान मत्री हूँ, पर हूँ तो गरीब हो। मै तो अपनी हैसियत की साडियाँ खरीदना चाहता हूँ, आप मुझे सस्ते दाम की बताइये।"

रेशमी कारखाने के मालिक की सारी अनुनय-विनय बेकार गई और अन्त मे उसे विवश हो कर सस्ती साड़िया वतलानी पड़ीं, जिनमे से कुछ शास्त्री जी ने अपने परिवार के लिए खरीदी।

आप समझ गये होगे कि उपर्युक्त वार्तालाप अन्य किसी से नही भारत के प्रधान मंत्री श्री लालवहादुर शास्त्री से हो रहा था, जो इस कारखाने को देखने गये थे। साथ मे राज्य के मुख्यमत्री आदि भी थे। एक पत्रकार के नाते मैं भी था।

पत्रकार के रूप मे देश-विदेश के राष्ट्रपतियो, सम्राटो, राज्यपालों, प्रधान मन्त्रियों, नेताओं आदि अनेक गणमान्य व्यक्तियो के साथ जाने का सौभाग्य मिला है, पर उपर्युक्त वार्तालाप मैंने पहली वार ही सुना। किसी ने अपनी मनपसद भेट की वस्तु अस्वीकार की हो, यह मैने पहली वार ही देखा। बेचारा कारखाना-मालिक तो शास्त्री जी की सादगी और सरलता देख कर दग रह गया। वह निराश भी बहुत हुआ कि प्रधान मत्री ने उसको भेट स्वीकार नही की। उसे यदि यह पहले से ही पता होता तो वह बहुमूल्य साडियो के दाम वहुत कम वतलाता, जिससे कुछ वढ़ियाँ साड़ियाँ शास्त्री जी के घर मे पहुँच जाती। उसे रह-रहकर इसी का पश्चात्ताप हो रहा था। पर सच कहूँ, मैं तो मन-ही-मन शास्त्री जी पर मुग्ध हो गया, मुझे महामात्य चाणक्य स्मरण हो आये जो इसी तरह सादगी से रह कर ही भारत की वागडोर उस समय सभाल रहे थे। फिर भी वह युग और था तथा आज का और है। इस नाते इस अर्थ-प्रधान युग मे शास्त्रो जी का त्याग चाणक्य से भी वढा-चढ़ा कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी। अब शास्त्रो जी जैसा त्यागी प्रधान मंत्री कहाँ मिलेगा !

ब्रजेन्द्र गोड़

युगद्रष्टा

न वह देवदूत थे, न वह पैगम्बर थे, न वह भारत-भाग्य-विधाता थे और न ही वह ससार के महान् पुरुष थे। किन्तु आज वह अपने कार्यो से सब कुछ बन गये है। वह सचमुच मे एक इन्सान थे और जब इन्सान अपनी खूबियो, लगन, त्याग और वलिदान तथा दूरदर्शिता के कारण कुछ कर दिखाता है तब वह भगवान से भी अधिक महान बन जाता है।

हमारे परम पूज्य नेता स्व० श्री लालबहादुर शास्त्री ऐसे ही थे, जो बचपन मे नौ-नौ मील पैदल चल कर स्कूल जाते थे। और, अन्त मे भारत के प्रधान मन्त्री की हैसियत मे इस असार ससार से कूच कर गये—एक दूसरे देश की राजधानी ताशकंद मे, जहाँ उन्हे कुछ दिन पहले के शत्रु और एक ही दिन पहले बने मित्र पाकिस्तान के राष्ट्रपति और रूस के प्रधान मन्त्री ने कधा दिया। वह इन्सान नही, वल्कि भारत की आत्मा के प्रतीक थे। गाधी जी का रूप विराट् था, नेहरू जी पश्चिमी और पूर्वी सस्कृति के सगम थे, किन्तु शास्त्री जो गगा के समान थे—निर्मल, पवित्र, परदु खमोचन, शीतल, निर-भिमानी, सौम्य, सरल, मृदुभाषी, दूरदर्शी और निर्भय। एक व्यक्ति मे इतनी विशेपताएँ होना कोई साधारण वात नही।

घर मे वह एक आदर्श पति, ममताभरे पिता, नादान पुत्र और जिम्मेदार गृहस्वामी थे, जो अपने पुत्र और पुत्रियो के वच्चो के साथ खेलते थे। अपने ही छोटे पुत्रो से छोटे बन कर वात करते थे और वड़े पुत्र तथा भारतीय नारियो की प्रतीक, अपनी पत्नी, ललिता देवी से घरेलू समस्याओ पर चर्चा करते थे। वह ९७ वर्षीय अपने चाचा और ८५ वर्षीय अपनी मा का भी पूरा ध्यान रखते थे और पूजा-पाठ तथा देश-विदेश की अनेक समस्याओ को सुलझाने के साथ-साथ अपना भोजन अपने हाथ से वनाने और अपने कपडे हाथ से धोने मे भी कभी सोच-विचार करने का प्रश्न नही आने देते थे।

वे अपने राजनीतिक जीवन के आरम्भ से ही पडित जवाहरलाल नेहरू के दाएँ हाथ रहे। पडित जी का उन पर अपार विश्वास था। और, वे जाते समय देश को एक महान् कर्णधार दे गये। शास्त्री जी ने पडित जी से पूछा था—"मै क्या काम करूँ?"

पडित जी ने वड़े विश्वास के साथ कहा था—"जो मैं करता हूँ।"

पाकिस्तानी सकट के समय शायद पडित जी ई ट का जवाव पत्थर से न देते, किन्तु शास्त्री जी ने कहा—"ताकत का जवाव ताकत से देना ही अहिंसा का मूल मंत्र है।"

अठारह मास मे दुनिया के सामने भारत जिस उच्च स्थान पर पहुँचा है, उसका श्रेय

पं० जवाहरलाल नेहरू को इसलिए है कि उन्होने हो देश को लालवहादुर शास्त्री-जैसा 'वाम अवतार' दिया।

सबसे पहले शास्त्री जी को मैने लखनऊ के संयुक्त प्रान्तीय सचिवालय मे देखा था—तब छोटा था—वे दुवले-पतले थे और वन्द कालर का नीचा कोट, गाधी टोपी और धोती ही पहनते थे वे पार्लियामेटरी सेक्रेटरी के पद से गृहमन्त्री के पद तक पहुँचे थे। बाद मे वे भारत सरकार के रेल मन्त्री, वाणिज्य मन्त्री, गृह-मन्त्री आदि जिम्मेदार पदों पर रहे और अपने विभागो में उन्होने जो-ज चमत्कारपूर्ण कार्य कर दिखाये वे उनके प्रति आस्था और आदर के कारण बने।

प० जवाहरलाल नेहरू के जीवन-काल मे ही यह प्रश्न कि 'पडित जी के वाद कौन' जोर-शो से उठने लगा था। वे इस प्रश्न से क्रोधित होते थे, किन्तु जाते-जाते उन्होने स्पष्ट कर दिया था उनके पूर्ण विश्वास के व्यक्ति शास्त्री जी है।

वाणिज्य-मन्त्री वनने के समय उन्होने फिल्म उद्योग की बड़ी सहायता की थी। विदेशो मुद्र और नये करो के कारण फिल्म-उद्योग सकट मे था, किन्तु उन्होने सहूलियते देकर अपनी उदारता क परिचय दिया था।

मैने उन्हे दिल्ली और वम्वई मे पडित जी के साथ कई बार देखा था। बातचीत कुछ खा नही हुई थी, लेकिन जब वे 'यूथ सोसायटी आव् फिल्म्स' का उद्घाटन करने आये तब गृहमन्त्री और इस सोसायटी का एक परामर्शदाता मै भी था - तब कमाल स्टूडियो मे लखनऊ का हवाला देक बात की। लखनऊ की याद उन्हे नही आई तो कांग्रेस के प्रसिद्ध युवक नेता श्री जगदीश कोदेसिया क जिक्र किया। इससे वह झट पहचान गये और अपने पास की सीट की ओर इशारा करके कहा—"बैठिये, बैठिये।"

पर मै नही बैठा। सीट पर झुक कर ही वात करता रहा। उन्होने एक साथ कई सवाल पू डाले—लखनऊ से कव आये? यही रहते है? क्या काम करते हैं?"

वातचीत के दौरान जब मैने कहा कि सम्वाद लिखता हूँ तब उन्हे आश्चर्य हुआ कि कथा औ सम्वाद दो अलग चीजे कैसे हो सकती है। फिर मैने वताया कि यह तो तकनीक की वात है। को कहानी लिखता है, कोई पटकथा लिखता है तो कोई सम्वाद लिखता है। उन्होने आश्चर्य से कहा था—"अच्छा!"

फिर उन्होने अपने भाषण मे कहा था कि उन्हे फिल्म देखने का शौक नही है। वे कुछ ही हिन्दी फिल्मे देख सके थे और दो-तीन अग्रेजी फिल्मे देखी होगी। उन्होने यह भी स्वीकार किया कि वे यह नहीं जानते कि मीनाकुमारी और देवानन्द कौन है, किन्तु इससे उनका महत्व नही घटता शास्त्री जी को अपनी अनभिज्ञता पर खेद था। उन्होने यह भी कहा कि फिल्मे ससार में प्रचार का सर्वोत्तम तथा सस्ता साधन है, जिसे चरित्र का स्तर उठाने के काम मे लाना चाहिए।

शाम को फिलिमस्तान मे लगे 'पाकीजा' के सैट पर भोज था। मैं भी वहाँ पहुँचा। मुझे देखते ही पहचान कर मुस्कराये। सारा सैट घूम-घूम कर देखा और सवसे वात की। वयोवृद्ध कैमरा-मैंन जोजफ विरशिग ने कहा—"मै आपसे इलाहावाद मे मिला था"।" पुरानी वात थी। शास्त्री जी ने हाथ मिलाते हुए कहा था—"अच्छा! मुझे याद नही। लेकिन खुशी की वात है।"

खाना भी उन्होने पूछ-पूछ कर लिया। वह श्रीवास्तव कायस्थ थे, लेकिन मैं कहता हूँ कि

मनुष्य जन्म से नही, कर्म से कुछ बनता है। इसलिए शास्त्री जी से बडा तो कोई ब्राह्मण भी न होगा। तन शुद्ध, मन शुद्ध, विचार शुद्ध। भगवान् मे पूर्ण आस्था। शाकाहारी। और क्या होता है ब्राह्मण मे?"

फिर जब कामराज-योजना को दिल्ली के सप्रू—हाउस मे विचार-विनिमय के लिए प्रस्तुत किया गया तब मुझे बाहरी आदमी को भी किसी तरह इंदिरा जी के पास वाली सीट पर बैठने का अवसर मिला। सभा समाप्त होने पर मैने शास्त्री जी को नेताओ तथा युवक कांग्रेस के कार्यकर्ताओ से घिरे देखा। युवक कांग्रेस वाले चन्दा माँग रहे थे। शास्त्री जी ने एक रुपया डिब्बे मे डाल दिया और हँस कर बोले—"भाई, मेरे पास ज्यादा नही है।"

इतना कह कर वे बराबर वाले अपने कमरे मे चले गये। उस कमरे मे हर नेता अपनी उलझने उन्हे बता रहा था। मुझे कोदेसिया जी अन्दर ले गये। शास्त्री जी ने कहा—"बैठिये।" मै बैठ गया। चाय-बिस्कुट की भी प्राप्ति हुई और नेताओ की बाते भी सुनी। मै वहाँ लगभग आधा घण्टा रहा। फिर उन्हे दिल्ली के कनाट प्लेस मे भाषण करते सुना, बम्बई होकर बगलौर-अधिवेशन मे जाते देखा और फिर भारत-पाकिस्तान के झगडे के बाद बम्बई मे बोलते सुना। वह एक ऐतिहासिक घटना थी।

कोदेसिया जी भी बम्बई आये थे। मैने कहा—"अब की बार शास्त्री जी से घर पर मिलवा दीजिये" "क्यो नही।" उन्होने कहा था। लेकिन शान्ति के महान् जवान को जीवन लीला विदेश मे, शान्ति के लिए लडते हुए समाप्त हो गई—एक अद्भुत शक्तिशाली शांतिरक्षक, स्वप्नद्रष्टा, भारत का प्रतिनिधि नागरिक सदा के लिए चला गया। किन्तु शास्त्री जी का नाम गांधी, जवाहरलाल और कैनेडी के साथ ही श्रद्धापूर्वक याद किया जायगा—इसमे कोई सदेह नही।

•

आत्मनिर्भरता का मतलब यह है कि हमारे पास जो कुछ है, उसका हम अधिक-से-अधिक अच्छा इस्तेमाल करे और जो नही है, उसके बिना काम चलाने का हौसला रखे।

—लालबहादुर शास्त्री

गोपीनाथ ग्रमन

शास्त्री जी की अनूठी फब्तियाँ

श्री लालबहादुर शास्त्री मे जहाँ ग्रौर बहुत से गुण थे, वहाँ उनमे हास्य-विनोद ग्रौर व्यग्य का भी बहुत मद्दा था। बहुत-सी फब्तियाँ तो वे ग्रपने ऊपर ग्राप कह लेते थे।

ग्राम चुनाव का समय था ग्रौर प० जवाहरलाल नेहरू ग्रपना तूफानी दौरा कर रहे थे। उत्तर प्रदेश के दौरे मे शास्त्री जी प० जवाहरलाल नेहरू के साथ थे। मिर्जापुर के जलसे मे भीड बहुत थी। लाउड-स्पीकर था नही, पडित जी की ग्रावाज धीमी थी, जनता तक न पहुँच सकी, तो लोगों मे गड़बड़ी मच गई। पहले तो पडित जी, जैसी कि उनको ग्रादत थी, बीच मे कूदे, कुछ लोगो को शान्त किया ग्रौर फिर बोलने लगे। फिर भी ग्रावाज न पहुँची, तो उन्होने जल्दा ही ग्रपना भाषण समाप्त कर दिया ग्रौर कार्यकर्त्ताग्रो से ग्रपनी ग्रप्रसन्नता प्रकट की। फिर कहने लगे—'ग्रच्छा तो ग्रब मै जाता हूँ।' कार्यकर्त्ताग्रो ने उन्हे हाथ जोड़ लिये। शास्त्री जी भी उनके साथ मोटर मे बैठ गये। पडित जी कहने लगे कि इन लोगो ने तो चाय के लिए भी नही पूछा। शास्त्री जी ने कहा कि चाय तो तैयार थी, परन्तु ग्रापको रुष्ठ देख कर इन लोगो ने सोचा कि जितनी जल्दी चले जाँय उतना ही ग्रच्छा। पंडित जी ने कहा – ये लोग कुछ बेवकूफ मालूम होते है। शास्त्री जी ने मुस्कराते हुए जवाब दिया—'जी हाँ, यहाँ मेरी सुसराल है।' बात यही खत्म नही हुई। जब स्टेशन पर पहुँचे, तब पडित जी को भूख लगी थी। जेब मे पैसे न थे। कार्यकर्त्ता मारे र के साथ न ग्राये थे। शास्त्री जी की जेब मे दस-बारह ग्राने पैसे थे, जिससे दोनो ने एक-दो टोस्ट खाए ग्रौर एक-एक प्याली चाय की पी।

शास्त्री जी उद्योग-धधो के केन्द्रीय मंत्री थे। मेरे मित्र डा० युद्धवीरसिह ने दिल्ली पब्लिक लायब्रेरी मे नई नाप-तौल के उद्घाटन का एक समारोह किया ग्रौर मुझे शास्त्री जी के बुलाने के लिए भेजा। शास्त्री जी ग्राए ग्रौर जहा उन्होने नए सिक्को ग्रौर नई नापतौल की उपयोगिता के बारे मे ग्रपने विचार रखे वही यह भी कहा कि ग्रभी नया-नया मामला है। पुराने ग्रौर नए सिक्को को मिलाकर मै गिन तो नही पाता, परन्तु ये सिक्के मुझे पसन्द है। खास तौर से नया पैसा मुझे बहुत पसन्द है, क्योकि सिक्को मे उसका कद वैसा ही है जैसे मनुष्यो मे मेरा।

ग्रपने छोटे कद पर फब्तियाँ

शास्त्री जी ग्रक्सर ग्रपने छोटे कद पर फब्तियाँ कसा करते थे। सन् १९५८ की बात है कि वे कानपुर के तिलक-हाल मे बोलने ग्राये। जब लाउड-स्पीकर उनके सामने किया गया तो वे मुझसे

कहने लगे कि आज इत्तफाक से यह लाउड-स्पीकर मेरे लिए नीचा नहीं करना पडा, क्य किसोभा के प्रधान का और मेरा कद बराबर ही है। ऐसा बहुत कम होता है।

शास्त्री जी जब प्रधान मन्त्री हुए तब उन्होने तालकटोरा गार्डन में भारतीय विद्यार्थियो के एक समारोह मे बोलते हुए कहा कि मैं तो धोती वाला आदमी हूँ। धोती की ही बात करूँगा। आप लोग अपनी छुट्टियो मे गाव मे जाकर गाव वालो ही की तरह रह कर उनमे प्रचार करे, कुछ सीखे और कुछ उन्हे सिखाये। शास्त्री जी ने कहा कि मैने धोती का जिक्र किया है, तो एक घटना और सुन लीजिये। पंडित जवाहरलाल नेहरू जब अपने जीवन मे अन्तिम बार इगलैड जाने वाले थे, तब उन्होने मुझसे कहा कि तुम भी चलो। मैने कहा कि मै तो कभी देश के बाहर गया नही। अग्रेजी तौर-तरीके जानता नही। आप ही जाइये। उन्होने कहा —'नही, तुम्हे भी चलना होगा। मगर मेरे साथ धोती पहन कर न चलना। पतलून नही तो पायजामा तो सिलवा ही लो।' मैने पंडित जी से कहा कि आपकी नकल करते हुए मैंने एक बार गलती से चूडीदार पाजामा सिलवा लिया था। पहनने को तो मैने समय लगा कर पहन लिया, परन्तु उतारते समय मैं उसमे फॅस गया और दूसरो को निकालना पडा।

श्रीमन्नारायण जब राजदूत होकर नेपाल जा रहे थे, तब उनकी विदाई के लिए कांस्टीट्यूशन क्लब मे एक समारोह हुआ जिसमे शास्त्री जी भी सम्मिलित हुए। उन्होने अपने भाषण मे कहा कि श्रीमन्नारायण देखने मे तो बहुत भोले-भाले लगते है, परन्तु आल इण्डिया काग्रेस कमेटी के महामंत्री रह चुके है। इसलिए सब बाते और सब तिकड़म समझते है और इनकी धर्मपत्नी मदालसा जी इनसे भी अधिक चतुर है। एक राजदूत के लिए यह आवश्यक है कि उसकी पत्नी बहुत चतुर हो। इसलिए मेरा ख्याल है कि मैं कभी राजदूत नही बन सकता।

कामराज प्लान मे जो मन्त्री अपना पद त्याग कर साधारण सदस्य रह गये उनको बधाई देने के लिए लोकसभा और राज्यसभा के सदस्यो की ओर से पार्लियामेन्ट हाउस मे एक समारोह हुआ। उसके समाप्त होने पर बाहर के लान मे एक और समारोह हुआ जिसमे शास्त्री जी ने मुझे बताया कि अभी पंडित जवाहरलाल नेहरू के सामने श्री महावीर त्यागी को एक शेर सुना कर आया हूँ जो पंडित जी ने भी बहुत पसन्द किया। शेर यह था—

वे जिनकी दोस्तो मे दोस्तो से
दुश्मनी कर ली,
उन्ही को दुश्मनी हम से,
जमाना इसको कहते है।

इसके कुछ दिन बाद एल० आई० सी० ग्राउण्ड मे एक सार्वजनिक सभा हुई, जिसमे इन उतरे हुए मन्त्रियो को बधाई दी गई थी और लोगो ने उनके त्याग की सराहना की। एक मन्त्री ने कहा—'इसमे सराहना की क्या बात है। हम लोगो ने जैसे अन्दर काम किया वैसे ही बाहर करेगे, केवल क्षेत्र बदल गया है।' इसके बाद शास्त्री जी बोलने को खड़े हुए और उन्होने कहा कि भाई और लोग कुछ भी कहे, लेकिन मुझ पर तो मन्त्री रहते हुए इतनी लान-तान हो चुकी है कि अब जो अपनी सराहना सुन रहा हूँ तो बड़ा मजा आ रहा है।

९ जून, १९६४ को जब मैं शास्त्री जी को उनके नये पद पर बधाई देने गया, तब कोठी मे बहुत भीड़ थी। मैने शास्त्री जी से कहा कि अभी पंडितजी के निधन का दुःख इतना ताजा है कि खुशी

को तो कोई अवसर नहीं। अलबत्ता भगवान् से प्रार्थना है कि आपको यह बोझ संभालने की शक्ति दे। शास्त्री जी ने कहा कि भगवान् वह शक्ति सीधे नही भेजेगा, वह आप ही लोगों में से आयेगी। साथ ही यह भी कहा कि अमन साहब, आप देख रहे है ? कितना भीड़-भड़ाका है ! आप कवि है, कहीं ये मज-मून न बाँध दीजियेगा कि मैं इसके घर गया और इसने बैठने को भ' न कहा।

'तो' क्यों लगाया ?

सन् १९५४ की बात है कि शास्त्री जी सपरिवार मेरे यहाँ भोजन पर आये हुए थे। कहने लगे भोजन तो अच्छा बना है। मैने कहा—"आपने 'तो' क्यों लगाया ?" कहने लगे—'इसलिए कि शायद मै ऐसा न खिला सकूँ।"

शास्त्री जी लाल किले में उर्दू मुशायरे के प्रधान थे। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि ऐसे समारोह में मंत्रियो को प्रधान या उद्घाटनकर्त्ता नही बनना चाहिए, यह साहित्यज्ञो का हिस्सा है। मैने जवाब दिया कि आप तो आज सबेरे ही फिर से मत्री बने और मे तो दो महीने पहले आपकी स्वीकृति ले चुका था। लोग हँसने लगे, तो शास्त्री जी ने कहा—'लीजिये, मैं तो पकड़ा गया !'

लार्ड माउण्टबेटन ने शास्त्री जी के प्रधान मंत्री बनने के बाद अपने देश इंगलिस्तान मे आने का निमंत्रण दिया, तो शास्त्री जी ने कहा कि आपके महान् देश में मुझ-जैसा छोटा-सा आदमी क्या जचेगा। लार्ड माउण्टबेटन ने यह उत्तर दिया—"हम लोगो को इंचो से नहीं चरित्र से नापते है।"

शास्त्री जी जब गृह-मत्री थे तब एक बार उनकी छत का सीमेंट और चूना बहुत जोर से कमरे मे गिरा। इसी के कुछ दिनो बाद मैं उनके यहां गया, तो मैंने इस दुर्घटना का हाल पूछा। शास्त्री जी ने जवाब दिया कि निशाना ठीक नही बैठा, मैं बच गया।

शास्त्री जी जब ताशकन्द जाने लगे तब पहली जनवरी को उन्हे रामलीला ग्राउण्ड में विदाई दी गई और ताशकन्द वालो को भेंट करने के लिए उन्हे एक हुक्का दिया गया और एक शतरज का सेट। शास्त्री जी ने अपने भाषण के बाद कहा कि जिसके लिए ये उपहार भेज रहे है बिलकुल ठीक है, क्योकि ताशकन्द वाले शतरज भी अच्छी खेलते है और हुक्का पीने के भी आदी है। परन्तु जिसके हाथों आप भेज रहे है वह दोनो में अयोग्य है। न मैं शतरज खेलना जानता हूँ और न हुक्का पीना।

शास्त्री जी जब अलीपुर रोड पर मेरे यहाँ आये, तब उस समय सदर बाजार के डिप्टी सुपरि-न्टेन्डेट आफ पुलिस अब्दुल रसीद खा साहब भी उपस्थित थे। उन्होंने शास्त्री जी को सलाम किया और मैने परिचय दिया, तो शास्त्री जी ने मुस्कराते हुए कहा—'इन्हे क्यो न जानूँगा, इन्ही ने तो मुझे इला-हाबाद मे गिरफ्तार किया था !'

सन् १९५४ की बात है कि स्व० शास्त्री जी के साथ उनका सुपुत्र हरि (हरिकृष्ण) भी था। उसने कहा कि मैं अपने विद्यालय की पार्लियामेन्ट का प्राइम मिनिस्टर हो गया हूँ। शास्त्री जी ने मुस-कराते हुए कहा कि देखिये, मैं तो मिनिस्टर ही रह गया और यह प्राइम मिनिस्टर हो गया। उस समय न वे जानते थे और न मैं कि वह एक दिन भारत के प्रधानमंत्री होकर तमाम संसार में इस देश का नाम ऊँचा करेंगे।

गोपालकृष्ण सर्राफ

ललिता जी का मायका शास्त्री जी का ननिहाल

लाल बहादुर जी का जन्म मुगलसराय मे हुआ था। दो साल से कम की अवस्था मे ही उनके पिता की मृत्यु हो गई। उस अनाथ बालक का भरण-पोषण उनके मामा और नाना ने किया। उनका ननिहाल मिर्जापुर मे है और उनके बचपन के दस वर्ष मिर्जापुर मे ही बीते। उसके बाद उनकी मौसी उन्हे वाराणसी ले आयी, और फिर रामनगर मे उनकी पढाई हुई। बचपन मे इनको लोग ननकू कहते थे। उस समय कोई नही जानता था कि एक दिन यही लड़का देश का भाग्य-विधाता बन जायेगा।

बाद मे इनका विवाह भी मिर्जापुर मे हुआ। तभी मिर्जापुर वाले कहते है कि यह तो उनकी खानदानी ससुराल थी। इसलिए ही उनका सबसे अधिक प्रेम मिर्जापुर से था और उनकी अस्थियाँ भी २५ जनवरी को मिर्जापुर पहुँचायी गयी। मिर्जापुर मे उनकी ससुराल के मकान को मैने अन्दर से देखा है। जिस कमरे मे लालबहादुरजी ने १७ दिसम्बर को भोजन किया था, उन मे न तो कोई अलमारी और न कोई फर्नीचर ही था। केवल एक मूज की रस्सी की खटिया, मामूली-सी मेज और कुर्सियाँ तथा एक तस्वीर थी, जिसमे नेहरूजी लाल बहादुर के कन्धे पर हाथ रखकर खडे है। बगल वाले कमरे की जमीन कच्ची मिट्टी की है। पूरे मकान मे कही भी नया फर्नीचर नही है। उनके छोटे साले ननकू लाल अभी भी किसान है।

१७ दिसम्बर, ६५ को, प्रधान मन्त्री होने के बाद, शास्त्री जी पहली बार और अन्तिम बार मिर्जापुर आये। उस दिन वे अपने मामा लल्लन बाबू के घर भी गये और अपनी ससुराल भी। मामा के यहाँ उन्होने नाश्ता किया और ससुराल मे भोजन। ननिहाल मे बहुत वर्षो के बाद दीवारो पर चूने से सफेदी की गई, इसलिए कि प्रधान मन्त्री आ रहे थे। कहा जाता है कि वे जब अपने मामा के यहाँ गये तो सरकारी अफसरशाही को नही ले गये। यह उनकी सरलता का प्रमाण है। मामा के घर से सटी हुई एक तरफ दर्जी की दूकान और दूसरी तरफ एक गरीब का झोपडा अब भी वैसे ही है जैसे उनके बचपन मे था।

मिर्जापुर मे एक व्यवसायी से बात हुई। उन्होने बताया कि एक बार वे शास्त्रीजी के एक सम्बन्धी को लेकर दिल्ली गये थे, कोई साधारण-सा काम कराने। लाल बहादुरजी ने साफ मना कर दिया। उन्होने कहा कि चाहे आप मेरे रिश्तेदार ही क्यो न हो, किन्तु मै सिफारिश पर कोई काम नही करता। वे सज्जन निराश होकर लौट आये।

ईमानदारी और सच्चाई का एक और ज्वलन्त उदाहरण यह है कि जुलाई, '१९६५ में सेण्ट स्टीफन कालेज, दिल्ली मे भर्त्ती के लिए दो घण्टे से क्यू में खड़े लड़के से जब प्रिन्सिपल ने उसके पिता का नाम पूछा तो उसने कहा, 'लालबहादुर शास्त्री ।' प्रिन्सिपल चौक गया, प्रधान मन्त्री का लड़का और दो घण्टे से क्यू मे, किसो ने उसकी सिफारिश नही की ।

लालबहादुरजी गरीबी में पले । रामनगर से बनारस जाते समय नाव का भाड़ा चुकाने के लिए पैसे न होने के कारण तैर कर गगा पार करने वाले विद्यार्थी लालबहादुर के पास प्रधान मन्त्री के पद पर रह कर भी दो जोड़े जूते और तीन पुराने कोटो के अलावा कुछ नही था । उनके सोने के कमरे मे सदा रस्सी की खटिया ही रही । वे मरे तो कुछ कर्ज छोड़ कर मरे । अपना मकान नहीं, एक बीघा जमीन नही, कोई बैंक बैलेन्स नहीं । कोई प्रधान मन्त्री पद पर रह कर भी इतना धन से निर्लिप्त रहे यह सचमुच गौरव की बात है । जो लोग अपने खानदान या समृद्धि पर गर्व करते है वे इससे एक सबक ले सकते है ।

श्री लालबहादुर शास्त्री भारतीय लोकतंत्र की दृढता के ज्वलंत उदाहरण थे । वे किसी भी नाजायज या अन्याय-पूर्ण बात को सहन नही करते थे और नही वे लोकतंत्र को इस प्रकार चलने देने को तैयार थे जिससे लोगो को गरीबी का जीवन बिताना पड़े ।

पाकिस्तान के साथ सशस्त्र संघर्ष मे उन्होने देश को प्रेरणादायी नेतृत्व प्रदान दिया । जब लडाई बन्द हो गई तब लालबहादुर शास्त्री ने अपनी पूरी शक्ति पाकिस्तान के साथ अच्छे पड़ौसी के सम्बन्ध स्थापित करने मे लगा दी ।

—स० राधाकृष्णन

जुगलकिशोर चतुर्वेदी

समझौतावादी व्यक्तित्व

एक अत्यन्त उत्साही तथा कर्मठ कांग्रेस कार्यकर्त्ता के रूप मे तो मै स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री के सम्बन्ध मे बहुत अर्से पहले से ही जान चुका था, परन्तु आप अपने कर्त्तव्य और दायित्व के प्रति कितने सजग और सावधान है, उसका ज्ञान मुझे सर्वप्रथम तब हुआ, जब आप स्वर्गीय प० गोविन्दवल्लभ पन्त के मुख्य मन्त्रित्व-काल में उत्तर प्रदेश मे पुलिस-मन्त्री बने थे। उन दिनो मथुरा के स्कूल व कालेज के छात्रो मे एक आदोलन उठ खड़ा हुआ था, जिसने उत्तरोत्तर बडा ही उग्र रूप धारण कर लिया था, यहाँ तक कि उसको शात करने मे स्थानीय प्रशासनिक तथा शिक्षा विभाग के सभी अधिकारीगण पूर्णत असफल हो चुके थे। अन्त मे पुलिस-मन्त्री की हैसियत मे श्री शास्त्री जी को स्वय लखनऊ से मथुरा आना पड़ा था।

यहाँ अधिकारियो से कुछ बातचीत करने के अनन्तर आपने छात्रों के प्रतिनिधियो से भी मिलने की इच्छा प्रकट की। पुलिस तथा प्रशासनिक अधिकारियो ने सुरक्षा तथा प्रतिष्ठा की दृष्टि से आपको छात्रो से सीधा मिलना समुचित नही समझा, परन्तु तब भी आप अपने निश्चय पर डटे रहे और छात्रो के प्रतिनिधियो से भेंट करना स्वीकार कर ही लिया। आपने उनकी बाते बडे ध्यान और सहानुभूतिपूर्वक सुनी एव अत मे न मालूम उनसे क्या कह-सुन कर उनको आदोलन समाप्त करने के लिए राजी कर लिया।

यह घटना यद्यपि अपने आपमे एक अत्यन्त साधारण सी है, परन्तु इससे शास्त्रीजी के शात और समझौतावादी स्वभाव तथा उनके व्यक्तित्व के अद्भुत प्रभाव का पूरा-पूरा परिचय मिलता है। कालान्तर मे जब आप केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल मे सम्मिलित हुए, तब तो आपको कई बार कांग्रेस सगठन सम्बन्धी विविध विषम विवादो को निपटाने का दुष्कर कार्य सौंपा जाता रहा और यह कोई सयोग की बात अथवा आपके कुछ विशेष गुणो का ही परिणाम कहा जा सकता है कि जहाँ-जहाँ भी आप इस प्रकार के झगड़े-टण्टो को निपटाने गये, वही आपको सफलता मिली। चाहे वह केरल का मामला रहा हो या मैसूर का अथवा अन्य किसी भी राज्य का।

उग्र विवाद

राजस्थान प्रदेश कांग्रेस कमेटी मे भी इन दिनो एक ऐसा ही उग्र विवाद उठ खड़ा हुआ था, जबकि उक्त सगठन के बहुसख्यक दल द्वारा समर्थित मा० आदित्येन्द्रजी के स्थान पर अपेक्षाकृत

अल्पसंख्यक गुट स्वर्गीय श्री जयनारायणजी व्यास को अध्यक्ष बनाना चाहता था। यह मामला कई बार अ० भा० कांग्रेस के उच्च अधिकारियो के निर्णयार्थ पहुँचाया गया था, परन्तु वे इस जटिल समस्या को सुलझाने मे सदैव असफल ही रहे, अत मे यह मामला भी आप ही के सुपुर्द किया गया। उस समय संभवतः आप रेल मन्त्री थे।

इस सिलसिले मे यहाँ के दोनों गुटों के प्रतिनिधियों को, जिनमें इन पक्तियो का लेखक भी एक था। आप से कई-कई बार मिल कर अपने पक्ष का समर्थन तथा प्रतिपक्ष का विरोध करने का अवसर मिला था उस समय यह अनुभव हुआ कि ऊपर से सीधे-सादे अथवा भोले-भाले से दीखने वाले शास्त्रीजी दूसरो द्वारा अपनी वात को मनवाने मे कितने चतुर और अडिग है। यद्यपि हम वहुसख्यक दल के प्रतिनिधियो को अपने सवैधानिक औचित्य तथा सबलता मे इतना अधिक विश्वास था कि हम उसी आधार पर आपसे अपनी वात को मनवाने मे अवश्य ही सफल हो जायेगे। परन्तु आपको युक्तियों और वाक्चातुरी के सामने हम मे से बड़े-बड़े कानूनदा और विधान-विशारदों को निरूत्तर होकर आपका ही निर्णय स्वीकार करना पड़ा।

उक्त निर्णय के अनुसार मास्टर आदित्येन्द्र जी का त्यागपत्र स्वीकार किया जाना तथाव्यास जी को आपके स्थान पर प्रदेश कांग्रेसाध्यक्ष के पद के लिए निर्वाचित करना था। क्योकि उस समय मै उक्त प्रदेश कमेटी का प्रधान मन्त्री था, अतः उस नुनाव को सम्पन्न कराने के लिए मुझे हो निर्वाचन अधिकारी बनाया गया। उस हैसियत मे मैने पुन यही अनुभव किया कि शास्त्रो जी अपने निर्णय को कार्यान्वित कराने के लिए कितने व्यग्र और आतुर रहते है। आपकी यह हार्दिक इच्छा थी कि व्यास जी का निर्वाचन सर्वथा निर्विरोध हो, अत. नामाकन-पत्र प्राप्त करने से लेकर तन्निमित्त निश्चित अन्तिम तिथि और समय के पूरा होने तक आप प्रायः नित्य प्रति ही टेलीफोन अथवा पत्र द्वारा निरन्तर यह पूछते ही रहे कि कोई दूसरा नामाकन-पत्र तो नही भरा गया ? और यदि कही, ऐसा नामांकन पत्र आवे भी तो समझा-बुझा कर उसे वापिस कराने के लिए हो आप आग्रह करते रहें।

अन्त में यही हुआ कि श्री व्यास जी के नाम के अतिरिक्त एक नाम उक्त अध्यक्षता को उम्मीदवारी के लिए एक व्यक्ति का और आया, जिसको आपकी इच्छा अनुसार समझा-बुझा कर बिठा दिया और जब मैने यह सूचना आपको फोन पर दी तो बड़े प्रसन्न होकर आपने मुझको बधाई दी और धन्यवाद भी तथा उक्त परिणाम की सूचना आपको तार तथा पत्र द्वारा शीघ्र ही भेजने के लिए अनुरोध किया। अगले दिन इसी आशय का एक पत्र भी आपकी ओर से मुझे और मिला।

कांग्रेस उम्मीदवारों का चयन

इसके अनन्तर आपके निकट सम्पर्क मे आने का एक दूसरा अवसर तब मिला, जब सन् १९५७ के आम चुनावो के सिलसिले मे कांग्रेस उम्मीदवारो को चयन करके उनको टिकट देने का कार्य विशेषतः आप ही को सौपा गया था। उस समय मैने भी भरतपुर जिले के अन्तर्गत अपने लिए एक विशेष अनुकूल निर्वाचन क्षेत्र से खडे होने के लिए आवेदन पत्र भिजवाया था, परन्तु एक दू
प्रभावशाली व्यक्ति ने इसका विरोध करके मुझे एक अन्य क्षेत्र से खड़ा करने के लिए आपको
कर लिया तथा आपने तदनुसार निर्णय भी दे दिया। उसको अपनी इच्छा के विरुद्ध ।

उससे असंतुष्ट होकर मै दिल्ली से जयपुर वापिस आ गया। साथ ही यहाँ से अपनी अस्वीकृति की सूचना भी आपको भेज दी, परन्तु फिर भी आप अपने निर्णय को मनवाने के निश्चय पर आरूढ रहे। अत आपने जयपुर फोन करके मुझे इन शब्दो मे अपने आदेश का पालन करने के लिए प्रेरित किया -"चतुर्वेदीजी, आप काग्रेस के पुराने कार्यकर्ता रहे है, आपको यह निर्णय एक अनुशासित सिपाही की भाँति मान लेना चाहिए केवल आपने ही नही, तत्कालीन काग्रेस अध्यक्ष श्री ढेबर भाई ने मुझे लगभग इसी आशय का परामर्श उसी समय फोन पर दिया। इन दो महारथियो के सयुक्त आग्रह को टालना मेरे लिए असम्भव हो गया, अतः अनिच्छापूर्वक ही सही, मै उन्ही के निर्देशानुसार निश्चित निर्वाचन क्षेत्र से चुनाव लडा और वहाँ से अत्यधिक मतो से विजयी हुआ।

तदुपरान्त सन् ६२ के आम चुनावो से पूर्व उसी प्रकार का विकार फिर उत्पन्न हुआ, जबकि मुझे तत्कालीन निर्वाचन क्षेत्र से हटा कर वहाँ एक अन्य प्रत्याशी को खडा करने को सिफारिश मान कर आपने उसको विश्वास भी दे दिया था। इसका पता पडने पर मैने पत्र द्वारा अपना विरोध प्रकट किया। आगे इसी प्रसग को लेकर मेरा आपके साथ लम्बा पत्रव्यवहार चला और अन्त मे जब मुझे अपने प्रति न्याय किये जाने की आशा नही रही तो मैने आप और काग्रेसाध्यक्ष को एक लम्बा पत्र लिख कर काग्रेस के सभी पदो से ही नही उसका साधारण सदस्यता तक से त्यागपत्र दे दिया। लगभग ऐसे ही कारणो से प्रेरित होकर भरतपुर जिले और सैकड़ो ही पुराने काग्रेस जनो ने उक्त सगठन से सदैव के लिए सम्बन्ध विच्छेद कर लिया।

इस प्रकार यद्यपि उस समय से आपके साथ राजनीतिक मतभेद उत्पन्न हो गया था, परन्तु हमारे व्यक्तिगत सम्बन्धो में कोई अन्तर नही आया तथा आपका भी प्रेम पूर्ववत् बना रहा, जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण मुझे विशेषतः तब मिला जब आप विगत दिसम्बर सन् ६३ के आरम्भ में आयोजित अ० भा० का० कमेटी की बैठक मे सम्मिलित होने जयपुर पधारे थे। उन दिनो आप कामराज योजना के अन्तर्गत केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल से पृथक् होकर विशेष रूप से कांग्रेस सगठन का ही कार्य कर रहे थे।

जयपुर–प्रवासकाल

जयपुर-प्रवासकाल में जब आप राजस्थान युवक कांग्रेस की बैठक में सम्मिलित होने गये तो वहाँ आपको राज्य के मत्री ने अपनी कार से पहुँचा तो दिया, परन्तु फिर वे कही दूसरे स्थान पर चले गय, जिससे लौटते समय उनको कोई कार उपलब्ध नही हो सकी, उस समय मेरी सुपुत्री आयुष्मती इन्दिरा भी वहाँ से लौट रही थी, अतः उसने आपको अपनी कार मे बैठा कर आपके गन्तव्य स्थान पर पहुँचाने का अनुरोध किया। मार्ग मे परिचय होने पर जब आपको पता पड़ा कि मेरी पुत्री है तो आपने उससे बडे प्रेमपूर्वक मेरे सम्बन्ध मे पूछा--आजकल चतुर्वेदी जी कहाँ है ? बहुत दिनो से उनसे मिलना नही हुआ। वे अच्छे तो है ? इसी प्रकार आपके प्रधान मत्री बनने पर जब मैने आपको बधाई का पत्र भेजा तो आपने उसका उत्तर बड़े स्नेहसूचक शब्दो मे ही दिया था। उसके उपरान्त गत वर्ष जब आप कान्स्टीट्यूशन क्लब दिल्ली मे आयोजित अ० भा० राज० भाषा सम्मेलन के अवसर पर वहाँ पधारे तो मैने आपको अपने द्वारा सम्पादित एक स्मारिका भेट की। मुस्कराते हुए आपने

वा० एस० वेंकटरमण

लालबहादुर जी का यह सर्वथा अनजाना पहलू

किसी के व्यक्तिगत दुख को व्यक्त करना आजकल के आधुनिक युग मे असभ्यता माना जा सकता है; लेकिन इस देश को जो अपार हानि पहुँची है, उसने मेरे हृदय मे भी एक भारी शून्य को भर दिया है, जिसे व्यक्त किये विना नही रहा जाता।

वैर के वीच प्रेम वरतने वाले शान्तिप्रिय शास्त्री जी इस देश के प्रधान मन्त्री क्यो न रहे हो, लेकिन वे मेरे लिए सर्वस्व थे। गत नौ वर्ष की अवधि मे उनका केवल निजी सहायक ही नही, बल्कि यो कहिये कि उनके परिवार का एक सदस्य भी था। मेरे प्रति वे पितृसमान प्रेम और स्नेहभाव बरतते थे। इतना ही नही, श्रीमती शास्त्री जी के लिए मै पुत्र के समान था। मै इस स्नेह-सम्बन्ध का बयान किस तरह करूँ?

कहाँ मद्रास के तजौर जिले मे स्थित विष्णमपेट्टे और कहाँ जनपथ मे स्थित प्रधान मन्त्रीजी की कोठी। कितनी अजीव सी वात है, शास्त्री जी का स्वर्गवास हुए कई महीने वीत गये, पर उसका आघात अभी तक दिल मे ताजा है। कभी-कभी यह भी महसूस होने लगता है कि यदि जीवन मे उतने महान् व्यक्ति की सेवा करने का अवसर न प्राप्त हुआ होता, तो शायद दिल को भी इतनी बड़ी चोट सहन न करनी पडती।

मैट्रिक पास करने के वाद सोलह साल की उम्र मे मै नौकरी की खोज मे दिल्ली आया था। मेरे कुछ रिश्तेदार दिल्ली मे रहते थे, जिनके सहारे कुछ दिन यहाँ-वहाँ काम करता रहा।

काग्रेस के कार्यालय मे नौकरी खाली रहने की खवर पाकर मैंने अर्जी दी और मुझे नौकरी भी मिल गई। शास्त्री जी उन दिनो रेलवे मन्त्री थे और कभी-कभी आया करते थे। वाद मे अरियालूर रेल-दुर्घटना के सिलसिले मे उन्होने इस्तीफा दे दिया था, वह भी आपको याद होगा।

अपने से पहले दूसरे की चिन्ता : एक चुनाव प्रसंग

सन् १९५७ की वात है, जवकि आम चुनाव के सिलसिले मे ससदीय दल के सचिव श्री अमरनाथ जी अग्रवाल के साथ मैंने इलाहावाद जाकर चुनाव कार्य मे हाथ वटाया था। इलाहावाद शहर के चुनाव-क्षेत्र मे श्री शास्त्री जी और साथ वाले फूलपुर चुनाव क्षेत्र मे श्री नेहरू जी उम्मीदवार थे। दोनों चुनाव-क्षेत्रो का काम श्री शास्त्री जी ही सँभालते थे।

कई गांवों में घूम-फिर कर शास्त्री जी जब एक रात करीब एक बजे पार्टी के चुनाव कार्यालय लौटे, तब पहले-पहल उनकी दृष्टि मुझ पर पड़ी। इसी समय मेरा उनसे परिचय कराया गया। यह मेरे लिए एक अभूतपूर्व घटना थी। इसके पश्चात् शास्त्री जी के साथ कई जगह जाने के सुअवसर प्राप्त हुए। तब तक उनके साथ घनिष्ठ रूप से मेरा परिचय हो गया था। एक दिन घर लौटने में काफी देर हो गई थी। सर्दी भी काफी तेज थी। मुझे देख कर शास्त्री जी बोल उठे, "वेंकटरमण जी, यह मद्रास नही है। यहाँ पर बिना स्वेटर पहने रहना खतरे से खाली नही है। लीजिये, मेरा वेस्टकोट पहन लीजिये।" कहते-कहते उन्होने फौरन अपना वेस्टकोट उतार कर रख दिया। मै बहुत हिचकिचाया, लेकिन उन्होने कोट देकर अपना काम एक शाल से चला लिया। जिस रात मैने उनका कोट पहन कर उन्ही के साथ कार मे सफर किया था, वह घटना जिन्दगी भर भूली नही जा सकती है।

चुनाव मे शास्त्री जी जीत गये। उनके नाम हजारों बधाई सन्देश आये। उन्हें पढ कर उत्तर देने का कार्यभार उन्होने मुझे सौप दिया था। मैने इलाहाबाद मे उनके छोटे से मकान मे (जो शास्त्रीजी ने किराये पर लिया हुआ था) रह कर काम किया। मुझे अभी तक पता नही कि उन्होने मुझमें ऐसी कौन-सी बात पाई थी, जिस कारण वे मुझे इतना चाहते थे। कई बार श्री अमरनाथ जी अग्रवाल से मेरा जिक्र करते और मेरी सराहना करते थे।

शास्त्री जी की स्वाभाविक सरलता, प्रेमपूर्ण व्यवहार, शिशु-समान स्वच्छ हृदय से मै उनके प्रति बहुत ही आकर्षित हो गया था। इस वजह से उनसे मिलने वालो को कभी भी यह नही खटकता था कि वे किसी एक महान् व्यक्ति के साथ वार्तालाप कर रहे है, जो भावना स्वभावतः उच्चतर अधिकारियो या ससद् सदस्य और उनके सचिव के बीच में हुआ करता है। एक दिन हम कुछ व्यक्ति शास्त्री जी के साथ कार मे सफर कर रहे थे और मै आगे बैठा हुआ था। मैने पीछे मुड़ कर एकाएक उनसे प्रश्न किया, "बाबूजी, आप तो जरूर मन्त्री बन जायेगे। क्या तब मुझे अपना सचिव बनायेंगे ?"

इस घटना की याद से मै रोमांचित हो उठता हूँ। कितनी बेतुकी बात हुई थी मुझ से। दरअसल इस तरह बात करने का साहस मुझे उनकी वजह से ही हुआ था, जिन्होने अपनी विनम्रता एवं सरलता से मेरा भय दूर कर दिया था। जबाब मे वे बोले, "वेंकटरमण जी, मुझे कौन मन्त्री बनाने चला।" उनके ये शब्द आशाविहीन थे। इस घटना को मै बिल्कुल भूल गया था, पर बाद मे मालूम हुआ कि शास्त्री जी कभी भूलने वालो मे न थे।

जब शास्त्री जी परिवहन मन्त्री बने, तब मै बधाई देने तक के लिए उनसे नही मिला। कारण यह कि मै इस उलझन मे था कि कहाँ मैं एक छोटा-सा व्यक्ति और कहाँ वे भारत के एक उच्च मन्त्री, उनसे मिलना भी क्या सम्भव हो सकता है ?

एकाएक एक दिन मुझे खबर प्राप्त हुई, भेजने वाले थे शास्त्री जी के मन्त्रालय के सचिव। खबर यह थी कि शास्त्री जी मुझसे मिलना चाहते है और मै उनके घर जाऊँ। अतः मैं उनके घर पहुँचा। पेड़ के नीचे कई लोग खड़े शास्त्री जी की प्रतीक्षा कर रहे थे। मुझे देखकर शास्त्री जी मेरी ओर बढे। मैने उन्हें मन्त्री होने के उपलक्ष्य में अपनी बधाइयाँ अर्पित की। वे मुझे अकेले कुछ दूर ले जाकर वोले, "वेंकटरमण जी, आपको याद होगा कि आपने कार मे क्या इच्छा प्रकट की थी। मै अब मन्त्री बन गया हूँ। क्या आप मेरे निजी सहायक बनना पसन्द करेगे ?"

आज जब भी ये शब्द मुझे याद आते है, मेरा दिल भर आता है और आँखों से आँसू टपकने लगते है। दूसरे ही दिन उन्होने मुझे काम पर नियुक्त कर लिया। उनका मुझ पर काफी स्नेह था। "तुम जवान हो और कुआरे हो। तुम्हें खूब डटकर काम करना चाहिए।" यह बात जता कर वे मुझे बार-बार घर बुला लिया करते थे। नौकरी पर रहते हो मैने बी० ए० पास कर लिया। उनके साथ-साथ मेने कई दिन विताये है। क्रोध का तो उनमे नामोनिशान भी न था। एक भी अवसर ऐसा न था जबकि उन्होने मुझ पर जरा भी क्रोध प्रकट किया हो।

एक वार झासी के पास एक पुल का उद्घाटन होना था और सबेरे इलाहाबाद से रवाना होने की तैयारी थी। उद्घाटन समारोह मे उन्हे जो भाषण देना था, उसके सारे ब्यौरे एक फाइल मे मौजूद थे, जिसे कामकाज अधिक होने की वजह से शास्त्री जी पिछली रात को न पढ सके थे। कार मे सफर करते-करते पढ़ लेगे, यह सोच कर मैने फाइल अपने पास रख ली। सबेरे खाने से इन्कार करने के बावजूद उनका एक और सचिव उनकी कार लेकर खाना लाने चल दिया था। जब शास्त्री जी कपड़े बदल कर बाहर आये, तो उन्हे पता चला कि उनकी कार बाहर गयी है और वे फिर अपने साथ के किसी प्रमुख व्यक्ति की कार मे बैठ कर हवाई अड्डे चल दिये। जल्दी मे मै फाइल उनको सौपना भूल गया और फाइल मेरे पास ही रह गई। चन्द मिनट बाद मै और खाना लेकर आये सचिव हवाई अड्डे को ओर कार मे भागे। लेकिन दुर्भाग्यवश रेलवे के लेवल क्रासिग का गेट बन्द हो जाने से कार को रुकना पड़ा और जब हम हवाई अड्डे पहुँचे, तो देखते है कि शास्त्री जी हवाई जहाज से रवाना हो चुके थे। हम डर के मारे कॉप रहे थे। मन मे आशका हो रही थी कि समारोह किस तरह सम्पन्न हुआ होगा और फाइल के बिना उनको क्या-क्या तकलीफें हुई होगी और वे हमसे क्या कहेगे। जब शाम को वे लौटे, तो मै हवाई अड्डे पर मिलने के लिए गया था। जहाज की सीढियाँ उतरते-उतरते उन्होने कहा, "फाइल देने का खयाल तो आपको रहा हो नही, लेकिन कोई बात नही, सब काम अच्छी तरह हो गया।" जब उनके हँसमुख चेहरे से यह बात निकली, तो मेरो जान मे जान आई।

इस घटना का जिक्र एक दिन माताजी (श्रीमती शास्त्री जी) से किया, तो वे बोली, "उन्हे गरम होते हुए मैने कभी नही देखा। अगर कोई गलती हो जाती, तो वे मौन रह जाते और मै भी मौन रह जाती।"

श्रीमती ललिता जी नौकरो की भी सच्ची माता है। सच्ची भक्ति और सहानुभूति उनमे कूट-कूट कर भरी है। वे कई बार मेरे घर भी पधारी है। पूजा-पाठ, भजन मे तल्लीन उन्होने एक दिन कहा, "बाबूजी पूछा करते थे कि सचिव के पद पर किसको लिया जाये, तब आप चार-पाँच व्यक्तियो के साथ दूर खडे थे और उस समय आपका नाम ही मेरे दिल मे आया।" यह मेरी खुशकिस्मती थी।

जब बाबूजी ने कामराज योजना के अन्तर्गत इस्तीफा दिया, तब मुझे खेद नही हुआ। मैने कहा कि मै भी इस्तीफा दे दूगा। "भाई, तुम्हे अभी बहुत तरक्की करनी है। मेरी खातिर इस्तीफा दे देना ठीक नहीं होगा।' उनकी सलाह के अनुसार मैने चार माह की छुट्टी ले ली। तब भी उनके साथ रह कर यथाशक्ति सेवा करता था। इनके इस्तीफे का समाचार सुन कर एक आई० सी० एस० अधिकारी ने जो उन दिनो लन्दन में थे और शास्त्री जी के सचिव रह चुके थे, एक पत्र मे शास्त्री जीको अपनी सवेदना प्रकट को थी। उत्तर में शास्त्री जी ने जो लिखा वह भुलाया नही जा सकता।

(देखिये इसी ग्रन्थ के "विचार खण्ड" में : शास्त्री जी का एक महत्वपूर्ण पत्र)

इस पत्र को टाइप करते-करते मेरा जी भर आया था। जनवरी में जब नेहरू जी अवस्थ थे, शास्त्री जो पुनः मन्त्री बने। मैने भी छुट्टी से लौट कर सरकारी काम संभाला। श्री नेहरू जी के देहावसान के बाद जब वे प्रधान मन्त्री बने, तब मुझे भी अपने मातहत नियुक्त कर लिया। मैंने उनके साथ कनाडा, ब्रिटेन, संयुक्त अरब गणराज्य आदि का दौरा भी किया।

आखिर कपड़ा वापस कर दिया गया

शास्त्री जी की सादगी बेमिसाल थी। एक बार वे कामनवेल्थ प्रधान मन्त्रियों के सम्मेलन मे जाने की तैयारी मे थे। जब कपड़े सूटकेस मे भरने लगे, तो पता चला कि उनके पास दो ही कोट बच पाये थे, जिनमे से एक की छातो पर पैसा बराबर सूराख था। मैने बाबूजी से विनतो की कि इस हालत मे नये कोट सिलवा ले। उत्तर मिला, कोई जरूरत नही। माताजी को जब यह पता चला, तब उनके आग्रह पर मैं कोट का कपड़ा खरीद कर साथ ही दर्जी को ले आया।

जब दर्जी माप लेने लगा, तो शास्त्रीजी चकित होकर पूछने लगे कि क्यों माप लिया जा रहा है। जब मैने सारी बात सुनायी, तो वे तनिक हैरानी में पड़ गये और हास्य-मिश्रित स्वर मे बोले, "आप लोग मुझे तग किये बिना नही छोड़ेंगे—अच्छा इस प्रकार करो—पहले पुराने कोट को फिरवा (टर्न) कर लाओ। अगर ठीक नहीं जंचा, तो नया कोट सिलवा लूंगा।" दर्जी मिया ने कमाल का काम किया था और यह पता न चलता था कि उसने कहाॅ मरम्मत की थी। शास्त्री जी बोले, "हम यह जानते हुए भो कि कोट मरम्मत किया गया है, नही पहचान रहे है। सम्मेलन मे भाग लेने वाले प्रधानमन्त्रियो को क्या नजर आयेगा। अब पहले नये कपड़े को वापस कर दीजिए।" मुझे विवश होकर कपड़ा वापस करना पड़ा।

प्रधानमन्त्री होते हुए भी असीम सरलता का परिचय दे सकते थे शास्त्री जी। मुझसे पूछते थे कि क्या मै सबेरे ५ बजे उपस्थित हो सकूॅगा। मै सहमत होकर ठीक ५ बजे उनके कमरे मे प्रवेश करता और उनको काम के लिए तैयार व तैनात पाता। इसके पश्चात् चाय का पहला प्याला मुझे देने के बाद ही खुद चाय पीते थे। "आप चाय की बजाय काफी ज्यादा पसन्द करते है न," कहते हुए अपने हाथ से चाय बना कर देते थे।

मुझे हमेशा पूरा नाम 'वेंकटरमणजी' लेकर पुकारते थे। जब कभी उमंग मे होते तो स्नेह भरे भाव से 'पंडितजी' कहकर पुकारते थे। मुझे जीवन में जो कुछ उपलब्ध हुआ, वह उन्हीं के प्रोत्साहन के फल-स्वरूप था। उनकी स्मृति मे विभोर हो उठता हूँ। इन एहसानो का बोझ किस तरह निभा सकूॅगा ? मुझसे कुछ न पूछिये-कुछ भी सूझता नही—मेरे एकमात्र उत्तर है आँसू........!

टी० एन० सिंह

कुछ भी नहीं बदले

प्रधान मन्त्री चुने जाने के वाद श्री लालवहादुर शास्त्री ने दो ही महीनो मे लोगों के हृदय मे विशेष स्थान प्राप्त कर लिया है। इन चन्द दिनो मे ही अपनी कर्त्तव्य-निष्ठा एव व्यवहार-सौजन्य के कारण वह जनता के स्नेह-पात्र वन गये है। उनकी सहृदयता, सरलता और सत्यनिष्ठा लोगो को वरावर उनकी ओर आकर्षित करती है। वड़े-से-वड़ा पद पा लेने पर भी उनके दिमाग मे कभी दम्भ नही आया। सदा-जैसा व्यवहार वह मित्रो से तथा आम जनता से वरावर करते जा रहे हैं।

आज से करीव ४७-४८ वर्ष पहले की वात मुझे याद आ जाती है। हम दोनो वनारस मे एक ही क्लास मे पढ़ते थे। न जाने क्यों और कैसे इतने विद्यार्थियो मे हम दोनो मे ही इतनी निकटता उत्पन्न हो गई, यह मैं आज तक नही जान पाया। लेकिन यह मैं जरूर कह सकता हूँ कि उस समय भी उनमें एक प्रकार की सरलता और सचाई विद्यमान थी जिसके कारण वे अपने सहपाठियों में सतत सर्वप्रिय रहे।

मुझे अपने गुरु स्वर्गीय पं० निष्काममेश्वर मिश्र का स्मरण हो आता है। वे एक आदर्श अध्यापक तो थे ही, साथ ही देश-प्रेम भी उनकी रग-रग मे भरा था। वे विद्यार्थियो को देश-प्रेम और त्याग की कथाएं सुनाया करते थे। हम जैसे विद्यार्थी उनकी आदर्शवादिता और देश-प्रेम के कारण उनसे वहुत प्रभावित थे। कुछ विद्यार्थियो को उनका विशेष स्नेह और आशीर्वाद प्राप्त था। उनमे श्री लालवहादुर शास्त्री प्रथम थे। साथ ही उनकी कृपा मुझ पर भी थी। इसी कारण मेरा और श्री लालवहादुर शास्त्री का सम्वन्ध घनिष्ठ होता गया।

१९२० के दिसम्वर मे गांधीजी के आह्वान पर छेड़े गये असहयोग-आन्दोलन के शुरू होने पर वहुत से विद्यार्थी अपना स्कूल और कालेज छोड़ कर उस आन्दोलन मे शामिल हो गये। उस समय शास्त्री जी के साथ ही मैं तथा मेरे अन्य सहपाठियो ने भी अपना स्कूल छोड़ कर इस आन्दोलन मे भाग लिया। यही से श्री लालवहादुर तथा कई और लोगो के राजनीतिक जीवन का आरम्भ हुआ। लालवहादुर जी के पिता का देहांत वाल्यावस्था मे ही हो गया था, परन्तु उनकी माताजी आज भी जीवित हैं। मेरी समझ मे स्वर्गीय निष्कामेश्वर मिश्र के अतिरिक्त उनकी माता का भी शास्त्री जी पर वहुत गहरा प्रभाव पड़ा। उनके मौसा वावू रघुनाथप्रसाद का, जिनके यहाँ रहकर वे पढ़ते थे, असर शास्त्री जी पर पड़ना स्वाभाविक ही था।

शास्त्री जी, जैसा कि सभी लोग जानते हैं, कद मे छोटे है। उस समय और भी छोटे थे। घर के सभी लोग उन्हे नन्हे कहा करते थे। वे भी नानक के इस दोहे को वरावर दोहराया करते थे :

नानक नन्हे ह्वै रहो जैसी नन्ही दूब।
और रूंख सूख जायँगे दूब-खूब की खूब।

यों तो हम सभी कभी-न-कभी कोई गीत या पद्य गुनगुनाते है। मैने शास्त्रीजी को भी अक्सर उक्त दोहे को दोहराते हुए सुना है। ऐसा मालूम होता है कि उस समय उन्होंने निश्चय कर लिया था कि सारी जिंदगी वह विनम्रता, सरलता और सचाई से रहेंगे।

उनके उसी व्रत का यह स्वाभाविक परिणाम है कि जो कोई भी आज उनसे मिलता है, वह उनकी इस विनयशीलता और विनम्रता के कारण अपने मन मे यह धारणा बना लेता है कि अपने इन्हीं गुणो के कारण शास्त्री जी अपने नये उत्तरदायित्व को दृढ़ता एव सहजता के साथ निभा लेंगे। मेरा तो उनकी दृढता के सम्बन्ध में बहुत पुराना अनुभव है। इन ४७-४८ वर्ष की अवधि मे, खास तौर से जब हम बहुत छोटे थे, आपस मे कई बार झगडे हो जाते थे। आपस के इस मतभेद का कोई भी कारण रहा हो, लेकिन मेरा अनुभव है कि मेरी जिद उनकी जिद के सामने नही चली। वह अपनी बात पर अड़े रहते और अन्त मे प्राय. मुझे ही उनकी बात माननी पडती। उनकी दृढता का मेरा यह अनुभव बहुत पुराना है। मेरी समझ मे नही आता कि पता नही क्यों लोग उनकी विनम्रता और विनयशीलता का यह अर्थ लगाते है कि वह दृढतापूर्वक अपने निश्चय नही कर पाते। जब वह स्वर्गीय पंडित गोविन्दवल्लभ पन्त के बाद गृहमन्त्री हुए, उस समय असम के मामले मे, केरल के झगड़े के सम्बन्ध मे और भाषा के प्रश्न पर उन्होने जिस दृढता नीतिमत्ता और साहस के साथ काम किया वह भी सबको मालूम है। इसलिये शास्त्री जी के मृदु और कोमल-स्वभाव, उनकी सरलता और विनयशीलता से किसी को गलतफहमी नही होनी चाहिए।

जब मै बीते दिनो को याद करता हूँ तो शास्त्री जी के सम्बन्ध मे मेरे सामने एक सुन्दर-सा नक्शा खिच जाता है। वह सत्यनिष्ठ ही नही, बड़े ही कर्मठ, अथक काम करने वाले, तपोनिष्ठ व्यक्ति भी है।

३५-३६ की बात है, वे उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी द्वारा स्थापित उत्तर प्रदेश भूमि-सुधार कमेटी के मन्त्री थे और बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन उसके सभापति। उस कमेटी मे जिस परिश्रम से उन्होने रात-दिन काम किया, उसके दर्शन उस वक्त उन सब लोगो ने किये होंगे जो उस समय शास्त्री जी के साथ रहे। वे रात-दिन उस कमेटी के सम्बन्ध मे कुछ-न-कुछ लिखते पढते रहते थे। रात को ११-१२ तक बज जाते थे, लेकिन उनका काम खत्म नही होता था। तब मै और शास्त्री जी उस समय साथ ही रहते थे। मेरी एक छोटी-सी भतीजी ने एक दिन मुझसे पूछा—"चाचा शास्त्रीजी दिन-रात इतना काम क्यों करते है? इतने छोटे, कमजोर,-से आदमी है, उन्हे इतना काम नही करना चाहिए।"

उसने मुझसे कहा कि मै उनको मना करूँ कि वे इतना काम न किया करे। लेकिन वे कहाँ किसी की सुनते। बाद मे इस विषय पर जब यह रिपोर्ट प्रकाशित हुई तो उसने सारे देश को एक प्रशस्त मार्ग दिखलाया और धीरे-धीरे सभी प्रदेशो ने उस रिपोर्ट को स्वीकार किया। बाद मे जब दोबारा कांग्रेस शासन मे आई तो उसने उसी रिपोर्ट के आदर्श पर पूरी तरह से देश मे जमीदारी का उन्मूलन किया। दिन-रात लगन से काम करने की शक्ति और कर्मठता को देख कर मेरे मन मे कुछ

टी० एन० सिंह

कुछ भी नहीं बदले

प्रधान मन्त्री चुने जाने के बाद श्री लालबहादुर शास्त्री ने दो ही महीनो मे लोगो के हृदय मे विशेष स्थान प्राप्त कर लिया है। इन चन्द दिनो मे ही अपनी कर्त्तव्य-निष्ठा एव व्यवहार-सौजन्य के कारण वह जनता के स्नेह-पात्र बन गये है। उनकी सहृदयता, सरलता और सत्यनिष्ठा लोगो को बराबर उनकी ओर आकर्षित करती है। बडे-से-बड़ा पद पा लेने पर भी उनके दिमाग मे कभी दम्भ नही आया। सदा-जैसा व्यवहार वह मित्रो से तथा आम जनता से बराबर करते जा रहे है।

आज से करीब ४७-४८ वर्ष पहले की बात मुझे याद आ जाती है। हम दोनो बनारस मे एक ही क्लास मे पढते थे। न जाने क्यो और कैसे इतने विद्यार्थियों मे हम दोनो मे ही इतनी निकटता उत्पन्न हो गई, यह मै आज तक नही जान पाया। लेकिन यह मै जरूर कह सकता हूँ कि उस समय भी उनमे एक प्रकार की सरलता और सचाई विद्यमान थी जिसके कारण वे अपने सहपाठियो मे सतत सर्वप्रिय रहे।

मुझे अपने गुरु स्वर्गीय प० निष्कामेश्वर मिश्र का स्मरण हो आता है। वे एक आदर्श अध्यापक तो थे ही, साथ ही देश-प्रेम भी उनकी रग-रग मे भरा था। वे विद्यार्थियो को देश-प्रेम और त्याग की कथाएँ सुनाया करते थे। हम जैसे विद्यार्थी उनकी आदर्शवादिता और देश-प्रेम के कारण उनसे बहुत प्रभावित थे। कुछ विद्यार्थियो को उनका विशेष स्नेह और आशीर्वाद प्राप्त था। उनमे श्री लालबहादुर शास्त्री प्रथम थे। साथ ही उनकी कृपा मुझ पर भी थी। इसी कारण मेरा और श्री लालबहादुर शास्त्री का सम्बन्ध घनिष्ठ होता गया।

१९२० के दिसम्बर मे गाधीजी के आह्वान पर छेडे गये असहयोग-आन्दोलन के शुरू होने पर बहुत से विद्यार्थी अपना स्कूल और कालेज छोड़ कर उस आन्दोलन मे शामिल हो गये। उस समय शास्त्री जी के साथ ही मै तथा मेरे अन्य सहपाठियो ने भी अपना स्कूल छोड़ कर इस आन्दोलन मे भाग लिया। यही से श्री लालबहादुर तथा कई और लोगो के राजनीतिक जीवन का आरम्भ हुआ। लालबहादुर जी के पिता का देहात बाल्यावस्था मे ही हो गया था, परन्तु उनकी माताजी आज भी जीवित है। मेरी समझ मे स्वर्गीय निष्कामेश्वर मिश्र के अतिरिक्त उनकी माता का भी शास्त्री जी पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। उनके मौसा बाबू रघुनाथप्रसाद का, जिनके यहाँ रहकर वे पढ़ते थे, असर शास्त्री जी पर पड़ना स्वाभाविक ही था।

शास्त्री जी, जैसा कि सभी लोग जानते है, कद मे छोटे है। उस समय और भी छोटे थे। घर के सभी लोग उन्हे नन्हे कहा करते थे। वे भी नानक के इस दोहे को बराबर दोहराया करते थे :

नानक नन्हे ह्वै रहो जैसी नन्ही दूब।
और रूंख सूख जायँगे दूब-खूब की खूब।

यों तो हम सभी कभी-न-कभी कोई गीत या पद्य गुनगुनाते है। मैने शास्त्रीजी को भी अक्सर उक्त दोहे को दोहराते हुए सुना है। ऐसा मालूम होता है कि उस समय उन्होने निश्चय कर लिया था कि सारी जिंदगी वह विनम्रता, सरलता और सचाई से रहेंगे।

उनके उसी व्रत का यह स्वाभाविक परिणाम है कि जो कोई भी आज उनसे मिलता है, वह उनकी इस विनयशीलता और विनम्रता के कारण अपने मन मे यह धारणा बना लेता है कि अपने इन्ही गुणों के कारण शास्त्री जी अपने नये उत्तरदायित्व को दृढता एव सहजता के साथ निभा लेगे। मेरा तो उनकी दृढता के सम्बन्ध में बहुत पुराना अनुभव है। इन ४७-४८ वर्ष की अवधि में, खास तौर से जब हम बहुत छोटे थे, आपस मे कई बार झगडे हो जाते थे। आपस के इस मतभेद का कोई भी कारण रहा हो, लेकिन मेरा अनुभव है कि मेरी जिद उनकी जिद के सामने नही चली। वह अपनी बात पर अड़े रहते और अन्त मे प्राय. मुझे ही उनकी बात माननी पडती। उनकी दृढ़ता का मेरा यह अनुभव बहुत पुराना है। मेरी समझ में नही आता कि पता नही क्यो लोग उनकी विनम्रता और विनयशीलता का यह अर्थ लगाते है कि वह दृढतापूर्वक अपने निश्चय नही कर पाते। जब वह स्वर्गीय पडित गोविन्दवल्लभ पन्त के बाद गृहमन्त्री हुए, उस समय असम के मामले मे, केरल के झगड़े के सम्बन्ध मे और भाषा के प्रश्न पर उन्होने जिस दृढता नीतिमत्ता और साहस के साथ काम किया वह भी सबको मालूम है। इसलिये शास्त्री जी के मृदु और कोमल-स्वभाव, उनकी सरलता और विनयशीलता से किसी को गलतफहमी नही होनी चाहिए।

जब मै बीते दिनो को याद करता हूँ तो शास्त्री जी के सम्बन्ध मे मेरे सामने एक सुन्दर-सा नक्शा खिच जाता है। वह सत्यनिष्ठ ही नही, बड़े ही कर्मठ, अथक काम करने वाले, तपोनिष्ठ व्यक्ति भी है।

३५-३६ की बात है, वे उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी द्वारा स्थापित उत्तर प्रदेश भूमि-सुधार कमेटी के मन्त्री थे और बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन उसके सभापति। उस कमेटी मे जिस परिश्रम से उन्होंने रात-दिन काम किया, उसके दर्शन उस वक्त उन सब लोगो ने किये होगे जो उस समय शास्त्री जी के साथ रहे। वे रात-दिन उस कमेटी के सम्बन्ध मे कुछ-न-कुछ लिखते पढते रहते थे। रात को ११-१२ तक बज जाते थे, लेकिन उनका काम खत्म नही होता था। तब मै और शास्त्री जी उस समय साथ ही रहते थे। मेरी एक छोटी-सी भतीजी ने एक दिन मुझसे पूछा—"चाचा शास्त्रीजी दिन-रात इतना काम क्यों करते है? इतने छोटे, कमजोर,-से आदमी है, उन्हे इतना काम नही करना चाहिए।"

उसने मुझसे कहा कि मै उनको मना करूँ कि वे इतना काम न किया करे। लेकिन वे कहाँ किसी को सुनते। बाद मे इस विषय पर जब यह रिपोर्ट प्रकाशित हुई तो उसने सारे देश को एक प्रशस्त मार्ग दिखलाया और धीरे-धीरे सभी प्रदेशो ने उस रिपोर्ट को स्वीकार किया। बाद मे जब दोबारा कांग्रेस शासन मे आई तो उसने उसी रिपोर्ट के आदर्श पर पूरी तरह से देश मे जमीदारी का उन्मूलन किया। दिन-रात लगन से काम करने की शक्ति और कर्मठता को देख कर मेरे मन मे कुछ

ऐसे विचार आया करते थे कि यह व्यक्ति अपने चरित्र का तथा परिश्रम के बल पर ऊँचे से ऊँचे स्थान तक जाने के योग्य है और उसके रास्ते मे कोई चीज रुकावट नही डाल सकती। जब वे १९५१ मे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के महामन्त्री बने, उस वक्त भी व १४-१५ घण्टे काम किया करते थे। ऐसा मालूम पडता है कि इतिहास के महापुरुषो की गाथाओ से उनके जीवन पर असर पड़ा है। उन्होंने सोचा होगा कि यदि उनका चरित्र और स्वभाव ठीक रहा और उन्होने परिश्रम से काम किया तो वे एक न एक दिन आगे बढ़कर ही रहेंगे। वास्तव मे हुआ भी ऐसा ही।

हम लोगो के गुरु स्वर्गीय निष्कामेश्वर मिश्र ने हमे धम और सदाचार के ऊँचे सिद्धान्तो की शिक्षा दी थी। खास तौर से शास्त्री जी ने उन सिद्धान्तो पर चलने का अडिग निश्चय शुरू से ही कर रखा था। उनका अनुसरण वे जिंदगी भर करते रहे। रेलवे मे यो तो सदा ही दुर्घटनाएँ होती रहती हैं, लेकिन कौन जानता था कि शास्त्री जी को अपने उत्तरदायित्व का इतना ख्याल है कि वे एक दुर्घटना के कारण रेलवे मन्त्री-पद से इस्तीफा तक दे देंगे। मुझे अच्छी तरह याद है कि वे उस दुर्घटना के कारण रात भर सोये तक नही थे और अत मे स्वर्गीय पडित जवाहरलाल जी को उनकी दलीलो को मान कर उनका इस्तीफा मजूर करना पड़ा। यह एक अभूतपूर्व बात थी। वह रेलवे मन्त्री तो नही रहे लेकिन इस आदर्श ने लोगो के हृदय मे उनके प्रति एक विश्वास एव प्रेम पैदा कर दिया।

फिर जब श्री कामराज की नई योजना के अन्तर्गत कई मन्त्रियो के त्यागपत्र देने की बात आई तो उस समय भी शास्त्री जी ने ही पहल की थी। उन्होंने इस तरह इसका इसरार किया कि उन्हे सबसे पहले मौका दिया जाये कि वे कांग्रेस और देश की सेवा कर सके। यही नही उन्होने यह भी कहा था कि मै कांग्रेस की अध्यक्षता करने का वायदा तो नही कर सकता, लेकिन एक साधारण कांग्रेस कार्यकर्त्ता की भाँति अपने सारे समय कांग्रेस का काम अवश्य करूंगा। बात भी यही हुई। कामराज जी बहुत चाहते थे कि शास्त्रीजी कांग्रेस के अध्यक्ष हो जायँ लेकिन जिस दृढ सकल्प के साथ उन्होंने इस बात को नही माना वह सब जानते हैं। अन्त मे नतीजा यह हुआ कि श्री कामराज को ही उनकी बात माननी पड़ी।

मेरा शास्त्री जी के साथ इतना पुराना सम्बन्ध है कि कदाचित् मै उनके बारे मे जो कुछ भी कहूगा, उसके लिए मुझ पर पक्षपात का आरोप लग सकता है।

मनुष्य मे कुछ न कुछ कमियाँ अवश्य होती हैं। शास्त्रीजी में भी कुछ होगी। लेकिन कमियो और कमजोरियो को कोई जानने वाला है तो वह स्वय लालबहादुर जी हैं। वे उन कमजोरियो को बहुत अच्छी तरह जानते है। और उनका सदा यह प्रयत्न रहता है कि वे उन कमजोरियो को दूर करे। यदि उनकी कमजोरियो के बारे मे कोई जानता है तो उसे उनके बारे मे उनसे ही पूछना होगा क्योकि वे ही इनको सबसे अच्छी तरह से जानते हैं।

एक साधारण मध्यवर्गीय कुल मे उत्पन्न होने और बाल्यावस्था मे ही पिता के निधन के कारण शास्त्री जी को आर्थिक कठिनाइयो का सामना करना पड़ा। साहस और धैर्य के साथ उनकी माता ने उनका सामना किया। जहां विद्यार्थी जीवन मे आचार्य नरेन्द्रदेव, डाक्टर भगवानदास आदि के सम्पर्क मे उन्हे फायदा हुआ, वहाँ बाद मे चल कर राजनीतिक जीवन में स्वर्गीय जवाहरलाल जी के

साथ काम करने से उनको बहुत कुछ सीखने का मौका भी मिला । १६२५ में विद्यापीठ से शास्त्री पास करने के बाद वे लाला लाजपतराय द्वारा बनाई हुई लोक-सेवा संस्था के सदस्य हुए। दो-तीन वर्ष तक मेरठ और मुजफ्फरनगर में हरिजनो के बीच काम करने के बाद वे इलाहाबाद मे काम करने लगे और वहाँ जवाहरलाल जी के सम्पर्क में आये । थोड़े ही दिनो मे उनकी सच्चाई, सज्जनता और परिश्रम करने की शक्ति के कारण काग्रेस सस्था में उनका स्थान ऊँचा हो गया ।

अन्य राजनीतिक कार्यकर्त्ता की तरह वे भी १६२०, २५, ४१, ४२ के आन्दोलनों में कई बार जेल गये । इस तरह वे सभी राष्ट्रीय आन्दोलनों में भाग लेते रहे ।

रेलवे मन्त्री पद से त्यागपत्र देने के बाद १६५७ में पुन: जब काग्रेस सरकार बनी तो उसमे वे परिवहन और संचार मन्त्री बनाये गये । बाद मे उन्होंने वाणिज्य और उद्योग मत्री का पद संभाला । काशी मे विद्यापीठ की विद्यार्थी सभा में वाद-विवाद के आयोजन हुआ करते थे । एक बार उसमे बड़े उद्योगो और कुटीर उद्योगो के सम्बन्ध मे वाद-विवाद हो रहा था । उसमे वे बड़े उद्योगो के पक्षपाती थे । मैने छोटे उद्योगो का पक्ष लिया था । जब वे उद्योग मन्त्री हुए तो उन्हे बड़े उद्योगो की देखभाल तो करनो ही पड़ी पर उनका जोर बराबर छोटे उद्योगो पर ही रहा । उसके बाद कुछ ऐसी बाते हुईं कि मै योजना आयोग का सदस्य होने के नाते बड़े उद्योगो का समर्थन करने लगा। ऐसी बातो मे जिन्दगी मे उलट-फेर हुआ हो करते है । उन्होने भी इसका जिक्र एक बार सेन्ट्रल एडवाइजरी बोर्ड की बैठक मे किया था । वह मुझ अभी तक याद है । उसके वाद से मैने भी योजना आयोग मे अपना धर्म समझा कि जहाँ तक हो सके छोटे उद्योगो का समर्थन करूँ ।

शास्त्री जी के दिल और दिमाग पर पडित जवाहरलाल नेहरू के सम्पर्क मे रहने के कारण उनको छाप तो है ही लेकिन वे गाधीजी के भो बड़े अनुयायी है । गाधीजी की सिखाई हुई बातों— दरिद्रनारायण से प्रेम, अपने धर्म और परम्पराओ के प्रति प्रेम और सत्य के मार्ग पर चलने मे उन्हे पूरी आस्था है । आज हमारे प्रधान मन्त्री जो कुछ भी करेंगे उसमे गाधीजी और जवाहरलालजी की प्रेरणा अवश्य रहेगी ।

(शास्त्री जी की मृत्यु स पूर्व लिखा गया लेख)

डा० रमा सिंह

साधारण दैनिक-चर्या के दो चित्र

एक सोमवार की शाम को अपने एक परिचित परिवार मे गई। लगभग सभी छोटो-बडो का व्रत था-एक वच्चे ने हँस कर कहा—'आज हम लोगो का शास्त्री-व्रत है, आज आपको केवल आलू वगैरह की चिप्स मिलेगी खाने को; अन्न वचाना है न देश के लिए !' अपनी बात समाप्त कर वह वालक फिर अपने खेल मे व्यस्त हो गया।

कितना व्यापक प्रभाव था शास्त्री जी के व्यक्तित्व का। उनकी एक-एक वात बडो से लेकर छोटो तक के हृदय मे घर कर गई थी। यो तो वहुत-से नियम कठिन-से-कठिन शासन-व्यवस्था द्वारा भी लागू नही किये जा सकते, परन्तु जो व्यक्ति हृदय पर शासन करता है उसके सहज और स्वाभाविक दृष्टि-सकेत पर जनता स्वय ही न्योछावर हो जाती है। शास्त्री के दृष्टि-सकेत में यही जादू था, उन्होने सचमुच जन-जन के मन पर शासन किया है।

मेरा एक दूसरा परिचित परिवार। वहुत छोटे दो कमरे एक पतला-सा बरामदा जिसमे मुश्किल से चारपाई आती है, रसोई के लिए एक छोटी-सी कोठरी। एक दिन वहा गई तो बरामदे मे ही छः सात नये गमले थे और उनमे 'शास्त्री ने कहा है, कुछ न कुछ उगाना चाहिए, और जमीन-अमीन तो आपके पास है नही, गमलो मे आलू वो दिया, एक बीज से कम-से कम १०-१५ आलू तो जरूर निकलेगे। अव छत पर और गमलो मे ऐसी ही खेती करूँगी।' कितनी आत्मीयता का सम्वन्ध शास्त्री जी ने जन-जन के साथ स्थापित कर लिया था। रेडियो पर सुनी गई उनकी वाणी अथवा समाचार-पत्रो के माध्यम ने प्राप्त हुआ उनका सदेश जनता के लिए वेद-वाक्य वन गया। ऐसा लगता था जैसे घर के किसी वडे-वूढे ने कोई वात कही है और उस पर आचरण करना परिवार के हर छोटे-बडे का कर्तव्य है।

५

योगेन्द्रबालो

एक सच्ची घटना : पुराने मित्र

गत बुधवार को सभो प्रधान मन्त्री की शव-यात्रा मे सम्मिलित होने गये। बिल्लू नही गया। घर के एक कौने मे चुपचाप बैठा था। बहुत उदास था। एक छोटी-सो पुरानी बात याद आ रहो थी। बिल्लू को आयु मुश्किल से तेरह वर्ष की होगी। वात सात-आठ साल पुरानो है शायद तब वह पाच-छ वर्ष का था।

बिल्लू अपनी अम्मा, भाई, बहनो और अनया के साथ बम्बई मे रहता था। बिल्लू का परिवार आध्र प्रदेश का है। वहा की भाषा तेलगू है जिसमे पिता को प्यार से अनया कहते है।

बिल्लू के पड़ोस मे रहते थे कल्पना, साधना और उनके ममी-डेडो। बिल्लू के अम्मा-अनया और कल्पना-साधना के ममी-डेडी के गहरे मित्र थे।

उस दिन बिल्लू के घरवाले सब बाहर गये हुए थे। बिल्लू अपने मित्रो के घर खेलने आया हुआ था।

साधना-कल्पना के परिवार के एक घनिष्ठ मित्र थे शास्त्री जी और उनको धर्मपत्नी। शास्त्रो जी जब कभो बम्बई आते अपने मित्रो से मिलने जरूर आते थे।

उस दिन भी शास्त्री जी का परिवार बम्बई मे अपने मित्रो के घर आया हुआ था। उनको बच्चो से बहुत प्यार था। सब बच्चो ने उनके गिर्द घेरा डाल दिया। कल्पना की ममो थी महाराष्ट्र की और डेडी थे उत्तर प्रदेश के। बिल्लू जो वच्चो के साथ खेल रहा था, आन्ध्र प्रदेश का था। एक छोटा-सा भारतवर्ष इकठ्ठा हुआ जान पड़ता था।

शास्त्री जी तब भारत सरकार के रेलमत्री थे। उनकी धर्मपत्नो थी ललिता देवी। बिल्लू को यह तो ठीक मालूम नही था कि रेलमन्त्री क्या होता है, मगर यह जानता था कोई बड़ा आदमी होता होगा। बच्चो को इतना प्यार जो करता था।

उसे ललिता देवी तो बहुत ही अच्छी लगती थी। बिल्कुल अम्मा की तरह थी। नाराज होना तो जानती ही नही थी, हॅस-हॅस कर बच्चों से बाते करती थी।

बिल्लू ने सोचा यह शास्त्री जी और ललिता देवी, कल्पना-साधना के घर ही क्यो आते है, मेरे घर क्यो नहीं आते। फिर उसके छोटे-से दिमाग ने सोचा इनको मै अपने घर जरूर ले चलूँगा।

उसने ललिता देवो की उंगली पकड़ ली और मचल गया। आप यहा तो आती है। मेरे घर क्यो नही आतो। बस, आज मेरे घर चलिये।

ललिता जी हँस पड़ी, "अच्छा बिल्लू तुम्हारा घर कहाँ है ?"

बिल्लू ने उनकी उगली नही छोड़ी। खीचता हुआ बोला, "यही पास ही है। चलिये, उठिये।"

ललिता जी हँसती हुई उठी और बिल्लू के साथ चल पड़ी।

घर मे कोई नही था पर बिल्लू बहुत प्रसन्न था। घर का कोना-कोना उसने ललिता देवी को दिखलाया। दीवारो पर लगे चित्र दिखाये, "यह मेरी अम्मा है। यह मेरे अनया है। यह है सुभाष भइया। यह है अशोक भैया। अपनी दीदियो के भी चित्र दिखाये। घर के सब कमरों मे ले गया। अपनी सारी चीजे और खिलोने एक-एक करके दिखाये।

फिर दोनो हँसते-हँसते पुराने मित्रो की तरह कल्पना-साधना के घर लौटे। बिल्लू बहुत प्रसन्न था।

फिर जब कभी शास्त्री जी का परिवार बम्बई अपने मित्रो से मिलने आता बिल्लू से जरूर मिलता। बिल्लू कहता--"यह मेरे पुराने मित्र है।"

बिल्लू के पिता सरकारी कर्मचारी हैं। उनका तबादला दिल्ली हो गया। बिल्लू भी दिल्ली आ गया।

अब बिल्लू काफी बड़ा हो गया है। समाचार-पत्र भी पढ लेता है। उसे यह भी मालूम है कि उसके पुराने मित्र भारत के प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री और उनकी पत्नी श्रीमती ललिता शास्त्री थे।

जब रेडियो पर उसने शास्त्री जी की मृत्यु का समाचार सुना तो बहुत दुखी हुआ। उसका जी चाहा कि भाग कर उनके घर जाय और ललिता देवी के पास जाय। पर कौन घुसने देगा उसे प्रधान मन्त्री के घर। अब भी तो वह लड़का-सा ही है। फिर वह ललिता देवी को रोते हुए कैसे देख सकेगा। सो वह चुपचाप अपने कमरे मे बैठा सिसकता रहा। सोचता रहा कितने महान् है मेरे पुराने मित्र। पर कितना सरल हृदय दिया भगवान् ने उनको।

वासुदेव झा 'शांत'

हमारे चिंतन को नया मोड़ दिया

गांधीजी कहा करते थे कि समाज की गाड़ी को उन्नयन-पथ पर अग्रसर करने के लिए 'पूँजी और श्रम का रिश्ता' करना आवश्यक है। १५ मार्च, १९६५ को व्यवसायी वर्ग के सामाजिक दायित्व का निरूपण करते हुए श्री लालबहादुर शास्त्री ने गांधीजी के उक्त कथन का हवाला दिया था। और उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया था कि वे निजी उद्योग के विरोधी नही है।

वस्तुत: सर्वोदय में उनका पूर्ण विश्वास था और देश की अर्थ-व्यवस्था को नयी दिशा देने में उनके इस विश्वास ने आकाश-दीप का काम किया।

विशाल औद्योगिक परियोजनाओं मे उनका अविश्वास नहीं था, पर वे ऐसी योजनाओं को प्राथमिकता देने के पक्ष मे थे, जिनके सुफल जल्द उपलब्ध हों। शास्त्री जी कुल १८ महीने प्रधान मन्त्री पद पर रहे और उन्होने इस अल्पावधि में देश की नाव को बाहरी और आन्तरिक संकटो से जिस कुशलता के साथ निकाला, वह अविस्मरणीय रहेगा।

आज हमारा देश जिस विषम खाद्य स्थिति से गुजर रहा है, उसका भान उन्हें काफी पहले हो गया था। योजना आयोग के अध्यक्ष की हैसियत से उन्होने यह स्पष्ट किया था कि यदि कृषि उत्पादन के मामले मे हम पिछड़ गये, तो हमारी औद्योगिक प्रगति की इमारत सुदृढ़ नीव पर खडी नही हो सकेगी। उनके उस दृष्टिकोण का औचित्य स्वत. प्रमाणित हो गया है। चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत कृषि के लिए बिल्कुल पृथक् योजना बनाने का विचार सबसे पहले श्री शास्त्री ने ही व्यक्त किया था।

मिट्टी से प्यार

शास्त्री जी अर्थशास्त्री नही थे। परन्तु उनका बौद्धिक विकास जिस-जिस परिवेश में हुआ, वह वास्तविक था। मिट्टी से उनका लगाव अटूट था। जय जवान के साथ 'जय किसान' का नारा सिर्फ उनका नारा ही नही था। उनका दृढ विश्वास था कि सोना धरती ही उगलेगी, उद्योग उसको रूप भर देगा। और अब तो अनेक विदेशी आर्थिक विशेषज्ञों ने भी शास्त्री जी के इस विचार का समर्थन किया है कि ठोस कृषि आधार के बिना भारत की आर्थिक प्रगति का विकास सम्भव नही है।

शासन-तन्त्र की बागडोर शास्त्री जी के हाथ मे आने से पहले तक आमतौर पर यह राय जाहिर की जाती थी कि मूल्य-वृद्धि आर्थिक प्रगति का एक अपरिहार्य परिणाम है। परन्तु शास्त्री जी इससे सहमत नही थे। प्रधान मन्त्री-पद ग्रहण करने के बाद अपनी पहली कान्फ्रेंस मे उन्होने कहा था कि रक्षा और गरीबी की समस्याओ के साथ मूल्य-वृद्धि हमारी तीसरी सबसे बड़ी समस्या है और उन्होने मूल्यो को नियन्त्रित करने का निरन्तर प्रयत्न किया।

एक कसक

यह नही कहा जा सकता कि इसमे उन्हे पूर्ण सफलता मिली। और इसका ज्ञान उन्हें खुद भी था। १९६५ के मार्च महीने मे अखिल भारतीय वाणिज्य उद्योग मण्डल संघ का वार्षिक अधिवेशन का उद्घाटन करते हुए उन्होने स्पष्ट शब्दो में कहा कि व्यवसायी वर्ग ने मूल्य को नियन्त्रित रखने के काम मे सरकार का साथ नही दिया। अनाज व्यापारियो से उन्हे विशेष शिकायत थी।

जनहित सर्वोपरि

शास्त्री जी ने कहा था कि व्यवसायी वर्ग समाज का अंग है, तो उसे समाज के हिताहित का ध्यान रखना ही पड़ेगा। शास्त्री जी का वह भाषण ऐतिहासिक और अभूतपूर्व था। ऐतिहासिक और अभूतपूर्व इसलिए कि वे आर्थिक प्रश्न पर कोई पांडित्य-प्रदर्शन नही कर रहे थे, बल्कि उनके भाषण से यह स्पष्ट हो गया कि अन्धे को अन्धा कहने का साहस उनमे है। किसी भी योजना या अभियोग का मूल्यांकन करते हुए वे किसी सिद्धांत या वाद से सम्बन्ध नही चाहते थे। यदि सरकार की किसी कार्रवाई से जनहित की सिद्धि नही होती, तो वे रास्ता बदलने के लिए हमेशा तैयार रहते थे। प्रमाण—व्यवसायियो और उद्योगपतियो के उसी सम्मेलन मे वाणिज्य उद्योग मण्डल संघ के अध्यक्ष श्री के० पी० गोयनका ने सरकार की कुछ नयी बजट-व्यवस्थाओ की आलोचना की थी। पाँच-छः दिन बाद ही लोकसभा मे वित्तमन्त्री ने कई कर-राहते देने की घोषणा की।

सच्ची श्रद्धांजलि

शास्त्री जी नही रहे। परन्तु देशवासियो मे उन्होने आत्म-विश्वास की जो रोशनी जगायी है, वह हमारा मार्ग-दर्शन कराती रहेगी। देश का हर तबका किसान, व्यवसायी, उद्योगपति, मजदूर, मालिक—मिल कर यदि देश को उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होते रहे, तो यही इस महान् विभूति के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

रामचन्द्र तिवारी

सफल युद्ध-नेता

ताशकन्दी शीत मे प्रसन्नता को ऊष्मा १० जनवरो, १९६५ को जब चरम सीमा पर थो, भारत-पाक समझौते की सफलता पर जब रूसी प्रधान मंत्री श्री कोसीजिन के भोज में उल्लासमय वातावरण की समाप्ति पर मुस्कराते हुए प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने जब पाक राष्ट्रपति अयूब को 'खुदा हाफिज' कहा था। किसे पता था कि भारत का वह सफल युद्ध-नेता शान्ति को खोज में अपनी धरती, अपने देश की मिट्टी से दूर विदेश मे अपने प्राणो का विसर्जन करेगा। पता नही अयूब को 'खुदा हाफिज' करते देख काल किस कोने मे खड़ा मुस्करा रहा था कि उसने भारत के मुस्कराते पुष्प के समान कोमल किन्तु वज्र के सदृश कठोर प्रधान मन्त्री को अपने अंक मे समेट लेने का निश्चय किया।

केवल १८ महीने तक ही पिता की छत्रछाया पा सकने वाले लालबहादुर को प्रधान मन्त्रित्व का सुख—काँटों भरा, सकटों भरा गौरव—भी १८ महीने के लिए ही प्राप्त हुआ, किन्तु उनका १८ महीनों का शासन-काल नेहरू जी के १८ वर्षो के प्रधान मन्त्रित्व से किसी प्रकार कम गौरवशाली, किसी प्रकार कम ऐतिहासिक नही कहा जा सकता। इन अठारह महीनों मे शास्त्री जी ने दो युद्धों का सामना किया और खरे-तपे युद्ध-नेता के रूप में प्रकट हुए। किसी को इस बात की आशा नही थी कि विनम्र,-मौन और सौमनस्य की यह प्रतिमूर्ति कभी सेना को 'बढ़े चलो' का भी आदेश दे सकेगी।

नेहरू के बाद कौन ? प्रश्न का भरपूर उत्तर प्रदान करने वाली वाणी आज मौन हो गई है। गांधीजी के जन्म-दिवस २ अक्टूबर, १९०४ को जन्मे शास्त्री जी भी उसी जनवरी मास में दिवगत हुए जिसमें गांधीजी ने उन्मादग्रस्त हाथो से गोली खाई थी। गाधी जी हिन्दू-मुस्लिम एकता की वेदी पर शहीद हुए तो शास्त्री जी ने भारत-पाक-मैत्री की खोज में प्राणोत्सर्ग किया।

आज सम्भवतः शास्त्री जी के निधन का अमेरिकी राष्ट्रपति श्री जानसन को सबसे अधिक खेद है, जिन्हें नेहरूजी के इस उत्तराधिकारी के साथ मिलने का सौभाग्य ही नहीं मिल पाया। पहले शास्त्री जी की अमेरिका-यात्रा को श्री जानसन ने स्थगित किया और अब अमेरिका-यात्रा तय हुई तो काल के कराल हाथ ने उस भेटकर्ता को ही उठा लिया। और श्री जानसन इतना ही कह पाये कि 'उनकी मृत्यु से मानवता की शान्ति तथा प्रगति को गहरा धक्का लगा है।'

श्री शास्त्री भारत की सच्ची प्रतिमूर्ति थे। वह सच्चे अर्थो मे भारत के प्रतिनिधि थे, जिन्होने गरीबी में पल कर, राष्ट्र-प्रेम के उद्वेलित सागर मे तैरते हुए अपने धैर्य, ईमानदारी भरे परिश्रम से

राष्ट्र के सर्वोच्च आसन को सुशोभित ही नही किया, जनता के हृदय में अपना एक ऐसा स्थान बना लिया था, जो कभी पूरा नही हो सकता। गाधी जी की हत्या पर जो राष्ट्र निराश्रित हुआ था, नेहरू जी के निधन पर फूट-फूट कर रोया था, वह शास्त्री जी की मृत्यु से स्तम्भित हो गया है।

आरम्भिक जीवन

विचारवान् दाशनिक डा० भगवानदास से काशी विद्यापीठ मे शिक्षा प्राप्त करके राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत होकर निकले युवक लालबहादुर को जीवन की लम्बी यात्रा छोटे-छोटे किन्तु दृढ कदमो से तै करनी थी। शास्त्री जी के जीवन पर लाला लाजपतराय का जो प्रारम्भिक घना प्रभाव पडा, उसने गाधीजी के आह्वान पर युवक लालबहादुर को भी राष्ट्रीय सग्राम मे कूदने के लिए विवश कर दिया। ज्वर मे तपता पुत्र और दवा के अभाव मे मृत्यु का आलिगन करती पुत्री भी राष्ट्र-यज्ञ मे हाथ बंटाने से न रोक सकी। २०-२१ मे शास्त्रीजी को ढाई वर्ष की जेल हुई थी। जेल से निकलने के बाद इलाहाबाद काग्रेस-समिति के सचालन का भार लालबहादुर पर पड़ा। इस जमाने मे शास्त्री जी राजर्षि टडन जी के सम्पर्क मे आये। बाद मे श्री जवाहरलाल नेहरू की दृष्टि उन पर पडी तो वे उत्तरप्रदेश काग्रेस के महामन्त्री बने।

गरीबी मे गुजरते शास्त्रीजी ने अपने परिवार की गरीबी ही नही, समस्त देश की गरीबी दूर करने का सकल्प लिया। कुल मिला कर आठ वर्षो तक जेल-यात्रा करने वाले शास्त्री जी सदा अपने शान्त मौन भाव से, किन्तु लगन के साथ सेवालीन रहने के कारण सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ते ही गये।

१९४६ मे शास्त्री जी सभासचिव बने और वह स्वर्गीय गोविदवल्लभ पन्त के प्रभाव मे आये और काग्रेस सगठन के सचालक की प्रशासक रूप मे प्रतिभा निखरने लगी। उत्तर-प्रदेश मे वह सभा-सचिव के बाद मत्री बने और उन्होने गृह तथा परिवहन विभाग सभाले। उन्होने आदर्श जेले बनाई तो मोटर-परिवहन का राष्ट्रीयकरण किया। पहले आम चुनावो मे नेहरू जी ने शास्त्री जी को अखिलभारतीय राजनीति का सूत्रधार बनाया और उनकी सम्मति से ही उन चुनावो का सचालन किया। शास्त्री जी १९५२ मे राज्यसभा के सदस्य बने और भारत के रेल-मन्त्री भी। उनके कार्यकाल मे जब मेहबूबनगर दुर्घटना हुई, तब वैधानिक रूप से स्वय को दोषी समझ कर रेल-मत्री के पद का निर्लिप्त भाव से त्याग कर दिया। दूसरे आम चुनावो मे भी शास्त्री जी ने कांग्रेस का सचालन किया।

परिवहन एव सचार मत्री, वाणिज्य-मत्री तथा गृह-मत्री के पदो पर शास्त्रीजी ने सफलता पूर्वक काम किया, किन्तु कामराज योजना के अधीन अपने-आप जिद करके त्याग-पत्र देने वाले शास्त्री जी ही थे। दुर्गापुर काग्रेस मे जब पहली बार नेहरू जी को फालिज मार गया, तब उन्होने शास्त्री जी को अपनी सहायता के लिए बुलाया। मानो उसी समय शास्त्री जी को बिना विभाग का मत्री बना कर अपने उत्तराधिकारी का निर्णय कर दिया। बाद मे तो काग्रेस दल द्वारा सर्वसम्मति से शास्त्री जी को उनका उत्तराधिकारी बनाया गया ही।

शास्त्री जी विनम्र, दयालु तथा विचारशील व्यक्ति थे। वे महान् समन्वयकारी थे। चाहे असम का भाषा-विवाद हो, चाहे पजाब की समस्या और चाहे कश्मीर मे पवित्र बाल की चोरी के कारण उपस्थित अराजकता—शास्त्री जी सदैव उलझी गुत्थी सुलझाने का रास्ता निकाल सके थे।

वे ही नेपाल के साथ बिगड़ते सम्बन्ध सुधारने गये थे। उनका विनम्र व्यक्तित्व झगड़े सुलझाने में सदा जादू का काम करता था।

कर्मठ प्रधान मन्त्री

प्रधान मंत्री बनने के बाद उन्होने स्पष्ट घोषणा की थी कि हमारा रास्ता साफ है, मार्ग स्पष्ट है। हम देश के समाजवादी समाज की स्थापना तथा विदेश मे सभी से मित्रता चाहते है। अपने प्रधान मन्त्रित्वकाल में शास्त्री जी ने बढ़ती अन्न को कीमते, अन्न को समस्या, भाषा सम्बन्धी उपद्रव पाकिस्तान का कच्छ और कश्मीर पर आक्रमण आदि समस्याये आई तो भी उन्होने विदेशों से अपने सम्बन्ध सुधारने मे कुछ कसर न उठा रखी। लका के भारतीयो की समस्या, बर्मा से मैत्री, पाकिस्तान से ताशकद मे मैत्री का हाथ जहाँ अपने पड़ौसी देशो से मैत्री बढ़ाने की दिशा मे कदम थे, वहाँ सोवियत रूस से मैत्री दृढतम आधार पर स्थापित करना, कनाडा, युगोस्लाविया आदि से मैत्री सम्बन्धों को दृढतर आधार प्रदान करना उनकी मैत्री बढाने के प्रयासो की परिणति कही जा सकती है। शास्त्री जी के १८ महीनो के सक्षिप्त प्रधान मन्त्रित्वकाल मे भारत की राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय जगत् म एक गरिमा बनी थी, उसका प्रभाव बढ़ा था। पहली बार कश्मीर पर अमेरिका तथा ब्रिटेन के रवैये मे परिवर्तन आया था।

इसीलिए ऐसे जनप्रिय, भारत माँ के गौरव लालबहादुर शास्त्री को 'भारतरत्न' उपाधि देने की घोषणा करते-करते दार्शनिक राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन का गला रूँध गया, रेडियो पर भाषण करते-करते हट जाना पड़ा तो क्या आश्चर्य। भारत माँ अपना रत्न खो चुकी, अब 'भारतरत्न' बना कर उस कर्मयोगी को नही, हम अपने आपको ही धन्य कर रहे है।

भारत माँ की कोख वंध्या नही है, वीर सपूत आकर राष्ट्र का नेतृत्व करेगा ही, किन्तु शास्त्री जी के आकस्मिक निधन से राष्ट्र एक बार फिर सकटपूर्ण घड़ी मे पड़ गया है।

किसानों का इस समय एक ही नारा होना चाहिए—"ज्यादा पैदा करो और ज्यादा बेचो।"

— लालबहादुर शास्त्री

अमृतलाल चौरे

महापुरुष

कर्मण्यकर्म य. पश्येदकर्मणि च कर्म यः ।
स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत ।।
यस्य सर्वे समारम्भा कामसकल्पवर्जिता. ।
ज्ञानाग्निदग्धकर्माण तमाहुः पडित बुधा. ।।

जव जव भी मानवो के सामने कठिनाइया आई है या किसी प्रकार का सकट उत्पन्न हुआ है, तव-तव किसी न किसी रूप मे कोई महापुरुष अवतरित हुआ है और उसने अपने सत्कार्यो एव ज्ञान के सचित भण्डार द्वारा मानवो का उचित मार्ग-दर्शन किया है तथा अपनी उज्ज्वल यशः पताका सर्वदा के लिए फहराती छोडकर, अनुकरण की प्रेरणा देते हुए अमर हो गया है, यह परम्परा विश्व के इतिहास मे हमेशा ही लिखी गई है एव लिखी जावेगी ।

यह कहना अनुचित नही होगा कि हमारे लोकप्रिय स्व० श्री लालवहादुर शास्त्री जी भी महापुरुषो मे से ही थे । २ अक्टूवर सन् १९०४ मे वे अवतरित हुए । उनका एक ऐसे परिवार मे अवतरण हुआ जो निधनता की भयकर आग से सतप्त था । वे उस आग की लपटो मे झुलसते, हँसते-खेलते आगे वढते रहे । कौन जानता था कि वह आग उनके लिए वरदानस्वरूप सिद्ध होगी ?

१८ माह की उम्र मे ही उनके पिताजी की उनके ऊपर से छत्रछाया सर्वदा के लिए लुप्त हो गई थी और १८ माह की ही अवधि मे उनकी हमारे ऊपर से, उनके प्रधान मन्त्रित्व की छत्रछाया एक दुःखद घटना के साथ लुप्त हो गई । कितनी समता है, इस १८ माह की कुअवधि मे ।

१७ या १८ वर्ष की उम्र . सन् १९२१ : से ही उनका 'असहयोग आन्दोलन' के साथ, उनके जीवन का एक नया अध्याय प्रारम्भ हुआ था । आन्दोलन मे सक्रिय भाग लेने के आरोप मे उन्हे जेल भोगना पड़ी । जेल के छुटकारे के वाद काशी विद्यापीठ मे अध्ययनोपरान्त वे 'शास्त्री' की उपाधि से विभूपित हुए । स्व० श्री नेहरू के वाद कौन ? इस वहुचर्चित प्रश्न के उत्तर के पूर्व वे भिन्न-भिन्न प्रकार से, भिन्न-भिन्न रूप मे राजनैतिक क्षेत्र से भारतीयो का सेवा करते रहे । और स्वर्गीय नेहरू के वाद कौन ? इस प्रश्न का उत्तर, 'श्री शास्त्री', का स्वय उन्होने ही वास्तविक उत्तर हमको दिया । उन्होने गाधी और नेहरू की परम्परा को अपनाया, उनके आदर्शो का पालन किया ।

वे आजन्म साधनारत रहे, स्वयं की उपेक्षा की किन्तु देश-हितार्थ देश-सेवा के आगे स्वय अपने आपको भूल गये थे, वे दृढ़ मनोवल के व्यक्ति थे । गम्भीर से गम्भीर परिस्थितियो का सामना

करने को उनमें अद्भुत क्षमता थो । उनको वाणी में जादू था, वे स्पष्टवादी थे ; उनको सिद्धि प्राप्त होने में उनकी, नम्रता, विवेकशोलता, कार्यकुशलता, देश के प्रति वफादारी, अथक परिश्रम आदि का उनमें बाहुल्य होना था ।

शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व मे उनका अटूट विश्वास था । उनका कथन है, "भारत जैसे देश के लिए जो अपना आर्थिक निर्माण करने मे लगा हुआ है, शान्ति का विशेष महत्व है । गांधी जी और जवाहरलाल जो के देश के सामने दूसरा लक्ष्य हो ही क्या सकता है ? अगर सारो मानव जाति को बात सोचें, तो शान्ति का महत्व और भी बढ जाता है । हम सच्चाई को आँखो से ओझल नहीं कर सकते कि अब दो देशों के बीच ही लड़ाई नहीं होगो । अब अगर लड़ाई की आग भड़को तो वह सारे संसार को लपेट लेगी ।

अपने उक्त कथन को साकार करने के लिए उन्होने ताशकन्द जैसे महान् ऐतिहासिक समझौते पर हस्ताक्षर कर दिये अपने प्राणो तक को दिनाक ११-१-६६ को आहुति दे दी । स्वर्ग पहुँच कर सम्भवतः वे उसकी प्रतिक्रिया देखते हों ?

वे अन्याय के आगे वज्र-सम थे, वे अपनो बात के धनो थे । इस बात को पुष्टि, नई दिल्लो में ५ अक्टूबर ६५ को रामलोला समारोह मे विजयादशमो पर विशाल जनसमूह को सबोधित करते हुए उनके द्वारा दिये गये भाषण से होती है, जिसकी कुछ पंक्तियाँ है :—

"कोई भी ताकत हमे अपनी जमीन का चप्पा भर हिस्सा भो अलग करने के लिए मजबूर नहीं कर सकतो । हम किसी अन्य देश की जमोन पर कब्जा करने को जरा भो इच्छा नही रखते, किन्तु हमारा सुदृढ़ सकल्प है कि हम किसी के दबाव से, अपने देश को जमोन का हिस्सा कभो किसो को नहीं लेने देगे ।"

आक्रमणकारो, अन्याय और असत्य के विरुद्ध लड़ना हमारा इतिहास बताता है । अपने धार्मिक इतिहास के प्रकाश मे हमारा नैतिक व धार्मिक कर्त्तव्य है कि हम अन्याय के विरुद्ध विश्वास व संकल्प से लड़ें ।

वे महान् मानवतावादी थे, जिसका एक ज्वलंत उदाहरण अपने रेल-मत्रित्वकाल मे हुई रेल-दुर्घटना के परिणामस्वरूप अपने पद से त्यागपत्र दे देना था, यद्यपि उस दुर्घटना के लिए व्यक्तिगत रूप से वे दोषी नही थे तथापि उनके भावुक हृदय को एक गहरी ठेस लगी थी । विदेशी मामलों में भी स्व० शास्त्री जी दृढ़ एवं सफल रहे । विदेशों से भारत के मैत्रीपूर्ण सबध स्थापित करने मे वे सिद्धहस्त थे ।

उनका जीवन सरलता और सादगो से भरपूर रहा । स्वार्थ से कोसों दूर रहकर परमार्थ हो उनका जीवनोद्देश्य रहा था, उस तपस्वो के समान जिसको जोवन भर को सिद्धि की हो खोज करना है, उसे अपने स्वयं के मकान से भी क्या वास्ता । और वास्तव में स्व० शास्त्रो जी भो जोवन भर अपना स्वयं का मकान न बनवा सके, अपने तप को सिद्धि हेतु सतत कार्यरत ही रहे ।

१५ अगस्त सन् १९६५ को दिल्लो में उन्होने उपस्थित जन-समुदाय के बोच अपने भाषण में कहा था, 'हम रहे या न रहे, लेकिन यह झण्डा रहना चाहिए । मुझे विश्वास है कि यह झण्डा रहेगा,

हम और आप रहें या न रहे लेकिन भारत का सिर ऊँचा होगा। भारत दुनिया के देशों में एक बड़ा देश होगा और शायद भारत दुनिया को कुछ दे भी सके।

कितनी महान् देश प्रेम युक्त उनकी भावना थी। हम समस्त देशवासियो के लिए हमेशा हमेशा के लिए एक अमर सदेश एक आह्वान छिपा हुआ है। एक-एक पक्ति मानो गहन अर्थ से पूरित है। स्वाधीनता, मित्रता और शान्ति की स्थापनार्थ, सत्य के अडिग मार्ग, दृढ सकल्प पर वे बलिदान हो गये। उनका कोई दुश्मन नही था। वे सुदृढ किन्तु सरल शासक के रूप में हमारे सामने आये। उनकी आदर्श सेवाओ के लिए, उन्हे मरणोपरान्त भारत के माननीय राष्ट्रपति जी ने 'भारतरत्न' की उपाधि से विभूपित करने का निर्णय किया है।

ऐसे 'भारतरत्न', महापुरुष का असामयिक निधन विश्व के इतिहास में एक महान् क्षति है। उन्हे मै अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए, ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि दिवगत आत्मा को शान्ति प्राप्त हो।

"हमारे महान् नेता का दु खद देहावसान न केवल इस देश की वल्कि सारे ससार की क्षति है। महात्मा गांधी एव पडित नेहरू के आदर्शों के सच्चे अनुयायो वह एक सत्कार्य को समाप्त करने के तुरन्त वाद ही चले गये। उनका मुस्कराता चेहरा, सीधा-सच्चा व्यवहार, शाति के लाखो नोजवानो का प्यार जीत लिया जो नेहरू के वाद उनके सच्चे अनुयाया वन गये। पडित नेहरू के पश्चात् हमारे इस महान् नेता ने हमे जो मार्ग दिखाया उसका अनुशरण करना हमारा कर्तव्य है।"

व्रज सुन्दर शर्मा, शिक्षा-मन्त्री, राजस्थान

रेशमा देवी

संघर्षों में झूलता बचपन

शास्त्री जो का जन्म सन् १६०४ ई० मे मुगलसराय (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। आपको माता जो का नाम श्रोमतो रामदुलारो देवो है। पिता श्री शारदाप्रसाद जो का स्वर्गवास शास्त्रो जो के बाल्यकाल में ही हो गया था।

पिता का वरद हस्त बचपन में ही उठ जाने के कारण इनका बचपन बड़ी कठिनाइयो और संघर्षो में बीता। यही कारण था कि प्रधान मन्त्री होते हुए भी इन्हे अपने पद का लेशमात्र भो अभिमान नही था। इनके हृदय में पिछड़े हुए वर्गों, उपेक्षित और दीन-हीन व्यक्तियो के लिए करुणा का भाव था। संयमशोल थे, आरम्भ से ही आप बड़े परिश्रमी थे। आर्थिक सकटों और प्रतिकूल परिस्थितियो के बोच भो शास्त्री जो सदैव मुस्कराते रहे। बचपन मे अपनो पढाई को सारो पुस्तकें आप बेत के छोटे से बक्स मे रखते थे।

आवश्यकता की चोजे नहो के बराबर थी। पहनने के कपड़े भो सीमित मात्रा मे थे। अपने कपड़े वे स्वयं धोते थे और तह लगा कर रख देते थे।

सिर के बालो को बचपन से हो छोटा रखा, इसलिए कघी की जरूरत आपको कभो नही पड़ी। अपने छात्र जीवन मे छाता, बरसाती या धूप के चश्मे जैसी वस्तुओ की आपने आवश्यकता महसूस नही को। जब आप हरिश्चन्द्र स्कूल मे विद्या अध्ययन करते थे, तो कभो-कभो आपको तैर कर गगा नदी पार करके स्कूल जाना पड़ता था क्योकि नाव वाले को देने के लिए आपके पास पैसे नही होते थे। इसी प्रकार एक दिन स्कूल मे पिकनिक का प्रोग्राम बनाया गया। सभी बच्चो ने अपने-अपने नाम दे दिये, परन्तु उत्सुक बालक लालबहादुर ने बडे ही सहज ढग से कहा—"मास्टर जी, मेरे पास तो एक ही पैसा है।'

अपने छात्र जीवन के दिनो मे बहुत बार उन्हे भूखा रहना पड़ा था, क्योकि उन दिनो वे अपना भोजन स्वयं पकाते थे। यह कहा करते थे कि "कई बार तो मेरा अधिकाश समय दाल पकाने में ही बर्बाद हो जाता था।"

इन विषम परिस्थितियों का भी बालक लालबहादुर ने बड़ी दृढ़ता से मुकाबला किया। इनके अध्ययन पर आर्थिक अभाव का प्रभाव नही पड़ा। यह बहुत हो मेधावी और कर्मशोल छात्र थे। अपने स्कूल के सभी विद्यार्थियों मे वे बहुत चतुर एवं कुशाग्रबुद्धि थे। सोलह वर्ष की अवस्था मे महात्मा

गांधी के ग्राह्वान पर इनका चित्त स्थिर नही रह सका ग्रौर विना हाईस्कूल की परीक्षा दिये वे ग्रसहयोग ग्रान्दोलन मे कूद पडे। परन्तु, उनकी ज्ञानार्जन को भूख मिटी नही थी ग्रौर कई बार जेल जाने के वाद ग्रवसर मिलते ही उन्होने काशी विद्यापीठ मे भर्ती होकर शास्त्री की परीक्षा पास की।

ग्रपनी वाल्य ग्रवस्था मे दयनीय परिस्थितियो मे भी ग्राप स्कूल के रगमच पर ग्रभिनय करते थे। ग्रापका ग्रभिनय वडा स्वाभाविक ग्रौर परिमार्जित होता था।

उनके इस जीवन मे उन्हे परिस्थितियो से जूझते रहना ग्रौर उन पर विजय प्राप्त करना सिखाया था। हर गम्भीर से गम्भीर स्थिति मे भी उनके चेहरे पर मृदु मुस्कान रहती थी। उनका प्रारम्भिक जीवन, सघर्षो मे झूलता एक ऐसा जीवन था, जो हमे दृढता, स्वावलम्बी, सयमी ग्रौर परिश्रमी वनने की शिक्षा देता है।

ग्राज हमे ग्रपना यह नारा वना लेना चाहिये कि जहाँ पहले एक दाना उगता था, वहाँ ग्रव दो उगेगे। हमे दूसरे देशो पर निर्भर नही रहना चाहिए। हमे ग्रात्मनिर्भर ग्रौर शक्तिशाली वनना है ग्रौर हम वन कर रहेगे।

लालवहादुर शास्त्री

सुशीलकुमार जैन

खेल और खिलाड़ियों के रहनुमा

राजनीति का खिलाड़ी ताशकन्द मे वाजी जीत कर चिरनिद्रा में लीन हो गया। राजनीतिज्ञों ने अपना नेता खोया, पर देश का प्रत्येक खिलाडी अपने रहनुमा के अचानक निधन का समाचार सुन कर स्तब्ध रह गया।

देश के खेल संघो ने अपने दिवंगत नेता के शोक मे झण्डे झुका दिये। अधिकतर खिलाड़ी अपने खेल जारी न रख सके। उन्हे कुछ ऐसा महसूस हुआ मानो उनके खेलने की शक्ति ही उड़ गई हो।

राष्ट्रीय टैनिस चेम्पियनशिप के आयोजकों ने दिल्ली मे आज और कल के समस्त मैच तुरन्त स्थगित कर डाले।

यो लालवहादुर शास्त्री देश के प्रधान मंत्री थे और प्रत्येक खेल से उनको समान ही लगाव था, पर खासतौर पर क्रिकेट वालो को भारी धक्का लगना स्वाभाविक है।

फिरोजशाह कोटला गवाह है। दिल्ली मे कोई टैस्ट क्यों न हो, प्रधान मन्त्री अत्यन्त व्यस्त रहने के वावजूद नित्य प्रति टैस्ट देखने न पधारे--यह मुमकिन नही। १९६४ मे इंगलैण्ड भारत के बीच खेले गये टैस्ट मैच को हर रोज देखने वालों में श्री लालवहादुर शास्त्री भी थे। पिछले वर्ष न्यूजीलैण्ड की क्रिकेट टीम भारत आयी और प्रधान मंत्री नाजुक मौके पर अत्यन्त व्यस्त रहते हुए भी न केवल खिलाड़ियो से मिलने फिरोजशाह कोटला मैदान पर पधारे, वल्कि टैस्ट देखने का चाव भी न छोड़ सके।

हाल ही नयी दिल्ली मे सम्पन्न हुए लन्दन स्कूल और भारतीय स्कूल टीमों के टैस्ट का उद्-घाटन करना प्रधान मन्त्री ने स्वीकार कर लिया था, पर विशेष कारणवश उन्हे दिल्ली से वाहर जाना पड़ा।

क्रिकेट उनका प्रिय खेल था, पर इसका मतलव यह कदापि नहीं कि अन्य खेलों मे उनकी रुचि न हो।

प्रधान मन्त्री सुवोध मुखर्जी फुटवाल टूर्नामेन्ट, राजन सेन गोल्ड फुटवाल, राजेन्द्रप्रसाद मेमो-रियल हाकी टूर्नामेन्ट आदि अनेक के सरक्षक थे। व्यस्त प्रधान मन्त्री सुव्रत कप के विजेता स्कूल छात्रों को इनाम वांटने हर वर्ष कार्पोरेशन स्टेडियम आना नहीं भूलते थे। सुव्रत फाइनल मे पहुँचने वाली टीमों को सदैव यही गर्व रहता था कि उनके खेल को शास्त्रीजी देखने आयेंगे।

खेलो के प्रेमी शास्त्री जी वैडमिन्टन के खेलों के खिलाड़ी थे। हाल ही मे नयी दिल्ला मे आयोजित नेहरू वैडमिन्टन चेम्पियनशिप के अवसर पर शास्त्री जी ने कहा था कि जेल मे पडित नेहरू के साथ वे वैडमिन्टन खेला करते थे। इनके "शाट" मुलायम अवश्य पड़ते थे, पर अचूक निशाने पर।

तैराकी शास्त्री जी का वचपन का शौक था। अपने गॉव रामनगर से आठ मील दूर विद्या-अध्ययन को बनारस जाया करते थे। कभी-कभी देर हो जाने पर रास्ते को छोटा करने की खातिर गगा को तैर कर पार कर लिया करते थे। कितावो के थैले को सिर पर रख कर शास्त्री जी को तैरने का अभ्यास था। यही नही, प्रात काल ५ वजे उठ कर शास्त्री जी नित्य प्रति व्यायाम के प्रवल पक्षपाती रहे हे।

क्रिकेट कन्ट्रोल वोर्ड के उपाध्यक्ष श्री रामप्रकाश मेहरा ने दिल्लो मे वताया कि भारताय क्रिकेट ने अपना सर्वश्रेष्ठ सरक्षक खो दिया। श्री मेहरा ने गममीन शव्दो मे कहा - "मुझे याद है, जव वैस्ट इण्डोज के भारत भ्रमण के लिए में उनसे मिलने गया था तव उन्होने वडे शान्त होकर मेरे अनुरोध को सुना। एक वार नही, मैं उनसे तीन वार मिला। भारत सरकार के हर विभाग ने हमारी मॉग को ठुकरा दिया, पर प्रधान मत्री शास्त्री जी के ही निजी हस्तक्षेप पर हमे १८ हजार पौण्ड को विदेशी मुद्रा मिल सकी थी।"

दिल्लो फुटवाल सघ के सचिव श्री एस० एल० घोप के अनुसार फुटवाल ने अपना सवसे प्रेमी व्यक्ति खो दिया। वे इतने महान् थे कि अत्यधिक व्यस्त रहने के वावजूद जव भो हम कोई प्रस्ताव लेकर पहुँचते, हमे निराश नही होना पड़ता था।

लेडी हार्डिग मैदान पर ओलिम्पिक में निर्णायक गोल दागने वाले मोहिन्दरलाल का इतना स्वागत नही हुआ, जितना कि १९६४ के राष्ट्रीय हाकी फाइनल मे प्रधान मंत्री शास्त्री जी का हुआ था। दर्शको ने जव विधिमत्री श्री अशोक सेन से हिन्दी मे वोलने का अनुरोध किया, तो शास्त्री जी के चेहरे पर हल्की मुस्कान विखर उठी। श्रीसेन हिन्दी मे वोले और वाद मे शास्त्रीजी ने हार्डिग मैदान के दर्शको को वधाई देते हुए कहा कि "आज मुझे मालूम हो गया कि श्री अशोक सेन हिन्दी भी वोल सकते हैं।"

शास्त्री जी देश के नेता ही नही, वल्कि वास्तव मे सच्चे खिलाड़ी थे।

हनुमानसिंह वडिया

सफल समाज शास्त्री

भारत मे अनेक महापुरुष समय-समय पर पैदा हुए है। बीसवी सदी मे ही अनेक महापुरुष इस धरा पर उतरे और उन्होने अपने-अपने क्षेत्र मे महान उपलब्धिया प्राप्त कर विश्व को आश्चर्य में डाल दिया। गांधी, नेहरू की पक्ति मे आने का गौरव कतिपय व्यक्तियो को ही प्राप्त हो पाया है, और उनमें श्री शास्त्री का स्थान इतिहास मे हमेशा के लिए अग्रगन्य बन गया है। श्री शास्त्री एक राजनैतिक नेता के रूप में सामने आये, उनका कार्यक्षेत्र भी राजनीति ही रहा और उनकी अन्तिम महान सेवा भी ताशकन्द के रूप मे राजनैतिक सेवा ही थी। परन्तु राजनीति की महानतम एव जटिलतम गुत्थियों के मध्य रहने पर भी वे सबसे अधिक समाजसेवी व सामाजिक प्राणी सिद्ध हो पाये। यही कारण है कि वे अल्पकाल में ही केवल अपने व्यक्तित्व एवं कार्यों के द्वारा देश-विदेश के कोटि-कोटि व्यक्तियों के [illegible] बन गये थे। यहा उनके सामाजिक पक्ष को प्रस्तुत करने का लघुतम प्रयास किया जा रहा है :

को विरासत मे ताशकन्द सन्धि के रूप मे शान्ति देकर गये परन्तु परिवार पर ऋण छोड़ गये। यही कारण है कि शास्त्री जी को वास्तव मे भारत के करोडों लोगो का वास्तविक नेता कहा जा सकता है।

श्री शास्त्री के लिए ऊँच-नीच मे कोई भेदभाव नही था। महात्मा गाधी के समान ही वे भी इस ऊँच-नीच की खाई को हमेशा-हमेशा के लिए पाट देना चाहते थे। यही कारण था कि वे उच्चता व प्रभुता प्राप्त करके भी साधारण से ही बने रहे। प्रधान मन्त्री के लिए निर्वाचित होने वाले शास्त्री ससदीय भवन के मध्य कक्ष मे काग्रेस की बैठक मे देर से पहुँचने के कारण सीढी पर ही बैठ गये थे। वह २ जून १९६४ का दिन कितना महान था कि जिसने भारतीय परम्परा के प्रतीक, गाधी के सच्चे अनुयायी एव पूर्ण समाजवादी श्री शास्त्री को अपना प्रिय नेता निर्वाचित किया। कहा ऐसा हुआ है कि प्रभुता प्राप्त कर मनुष्य को गर्व न आया हो ? परन्तु शास्त्री के लिए यह ऐसा नही कहा जा सकता। इस प्रकार ऊँच-नीच, पद-प्रतिष्ठा, मान-मर्यादा के छल प्रवचना मे न फस कर एक सीधे सादे राष्ट्र सेवक के रूप मे ही वे समाज के सम्मुख आते रहे।

श्री शास्त्री पूर्णरूप से भारतीयता की आत्मा को पहिचानते थे। उनका हर सुझाव प्रयोगवादी होता था, वे केवल सैद्धान्तिक बाते ही नही करते थे। यही कारण था कि राष्ट्रीय सकट व भारत-पाकिस्तान के सघर्ष के समय उन्होने कितना नम्र सुझाव दिया कि राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए प्रत्येक परिवार प्रतिदिन ३ पैसे अर्पित करे। सुझाव सुनकर नेतागण हस सकते थे कि तीन पैसो से क्या सुरक्षा कोष बन जायगा। पर यथार्थ के धरातल पर यदि दृष्टि गड़ाकर विचार किया जाय तो भारत के दस करोड परिवार यदि प्रतिदिन तीन पैसे मात्र राष्ट्रीय सुरक्षा कार्य के लिए अर्पित करे तो ३० लाख रुपया प्रतिदिन की आय कोष मे हो सकती है जिसका अर्थ हुआ कि वर्ष भर मे एक अरब रुपया राष्ट्रीय सुरक्षा कोष मे एकत्र हो सके। यह धन राशि भारत को जहा एक ओर चीन-पाकिस्तान के भय के प्रति सावधान करने एव सक्षम बनाने मे बहुत बड़ी भूमिका अदा कर सकती है, वहा दूसरी ओर इस धन राशि के अर्पित करने वाले प्रत्येक परिवार मे राष्ट्र के लिए कुछ करने की भावना का विश्वास पैदा होता है जिससे राष्ट्रीय भावना, एकीकरण की समस्या का समाधान हो सकता है। यह केवल मात्र श्री शास्त्री की ही देन है। उनका यह छोटा सा सुझाव भारत को कितनी बड़ी समस्या से ससम्मान मुक्ति दिला सकता है।

समाज का एक अग मानने के कारण उन्होने अपने आपको व अपने परिवार को विशिष्ठ सुविधाएँ प्राप्त करने के लिए कोई प्रयास नही किया। यहाँ तक कि उनके पुत्र साधारण से विद्यालयो मे जो सामान्य छात्रों के लिये हैं, पढते रहे हैं। इसके पीछे श्री शास्त्री का मूल विश्वास यह था कि वे जनता के, जनता के बीच मे जनता के समान ही बनकर रहे।

जय जवान, जय किसान का उनका नारा राष्ट्रीय आन्दोलन के समय इन्कलाब जिन्दाबाद के नारे के समान ही क्रान्तिकारी विचारधारा से परिपूर्ण है। जवान व किसान देश के दो महान वर्ग परन्तु जिन्हे सामाजिक प्रतिष्ठा नही प्राप्त हो पाई थी, श्री शास्त्री के कारण उन्हे आज जो सम्मान मिल रहा है वह सामाजिक परिवर्तन की दृष्टि से महत्वपूर्ण सिद्ध होगा। ऐसा विश्वास किया जा सकता है।

महात्मा गाधी के ही समान उन्होने भी श्रम को पुन. प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया। श्रम को प्रतिष्ठित करने की दृष्टि से विश्व एवं राष्ट्र की अनेक जटिल समस्याओ मे व्यस्त रहने पर भी स्वय अपने निवास स्थान मे अपने श्रम एव करकमलो द्वारा गेहूँ के पौधे लगाये। यह हमारे

रंगनाथ पांडेय

फिल्म जगत के मार्ग-प्रदर्शक

भारतीय फिल्म उद्योग को सपनो को दुनिया से उतारकर धरती को वास्तविकता की ओर आने के लिए प्रेरित करने का बहुत कुछ श्रेय हमारे स्व० प्रधानमत्री श्री लालबहादुर शास्त्री को है। शास्त्रीजी को मिट्टी से प्यार था। भारतीय सस्कृति को विदेशी जामा मे ट्विस्ट करते देखकर उन्हे हार्दिक क्लेश होता था। वे फिल्म बहुत कम देखते थे किन्तु भारतीय फिल्मो के स्तर को सुधारने तथा देश की माग के अनुसार प्रेरक एव शिक्षाप्रद फिल्मो के निर्माण के लिये वे बराबर सलाह दिया करते थे।

भारतीय फिल्म उद्योग को उनका भारी स्नेह प्राप्त था। जब जब किसी ने लोकनायक श्री शास्त्रीजी से मिलने की इच्छा प्रकट की उसे कभी कठिनाई अथवा परेशानी नही हुई।

शास्त्रीजी ने प्रेरक फिल्मो के निर्माण को प्रोत्साहन दिया। उनका कहना था कि फिल्मो का लक्ष्य केवल मनोरजन ही नही होना चाहिये बल्कि फिल्मे शिक्षाप्रद जनप्रेरक एव सस्कृति प्रधान होनी चाहिये। उन्होने समय-समय पर फिल्म निर्माताओ को सलाह दी कि वे जीवन की वास्तविक झाकी प्रस्तुत करे और राष्ट्रीय मान-मर्यादा की रक्षा के लिए जन जागरण पैदा करने वाली फिल्मो का निर्माण करे।

पाकिस्तानी आक्रमण और चीन की धमकी का मुँह तोड़ जवाब देने के लिए उन्होने जनता मे जो चेतना पैदा की उससे फिल्म उद्योग भी अछूता नही रहा। शास्त्रीजी के स्नेह के कारण उनके आश्वासन पर ५० से अधिक प्रेरक फिल्मो के निर्माण की घोषणाएँ हुई। मद्रास तथा अन्य फिल्म निर्माण केन्द्रो मे फिल्म कलाकारो ने यथा सभव धन तथा आभूषण दिये।

शास्त्रीजी यह जानते थे कि फिल्म जन सम्पर्क, प्रचार, शिक्षा एव जनजागरण का एक प्रभावशाली साधन है। इसलिये उन्होने निर्माताओ को बराबर यही राय दी कि वे ऐसी फिल्मे बनाये जो जनता के कल्याण के लिए हो। निर्माता-निर्देशक ख्वाजा अहमद अब्बास की बाल फिल्म 'अपना घर' के राजधानी मे उद्घाटन के समय शास्त्रीजी ने बालको के लिये शिक्षाप्रद फिल्मो के निर्माण पर जोर दिया था। उनका कहना था कि हमे राष्ट्र के भविष्य के लिए अपनी भावी पीढ़ी को उत्साही परिश्रमी लगनशील और अनुशासित बनाना जरूरी है। उन्होने इस फिल्म को देखा और फिल्म के उद्देश्य की सराहना करते हुये भविष्य मे ऐसे बाल चित्रो के निर्माण की आशा प्रकट की। इस चित्र के विषय मे शास्त्रीजी के मत को अन्तर्राष्ट्रीय बाल चित्र समारोह (गिजोन-स्पेन) तथा जोट वाल्डोफ बालचित्र समारोह में यूनेस्को की शाखा सोडालक ने इस चित्र को उच्च पुरस्कार देकर पुष्टि की।

"शहीद भगतसिह के जीवन पर आधारित फिलम 'शहीद' के निर्माण में शास्त्रीजी का योग अविस्मरणीय रहा है। उक्त चित्र के निर्माता ने शास्त्रीजी के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुये कहा, 'एक समय हमे तुगलकाबाद के किले मे शूटिंग करने की आवश्यकता आ पड़ी। हमें सम्बन्धित अधिकारियो से संतोषजनक सुविधा नहीं मिली। तब हम शास्त्रीजी के निवास स्थान पर यह सोचकर गये कि वे हमारे चित्र के उद्देश्य को देखते हुये हमें अपने सहयोग से वंचित न करेंगे। हुआ भी यही। शास्त्रीजी ने शहीद भगतसिह का नाम सुना ही था कि उनके मुख से स्वीकृति के शब्द निकल पड़े। यह उनकी श्रद्धाजलि थी उस अमर शहीद भगतसिह के प्रति जिसने भारत माँ के चरणों में हँसते-हँसते अपने को बलि चढा दिया था।

किन्तु शास्त्रीजी फिलम क्षेत्र की बुराइयों से भी अनभिज्ञ न थे और इसलिए जब-जब उनके समक्ष किसी फिलम निर्माता अथवा कलाकार ने किसी सरकारी कार्रवाई के विरोध मे याचना की, शास्त्रीजी ने उसमे कोई हस्तक्षेप नही किया। वह इसलिये क्योकि शास्त्रीजी अपने मंत्रिमण्डल के सदस्यो की ईमानदारी एवं कार्यकुशलता में दृढ़ विश्वास रखते थे। उन्होंने आयकर विभाग, स्वराष्ट्र मन्त्रालय तथा राज्य सरकारो की फिलम से सम्बन्धित कार्यवाइयो मे कोई हस्तक्षेप नही किया। फिर भी वे उन सुधारों के पक्षपाती रहे जिनसे भारतीय फिलमों का स्तर ऊँचा उठे।

जननायक शास्त्रीजी का निधन भारतीय फिलम व्यवसाय तथा उससे सबन्धित हजारो व्यक्तियो तथा करोड़ो दर्शको के लिए असह्य घटना है। समस्त भारतीय फिलम निर्माण केन्द्रों ने दो दिन के लिये सम्पूर्ण कार्य स्थगित कर जन नेता शास्त्रीजी के प्रति जो श्रद्धाजलि अर्पित की वह उनके प्रति अटूट प्रेम की द्योतक है।

शास्त्रीजी अब हमारे बीच नहीं रहे किन्तु उनका स्नेह एवं उनके शब्द आज भी हमें यह कहने के लिए प्रेरित कर रहे है कि उनके प्रति सच्ची श्रद्धाजलि तभी होगी जब हमारे फिलम निर्माता राष्ट्रहित का ध्यान रखते हुये शिक्षाप्रद तथा जनप्रेरक फिलमों का निर्माण करे।

मनोजकुमार

प्रेरणा के स्रोत शास्त्री जी

शास्त्री जी से मै पहली वार करीब पॉच साल पहले मिला था। वे तब प्रधान मन्त्री नही थे और मैं भी अभिनेता तो जरूर बन गया था; किन्तु नाममात्र का ही। उनसे मिलने के लिए मै अपनी सास के साथ गया था और परिचय मे केवल इतना ही कह पाया था कि बम्बई मे रहता हूँ।

इसके बाद भी कई बार शास्त्री जी से मिलने का अवसर मिला, क्योंकि उनके बडे पुत्र हरि-कृष्ण मेरे बहुत अच्छे दोस्त है। पिछली दिवाली को भी मै उनके घर गया था। लेकिन शास्त्री जी से अधिक जान-पहचान और मुलाकात 'शहीद' फिल्म के निर्माण के दौरान ही हुई। इस फिल्म और इस यूनिट के साथ उनका पूरा सहयोग और आशीर्वाद था। उनसे हमे प्रोत्साहन भी प्राप्त हुआ और प्रेरणा भी मिली। शायद उन्ही की प्रेरणा के कारण हम 'शहीद' को इतनी प्रेरणादायक फिलम बना पाये।

मै शास्त्री जी को बाबूजी कहा करता था। हरि मेरा दोस्त है, वह बाबूजी कहता था, सो मै भी बाबूजी कहता था। बाबूजी पुकारना मुझे अधिक पसन्द और प्रिय भी था। वह मुलाकात आज मुझे बहुत याद आ रही है, जब 'शहीद' की शूटिंग के सिलसिले मे हम लोग दिल्ली गये थे। शास्त्री जी ने हमे शाम को घर पर बुलाया था। यद्यपि हम लोग तनिक देर से पहुँचे तथापि वे हमारा इन्त-जार कर रहे थे। मैंने शास्त्री जी से सबका परिचय कराया। वे सभी से बडे प्यार से मिले और मुस-कराते हुए बोले—"आप बडे-बडे कलाकार आये हैं, आप लोगो के साथ तसवीर खिचवानी है।" कई तसवीरें उन्होने हमारे साथ खिचवाईं। उनकी यह सादगी हमारे लिए बहुत बडा अर्थ रखती थी। बड़ी ही प्रेरणादायक बात थी।

और, दिल्ली मे 'शहीद' के प्रीमियर की रात उनसे मेरी आखिरी मुलाकात की रात थी। मै तीन घण्टो तक उनके पास बैठा रहा। कितना खुशकिस्मत था मै। वे आए तो स्टेज पर माइक का इन्तजाम देख कर बोले—"बेटा, ये सब किसलिये है ?"

मैंने कहा—"बाबूजी, आप आये है इसलिए हमारी तरफ से यह आवश्यक था।"

"लेकिन मै तो सिर्फ फिलम देखने के लिए आया हूँ। देख कर चला जाऊँगा, कोई भाषण नही दूँगा।" उन्होने कहा।

"जैसा आप उचित समझे।" मैं बोला।

डॉ० लक्ष्मीनारायण सुधांशु

श्री लालबहादुर शास्त्री

जो लोग अंग्रेजी शिक्षा और पाश्चात्य संस्कृति के अभ्यस्त है, जो उसी चश्मे से भारतीय जीवन और भारतीय चिन्तन को देखते है और जो भारतीय समाज और संस्कृति को पाश्चात्य संस्कृति और समाज से हीन मानते है, उनका विश्वास था कि प० जवाहरलाल नेहरू के बाद भारत मे प्रजातान्त्रिक व्यवस्था का अन्त हो जायगा। उनकी यह मान्यता थी कि प्रजातन्त्र पश्चिम के समाज की उपज है, वह भारतीय वातावरण मे पनप नही सकता। वे यही समझते थे कि नेहरू हैरो और केम्ब्रीज मे शिक्षित हुए थे, उनके साथी सगी उसी वातावरण की उपज थे और नेहरू के बाद वैसा उनको कोई दिखाई नही देता था। इसीलिए वे ऐसा मानते थे कि नेहरू के बाद भारतवर्ष मे प्रजातन्त्र का भविष्य नही है। किन्तु नेहरू के बाद लालबहादुर शास्त्री को प्रधान मन्त्री चुनकर भारतवर्ष ने ससार को बता दिया कि भारतीय जीवन और समाज पद्धति के अन्दर भी प्रजातन्त्र के मूल प्रेरकभाव विद्यमान है। इसीलिए एक साधारण गरीब घर मे पैदा हुआ; भारतय ढग से काशी विद्यापीठ मे पढा हुआ, साधारण कुर्त्ता-धोती का अभ्यस्त, बहुत छोटी कद का और सौन्दर्य के मानदण्डों से अलग व्यक्ति भी भारतीय प्रजातत्र को न केवल साधारण परिस्थिति मे; बल्कि असाधारण युद्ध की भी स्थिति मे कुशलतापूर्वक सचालित कर सकता है। लालबहादुर शास्त्री का सफल राजनीतिक जीवन न केवल उनके व्यक्तिगत महत्व को ससार के नक्शे पर प्रतिष्ठित करता है, बल्कि भारतीय सस्कृति में निहित उस आध्यात्मिक सत्य को भी प्रतिपादित करता है कि मानव उस महान विश्वात्मा का अंश है, उसके अन्दर भी महानता के सभी गुण सन्निहित है, और यदि कोई व्यक्ति अपने आपको सम्पूर्णभाव से उस विश्वात्मा (पुरुषोत्तम) को समर्पित करके अपने आपको उस विश्वात्मा का यन्त्र मानकर सत्य और विश्वास के साथ मानव की सेवा मे—लोक सग्रार्थ— नि.शेष कर दें, तो उसके अन्दर वह अशेष शक्ति प्रस्फुटित हो सकती है।

लालबहादुर शास्त्री का राजनीतिक जीवन सन् १९२१ के असहयोग आन्दोलन से आरम्भ होता है। जब असहयोग आन्दोलन आरम्भ हुआ उस समय वे बनारस के हरिश्चन्द्र स्कूल मे पढते थे। उन्होंने गाधी जी के आह्वान पर अंग्रेजी स्कूल की पढाई छोड़ दी। उस समय बनारस उत्तर प्रदेश की राजनीतिक गतिविधि का केन्द्र हो रहा था। डॉ भगवानदास, आचार्य कृपलानी, बाबू शिवप्रसाद गुप्त, श्री श्री प्रकाश और डॉ० सम्पूर्णानन्द जी के नेतृत्व मे भारत की ऊर्ध्वचेतना अपने आपको अभिव्यक्त कर रही थी। कहते हैं कि उस समय काशी मे इतने लोग जेल गये कि जेल मे जगह की कमी हो गयी। जेल का फाटक प्राय: खुला रखा जाता था, जिससे जिसे घर जाना हो वह चला जाय। उनमे लाल-बहादुर भी एक थे। इसके बाद बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने दस लाख की सम्पत्ति समर्पित कर काशी विद्यापीठ की स्थापना की। इस विद्यापीठ की शिक्षा का माध्यम हिन्दी था; यहाँ की शिक्षा की सम्पूर्ण

व्यवस्था भारतीय थी, इस विद्यापीठ की व्यवस्था में (संकल्प में भी) यह निहित थी कि न केवल अंग्रेजी राज से यह विद्यापीठ किसी प्रकार की सहायता नहीं लेगा; बल्कि स्वराज्य सरकार होने पर उससे भी किसी प्रकार को सहायता नहीं ली जायगो। विद्यापीठ का उद्देश्य था, औपनिषिदिक भावना के अनुकूल सम्पूर्ण विश्व चेतना को समन्वित देखने वाले स्वाधीन चेता विचारक और नेता पैदा करना। इस विद्यापीठ के प्रथम आचार्य डॉ० भगवान दास जी थे और उनके बाद हुए आचार्य नरेन्द्रदेव। इसी विद्यापीठ के प्रथम सत्र के विद्यार्थी थे, लालबहादुर शास्त्री, जो भारतीय वातावरण में पले, पढ़े और निर्मित हुए।

स्वर्गीय लाला लाजपतराय जी ने देश सेवा में अपना सर्वस्व समर्पित कर देने वालों को एक संस्था बनाई थी जिसका नाम था—लोक सेवक मडल। इस संस्था के जब राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन अध्यक्ष हुए तब उन्होंने काशी विद्यापीठ के कई स्नातकों को इसका अजोवन सदस्य बनाया, इनमें से दो व्यक्ति ऐसे निकले जिन्होने अपने-अपने क्षेत्र मे लोक सेवा का मान प्रतिष्ठित कर दिया। इनमें एक थे हरिहरनाथ शास्त्री और दूसरे लालबहादुर शास्त्री। दोनो की सच्चाई, ईमानदारी, निस्पृहता, त्याग, सेवा भावना, दक्षता, कार्यक्षमता और मनुष्यता महान थी। एक मजदूर क्षेत्र के महान नेता होकर हवाई दुर्घटना के शिकार हो गये और दूसरे भारत के प्रधान मन्त्री और भारत-पाक युद्ध के विजेता होकर ताशकन्द में कूटनोति के शहीद होगये।

शिक्षा और व्यवहारिक राजनीति दोनों ही क्षेत्रो में लालबहादुर शास्त्री के गुरु आचार्य नरेन्द्र देव थे। नरेन्द्रदेव की राजनीतिक विशेषता थी—विरोधी परिस्थिति तथा अल्पमत मे रहते हुए भी सन्तुलन पर अपना अधिकार रखना। वस्तुतः आचार्य जी उत्तर प्रदेश की राजनीति मे कभी बहुमत में नहीं थे। बहुमत तो सदैव किदवई के दल का था। पर अपनी विद्वता, अपने आचरण और बुद्धिकौशल से तटस्थ तथा आदर्शवादो लोगो का समर्थन कर अपने पक्ष में कर लेते थे। इसी कारण जब तक आचार्य जी कॉंग्रेस मे थे तब तक उत्तर प्रदेश की कॉंग्रेस कमेटो का सन्तुलन आचार्य जो के पक्ष में रहता था। कॉंग्रेस तथा मजदूर आन्दोलन दोनों को राजनोति के सूत्र सचालक आचार्य जी थे और उसमें एक सूत्र लालबहादुर थे और दूसरे हरिहरनाथ। इस प्रकार १९२८ ई०से लेकर १९४० ई० तक लालबहादुर शास्त्री आचार्य नरेन्द्रदेव के घने सम्पर्क मे थे। १९४० ई० के बाद इलाहाबाद मे अखिल भारतीय कॉंग्रेस कमेटी का जो अधिवेशन हुआ और अगस्त आन्दोलन की दृष्टि से जिसका बहुत महत्व भी है, उसको पूरी व्यवस्था लालबहादुर जी ने ही की थी, कुछ समय के लिए वे गिरफ्तार भी हुए थे। इसो के बाद से लालबहादुर जी जवाहरलाल नेहरू के घने सम्पर्क में आये। निरन्तर ही व्यावहारिक राजनीति मे नरेन्द्रदेव जी के सम्पर्क के कारण विरोधी परिस्थिति मे भी सन्तुलन अपने अनुकूल रखने की कला मे लालबहादुर जी भी प्रवीण हो गये थे। उनको आगे की सफलता का मूल रहस्य विरोधी परिस्थिति मे भी सन्तुलन कायम रखने की कुशलता मे ही निहित है।

ईमानदारी तथा राजनीतिक ईमानदारो, सच्चाई तथा राजनोतिक सच्चाई दोनों का सामंजस्य कैसे किया जाता है, यह लालबहादुर जी खूब जानते थे। यही कारण है कि सघर्षमय राजनीति के मध्य मे रहकर भो उनके चरित्र पर कलंक का कोई छीटा नही पड़ा। वे विद्वान नही थे, किन्तु चरित्र के तो बेजोड़ धनो थे। वे बहुत गरीब थे, लोक सेवक मण्डल से उनको योगक्षेम भर का ही मिलता था कभी-कभी दो एक मित्र स्वेच्छया उनकी सहायता कर दिया करते थे। वे उत्तर प्रदेश मे मन्त्री थे, उस

समय उनके एक ऐसे ही घनिष्ट मित्र ने एक ऐसे व्यापारिक कार्य मे उनकी सहायता चाही, जिसे वे गलत काम मानते थे। उस मित्र का लालबहादुर जी पर दवाव था। इस कारण उनके आवेदन-पत्र पर अपनी स्वीकृति और मन्त्रिपद से अपना इस्तीफा दोनो लिखकर शास्त्री जी ने उन मित्र के हाथ मे रख-कर कहा इसे पतजी को दे आइए। उनका काम हो जायगा। उन मित्र के हाथ पैर फूल गए। वे माफी मागने लगे। इस पर शास्त्री जी ने कहा—आपका एहसान मुझ पर है, इसमें शक नही, पर राज्य और राज्य की जनता के प्रति भी तो मेरा कर्त्तव्य है। उसकी मैं कैसे अवहेलना कर सकता हूँ। यही कारण था कि उनके अनेक मित्रो को उनसे यह शिकायत रही कि शास्त्री जी उनके लिए कुछ नही करते। पर ऐसा होते हुए भी लालबहादुर जी के प्रति किसी की श्रद्धा मे कमी नही हुई। वस्तुत. किसी के लिए कुछ करने का उनका अपना एक ढग था। वे व्यक्तिगत मान और प्रलोभनो से ऊपर उठकर अथवा अलग हटकर सामने वाले के स्थान और स्थिति का अवलोकन करते थे और यदि उसमे अपनी ईमानदारी को कायम रखते हुए किसी की कुछ सहायता सम्भव समझते थे, तो कर दते थे। चरित्र की उद्धातता, सच्चाई और ईमानदारी मे लालबहादुर के मान आचार्य नरेन्द्रदेव और राजर्षि पुरुषोत्तमदास टडन थे। जिस प्रकार ये दोनो महान व्यक्ति न केवल अपने ही चरित्र पर सतर्क दृष्टि रखते थे, वल्कि अपनी सतान के चरित्र पर भी सतर्क दृष्टि रखते थे, उसी प्रकार लालबहादुर जी अपने पूरे परिवार के चरित्र की जिम्मेदारी लेते थे और उसी को अपनी पूँजी मानते थे।

लालबहादुर शास्त्री ने सन् १९५२ ई० मे यातायात मन्त्री के रूप मे केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल मे प्रवेश किया। इसी को रेल मन्त्रालय भी उस समय कहा जाता था। यह रेल मन्त्रालय सरकार का सवसे वड़ा व्यापारिक सस्थान था। इसमे लगभग १२ लाख लोग काम करते थे। रेल मन्त्री के रूप मे शास्त्री जी ने रेल विभाग का पुनः सगठन किया। उन्होने प्रथम श्रेणी और तृतीय श्रेणी की सुविधा सम्वन्धी विषमताओ को कम किया। तत्कालीन प्रथम श्रेणी को समाप्त कर द्वितीय श्रेणी को प्रथम श्रेणी वनाया। तृतीय श्रेणी मे पखो की तथा स्लीपर की व्यवस्था की। मोकामा मे गगा पर पुल वनाने की कार्यवाही को तीव्रता से चलाया। इस प्रकार उत्तर तथा दक्षिण विहार के वीच आवागमन की सुविधा की। १९५६ मे उनके रेल मन्त्री काल में महवूव नगर मे एक वड़ी रेल दुर्घटना हुई जिसमे ११२ व्यक्ति मर गये। इस पर शास्त्री जी ने तुरन्त रेल मन्त्री पद से त्याग पत्र दे दिया, किन्तु प्रधान मन्त्री नेहरू के अनुरोध पर त्यागपत्र वापिस ले लिया। तीन महीने वाद नवम्बर, १९५६ मे पुन एक भयानक रेल दुर्घटना हुई, जिसमे १४४ व्यक्ति मर गये। इसकी जिम्मेदारी लेते हुए शास्त्री ने पुनः पद-त्याग किया और प्रधान मन्त्री के अनुरोध पर भी उसे वापस नही लिया। इन दुर्घटनाओ का उनके मन पर गहरा असर पड़ा।

सन् १९५७ के आम चुनाव मे शास्त्री जी इलाहावाद पश्चिम से लोकसभा के सदस्य चुने गये। इस वार वे केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल मे यातायात तथा संचार मन्त्री वनाये गये। इसी समय शास्त्री जी ने विशाखपत्तन मे जहाज वनाने का कारखाना खोला। एक वर्ष वाद वे वाणिज्य मन्त्री वनाये गये। इसी वर्ष उन्हे हृदय रोग का एक हल्का दौरा हुआ। वाणिज्य मन्त्री के रूप मे भी शास्त्री जी को काफी सफलता मिली। शास्त्री जी के ही काल मे राची का भारी उद्योग निगम (हटिया प्रोजेक्ट) रूस तथा चेकोस्लोवाकिया के सहयोग से शुरू हुआ। वगलौर मे निर्मित भारतीय कलाई घड़िया भी शास्त्री जी के कार्यकाल के स्मारक हैं। मोटर गाड़ी के निर्माण की ओर भी शास्त्री जी का मन्त्रालय सजग रहा।

यही नहीं, कृषि और उद्योग के समन्वय का प्रयोग भी शास्त्री जी ने शुरू किया। उनका विचार था कि जब तक कृषि और उद्योग का सामंजस्य और समन्वय नही होगा, तब तक देश की वास्तविक प्रगति नही होगी और तब तक बेकारी की समस्या का समाधान भी नहीं हो सकेगा।

तत्कालीन गृह मन्त्री गोविन्दवल्लभ पन्त को बीमारी पर शास्त्रीजी ने गृह मंत्रालय को सम्हाला। अप्रैल, १९६१ मे पन्तजी को मृत्यु के बाद शास्त्रीजी गृह मन्त्री बनाए गए। इस पद पर आते ही शास्त्रीजी के गुणो तथा योग्यता का और भी विकास हुआ गृह-मन्त्रालय के वृहत् कार्य क्षेत्र का शास्त्रीजी ने गहन अध्ययन किया। पन्तजी समस्याओं को सुलझाने के नहीं दबाने के और टालने के उस्ताद थे। इसलिये गृह मत्रालय में अनेक समस्याये बिना समाधान के हा पड़ी थी। ये सब अब उनके सामने विषम रूप में आई, शास्त्रीजी ने सभी समस्याओं का धैर्य के साथ समाधान किया। वस्तुतः शास्त्रीजी समस्याओं के साथ झूझते थे। शास्त्रीजी के हो कार्यकाल में असम का भयंकर भाषागत उपद्रव हुआ जिसमे असमिया को राजभाषा बनाने के लिये दंगा हुआ। २० व्यक्ति मारे गए। ४०,००० बंगालियो को असम छोड़ना पड़ा। इस समस्या का समाधान शास्त्रोजो ने हो किया। मास्टर तारासिह के अकाली आन्दोलन से भी शास्त्रीजो को जूझना पड़ा। उन्होने तोन जजों का एक कमोशन बना दिया, जिससे जांच पड़ताल के बाद अकालो सूबे को बिल्कुल निराधार सिद्ध कर दिया।

प्रधानमन्त्री बनाए जाने पर शास्त्रीजी ने अपने सामने सबसे बड़ो समस्या खाद्य संकट को माना। शास्त्रीजी को प्रधानमन्त्री बनाए जाने के पूर्व ही कुछ गलत नोतियो के कारण खाद्यान्न की कीमते २०% बढ़ी हुई थी। इसे काबू में करने के लिये उन्होने सर्वप्रथम दूसरे बन्दरगाहों पर जाते हुये जहाजो को रोकवाकर उन पर लदे खाद्यान्नों को भारत के लिए उपलब्ध किया। इस समय कुछ भ्रष्टाचारियो के कारण कांग्रेस की इज्जत जनता की नजरों में तेजी से गिर रही थी। सरदार प्रतापसिह कैरो की जॉच के लिये दास कमोशन बैठा था। जैसे ही दास कमोशन ने अपना रिपोर्ट दिया कि चौबीस घण्टे के अन्दर शास्त्रीजो ने सरदार प्रतापसिह कैरो को पजाब के मुख्य मन्त्री पद से अलग कर दिया। इससे जनता की नजरो मे काग्रेस को प्रतिष्ठा बची।

इसी समय देश के अन्दर कुछ दुविधाजनक स्थिति को देखकर पाकिस्तान ने कच्छ के रन मे चढाई कर दा। दुर्भाग्यवश उस समय भारतोय सेना तैयार नही थो। इससे भारतोय सेना की प्रतिष्ठा देश और विदेश मे घट गई। शास्त्रीजो ने इस मनोदशा का डटकर मुकाबला किया और पाकिस्तान को चेतावनी दी कि यदि वह आक्रमण बन्द नही करेगा, तो भारतीय सेना भी पाकिस्तान के किसी भो हिस्से पर आक्रमण कर सकती है। इससे अमरीका तथा ब्रिटेन के बीच बचाव से कच्छ के रन मे शान्ति कायम हुई।

जब पाकिस्तान ने कश्मीर में ५,००० घुसपेठिए भेजे तब शास्त्रीजी ने जेनरल अयूबखॉ को चेतावनो दी कि यदि वे कश्मोर मे घुसपेठिए को नहों रोकेगे तो भारत इस समस्या का समाधान व्यापक रूप से ढूंढ़ेगा और शोघ्र ही भारतीय सेना ने कारगिल, टिथवाल तथा अन्य महत्वपूर्ण घुसपेठिए ठिकानो पर कब्जा कर लिया। इसके बाद जब छम्ब क्षेत्र मे पाकिस्तान ने ७५ पैटन टेको के साथ अन्तर्राष्ट्रीय सोमा का उल्लंघन कर भारत मे प्रवेश किया तब शास्त्रीजी ने इस युद्ध में भारतीय वायु सेना का प्रयोग करने मे तनिक भी संकोच नहीं किया। इसके साथ ही उन्होने भारतोय सेना को पश्चिमी पाकिस्तान के लाहौर के इलाके पर आक्रमण करने का आदेश दिया। इसी समय जब

चीन ने पाकिस्तान का पक्ष लेकर भारत को तीन दिनों का अन्तिमेत्थम दिया तब शास्त्रीजी ने ऐसी दृढता से उसका जवाब दिया कि उसकी सभी योजनाएँ धरी रह गई । शास्त्रीजी ने ससद को सूचना दी कि—"हम लोग सभी परिस्थितियो के प्रति जागरूक है और यदि हम पर आक्रमण किया गया तो हम लोग जमकर लडेगे ।" भारत के इस रुद्र रूप का विदेशो पर बड़ा प्रभाव पडा और शास्त्रीजी की नीति से यह तथ्य प्रकट हो गया कि बिना शक्ति के किसी भी सत्य की प्रतिष्ठा सम्भव नही है ।

युद्ध मे भारतीय फौजो ने जिस वीरता का परिचय दिया, उससे पाकिस्तान की सारी योजनाएँ मिट्टी मे मिल गई । भारतीय फौजो का लाहौर पर कब्जा लगभग हो ही गया था कि रूस ने भारत को सूचित किया कि यदि भारत ने लाहौर पर कब्जा कर लिया तो युद्ध का विस्तार हो जायगा। उस अवस्था मे चीन से तो प्रत्यक्षत तथा पश्चिम के अनेक मुस्लिम देशो के माध्यम से अमरीका तथा ब्रिटेन की सहायता भी पाकिस्तान को मिलेगी, किन्तु भारत अकेला पड जायगा। रूस यदि भारत की सहायता के लिए आगे आएगा, तो विश्व युद्ध की सम्भावना स्पष्ट है। ऐसी स्थिति मे क्या भारत अकेले युद्ध को वहन कर सकेगा ? एक तरफ खाद्यान्नो की विपूल कमी तथा दूसरी ओर युद्ध का विराट आयोजन क्या सम्भव हो सकेगा ? इसके साथ ही रूस ने पाकिस्तान को भी चेतावनी दी कि यदि वह भारत से समझौता नहीं करेगा, तो रूस भारत की प्रत्यक्ष सहायता करेगा। रूस के इस बीच बचाव से भारत-पाक युद्ध रुक गया और ताशकन्द मे समान आधार पर भारत तथा पाकिस्तान मे समझौता हो गया। इस समझौते से भारत का अपनी फौजो द्वारा जीते हुए इलाको से हटना पडता, जिसका भारतीय फौजो पर कुछ विपरीत प्रभाव पडता। इससे शास्त्रीजी सम्भवतः बडे दुखी थे। बहुत सम्भावना है कि इसी सदमे से शास्त्रीजी के प्राण समझौते पर हस्ताक्षर करने के कुछ ही समय बाद शरीर छोड़कर ब्रह्म मे लीन हो गये।

लालबहादुर शास्त्री स्वभाव से विनम्र किन्तु लक्ष्य के प्रति सजग और निष्ठावान थे। उनके मानस मे नमनशीलता और उद्देश्य के प्रति अटूट दृढ़ता का भाव समान रूप से था। मित्रो के प्रति उनके मन मे प्रेम था, पर उसका कोई पूर्वाग्रह नही था। इसी कारण मैत्री और ईमानदारी दोनो का निर्वाह वे कुशलतापूवक कर ले जाते थे। उनके ऐसे मानसिक बनावट के कारण उनका राजनीतिक कार्य बहुत कुछ आसान हो गया था। इसी कारण झुँझलाहट भी उनमे नही दिखाई देती थी। धैर्य तो उनमे अगाध था। राजनीतिक उलझनो को सुलझाने के सभी गुणो के कारण ही बराबर जिम्मेदारी के कार्यो से ही वे घिरे रहे। निर्णय लेने मे विवेक और शासकीय दक्षता दोनो का समन्वय भी उनमे था। इसी कारण कठोर निर्णय लेते समय भी उनमे किसी प्रकार की झिझक नही देखी गई। वस्तुत. लालबहादुर शास्त्री का सफल जीवन विशुद्ध भारतीय आत्मा की अभिव्यक्ति है।

शास्त्रीजी मे एक बड़ी विशेषता यह थी कि वे अपने आचरण तथा मानसिक सतुलन से जो परस्पर विरोधी व्यक्तियो को भी समान रूप से निभा ले जाते थे। मैंने स्वयं देखा है कि राजर्षि पुरुषोत्तम टडन को वे जितना प्रिय थे उतना ही वे पं० जवाहरलाल नेहरू को प्रिय थे। टडन और नेहरू के पारस्परिक विरोध या मतभेद की बात कोई सैद्धान्तिक आधार नही रखती थी। दोनो के आचार-विचार तथा मनोदशा ही भिन्न-भिन्न थी। दोनो की पटरी एक साथ प्रायः नही बैठती थी। दोनो तटो को सेतु बनकर शास्त्रीजी मिलाने का प्रयत्न करते थे और बहुत बार सफल होते थे।

श्री लालबहादुर शास्त्री को मैं हिन्दी-प्रेमी ही नहीं, हिन्दी के प्रति निष्ठा रखने वाले व्यक्तियों में गिनता हूँ। उन पर स्वर्गीय राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद का भी बहुत प्रभाव था। वैसा राष्ट्रपति भारत को अब शायद हो मिले। तत्कालीन राष्ट्रपति ने सघीय राजभाषा हिदी के प्रचलन के सम्बन्ध में खेर आयोग के प्रतिवेदन के आधार पर बहुत से आदेश दिये, किन्तु भारत सरकार सचिका पर जम कर बैठी रही। जब शास्त्रीजी गृह मन्त्री थे तब मैने कई बार उनसे मिलकर संघीय राजभाषा तथा राज्यीय राजभाषा हिन्दी के समुचित व्यवहार के लिये बाते की। उनकी अपनी कुछ कठिनाइयाँ थी जिन्हे खुल कर वे कहते नहीं थे, पर मुझे हिन्दी के लिए प्रोत्साहित करने से चूकते नही थे। एक दिन मैने उनसे कहा कि आप लोग राष्ट्रपिता गाँधीजी के परम विशिष्ठ अनुयायियो मे से है, गाधीजी ने राष्ट्रभाषा हिन्दी के पक्ष मे तथा विदेशी भाषा अँग्रेजी के विपक्ष मे जितना कुछ कहा है, क्या उससे आपको कोई प्रेरणा नही मिलती ? शास्त्रीजी ने गम्भीर होकर कहा—हाँ, गाँधीजी के ऐसे प्रवचनो का सग्रह चाहिए। मैं एक बार उसे देखूँगा। यह बात उनके प्रधान मन्त्रित्व की है, किन्तु उनके प्रधान मन्त्रित्व की अवधि इतनी कम और इतनी कसमसक रही कि हिन्दी के बारे में उनके लिए कुछ सोचना भी सम्भव नही हो सका। कुछ दिन पूर्व गृह मन्त्री के नाते अँग्रेजी को भारत मे अनन्तकाल तक सहकारी सघीय राजभाषा बनाने वाला विधेयक ससद मे उनको ही पारित कराना पडा। यह उनका स्वेच्छापूर्वक कार्य नही था पर यह विषपान भी उन्होने अपने नेता नेहरू के आदेश से किया। ऐसे विषपान अनेक बार उन्हे करने पड़े थे। उनका हृदय इतना निर्मल था कि किसी विष का प्रभाव देर तक उनके हृदय मे नही रह पाता था। शास्त्रीजी को खोकर वस्तुतः हम भारतवासी आज निर्धन है। उनके जैसा व्यक्तित्व आज भारत के राजनैतिक क्षेत्र मे कहाँ है ? अपने आप मे वे एक अनन्वय अलंकार थे।

स्वर्णसिंह

ताशकन्द घोषणा शास्त्री जी की शांति प्रियता का स्मारक

स्वर्गीय प्रधानमन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री के साथ मै ताशकन्द मे रहा और वह एक सप्ताह सबके लिए अविस्मरणीय है। प्रतिदिन बैठके और बातचीत होती तथा एक-दूसरे को बात समझने और समझौता करने के प्रयत्न किये जाते। प्रधानमन्त्री और उनके सहकर्मी मिल-जुल कर काम करते और हम सब कृत सकल्प थे कि भारत और पाकिस्तान के बीच शान्ति और सद्‌भावना स्थापित की जाय। हमे उनके प्रेरक नेतृत्व मे काम करने का गर्व है।

काफी प्रयत्नो के बाद जिसमे श्री कोसीगिन ने बड़ा लाभदायक कार्य किया, राष्ट्रपति अयूब खा और प्रधानमन्त्री शास्त्री के बीच एक घोषणा पत्र पर समझौता हो गया, जिस पर १० जनवरी को ताशकन्द मे हस्ताक्षर हुए।

ताशकन्द घोषणा पत्र में भारत और पाकिस्तान ने परस्पर संघष का मार्ग छोड़कर अपने सम्बन्धो को शान्ति, मित्रता और अच्छे पड़ौसी के सिद्धान्तों पर आधारित करने का निश्चय किया।

यह एक बड़ी भारी सफलता है जिससे पिछले १७ वर्षो के घटना क्रम मे मोड़ आया है और भारत व पाकिस्तान के सम्बन्धो मे नया युग आरम्भ हुआ है। इस घोषणा-पत्र की मुख्य बात यह है कि दोनो देशो ने अपने विवादो को हल करने के लिए बल प्रयोग न करने की प्रतिज्ञा की है। पिछले कई वर्षो मे भारत इस बात पर जोर देता रहा है कि दोनो देश "युद्ध वर्जन" करार करे ताकि सभी मतभेद और विवाद शान्तिपूर्ण ढग से और बिना बल प्रयोग के सुलझाये जा सके। किन्तु दुर्भाग्य से इन वर्षो मे भारत और पाकिस्तान मे ऐसा कोई समझौता न हो सका। यह राष्ट्रपति अयूब और प्रधानमन्त्री शास्त्री की सूझ-बूझ और ईमानदारी का ही फल है कि आखिर दोनो देश बल प्रयोग न करने और शान्तिपूर्वक ढग से अपने झगड़े सुलझाने पर राजी हुए। हमारा सदा यही मत रहा है कि जब दोनो देशो मे तनावपूर्ण स्थिति न रहे, तभी वे अपनी समस्याएं सुलझा सकते है अन्यथा नही।

बल त्याग

ताशकन्द घोषणा की धारा १ मे बल त्याग की बात कही गई है। इसका महत्वपूर्ण वाक्य इस प्रकार है—'भारत और पाकिस्तान घोषणा पत्र के अन्तर्गत बल प्रयोग न करने और शान्तिपूर्ण ढग से अपने विवाद सुलझाने के दायित्व को दोहराते है।' ताशकन्द मे अधिकाश वार्ता इस मूल प्रश्न पर हुई। हमारे प्रधानमन्त्री ने यह स्पष्ट कह दिया था कि मुख्य बात यह है कि दोनो देश अपनी यह

इच्छा जाहिर करें कि वे अपने विवाद शान्तिपूर्ण तरीकों से हल करना चाहते हैं या नहीं। उन्होंने यह स्पष्ट आश्वासन लेने पर जोर दिया कि बल प्रयोग नहीं होगा। पाकिस्तान पक्ष यह था कि जब तक काश्मीर प्रश्न का राजनीतिक हल नहो होता या भविष्य में उसके निपटारे के लिए कोई उचित व्यवस्था कायम नहीं होती तब तक किसी भी घोषणा पत्र की कोई कीमत नहीं है। अन्त में काफी विचार-विनिमय के बाद यह फैसला हुआ कि घोषणा पत्र मे यह खास उल्लेख हो कि विवादों के हल के लिए बल प्रयोग न करने का समझौता हो गया है। अतः संयुक्त राष्ट्रसघ के सदस्यों के रूप में दोनों देशों द्वारा बल प्रयोग की धमको न देने के सिद्धान्त में अपनी फिर आस्था प्रकट करने से अब यह बात मान ली गई है।

घोषणा की धारा—२ मे यह व्यवस्था है क दोनो देश २५ फरवरी, १९६६ तक अपने सशस्त्र लोगो को पांच अगस्त से पहले की स्थिति में ले जायेंगे, जैसा कि सयुक्त राष्ट्र के प्रस्तावो मे भी कहा गया है। प्रधानमन्त्री शास्त्री ने इस धारा पर रजामन्दी प्रकट करने से पहले, इस प्रश्न के सभी पहलुओं पर पूरी तरह विचार किया। उन्होने संयुक्त राष्ट्र महासचिव को अपने १४ सितम्बर के पत्र का बड़ी सावधानी से, फिर से अध्ययन किया, जिसमे वे यह कह चुके थे कि 'अगर युद्ध विराम लागू होने के बाद कभी आगे के ब्यौरे पर विचार हुआ तो हम किसी ऐसी बात के लिए राजो नही होंगे, जिससे भविष्य मे और घुसपैठ को गुंजाइश रह जाय जो घुसपैंठ हो चुकी है, उससे सुलटने में हमे कोई बाधा हो। स्वर्गीय प्रधानमन्त्री और भारतीय शिष्टमंडल के सभी सदस्यो ने यह महसूस किया कि प्रधानमन्त्री ने जो शर्ते रखी थी, वे सारी पाकिस्तान की इस रजामन्दी से पूरी हो गई है कि वह न केवल अपने सारे सशस्त्र लोगो को वापस बुला लेगा, बल्कि इस वापसी के बाद युद्ध विराम रेखा पर युद्ध विराम की शर्तो का पालन भी करेगा और फिर उसने एक-दूसरे के मामलों में हस्तक्षेप न करने का भी आश्वासन दिया।

हथियारों का प्रयोग नहीं

शास्त्री जी कई बार यह स्पष्ट कह चुके थे कि अगर कश्मीर प्रश्न को राष्ट्रपति अयूब ने उठाया तो वे भी भारत के पक्ष को दोहरायेंगे और घोषणा की धारा—१ मे उन्होंने यह किया भी। प्रमुख बात यह है कि यद्यपि कश्मीर पर दोनों देशों के विचार भिन्न हैं, फिर भी दोनो पक्ष इस बात पर राजी हो गये है कि इसका किसी अन्य प्रश्न को सुलझाने के लिए हथियारों का इस्तेमाल नही होगा।

दोनो देशों के सम्बन्ध सुधारने और अन्य समस्याओं पर बातचीत करने की भी इस घोषणा पत्र मे व्यवस्था की गई है। आशा है कि विचार-विमर्श के लिए सयुक्त भारत-पाकिस्तान बैठकें होंगी। मन्त्रिस्तर पर और दोनो सरकारो के अध्यक्षो की बैठको की भी व्यवस्था की गई है। ये बहुत अच्छी धाराएं हैं। इसी प्रकार दोनो देशो की समस्याएं हल की जा सकती है।

इस घोषणा पत्र के शब्दो से इसमे निहित भावना का महत्व अधिक है। हमे विश्वास है कि रूस के प्रधानमन्त्री की उपस्थिति में दोनो देशो की सरकारो के अध्यक्षो ने जिस ताशकन्द घोषणा पर हस्ताक्षर किये है, उसमे वह शान्ति और सद्भावना निहित है जिस पर दोनो देशो के आपसी सम्बन्ध बनाये जा सकते हैं। हम इस घोषणा का ईमानदारी से पालन करेंगे। हमने दोनो देशो के सम्बन्ध सुधारने के लिए उपाय शुरू कर दिये है। पाकिस्तान मे हमारे उच्चायुक्त वापस जा रहे है और पाकिस्तान के उच्चायुक्त दिल्ली आ चुके है।

सूझबूझ का परिचायक

ताशकन्द घोपणा पत्र पाकिस्तान के राष्ट्रपति और भारत के प्रधानमन्त्री को दूरदर्शिता और सूझबूझ का परिचायक है। साथ ही श्री कोसीगिन के महान योग को भी हम नही भुला सकते, जिन्होंने न केवल सम्मेलन की बात उठाई, वल्कि प्रत्येक स्तर पर और खास कर तब जब कठिनाइया पैदा हुई उन्होने शान्ति के दूत के रूप मे काम किया और सभी अड़चनो को दूर करने मे सहायता की। उन्होने किसी हल का न तो सुझाव दिया और न ही उसे थोपा। फिर भी उनकी सहायता के विना ताशकन्द घोपणा नही हो सकती थी।

ताशकन्द घोषणा भारत और पाकिस्तान के बीच शान्ति और सद्भावना की घोषणा है। विश्व भर मे इसे राजनीतिक सूझबूझ का महान कार्य और विश्व शान्ति मे महत्वपूर्ण योग बताया जा रहा है। अनेक देशो ने बधाई के सन्देश भी भेजे है। अगर ईमानदारी से इसका पालन किया जाय तो इस उपमहाद्वीप के करोडो लोगो की सुख-समृद्धि और एशिया तथा विश्व मे शान्ति स्थापित करने मे महान योग मिल सकता है। दोनो देश अपने लोगो का रहन-सहन सुधारने के लिए आर्थिक विकास मे अपने साधन लगा सकते है। दोनो देशो के बीच जो खतरनाक तनाव रहे है, वे दूर हो जायेंगे। इस घोपणा पत्र से शान्ति का जो आश्वासन मिला है, उससे दोनो देशो की सुरक्षा और मजबूत होगी।

ताशकन्द घोपणा के मसविदे पर वास्तव में नो जनवरी की आधी रात को समझौता हो गया था। अगले दिन प्रधानमन्त्री शास्त्री काफी सन्तुष्ट दिखाई दिये और उन्होने घोपणा पत्र पर हस्ताक्षर करने से दो घन्टे पहले राष्ट्रपति अयूब को दिन का भोजन दिया। जिसने भी उन्हे उस दिन दोपहर के समय भला चगा और शान्ति तथा सद्भावना की विजय पर प्रसन्न मुद्रा मे देखा, उसे कभी भी यह आभास नही हो सकता था कि भविष्य मे इतना वडा आघात मिलने वाला है।

ताशकन्द घोपणा, शास्त्री जी की बुद्धिमत्ता, सूझबूझ और शान्ति प्रियता का स्मारक है। यह घोपणा हमारे देश को उनका अन्तिम उपहार है। वे चाहते थे कि हम शान्ति के लिए उसी लगन और साहस से काम करे, जिससे हमने अपने सम्मान और एकता की रक्षा के लिए लड़ाई लड़ी। हम सवको, चाहे हम किसी भी वर्ग के हो, शहरो मे हो या गावो मे, भारत और पाकिस्तान के बीच शान्ति और मित्रता के मूल सिद्धान्तो के प्रति वफादारी से काम करना चाहिए, जैसी कि ताशकन्द घोपणा पत्र की माग है।

निरंजननाथ आचार्य

महान् व्यक्तित्व की अमर मृत्यु!

ओ भारत माँ के बहादुर लाल !

भारत के क्षितिज पर आपत्ति और सशय के बादल हटाते ही सायकालीन सूर्य की भाँति कहां छिप गये ?

जन जन की स्मृतियों में सजीव हो कर, जन मानस की श्वासो में सजग आत्मा के आरोह-अवरोह मे प्रतिबिम्बित होकर, भला क्यों इतने शीघ्र विस्मृतियों की ओट मे छिप जाने का उपक्रम कर गये ?

इतिहास के पृष्ठो मे जो नया अनोखा पृष्ठ जोड़ गये हो वैसा शायद कभी नहीं जुड़ेगा ! तुम्हारा सा दृढ व्यक्तित्व तवारीख के पन्नो पर अमर छाप छोड़ गया। मा वसुन्धरा इस आकस्मिक आघात को खाकर आज स्तब्ध हो उठी है।

अनेक शहीदों के रक्त से भारत मा के उन्नत भाल पर विजय का टीका लगाकर, उसकी माग को शान्ति के मगल कु कुम से भर कर शान्ति यात्रा पर चले ही थे कि किस अदृश्य झझा मे खो गये ? किस अछोर कगारे पर अपनी किश्ती बढा ले गये ? जन जन आज चकित है।

छोटी सी देह के पवित्र कलेवर मे सागर सा नि सीम गम्भीर हृदय लिए, नेत्रो से मानवता के सच्चे संदेश का स्फुरण छोड़ते हुए, कदमों मे हिमालय सी अडिग दृढ़ता लिए हुए ओ मातृ भूमि के लाल ! अवशान की समाधि मे इतने शीघ्र क्यो लीन हो गये ?

सैनिक के विश्वास, जन मानस के सकल्प, किसान मजदूरो के समाजवाद की आधार शिला, प्रातःकालीन उषा की लालिमा से युक्त राष्ट्र के गौरव शान्ति की अनुपम धरोहर दे कर, राष्ट्र से दूर, मां की गोद से विलग होकर किस क्षितिज के आसमानी आचल मे ध्रुव की भाति अटल हो चिर सत्य बन गये।

जन जन की उच्छवासे सिसक उठी है, आखे अश्रुप्लावित है, व्यथाये अपने लाल को खोज रही है, पुकार रही है।

राष्ट्र का विषम बोझ अपने सुदृढ कन्धो पर रखकर तुम कितने उलझे, कितने जूझे, उसके सरक्षण के लिए अन्तिम पहर तक अडिग बहादुर पहरिए बन उसकी रक्षा करते रहे। ओ साधना रत तपस्वी ! शान्ति का पौधा लगाकर किस लोक को सवारने चले गये हो ?

चलते चलते भी राष्ट्र के शान्ति दूत बनकर, विश्व शान्ति का दीप प्रदीप्त कर, दबे राष्ट्रों का मार्ग प्रशस्त कर अपनी महानता की अमर गाथा इतिहास को भेट कर गये हो।

तुम चले गये हो, बस कर हमारी धारणाओ मे, विलीन हो गये हो जमकर हमारी मान्यताओं मे, सुरभित कर गये हो हमारे संकल्पों को।

अमिट शान्ति की साधना मे तुम्हारी समाधि-अमोघ विश्वास में तुम्हारा अन्तिम चिर विश्राम जन जन को मार्ग दर्शन देता रहेगा।

ओ भारत रत्न ! देश से लिए तुम्हारी सेवाये अमूल्य। तुम्हारी आशाये अमर !

तुम्हें मेरा शत शत प्रणाम।

राम शरण विद्यार्थी

जनप्रिय देशनायक

भारत मे, गांधीजी का राजनीति मे पदार्पण एक महान् युग का प्रारम्भ था। वास्तव मे वह गाधी युग था। सन् १९२० के असहयोग आन्दोलन के पश्चात् मेरठ में रचनात्मक कार्य के केन्द्र खुल रहे थे। उसी समय मेरठ मे 'गाधी आश्रम' के आने पर श्री विचित्र नारायण शर्मा और श्री कपिलदेव पाडे मेरठ पधारे थे। उससे कुछ ही पूर्व मेरठ में लाला लाजपत राय द्वारा स्थापित लोक सेवक मण्डल के सरक्षक मे हरिजन विद्यार्थियो के लिये छात्रावास के रूप मे 'कुमार आश्रम' प्रारम्भ हुआ था। उसके प्रथम सचालक श्री बलदेव चौबे थे। श्री लालबहादुर शास्त्री ने भी मेरठ मे उनके सहयोगी कार्यकर्त्ता के रूप मे कुछ दिनो काम किया था।

एक दिन एक लाल लाल विशाल मुख और सुडौल शरीर के सज्जन मेरे स्थान पर आये। उन्हे देखते ही यह भावना हुई कि यही 'लालबहादुर' है। मैने सरल स्वभाव से उन्हे 'लालबहादुर' कहा तो वह बहुत हँसे और पूछा कि "तुमने कभी 'लालबहादुर' को देखा भी है" मै कुछ आश्चर्य में पड़ गया। तब उन्होने मुझे बताया कि मेरा नाम तो विचित्र नारायण है। लालबहादुर जब तुम कभी देखोगे तो पता चलेगा कि वह अपने नाम के शब्दार्थ से तो कुछ भिन्न ही है। उस दिन से मेरी उत्सुकता 'लालबहादुर' को देखने की बडी तीव्र हो गई। मेरठ में एक दिन एक बहुत विराट सार्वजनिक सभा हो रही थी जिसका आयोजन अछूतोद्धार सभा की ओर से श्री बलदेव चौबेजी ने किया था। उसमे एक बहुत छोटे कद का पतला दुबला सा व्यक्ति भाषण कर रहा था। उसकी भाषा परिमार्जित और ओजस्वी थी। भाषण बड़ा आकर्षक और रोचक था। उसमे तेज और तीव्रता थी। पूछने पर पता चला कि वही 'श्री लालबहादुर शास्त्री' थे। वास्तव मे उस समय यह भान हुआ कि वह शरीर का नही अपितु वाणी का 'लालबहादुर शास्त्री' था। उनके भाषण का ही मुझ पर गहरा प्रभाव नही पड़ा अपितु उनके व्यक्तित्व की गहरी छाप मुझ पर पड़ी।

उसके बाद तो प्राय: शास्त्रीजी से भेंट करने का अवसर मिलता ही रहा। प्रत्येक समय दो प्रमुख गुण और स्वभाव ने मुझ पर चिर-स्मरणीय प्रभाव डाला अर्थात् मित और मधुर भाषिता तथा जीवन की सादगी और सरलता। जब भी शास्त्रीजी से भेंट का अवसर मिला उन्होने सदा ही ध्यान से सुन सक्षेप मे उत्तर दिया। लखनऊ मे जब वह पार्लियामेंटरी सैक्रेटरी (सभा-सचिव) थे और बाद मे जब वह मन्त्री हुए बराबर मिलते रहे और जब भी कोई काम को कहा उन्होने प्रयत्न करने का वचन देते हुए नि.सकोच यह शब्द कहे कि "सरकार के कामो मे विलम्ब तो होता ही है। परन्तु देर होने पर

पत्र लिखकर स्मरण करा देना।" जब कभी पत्र लिखा शास्त्रीजी ने सदा ही संक्षिप्त परन्तु पूरा उत्तर दिया। भूल जाना या अवहेलना करना उनके स्वभाव में ही नहीं था। सदैव शान्त भाव से दत्त-चित्त हो काम करते रहना ही उनकी विशेषता थी। सुख दुख और प्रत्येक उत्तेजन स्थिति में भी स्थिर बुद्धि रहते थे। इसके अनेक उदाहरण है। जब वह उत्तर प्रदेश मे पुलिस और ट्रासपोर्ट के मन्त्री थे तो उनके पास काम बहुत अधिक और आगुन्तो तथा भेट कर्त्ताओ को बड़ी भीड़ लगी रहती थी। कभी-कभी लोग उन्हें इतना घेरते थे कि साधारणतः बुरा लगता था। परन्तु इस पर भी शास्त्रीजी को कभी भी आवेश या रोष मे नही देखा। जब भी भेट की, शात स्वभाव से मिले। इसी कारण प्रायः लोग उनसे संतुष्ट ही लौटते थे।

लखनऊ मे राजनैतिक पीड़ितो की पैन्शनो और उनको अन्य सुविधाओ के बारे में शास्त्री जी ही देख रेख करते थे। बड़े ध्यान और सहानुभूति से सब कुछ सुनते और प्रायः जो काम भी उनसे कहा जाता वह यथाशक्ति करने का प्रयत्न करते। इसी प्रकार ऐसे शोक समय में भी जब रफी साहिब का स्वर्गवास हुआ और उनके सभी मित्र अश्रु पूर्ण नेत्रो से विव्हल देख पड़ते थे शास्त्री जी को बड़ी शान्त और गम्भीर मुद्रा में शव-यात्रा के प्रबन्ध मे ही ग्रस्त पाया। साथ ही वह अपनी स्थिति से भी अनभिज्ञ नही हो गये थे। सबसे मिलते भी रहे।

शास्त्री जी के बारे में एक विशेष बात यह थी कि वह स्वामी या नेता-भक्त एक हिन्दू पत्नी के समान थे। वह कभी भी नेता को छोड़ने या उसके प्रति विश्वासघात करने की बात सोच ही नहीं सकते थे। अवसरवादिता उनको छू भी नही गई थी। वह पन्त जी के साथ जब तक रहे उनके विश्वास पात्र और आज्ञाकारी बन कर रहे। कभी बुराई की न बुराई सुनी। इसी प्रकार वह जवाहरलाल जी के साथ सदा व्यवहार करते रहे। यही उनकी मनोवृति टंडन जी के साथ रही। परन्तु जवाहरलाल जी को वह सर्वोपरि नेता मानते थे। जब टण्डन जी से जवाहरलाल जी का विरोध इतना बढा कि टण्डन जी ने कॉग्रेस के अध्यक्ष पद से त्याग पत्र देने की सोची तो शास्त्री जी ने पहले तो पारस्परिक विरोध को मिटाने का भरसक प्रयत्न किया और अन्त में जवाहरलाल जी के अध्यक्ष बनने पर वह उत्तर प्रदेश से अपना मन्त्री पद छोड़कर उनके साथ कॉग्रेस के मन्त्री पद पर रह कर काम करने को देहली आ गये थे। जहाँ शास्त्री जी पर पन्त जी विश्वास करते रहे वहाँ टण्डन जी भी उन पर कम स्नेह और विश्वास नही रखते थे और जवाहरलाल जी का तो उन पर पूर्ण विश्वास बना रहा। अन्त तक जवाहरलाल जी शास्त्री जी को अपना बहुत विश्वसनीय सहयोगी मानते रहे। एक प्रकार से जवाहरलाल जी ने बिना घोषणा किए उनको ही अपना उत्तराधिकारी चुना था।

शास्त्री जी काशी विद्यापीठ के स्नातक और लाला जी के लोक सेवक मण्डल के आजीवन सदस्य थे। इन संस्थाओ के अपने पुराने सहयोगियो मे इनका अपना अलग ही स्थान था। कर्त्तव्य-परायणता और आदर्शवादिता मे भी शास्त्री जी वास्तव मे बेजोड़ थे। जब वह भारत सरकार के रेलवे मन्त्री थे तो रेलवे दुर्घटनाओं के कारण दुखित ही नही हुए परन्तु अपने को उनका उत्तरदायी मानते हुए मन्त्री-पद से ही त्याग-पत्र दे दिया। यह एक बड़ा आदर्श था जिसका भारत मे शास्त्री जी ने इस युग मे सर्वप्रथम उदाहरण उपस्थित किया। वास्तव में जन-सेवी मन्त्री का यही सच्चा आदर्श होना चाहिए।

जव पन्त जी उत्तर प्रदेश से केन्द्र मैं गृह मन्त्री बनकर आने वाले थे तो यह प्रश्न था कि उनके स्थान पर उत्तर प्रदेश का कौन मुख्य मन्त्री हो। उस समय पत्रो मे बाबू सम्पूर्णानन्द जी के नाम के साथ साथ शास्त्री जी का नाम भी बड़े जोरो से चल रहा था। उस समय मुझे याद है उनसे एक बार मेरा भी विचार विमर्श हुआ और उन्होने स्पष्ट शब्दो मे प्रकट किया कि "बाबू सम्पूर्णानन्द जी कम उपयुक्त नही है और प्रत्येक देश और कांग्रेस हितैषी को उनसे सहयोग ही करना चाहिए। काग्रेस का आदर्श देश-हित की भावना से पालन करना कर्त्तव्य है, व्यक्ति का महत्व इससे ऊपर नही।"

जव पहली वार शास्त्री को अचानक दिल का दौरा पडा और वह स्वस्थ हो देहली आये तो सभी मित्रों को उनके दुर्बल-काया होने से उनकी बडी चिन्ता थी। उनसे भी हम इस विषय मे चर्चा हुई उन्होने जिस गम्भीरता और धैर्य का परिचय दिया वह उनकी स्थिरता और सयम का बडा अनुकरणीय उदाहरण था। वह यही कहते थे, "अब कोई चिन्ता की वात नही। मै पूर्ण रूप से स्वस्थ हूँ।"

शास्त्री जी मे मित्रो, परिचितो और राजनैतिक सहयोगियो को मूक सहायता करने का एक विशेष गुण था। वह सहायता करने मे तत्पर रहते थे और यथाशक्ति व्यक्तिगत सहायता विना किसी प्रकार की विज्ञप्ति के करते थे। जैसा प्राय: राजनैतिक पुरुष नही किया करते।

राजनैतिक, सामाजिक और सार्वजनिक क्षेत्र मे सदा ही सघर्ष और सकट को वचाने की शास्त्री जी मे अद्वितीय प्रवृति थी। वह सघर्ष मे मध्यस्थ होने का प्रयत्न करते थे। इस काम के करने मे सज्जनो की जो अन्तिम दुर्बलता कही जाती है अर्थात "ख्याति की इच्छा" इससे भी वह ऊपर पाये जाते थे। पद-प्रशसा, लोक स्वागत, तथा आत्म-श्लाघा आदि राजनैतिक पुरुषो की प्राय मनोवाञ्छित इच्छाओ से शास्त्री जी दूर भागते हो प्रतीत होते थे। शास्त्री जी की यह विनम्रता उनकी महानता की द्योतक थी।

पाकिस्तान से सशस्त्र संग्राम के पश्चात् जब भारतीय सेनाये विजेता रहीं तब भी लालबहादुर जी ताशकन्द समझौते के समय वडे उदार और शान्तिप्रिय रहे। उनकी सन्धि करने की और सघर्ष वचाने की मनोवृति ही ताशकन्द समझौते की सफलता का मुख्य कारण थी।

जव शास्त्री जी प्रधानमन्त्री निर्वाचित हुए तो मैं उनको वधाई देने गया। वह सदा की भाँति सरल स्वभाव, और प्रेम से मिले। मै भी उनके स्थान और पद को भूल कर उनसे इस प्रकार आलिगन कर मिला कि वह हस कर वोले, "यह क्या ?" प्रधान मन्त्री के कार्य भार और व्यस्तता के होते हुए भी वह अपने सरल स्वभाव और स्नेह सम्वन्ध मे कोई भी परिवर्तन करना उचित और आवश्यक नही समझते थे। वास्तव मैं यह उनकी वड़ी महानता थी।

शास्त्री जी ऐसे राजनैतिक पुरुष थे जिनसे वहुत निकटता से मिलने का अवसर होता था। उनमे सदा ही एक अपनापन था। यह शास्त्री जी के जीवन का स्वर्ण सिद्धान्त था कि वह प्रचलित राजनीति की परिपाटी के विरुद्ध किसी को पददलित करे विना स्वय को जीवित रखने और दूसरो को जीवित रहने देने के अधिकार को पवित्र मानते थे और इस पर यथाशक्ति आचरण करने का पूर्ण प्रयत्न करते थे। इस प्रकार शास्त्री जी आदर्श और व्यवहार वाद का वड़ा सुन्दर समन्वय थे।

जहाँ अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में और विशेषकर अपने पड़ौसी देशों से सम्बन्ध सुधारने और तनाव को कम करने में, चाहे फिर वह श्री लंका से हो, नैपाल, वर्मा और अन्त को पाकिस्तान से, जिस बुद्धिमत्ता, उदारता और राजनैतिक प्रोढ़ता का लालबहादुर जी ने परिचय दिया वह उनके जीवन की अविस्मरणीय विशेषता मानी जाती रहेगी। परन्तु उनको अपने प्रदेश—उत्तर प्रदेश—की स्थिति की सदा चिन्ता बनी रही। उत्तर प्रदेश के कॉंग्रेस संगठन को दशा और पारस्परिक विवाद से वह अन्त तक बड़े ही चिन्तित और खिन्न रहे।

एक बार इस सम्बन्ध मे चर्चा करते हुए उन्होने यह शेर कहा था:

"खामोश है जवां मेरी, नजर है तरजुमा मेरी।

मेरी सूरत वयां करती है, सैहरे दास्तां मेरी ।।

उसी चर्चा मे कांग्रेस की स्थिति और स्वतन्त्रता संग्राम के पश्चात् काग्रेस में आये मोड़ पर बड़े दु:ख भरे शब्दों में शास्त्री जी ने कहा था:

"काबा बराये मरकजे असनाम आ गया।

किस काम को बना था किस काम आ गया ।।

इसके अर्थ समझाते हुए उन्होने बताया था, "काबा (मुसलमानों का पवित्र तीर्थ स्थान) पहले बुतखाना था। बाद को वहाँ से बूते हटी और बुत-परस्तो के खिलाफ वही से जिहाद शुरू हुआ। इसी प्रकार काग्रेस, स्वराज्य और स्वतन्त्रता सग्राम के लिए संस्था बनो थी और यह त्याग तथा तप के मार्ग पर चली। परन्तु आज किस प्रकार पथ-भृष्ट हो यह सुदृढ़ सगठन पारस्परिक प्रतिद्वन्द्वता और द्वेष का केन्द्र बना है।"

ईसी भेट के पश्चात् उन्होने मुझे मेरे एक पत्र के उत्तर मे जो पत्र नई दिल्ली प्रधानमन्त्री भवन से लिखा वह अंग्रेजी मे था, जिसका निम्न अनुवाद है:

प्रिय विद्यार्थी जी,

मुझे आपका पत्र प्राप्त हुआ। अनेक धन्यवाद। मुझे विश्वास है कि आप काग्रेस संगठन को शक्तिशाली बनाने के लिए अपनी शक्ति भर पूर्ण प्रयत्न करते रहेगे। हम बडे इच्छुक है कि उत्तर प्रदेश की परिस्थितियो मे निश्चित रूप से सुधार होना चाहिए।

आपका—लालबहादुर

वास्तव मे लालबहादुर जी संसार की अनेको उलझनो को सुलझाने मे बड़े सफल हुए परन्तु अपने प्रदेश की स्थिति के सम्बन्ध मे एक गहरा दु:ख और चिन्ता लिये हो चले गये। आज यह सारे देश के सामने बहुत बड़ी जटिल समस्या बन गई है। इस उलझन को सुलझाने का काम लालबहादुर जी की एक हार्दिक इच्छा को पूर्ति होगा और यही उनके प्रति सच्चो श्रद्धाजलि होगी।

आनन्द जैन

शास्त्री जी का अन्तिम शान्ति समझौता

प्रधानमन्त्री लालबहादुर शास्त्री ने ड़ेढ वर्ष के सक्षिप्त कायकाल मे राष्ट्रोय तथा अन्तर्राष्ट्रोय सघ मे अनेक सफलताए प्राप्त की और कई नई परम्पराएँ स्थापित की। वे शक्ति के साथ शान्ति के पुजारो थे, कमजोर की शान्ति के नही। तभो तो पाकिस्तानो हमले का हथियारो से मुकाबला किया और बाद मे शान्तिपूर्ण समझौता भी। उन्होने सभी अनुमानों को गलत सिद्ध करके विश्व रगमच पर अपनी छाप छोड़ दा। कद का छोटा विश्व का सबसे बडा बन गया।

कूटनीति के इतिहास मे उनका यह नया परीक्षण था कि एक तटस्थ देश और एक पश्चिमो गुटबन्दी मे शामिल देश मे कम्युनिस्ट देश समझौता कराये। यह परोक्षण सफल हुआ और भारत तथा पाकिस्तान की ताशकन्द सयुक्त घोषणा उनका अन्तिम शान्ति समझौता है।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे श्री शास्त्री की पहलो बड़ी सफलता श्रोलका मे बसे भारत वशियो के बारे मे श्रोलका की प्रधानमन्त्रो श्रीमती भण्डारनायक से हुए समझौते के रूप मे प्रकट हुई थो। फिर तो बर्मा से समझौता हुआ, कच्छ के बारे मे पाकिस्तान से समझौता हुआ, काहिरा मे हुए तटस्थ राष्ट्र सम्मेलन मे उन्होने अपनी छाप छोड़ी और लन्दन मे राष्ट्र मण्डलीय प्रधानमन्त्री सम्मेलन से तो साफ हो गया—और सभो दुनिया ने मान लिया—कि वे एक बड़े कूटनीतिज्ञ थे।

जिस प्रकार श्रीलका से हुए समझौते के बाद तथा कच्छ समझौते के बाद अनेक दलो ने श्री शास्त्रो को आलोचना की थी, वैसे ही अब ताशकन्द घोषणा के बाद भो जनसघ, प्रजा समाजवादियो तथा सयुक्त समाजवादियों ने आलोचना की लेकिन गौर से अध्ययन करने से स्पष्ट हो जाता है कि श्री शास्त्री ने बहुत कम दिया और दूसरे पक्ष से ज्यादा लिया। यह बात कभो नही जानो चाहिए कि दो विपक्षियों मे समझौता कुछ ले-देकर ही हो सकता है। अगर लेना-देना न हो तो फिर कोई समझौता नही किया जा सकता।

ताशकन्द घोषणा

ताशकन्द घोषणा के नौ मुख्य सूत्र इस प्रकार है:

१—सयुक्त राष्ट्रसघीय घोषणा पत्र के अनुसार आपसी विवादो को हल करने के लिए बल का प्रयोग नही करेंगे तथा विवादों को शान्तिपूर्ण तरीको से हल करेंगे।

२—दोनो देश युद्ध विराम का पूरो तरह पालन करेंगे और २५ फरवरी तक सभी सशस्त्र लोगो को पाच अगस्त की रेखा तक लौटा लेंगे।

३—दोनों नेता इस बात के लिए राजी हो गये कि दोनों देशों के सम्बन्ध एक दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने के सिद्धान्त पर आधारित होंगे।

४—दोनों देश एक दूसरे के विरोध मे किये जाने वाले प्रचार को रोकेंगे और ऐसे प्रचार को प्रोत्साहन देंगे जिससे दोनों देशों के मध्य मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के विकास में सहायता मिले।

५—दोनों देशो के राजनयिक सम्बन्ध सामान्य रूप से पुनः चालू होंगे तथा इस बारे में दोनों सरकारे वियना सम्मेलन के नियमो का पालन करेंगी।

६—आर्थिक, व्यापारिक और यातायात सम्बन्धी सम्बन्ध सामान्य किये जायेंगे तथा वर्तमान समझौतों को बनाये रखने के लिए कदम उठायेंगे।

७—युद्ध वन्दियों की वापसी के लिए अपने-अपने अधिकारियों को तुरन्त आदेश दिये जायेंगे।

८—शरणार्थियो, निष्कान्तों और गैरकानूनी रूप से प्रवेश करने वालो को समस्या पर वार्ता जारी रखेंगे। निष्क्रमण रोकने के लिए उचित वातावरण तैयार करेंगे तथा युद्ध मे छीनो गई सम्पत्ति की वापसी के बारे मे बातचीत करेंगे।

९—दोनों देश उच्च स्तरीय तथा अन्य स्तरो पर बातचीत जारी रखेंगे। सयुक्त समितियो की स्थापना की आवश्यकता पर जोर दिया गया है।

मुख्य विरोध

ताशकन्द घोषणा की इस बात का सबसे अधिक विरोध किया गया है कि हमें पांच अगस्त की रेखा पर लौटना पड़ेगा। जनसंघ, प्रजा समाजवादी तथा सयुक्त समाजवादी दलों की ओर से कहा गया है कि पांच अगस्त की रेखा तक सेना हटाने का मतलब यह है कि हाजी पीर दर्रा तथा करगिल आदि खाली करने की बात मानकर सरकार इस आश्वासन से पीछे हटी है कि वह इन स्थानों से पीछे नही हटेगी।

लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के विद्यार्थी जानते है कि जिस स्थान से लड़ाई होती है, लड़ाई के बाद उसी स्थान को लौटना पड़ता है। भारत भी यह बात चीन के संदर्भ मे पहले कह चुका है। इसलिए यदि पाकिस्तान से समझौता करना है तो पाच अगस्त को रेखा तक हटना ही पड़ेगा। नहीं तो पांच अगस्त का कोई अर्थ नहीं माना जा सकेगा।

हमारी राय मे पाकिस्तान से समझौता-वार्ता का मुख्य लक्ष्य यह था कि फिर दोनो देशो में लडाई न हो। इसमे काफी हद तक सफलता जरूर मिली है। हालांकि पाकिस्तान ने 'युद्ध नहीं' सन्धि नही की, फिर भी ताशकन्द घोषणा पत्र में यह तो साफ लिखा गया है कि दोनो देश आपसी विवादो को हल करने के लिए बल का प्रयोग नही करेंगे। इसके साथ राष्ट्रसघ के उद्देश्य का नाम लग जाने से इसका असर तो कम नहीं हो जाता।

विवादो के हल के लिए बल का प्रयोग न करने की बात पाकिस्तान से कहलाकर श्री शास्त्री ने भारी सफलता पाई। भारत और पाकिस्तान की जनता युद्ध नही चाहती। युद्ध से हमें पाकिस्तान की अपेक्षा अधिक हानि होती है, यह बात नही भुलाई जानी चाहिये।

पाक क्या लाभ उठायेगा ?

ताशकन्द घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर करने के तुरन्त बाद श्री शास्त्री का देहान्त हो जाने से पाकिस्तान यह लाभ जरूर उठा सकता है कि वह कुछ बाते अपनी ओर से गढ ले और फिर कहे कि श्री शास्त्री उन पर मौखिक रूप से राजी हो गये थे और इसीलिये पाकिस्तान ने घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किये थे। लेकिन पाकिस्तान की यह चाल ज्यादा नही टिक पायेगी।

अब तो बस एक ही बड़ा खतरा है। वह यह कि पाकिस्तान ताशकन्द घोषणा का अर्थ अपने ढग से निकालने की कोशिश करेगा। वैसे पाकिस्तान ने ऐसा शुरू भी कर दिया है। ताशकन्द मे घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर होने के कुछ घण्टे बाद ही पाकिस्तानी प्रवक्ता ने कह दिया कि 'सभी सशस्त्र व्यक्तियो की वापसी के अन्तर्गत वे लोग नही आते जिन्हें पाकिस्तान जम्मू कश्मीर की आजादी के लिए संघर्ष करने वाला कहता है।'

दूसरी ओर हमारी सरकार के प्रवक्ता ने कहा कि 'सशस्त्र व्यक्तियो मे पाकिस्तानी घुसपैठिये निश्चित रूप से आते है।

यह मूलभूत मतभेद है और यदि पाकिस्तान इस पर अडा रहा तो ताशकन्द घोषणा पत्र पर अमल करना खतरे मे पड जायगा। जब तक पाकिस्तान उन सशस्त्र लोगो को कश्मीर से वापस नही बुलायेगा जो पाच अगस्त से कश्मीर मे घुसे थे तब तक भारत हाजी पीर आदि स्थानो से सेना नही हटायेगा।

यह एक अजीब स्थिति है। अगर पाकिस्तान घुसपैठियो की जिम्मेदारी से मुकरता है तो 'सशस्त्र व्यक्ति' लिखने का कोई मतलब नही, फिर तो सैनिको की वापसी की बात लिखी जानी चाहिये थी। इस प्रकार स्पष्ट हो चला है कि पाकिस्तान ने जिस प्रकार अन्य समझौतो का पालन नही किया उसी तरह वह इस समझौते का भी पालन न करने का यत्न करेगा।

●

हम पाकिस्तान से शान्ति से रहना चाहते है। हमने शान्ति की राह छोडने की पहल कभी भी नही की, न हम भविष्य मे करेंगे। हम पाकिस्तान के किसी भी क्षेत्र को हथियाना नही चाहते। लेकिन शान्ति पुनर्स्थापन और भविष्य में उसकी रक्षा तभी हो सकती है, जब कि पाकिस्तान मनमाने आक्रमण का रास्ता छोड़ दे।

—लालबहादुर शास्त्री

रामावतार त्यागी

हिन्दुस्तान का दिल टूट गया

आकाशदीप बुझ गया—जहाज अंधकार मे भटक रहे है। जहाँ-जहाँ नजर जाती है धुआँ, केवल धुआँ ही हाथ लगता है। आशाओ की कोमल पंखड़ियाँ फूलों के कपड़े पहन ही रही थी कि वज्रपात हो गया। सपनो के अधरो पर मुस्कान की पायल बजो ही थी कि शब्द-शब्द आँसुओं मे बदल गया।

प्रकाश के पंख टूट गये, शलभ जिन्दगी उदास-सूनो गलियो मे जमीन पर नही आँसुओं पर फिसलती घूम रही है। आवाज उठती है, पर निरुत्तर लौट आती है। संगीत, जैसे उसे अजगर ने डस लिया हो—विश्वास जैसे हारा हुआ सिपाही अपमान सहने के लिये विवश घर लौट रहा हो।

नेता नहीं, महापुरुष नहीं, प्रधानमन्त्री भी नहीं, गरीबों का आदमी, जो धनवान था तो सिर्फ दिल से, चला गया। पहली बार हाँ, पहली बार इस देश में जहाँ गीत गाने का अधिकार भी सिर्फ देवताओं को ही है, यह अकल्पित हुआ था कि फटी किताबे लिये फटे कपड़ो में नदी पार करके स्कूल जाने वाला एक अकिचन, विनत-बेसहारा बालक देश के उस पद पर पहुँच गया जो बस कुबेरों को रास आता है।

गरीब का बेटा जब इतना लम्बा सफर तय कर लेता है और बेईमानी की थाप उसे विचलित नहीं कर पाती, तो श्रद्धानत देवता उसे कन्धों पर उठा लेते है। पर्वत अपनी ऊँचाई से उस दिन ग्रस्त होते है, क्योकि वे उस मामूली से आदमी के चरणों में सिर रख देने को तरसते है।

शास्त्रीजी शार्टकट से नही आये थे, बड़प्पन उन्हे घुट्टी के साथ नही मिला था, वे महानता के कन्धे पर चढ़कर बड़े नही हुए थे। वे काँटेदार झाड़ियो पर नगे पाँव चले थे, लाचारियों के पहाड़ लाघ करके समतल मैदान में उतरे थे, उन्होने तूफानो के थपेड़े छाती पर झेले थे। उन्होने गरीबी को किताबो मे नही, घर की दीवारो पर पढ़ा था, भूख को उन्होने कहानी में नही जिन्दगी में लिखा था।

गरीबो के हुकमरान या नेता जब चल बसते है, तो गरीब दुखी होते हैं, पर जब उनका अपना आदमी चला जाता है, तब तो दिल ही टूट जाता है।

कुटिल मृत्यु ने उन्हें छीना ही नही है, गरीब हिन्दुस्तान का दिल ही तोड़ दिया। वह दर्पण ही टूट गया, जिसमें भारत का सही प्रतिबिम्ब था। गरीब की पोथी जो दुख-दर्द की गाथा थी, बाढ़ में बह गयी है। कहाँ से आयेगी अब वह पोथी? बड़े-बड़े छापेखानों से निकले महाग्रंथ तो बहुत हैं- पर

भीगी आँखों से लिखी वह छोटी-सी एकमात्र पोथी, जो पीड़ा और आँसू की विरासत थी, वह तो बाढ़ में बह गयी।

लोकतन्त्र का लोक से नाता

सवाल ही सवाल है, पर जवाब एक भी नहीं। भूखे को देखकर डबल रोटी दान करने वाले तो हैं, पर ऐसा कौन है जिसकी आँखों में उसकी खाली पेट रातें बरसात भर दें। पहली बार लोकतन्त्र, लोक से जुड़ा था, पर कितनी जल्दी वह धागा टूट गया, जैसा दोबारा गाँधीजी मर गये रधिया के आँगन का तुलसी सूख गया, रहीम का खेत उजड़ गया, भोलू के खलिहान में आग लग गयी।

पर दर्द जिन्हें वसीयत में मिलता है, वे तुलसी को उससे ज्यादा बार रोपने के आदी होते हैं, जितनी बार काल उसे सुखा सकता है।

गरीबी के पाँव पहाड़ों पर चढ़ रहे हैं चट्टानों को जनपथ में बदल रहे हैं और समतल मैदान अब उनसे दूर नहीं हैं।

तूफान अंगूर की बेल को मरोड़ सकता है, क्योंकि वह और के सहारे खड़ी होती है। मिट्टी जिनका सहारा, धरती जिनका बल है, वे बेलें तूफान की चुनौती का जवाब मुस्कुराकर देती हैं।

●

पंजाब के सपूतो !

पंजाब के वीर तथा साहसी सपूतो, अब तुम भारत की सीमाओं के संरक्षक हो। इसलिए न ही तुम्हें स्वयं कोई ऐसी बात करनी चाहिए जो इस सीमावर्ती राज्य को कमजोर करे और न ही किसी और व्यक्ति को यह अनुमति देनी चाहिए कि वह तुम्हें पथभ्रष्ट कर सके। स्वार्थपूर्ण भावनाओं से ऊपर उठकर एक राष्ट्र-पुरुष के रूप में खड़े हो जाओ और अपने देश को दुश्मनों की घृणित चालों से बचाने तथा सारे राष्ट्र और अपने राज्य की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए कोई कोर कसर उठा न रखो।

—लालबहादुर शास्त्री

राजेन्द्र माथुर

अंधेरी भव्य दोपहरी

भारत और पाकिस्तान के रिश्तों को एक खूबसूरत ऐतिहासिक मोड़ पर लाकर लालबहादुर शास्त्री चल बसे। देश के इतिहास मे किसी नेता की मृत्यु इतनी भव्य और चौधियाने वाली नही रही, जितनी कि शास्त्री जी की मृत्यु रही है। यों तो शास्त्री जी की ऊंचाई सितम्बर युद्ध के बाद से ही बढ रही थी, लेकिन विदेशी जमीन पर मृत्यु के रोमांस ने उन्हे एक अद्वितीय महानता दे दी है। एक माने में लालबहादुर शास्त्री की मृत्यु कनैडी की मौत से भी ज्यादा नाटकीय सनसनी खेज रही है, और इसमे कोई शक नही है कि अपने भव्य अन्त के कारण शास्त्री जी का नाम भी उसी तरह महान और पौराणिक बन जायगा, जैसे कि कनैडी का नाम दुनिया की जबान पर दंत-कथा बन चुका है। शायद शास्त्री जी ने अपने जीवन में कोई काम इतनी खूबसूरती से नही किया, जितना कि उन्होने इस दुनिया से बिदा लेने का काम किया। वे इस तरह चल बसे, मानो शान-शौकत से बेटी का व्याह कर देने के बाद बेटी का बाप चल बसे।

यह कितनी अजीब बात है कि आजादी के बाद भारत के जिन तीन नेताओं की अर्थी यमुना के किनारे जलाई गई, वे सबके सब अपने अन्तिम दिनो मे भारत-पाक एकता या हिन्दू-मुस्लिम दोस्ती का प्रयत्न कर रहे थे। गांधीजी ने साम्प्रदायिक मेल-जोल की खातिर प्राण दे दिये। जवाहरलाल नेहरू अपने अन्तिम दिनों मे यह प्रयत्न कर रहे थे कि भारत और पाकिस्तान की फिजूल दुश्मनी खत्म हो, और दोनो देश करीब आएं। इस इरादे से उन्होने लालबहादुर की सलाह लेकर शेख अब्दुल्ला को रिहा कर दिया था, और जयप्रकाश मिशन भेजकर अनौपचारिक हलचल शुरू की थी। और अब, एक खूंखार नफरत भरे युद्ध के सिर्फ तीन महीने बाद पुरानी रंजिशे भूल कर लालबहादुर शास्त्री ने ताशकन्द घोषणा पर दस्तखत किये, जिसमे भारत और पाकिस्तान ने पहली बार आमने-सामने यह वचन दिया कि वे युद्ध नही करंगे, एक दूसरे के अन्दरूनी मामले मे गड़बड़ नही करेंगे और सभ्यता के साथ रहना सीखेंगे। लालबहादुर शास्त्री ने इस संतोष के साथ अपनी अन्तिम सांस ली कि अब आगे से भारत और पाकिस्तान के इतिहास मे एक नये युग की शुरूआत होगी। वह सुनहरा युग निकट भविष्य मे आने वाला है या नही, यह फिलहाल बिलकुल अप्रासंगिक है। बेटी की शादी सचमुच हो चुकी है या नही, यह बिलकुल अप्रासंगिक है। आज तो भारत की जनता उस स्वर्गिक सपने की भव्यता और विराटता से स्तब्ध है, जिसे देखने का साहस लालबहादुर शास्त्री ने कुछ घंटो के लिए किया था। आज हम अपने देश के राजनीतिक कोलम्बस को श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे है, जिसके मन में यह विश्वास था कि मुसीबतो के समुद्रो के पार महाद्वीपीय मन्त्री का अमेरिका उसे जरूर मिलेगा।

अगर वह भ्रम हो तो आज हम कोलम्बस के भ्रम को भी श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे हैं, क्योकि भटका हुआ कोलम्बस उन लोगो से बेहतर है, जो अपनी-अपनी जमीन पर बैठकर कहते हैं कि क्षितिज के पार काई दुनिया नही है। शास्त्रो का मृगतृष्णा के प्रति जिन लोगो के मन मे सम्मान नही है, वे छोटे लोग हैं, जिन्होने कभी यह नही जाना कि प्यास किसे कहते हैं।

तो कुछ घंटो के लिए लालबहादुर शास्त्री ने भारत-पाक मैत्री का भव्य और विराट सपना देखा। लेकिन वह कितना घातक सपना साबित हुआ है। यह सपना मानो अर्जुन के विश्व रूप दर्शन की तरह है। जो उसे देख लेता है, वह सारे दृष्य को झेल नही पाता, और चल बसता है। यह गांधी के बस की बात भी नही थी कि वे उसे झेलने योग्य बनाते। पता नही यह अभागा देश कौन से देवदूत का या मसीहा का इन्तजार कर रहा है, जो हमें नई आँख देगा, और भारत-पाक मैत्री को हमारे झेलने योग्य बनायेगा। पता नही एकता के इस यज्ञ की आग मे कितने चोटी के नेताओं को हमे और झोकना होगा। पता नही अर्जुन ने जिस विश्वरूप का दर्शन किया है, उसकी किंचित झांई कौरवो के मस्तिष्क को कब भेद पायेगी।

भूकम्प के माह

शास्त्री जी के शासन के १९ महीने भारत के इतिहास मे गजब की उथल-पुथल के महीने कहे जाएगे। इन महीनो में लगातार जो ज्वार-भाटे आये, वे नेहरू के जबरदस्त जहाज को भी काफी क्षत-विक्षत कर सकते थे। लेकिन यह सचमुच एक अविश्वसनीय चमत्कार है कि लहरो के थपेड़े खाते हुये देश को एक वामन आकार के नेता ने संभाला, और पार लगाया। लालबहादुर के उन्नीस महीनो मे जितने भूकम्प इस देश में आये, उतने आजादी के बाद एक साथ कभी नही आये होगे। भारत के अलावा शायद कोई भी पिछड़ा हुआ देश उनसे छिन्न-भिन्न हो जाता। लेकिन भारत आज पहले से ज्यादा मजबूत है, और आत्म विश्वस्त है। और इस नये आत्म विश्वास का श्रेय लालबहादुर शास्त्री को है।

साल भर के अन्दर देश के मनो-विज्ञान मे कितना परिवर्तन हो गया है। साल भर पहले लोग शास्त्रीजी के कमजोर, ढुलमुल, रीढ़हीन नेतृत्व की मजाक उड़ाते थे। साल भर पहले एक ससद सदस्य (गंगाशरण सिह) ने यहाँ तक कह दिया कि शास्त्रीजी का राज मुगल साम्राज्य का अन्तिम अध्याय है। और खुद प्रधानमन्त्री बहादुरशाह जफर के नये संस्करण हैं। साल भर पहले कहा जाता था कि शास्त्रीजी का सिंहासन कांग्रेस की सिंडकेट की दया पर निर्भर है। तब न तो कोई मुख्य मन्त्री शास्त्रीजी की बात सुनता था न कोई बड़ा नेता। बेचारे प्रधानमन्त्री बार बार मुख्य मन्त्रियो के सम्मेलन बुलाते, कभी अनाज पर विचार करते तो कभी भाषा पर। लेकिन दिल्ली के फसलो को प्रातीय सूबेदार तुरन्त भुला देते थे शास्त्रीजी के सामने और पीठ पीछे उनकी बुराई की जाती। विजयलक्ष्मी पडित कहती कि सरकार ढुलमुलपन मे गिरफ्तार है। सदोबा पाटिल साम्राज्यवाद की खुली मजाक उड़ाते। कामराज ने भी दो बार हिंदी वालो की बुराई की, और योजना के आकार का विरोध किया। कृष्णन मेनन और वामपंथी कांग्रेसियों ने शिकायत शुरू कर दी कि शास्त्रीजी नेहरू के रास्ते से हटते जा रहे हैं। लालबहादुर शास्त्री के साथ कौन ?

लेकिन यह भारत के इतिहास का व्यंग है कि जहाँ मोरारजी या कृष्णन मेनन जैसे तेज और कुशाग्र नेता असफल होते वहाँ लालबहादुर शास्त्री सफल हो गये। दरअसल नेहरू जी की मौत के बाद जो क्षण भारत में उपस्थित हुआ, उसकी ऐतिहासिक जरूरत यह थी कि नया नेता एक हद तक ढुलमुल हो, द्विविधा पूर्ण हो, मध्यम बुद्धि हो, और वह ऐसी नीतियाँ नही अपनाए, जिनकी प्रतिक्रिया तीखी हो। भारत को ऐसे नेता की जरूरत थी, जो देश को सभी विरोधी रायों का और प्रवृत्तियों का लघुतम समापवर्त्य हो और शास्त्रीजी केवल शारीरिक आकार मे ही नहीं, हर बात मे देश के लघुत्तम समापवर्त्य थे। कामराज ने सलाह मशवरे के तरीके से उन्हें प्रधानमन्त्री बनाया, और लालबहादुर ने हमेशा यह याद रखा कि किस प्रणाली ने उन्हें इतना ऊँचा पद दिलाया है। हमेशा कृतज्ञ रहे और इसलिये जब भी कोई विवादग्रस्त मामला आता, तब वे सलाह मशवरों का एक उबाने वाला दौर शुरू कर देते, मानो निर्णय आदमी के दिमाग को नहीं करना पड़ेगा, वह केवल कमेटी को बैठको से उपक कर ऊपर आ जाएगा। लेकिन कमेटियो मे इस तरह प्रश्नों को घुमाना भी शायद शास्त्रीजी के शासन के पूर्वार्द्ध की ऐतिहासिक आवश्यकता थी। अगर वे देश को दृढ़ नेतृत्व देते, याने अपनी रायों को जबरन कई विरोधियो पर थोपते, तो उनका टिकना शायद मुश्किल हो जाता। आखिर दृढ नेतृत्व देने वाले तो लोग देश मे थे, लेकिन नेहरू के बाद वे पसन्द नही किये गये। इसलिये कुछ महीनो तक शास्त्रीजी के शासन मे ठेठ मध्य बिन्दु को जड़ता और गतिहीनता बनी रही है। लेकिन यह सारी कहानी अगस्त १९६५ के पहले की है।

गजब की दृढ़ता

सितम्बर के भारत-पाकिस्तान युद्ध ने शास्त्रीजी का कायाकल्प कर दिया। एक नये नेता के रूप मे उन्होंने दूसरी बार जन्म लिया। युद्ध के दिनो मे एक बार भी ऐसा मौका नही आया, जब शास्त्रीजी का हाथ कांपा हो, या झिझका हो। उन दिनों तीर की तरह वे निशान पर पहुँचते थे, और उनके निर्णय आश्चर्यजनक रूप से सही होते थे। युद्ध मे शास्त्रीजी ने उतने ही गजब की सूझबूझ बतलाई, जितनी कि जवाहरलाल नेहरू ने अपने सर्वश्रेष्ठ दिनो मे शांति के लिये बतलाई थी। युद्ध ने शास्त्रीजी को नई ताकत दी, और इस नई ताकत को महसूस करके शास्त्रीजी ने सही माने मे देश पर शासन करना शुरू कर दिया। जब नेता की महानता देश की छाती पर कुछ चढी, तो देश का मनोबल ऊँचा हुआ, और उसे लगा कि वह सचमुच एक देश है। अब लालबहादुर कांग्रेस के गुटो के सन्तुलन-बिन्दु नही थे, अब वे सार्वभौम सता वाले जननेता थे। लालबहादुर को अपनी शक्ति का पता चल गया था, इसका सबूत यह है कि उन्होने बिना हीले हवाले के टी० टी० कृष्णमाचारी का स्तीफा मजूर कर लिया, और शचीन्द्र चौधरी जैसे नये व्यक्ति को बिना किसी से पूछताछ किये वित्तमत्री बना दिया।

लालबहादुर शास्त्री ने अपने कार्यकाल मे तीन भूकम्प सहे, जो किसी भी प्रधान मन्त्री का तख्त उलटने के लिए काफी थे। पहला भूकम्प था दक्षिण का भाषा-उपद्रव, जो जनवरी,फरवरी, १९६५ में एक गृहयुद्ध का रूप लेता लगता था। दूसरा भूकम्प था कच्छ आक्रमण। कच्छ से देश के मनोबल की जड़ें हिल गईं, और उसे अपने आप के प्रति अविश्वास पैदा हो गया। और तीसरा भूकप था भारत पाक युद्ध का , जिसने इस मलिन देश को परीक्षा की भट्टी मे झोका, और तब कचन सी देह लिए देश उससे बाहर निकला। इसके अलावा शास्त्री जी के कार्यकाल मे देश ने शताब्दी के सामने भीषण

अकाल का सामना किया, जो पड़ नहीं सका। शास्त्री के कार्यकाल में युद्ध ने योजना को अस्त व्यस्त कर दिया, और उन्हीं के काल में हमने सीखा कि देश की ताकत उसकी खेती से नापी जानी चाहिए, सिर्फ बिजली से नहीं, जैसा कि लेनिन ने कहा था।

शास्त्री के बाद कौन ? जिस देश ने नेहरू के बाद एक नेता का चुनाव कर लिया, उसे ऐसे प्रश्नों से भयभीत नहीं होना चाहिए, लेकिन शास्त्री जी की मृत्यु के क्षण में न जाने क्यों ऐसा लगता है, जैसे लालबहादुर नेहरू से भी ज्यादा देश के लिए अनिवार्य थे। "नेहरू के बाद कौन" का उत्तर फिर भी दिया जा सकता था, लेकिन "शास्त्री के बाद कौन" सचमुच एक ज्यादा मुश्किल सवाल है, जिस तरह वर्षों की ट्रेनिंग के बाद एक इंजीनियर तैयार होता है, उसी तरह वर्षों की मुहब्बत और वफादारी के बाद एक नेता की शक्ल उभरती है। हाल ही में देश ने लालबहादुर शास्त्री को अपना स्नेह देना सीखा था। अब जो नया प्रधान मन्त्री बनेगा, वह एकदम सबका आस्था-केंद्र थोड़ा ही बन सकता है। उसे कई लम्बे महीनों तक मानों प्रोबेशन पर रहना होगा, और तब उसकी जड़ें जनता के दिलों में उतरेंगी। एक नेता की मौत से पूरे देश के पहिये किस बुरी तरह अटक जाते हैं। शास्त्री की मौत एक कच्चे घाव की तरह कई दिनों तक हममें टीस पैदा करती रहेगी।

जवाहरलाल नेहरू ने कभी कहा था—अगर देश जिन्दा है, तो किसी के मरने से क्या होता है। यह सही है। लेकिन जब कोई बड़ा नेता मरता है, तो एक हद तक देश भी उसके साथ मर जाता है। शास्त्री जी की मृत्यु से ठंडे पड़े देश को जिलाने में समय लगेगा। जियेगा वह अवश्य लेकिन हाय यह जिन्दा होने की थकान !

हम रहें या न रहें लेकिन यह झण्डा रहना चाहिए और देश रहना चाहिए और मुझे विश्वास है कि यह झण्डा रहेगा, हम और आप रहें या न रहें, लेकिन भारत का सिर ऊँचा होगा। भारत दुनियां के देशों में एक बड़ा देश होगा और शायद भारत दुनियां को कुछ दे भी सके।

—लालबहादुर शास्त्री

अक्षयकुमार

भूल पर भी बधाई

स्वर्गीय श्री लालबहादुर शास्त्री को लोग विनय की मूर्ति, अध्यवसायी, मितभाषी और भारतीय परम्परा के प्रतीक के रूप मे अधिकतर जानते है। बहुत कम लोग होगे जो यह जानते हों कि वह कितने दृढ़ निश्चयी थे। उनके प्रधान मन्त्री बनने के कुछ समय बाद ही पाकिस्तान ने अपने रुख मे कडाई करना शुरू कर दिया था और चीन के साथ सांठ-गांठ करके वह यह सोचता था कि अगर हमला कर दिया जाए तो भारत का छोटे कद का, धोती पहनने वाला और विनयी प्रधान मन्त्री पस्त-हिम्मत हो जाएगा। पर उनका ऐसा सोचना कितनी बड़ी भूल थी।

उन्ही दिनो एक बार शास्त्री जी से मिलने का अवसर हुआ तो मैंने कहा—"कच्छ मे पाकिस्तान से समझौता करने को बहुत से लोग आपकी कमजोरी मान रहे है।" तो उन्होंने कहा—"पाकिस्तान के साथ हम अपनी पुरानी दोस्ती की नीति पर चलना चाहते है। दूसरे, कच्छ की जैसी स्थिति है वहाँ पर लड़ाई लम्बी चल सकती है, लेकिन उससे हम घबराते नही है। हाँ, पाकिस्तान को एक बार मौका देना चाहते है कि वह भारत की दोस्ती की भावना को समझे। अगर वह अपना व्यवहार नही बदलता तो फिर हमें भी मुनासिब कदम उठाना होगा।"

ऐतिहासिक निर्णय

यह बात आई-गई हो गई और कुछ महीने के बाद ही अगस्त मे जब पाकिस्तान ने कश्मीर मे घुसपैठिए भेजे और सीमा-रेखा भंग की, तब शास्त्री जी ने एक दिन मुझसे बातो-बातो मे कहा—"आप कहते थे न कि लोग समझौता करने को हमारी कमजोरी समझते है, पर अब जबकि भारत की सेना ने मुझसे दूसरा मोर्चा खोलने की बात कही तब मैने उनसे कह दिया कि हमारी सद्भावनाए आपके साथ है आगे बढ़िए।"

जानकार लोगो का कहना है कि शास्त्री जी ने पाकिस्तान के हथियार का जवाब हथियार से देने का फैसला कच्छ के समय ही कर लिया था। वास्तव में वह पाकिस्तान को एक अन्तिम अवसर देना चाहते थे कि वह संभल जाए। लेकिन, पाकिस्तान शास्त्री जी को ही नही भारतीय नेताओ को यह कमजोरी मानता था कि वे लडेगे नही, शान्ति की बात करेंगे और उस हालत मे कश्मीर पर अपनी मनचाही करने का अवसर मिलेगा।

इतिहास के पन्नों को पलटिए तो चन्द्रगुप्त मौर्य और स्कन्दगुप्त के बाद शास्त्री जी ने पहली बार हथियार का जवाब हथियार से देने का ऐतिहासिक निर्णय किया और वह भी अपनी भूमि पर नही आक्रान्ता की भूमि पर। इससे उस नन्हे-से धोती पहनने वाले भारतीय संस्कृति मे पले व्यक्ति के दृढ सकल्प एव राष्ट्र-प्रेम का पता चलता है। शास्त्री जी ने खण्डित धारा को पुन. सफलता प्रदान की।

आत्मप्रशंसा से दूर

एक बात उस समय की याद आ रही है जब शास्त्री जी स्वराष्ट्र मन्त्री थे और बिजली-पानी के खर्च को लेकर प्रतिपक्षी दलो ने यह शिकायत की थी कि मन्त्रियो की कोठियो पर अन्धाधुन्ध बिजली का खर्च होता है क्योकि उन्हे उसका भुगतान स्वय नही करना पडता। शास्त्री जी ने अपने मन मे सोचा कि लोगो की बात ठीक ही है और उन्होने निर्णय किया कि २५०) रुपया से अधिक जितना भी बिल आएगा, वह स्वय अदा करेगे। इससे ऊपर सरकार से नही दिलायेगे। शास्त्री जी के इस निर्णय की सभी क्षेत्रो मे प्रशसा की गई, तदनुसार 'नवभारत टाइम्स' मे भी उस पर कुछ लिखा गया।

दो दिन बाद ही पुरुषोत्तम हिन्दी भवन के ट्रस्ट की बैठक थी। बैठक के बाद चलते हुए शास्त्री जी ने कहा—"आप से हमे यह उम्मीद नही थी।" उन्होने यह बात बड़ी गम्भीरता से कही थी मै सकते मे आ गया कि क्या बात हो गई? प्रश्नसूचक दृष्टि से जब मैने उनकी ओर देखा तब वह बोले—"बिजली के खर्च के मामले मे मैने ऐसा क्या निर्णय किया कि आपने उस पर अपने अखबार मे लिखा। यह तो दुर्भाग्य की बात है कि यह बात मुझे पहले नही सूझी। आश्चर्य है हमारे गरीब देश मे मन्त्रियो को इस भूल के लिए भी बधाई दी जाती है।" शास्त्री जी ने जिस ढग से यह बात कही उसमे रत्ती भर पाखण्ड नही था।

इससे भी पहले जब शास्त्री जी रेल-मन्त्री थे, उस समय की एक घटना भी याद हो आई है। उन्होने अरियालूर रेल दुर्घटना से क्षुब्ध होकर अपने पद से त्यागपत्र दे दिया था। मै भी उन लोगो मे था जो उनके उस निर्णय से सहमत न थे। यही कहने मै उनके पास गया। उन्होने आधी बात सुनकर ही कहा—"देखिए, आप जो कुछ कह रहे है, मै समझता हूँ। लेकिन मेरे हट जाने से रेलवे के प्रशासन पर जो असर होगा, वह दोषी कर्मचारियो को बर्खास्त कर देने से भी नही हो पाएगा। फिर सदा मन्त्री बने रहने की आदत भी तो अच्छी नही।"

यह सर्व विदित है कि उनकी धर्मप्राण धर्मपत्नी को कम खर्च मे भी गृहस्थी चलाने मे कभी दिक्कत नही हुई, साथ ही यह भी सत्य है कि उनके बच्चो को भी कभी इस बात का हीन भाव नही हुआ कि वे असम्पन्न परिवार के बालक हैं। सादा जीवन, उच्च विचार का इससे अच्छा उदाहरण और कहाँ मिलेगा।

श्रवणकुमार नवेन्दु

शास्त्रीजी के निवास-स्थान पर दो दिन दो रातें

२० अगस्त १९६५ को वह सुनहरी शाम आज मेरे आँखों के सामने अमावश की तरह छा गयी है। मै लिखते हुए भी कुछ नही लिख पा रहा हूँ। मुझे यह मालूम नही था कि वह शास्त्रीजी की पहली मुलाकात होगी। मै काशी से दिल्ली पहुँचा और दिल्ली पहुँचकर शास्त्रीजी से मुलाकात न करूँ यह मेरे योग्य नहीं था। मैने सुना था कि शास्त्रीजी आदिवासियों से बेहद प्यार करते है। उनसे मिलने के लिए मुझे समय भी नही लेना पडा। मैंने उनके निवास स्थान पर टेलीफोन से बाते करने की दृढता की। शास्त्रीजी उस समय निवास स्थान पर नही थे। श्रीमती ललिता शास्त्री ने फोन पर बाते कीं। उस समय श्रीमती शास्त्री के हृदय में मेरे प्रति अगाध प्रेम भर गया। उनकी मुझसे मिलने की काफी उत्कट इच्छा हो गई। फोन पर बातचीत करते समय मै आश्चर्य में पड़ गया और सोचने लगा कि भारत के प्रधानमन्त्री की पत्नी मुझसे इस प्रकार की सद्भावना पूर्ण बातें कर सकती है? लेकिन श्रीमती शास्त्रीजी को जब मैने विश्वास दिलाया कि मै काशी से आया हूँ, आपसे मिलने के लिये मेरी उत्कट इच्छा है तो श्रीमती शास्त्री ने तुरन्त ही मुझे मिलने के बारे में समय निश्चित कर दी या वह भी कोई दो तीन दिन का नही सिर्फ २ घण्टे का।

मै शाम के समय करीब ५ बजे होगे, शास्त्रीजी के निवास स्थान पर पहुँचा। उस समय श्रीमती शास्त्री मेरे आने की प्रतीक्षा कर रही थी। और अपने सन्तरी से भी यह कहला दी थी कि एक काशी के कवि आये है और वे अभी आयेंगे, इस कारण तुम उन्हे अन्दर आने देना।

मैं उचित समय पर शास्त्रीजी के यहाँ पहुँच गया। श्रीमती ललिता शास्त्री ने उस समय मुझे जो सम्मान दिया, वह मै जिन्दगी के अन्तिम क्षणों मे भी नही भुला सकता। श्रीमती शास्त्री की सद्भावना पूर्ण बातें आज ऐसी परिस्थिति मे मेरे हृदय को विदीर्ण कर रही हैं।

उन्होने तत्क्षण अपने ही हाथो से चाय बनाकर मुझे पीने के लिए सामने रख दी। आदमी रहते हुए भी श्रीमती शास्त्री का अपने हाथों से चाय बनाकर मेरे सामने रखना यह उनके हृदय का अगाध प्रेम था।

मै चाय पी रहा था कि तत्क्षण शास्त्रीजी वहाँ पर आ गये। मै बीच में ही चाय का प्याला रखते हुए उठ खड़ा हुआ और शास्त्रीजी के पाँव छुए। उस समय शास्त्रीजी कपड़ा पहने ही बैठ गये और हल्की-हल्की मुस्कान मे मुस्कराने लगे। फिर श्रीमती ललिता की ओर संकेत दृष्टि मे उन्होने कहा—"आपका परिचय?" श्रीमती ललिता ने स्पष्ट शब्दों मे मेरा परिचय दिया। शास्त्रीजी ने कहा—"मुझे काशी के कण-कण से प्यार है। आप काशी के है, यह जानकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता

हुई है।" इतना ही शास्त्रीजी कह पाये थे कि बीच में ही ललिताजी बोल उठीं आप स्व० महाप्राण "निरालाजी" के शिष्य भी है साथ ही "विश्व सौरभ" के सम्पादक भी है। "विश्व सौरभ" का नाम लेते ही शास्त्रीजी एक दृष्टिगत मेरी ओर देखने लगे और पीठ पर हाथ फेरते हुए उन्होने कहा "यह पत्रिका बड़ी ही उपयोगी है। इसके प्रति हमारी सहानुभूति भी है। आप इसके सम्पादक हैं, इस हेतु मै आपको हार्दिक बधाई देता हूँ।" उस समय शास्त्रीजी का यह सारगर्भित शब्द सुनकर मै फूला नही समाया।

"विश्व-सौरभ" के बारे मे श्रीमती ललिता ने मुझे पहले ही कह दिया था कि मै नित्य इसे पढती हूँ पत्रिका समझ कर नही, बल्कि "गीता समझकर।" इसी बीच मे ललिताजी से कहा कि तब आपने अपनी रचनाये प्रकाशन हेतु क्यो नही दी ? यह शब्द सुनकर श्रीमती शास्त्री ठहाका मारकर हँसने लगी और मुझसे कहा कि—"बेटा लिखने का समय ही नही मिलता, पत्र जरूर पढ लेती थी, लेकिन उत्तर नही लिख पाती रही, इसका मुझे हार्दिक खेद है।"

उस समय मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही थी। ऐसा महसूस हो रहा था कि मै अपने परिवार के सदस्यो के बीच मे बैठकर बाते कर रहा हूँ। क्योकि मुझे मालूम था कि श्रीमती ललिता साधारण हिन्दी मे ही बाते करती है। कारण भी स्पष्ट था कि भोजपुरी मे ही उनकी जन्मभूमि है। इस कारण भोजपुरी भाषा या साधारण हिन्दी बोलना उनका नित्य का काम है।

श्रीमती ललिता हिन्दी की एक अच्छी कवयित्री भी है। भोजपुरी भाषा मे ही वह कविताएँ लिखती हैं। शास्त्रीजी मेरे पास १५-२० मिनट तक बैठे रहे, फिर उठकर अपने रीडिंग रूम मे चले गये, लेकिन श्रीमती ललिता मुझे अपना बेटा समझकर मेरे पास काफी घंटो तक बैठी रही। उस समय उन्होने भाव-विभोर हो मुझसे कई कविताये सुनी और काफी सराहना भी की। अब मैंने अपनी घडी की ओर दृष्टि डाली तो आठ बज चुके थे। मै उठ खड़ा हुआ चलने के लिये लेकिन बरसात बडे जोर से होने लगी। श्रीमती शास्त्री ने मेरी बाँह पकड़कर फिर मुझे बैठा लिया और बोली—"बेटा आज तुम्हे जाने नही दूंगी अशोक के बाबूजी सुनेगे तो मुझे क्या कहेंगे ?"

मै भी बैठ गया। थोडी ही देर मे उनका रसोइया रामनाथ मेरे सामने भोजन की थाली रख गया। श्रीमती ललिता मुसकराने लगी, मै भी हँस पडा पहले तो मै भोजन करने से इन्कार कर चुका था, लेकिन बडे आग्रह के बाद मैने भोजन किया भोजन भी साधारण था। लेकिन ललिताजी को यह मालूम था कि यू० पी० और बिहार के लोग चावल खाना पसन्द करते है, जबकि शास्त्रीजी चावल घर मे बनवाने से इन्कार कर चुके थे। उस समय मेरे ही वास्ते चावल और अरहर की दाल बनायी गयी थी। आलू का दो तीन किस्म का व्यंजन (जो कि शास्त्रीजी का प्रिय भोजन था) बना करके थाली मे रखा हुआ था।

मेरे भोजन करने के पश्चात् भाई सुनीलजी मुझे अपने रीडिंग रूम मे ले गये और बैठकर काशी की प्रशंसा करने लगे। सुनीलजी ने जो कि मेरी आयु से अभी बहुत ही छोटे है, मेरा काफी सम्मान किया। बोले आप तो विद्वान है और विद्वान के सम्मुख मुझ जैसे विद्यार्थी की क्या गिनती ? इतनी बातें कहकर वे ठहाका मारकर हँसने लगे और उस समय उन्होने मुझसे शृंगारिक रचनाये खूब सुनी। थोडा ही देर में सुनीलजी मुझसे इतने घुलमिल गये कि मुझे महसूस होने लगा

कि किसी पुराने मित्र से बात कर रहा हूँ। शास्त्रीजी का निवास स्थान भारत के प्रधानमन्त्री जैसा उस समय मुझे नहीं मालूम पडता था, लगता था कि अपना ही घर है और अपने ही घर के सदस्यों से बाते कर रहा हूँ।

घड़ी में दस बज चुके थे। मै शास्त्रीजी से बाते करने के लिये उनके रूम में पहुँचा। उस समय शास्त्रीजी कुर्सी पर बैठे किसी गम्भीर विचार में निमग्न थे, फिर भी तत्काल ही अपना मूड बदलकर शास्त्रीजी ने मुझको बैठने के लिये कहा। मै उन्ही की बगल में कुर्सी खीचकर बैठ गया। शास्त्रीजी अपने वाराणसी के मित्रों के बारे मे पूछने लगे। सबसे पहले हिन्दी के राजहँस कवि रामपुनीत श्रीवास्तव के बारे मे उन्होने पूछा। फिर राजाराम शास्त्रीजी के बारे में पूछा, मै सब ठीक ठीक बताता गया। शास्त्रीजी मुसकराने लगे।

थोड़ी देर बाद उन्होने कहा। "काशी मेरे लिए बड़ी ही प्रेरणाप्रद नगरी रही है। उसका एक एक कण लुभावना है। वह साहित्यिको का केन्द्र है।" मेरे बारेमे उन्होने कहा कि देहली में आप किस उद्देश्य से आये है?"

मैंने तत्काल उत्तर दिया कवि सम्मेलन मे आया था और अपने साहित्यिक मित्रो से मिलने के लिए।फिर मन मे आया कि आपके दर्शन भी इस उद्देश्य से कर लूँ। इसी ध्येय से मैं यहाँ आया हूँ। अब दिल्ली यात्रा भी सफल हो गयी। मुझे शास्त्रीजी ने उस समय बताया कि जीवन ही काम करने के लिये है। कभी-कभी इसमें मनुष्य को सघर्ष भी करना पड़ता है। लेकिन उस संघर्ष से घबड़ाना नहीं चाहिए। सफलता जरूर मिलेगी। आप हिन्दी की सेवा कर रहे है। यह कार्य मुझे बड़ा ही प्रिय है। 'निरालाजी' इसी के पीछे टूट गये मगर आज 'निराला साहित्य' अमर है। हिन्दी की सेवा जनता की सेवा है। आपसे मिलकर मुझे बडी खुशी हुई है कि आप जैसे साहित्यिकों से समाज को प्रेरणा मिलती रहेगी।

शास्त्रीजी के उक्त शब्द उस समय तो नही, लेकिन आज जबकि वे हमारे बीच नही है, जीवन में प्रेरणा भरते रहेगे।

शास्त्रीजी का परिवार भरा-पूरा है। गरीबी में तो कितने लोग उजड़ गये, टूट गये, लेकिन शास्त्रीजी टूटे नही बल्कि अपने अन्तिम दिनो तक सघर्ष करते रहे, और यही कारण है कि शास्त्रीजी भारत के प्रधानमन्त्री बनाये गये। उनकी राष्ट्र की बहुमूल्य सेवाये युगयुगो तक करोडो भारतीयो को प्रेरणा देती रहेगी। इतिहास इस बात की गवाही देगा कि शास्त्रीजी जैसा देश भक्त न भारत में अब तक कोई हुआ है और न होने की सम्भावना है।

शास्त्रीजी बोझिल डालियो से भी अधिक नमनशील थे। उनका हृदय मोम से भी अधिक मुलायम और पाषाण से भी अधिक कठोर था। शास्त्रीजी का यह परिचय भारत पाक सघर्ष से मिल चुका था। शास्त्रीजी के निवास स्थान पर हमने दो दिन और दो राते बितायी थी, लेकिन उस समय काल के निर्मम प्रहार को मैं महसूस नही कर पाया कि पाँच ही महीने वह देश के इस नन्हे मुन्ने को हम भारतीयो से बहुत दूर कर देगा।

गिरिजाशकर त्रिवेदो

कर्म ग्रौर निष्ठा की मूर्ति

एक वार न्यूयार्क के पत्र 'सटर्डे रिव्यू' के सम्पादक श्री नार्मन कजिन्स ने प्रधान मन्त्री श्रो जवाहरलाल नेहरू से एक भेट में पूछा—"महात्मा गाधी ने ग्र.पको ग्रपने उत्ताराधिकारो के रूप मे चुना था। क्या ग्रापने ग्रपने उत्ताराधिकारी का चुनाव कर लिया है ? ग्रापको भी ग्रपना उत्ताराधिकारी चुनना चाहिये वहुत सम्भव है, जनता ग्रपना नेता चुनने मे ग्रभी समर्थ न हो। कई लोग यह भी सोचते है कि यदि ग्रापने यह कार्य ग्रपने जीवनकाल मे न कर लिया, तो इसके लिए जवरदस्त सवष उठ खड़े होंगे। इतना ही नही, देश विखर जायेगा।"

उस समय श्री नेहरू ने जो उत्तार दिया था, वह ग्रपनो जनता पर गहरे विश्वास ग्रौर ग्रास्था से ग्रोत-प्रोत था। उन्होने कहा था—"इस देश की जनता मे ग्रपना नेता चुनने की पूरी सामर्थ्य है। ग्रौर प्रजातन्त्र मे इस काम को करने की गुस्ताखी भी मैं नही कर सकता। जव भी ऐसा ग्रवसर ग्रायेगा, जनता ग्रपने नेता का चुनाव कर लेगो, ग्रौर वह चुनाव गलत नही होगा।"

२७ मई १९६४ के दिन श्री नेहरू जो का निधन हुग्रा। यह घटना भारतोय इतिहास मे वडो भयावह थी। लगता था कि देश की जीवनी-शक्ति ही समाप्त हो गई। देश शोक-सागर मे डूब गया। भारत को जनता के सामने ग्रपनो सामर्थ्य की परोक्षा की घड़ी ग्रचानक ग्रा उपस्थित हुई। नया नेता कौन होगा ? ग्रटकले शुरू हुई। गुलजारोलाल नन्दा, मुरारजी भाई या ग्रौर कोई ? पर नही, जनता ग्रागे ग्राई ग्रौर ग्रपने उस महान् नेता के विश्वास को सत्य सिद्ध कर दिखाया, जिसने कहा था कि हमारी जनता ग्रपने नेता के चुनाव मे समर्थ है।

९ जून १९६४ को श्री लालवहादुर शास्त्रो ने जव प्रधान मन्त्री को शपथ ग्रहण की, तो मा रामदुलारो देवी ने ग्राशीर्वाद देते हुए कहा था कि मैं ग्रपने वेटे से यही ग्राशा रखती हूँ, कि किसो के साथ भो उससे ग्रन्याय न हो। देश के लिए उसे कुर्वान भो होना पड़े तो वह तैयार रहे। लेकिन देश वना रहे। वात एकदम सत्य सिद्ध हुई है। यह मा का लाल देश के लिए ही नहो, विश्व को शाति के लिए न्यौछावर हो गया।

मुगलसराय (वाराणसी) मे २ ग्रक्टूवर १९०४ के दिन एक सामान्य ग्रध्यापक के घर मे जन्म लेने वाले इस वालक से किसने ग्राशा को थो कि एक दिन यही वालक देश की वागडोर घोर सकट की घड़ी में सभालकर ग्रपनी ग्रप्रतिम प्रतिभा ग्रौर विलक्षण शौर्य तथा देश के प्रति गहन कर्तव्य-निष्ठा का ग्रद्वितीय परिचय देगा।

पिता शारदाप्रसाद ने डेढ वर्ष के लालबहादुर का साथ छोडकर संसार से विदा ले ली। परिवार पर दरिद्र नारायण की कृपा रहती थी, पर पिता के न रहने पर तो यह परिवार एकदम ही बेसहारा हो गया। माता रामदुलारी अपने पुत्र लालबहादुर तथा दो पुत्रियों को साथ लेकर अपने भाई के यहां वाराणसी से ९ मील दूर रामनगर आ गयी। हमारे राष्ट्र नेता का बाल्यकाल यही गुजरा।

घोर गरीबी; पर जबरदस्त आत्म-विश्वास, दृढता और ईमानदारी के प्रति गहन आस्था के साथ लालबहादुर ने अपनी जीवन-यात्रा आरम्भ की। और कर्त्तव्य निष्ठा तथा कठिन परिश्रम की बदौलत देश के सर्वमान्य नेता पद पर पहुँच गये।

वे रेल मन्त्री थे। १९५६ मे अरियालुर रेल दुर्घटना मे १५० आदमी मारे गये। इसके लिए स्वय को उत्तरदायी मानकर श्री शास्त्री जी ने त्यागपत्र दे दिया। प्रधान मन्त्री श्री नेहरू के समझाने पर भी आप त्यागपत्र वापस लेने को तैयार न हुए। तब पडितजी ने त्यागपत्र स्वीकार करते हुए लोक सभा मे कहा था—"वे एक ऊँचे आदर्शों वाले निष्ठावान् व्यक्ति है। उनके जैसे बेहतर साथी और बन्धु की कल्पना करना असम्भव है।"

उनके चेहरे के भोलेपन को देखकर विश्वास करना मुश्किल होता था कि क्या यही वह व्यक्ति है, जो अपनी असाधारण कार्यक्षमता और बुद्धि-कौशल के बल पर प्रसिद्धि के चरम उत्कर्ष पर पहुँच गया है। बम्बई नगर के षड्मुखानन्द हाल मे १९६४ के मई माह मे अखिल भारतीय कांग्रेस महासमिति का वार्षिक अधिवेशन चल रहा था। बीच मे उठकर मै नेताओं और पत्रकारो के लिए बनी कैन्टीन मे चाय पीने गया। कुर्सी पर बैठने ही जा रहा था कि किसी ने कहा कि लीजिये शास्त्री जी भी आ रहे है। मै चौकन्ना होकर मंच से कैन्टीन आने वाले मार्ग की ओर देखने लगा। गम्भीर मुद्रा में वे चले आ रहे थे। कुर्सिया भरी हुई थी। मैने खड़े होकर उनको प्रणाम किया तथा कुर्सी छोडकर हट गया। उन्होने मेरे कधे पर हाथ रखकर कहा—"आप बैठिए, पहले आप आये है और चाय भी पहले आपको मिलनी चाहिए।" इतने में अन्य कई नेताओं ने आकर उन्हे घेर लिया और मै चाय पीना भूलकर उस विशाल व्यक्तित्व वाले नेता के इन प्रजातन्त्रीय वाक्यों मे, जिनमे सहज शिष्टता की भावना विद्यमान थी, बैठकर मन-ही-मन रसानुभूति करने लगा।

१५ अगस्त १९६५ को लाल किले की प्राचीर से बोलते हुए उन्होने कहा था "हम रहें या न रहें, लेकिन यह झण्डा रहना चाहिये और देश रहना चाहिये। मुझे विश्वास है कि यह झण्डा रहेगा, हम और आप रहे या न रहें, लेकिन भारत का सिर ऊँचा होगा। भारत दुनिया के देशो मे एक बड़ा देश होगा और शायद भारत दुनिया को कुछ दे भी सके।" और सचमुच उन्होने भारतीय जन-जीवन को असाधारण उत्साह और शक्ति से भर दिया। इतना ही नहीं, उन्होने देश की सीमाओं के पार राष्ट्र के सम्मान और प्रतिष्ठा के नये कीर्तिमान स्थापित किये।

वे अत्यन्त गरीबी से उठकर इतनी महानता पर पहुँचे थे। पर वे उस गरीबी के जीवन को भूले नही थे। वे हमेशा गाँवो में बसे निर्धन परिवारो की दीन दशा सुधारने मे प्रयत्नशील रहे। बापू की तरह उन्हें भी भारत की आत्मा के दर्शन गाँवो में ही होते थे। सादगी की वेशभूषा मे ही वे सदा देखे गये। प्रधानमन्त्री की कुर्सी पर भी वे धोती कुर्ता पहनना नही भूले। वे कर्मप्रधान तपःपूत थे। इतने महान् पद पर पहुँचकर भी उन्होने अपने विचार और कर्म की दिशा को पद के प्रभाव से मार्ग-

भ्रष्ट नही होने दिया। उनका समस्त जीवन देश के जन-जीवन को समृद्ध और सुखी बनाने मे लगा रहा।

गम्भीर से गम्भीर प्रश्नों को आपने बड़ी कुशलता से हल किया। मद्रास का भाषा-आन्दोलन नागा-समस्या, हजरत बाल कांड, पजाबी सूबा आन्दोलन और अन्त मे पाकिस्तान द्वारा भारत पर हुए बेहयायी के हमले की समस्या को आपने जिस गम्भीरता और साहस से सुलझाया, उसे देखकर विश्व के चोटी के राजनीतिक भी दग रह गये। श्रीशास्त्री के प्रधानमन्त्री चुने जाने पर वाशिंगटन पोस्ट ने लिखा था— 'यदि भारत में कोई ऐसा राजनीतिज्ञ है, जिसमें इस देश पर शासन करने की प्रतिभा और स्वभावगत योग्यता है तो वह श्री लालबहादुर शास्त्री है। श्रीशास्त्री परिश्रमी और सवेदनशील जनसेवी कार्यकर्त्ता तथा आज के भारत में व्याप्त हितों के संघर्ष एवं तनावों के बीच समझौता कराने के लिये सक्षम राजनीतिज्ञ के रूप मे प्रख्यात हैं।"

श्रीशास्त्री जी मे चाणक्य जैसी पैनी सूझ-बूझ, सरदार पटेल जैसी दृढ़ता और बापू जैसा गाम्भीर्य तथा शांति प्रियता विद्यमान थी। इसीलिये वे विषम्य परिस्थितियों में भी कभी विचलित नही हुए। १ सितम्बर को जब छम्ब-जौरियाँ क्षेत्र में पेटन टैंकों तथा बख्तर बन्द गाड़ियों से लैस पाकिस्तानी सेना ने आक्रमण कर दिया, तब ३ सितम्बर १९६५ को उन्होंने राष्ट्र के नाम संदेश प्रसारित करते हुए कहा था:—

साथियो! मैं आज आपको पाकिस्तान के हमले और उससे जो हालत पैदा हो गए है, उसके सम्बन्ध मे बताना चाहता हूँ और इस नाजुक घड़ी मे हमारे ऊपर जो जिम्मेदारियाँ और चिन्तायें आ पड़ी है, उनमें आपके साथ हिस्सा बटाना चाहता हूँ। पहली सितम्बर को पाकिस्तान ने जम्मू के छम्ब क्षेत्र मे एक ब्रिगेड फौज लेकर हमारे ऊपर भारी हमला किया है। हमारे बहादुर जवान इस हमले का बड़ी बहादुरी से मुकाबला कर रहे हैं। मैं उन्हे दिल से बधाई देता हूँ। सारे मुल्क को उन पर फक्र है और यकीन है कि वे मुल्क की हिफाजत अच्छी तरह करेगे।

"पाकिस्तान के लोगो और वहाँ की जनता से हमारी कोई लड़ाई नही है। हम उनकी भलाई और तरक्की चाहते है। उनके साथ हम दोस्ती और अमन से रहना चाहते हैं। लेकिन हमारा मुकाबला एक ऐसी हुकूमत से है, जो हमारी तरह आजादी, अमन, लोकतन्त्र में—जमहूरियत—मे विश्वास नही करती। काश्मीर मे वह चुनाव की बात करती है, पर खुद अपने मुल्क मे ऐसा कराने को तैयार नही।

"इस नाजुक घड़ी में हर आदमी को अपना फर्ज पूरी तरह दिल से अदा करना चाहिए। राष्ट्र को, कौम को हँसते-हंसते कष्ट और मुसीबतें उठाने और कुर्बानी देने के लिए तैयार होना होगा। आजादी की रक्षा के लिए, उसकी हिफाजत के लिए यह कीमत हम सबको देनी ही होगी। आज सारे राष्ट्र के लिए, सारी कौम के लिए—यह पुकार है कि वह इस चुनौती का डटकर सामना करने के लिए तैयार हो जाये।"

श्री शास्त्री के इस "शंखनाद" ने देश के जन-जन में आजादी की रक्षा के लिए तड़फ पैदा करदी। जाति, प्रान्त, भाषा, पार्टी और छोटे-बडे के भेद का जाने कहाँ लोप हो गया। पूरा देश सैनिक स्पिरिट से भर उठा। बच्चों ने अपना जेब खर्च, बहनो ने अपना मंगलसूत्र, और गरीब जनता ने पाई-पाई का संचित कोष देश रक्षा मे अर्पण कर दिया। देखते-देखते करोड़ों की सम्पत्ति राष्ट्रीय रक्षा कोष मे पहुँचने लगी।

२३ सितंबर १९६५ को सबेरे ३।। बजे भारत-पाक युद्ध को घोषणा की गयो। संयुक्त राष्ट्र-संघ ने पिटते हुए धर्मान्ध पाकिस्तान को नेस्ताबूद होने से बचा लिया। अमरीका के दान मे मिले सेवरजेट और पैटन टैंक भारतीय नेटों के सामने प्रदर्शन मात्र होकर रह गये। २६ सितबर को इस ऐतिहासिक विजय के उपलक्ष्य मे नई दिल्ली के रामलीला मैदान मे बोलते हुए उन्होने कहा था—"लड़ाई बदी हो गई है। देश ने बड़ा एका दिखलाया है, बड़ा मेल, आपस में सगठन और बड़ा अनुशासन। इसने एक नई जान देश के अन्दर पैदा की है और मुझे विश्वास है कि इस एकता को हम हमेशा कायम रखेंगे। कल मै एक अस्पताल गया था। वहाँ अपने जवानो और अफसरो को देखा। कितनी चोटे उन्हे लगी है। बुरी तरह जख्मी है, परन्तु मैने एक भी आँसू उनके चेहरे पर नही देखे, बल्कि मुस्कराहट पायी। एक अफसर भूपेन्द्रसिंह को देखकर तो मेरा जी भर आया। उसका सारा शरीर खून से लथपथ था। गहरी चोटो के कारण खून बराबर शरीर पर पड़े कपड़ो को भिगो रहा था। उसकी आँखे बन्द थीं, पर उसने मुझसे कहा—"मुझे अफसोस है कि मै बे-अदबी कर रहा हूँ कि हमारे प्रधान मन्त्री आये हुए है और मै लेटा हुआ हूँ।" मुझे पूरा यकीन है कि जिस मुल्क मे ऐसे बहादुर है उसकी आजादी को कोई खतरा नही। न्याय हमारे साथ है, सच्चाई हमारे साथ है और जीत हमारी होगी।"

उनके दुबले-पतले शरीर मे राष्ट्र की प्रचड शक्ति, धोती कुरते की सादगी मे राजनीतिक कुशलता का तेजस्वी रूप समाया था। दूसरो की तर्कपूर्ण बात सुनकर, दृढ़ता के साथ निर्णय करने की उनकी क्षमता अद्वितीय थी। वे खुले दिमाग से विनम्रता और सच्चाई के साथ अपनी तथा औरों की बातो पर विचार करते थे। किसी भी विषय का जब तक वे उसे पूरी तरह समझ न लेते, अपनी राय न देते। वे विशुद्ध बुद्धिवाद से सदा दूर रहे। जैसाकि राजनीतिज्ञो मे होता है कि वे कठिन समस्या आने पर उसे टालने के तमाम बहाने बनाया करते है अथवा उतावली मे आकर निर्णय दे बैठते है या दूसरों की गलत राय मान लेते है, पर वे कभी ऐसा नही करते थे। जब कभी ऐसी कठिन समस्या आजाती तो स्वयं उसके हर पहलू का अध्ययन-चिन्तन करते और तब यथाशीघ्र उसका हल निकालते। इस प्रकार एक बार किए निर्णय को बदलने को वे तैयार न होते। क्योंकि कोई भी निर्णय वे पूरी तरह आश्वस्त होकर ही करते थे।

१० जनवरी, १९६६ को दिन उन्होने ऐतिहासिक ताशकद-समझौते पर हस्ताक्षर किये। यही उनका अन्तिम कीर्ति-स्तम्भ बन गया। अर्ध रात्रि के बाद ११ जनवरी की रात ९ बजकर ३२ मिनट पर उन्होने अपना नश्वर शरीर त्याग दिया। टेलीफोन पर खबर पाकर सारा देश इस अपूरणीय क्षति से स्तब्ध रह गया। माँ रामदुलारी ने कहा—"मेरा बेटा मर नही सकता। वह मरा नही।"

सच ही तो है, वह कर्म और निष्ठा का प्रकाशपुंज मरा कहाँ, अमर हो गया।

गोविन्दप्रसाद श्रीवास्तव

हमारे सांस्कृतिक शौर्य के प्रतिनिधि

सुप्रसिद्ध कवि श्री रामधारी सिह 'दिनकर' की 'सस्कृति के चार अध्याय' पुस्तक की प्रस्तावना मे प० जवाहरलाल नेहरू ने लिखा है—'सस्कृति क्या है ? शब्दकोश उलटने पर इसकी अनेक परिभाषाए मिलती है, एक बडे लेखक का कहना है कि 'ससार भर मे जो भी सर्वोत्तम बाते जानी या कही गई है, उनसे अपने आप को परिचित करना सस्कृति है ।' एक दूसरी परिभाषा मे यह कहा गया है कि 'सस्कृति शारीरिक या मानसिक शक्तियो का प्रशिक्षण, दृढीकरण या विकास अथवा उससे उत्पन्न अवस्था है ।'यह 'मन, आचार अथवा रुचियो की परिष्कृति या शुद्धि है ।' यह 'सभ्यता का भीतर से प्रकाशित हो उठना है ।'

इन्ही अर्थो मे सस्कृति किसी एक व्यक्ति की भी हो सकती है, उसके समाज की भी और देश की भी । लेकिन किसी समूचे समाज एवं देश की सस्कृति किसी एक व्यक्ति मे प्रतिभासित हो, यह कुछ कठिन ही नही असम्भव और असगत-सा जान पड़ता है । किन्तु जो प्रत्यक्ष और अनुभव बन चुका होता है, उसकी असगतता और असम्भाव्यता का फिर कोई अस्तित्व नही रह जाता । सस्कृति के सम्बन्ध मे प० जवाहरलाल नेहरू के उक्त मतव्य एवं उसकी स्वीकारोक्ति के सन्दर्भ मे सस्कृति की उक्त परिभाषा पर यदि हम विचार करे और उसे अपने आप मे, अपने समाज मे और अपने इस पुरातन देश मे खोजने का यत्न करे तो कठिनाई से नही, बडी सुगमता से हम जिस निष्कर्ष पर पहुँचेगे, उसमे हमे एक ही व्यक्ति दिखाई देगा, जिसमे व्यक्ति, समाज और देश का, उसकी इस सस्कृति का पूरा प्रतिनिधित्व मिलेगा । वह अपने आप मे एक व्यक्ति तो होगा ही इसके साथ ही उसका सारा समाज और सम्पूर्ण राष्ट्र अपनी समग्र सत्ता से प्रतिबिम्बित एव प्रतिभासित होगा । ऐसे एक व्यक्ति का ही नाम लालबहादुर शास्त्री है ।

सस्कृति का प्रसव एक व्यक्ति का प्रसव है, उसकी सत्ता एक व्यक्ति की सत्ता है । व्यक्ति का स्वतन्त्र अस्तित्व हो सकता है, सस्कृति का नही । उसका ताना-बाना, प्रचार और प्रसार व्यक्ति के विचारो, व्यवहारो एव उसके कार्य-व्यापारो पर निर्भर है । अतः इन अर्थो में जैसा व्यक्ति बनेगा, वैसी सस्कृति नही, अपितु जैसा व्यक्ति होगा, वैसी सस्कृति । व्यक्ति के बीज सस्कृति मे नही, सस्कृति के बीज व्यक्ति मे होते है और इसीलिए व्यक्ति के निर्माण का महत्व है । यह निर्माण भी कोई बाह्य प्रशिक्षण अथवा ऊपर से थोपे गए आचार-धर्म से नही, अपितु अपनी पुरातन और सनातन आतरिक चेतना के सहज धर्म से होता है, जिसका अपनी ही मिट्टी और जलवायु मे बाह्य वातावरण और वायु-मण्डल मे विकास-विस्तार करना होता है । श्री लालबहादुर शास्त्री का जीवन-जीवन-निर्माण की इस कला का एक ज्वलन्त प्रमाण है ।

वैह एक सामान्य परिवार में जन्मे। उनके पिता शिक्षक थे। अतः आनुवंशिकता में उन्हें अपने पिता से स्वाध्याय, सादगी और सदाचार का जीवन मिला। पिता को इस विरासत का उन्होने अपने वैयक्तिक जीवन में विकास किया और राष्ट्रीय स्वातंत्र्य-आन्दोलन में प्रवेश के साथ ही उनके लिए यह उनके सार्वजनिक जीवन की धुरी बन गई।

स्वाधीनता-प्राप्ति के बाद जब देश मे नव-निर्माण का दौर प्रारम्भ हुआ, शास्त्रो जी ने अनेक गौरवपूर्ण पदों एवं दायित्यो का कर्मठतापूर्वक निर्वाह किया। प्रशासकीय क्षेत्र में दायित्व-निर्वाह के कारण वह बहुत जल्दी देश के शीर्षस्थ नेताओ के विश्वास-भाजन बन गये। पडित नेहरू के जीवन-काल में ही उन्होने कृतित्व से अनेक राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय समस्याओ और सम्बन्धो मे अपनो सहयोगी, उपयोगो और महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। स्वभावतः श्री शास्त्री, पडित नेहरू के भी विश्वास और स्नेह के पात्र बन गये।

पडित नेहरू के अवसान के बाद उत्पन्न देश की सकटापन्न स्थिति मे सवमत से श्री लालबहादुर शास्त्री भारत के प्रधान मन्त्री बने। श्री लालबहादुर शास्त्री और प्रधान मन्त्री का पद बिल्कुल बेजोड़ ब त थी, फिर जवाहरलाल जी जैसे अन्तर राष्ट्रीय ख्याति के नेता और नेतृत्व की विरासत तथा भारत-जैसे विविध और बहुसमस्याओ से ग्रस्त विशाल राष्ट्र के प्रधान मंत्रित्व का पद-भार अपनी योग्यता, कार्य-शक्ति एव व्यक्तित्व तीनो ही दृष्टियो से श्री शास्त्री के लिए यह एक दुस्साहस की बात थो। किन्तु यह दुस्साहस उन्होने किया और समय की इस चुनौती को बड़ी निष्ठा एवं नम्रता से स्वोकार किया। प्रधान मत्रित्व का पद-भार सभालते ही राष्ट्रीय और अन्तर राष्ट्रीय स्तर का जिन समस्याओं ने अपना सिर उठाया, जान पड़ता था, शास्त्री जी-जैसे सीधे-सादे और छोटे-से आदमी को ये निगल जायेगी। सारा राष्ट्र देश की इस समय की इस स्थिति को और श्री शास्त्री की कार्य-क्षमता को एक चिन्तापूर्ण परीक्षण की दृष्टि से देख रहा था, जिसमे निराशा नही तो आशा के भी कोई चिन्ह दिखाई नहीं देते थे। एक ओर देश मे खाद्यान्न का अभाव, भाषा-समस्या, साम्प्रदायिकता तथा बढते हुए दगे-फिसाद तो दूसरी ओर अन्तर राष्ट्रीय स्तर पर गिरगिटान की तरह नित बदलते हुए दृष्टिकोण एवं पडौसी देशो से बिगड़े सम्बन्धों की पृष्ठभूमि मे देश की सीमाओ पर आक्रामक गतिविधियाँ। एक चुस्त और चौकस सैनिक की भांति अपनी अपूर्व कर्मठता से श्री शास्त्री इन सभी समस्याओ से सघर्ष करने लगे। इसी बीच हमारे कच्छ-रन-क्षेत्र में पाकिस्तान का सशस्त्र हमला हुआ। हमारी सेनाओ ने मुका-बला किया और ब्रिटेन की मध्यस्थता से एक समझौता सम्पन्न हुआ। उस समझौते की स्याही सूखो भी न थी कि हमारे उत्तरी सीमान्त जम्मू और कश्मीर पर पाकिस्तान ने अपनो पूर्ण सैनिक क्षमता के साथ बाकायदा दूसरा हमला बोल दिया, जिसने पाकिस्तान द्वारा घोषित युद्ध का रूप ग्रहण कर लिया। पाकिस्तान का यह आक्रमण भारत के अस्त्वि की एक कसौटी बन गया। श्री शास्त्री देश के प्रधान मन्त्री थे और नेता भी। अतः राष्ट्र पर आ पड़ी उस आकस्मिक विपत्ति के निवारण के लिए उन्हे ही निर्णय करना था और नेतृत्व भी। अनेक मामलो में अनेक बार निर्णय करना कठिन होता है और यह कठिनता उसके क्रियान्वयन मे और बढ़ जाती है। श्री शास्त्री समस्या और उस पर निर्णय लेने की कला के एक सिद्धहस्त कलाकार थे। उन्होने सैनिक तत्परता से निर्णय लिया और आक्रमण-कारी को सुदूर उसकी सीमाओं मे खदेड़ देने का भारतीय फौज को आदेश दे दिया। उनका आदेश पाते ही विप्लव मचाती हुई भारतीय फौजे पाकिस्तानी सेना से भिड़ गईं और अपनी पवित्र मातृभूमि

से दूर पाकिस्तानी क्षेत्र में घामासान युद्ध करने लगी। इस युद्ध में श्री शास्त्री का व्यक्तित्व और उनका प्यारा देश दोनों ही वक्त की कसौटी पर कसे थे और सारा ससार इस विशाल देश और उसके इस छोटे-से आदमी के कारनामे देख रहा था। उसने देखा चन्द दिनो मे ही भारत और उसके नेता ने अपने ऊपर आये संकट को सफलता मे वदल दिया है। इतिहास के उन दिनो मे भारत के लिए वह समय अपने शक्ति-परीक्षण अथवा आत्म-बोध का समय था तो दुनियाँ के लिए आश्चर्य का। उस युद्ध में पाकिस्तान ने अमेरिका द्वारा प्रदत्त आधुनिकतम अस्त्र-शस्त्रो के मुद्दत से जमा किए जखीरे का भारतीय सेना के विरुद्ध प्रयोग किया, जबकि भारत सारा युद्ध अपनी स्वय की सैन्य-सामग्री से लडा। फिर इस सम्पूर्ण युद्ध मे जो एक महत्वपूर्ण बात और हमारे सामने आई, वह थी ब्रिटेन और अमेरिका द्वारा पाकिस्तान का असाधारण पक्षपात, जिससे पाकिस्तान को बड़ी सह-सहायता और प्रोत्साहन भी मिला। इसीके साथ पाकिस्तान और चीन की साठ-गाठ तथा पाकिस्तान के तत्कालीन विदेश मन्त्री मिया भुट्टो की हजार वर्ष लड़ने की धमकी, यह सब भारत को भयभीत करने के लिए काफी था, किन्तु अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए अपनी मातृभूमि को पवित्रता के लिए देश के अन्तिम आदमी की अन्तिम रक्त-बूँद तक अर्पित करने के अपने कृत-सकल्प से श्री शास्त्री तिलमात्र भी विचलित नही हुए।

समूचे युद्ध मे देश की एकता, भारतीय फौजो को बहादुरी, उनका शौर्य एव सकल्प तथा युद्ध के जो रोमाचक नजारे देखने और सुनने मे आए, वे सब इस लेख का विषय नही। बहुत जल्दी पाकिस्तान की हिम्मत पस्त हुई और अमेरिका द्वारा प्रदत्त पटन टैको, सेवरजेटो का जखीरा भी खप गया। स्थिति यहाँ तक आ पहुँची कि युद्ध के दौरान ही पाकिस्तान ने वन्दूक और बारूद के लिए अपने मित्र देशो के सामने झोली फैला दी, जबकि भारतीय फौज तथाकथित आजाद काश्मीर के हाजीपीर दर्रा, कारगिल, लाहौर और सियालकोट पर अपना पड़ाव डाल चुकी थी और विजय के माहौल मे प्रतिपल नए आदेश की उत्सुकता मे आगे वढने को आतुर थी। इसी बीच राष्ट्र-सघ के हस्तक्षेप से युद्ध-विराम हुआ। युद्ध-स्तर पर ही परिस्थितियाँ तेजी से बदल गईं और रूसी प्रधान मन्त्री श्री कोसीजिन के सद्भावपूर्ण आमन्त्रण पर श्री शास्त्री पाकिस्तान के साथ शान्ति-वार्ता के लिए ताशकन्द पहुँचे। इतिहास का यह एक विलक्षण प्रसंग था, जबकि दो युद्धरत देशो के नायक युद्धवन्दी के तुरन्त वाद शान्ति स्थापना के लिए एक साथ बैठे हो। श्री कोसीजिन के सद्भावपूर्ण अथक परिश्रम से भारत और पाकिस्तान के दोनो नेता एक निष्कर्ष पर पहुँचे और 'ताशकन्द-घोषणा' नाम से एक समझौता हस्ताक्षरित हुआ। 'ताशकन्द-घोषणा' श्री शास्त्री के जीवन की एक और ऐतिहासिक सफलता थी।

भारत को युद्ध मे विजय मिली और शान्तिपूर्ण समझौते मे सफलता भी। दोनो ही बात हमारे साथ थी। सफलता के इस सौभाग्य के साथ 'ताशकन्द-घोषणा' के तुरन्त बाद एक महान दुर्भाग्यपूर्ण घटना घटी, जो उन दोहरी सफलताओ की कीमत बन कर आई। ताशकन्द मे श्री शास्त्री का निधन हमारी युद्ध मे सफलता की कीमत थी अथवा शान्तिपूर्ण समझौते की, यह हमारे लिए समझना कठिन हो गया है। शान्ति बडी वेशकीमती बात है। सदा से ही शान्ति के लिए ही युद्ध होते आये हैं और शान्ति के लिए ही युद्ध-वर्जन। श्री शास्त्री ने भी शान्ति के लिए ही युद्ध किया और शान्ति के लिए ही ताशकन्द-समझौता। शान्ति मे ही उनके प्राण थे। युद्ध मे सफलता की जो कीमत चुकानी पड़ती है, उसका अनुमान कठिन नही है, किन्तु शान्ति के लिए कीमत चुकाने का अनुमान कदाचित ही कोई लगा पाता है। श्री शास्त्री ने युद्ध-स्तर पर कीमत चुकाई और शान्ति-स्तर पर भी। युद्ध के लिए

वह लड़े, सारे देश को लड़ाया, किन्तु शान्ति के लिए देश का सब कुछ बचा कर स्वयं शहीद हो गए। उनके लिए शान्ति की यही कीमत थी, इससे अधिक कीमत और क्या हो सकती है। इसके साथ ही शान्ति के लिए ही युद्ध और शान्ति के लिए ही अपना जीवन-उत्सर्ग कर उन्होने हमारी सस्कृति के शौर्य की शोभा बढाई है। जवाहरलाल जी ने सस्कृति के सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त करते हुए आगे कहा है—"इस अर्थ में संस्कृति कुछ ऐसी चीज का नाम हो जाता है जो बुनियादी और अन्तर राष्ट्रीय है।" पण्डित जी के उक्त मत के अनुरूप श्री शास्त्री ने भारतीय संस्कृति के बुनियादी पक्ष का प्रतिनिधित्व तो किया ही, 'ताशकन्द-घोषणा' से उसकी अन्तर राष्ट्रीयता पर भी मुहर लगा दी।

भारतीय संस्कृति मे जीवन एक अबाध प्रवाह के रूप में चलता है। उसका कहीं कोई अन्त अथवा समापन नही होता। समापन होता है आकृतियों का, शरीरों का। मानव का जो शरीर हमें मिला है, उसका सही-सही समापन हो, यह एक मानवीय इच्छा होती है। मानव शरीर भर जगती के इस द्वन्द्व मे उलझा रहता है और अन्त समय भी यदि वह अपने किसी मानसिक द्वन्द्व में पड़े तो उसके इस जीवन का सही समापन हुआ, यह नही कहा जा सकता। इसके विपरीत सारी द्विविधा और द्वन्द्व से परे निबन्ध आत्म-सन्तोष एव शान्ति की स्थिति में जो जन जाते है, वे ही जीवन-मुक्ति अथवा मोक्ष को प्राप्त समझे जाते है। श्री शास्त्री ऐसे ही जीवन-मुक्त मानव हुए जो जीवन के सघर्ष और शान्ति दोनों ही स्थितियो के अनुभवों से सन्तुष्ट और तृप्त होकर पूर्ण तया मुक्त आत्मशान्ति की अवस्था को प्राप्त हुए।

इस युद्ध मे भारत की विजय के सम्बन्ध मे किसी को कोई विवाद नही। कोई असन्तोष नहीं, किन्तु ताशकन्द-घोषणा को लेकर 'भिन्न रुचि : लोका' उक्ति के अनुसार कुछ लोगो ने विजित क्षेत्रों से हमारी सेनाओं की वापसी के प्रश्न को स्वीकार कर लेने को हमारी पराजय अथवा विफलता माना, किन्तु भावावेश मे हम यह क्यो भूल जाते है कि हमारे राष्ट्रनायक प० जवाहरलाल नेहरू ने समय और शक्ति की प्रतीक्षा मे जो कुछ अरुचिकर, अवाछनीय एव अमर्यादित बाते अपने कार्यकाल मे पाकिस्तान के शत्रुतापूर्ण रवैये मे वर्दाश्त की है, और उससे उन्हें जो अप्रतिष्ठा और अपवाद भी सहन करना पड़ा है, उसकी तह मे क्या कोई कमजोरी का भाव था ? हरगिज नही। शान्ति के शाश्वत मूल्य को महत्व देने के साथ देश को स्वाभिमानपूर्वक किसी भी चुनौती का सामना करने के लिए तैयार करना ही उनकी इस बर्दाश्त का रहस्य था। छोटी छोटी बातों और घटनाओ से प्रभावित न होने की जो असाधारण मानसिक महत्ता जवाहरलाल जी मे थी, श्री शास्त्री जवाहरलाल जी से बहुत छोटे थे, हेठे थे, किन्तु छोटी-छोटी बातो और घटनाओ से प्रभावित न होने की मानसिक महत्ता से उनका मस्तिष्क भी समृद्ध था। फिर जिस अयुद्ध घोषणा के लिए पडित जी ने पाकिस्तान से सदा प्रयत्न किया और उसमें उन्हे सफलता नही मिली। 'ताशकन्द-घोषणा' मे पाकिस्तान के लिए वचनबद्ध होना क्या श्री शास्त्री की सफलता नही ?

इस प्रकार श्री लालबहादुर शास्त्री का जीवन सफलताओ से भरी एक कहानी बन गया है, जिसमे उनके साथ सारे देश का चित्र, उसकी सभ्यता, सस्कृति, शौर्य और वीर्य सभी कुछ एक चित्रपट की भाँति नजरो से गुजरने लगता है। श्री शास्त्री सीधे-सादे और सरल आदमी थे, किन्तु उनके इस सीधेपन मे शालीनता थी, सादेपन मे सफाई थी और सरलता मे था बेजोड स्वाभिमान। उनमे बड़प्पन से भरी हुई विनम्रता थी और साधु-हृदय की सज्जनता। यही बजह थी कि उनकी सादगी में भारत की सादगी

दिखाई दी, उनके सीधेपन मे भारत के जीवन का सीधापन दिखा, उनकी सरलता में भारत की सरलता और भोलापन से भरा हुआ चित्र सामने लाया । और इस प्रकार उनका चरित्र सारे भारत का चरित्र बन गया । रहन-सहन, वेश-भूषा, खान-पान, बात-चीत, और व्यवहार मे उन्होंने भारत के इस भव्य रूप का न केवल स्वदेश मे वरन सुदूर विदेशो मे भी समान प्रतिनिधित्व किया । विदेशो मे वह भारतीय सस्कृति की मशाल बन कर गये । रूप-स्वरूप, वेश-भूषा और भाव-स्वभाव से सीधे-सादे श्री शास्त्री जी मे जहां एक ओर भारतीय किसान के सद्गुण थे, वही दूसरी ओर कृषकों-सा श्रम करने की शक्ति भी। फिर अपनी सस्कृति और उसके स्वाभिमान को सर्वोपरि महत्व देने की जो सहज चित्तवृत्ति एक भारतीय कृषक का प्रधान सद्गुण है श्री शास्त्री उसके मूर्तिमन्त रूप थे। उनके भाव और व्यवहार मे तथा आचार और विचार मे बेजोड समानता थी । जीवन मे उन्होंने जो कहा वह किया, और जो करने योग्य था, उसे कहा नही, पर किया । इस प्रकार कथनी और करनी के इस साम्य के साथ कम कहने और अधिक करने का जो प्रधान गुण एक मूक कृषक मे हमे दिखाई देता है, श्री शास्त्री उसके एक श्रेष्ठ साधक सिद्ध हुए । मात्र अठारह मास के अपने प्रधान मन्त्रित्वकाल मे उन्होंने भारत को उसका गौरव दिया, आत्म-सम्मान दिया और स्वाभिमानपूर्वक उसे जीना सिखाया । उनकी इन अपूर्व देनो का स्मरण करते हुए उनके प्रति हमारा हृदय कृतज्ञता से भर उठता है । छोटे-से शास्त्री जी ने कभी कोई छोटा काम नहीं किया, यह स्मरणीय है ।

यद्यपि शास्त्री जी अपने व्यक्तित्व, योग्यता और उपलब्धियो मे अपने पूर्ववर्ती नेता देशरत्न राजेन्द्र प्रसाद, प० जवाहरलाल नेहरू और सरदार वल्लभ भाई पटेल से काफी छोटे थे और उन्हे उनका अनुयायी ही कहा जायगा, किन्तु यही उनकी खूबी थी, खबसूरती थी और थी खुशनसीबी भी । उन्होंने जीवन की सरलता और शालीनता मे, विचारो की भव्यता और विशालता मे तथा उनकी अभिव्यक्ति और अडिगता मे अपने पूर्ववर्ती तीनो नेताओ का सही-सही प्रतिनिधित्व किया है । भारतीय जीवन की सरलता, सज्जनता शुचिता, सादगी, सच्चरित्रता, शालीनता और उसकी सॉस्कृतिक छवि-छटा का जो चित्र हमे राजेन्द्र बाबू मे दिखाई देता था, शास्त्री जी उसकी प्रतिछवि बन गये थे। दूसरे शब्दो मे विचारो के सौन्दय की अभिव्यक्ति मे उन्होंने जवाहरलाल नेहरू का, आचरण मे डा० राजेन्द्र प्रसाद का और अथ एव अडिगता मे सरदार पटेल का प्रतिनिधित्व किया है। उनके दिल की सफाई, विचारो का बड़प्पन, हृदय की महत्ता, सहिष्णु स्वभाव सौर समन्वयी प्रवृत्ति आदि ऐसे सद्गुण हमे उनके व्यक्तित्व मे दिखाई देते है, जिनके कारण राजेन्द्र बाबू के बाद वह इस देश के द्वितीय भद्र पुरुष कहे जा सकते है ।

श्री शास्त्री का समग्र जीवन, जीवन के अधिकार की गरिमा से भरा हुआ है। काश्मीर पर हमारे इस अधिकार की अभिव्यक्ति विगत युद्ध मे श्री शास्त्री ने जिस सच्चाई और निष्ठा से हमे कराई वह अभूतपूर्व थी । सीधे-सादे और स्पष्ट शब्दो मे उन्होंने अपने दृढ निश्चय की घोषणा करते हुए कहा—"काश्मीर का प्रश्न भारत-विभाजन के साथ तय हो चुका है, पाकिस्तान सदा के लिए उसे भूल जाए।' अपने इस अधिकार की उन्होंने न केवल घोषणा की, वल्कि उसकी हिफाजत भी ।

इस प्रकार भारतीय सविधान मे राष्ट्रीय एकता, उसकी सार्वभौमिकता, अखण्डता और संस्कृति के आश्वासन के साथ देश के प्रत्येक नागरिक के व्यक्तिगत विकास के लिए अवसर की समानता का जो अधिकार निहित है, उसकी श्री शास्त्री ने अपने जीवन मे पुरजोर पुष्टि, पूर्ति और प्राप्ति की

है, उनसे यह भली भांति प्रमाणित हो चुका है कि इस देश का अब कोई भी आदमी अपने को दीन-हीन और अदना अनुभव नही कर सकेगा। श्री शास्त्री के जीवन की उन्नति उनके जीवन का विकास भारत के एक अदने समझे जाने वाले आदमी का विकास है और इन्हीं अर्थो मे सारे भारत का विकास है।

शास्त्री जी ने शान्ति और सघर्ष दोनों ही कालो में देश का सफल प्रतिनिधित्व किया। उनकी यह सफलता मात्र राजनीतिक सफलता नही, वरन जनरुचियो और जन-जागरण भरी सफलता है। राष्ट्रीय नेतृत्व और जन-जागरण के क्षेत्र मे स्वाधीनता के पूर्वोत्तर जिस प्रकार राष्ट्रपिता महात्मागाधी ने देश को 'करो या मरो' तथा 'भारत छोड़ो' का मन्त्र और नारा दिया, नेता जी सुभाषचन्द्र बोस ने 'दिल्ली चलो' और 'जयहिन्द' का तथा स्वाधीनता के पश्चात् राष्ट्रनायक नेहरू ने 'आराम हराम है' और 'पचशील' का महामन्त्र दिया, उसी प्रकार श्री शास्त्री ने अपने स्वाभिमान और आत्म-सम्मान के लिए जय जवान' 'जय किसान' का नारा दे कर हमे स्वावलम्बन का पाठ पढाया और राष्ट्र मे नव-जागरण के प्राण फूंके। जीवन के इस तथ्य से कि जीवन के हर क्षेत्र मे स्वावलम्बन ही हमारी सुरक्षा और स्वाधीनता का प्राण है, वह परिचित थे। यही वजह थी कि उन्होने खाद्यान्न के प्रश्न पर अमेरिका द्वारा कुछ आपत्तिजनक शर्तो की पाबन्दी लगाए जाने पर अपनी असहमति व्यक्त करते हुए आत्मनिर्भरता के लिए एक बार पुन. देश का आह्वान किया और बजाए इसके कि सशर्त मिले अमेरिकी अन्न से हमारा पेट भरे, देशवासियो को भूखे पेट और आधे पेट रहने का आदेश दिया।

आधुनिक भारत के राजनीतिक क्षितिज पर ही नही, राष्ट्रीय नेतृत्व के क्षेत्र मे श्री लाल-बहादुर शास्त्री का अभ्युदय और अवसान दोनों ही उसकी सास्कृतिक परम्परा, उसका शौर्य-वीर्य एवं सनातन सत्यो के उद्घाटन का एक ज्वलन्त आदर्श बन चुका है।

●

एक तपस्विनी माँ

आंखे धस गई है, पलके उठती है पर गिर पड़ती है । तेज है आकृति पर, परन्तु कुम्हलाया हुआ, उदास । चमड़ी ने मास पेशिया छोड दी है । कटि झुक गई है। पग साथ छोडते जा रहे है, उठते है तो लडखडाते हुए, हिलते हुए । वाणी टूटी हुई, उखडी हुई। पर हाथ की अगुलियो अब भी माला के दानो पर चलती है । चश्मे के भीतर से निस्तेज आखे अब भी जब राम और कृष्ण नाम पर पडती है तब ऐसी स्थिर हो जाती है मानो उनमे तन्मयता की अपूर्व शक्ति हो ।

यह है एक मा के पार्थिव शरीर का शब्द-चित्र । उस मा के पार्थिव शरीर का शब्द-चित्र, जिसके वीर पुत्र ने महाराणा प्रताप और शिवाजी के पश्चात् एक बार पुन: भारतीय वाहिनी की रगो को अतुल शौर्य से भर दिया था । यह उस वीर पुत्र की ही प्रेरणा का परिणाम था कि गत पाक-भारत युद्ध मे भारतीय वाहिनी ने सिहनी की भाति उछल कर पाक के कन्ठ को दबोच लिया था और वह प्रत्येक मोर्चे पर पलायन करने के लिये हाथ-पैर पटकने लगा था ।

कौन नही जानता उस वीर पुत्र को – स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्रीजी को । पर कदाचित ही कुछ लोग हो जो उनकी मा के आदर्श गुणो से परिचित हो, जिसने शास्त्रीजी को जन्म ही नहीं दिया वरन् शास्त्रीजी को अपनी साधना से, अपनी अखण्ड आराधना से वह अपूर्व शक्ति प्रदान की जिसके कारण शास्त्रीजी 'शास्त्रीजी' वन सके थे । शास्त्रीजी इस बात को हृदय से स्वीकार करते थे । वह जव भी अपनी मा के चरण-स्पर्श करते थे तव देखने वाले देखते थे कि उस स्पर्श-क्षण मे उनकी सम्पूर्ण गुरुता मूक वनकर पिघल उठती थी ।

संसार के इतिहास मे अनेक ऐसी माताए हुई है जिनके वीर पुत्रो ने देश, जाति और धर्म का मुख उज्ज्वल किया है, पर ऐसी माताएं वहुत अल्प ही मिलेगी, जिन्होने अपने पुत्रो को महान और आदर्श वनाने के लिए दैन्य की सम्पूर्ण विभीपिकाओ से टक्कर ली हो । शास्त्रीजी की मा एक ऐसी ही मा है । स्वर्गीय शास्त्रीजी यदि अपनी देश-सेवाओ और त्याग-भावनाओ से गौरवान्वित हुए है, तो उनकी मा, भारत की ही माताओ मे नही, विश्व की माताओ मे भी धन्य है—पूजनीय हैं । यदि भारतीय समाज मे माताओ के आदर-सम्मान का भाव विलुप्त न हो गया होता, तो आज घर-घर मे उनकी मूर्ति वनती, जन-जन के मुख से उनकी अभ्यर्थना के गीत निकलते ।

उन्होंने किसी विश्वविद्यालय या विद्यालय से उपाधि नहीं प्राप्त की है। वह राजनीति, इतिहास और अर्थशास्त्र मे भी गति नही रखतीं। आधुनिक जगत और नारी की कृत्रिमताओं से भी उनका परिचय नहीं है। वह एक सरल हृदय की नारी है। उनमें भारतीय धर्म और सस्कृति की सौम्यता है। उनमे उदारता है, परोपकार की भावना है। वह दीन-दुखियों के लिए, भूखे-प्यासों के लिए अपना सवस्व तक निछावर कर देने की कामना रखती है। उन्होंने माता के रूप में स्वर्गीय शास्त्रीजी से अपने कभी किसी वस्तु की याचना नही की, उन्होने जब भी याचना की, दूसरों के लिये की—पीड़ा और दुख से दले हुए लोगो के लिए की। परिचित या अपरिचित, जो भी कभी उनके पास गया होगा, उन्होंने हृदय की श्रुतियो से उसकी बात सुनी होगी। केवल सुनी ही नही होगी, उसकी भीगी पलकों को पोछने के लिए स्वर्गीय शास्त्रीजी से आग्रह भी किया होगा। शास्त्रीजी कभी कभी उनके आग्रह पर प्यार भरी खीझ के निम्नांकित स्वर व्यक्त किया करते थे—

"अम्मा, तुम तो बहुत तंग करती हो।"

यो तो वह राम और श्रीकृष्ण की अनन्य उपासिका है, पर उनकी वास्तविक उपासना दीन सेवा है। वह गीता पढती है, माला जपती है, पर उनके मनमे परम आनन्द की तरग दीन-सेवा से ही उत्पन्न होता है। उनकी दीन-सेवा और परोपकार की एक कहानी का चित्र यहा अंकित कर देना अनुचित न होगा—

बारह-तेरह व र्ष पूर्व की बात है। मै उन दिनों प्रयाग में हिन्दू महिला विद्यालय मे हिन्दी का प्राध्यापक था। माघ का महीना था। त्रिवेणी तट पर माघ मेले की धूम थी। शास्त्रीजी की माता जी भी एक कुटिया में रहकर कल्पवास कर रही थीं। मेरे पास पहले से ही इस बात की सूचना थी। मैं एक दिन अपराह्न मे अपनी धर्मपत्नी के साथ माघ मेले में गया और तहसील के कार्यालय से पता लगाकर उनकी कुटिया में जा पहुँचा।

कुटिया सूनी थी। एक वृद्धा बैठकर माला जप रही थीं। पूछने पर उन्होंने बताया कि वह (शास्त्रीजी की मा) पास ही एक कुटिया में 'तिलक' लेकर गई है।

मै विस्मित हो उठा। सुनकर एक साथ ही सोच उठा, "तिलक! किसका तिलक!" पर प्रकट रूप मे कुछ न कहकर उनसे कुटिया का पता पूछकर वहाँ जा पहुँचा।

देखकर विस्मित हो उठा। सचमुच 'तिलक' चढ रहा था। कन्या-पक्ष की ओर से वह तिलक का सामान लेकर बैठी हुई थी। उनके सामने वर था और वर-पक्ष के लोग थे। मन्त्रों की गूँज मे तिलक की विधाएं पूर्ण की जा रही थीं।

उन्होने मुझे और मेरी धर्मपत्नी को देखते ही प्रेम से बिठाया। तिलक की विधाएं पूर्ण होने पर वह उठी और हम लोगो को अपने साथ लेकर अपनी कुटिया की ओर चली। मार्ग में उन्होने मेरी धर्मपत्नी से कहा—"बिटिया, तुम तो मुनिया की माई को जानती ही हो। बेचारी मुनिया के विवाह

को लेकर बड़े सकट मे थी। बड़ी मुश्किल से यह लड़का मिला है। यह उसी का तिलक था। भैया (शास्त्रीजी) ने तीन सौ रुपये भेजे हैं। पर इतने मे कैसे काम होगा ... ।"

मुनिया की माई! वह एक निगम कायस्थ परिवार की महिला है। कभी उसके भी अच्छे दिन थे। पर जब उसके पति ने मुनिया को अबोध अवस्था मे छोड़कर स्वर्ग-गमन किया तब कुछ ही दिनो मे सब कुछ लुप्त हो गया और मुनिया की माई को जीवन-निर्वाह के लिए बाध पर (त्रिवेणी बाध) कुटिया की शरण लेनी पड़ी। हनुमानजी की सेवा और मुनिया का पालन-पोषण। यही मुनिया की माई का व्रत था। संयोग की बात, वह किसी प्रकार शास्त्रीजी की मा तक पहुँच गई और जब पहुँच गई तब उसने अपनी दीनता और विवशताओ से उनके हृदय में स्थान बना लिया। दिन-पर-दिन बीतने लगे। मुनिया भी समय के साथ-ही-साथ वय की सीढ़ियों को पार करने लगी और विवाह के योग्य हो गई है। मुनिया की माई के सामने घोर संकट छा गया—'अब वह क्या करे? मुनिया को किस प्रकार और किस के हाथो मे सौपकर निश्चिन्त हो।'

पर शास्त्रीजी की मां ने उसके संकट की लौह जंजीर काट दी। उन्होने स्वय मुनिया के विवाह के लिए वर की खोज की, स्वयं ही उन्होने तिलक चढाया और स्वयं ही उन्होने धूमधाम से विवाह का आयोजन भी किया। जिस प्रकार उनकी कुटिया मे मुनिया की बरात आई और जिस प्रकार उन्होने बडे उत्साह और उमग से मुनिया का कन्यादान दिया, वह दृश्य आज भी आंखो के सामने कभी-कभी नाच उठता है।

शास्त्रीजी की मां २२ वर्ष की अवस्था से ही दीन-सेवा और परोपकार में अपनी हड्डिया गला रही हैं। वह बाईस वर्ष की थीं, जब उनके सौभाग्य ने उनका साथ छोड़ दिया था। शास्त्रीजी उस समय केवल दो वर्ष के थे। तब से लेकर आज तक वह राम और कृष्ण के दुपट्टे का छोर पकड़ कर अपनी साधना के पथ पर आगे बढती जा रही है। साधना के पथ पर उन्होने कई ऐसे कर्कश आघात सहन किए है, जिनकी पीड़ा बड़े बड़े धैर्यवानों को भी कंपा देती है और प्रगाढ़-से-प्रगाढ़ आस्थाओ को भी अनास्थाओ के रूप मे परिणत कर देती है। पर धन्य हैं शास्त्रीजी की मां! ज्यों-ज्यो आघातो ने उनके हृदय का मन्थन किया त्यो-त्यों उनकी प्रभु-आस्था और भी अधिक बढ़ती गई और उन्होने पूर्ण रूप से अपने को राम के ही सुपुर्द कर दिया।

उन्होने झकोरो मे शास्त्रीजी का पालन-पोषण किया, आँधियो में उन्हे पढा-लिखा कर जीवन के क्षेत्र मे उतारा। उन्होने बड़े दुख के साथ आपदाएं सह-सह कर अपने 'शास्त्री-बिरवे' को बड़ा किया। पर जब उनके बिरवे मे फल-फूल लगे, तब उन्होने कभी यह नही कहा कि वह मेरा अपना है। वह शास्त्रीजी के मन्त्रि-काल मे अपरिचितो में, यात्राओ में, तीर्थो मे साधारण स्त्री की भांति ही रही हैं। उन्होने कभी किसी पर प्रकट नही होने दिया कि वह उन शास्त्रीजी की मा हैं, जो देश के स्तम्भ और केन्द्रीय सरकार के मन्त्री तथा भारत के प्रधानमन्त्री हैं।

वह प्रति वर्ष माघ मेले में कल्पवास के लिए जाती रही हैं। पर उन्होंने कभी मेले के अधिकारियों पर यह नही प्रकट होने दिया कि वह शास्त्रीजी की मां हैं। वह मेले मे लकड़ी, राशन और

अन्य आवश्यकताओं के लिए कष्ट भोगती रहीं, पर शास्त्रीजी के नाम और अधिकार का उन्होंने कभी उपयोग नही किया। किसी-किसी वर्ष कार्तिक मास में वह दिल्ली में यमुनाजी के तट पर भी निवास करती रही है। वहा भी उनकी वही साधारण-सी कुटिया रही।

शास्त्रीजी के प्रधान मन्त्रि-काल में भी उन्होने कभी अपने मन में यह बात नहीं आने दी कि वह प्रधानमन्त्री की मा है। उनका द्वार प्रतिक्षण सबके लिए खुला रहता था। वही परोपकार, वही दीन-सेवा। जब तक पैर काम करते रहे, वह शास्त्रीजी के पास जा-जाकर उन्हे परायों का दुख-दर्द सुनाती रही। गौ-हत्या और शराब-निषेध के लिए उन्होने कितनी ही बार शास्त्रीजी को उत्साह प्रदान किया। पर वर्षो से अब उन्होने चारपाई पकड ली है। शास्त्रीजी के वियोग ने तो उनकी कमर ही तोड दी, प्राणो को हिला दिया। वह जी रही है, पर मूच्छिता-सी बेसुध-सी। प्रियजनों से अब वह एक ही बात पूछती है—"अब क्या होगा ?" पर उनके इस प्रश्न का उनके राम को छोड़कर कौन उत्तर दे सकता है। कभी-कभी वह सूनो आखो मे प्राण उड़ेलकर यह भी कहती है—"भैया स्वप्न में आते है। कहते है—'अम्मा, मै तुम्हारो और दुलिहन (श्रीमती शास्त्री) की बात न मानकर ताशकन्द गया। मुझे बड़ा कष्ट हुआ। पर तुम आकुल न हो, मैं यही तुम्हारे साथ हो हूँ।' कौन जाने उस तपस्विनी मां का स्वप्न सत्य ही हो।

जान फ्रोमैन

जिन्होंने मुझे प्रभावित किया

श्री लालबहादुर शास्त्री की अत्यन्त सजीव स्मृतिया मुझे अक्तूबर, १९६४ के अन्तिम दिनो की एक सध्या की ओर ले जाती है। मैंने उनसे अपनी समान समस्याओ पर विचार करने के लिए समय मागा यद्यपि वह बहुत व्यस्त थे, तथापि उन्होने रात के १०-३० बजे मुझसे मिलने का समय निश्चित कर दिया। अपने स्वभाव की विनम्रता के अनुसार उन्होने निमन्त्रण-पत्र मे उस असुविधा के लिए क्षमा-याचना भी की जो उनके विचार से मुझे रात के निमन्त्रण से पैदा हो सकती थी।

उन्होने १० जनपथ स्थित अपने छोटे-से अध्ययन-कक्ष मे मेरा स्वागत किया। हमने खुलकर निष्कपट भाव से तथा विनोदपूर्ण ढग से बाते की जैसा कि श्री लालबहादुर शास्त्री का स्वभाव था। उनके एक प्रस्ताव से मै सहमत नही था, इसलिए मैंने उनका दृढ विरोध किया। इसमे तीन या चार मिनट लगे। मेरी बात समाप्त होने के बाद एक मिनट तक शान्ति रही, शायद वह मेरी बातो पर विचार कर रहे थे। इसके बाद वह बोले—'आपने एक महत्वपूर्ण विचार प्रकट किया है। शायद मैं इस पर अब तक अधिक विचार नही कर सका। मै आपकी कही हुई बातो पर विचार करने का समय चाहता हूं और बाद मे इस पर फिर कभी बात करूंगा।'

मै इस छोटी-सी घटना की याद दिला रहा हूँ, क्योकि यह उन गुणो का दिग्दर्शन कराती है जो मैंने स्वर्गीय प्रधान मन्त्री मे स्मरणीय रूप से पाये और जो उनके प्रति मेरे अनुराग और सम्मान के आधार है।

उनका प्रथम गुण यह था कि वह खुले दिमाग से और नम्रता के साथ उस प्रत्येक व्यक्ति की बात सुनने को तैयार रहते थे जो तर्कपूर्ण दृष्टिकोण रख सके। यह गुण प्रत्येक राजनीतिज्ञ मे नही पाया जाता। मैंने श्री शास्त्री मे कभी भी इस गुण का अभाव नही पाया चाहे वह विषय कितना ही कष्टदायक क्यो न हो।

उनमे दूसरा गुण यह था कि वह नम्रता और सच्चाई के साथ अपनी सम्भावित दुर्बलता को स्वीकार कर लेते थे—'शायद मैं इस पर अब तक अधिक विचार न कर सका।' यह गुण हममे से बहुत कम लोगो मे है।

तीसरा और महत्वपूर्ण गुण था किसी भी बात को भली भाति समझने का दृढ सकल्प, उस पर स्वय चिन्तन-मनन करना तथा अपना निर्णय तभी देना, जब उन्हे यह विश्वास हो जाए कि इस का एक प्रबल बुद्धिवादी और स्थिर आधार है। श्री शास्त्री विशुद्ध बुद्धिवादी से दूर रहते थे। परन्तु बौद्धिक विचार के उत्तरदायित्व से बचने के लिए किसी कठिन समस्या को समझने की असमर्थता को

पुरुपोत्तमलाल

काश, लालबहादुर हमारे बीच फिर जन्म लेते

किशोर-अवस्था की बात है। लालबहादुरजी और मै खेलते-कूदते कुछ दूर निकल गए थे। शाम हो चली थी। गर्मी का मौसम था। पीछे पीछे एक बूढा सिर पर टोकरी रखे चला आ रहा था। हम दोनो लौटने की इच्छा से रुके और थोडी देर वही बैठ गए। बूढा धीरे-धीरे वहाँ तक पहुँच गया। लालबहादुर पूछ बैठे–'बुढऊ, टोकरी मे का बेच रहा हौ। देखै!' बूढा रुका। टोकरी उतार कर कहा—'आम है, बहुत मीठा।' उसने एक-एक आम हम दोनों को चखने को दिया। आम बहुत छोटा था पर सचमुच बहुत मीठा था। बूढे ने कहा—'शाम हो रही है एक आने के सौ आम दूँगा!' लालबहादुर हमारा मुँह ताकने लगे। मैने कहा—'दो पैसे मेरे पास है।' उन्होने कहा–'दो हमारे पास भी है।' उन्होने चार पैसे देकर कहा—'दो भाई, हम लोग भी खाए।' बूढे ने ५० आम गिने ही थे कि लालबहादुर ने कहा—'बस इतना ही चाहिए!' बूढे ने कहा—बेटवा चार पैसा दिए है।' उन्होने कहा–'ठीक है, कोई बात नही!' बूढा बहुत खुश तो हुआ लेकिन सौ के बदले ५० लेने वाले ग्राहक को देख कुछ स्तम्भित हुआ और कुछ बुदबुदाता चला गया। मैने कहा—"यह क्या बेवकूफी है?" लालबहादुर ने कहा—'आप ने सुना नही? बूढे ने कहा,–शाम हो रही है! वह मजबूरन सस्ता बेच रहा था, फिर हम लोग ५० से ज्यादा खा भी तो नही सकते थे!' मै चुप रहा और कुछ सोचने लगा। शायद लालबहादुर ने ठीक ही कहा था।

बनारस मे मेरी शादी थी। लालबहादुर लाहौर से आए थे। १९२६ की रात है, मुझे खाने पर एक घड़ी ससुराल से मिली। मै चाहता था कि खाने पर लालबहादुर भी साथ रहते, पर तब वह विद्यापीठ चले गए थे। वापस आने पर मैने वह घड़ी उनके हाथ पर बाँध दी। उन्होने खुश होकर कहा–'यह क्या?' मैंने कहा–'यह तुम्हारे लिए है।' आभारी होकर कहने लगे—'मुझे तो हमेशा नाना-नानी, मामा-मामी से ही मिला है, पर आपके पास भी तो नही है।' मेरे हाथ पर एक घडी बँधी थी, मैने उसे दिखाकर कहा कि इसे क्या मँगनी की समझते हो? ठेकेदारी मे सबसे पहले घड़ी ही तो खरीदी है। वह खुश हो गए और मेरा पैर छूकर बैठ गए। मै आशीर्वाद देता हुआ कह बैठा–'घबराओ नही, शीघ्र ही तुम्हारी बारी है।' वह मुस्करा दिए। हुआ भी ऐसा ही। सन् १९२८ मे मिर्जापुर मे ही शादी हुई। आज भी मुझे गर्व है कि जिन्दगी मे मैने अपने घर मिर्जापुर मे पहली पतोहू श्रीमती ललिता को ही उतारा था। इस अवसर पर उनकी मामी ने कहा—'विवाह हो गया, अब खुश हो न!' तुरन्त उत्तर दिया -'विवाह तो पहले ही हो चुका था जब घडी मिली थी।' मामी शरमा गईं।

खेड़वाड़ मे बच्चो से अक्सर सक्रान्त (जो जाड़े मे पड़ता है) के अवसर पर सी-सी करते हुए

लालबहादुरजी कहते—'नहाया कि नहीं आज ? बहुत जाड़ा है, जल्दी नहा लो, वर्ना अफीमची कहे जाओगे।' और फिर एक अफीमची का किस्सा सुनाते थे जो साल भर नहाता नहीं था। संक्रान्त पर जब उसे नहाने की याद दिलाई जाए, तो यह कहकर टाल देता था कि 'ई ससुरिया रोजै सर पर पहुँची रहत है।' उनके मुँह से यह किस्सा सुनकर सब हँस पड़ते और वह भी उस हँसी में शामिल हो जाते।

लालबहादुरजी लखनऊ में थे। पन्तजी की मिनिस्ट्री बन रही थी। मै लखनऊ लालबहादुरजी के पास गया। अब तक वह केवल एम० एल० ए० थे। मै उत्सुकतावश पूछ बैठा—'तुम्हें भी कुछ मिलेगा ?' उन्होने हँसकर कहा—'मैं तो जानता नहीं। मेरे ध्यान में तो कोई ऐसी बात नही है।' मैं भी चुप रह गया। दो दिन रहकर वापस आया। मिर्जापुर पहुँचते ही दूसरे दिन पत्रो से जाना कि शास्त्रीजी, श्री रावतजी तथा श्री गुप्ताजी के साथ पतजी के पार्लियामेन्टरी सेक्रेटरी नियुक्त हुए। मुझे प्रसन्नता तो हुई पर एक झटका भी लगा कि लालबहादुर ने मुझसे बात छिपाई। दो-चार दिन बाद मैं फिर लखनऊ पहुँचा। लालबहादुर मुझे देख कर प्रसन्न हुए और कहा—मै आपका इंतजार ही कर रहा था।' मैने कहा—'क्यो ? सोचा होगा मामा बधाई देने आवेगे। मै आया भी हूँ, पर बधाई देने नहीं अपनी नाराजगी जाहिर करने'। लालबहादुर ने कहा—'क्यो, ऐसी क्या बात है ?' मैने कहा—'आपने मुझसे छिपाया क्यों ? कुछ चर्चा पहले से जरूर रही ही होगी ?' लालबहादुर ने कहा—'इसमे जरा भी झूठ नहीं था ! कोई चर्चा रही हो, पर मै आखिर तक इस ओर से बिल्कुल उदासीन था, पंतजी ने न मुझसे पूछा न मैने कुछ जाना। फिर आप तो जानते ही है, बिन मागे मोती मिलै, मागे मिलै न भीख !' मैं खुश हो गया और उन्हें छाती से लगा लिया।

लालबहादुरजी से बैठे-बैठे इधर-उधर की बातें हो रही थी कि मैने कहा—'इसका क्या रहस्य है कि आजकल सभी कांग्रेसी एक ओर से गालियां सुनते है, पर मैने अब तक तुम्हे गालियां पाते नहीं सुना। तुम कैसे इससे अब तक बचे हो ?' वह नम्रता से बोले—'आपने क्या सुना नहीं है—'जा पर कृपा राम की होई, ता पर कृपा करै सब कोई।' मैने कहा—'भाई, इस जवाब से पूरा सतोष नहीं हुआ।' उन्होंने कहा—'कोई खास कारण तो नहीं जान पड़ता, हाँ सम्भव है मै थोड़ा आत्मनिरीक्षण का अभ्यास करता हूँ जिससे कुछ कम गलतिया होती हो और होती भी हों तो सुधार हो जाए !'

क्या बताएँ गुस्सा आ गया !

लालबहादुरजी रेल मन्त्री थे। मे दिल्ली उनके पास गया था और उनके साथ पार्लियामैन्ट जाने के इरादे से मोटर में बैठा उनका इन्तजार कर रहा था कि फाटक की ओर से रेलवे का एक निम्न श्रेणी कर्मचारी बाल-बच्चे सहित लपकता हुआ आया। वह मोटर तक सीधा पहुँच गया। लालबहादुर जी कमरे से निकल कर बाहर आए थे और मोटर मे बैठना ही चाहते थे कि सबने पैर पकड़ लिए। लालबहादुरजी ने कहा—'यह क्या, भाई यह ठीक नही। मै तो तुमसे पहले ही कह चुका था, घबराओ नही, तुम्हारा काम ठीक हो जाएगा, नाहक औरतो-बच्चों को कष्ट दिया। सब को लाने मे पैसा बर्बाद किया।' फिर रुके और हँसकर बोले—'हाँ, हाँ, टिकट मे पैसा तो खर्च नही हुआ होगा, रेलवे सर्वेन्ट हो न ! फिर भी बाहर निकलने पर फालतू खर्च तो हो ही जाता है।' बच्चो को भी चुमकारा। सबने पैर छोड़ दिए पर फिर ज्यो ही वह बैठने को झुके, फिर सबने पैर पकड लिए। उन्होने फिर सान्त्वना दी। तीसरी बार फिर ऐसा ही हुआ। देर हो रही थी, कुछ तमतमा उठे। कहा—'भाई, इन

लोगो को हटाइए ! चपरासी वगैरह पास में थे ही सब को हटा अलग किया और वह मोटर में बैठ गए और मोटर चल पडी। दो-एक मिनट बिलकुल खामोशी रही। धीरे से उन्होने कहा—'क्या बतावे, गुस्सा आ गया।' उन्हे पछताते देख मैने कहा—'भाई, गुस्सा आना स्वाभाविक था। आपने कई बार समझाया, तसल्ली दी, पर उसकी समझ मे नही आया। फिर देर भी तो हो रही थी।' यह सुनकर भी वह बार-बार कहते रहे कि फिर भी हमे गुस्सा नही होना चाहिए था। यही कहते-कहते वह ससद भवन आ गए और अपने काम मे व्यस्त हो गए। दूसरे दिन फिर सुबह मै पूछ बैठा—'आखिर गलती तो उसी की थी, फिर आप क्यों बार-बार झक मार रहे थे।' 'फिर भी हमें गुस्सा नही होना चाहिए था—मुस्करा कर उन्होने कहा—'यही तो introspection है अपनी कमजोरी के लिए दूसरो पर दोष ठोक देने से कही कुछ बन पाता है। विपरीत अवस्था में मनुष्य कमजोरियो से बच सके तभी तो काम बनता है, वरना सब फालतू बात है।'

इससे लालबहादुर का असली चित्र मै कुछ देख पाया।

लालबहादुर जी मेरी लड़की की शादी मे दिल्ली से आए। उन दिनो वह वाणिज्य उद्योग मन्त्री थे। शाम को मुझसे कहा कि कुछ काम हमे भी बताइये। मैने कहा कि आप बाहर बैठिए, इतना ही काम बहुत है। उन्होने बड़े शौक से कहा—'यह भी कोई काम है।' मैं मुसकराता रहा। उन्होने स्वय कहा—'अच्छा बाहर चलता हूँ जो आयेगे उन्हे बैठाऊ गा और खातिर करूंगा।' मैने कहा कि ठीक है। वह बाहर चले गये। मै और काम मे व्यस्त हो गया। थोड़ी देर बाद मै बाहर गया तो देखता हूँ कि पचासो आदमी लालबहादुर जी को घेरे खड़े है। नाक-भौह सिकोड़े उनके पास मै गया और कहा—'यही इन्तजाम आप कर रहे है ?' वह बोले—'हाँ, यह तो ठीक नही है !' मैने कहा—'यो कैसे होगा, आप न तो बैठेंगे न लोगो को बैठने देगे !' चुपचाप लालबहादुर जी ने आसन ले लिया। उनके बैठते ही सब लोग बैठ गए। पान-पत्ता भी चलने लगा। उन्होने कहा—'सचमुच, मेरी वजह से काफी गड़बड हो रही थी !'

लालबहादुर जी को घर से बाहर पिकनिक का बड़ा शौक रहता। जब भी मौका मिलता, न चूकते। पर मिनिस्ट्री के दिनो मे फुर्सत कहा मिलती। मगर वह मौका पा कभी-कभी दिल्ली के बगले के हाते मे ही बगीचो मे चूल्हा जलवा देते। हाडी की बनी दाल उन्हे पसन्द थी, सब खाना बाहर ही बनता। खाने बैठते तो जो भी बगले मे रहता—चपरासी, नौकर, धोबी, जमादार, लड़के, लडकी, पी० ए०, इत्यादि सभी का केले के पत्तो पर खाना लगता। सब एक साथ खाने बैठते। सबसे बराबरी का व्यवहार होता। लड़को को भी छेड-छाड़ देते। किसी के धीरे-से चपत लगा कर कहते—इसे एक रोटी और दो। बूढे चपरासी के पास भी पहुँच जाते, कहते, इनको तो कुछ मिला ही नही। और खाओ भाई ! सभी लालबहादुर जी के प्यार से, सत्कार से, व्यवहार से गदगद हो जाते। पूर्ण मानव थे हमारे लालबहादुर।

परीक्षाएं समाप्त होने का सुख

कामराज-योजना मे लालबहादुर जी का त्याग-पत्र स्वीकार होने के पहले मैं दिल्ली पहुँच गया था। त्याग-पत्र वह दे चुके थे। सभी कह रहे थे कि स्वीकार भी होगा। पहुँचने पर मुलाकात हुई। मैं पूछ बैठा—'क्या हाल है। तुम्हारा त्याग-पत्र तो स्वीकृत ही होगा'। बोले—'होना तो चाहिए,

सारी परेशानी भूल जाती है !' लालवहादुर जी वोले—'पर, हाँ इस दो पैसे के मालों को कीमत सिर दे कर भी चुकाए नही चुकती।'

लालवहादुर जी लखनऊ मे जब गृह मन्त्री थे, जेल के समय का छोटा-सा सेवक रामनाथ उनके साथ था। कुछ समय वीतने पर उसके पथभ्रष्ट होने की शिकायत उन तक पहुँची तो कुछ नाराज हुए और उसको निकाल दिया। रामनाथ मिर्जापुर का ही रहने वाला था। घर आया, उसके बाद मेरे पास आया। वडा दुखी था। उसने कहा—'बाबूजी, हमसे नाराज हो गये, हमे निकाल दिया। मामा, आप कह दीजिए हमे माफ कर दे।' मैने कहा—'जब बदमाशी पर उतारू हो, तब कैसे मैं कहूँ।' उसने कहा—'मामा, गलती तो जरूर हुई, पर अब न होगी। बाबूजी हमारी शिकायत न सुनेंगे।' मैंने कहा—'अच्छा, मौका मुलाकात का मिले तो कह दूँगा।' रामनाथ ने महीने डेढ़ महीने का समय बिताया। उसे मालूम हुआ कि बाबूजी बनारस आ रहे है। मेरे पास भी पत्र आ चुका था। हम दोनो ने बनारस की तैयारी कर दी। मै इधर-उधर न जाकर सीधे दारा नगर (मौसी के घर) गया और सोचा कि यहा इत्मीनान से मुलाकात होगी। लालवहादुर जी जब सब काम से छुट्टी पा ११ बजे रात मौसी के घर पहुँचे, हम सभी इकट्ठे थे। एक ओर रामनाथ भी था। कमरे मे दाखिल होते ही मुझ पर साथ ही रामनाथ पर भी लालबहादुर जी की नजर पड़ी। उसे देखकर कहा -अच्छा! आप भी यहाँ पहुँच गए।' फिर हमारी ओर मुखातिब होकर कहा—'यह आप तक पहुँच गये न!' मैने हँस कर कहा कि इसका घर भी मिर्जापुर ही है, फिर हमारे पास न पहुँचता तो जाता कहा।' लालबहादुर ने कहा—'आप को शायद मालूम नही कि 'ये बड़े हजरत हो गये है।' मैने कहा—'मालूम है? अरे भाई, यह तुम्हारे कठिन समय का सेवक है, तुम्हारे सुख में इसका भी कुछ हिस्सा है।' लालबहादुर जी कुछ गम्भीर हो गए। मैने फिर कहा—'इसने अपनी सारी गलती स्वीकार कर ली है?' आइन्दा शिकायत न होगी।' लालवहादुर ने कहा—'इन्होने अपनी गलती स्वीकार कर ली?' मैने कहा कि हाँ। फौरन लालवहादुर ने अपने पी० ए० से कहा—'अग्रवाल, रामनाथ को साथ ले चलना।' रामनाथ साथ मे गया और अन्तिम समय तक उनके पास रहा। ऐसे सरल हृदय, थे हमारे लालबहादुर, कितना विशाल हृदय था उनका। क्षमा की मूर्ति थे।

मेरे वडे लड़के की शादी इलाहाबाद मे थी। लालवहादुर जी उस समय रेल-मन्त्री थे। मेरी इच्छा के अनुकूल बारात पहुँचने के एक दिन पहले पहुँच कर लड़की के पिता से मिले, जो इन्तजाम उनका था उसकी जानकारी प्राप्त की। कहा कि हमारे लायक कोई काम आप समझे तो सकोच न करे। दूसरे दिन मैं बारात लेकर पहुँचा तो लालबहादुर जी को वहाँ देख विस्मित हुआ। मैने कहा—'अच्छा हमे खबर ही नही, आप यहाँ पहुँच गये है। तुरन्त कहा—'एक दिन पहले आने का आदेश था न आपका। मै मौका निकाल पहुँच गया।' मै बहुत प्रसन्न हुआ। फिर तुरन्त कह कर चले कि 'मैं समय से आ जाऊँगा।' विवाह खत्म हुआ, दुल्हन-दूल्हा एक कार मे विदा हुए। आगे-आगे लालबहादुर जी की कार मुझे साथ लेते हुए चली। थोड़ी दूर जाने पर मैने देखा कि कार मिर्जापुर की ओर न जाकर दूसरी ओर जा रही है। मैंने कहा कि किधर चल रहे हो? उन्होने कहा—'दस मिनट कटघर (जहाँ यह इलाहाबाद मे रहते थे) रुकूँगा, फिर चले चलेगे।' दोनो कारे कटघर पहुँच गई। मुझसे कहा कि आप तो पतोहू बहुत पहले उतार चुके है, मैं कम-से-कम छोटे भाई की दुल्हन उतार लू, आज तक यहाँ कोई दुल्हन नही उतरी। दुल्हन-दूल्हा उतरे, मिठाई दही आदि खाया और जल्दी ही कार मे बिठाकर

कहा—'आप इन लोगों के साथ ही बैठ जायें। मैं शाम तक पहुँचूँगा।' मैं ताकता रह गया। अवाक रहा। लालबहादुर की यह हृदयग्राही व्यवहारिकता देखकर।

भारत के उस प्रथम सेवक का सेवा-भाव

लालबहादुर जी के प्रधान मन्त्री होने पर मै एक बार जन्माष्टमी के लगभग दिल्लो पहुँचा। तब दो-तीन दिन रहने के बाद मैने जन्माष्टमी के एक दिन पहले चलने की इच्छा प्रकट की और कहा कि मथुरा होता हुआ घर जाऊँगा। इस कारण कोई रोक न सका। लालबहादुर जी को यह मालूम हो गया कि मै सुबह 'ताज' से जा रहा हूँ। हमारी पूज्यनीया मातृवत बहन ने उस रात बड़े स्नेह से मेरी चारपाई अपने पास मैदान मे ही बिछवाई। वहीं रात मै सोया। सुबह तड़के ही उठ पड़ा। अन्दर बगले मे चलकर समय से ही तैयार हो जाना था, पर उलझन पड़ गई। बगला भीतर से हर ओर से बन्द। कोई भीतर जागा हुआ भी दिखाई नही दे रहा था। वृद्धा बहन ने मुझे परेशान देख, कहा – 'लल्ला, क्या चाहिए ?' मैने कहा कि चाहिए तो कुछ नहीं। बगला भीतर से बन्द है। ६ बज रहे है, ७ बजे गाड़ी जाती है।' बहन भो सोचने लगी। वह स्वय उठो। लालबहादुर जी के कमरे की ओर गई, वह उठ चुके थे। मां की आहट पा, दरवाजा खोल पूछा—'अम्मा क्या बात है ?' उन्होने कहा – 'मामा के जाने का समय हो गया है। दरवाजा चारो ओर से बन्द है।' लालबहादुर जी ने कहा - 'अच्छा।' स्वय जल्दी से दरवाजा खोला, कहा – 'जाना जरूरी है ?' मैने कहा —'जरा मथुरा इस अवसर पर जाने की इच्छा है।' यह कह मै अपने कमरे मे गया। सामान सब बधा रखा था। मै कपड़ा पहन जरा कुल्ली करने चला गया, इसी बोच लालबहादुर जी ने स्वय दूसरी ओर का दरवाजा खोल ड्राइवर को बुला कर कहा—'तैयार हो, मामा को स्टेशन पहुँचाना है।' और मेरे कमरे मे आये। मै बाथरूम से निकलकर क्या देखता हूँ कि लालबहादुर मेरा होल्डाल औरअटेची दोनों हाथ में लिए खड़े है। मुझे देख कर कहा—'चलिए, समय हो गया है, गाड़ी तैयार है।' मैने कहा—'यह क्या ? और किसी को बुला लो, एक मुझे दो।' पर लालबहादुर ने एक न सुनी। मोटर तक आ हो गए। जब ड्राइवर ने हाथ से सामान ले लिया, मैने कहा—'सौभाग्य है मेरा, भारत के प्रथम सेवक ने मेरा सामान ढोया !' वह हाथ जोड़े खड़े रहे। मोटर स्टेशन को चल दी। मेरी आँख प्रेम से डबडबा गई।

अन्तिम विदाई

जब भी मै दिल्ली जाता वह इस बात को भरसक कोशिश करते कि मेरे चलते समय वह बंगले पर मौजूद रह मुझे विदा करे। सपरिवार सब के साथ हाथ जोड़े खड़े रहते और तब तक खड़े रहते जब तक मोटर ओझल न हो जाए। इलाहाबाद आते और जब भी मै गवर्नमेन्ट हाउस मे उनसे मिलने जाता, तब सीढ़ी तक विदा करने जरूर आते। अन्तिम बार १७ दिसम्बर ६५ को मिर्जापुर से विदा कर तारीख १८ दिसम्बर, ६५ को इलाहाबाद से उनके जाने के पहले मै वहाँ गया : रात के लगभग नो बजे पहुँचा था। देखता हूँ कि लगभग ३०० सज्जन इस समय भी मिलने को इकट्ठे है। प्राइवेट सेक्रेटरी श्री श्रीवास्तव साहब तथा पी० ए० आदि परेशान है। मुझे देख वह मुझे दूसरी ओर ले गए और कहा—'पहले आप खाना खा लीजिए, बाबू जी सुबह से इस समय तक एक मिनट भी फुसत नहीं

पा सके है। जो सज्जन यहाँ है।उनको तब तक हम लोग विदा कर लें।' खैर, हाथ जोड़-जोड़ सबको विदा किया। मै भी खाना समाप्त कर चुका था। मुझे ले चलने को मेरे पास आए। मै बड़ी दुविधा मे पड़ गया। मैं सोचने लगा मुझे जाना चाहिए या नही। वह बोले—'अरे, मामा जी, आप चलिए, यह रुकावट आपके लिए तो है नहीं। अगर आप बिना मिले चले गये और बाबूजी को मालूम हुआ तो कितने दुखी वह होगे।' मै उनके पास चला गया और जाते ही उनसे सोने का आग्रह करने लगा। करीब ११ बज रहे थे। उन्होने कहा—'हाँ दोपहर में १० मिनट भी आराम को मिल जाता है तो अच्छा ही रहता है। पर आज तो यह भी मोका नही मिला। साथ ही रात दो बजे मिर्जापुर से यहाँ पहुँचा।' खैर, मैने जल्दी-जल्दी छुट्टी ली। वह आदत के अनुसार मुझे सीढी तक विदा करने आए—कमरे के दरवाजे पर पहुँचे थे कि पी० ए० ने कहा—'बाबू जी, बाहर अभी भो सैकड़ो लोग खड़े है।' मै बोल उठा—'बस, यही तक!' बाहर जाना जरूरी नही है।' उन्होने कहा—'बस, सीढी तक।' मैने कहा—'कोई कसम वहाँ तक जाने की थोड़ी ही है।' रुके और पी० ए० की ओर मुखातिब होकर कहा—'आप लोग कभी-कभी फजूल परेशान करते हैं।' मै उन्हे वही छोड़ चल पडा। यह नही जानता था कि हमारो उनकी यह अन्तिम विदाई थी, वरना सीढी ही तक विदाई लेकर एक क्षण उनके पास और रह लेता। इस विदाई के २३वे दिन वह सदा के लिए विदा हो गये। नश्वर नष्ट हो गया, सत्य अमर हुआ—काश! लालबहादुर हम लोगो के बीच फिर जन्म लेते।

मुकुन्ददास माहेश्वरी

निर्णय, नेतृत्व और नवजागृति के प्रतीक

किसी भी राष्ट्र नेता की सफलता के अनेक आधारों में त्वरित निर्णय करने की योग्यता, कुशल नेतृत्व, शक्ति एवं राष्ट्रव्यापी नव जागृति की लहर फैलाने की क्षमता का विशिष्ट स्थान रहता है। राष्ट्र-नेता, राष्ट्रीय नौका का नायक होता है, संचालक होता है और होता है उसका कर्त्तव्यपरायण केवट। अतः राष्ट्रीय जीवन का मूलाधार होने के नाते उसके नेतृत्व की सफलता पर राष्ट्रीय प्रगति की उत्कृष्टता अवलम्बित रहती है। स्व० लालबहादुर शास्त्री के स्वल्प, किन्तु चिरप्रभावी प्रधानमन्त्रित्व-काल का विहगम दृष्टि से सिंहावलोकन यह भलीभाँति स्पष्ट कर देता है कि स्वतन्त्र भारत के राजनीतिक क्षितिज पर वह निर्णय, नेतृत्व और नवजागृति के निर्णायक नेता के रूप में उदित हुए और अपनी अद्वितीय विलक्षणता एव प्रतिभा सम्पन्नता का परिचय देते हुए जनता के विश्वास और निष्ठा के जीवित आदर्श बनने में सफल हुए।

राष्ट्र निर्माता प० नेहरू के नेतृत्व में भारत स्वतन्त्रता के उपरान्त बड़ी जागरुकता से सतत आगे बढता रहा। २७ मई, सन् ६४ भारत के आधुनिक इतिहास में एक दुर्दिन बन कर आया, उसके नेता और निर्माता पं० नेहरू के निधन से भारत की इस यात्रा में भयकर गतिरोध उत्पन्न हुआ, राष्ट्र-रथ रथीविहीन एक भीषण तूफान और झंझावात की स्थिति मे फंस गया। विश्व-नेता नेहरू के अवसान से उत्पन्न भारत की इस विकट स्थिति को सवेदना से सन्न सारी दुनियाँ देख रही थी और वह चकित रह गई, जब उसने देखा कि राष्ट्र-निर्माता नेहरू का भार, उनकी विरासत, उनका उत्तराधिकार और इस विशाल गणतन्त्रात्मक देश की भावी आशा-आकाक्षाओं और स्वप्नो का सेहरा श्री लालबहादुर शास्त्री नामक एक ऐसे व्यक्ति के सिर बाधा गया है, जिसका भारतीय राजनीति के रगमच पर इतनी उच्च स्थिति पर अभ्युदय आकस्मिक नही तो आश्चर्यजनक-सा था।

स्वाधीनता के उपरान्त विगत सत्रह वर्षो में पं० नेहरू ने अपना दायित्व नवजात स्वाधीनता की रक्षा और देश के नव निर्माण तक सीमित नहीं रखा, प्रत्युत अपनी योग्यता, व्यक्तित्व और प्रभाव से विश्वव्यापी बना दिया था। श्री नेहरू ने भारतीय जनता का नेतृत्व तो किया ही साथ ही साथ अपने योगदान से विश्व-मानवता के मुक्तिदाता एवं संरक्षक के रूप में भारतीय नेतृत्व की जो साख-धाक और प्रतिष्ठा स्थापित की थी उनके निर्वहन का स्वाभाविक और सीधा दायित्व भी श्री शास्त्री के कन्धों पर आया।

जीवन मे समस्याओ का उठना एक प्राकृतिक लक्षण है तथा उनके समाधान का यत्न मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति। फिर दायित्व का अर्थ ही यह है कि उसका वहन करने वाला है। व्यक्ति आ पड़ने वाले दायित्वो को अपनी निर्वाह-शक्ति के अनुरूप पूर्ण करने के लिए सतत प्रयत्नशील रहता है। सभवत: जीवन के इसी तथ्य की प्रामाणिकता मे श्री शास्त्री ने अपने नाजुक कन्धो पर यह सब गुरुतर और महान दायित्व धारण कर लिया।

पद-भार सभालते ही राष्ट्रीय और अन्तर राष्ट्रीय उन सभी समस्याओ ने अपना सिर उठाया मानो वे उनसे लड़ने वाले, सघर्ष करने वाले को निगल जाना चाहती हों। एक ओर देश मे खाद्यान्न का अभाव, मूल्य-वृद्धि, दरिद्रता, बेरोजगारी, भाषा-समस्या, पारस्परिक सघर्ष और अन्य अगणित आतरिक अव्यवस्थाएँ, जिनकी पृष्ठभूमि मे राष्ट्र की एकता उसकी भौगोलिक अखण्डता विपत्ति मे थी, तो दूसरी ओर अन्तर राष्ट्रीय स्तर पर समृद्ध एव उन्नत देशो के गिरगिट के समान परिवर्तित होने वाले रूपो और दृष्टिकोणो मे भारतीय हितो की रक्षा-ये सभी श्री शास्त्री की योग्यता, काय-शक्ति और व्यक्तित्व तीनो ही दृष्टियो से एक चुनौती बनकर सामने आई। उनमे से अनेक समस्याओ ने अपना उग्र रूप धारण किया। और राष्ट्रीय नेता के व्यक्तित्व पर आघात करना चाहा। श्री शास्त्री ने न केवल आन्तरिक समस्याओं के समाधान से अपनी सूझ-बूझ और प्रतिभा का परिचय दिया, वरन अन्तर राष्ट्रीय स्तर पर शक्तिशाली राष्ट्रो से तथा अपने पड़ौसी देशो से मधुर सम्बन्धो को कायम रखने के लिए प्रभावी प्रयास प्रारम्भ किये।

राष्ट्र के उत्थान को आशामयी योजनाओ को प्रगति चल रही थी कि इसी बीच पाकिस्तान का कच्छ-रन-क्षेत्र मे भीषण आक्रमण हो गया। भारतीय सेनाओ ने बहादुरी से मुकाबला किया। इगलैण्ड की मध्यस्थता से भारत और पाकिस्तान के मध्य समझौता हुआ। इस सधि-पत्र को स्याही सूखी भी न थी कि पाकिस्तान ने भारत के उत्तरी सीमान्त प्रदेश यथा जम्मू, कश्मीर और पजाब आदि पर दूसरा हमला कर दिया। पाकिस्तान के इस आक्रमण से कुछ नए दृष्टिकोण, कुछ नए तथ्य हमारे सामने आए जो श्री शास्त्री के नेतृत्व की प्रामाणिकता के साथ-साथ भारत के बुनियादी हितो पर प्रकाश डालते थे।

जीवन मे कुछ बाते ऐसी होती है, जिन पर विचार किया जाता है, किन्तु ऐसी भी होती है जिन पर विचार करने का समय ही कहाँ, निर्णय लेना होता है। पाकिस्तान द्वारा भारत पर थोपा गया वह युद्ध एक ऐसा ही वक्त था, जिसमे सोचने-विचारने का समय नही था—निर्णय ही लेना था। प्रधान मन्त्री लालबहादुर शास्त्री ने वक्त की इस माग को तत्क्षण पूरा किया और भारतीय सेनाओ को आगे बढने तथा जहाँ तक भी आततायी आक्रमणकारी मिले, वहाँ तक अनवरत आगे बढते रहने का आदेश दे दिया। निर्णय का, चाहे यह व्यक्तिगत जीवन हो अथवा राष्ट्रीय जीवन बडा ही महत्व है। व्यक्तिगत स्तर के निर्णय, जहाँ पारिवारिक स्तर तक प्रभावी होते है, वहाँ राष्ट्रीय जीवन के निर्णयों पर समग्र राष्ट्रीय जीवन और उसके स्वत्व कसौटी पर कस जाते हैं। गौरवपूर्ण उपलब्धियाँ सदा आदर्शों की ऊँचाई मे जोखिम भरे रास्ते से तय हुई है। अत: अपने इस निर्णय से श्री शास्त्री ने न केवल वर्तमान भारत के शौर्य-पराक्रम को समय की कसौटी पर कस दिया, वरन् उसके अतीत को भी बड़े साहस के साथ आवाज दी। अपने निर्णय के साथ उसका नेतृत्व भी श्री शास्त्री ने बड़ी दक्षतापूर्वक सभाला। सारे युद्धकाल मे देश की भावनात्मक एकता तथा राष्ट्र के उन स्रोतो का जिन पर जन-साधारण का जीवन निभर करता है, प्रवाह अवरुद्ध न हो इस बात की कडी निगरानी उन्होने रखी।

व्यक्ति हो अथवा राष्ट्र उसके संयम और एकाग्रता तथा एकता का आधार उसकी आंतरिक शक्ति है। अत: देश की आतरिक शक्ति को सुदृढ़ बनाए रखने के लिए श्री शास्त्री ने राष्ट्र की इस संकट-कालीन स्थिति में देश को एक नई चेतना और नवजाग्रति के लिए आह्वान किया। समूचा देश एक ही व्यक्ति के निर्णय, उसी के नेतृत्व और उसी के नवजाग्रति मन्त्र की अनुकृति बन गया। भारत के हर स्त्री-पुरुष और बालक-बालिका में उत्साह, जाग्रति और आत्मोत्सर्ग की जोशीली भावनाएँ उन दिनों परिलक्षित होती थीं। जाग्रति का यह प्रवाह सैनिक और सर्वसाधारण रूपी दो किनारों से अपने अबाध रूप में प्रवाहित था, जिसका केवल एक ही मन्तव्य था—'युद्ध मे विजय।'

एकाकी भारत मात्र अपने आत्मबल पर पाकिस्तान से लड़ा और उस लड़ाई में, उन दिनों चल रही प्रतियोगी अस्त्र-शस्त्रों की दौड में, मानव की सर्वोत्कृष्ट शक्ति आत्मबल की अपराजेयता उसने बड़े ही अद्वितीय ढंग से सिद्ध कर दी। विजयोन्माद में भारतीय फौजो के बढते हुए कदम राष्ट्र-सँघ के हस्तक्षेप से रुके और शान्ति-स्थापन की सद्‌भावना से प्रेरित रूसी प्रधानमन्त्री कोसीजिन की मध्यस्थता से दोनो देशो ने 'ताशकन्द-घोषणा' के नाम से प्रख्यात सधि-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए। युद्ध सदा से ही किसी समस्या का समाधान न हो कर समस्याओं का जनक रहा है। यही कारण है कि भारतीय दृष्टिकोण सदा से ही युद्ध-विरोधी रहा है। बल-प्रयोग न करने का जो वचन 'ताशकन्द-घोषणा' में निहित है वही ताशकन्द-समझौते की मूल और महत्वपूर्ण सफलता है।

ताशकन्द से शान्तिपूर्ण समझौते की इस उद्‌घोषणा के साथ ही भारतीय जनता को ताशकन्द से ही जो दारुण और दुर्भाग्यपूर्ण सूचना मिली, वह थी—श्री शास्त्री का निधन। इतिहास में ऐसे उदाहरण कदाचित ही मिलेंगे, जिनमे श्री लालबहादुर शास्त्री जैसे व्यक्ति ने भारत-जैसे किसी विशाल बहु-समस्याग्रस्त प्रजातांत्रिक राष्ट्र के प्रसुप्त स्वाभिमान को केवल अठारह माह के स्वल्प नेतृत्व में जाग्रत कर विश्व के समक्ष एक विलक्षण और जागरूक राष्ट्र के रूप में प्रतिष्ठित किया हो। प्राय: देखा गया है कि किन्ही दो विरोधी प्रवृत्तियों का सामंजस्य किसी एक व्यक्ति मे नही होता। हिसा में विश्वास करने वाला व्यक्ति अहिसक नहीं हो सकता और न ही कोई युद्धप्रिय व्यक्ति शान्ति का उपासक। श्री विस्टन चर्चिल, जिन्होंने द्वितीय महायुद्ध के समय ब्रिटेन का नेतृत्व किया, युद्धोपरान्त उनका स्थान श्री एटली ने ले लिया। किन्तु श्री शास्त्री इस क्षेत्र मे एक अपवाद सिद्ध हुए।

नेता इस देश में बहुत हुए और होंगे, किन्तु आधुनिक युग में जनसाधारण की मनोगत भावनाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले राष्ट्र-पिता महात्मा गाधी और पं० जवाहरलाल नेहरू के बाद श्री शास्त्री ही ऐसे लोकप्रिय और लोकनायक नेता हुए, जिन्होने विचारो की दृष्टि से वही सोचा जो देश की जनता सोचती थी, समस्याओं के समाधान के लिए उन्होने वही निर्णय लिया जो सफल हुए थे। भले ही उनके रूप से उन्होने जनता का वैसा ही नेतृत्व किया, जिसकी जनता उनसे अपेक्षा रखती थी। अपने आचार-विचार की शुद्धता के आधार पर श्री शास्त्री लोकप्रियता के शिखर पर आरूढ होने में सफल हुये थे। भले हो उनके रूप, आकृति, वेशभूषा मे आकर्षण नहीं था, किन्तु उनके आचार और शील में जो सौन्दर्य था वह विलक्षण था। दुनिया ने उनके इस आचार और शील के सौन्दर्य को देखा, परखा और अनुभव किया, तथा उसकी विलक्षणता पर अपनी सहमति और समर्थन की मुहर लगा दी। निर्णय, नेतृत्व और नवजाग्रति के निर्णायिक नेता के रूप मे भारतीय इतिहास में श्री लाल-बहादुर शास्त्री का सदा अमिट स्थान रहेगा।

ललितेश्वर प्रसाद श्रीवास्तव

'जय जवान, जय किसान' के मंत्रदाता

श्री लालबहादुर शास्त्री का प्रधान मन्त्री के रूप मे १६ महीने का कायकाल भुलाये न भुलाया जा सकेगा। वे सचमुच देश के जननायक थे। जनता के वे 'हममें से एक' थे। किसानों को तो श्री शास्त्री भाई कहा करते थे। 'जय जवान, जय किसान' का नारा देकर उन्होने देश मे नई रूह फूकी। 'कम खाओ' और अधिक उपजाओ' की उनकी भावना को आगे बढ़ाना होगा। हमें आत्म-निर्भरता का उनका व्रत पूरा करना होगा। उन्होने दूसरो को सीख मात्र ही नही दी, खुद भी कम खाया और सादा जीवन व्यतीत कर अपने को देश का एक सच्चा नागरिक सावित किया। रक्षा, खाद्य और उद्योग तीनो ही मामलो मे वे आत्मनिर्भरता को सर्वोच्च प्राथमिकता देते थे।

प्रधान मन्त्री बनने के वाद ही लालबहादुर ने देश के विकास को एक नया मोड़ दिया। उन्होने कहा कि जब तक देश का किसान सम्पन्न नही होता हम कुछ भी नही कर सकते। इसीलिये उन्होने योजना आयोग की चौथी योजना मे खेती की एक अलग योजना बनाने का आदेश दिया। 'जब तक हम खाद्यान्न के लिए विदेशो पर निर्भर रहेगे तरक्की नही कर सकते।' उन्होने मुख्य मन्त्रियों को सलाह दी कि वे खुद भी कृषि उत्पादन कार्यक्रमों मे रुचि ले और किसान भाइयों को खेती के काम मे हर तरह की सुविधाएं मुहय्या करे। योजना आयोग ने उनका यह आदेश अंगीकार किया और उनकी देख-रेख मे कृषि की एक अलग योजना तैयार हुई। १९६६-६७ में वह योजना लागू की जा रही है। अफसोस है कि वे अब उसका कार्यान्वयन देख न पायेगे।

गत १० अक्टूबर को राष्ट्र के नाम अपने संदेश मे उन्होने कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए किसानो से और अधिकारियो से मार्मिक अपील की। उन्होने कहा कि जहाँ पहले एक दाना उगता था, वहां अब दो उगेंगे। हमे दूसरे देशो पर निर्भर नही रहना चाहिए। हमे आत्म निर्भर और शक्तिशाली बनना है और बनकर रहेंगे।

'देश के वहादुर सैनिको ने हमे वीरता और त्याग का रास्ता दिखाया है। हमे अब अपना कर्त्तव्य निभाना है। हमें अपना आर्थिक ढांचा ऐसा बनाना है कि जरूरी चीजे हम अपने आप बनायें और पैदा करें।'

श्री शास्त्री ने अपने इस भाषण मे कहा था, 'अपनी जरूरत भर का अनाज पैदा करना आज मै उतना ही महत्वपूर्ण समझता हूँ जितना रक्षा का प्रबन्ध करना। दूर भविष्य को ध्यान में रखते हुये यह आवश्यक है कि हम भोजन मे कमी करके नहीं बल्कि देश के अन्दर ही काफी अनाज पैदा करके आत्म निर्भर बनें। अनाज का मोर्चा लगभग उतना ही अहम है जितना फौजी मोर्चा।'

'जहा तक खेती का काम है, मेरे किसान भाई इस बारे में मुझसे कही अधिक जानते है। खेती की पैदावार बढ़ाने का मतलब घनी खेती करना है। जहाँ दो फसलें उगायी जाती है वहाँ तीसरी के लिए कोशिश की जाय। बड़ी फसलों के साथ कुछ छोटी फसलें भी पैदा करने की कोशिश होनी चाहिए।'

कृषि उत्पादन के लिए वे खाद के महत्व को समझते थे। किन्तु विदेशी मुद्रा की कमी के कारण उर्वरक की जरूरत पूरा करना कठिन हो रहा था। इसलिए उन्होंने कहा कि हमें इस कमी को पूरा करने के लिए कम्पोस्ट खाद तैयार करने की ओर पूरा ध्यान देना चाहिए। कम्पोस्ट खाद में गोबर की साधारण खाद से ज्यादा नाइट्रोजन और फसलों को ताकत देने वाली दूसरी चीजें होती हैं। इसीलिए इस काम मे पूरी तरह लग जाना चाहिए।

सिचाई की समस्या से भी वे अच्छी तरह परिचित थे। इसीलिए उन्होने कहा कि जहा भी सिचाई का इन्तजाम है, वहा इन साधनो का किफायत के साथ इस्तेमाल कर ज्यादा से ज्यादा लाभ उठाना चाहिए। जहा सिचाई के साधन काफी न हों, कच्चे कुएं खोदे जा सकते हैं। अपने यहा की हालत को देखते हुए अनाज और दूसरी जो भी फसलें हम उगा सकें, उगाये। जमीन के हर टुकड़े पर खेती की जाय। शहरों मे भी खाली जमीन के हर टुकड़े पर, बागों के छोटे-छोटे हिस्सों पर, जहां भी हो सके, सब्जिया उगायी जायं। सब्जी का सुन्दर सजा हुआ बगीचा हर घर के लिए गर्व की चीज होनी चाहिए।

किन्तु आप-हम सब जानते है कि अनाज पैदा करना ही काफी नहीं। श्री शास्त्री ने जोर दिया कि हमे सारी जनता को अनाज देना है। उद्देश्य यह होना चाहिए कि अनाज की मुनासिब और सही बाट हो। किसान भाई अपनी जरुरत का अनाज खुशी से अपने पास रखे, लेकिन जो बाकी बचे, उसे उन्हे बेचना ही चाहिए। उन्होंने उपज की मुनासिब कीमत देने का आश्वासन दिया। उन्होने बड़े किसानो से खास तौर से कहा कि वे फालतू अनाज मण्डी में ले आये। संकट की घड़ी में यह उनकी सबसे बड़ी देश-सेवा होगी।

जहां उन्होने देश को "जय जवान और जय किसान" का नारा दिया वहाँ किसानो के लिए उनका नारा था—"ज्यादा पैदा करो और ज्यादा बेचो।" इस कार्य मे ग्राम पचायतों और सरकारी समितियो का भी महत्व है।

शास्त्री जी ने खाद्यान्न की समस्या हल करने के लिए हर वर्ग के लोगो से कुछ न कुछ कहा और उनसे अपने कर्त्तव्य पालन की आशा की। व्यापारियो से उन्होने अनुरोध किया कि वे माल को अपने पास बचाकर न रखे। उन्हे यह देखना चाहिए कि लोगों को खाने-पीने की सभी जरुरी चीजे मुनासिब दामो पर मिलती रहे। आज संकट के समय मे उनकी जिम्मेदारी बहुत बड़ी है। 'मुझे इस

वात की खुशी है कि व्यापारियों ने कीमत को वढने से रोकने की कोशिश की है। दूसरे लोगों को भी अनाज या जो कोई चीज कम हो, उसे खरीदकर जमा नही करना चाहिए। किसी के पास न हो और किसी के पास ज्यादा हो, आज हम यह कैसे देख और सोच सकते है। यदि त्याग करना पड़े तो सवको वरावर त्याग करना चाहिए। हम लाग थोडे संयम से काम लेकर देश की काफी मदद कर सकते हैं। खाने-पोने की सभी चीजो की खपत कम होनी चाहिए। पार्टियो और दावतो का यह समय नही है। आज जरुरत त्याग और किफायत की है।

महिलाओं के लिए

महिलाओ के कर्त्तव्य के वारे मे भी अपनी राय दी। वे आज के सकट में वहुत सहायता कर सकती है। वे खाने मे ऐसी चीजे परोसे जो आस-पास के इलाके मे ज्यादा पैदा होती हो और ज्यादा खायी न जाती हो। इस प्रकार वे घर के लोगो की खुराक की आदतो को बदल सकती है। गृहिणी को चाहिए कि वह किफायत के साथ इस वात की भी कोशिश करे कि कुछ भी बेकार न जाय। श्री शास्त्री ने सोमवार को एक समय न खाने की भी अपील की।

अनाज का उत्पादन वढाने के लिए सरकार किसानो को तरह-तरह से मदद दे रही है और इसके लिए अनेक उपाय किये गये है। इन सुविधाओ को किसानो को उपलब्ध करने का काम, उनकी जिम्मेदारी अधिकारियो पर है। वीज, उर्वरक, पानी और दूसरी चीजो को किसानो तक पहुँचाने के लिए अच्छे से अच्छे ढग और पूरे तालमेल के साथ उन्होने काम करने पर जोर दिया। हर जिले की अपनी योजना हो और अलग-अलग सरकारी कर्मचारियो पर गाव के समूहो की जिम्मेदारी सौप दी जाय। यह उनका फर्ज होगा कि वे किसानो के साथ पूरा सम्पर्क रखे और उनकी कठिनाइयो को दूर करने के लिए भरसक कोशिश करे। जिले मे अधिकारियो के पूरे दल को मोर्चे पर लगने वाले सिपाही की सी भावना से काम करना होगा।

अधिकारियो की जिम्मेदारी के प्रति वे वहुत ही सजग और सतर्क थे। इसीलिए उन्होने जिला मजिस्ट्रेटो से कहा कि आप अपने आपको, पूरी नम्रता के साथ एक कमाण्डर की तरह समझें। आपको इस आन्दोलन को चलाना है और अपना लक्ष्य पूरा करना है। अपने रोजाना काम को उन्हे किसी और वरिष्ठ अधिकारी को सौप देना चाहिए और अपना ध्यान लगभग पूरी तरह से खेती की पैदावार की ओर लगाना चाहिए। वक्त वहुत नाजुक है, खतरा अभी टला नही है। सकट के समय मे जवानो ने रास्ता दिखाया है, क्या हमारे किसान पीछे रह सकते है? जवान अपना खून वहा रहा है। किसान को अपनी मेहनत और अपना पसीना देना है। हमारे सामने एक ही मत्र है—"अनाज की पैदावार वढ़ाओ।"

श्री शास्त्री औद्योगिक विकास पर वार-वार जोर देते और कहते थे कि उद्योगो का विकास इस तरह होना चाहिए कि उससे किसानो को मदद मिले तथा लोगो की जरूरत की चीजे उन्हे अधिक और कम कीमत पर उपलब्ध हो। उन्होने चौथी योजना मे कृषि से सम्वन्धित उद्योगो के विकास की ओर विशेष ध्यान देने पर जोर दिया। साथ ही कहा है कि भारी उद्योगो का विकास भी तेजी के साथ किया जाय।

महेशकुमार कटरपंच

भारत का महान आत्मा मुखरित हुई

दिल्ली के नागरिको की एक सार्वजनिक सभा मे भाषण करते हुए स्वर्गीय प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने कहा था—"हमे अपने देश की आजादी की, उसकी अखण्डता की रक्षा करनी है, चाहे इसके लिए हमे कितनी भी कुर्बानी करनी पड़े। हम किसी भी मुल्क की फौजी ताकत के सामने झुक नही सकते, हम उसके खिलाफ लड़ेंगे – पूरी ताकत से उसका सामना करेगे। हम और हमारा देश शान्ति चाहता है, परन्तु इसके मायने यह नही कि अगर हमारे ऊपर लड़ाई लाद दी जाए—जग थोप दी जाए, तब भी हम चुपचाप बैठे रहे—कोई हथियार ही न उठाये। हम भी अच्छी तरह लड़ना जानते है और जरूरत के वक्त हम मुस्तदी के साथ लड़ने के लिए तैयार है।" और ताशकन्द मे पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खाँ के साथ हुए भारत-पाक शान्ति-समझौते पर हस्ताक्षर कर देने के बाद उन्होंने हमारे प्रतिरक्षा मत्री श्री चव्हाण से कहा था—"अब तक हम पूरी ताकत के साथ युद्ध से लड़े है, और अब हमे पूरी शक्ति से शान्ति के लिए लड़ना है।" और वह शान्ति के लिए ही लड़ते-लड़ते शहीद हो गए।

श्री लालबहादुर शास्त्री के इन शब्दो मे जैसे भारत की महान आत्मा ही मुखरित हो उठी है। 'वसुदेव कुटुम्बकम्" वाला भारत प्रारम्भ से ही शान्ति का पुजारी रहा है। सन्तो-महात्माओ के अनादि यज्ञो से उठने वाले धुँए मे "जिओ और जीने दो" का सिद्धान्त पलता रहा है। और ताशकन्द मे शास्त्री जी ने यही प्रमाणित कर दिया कि भारत शान्ति का सौदा महगे दामो पर भी करने को तैयार है।

वाराणसी मे २ अक्टूबर, १९०४ को एक साधारण परिवार मे उत्पन्न होने वाला एक बालक कभी हमारे राष्ट्र का नायक बन सकेगा,यह कभी किसी ने सोचा भी नही था। परन्तु गाधीजी के जन्म-दिन पर पैदा होने वाले श्री लालबहादुर शास्त्री ने अपने अध्यवसाय और साधना से वह सब कुछ कर दिखाया। स्कूल मे गम्भीर और एकाकी रहकर उन्होने अपने साथियो मे एक प्रभाव अवश्य जमा लिया था। परन्तु १९२१ मे गाधी जी के असहयोग आन्दोलन ने उनकी राष्ट्रीय भावनाओ को इस प्रकार उभार दिया कि वह अपना अध्ययन समाप्त करके आन्दोलन मे जा कूदे। अनेक बार वह जेल गये—यातनाएँ सहीं। परन्तु उन सबसे वह घबराए नहीं—राष्ट्र-भक्ति के कार्यो से विचलित नही हुए। जेल से मुक्त होने के पश्चात उन्होने काशी विद्यापीठ से 'शास्त्री' की उपाधि प्राप्त की। लगभग सवा पाच फुट लम्बा उनका दुबला-पतला शरीर मानो भारतीय राष्ट्र की दुबली-पतली काया थी।

खादी के कुरते और धोती में जब उस छोटे-से इन्सान ने भारत माता की पालकी में अपना कन्धा लगाया तब सभी लोग दंग रह गये। कांग्रेस-पार्टी का काम हो अथवा सरकार का, वह अविराम बैठ कर घन्टों तक काम किया करते थे। अपने अथक परिश्रम और कभी न डगमगाने वाले आत्मविश्वास के कारण ही तो वह अपने जीवन के चरमोत्कर्ष पर पहुँचे।

"बस हमारी प्राचीन संस्कृति ही तो बची है हमारे पास, जिसके सहारे हमे अपने समाज और देश का निर्माण करना है," एक बार शास्त्री जी ने कहा था। कदाचित यही सोच-समझ कर उन्होंने पाश्चात्य शिक्षा की अपेक्षा 'शास्त्री' की उपाधि ग्रहण करना स्वीकार किया। वह अपना काम सदव स्वय ही करते। एक वार उन्होने छात्रो को सम्बोधित करते हुए कहा था—"काम करने से आदमी छोटा नही हो जाता, छोटा काम कर लेने से तो यह विदित हो जाता है कि हम अपना ही बड़ा काम भी कर सकने मे समथ है। काम करने से ही तो व्यक्ति की पहचान होती है।" अपने देश से उन्हे प्यार था। भारत की हर चीज उन्हे प्यारी थी। वेशभूपा और पहनावे मे वह सदैव भारतीय रहे। खाने-पीने मे भी वह पूर्ण भारतीय थे।

भारतीयता की छाप हमे शास्त्री जी के उन सभी कार्यो मे दृष्टिगोचर होती है, जो उन्होंने अपने देश की प्रतिष्ठा के लिए किए। युद्ध की विभीपिकाओ से उनका हृदय व्यथित अवश्य हुआ, परन्तु कोई चारा नही था। अपनी ओर से शास्त्री जी ने पूरी तरह प्रयत्न किया कि युद्ध वन्द हो जाए। और यही वात वह हमेशा कहते रहे—"हम शान्ति चाहते है। परन्तु यह तभी सम्भव है जब हमारा पड़ौसी मुल्क भी शान्ति के लिए हाथ बढाए। हम शान्ति-स्थापना के प्रयत्नों का सदैव स्वागत करेगे।' इसीलिए तो सयुक्त राष्ट्रसघ के महासचिव ऊ थान्त के प्रयत्नो पर युद्ध-विराम प्रस्ताव स्वीकार करने मे शास्त्री जी ने पहल की। भारत की सस्कृति मे अकित शान्ति की भावना के लिए ही तो वह ताशकन्द गये थे। वह अपनी मजिल की ओर साहस और धैर्यपूर्वक बढते रहे और मजिल तय करके ही उन्होने अपना शरीर त्यागा—महान भारत की महान आत्मा शान्त हो गई शान्ति के लिए।

श्रीमन्नारायण

जन-साधारण के नेता

प्रधानमन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री उन महापुरुषो मे से है जो सामान्य धरातल से उठकर राष्ट्रीय शासनतन्त्र के उच्चतम पद तक पहुँचे है। हमारे गौरवपूर्ण नेता जवाहरलाल नेहरू के निधन के तुरन्त बाद सर्व सम्मत्ति से नए प्रधानमन्त्री निर्वाचित होना ही वस्तुत. उनके मस्तिष्क और हृदय के महान् गुणो का सच्चा सम्मान है। उनकी सफलता का रहस्य उनकी पारदर्शी निष्ठा और लगन में निहित है। वे हमेशा प्रचार से बचकर जन-साधारण की भलाई के लिए अनवरत कार्य करते रहे।

प्रधानमन्त्री श्री शास्त्री सामान्यत ऐसे व्यक्ति माने जाते है जो विवादग्रस्त विषयों पर अपने विचार बलपूर्वक आरोपित नही करते। लेकिन भारत के गृहमन्त्री और अब प्रधानमन्त्री के रूप मे उनके द्रुत निर्णयो और दृढ कार्यवाइयो ने यह निश्चयपूर्वक प्रमाणित कर दिया है कि वे फूल की पखड़ियो की तरह कोमल होते हुए भी इस्पात की तरह कठोर एव सकल्पी है। कोमलता और दृढता के इस असाधारण समन्वय मे ही उन्हे करोड़ो भारतवासियो का प्रिय बना दिया है।

कुशल निर्णायक

शास्त्रीजी की कार्य-पद्धति मे हमेशा अनन्त धैर्य का दर्शन होता है। दीर्घकाल तक अखिल भारतीय कांग्रेस का महामन्त्री रहने के दौरान मुझे उनकी गतिविधियो को देखने-परखने का अवसर मिला। जब भी कभी कोई ऐसी जटिल समस्या उपस्थित होती, जिसके लिए धैर्य और नीतिनिपुणता जरूरी हो, तो हम सहायता के लिए शास्त्रीजी के पास पहुँचते थे और अन्त में पूर्ण सफलता प्राप्त होती थी जटिल समस्या को धैर्यपूर्वक सुलझाने मे समय तो लगता ही है, लेकिन शास्त्रीजी इस बात का समझते थे। कि ऐने मामलो मे किसी तरह समय दिया जाय। लोग हमेशा उन्हे अच्छा श्रोता पाते थे। ये लोगो की बात को पूरी तरह सुनकर अन्तमे अपने सुलझे हुए विचार कम-से-कम शब्दो मे प्रकट करते है हालाकि उनके शब्द निर्णायकहोते हैं।

गाँधीवादी दृष्टिकोण

प्रधानमन्त्री शास्त्री ने समस्याओं को हमेशा जन-साधारण की दृष्टि से देखा है। योजना-आयोग के अध्यक्ष की हैसियत से आयोग के सदस्यों से उनकी प्रथम वार्त्ता मुख्यतः करोडो देशवासियो की न्यूनतम रहन-सहन की तात्कालिक समस्या से सम्बन्धित थी। देश के दीर्घकालीन औद्योगिक विकास मे भरी रुचि के बावजूद शास्त्रीजी का यह सुनिश्चित मत है कि सामान्य जनता को भोजन, आवास, शिक्षा, वस्त्र तथा चिकित्सा की पर्याप्त सुविधाये यथाशीघ्र प्रदान करने का भरसक प्रयत्न किया जाना चाहिए। यह काम लघु-ग्राम्य-उद्योगो तथा कृषि जैसे जनशक्ति बहुल एवं उत्पादक कार्यक्रमो द्वारा पूरा रोजगार प्रदान करके ही किया जा सकता है। अत इस दृष्टि से आर्थिक नियोजन के प्रति शास्त्रीजी का दृष्टिकोण वस्तुत· गाधीवादी है ; हालाकि वे गाँधीजी का उल्लेख बहुत ज्यादा और हल्के ढंग से करना पसन्द नही करते।

शास्त्रीजी सही माने मे विनम्र है और गर्व या अहम् से कोसों दूर हैं। वह स्वयं को साधारण कार्यकर्त्ता मानते है और विभिन्न समस्याओ पर इसी दृष्टिकोण से अपने विचार प्रकट करते है। लेकिन भिन्न प्रश्नों पर खुलासा विचार प्रकट करने मे उनकी विनम्रता कही आड़े नहीं आती। जून के अन्त मे खाद्यान्न की मँहगाई के सवाल पर विचार करने के लिए नयी दिल्ली में आयोजित मुख्य मन्त्रियों के सम्मेलन में यह बात सभी मुख्य मन्त्रियो को जाहिर हो गई। शास्त्रीजी ने सभी मुख्य मन्त्रियों के सुझावो को अनन्त धैर्य से सुनकर, बिना लाग-लपेट के अपने विचार प्रकट कर दिए। उनकी भाषा अनाक्रामक होते हुए भी स्पष्ट और समस्यामूलक थी।

नेहरूजी के सुयोग्य उत्तराधिकारी

प्रधानमन्त्री बनने के तुरत बाद जब शास्त्रीजी जून में आचार्य विनोबा भावे से मिलने वर्धा गए, तो मुझे भी उनके साथ जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जैसे ही उन्हे विनोबाजी को बीमारी का समाचार मिला, उन्होने तुरन्त फोन पर मुझसे जानकारी मांगी और विमान से तुरन्त नागपुर पहुँच कर मोटर कार द्वारा विनोबाजी के आश्रम जाने का अविलम्ब निर्णय लिया। पंडितजी के स्वर्गवास के बाद नए प्रधानमन्त्री के रूप में दिल्ली से बाहर जाने का यह उनका पहला अवसर था। उन्होने हमको खुलासा निर्देश दिया कि वर्धा से ७ मील दूर विनोबाजी के पड़ाव जामिनी ग्राम तक उनके दौरे के लिए कोई विशेष व्यवस्था न की जाय। वे उस गाँव से उपलब्ध साधारण खाद्य-सामग्री को ही मध्याह्न भोजन मे लेना चाहते थे। वे महाराष्ट्र के एक साधारण गाँव को असली रूप मे देखने के इस अवसर को पाकर प्रसन्न थे।

शास्त्रीजी ने विनोबाजी के साथ कई राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर लगभग ३ घण्टे तक उस छोटी झोपड़ी मे बातचीत की। उन्होने अपने नए गुरुतर दायित्व के लिये विनोबाजी से आशीर्वाद मांगा और लौटते समय ग्रामीणों को ग्रामसभा मे अपने भाषण को ध्वनि से प्रदर्शित कर दिया कि वे जनता के आदमी है, सम्प्रदायो या वर्गो के नही। उन्होने खाद्यान्न को मँहगाई पर भारी चिन्ता प्रकट की और कामना को कि व्यापारी जनता के जीवन से खिलवाड़ न करे। उन्होने ग्रामीणों को विश्वास दिलाया कि कृषि-प्रधान देश के प्रधानमन्त्री की हैसियत से, वे उनके हितो को प्राथमिकता देते रहेंगे। लोग उनकी ईमानदारी से बहुत प्रभावित हुए और वहाँ उन्हे नेहरूजी के सुयोग्य उत्तराधिकारी के योग्य स्वागत प्राप्त हुआ। नागपुर के नागरिको ने भी नगर मे तथा हवाई अड्डे पर उनका उत्साहपूर्ण हार्दिक अभिनन्दन किया। उनके नेत्रो से यह झलकता था कि वे लोग शास्त्रीजी को अपना नया उत्तराधिकारी बनाने मे नेहरूजी की पसन्द को सराहनीय मानते हैं।

प्रधानमन्त्री शास्त्री को आज जन-साधारण का स्नेह और [illegible] है मुख्यतः [illegible] में कि वे नेहरूजी के सुयोग्य उत्तराधिकारी की हैसियत से राष्ट्रीय [illegible] पर [illegible] की बुनियादी नीतियो का पालन करते रहेगे। नए प्रधानमन्त्री के [illegible] कुछ [illegible] कार्य-काल मे शास्त्रीजी ने अपनी सतुलित वाणी और प्रभावकारी [illegible] केवल [illegible] ससार भर मे अच्छी छाप छोड़ी है।

देवेन्द्रसिंह पावले

चट्टान की भाँति अडिग

जुरहरा-भरतसीपुर जिला के ७१ वर्षीय श्री आनन्दीलाल अग्रवाल ने बताया कि १९२३ मे काशी विद्या-पीठ, वाराणसी मे उनकी स्वर्गीय श्री लालबहादुर शास्त्री से किस प्रकार पहली भेंट हुई।

एक दिन लालबहादुरजी छात्रो के भोजनालय का हिसाब-किताब देख रहे थे। रकम का जोड़ लगाने मे उन्हे कुछ कठिनाई हो रही थी। वे बार-बार जोड लगाते और उसे काटकर फिर नए सिरे से जोड़ लगाने लग जाते। कुछ देर तक तो मै उनकी उलझन का मजा लेता रहा फिर आगे बढकर उनसे बोला—अजी हटो भी मै जोड लगा देता हूँ। यह कहकर मैने देखते ही देखते सही जोड लगाकर लालबहादुरजी को दे दिया। इस पर वे बड़े प्रसन्न हुए और मेरी पीठ थपथपाते हुए (हालाकि वे आयु मे मुझसे छोटे थे) बोले—शाबास भाई मान गये तुम्हे। अच्छा तुम्हारा नाम क्या है। मैने उत्तर दिया—आनन्दीलाल। वे हँसकर बोले—नही भाई यह भी कोई नाम हुआ? हम तो तुम्हे आनन्दी प्रसाद कहेगे। उस दिन के बाद उन्होने मुझे सदैव आनन्दी प्रसाद के नाम से पुकारा।

कबड्डी के शौकीन

शास्त्रीजी कद मे छोटे अवश्य थे पर इस कारण उनके मन मे हीनता की भावना कभी नही आई। छात्रावास के छात्र व उनके सहपाठी उन्हे प्यार से गिट्टू कहकर सबोधित करते थे परन्तु उनके सामने नही, पीठ पीछे। छोटे कद के होने पर भी वे कबड्डी के बहुत शौकीन थे और खूब अच्छी कबड्डी खेलते थे। जब भी कबड्डी खेलने जाते थे तो राह मे मिलने वाले सभी छात्रो को कबड्डी खेलने का निमत्रण देते जाते थे।

स्वदेश-प्रेम और समाज-सेवा भावना की कमी शास्त्रीजी मे कभी नही रही। वाद-विवाद प्रतियोगिता के शौकीन शास्त्रीजी ने एक बार—हरिजनो का काम जनता करे—विषय पर बोलते समय हरिजनो का प्रभावशाली और तर्कपूर्ण समर्थन किया। एक बार यह निश्चय हुआ कि छात्र स्वयं अपने मलमूत्र को मिट्टी से ढके और वे ही इसके लिए जरूरी नाली आदि बनाएं। फौरन शास्त्रीजी सबसे पहले फावड़ा लेकर मैदान मे आ गये। उनकी देखा-देखी जो छात्र फावडा उठाने को झिझक रहे थे वे भी आगे बढ़ आये।

सफाई का भी शास्त्रीजी सदैव ख्याल रखते थे। वे स्वय तो स्वच्छ ही थे दूसरो को भी स्वच्छ रहने की प्रेरणा दिया करते थे, परन्तु अपने मनोविनोदी ढग से एक बार मेरा पीतल का लोटा देखकर वे बोले—अरे भाई आनन्दी प्रसाद तुम्हारा लोटा साफ नही है।

मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैंने कहा—वाह यह भी खूब रही। यह देखो, अभी अभी तो माज कर लाया हूं।

इस पर वे हसकर बोले—नही जी जब तक मिट्टी से रगड़ने से लोटा चमचम न चमके हम इसे साफ नहीं मानेंगे।

श्री आचार्य कृपलानी उन दिनों प्रायः चकलावाग खादी आश्रम में आया करते थे। वहाँ शास्त्रीजी ही कृपलानीजी से सवसे अधिक व जिज्ञासापूर्ण प्रश्न पूछा करते थे। एक वार उन्होंने पूछा कि पढ़ने के वाद छात्र क्या करे। इस पर आचार्य कृपलानी ने उत्तर दिया—मार्ग विल्कुल सीधा है। सभी छात्रों को गाँव में जाकर सेवा का कार्य करना चाहिए। जव वे गाँव की सेवा करेंगे तो गाँव भी उनकी देखभाल करेगा उन्हें भूखा नहीं मरने देगा।

खद्दर से प्रेम शास्त्रीजी को स्कूल समय से ही था। वे स्वयं तो सदैव खादी पहनते ही थे, दूसरों को भी ऐसा ही करने की सलाह देते थे। एक दिन मुझसे वोले—यार आनन्दी प्रसाद तुम खादी क्यों नहीं पहनते। मेरे पास इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं था। मैं चुप रहा। वस उन्होंने मुझे खादी के महत्व पर एक छोटा परन्तु सारगर्भित भाषण दे डाला। उन्होंने मुझसे यह प्रतिज्ञा भी करवाई कि मैं हमेशा खादी पहनूंगा। उनके तर्क सम्मत सुझाव से मैं इतना अधिक प्रभावित हुआ कि तब से आज तक मैं खादी ही पहनता हूँ।

अरविन्द मिश्र

धरा देखती रही पुत्र इतिहास बन गया

तन से बौने, मन से विराट, मस्तिष्क से सशक्त और जन-जीवन की समस्याओ के प्रति सतर्क रहने वाले श्री लालवहादुर शास्त्री उन विभूतियो मे से थे, जो आवाजो के कलह-कोलाहल से न घबरा कर लक्ष्य-सिद्धि के प्रति विशेप सचेष्ट रहते है । जीवन की दुर्वह कठिनाइयो को सहर्ष झेलते हुए शैशव की देहली लाघ कर तरुणाई का दुर्दमनीय पौरुप स्वाधोनता के अर्चन मे लगाते हुए उन्होने जिस अनुभव-मजूपा को सहेजा-सम्हाला, उसी ने तो उन्हे 'देहली' तक पहुँचाने मे सहायता की ।

निर्धनता-सम्पन्नता, ऊँचाई-निचाई, सिद्धान्त-व्यवहार आदि के भेदभावो से सर्वथा अपरिचित और पृथक रह कर स्थित-प्रज्ञ की भाँति भारत मा के बहादुर लाल ने डेढ वर्ष की अवधि मे ही स्पष्ट कर दिया कि भारत मे कितनी शक्ति है, कितनी क्षमता है और है कितनी एकता । स्थूल रूप से इतना ही कहा जा सकता है कि अतीत और वर्तमान के झूले मे झूल कर सैद्धान्तिक पेगे बढाते हुए व्यवहार का समतल तैयार करने वाले लालवहादुर भारत के प्रतिनिधि ही थे । वस्तुत वह भारत को एक सही नेता के रूप मे मिले थे, जो अपनी वात ज्यो-त्यो मनवाने के स्थान पर समस्त जन-जीवन की भिन्न बातो के तल का पता लगा कर लोकप्रिय निर्णय लेने मे कुशल थे । इसी लिए जहा वह शत्रु के कलुषित दर्प को चूर्ण-चूर्ण करने के लिए प्रयत्नशील रहे, वही शान्ति की स्थापना के लिए ताशकन्द की ओर भी वढे और सफलता का पूर्णता के साथ वरण किया ।

युद्ध और शान्ति के समान नेता के रूप में लालवहादुर की विशेपताएँ वतलाते हुए श्री सोहनलाल द्विवेदी भविष्य मे युद्ध न होने को ही उनके प्रति सच्ची श्रद्धाजलि समझते है—

वह अशोक की आत्मा, रण का विजयी योधा,
शान्ति चक्र का धर्म प्रवर्त्तक, शान्ति पुरोधा,
उठा धरा से, पहुँच शिखर, आकाश वन गया,
धरा देखती रही, पुत्र इतिहास वन गया ।
शाति खोजने गया, शाति की गोद सो गया,
मरते-मरते विश्व-शान्ति के वीज वो गया,
कोई कुछ भी कहे भाव अव क्रुद्ध न होगा,
श्रद्धाजलि उसकी सच्ची अव युद्ध न होगा ।

श्री नरेन्द्र शर्मा का मत है कि लालवहादुर का सदैव नाम रहेगा, उनके कामों को हमेशा प्रशंसा होती रहेगी एवं शील और विनम्रता से युक्त वह सर्वदा प्रणम्य रहेंगे—

गाथाशेष देश में उसका सदा रहेगा नाम !
रीति सनातन, चाम नही, प्यारा होता है काम !
जिस देश से, किन्तु निर्यात को थी जिससे अति प्रीति
शीलभद्र उस ललिता-पति को शत-शत विनत प्रणाम !

डा० रामकुमार वर्मा ने श्री लालवहादुर को युद्ध और प्रशासनगत उपलब्धियाँ और भारतीय जीवन के विकास मे उनके योगदान की भाकियाँ प्रदर्शित की है। साथ ही उनके स्वर्गारोहण को उदात्त गरिमा प्रदान की है—

पृथ्वी-पात्र रिक्त था
तुमने उसमें भर दी जीवन-धारा,
मधुर हसी के बुद्-बुद् उभरे
पात्र भरा ऊपर तक सारा।
भरा भर गया पात्र और भी
उसमे जीवन-रस संचारा,
विखरा चारो ओर छलक कर
उसे न कोई मिला किनारा।
पृथ्वी के इस जीवन-रस पर अधर स्वर्ग के भी ललचाए,
पीने को वे मुझे और—तुम अपने से हो गये पराए।

श्री केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' के मतानुसार लालवहादुर जी ने देश में शौर्य जाग्रत किया, आक्रमण को पूर्ण रूप ध्वस्त और विफल कर दिया तथा कर्म, कीर्त्ति, राष्ट्रीयता आदि गुणो का संचार किया और देश के गौरव को वढ़ाया—

तुमने शिशिरित शिराओं के रक्त को
विद्युत से छू कर जगाया
तुमने तेज को द्रवीभूत किया, वहाया
कि हमारे सभो वृक्ष, प्राचीन और नवीन
हमारे सभो पर्वत-शृ ग मुक्त और स्वाधोन
हमारे सभी वृतवद्ध शब्द उच्छल तरङ्गासीन
आक्रमण के तूफान को अस्त-व्यस्त कर दे
तिमिर के गर्जित गर्व को ध्वस्त कर द
तुमने राष्ट्र जीवन को कर्म दिया

नम्रता को वज्राभा का वर्म दिया
तुम्हारा यज्ञ सफल हुआ
भारत का यश धवल हुआ
ओ देश के गौरव-गरुड़ को पर देने वाले वीर।

डा० शम्भुनाथ सिंह के शब्दों में समय के सशक्त आघात से लालबहादुर जी का पार्थिव शरीर भले ही सुरक्षित न रहा हो, किन्तु उनका कार्य, सम-सामयिक युग की उनकी देन और भविष्य के लिए शक्ति एवं शान्ति के समन्वय का संदेश किसी वसीयत से कम नहीं है—

समय की गदा कहीं एक मिट्टी की लघु मूर्ति पर गिरी है
सांस रुक रही है
और महासागरों की ऊँची लहरें
हम सब को तोड़ती-मरोड़ती
ऊपर से गुजर रही है।
समय की गदा कहो एक मिट्टी की लघु मूर्त्ति पर गिरी है।
टूटी हुई मूर्त्ति धूल बन जाएगी
जैसा कि सब मूर्त्तियाँ बन जाती है।
लेकिन उस छोटी मूर्त्ति की यह विराट छाया!
क्या इसे भी समय की तलवार काट सकती है?

लालबहादुर जी की संकल्प-शक्ति और संघठन-प्रियता की याद मे श्री भारतभूषण अग्रवाल उनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते है—

मुट्ठियाँ,
जिनमे तुमने अठारह महीने पहले—
बाँधा था
बेचैन जन का एक संकल्प—
जब पहाड़ टूटा था,
जब जमीन काँपी थी,
जब समुद्र उफना था!

श्री देवनाथ पाण्डेय 'रसाल' को दृष्टि मे लालबहादुर जी नव-प्रकाश, शान्ति के प्रतीक, अभिनव चेतना के द्योतक, तपस्वी एवं कृषि-कुल के ऋषि के समान प्रतीत हुए है। उनमे यश, तेज, पूर्णकामता, सहजमैत्री और निष्कामता का समन्वय था—

अभिनव आलोक, शान्ति के उदाहरण
नई चेतना की साधारण किरण,
तपोकाय कृषि-कुल के ऋषि विभाचरण

धवल कीर्ति, धरादीप्ति मृदु-कठोर, ग्रामी।
पूर्ण काम हे अजातशत्रु तुम अकामी ।।

डा० रामप्रकाश अग्रवाल ने लालवहादुर जी की वैयक्तितता का अंकन करते हुए उस पर अहिसा, कर्मठता और जनतन्त्र के सगम का प्रतीकात्मक आरोप किया है—

किस कौशल से खीच रहे थे तुम तट-पर नौका को,
अभिनव आश्वासन देते थे भारत को जनता को !
छोटा-सा शरीर, दुर्बल, पर नेत्रों मे आभा थी,
सरल वेश, मुख सौम्य, भाल पर खेल रही प्रतिभा थी !
गांधी को गगा मिलती थी नेहरू की यमुना में,
सगम-से थे लालवहादुर भारत की जनता मे ।
गाधी टोपी, नेहरू जाकेट, बना राष्ट्र का बाना,
लालबहादुर की धोती को सबने भारत माना !

श्री अमर वहादुरसिह 'अमरेश' के कथनानुसार लालवहादुर जो का आकस्मिक निधन ऐतिहासिक झझावात के समान है, जिसमे राष्ट्रीय कीर्त्ति प्रतीक की क्षति हुई है—

इतिहास बनाने वाली समय की रेखाओ !
और उन रेखाओ मे रङ्ग भरने वाले शिल्पियों !
केवल दो क्षणो के लिए रुक जाओ,
तूफान का एक भयानक झोका आ गया है,
और उस झोके मे—
सहस्रो शिलालेखो के बीच खड़ा हुआ
एक कीर्त्ति-स्तम्भ टूट गया है ।

× × × × ×

और मैं देख रहा हूँ—
शान्ति की बलिवेदी पर
बलिदान हो गया है
गुलाब के बाद
एक भोला-सा, मासुम-कमल !

श्री गिरोशचन्द्र पंत शास्त्री जी के स्वर्गारोहण से उत्पन्न होने वाले वातावरण का करुण चित्रण कर रहे है—

लहर एक सुरभि की
मन्द-मन्द महक उठी
लौट गई अब सुमन को
एक विनत किरण

मौन चमक उठा
दौड़ गई पुन. गगन को
एक स्वर सघोप जगा
गूँज उठा
फिर समा गया पलट गोत मे
एक बूँद सिन्धु की
आर्द्र खेलती रही
और फिर
तुरत दुबक गई गोद मे।

लालबहादुर जी के निधन से उत्पन्न मायूसी का चित्रांकन करते हुए श्री विनोद रस्तोगी ने धर्मभीरु, निर्भीक, शान्तिप्रिय, अथाह, अटल, जननेता, युद्ध का विजेता और शान्ति का मसीहा उन्हे स्वीकार किया है—

जन-मानस का राजहस—
उड़ कर चला गया;
और हम रह गए देखते—
हाथ मलते, पछताते,
बिलखते, कलपते और आँसू बहाते !

× × × × ×

धमभीरु, निर्भीक, वीर-धीर—
नातिज्ञ, शान्तिप्रिय, गम्भीर;
फूल से भी कोमल और
वज्र-सा, परम कठोर;
देखने मे नन्हा, पर
सागर-सा अथाह और
हिमालय का अछोर !
ऐसा था हमारा प्रिय नेता—
शान्ति का मसीहा, युद्ध का विजेता !

श्री बालस्वरूप 'राही' प्रतीको के माध्यम से समस्त विशेषताए सक्षिप्त रूप से गुंफित करके लालबहादुर जी के प्रति अपनी प्रणति प्रकट करते है—

ओ साधारण की असाधारणा के प्रतीक
ओ लघु की महत्ता के दृष्टात !
तुम्हारे वैयक्तिक स्पर्श से

अब भी महक रहा है देश का कण-कण
बन गये थे तुम हमारी महत्वाकाक्षाओं
के दर्पण !
छोटे-से-छोटा काम भी
तुमने बड़ी गरिमा से किया ।
जीवन
महाकाव्य की तरह न ही
छोटे-छोटे भाव भरे गीतो की तरह जिया !

ऊपर के विभिन्न चित्रणों से यह तो नहीं कहा जा सकता है कि हमारे लोकनायक की समस्त विशेषताएँ प्रस्तुत कर दी गई है। फिर भी, इतना तो निश्चित है कि इस थोड़े से समय मे फिल्मी फ्लैश की भाँति जिस प्रभावमहत्ता की झलकियाँ प्रदर्शित हो सकती है, वे अच्छी तरह उभर कर आई है। यही सफलता है—हिन्दी-कवियों की।

●

कोई भी ताकत हमें अपनी जमीन का चप्पा भर हिस्सा भी अलग करने के लिए मजबूर नहीं कर सकती। हम किसी अन्य देश की जमीन पर कब्जा करने की जरा भी इच्छा नही रखते, किन्तु हमारा सुदृढ़ सकल्प है कि हम किसी के दवाव से, अपने देश की जमीन का हिस्सा कभी किसी को नही लेने देगे।

—लालवहादुर शास्त्री

डा० सत्येन्द्र

भारत के लाल

श्री लालवहादुर शास्त्री ने अपने जीवन मे अपने नाम को पूर्णतः सिद्ध कर दिया। वे लाल थे भारत माँ के, सर्वाङ्गत भारतीय सस्कृति के लाल, जिन्होने काल के गाल मे जाते हुए भी अपनी लाली से, शान्ति के सन्देश को भारत-पाक के लिए ही नही विश्व के लिए भी लालिमामय वना दिया—'लाली मेरे लाल की जित देखूँ तित लाल' वस यही शव्द सवकी की जिह्वा पर है, और रहेगे। भारत के इस लाल ने समस्त भारतीय सस्कृति के मर्म के साथ गीता के निष्काम योग से विश्व मे 'वहादुर' होने का अर्थ भली प्रकार से समझाया। उनका युद्धयोग महात्मा गाधी के उस वचन का सकर्मक सटीक भाष्य था कि 'अहिसा दुर्वलो को शोभा नही देती,' भारत की 'अहिसा' दुर्बल की अहिसा नही 'वहादुर' की है—लालवहादुर ने भारत के प्रत्येक लाल को वहादुर वनाकर सिद्ध कर दिया। विश्व आश्चर्य चकित था कि यह वामनावतार इस वीसवी शती मे कहा से आ गया जिसने वौने भारत को जगाकर विश्व की सवल शक्तियो मे सम्मानित करा दिया। पर भारत के इस लाल ने वहादुर होकर भी 'शास्त्री' को त्यागा नही। वह राजनीति—शास्त्री वडे-वड़े धुरधरों को आचरण के ही मौन शास्त्रार्थ से परास्त करके विजय की वैजयन्त फहराता हुआ 'देवाना प्रिय' हो गया। उन छोटे से लालवहादुर ने उपहासको के समक्ष मुस्कराते-मुस्कराते वौने से अठारह महीनो की कालावधि को विराट वना कर प्रश्नचिन्ह उपस्थित कर दिया कि क्या चमत्कारो का युग वीत गया, इतने अल्पकाल मे इतनी महान उपलब्धियां क्या सभव है ? अव इतिहासकार और साख्यिकी—शास्त्री नाप-जोख करे, इन अठारह महीनो की उपलब्धियो का ! यथार्थ प्रजातन्त्र का फल यह, लालवहादुर सिद्ध कर गया, कि धूल और कीचड़ मे पले दरिद्र से दरिद्र और लघु से लघु का भी भविष्य महान हो सकता है। प्रतिभा सोने-चाँदी के पालनो मे ही नही पलती। आज इस छोटे से महान व्यक्ति के लिए कौन महान-से-महान है जिसने आँसू नही वहाये—और आज कौन है जो यह नही कहता कि 'जवाहर के वाद कौन' जैसी संशयालु मनोवृत्ति को भारत की रज मे दुहराना भी भूल है। भारत प्रकृतत. ही लोकतन्त्रवादी है, यहाँ जवाहर ही नही 'लाल' भी भरे पड़े हैं। ऐसे लालवहादुर को श्रद्धाजलि क्या दी जाय जिसने भारत को अपने में यथार्थतः आस्थावान वनाया है और अपने पैरो पर खड़े होने का वल दिया है, क्योकि यह लाल तो अव प्रत्येक भारत के लाल मे जन्मा हुआ है।

●

विश्वम्भर नाथ पाण्डेय

अनन्त यात्रा के हे पथिक !

२५ जनवरी, सन् १९६६ ! इलाहाबाद रेलवे स्टेशन के सेरेमोनियल (समारोही) प्लेटफार्म से गंगा-यमुना के संगम तक लगभग बीस लाख स्त्री, पुरुष और बच्चे स्वर्गीय प्रधान मन्त्री लालबहादुर जी शास्त्री के भौतिक अवशेषों के प्रति अपना अन्तिम सम्मान प्रदर्शित करने के लिए, अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए, बहुत सबेरे से, लगभग तीन घण्टे पूर्व से ही, चार मील के उस लम्बे मार्ग में, शोकपूर्ण मुद्रा में प्रतीक्षा कर रहे थे। प्रयाग-निवासियों को तो ऐसा लग रहा था जैसे कोई उनके अपने परिवार के, अपने ही स्वजन, अपने ही अन्यतम आत्मीय के अस्थि अवशेष, त्रिवेणी में विसर्जन के लिए आ रहे हैं। हृदय का सन्ताप, रह-रहकर, उनकी आँखों की कोरों में घना होकर टपक पड़ता था। जहां-तहां, स्मृतियों के अन्तराल से उभर कर, किसी-किसी बहन की वेदना, फफक कर उभर आती और फिर सुबकियों को घुटन में खो जाती।

पूरे ३८ वर्ष तक इलाहाबाद का यह नगर शास्त्री जी का अपना कर्मक्षेत्र रहा। यहीं उन्होंने अपने जीवन के सर्वोत्तम वर्ष बिताए। यहीं से उन्होंने स्वतन्त्रता के संग्राम में सात बार जेल-यात्रायें कीं। यहीं राजर्षि पुरुषोत्तमदास जी टण्डन का वरदहस्त उन्हें प्राप्त हुआ और यहीं मानव-रत्नों के पारखी पण्डित नेहरू ने अपनी कृपा-खराद पर कस कर उन्हें अनमोल लाल बनाया।

सेरेमोनियल प्लेटफार्म पर खड़े-खड़े मेरी स्मृति में १२ जनवरी, १९४८ को एक घटना उभर आई। राष्ट्रपिता बापू के अस्थि-अवशेष ले कर स्पेशल ट्रेन सवेरे इलाहाबाद स्टेशन पहुँचने वाली थी। पण्डित जी प्रबन्ध के छोटे-से-छोटे पहलू की भी जाँच-पड़ताल कर रहे थे। शास्त्री जी उत्तर प्रदेश के गृह-मन्त्री और पण्डित जी के निकटतम सलाहकार की हैसियत से छाया की तरह पण्डित जी के साथ थे। मैं सार्वजनिक अस्थि-विसर्जन-समिति के प्रबन्ध-मंत्री के रूप में स्टेशन के प्रबन्ध के सम्बन्ध में ब्रिगेडियर पोनप्प से परामर्श कर रहा था। पण्डित जी और शास्त्री जी पास ही खड़े थे। सहसा मेरे कानों में पण्डित जी के ये शब्द पड़े—"लालबहादुर इस काम के लिए स्टेशन से हट कर एक अलग प्लेटफार्म होना चाहिए। इस बारह दिन के भीतर तो एक अलहदा प्लेटफार्म बन सकता था।"

पण्डित जी की यह इच्छा शास्त्री जी की स्मृति में छह वर्ष तक सुरक्षित पड़ी रही। उसे तब मूर्तरूप मिला जब शास्त्री जी भारत सरकार के रेल-मन्त्री बने। सन १९५४ के कुम्भ के अवसर पर यह सेरेमोनियल प्लेटफार्म बना। विधि का विधान कि उसी प्लेटफार्म पर शास्त्री जी पंडित जवाहरलाल जी के अन्तिम भौतिक अवशेष लेकर उतरे और बारह वर्ष बाद इस दूसरे कुम्भ के अवसर पर स्वयं शास्त्री जी के भौतिक अवशेषों की प्रतीक्षा में एक अपार जन-समुद्र उस प्लेटफार्म के पास खड़ा था।

फिर अचानक मेरी स्मृति खीच ले गई मुझे सन १९३१ के नवम्बर मे प्रयाग में आयोजित सेवा-दल के स्वय सेवक शिविर मे। हिन्दी विद्यापीठ का प्रागण, जमुना का तट, चतुर्दशी चाँद, कैम्प फायर के चारो ओर लोग बैठे हुए—राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन, पडित जवाहरलाल नेहरू, लालबहादुर शास्त्री और हम सब। सारे दिन शिविर-जीवन के सख्त अनुशासन के बाद सायकालीन कैम्प फायर की दो घन्टे की यह गोष्ठी हास्य और विनोद, गायन और बादन, कविता और शायरी से गूँज उठती। स्वर्गीय बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने इस कैम्प फायर का नामकरण किया था—'फरमाइशी गोष्ठी'। शिविर का हर स्वय-सेवक गोष्ठी मे उपस्थित, बिना छोटे-बड़े के लिहाज के, किसी से भी कोई फरमाइश कर सकता था और यह फरमाइश उस भाई को पूरी करनी पड़ती थी। चुनाचे नवीन जी की फरमाइश पर स्वय जवाहरलाल जी को मध्यरात्रि के रावी तट के अपने स्वाधीनता-नृत्य का पुन प्रदर्शन करना पडा। कृष्णकान्त जी मालवीय की फरमाइश पर राजर्षि टण्डन जी को कबीरदास की साखिया सुनानी पड़ी। उस रात अचानक आचार्य नरेन्द्रदेव की फरमाइश ने दुबके से बैठे हुए लालबहादुर जी को चौका दिया। आचार्य नरेन्द्र देव की फरमाइश थी कि लालबहादुर जी कोई नज्म सुनाएँ। टण्डन जी को शास्त्री जी की परेशानी पर रहम आया, बोले—"नरेन्द्रदेव, लालबहादुर कहाँ शायरी करते है?" आचार्य जी ने उत्तर दिया—"उन्होने गालिब का मुसद्दस रट रखा है, उसी मे से कुछ सुनाये।"

तब शास्त्री जी ने सकुचाते हुए गालिब की यह गजल पेश की—

रहिए अब ऐसी जगह चल कर जहाँ कोई न हो।
हम सुखन कोई न हो और हमजुबां कोई न हो॥
बेदरोदीवार-सा इक घर बनाना चाहिए।
कोई हमसाया न हो और पासबां कोई न हो॥
पड़िए गर बीमार तो कोई न हो तीमारदार।
और गर मर जाइए तो नोहाख्वां कोई न हो॥

ऐसे वेदना-मिश्रित स्वरो मे शास्त्री जी ने यह गजल पढी कि चन्द लमहों के लिए एक उदासी का आलम तारी हो गया। फिर सहसा जवाहरलाल जी ने हँसी के ठहाके से उदासी के वातावरण को भग करते हुए कहा—"गालिब मुगल साम्राज्य के बिखरते हुए दिनो के साक्षी थे और तुम विदेशी हुकूमत के पजे से देश को मुक्त करने वाले योद्धा हो। तुम्हारी जिन्दगी और मौत तो करोड़ो देशवासियो की जिन्दगी और मौत से बधी हुई है।"

उस दिन रात को मैंने अपनी डायरी मे नोट किया—"आज की फरमाइशी गोष्ठी हल्के-फुल्के वातावरण मे नही, गम्भीर वातावरण में समाप्त हुई।"

अस्थि-कलश के आगमन की प्रतीक्षा मे मैं सोचने लगा—पडित जी की कल्पना कितनी यथार्थ थी। सचमुच लालबहादुर जी का जीवन और उनकी मृत्यु समूचे देश के ४६ करोड़ देशवासियो के भाग्य के साथ कैसी बंधी हुई साबित हुई।

स्पेशल ट्रेन जब आई तब अपार जन-समूह का दुख उभर कर वातावरण मे छा गया। योगवाशिष्ठ का वह प्रकरण मेरे मन मे उभर आया जहाँ ऋषि कहता है—"मृत्यु नश्वर, क्षणस्थायी

जीवन का अन्तिम परिणाम है। मृत्यु के माध्यम से आत्मा अपने अनुरूप रूप मे मिलती है, यात्री अपने लक्ष्य तक पहुँच जाता है, बूंद समुद्र मे मिल जाती है, ज्योति परमज्योति मे लीन हो जाती है, आत्मा परमात्मा मे समर्पित होती है। यही निःश्रेयस् स्थिति है, यही परमानन्द है।"

ऋषि की वाणी के परे जन-भावनाओ के इस दुख-सागर मे सन्त कबीर के ये वचन मुझे सत्य प्रतीत होने लगे—

जब तू आयो जगत मे जगत हँसे तू रोय,
अब तू ऐसी कर चला तू हाँसे जग रोय।

अब जब मै यह लिखने बैठा हूँ और वर्णानुक्रम से अपनी डायरियो के रंग-उतरे पृष्ठों पर दृष्टि दौड़ाता हूँ, तब ये पृष्ठ जीवित चलचित्रों की तरह मन की गहराई से न जाने कितनी स्मृतियों को उभार कर सजा-सवार देते है। ४० वर्ष का जिनके साथ घनिष्ट सम्बन्ध रहा हो, चार वर्ष तक जो घर से घर लगे पड़ौसी रहे हो, जेल की कोठरियों मे जिनके साथ वर्ष-पर-वर्ष विताए हों, उनसे सबन्धित सस्मरणो के अम्बार मे से कुछ बानगिया छाँटना आसान काम नही।

सन् १९२८-२९ मे शास्त्री जी ने लोक-मण्डल की जिम्मेदारिया लेकर जब इलाहाबाद के सावजनिक जीवन में प्रवेश किया, तब की उनकी छबि बार-बार आँखो के आगे फिर जाती है। इस समय से भी अधिक दुबले, ऊँची दीवार की गाधी टोपी, गले में मालवीय जी महाराज के तर्ज का दुपट्टा, पैरों में देशी जूते, स्वल्प-भाषी, लेकिन हंसमुख, संकोची स्वभाव और दलगत राजनीति से सर्वथा अलग। इस बात पर बेहद इसरार कि अखबारी विवरणों मे उनका नाम न छपे।

एक दिन मित्रो ने घेर कर पूछा—"लालबहादुर जी, अखबारों मे नाम छपने से आपको इतना परहेज क्यो है? आखिर इसमे राज क्या है?"

पशोपेश के बाद, मुसकरा कर कहने लगे,—लाला लाजपत राय जी ने लोक-सेवक-मण्डल के कार्य के लिए दीक्षा-उपदेश देते हुए कहा था—"लालबहादुर! ताजमहल मे दो तरह के पत्थर लगे है। एक बढिया सगमरमर है, उसी के मेहराब और गुम्मद बने है। उसी से लासानी जालियाँ काटी गई हैं। उसी मे मीनाकारी और पच्चीकारी की गई है: उन्हीं मे रंग-बिरंगे बेलबूटे भरे गए है। दुनियाँ उन्ही को देखती और उनकी प्रशसा करती है। दूसरे पत्थर है—टेढे, मेढे, बेढगे। वे सब बुनियाद मे दफन पड़े है। उनकी किस्मत मे केवल अन्धकार और बुनियाद की घुटन है। उनकी कोई प्रशसा नही करता। लेकिन इन्ही नीव के पत्थरों पर ताजमहल की इमारत खडी है। मै चाहता हूँ लोक-सेवक-मंडल के जीवन-सदस्य नीव के पत्थर बने। वे सस्ते आत्म-विज्ञापन से अपने को बचाए रखे। ठोस काम की ओर अधिक ध्यान दे। पूज्य लाला जी के वे बोल मेरे हृदय मे गहराई से अङ्कित हो गये है। मुझे क्षमा करे मै 'नीव का ही पत्थर' रहना चाहता हूँ।"

मई-जून, १९३० के दिन! नमक-सत्याग्रह की धर-पकड़ जारी थी। महिला-सत्याग्रहियो का जत्था स्वर्गीया कमला नेहरू के नेतृत्व मे विदेशी वस्त्रो की दूकानो पर लगन से धरना दे रहा था। कमला जी बड़ी स्पष्ट वक्ता थी। एक दिन नाम ले-ले कर उन्होने शहर के कॉंग्रेस-कार्यकर्त्ताओं से पूछा—"आपकी पत्नी धरना देने वाली सत्याग्रहियो मे शामिल है? और लालबहादुर—तुम्हारी

पत्नी ?" शास्त्री जी ने शरमाए हुए उत्तर दिया—"मैंने बड़ा प्रयत्न किया, लेकिन मुँह खोलकर, सब के सामने बाहर निकल कर, पिकेटिंग करने का वह अपने में साहस नहीं ला पातीं। बहुत ही लाज दिल की हैं। आप अपने अधिकार से उन्हें बाहर लाकर पिकेटिंग में शामिल कीजिए।"

तब शास्त्री जी लीडर रोड पर रहते थे। कमला जी दूसरे दिन गईं और श्रीमती शास्त्री को विदेशी वस्त्रों की दुकानों पर धरना देने के लिए खड़ा कर दिया। लजाती, सकुचाती, शरमाती श्रीमती शास्त्री ग्राहकों से हाथ जोड़ कर प्रार्थना करतीं कि वे विदेशी कपड़ा न खरीदें। उनके आधे शब्द बाहर निकलते, आधे मुँह में ही खो जाते। शास्त्री जी से सत्याग्रह-कार्यालय में भेंट हुई तो बोले कमला जी ने आज हमारी श्रीमती को सत्याग्रहियों में भरती कर लिया। पहला दिन है, मालूम नहीं उन पर क्या बीत रही होगी।"

मैंने हाथ पकड़ कर उन्हें उठाते हुए कहा—"आइए, चल कर उनकी सहायता कीजिए।"

श्रीमती शास्त्री को पिकेटिंग करते देखकर शास्त्री जी का चेहरा प्रसन्नता से खिल उठा। इसी बीच एक झगड़ालू दुकानदार ने श्रीमती शास्त्री को उलहना देते हुए कहा—'आप हमसे कहती हैं कि हम विदेशी वस्त्र न बेचें। ग्राहकों से कहती हैं कि वे विदेशी वस्त्र न खरीदें, लेकिन आप स्वयं जो विलायती चूड़ियाँ पहने हुए हैं।" श्रीमती शास्त्री का मुख-मण्डल खिन्नता और ग्लानि से लाल हो गया। पूछा—'ये चूड़ियाँ विलायती हैं ?" दुकानदार बोला—"बिलकुल, सोलह आने।" दुकानदार ने जोर जोर से चिल्लाकर भीड़ इकट्ठी कर ली। शास्त्री जी भी वहाँ जाकर खड़े हो गए। श्रीमती शास्त्री ने उनसे कहा—' दुकानदार कहते हैं मेरी चूड़ियाँ विलायती हैं।" शास्त्री जी ने संयत स्वरों में कहा—"विलायती हैं तो तुम्हारे हाथ में नहीं होनी चाहिए।" पति-पत्नी में एक नजर में सारी बातें हो गईं। श्रीमती शास्त्री ने दुकान पर पड़ा लोहे का गज उठा कर हाथों पर मार लिया। चूड़ियाँ झड़ कर नीचे गिर गईं। झगड़ालू दुकानदार सन्न रह गया। उसे काटो तो खून नहीं। मैंने देखा शास्त्री जी का चेहरा प्रसन्नता और गर्व से दमक उठा। दूसरे दिन शास्त्री जी कहने लगे—' हमारी श्रीमती जी ने तो पहले दिन ही इतनी कीर्ति अर्जित कर ली है कि जो मैं बरसों नहीं कर पाया।"

सन् १९३६ में प्रदेश कांग्रेस ने किसानों की स्थिति की जाँच के लिए एक एग्रेरियन कमेटी बनाई। कमेटी के सदस्यों में जवाहरलालजी, टण्डनजी, पन्तजी, रफी अहमद साहब किदवई, वेंकटेश नारायणजी तिवारी और लालबहादुरजी शास्त्री थे। शास्त्रीजी ने उस कमेटी की कार्यवाही रखने, उसके लिए आंकड़े इकट्ठे करने, रिपोर्ट का मसविदा तैयार करने, बयान लेने आदि में अथक परिश्रम किया। सोलह से अठारह घन्टे तक उसमें वह व्यस्त रहते। हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाओं पर उन का एक-सा अधिकार था। कार्यवाही के नोट वे इतने ध्यानपूर्वक लिखते थे कि मन्त्री न होते हुए भी वह उस कमेटी के वास्तविक मन्त्री बन गए। यही नहीं, यदि किसी प्रश्न पर जवाहरलालजी और टण्डनजी में मतभेद होता तो शास्त्रीजी सेतु बनकर उन्हें एक राय पर लाते। इसके लिए उन्हें बार-बार आनन्द-भवन और टण्डनजी के घर का चक्कर लगाना पड़ता, किन्तु उनके अथक परिश्रम का यह परिणाम हुआ कि कमेटी की रिपोर्ट सर्वसम्मत रूप से प्रकाशित हुई। एग्रेरियन कमेटी के उनके ठोस काम ने टण्डनजी, जवाहरलालजी और पन्तजी तीनों के मन में उनके लिए स्नेह और विश्वास की भावना पैदा कर दी और इन्हीं तीनों के वरद-स्नेह ने उनकी लघु काया को विराट वट-वृक्ष का रूप दिया।

शास्त्रीजी कहते थे कि एग्रेरियन कमेटी के काम से उन्हें यह महत्वपूर्ण प्रशिक्षण मिला कि विपरीत दृष्टिकोणों का भी एक मिलन-बिन्दु होता है और परस्पर विरोधी विचारों को भी एक समन्वयात्मक सूत्र मे पिरोया जा सकता है – 'इस शिक्षा को मैंने जीवन मे उतार लिया और इसीलिए समस्याओ को सुलझाने मे मुझे परेशानी नही होती।'

शास्त्रीजी ने सार्वजनिक जीवन में अपने कुछ सिद्धान्त बना लिए थ और हर कीमत पर उन्हें निबाहते थे। सन् १९३६ मे वह इलाहाबाद म्युनिसिपल बोर्ड के सदस्य चुने गए और म्युनिसिपल बोड के प्रतिनिधि की हैसियत से इलाहाबाद इम्प्रूवमेट ट्रस्ट के ट्रस्टी चुने गए। इम्प्रूवमेट ट्रस्ट ने टैगोर टाउन की नई विकास-योजना में भूमि का विकास कर कई आधे एकड़ के प्लाट बनाए थे। उन प्लाटों को नीलाम पर बेचने का सिद्धान्त तय किया गया। शास्त्रीजी के एक हितेच्छु, मित्र ने, जो इम्प्रूवमेट ट्रस्ट के भी ट्रस्टी थे, कमिश्नर से अनुमति ले ली कि अपनी और शास्त्रीजी का ओर से वह प्लाटों के नीलाम मे बोली बोल सके। बिना कमिश्नर की अनुमति के ट्रस्ट का सदस्य नीलाम मे भाग नही ले सकता था। शास्त्रीजी नगर से बाहर थे। उनकी गैरहाजिरी मे मित्र ने दोनो प्लाट नीलाम मे खरीद लिए और दोनों की ओर से रुपया जमा कर दिया। शास्त्रीजी जब लौटकर आए तब बड़े दुखी हुए। उन्होने न केवल अपने प्लाट की बिक्री रद्द कराई, बल्कि मित्र को भी विवश किया कि वह अपना प्लाट भी वापस कर दे। शास्त्रीजी ने ट्रस्ट की मीटिग में स्पष्टीकरण करते हुए कहा—"सार्वजनिक कार्यकर्त्ता की हैसियत से हमे परिग्रही नहीं होना चाहिए। सामान्य कार्यकर्ता जायदाद खड़ी करे यह उनकी मिशनरी भावना के साथ मेल नही खाता। दूसरी बात, ट्रस्ट के ट्रस्टी की हैसियत से लाभ उठाना मै अनैतिक मानता हूँ फिर चाहे वह प्लाट खुले नीलाम मे ही क्यो न खरीदा गया हो।" शास्त्रीजी ने मीटिग को यह भी सूचित किया कि उन्होने अपरिग्रही भावना स्वीकार कर गाँधीजी को वचन दिया है कि वह गृह और सम्पत्ति अर्जित नही करेगे और ईश्वर पर अपनी दृढ़ आस्था प्रकट करने के लिए जीवन-बीमा भी नहीं करायेंगे। इस देश में अगणित अनाथ परिवार है। उनका परिवार भी, उनके सिद्धान्तो के फलस्वरूप यदि उनकी मृत्यु के पश्चात् अनाथ परिवारो की गणना मे आ जाए तो इससे उनकी आत्मा को कष्ट नही होगा।

वह दिन था और शास्त्रीजी अपने वचन पर दृढ़ रहे और सचमुच अपने परिवार को गृह विहीन और सम्पत्ति विहीन स्थिति मे छोड़कर बिदा हुए।

शास्त्रीजी जब भारत सरकार के गृह-मन्त्री थे, तब उन्होने अपना इलाहाबाद का निवास-स्थान इसलिए खाली कर दिया कि मकान-मालिक को आवश्यकता थी। मकान न रहने से उनके सामने इलाहाबाद के अपने क्षेत्र मे अधिक समय तक ठहरने मे कठिनाई होने लगी। कहने लगे—"मै प्रयत्न कर रहा हूँ कि कोई पचास रुपये तक किराए का मकान मिल जाए, किन्तु अभी तक मुझे सफलता नही मिली। रेंट-कन्ट्रोल-आफिसर के यहाँ तो मैंने आवेदन-पत्र दे रखा है।"

दूसरे दिन मैंने रेंट-कन्ट्रोल- आफिसर से पूछा और डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट से भी बात की कि शास्त्रीजी को मकान क्यों नही एलाट हो रहा ? दोनों ने सूचना दी—"शास्त्रीजी का सख्त आदेश है कि जिस क्रम मे उनका आवेदन-पत्र है उसी क्रम मे उन्हे एलाटमेंट किया जाए। वह हरगिज प्रायरिटी नहीं लेंगे। उन्होने पहले हमसे सूची मँगाई कि कितने आवेदन-पत्र है। हमने १७३ आवेदको के नाम

उनके पास भेज दिए। तब उन्होने आवेदन-पत्र देकर कहा कि १७४ नम्बर पर आप मेरा आवेदन-पत्र दर्ज कर लें। जब १७३ आवेदन-पत्र निपटा ले तब मेरे आवेदन-पत्र पर गौर करें। अब आप ही ऐसा कोई उपाय बताइए जिससे हम शास्त्रीजी को मकान एलाट कर सके।" मैने मन-ही-मन शास्त्रीजी की चारित्रिक निष्ठा को प्रणाम किया।

पडित जवाहरलालजी रोम्या रोला के निमन्त्रण पर फासीज्म विरोधी विश्व-शाति-परिषद की बैठक मे पेरिस गए। वहा से वह चेकोस्लोवाकिया, स्पेन, मिश्र आदि होते हुए भारत लौटे। चेकोस्लोवाकिया मे वहा के गृह और विदेश मन्त्री डाक्टर डोलफस से मिलकर पडित नेहरू बहुत प्रसन्न हुए। ५ फुट ११ इ च, ऊँचे दुबले-पतले, क्षीणकाय डाक्टर डोलफस की बौद्धिक प्रतिभा, सगठन-शक्ति और चरित्र-निष्ठा ने पडित नेहरू को बड़ा प्रभावित किया।

स्वदेश लौटे तो रफी साहब, पन्तजी, आचार्य नरेन्द्रदेवजी पडितजी से मिलने इलाहाबाद आए। आनन्द भवन मे उन नेताओ और चन्द हम स्थानीय कार्यकर्ताओं के साथ पडितजी अनौपचारिक बातें कर रहे थे। इतने मे लालबहादुरजी भी पहुँच गए। उन्हे देखते ही पडितजी ने कहा—"आइए डाक्टर डोलफस।" शास्त्रीजी इस अप्रत्याशित सम्बोधन से जरा भौचक्के-से हुए। पडितजी का मजाक उनकी समझ मे नही आया। पडितजी उनकी परेशानी देखकर हॅसे, फिर डाक्टर डोलफस की की बात सुनाकर जी भर प्रशसा की। तब शास्त्रीजी के होठो पर मुस्कराहट आई। पडितजी कहते गए— "रंग-रूप को छोड़कर तुम और डाक्टर डोलफस बहुत मिलते हो।"

रफी साहब ने चुटकी लेते हुए कहा—"जवाहरलालजी, स्वतन्त्र भारत के जब आप प्रधानमन्त्री होगे उस समय आपको गृह और विदेश मन्त्री खोजना नही पड़ेगा। लालबहादुर का नाम फेहरिस्त मे लिख लीजिए।"

पडितजी ने हॅंसते-हॅसते कहा—"मगर तुम्हारे और पन्तजी के बाद।" लालबहादुरजी की 'नही-नही' सामूहिक हॅसी के ठहाको मे खो गई।

किसे पता था कि लालबहादुरजी सचमुच रफी साहब और पन्तजी के बाद भारत सरकार के गृह-मन्त्री और फिर पॅडितजी के बाद भारत की वैदेशिक नीति के सचालक बनेगे।

ये और कितनी ही अगणित स्मृतियाँ शास्त्रीजी के अस्थि-विसर्जन के दिन वेग के साथ मेरे मानस मे उभरती-मिटती रही। त्रिवेणी-सगम मे अस्थि-विसर्जन के समय किश्तो मे केन्द्रीय उद्योग-मन्त्री श्री त्रिभुवन नारायणसिंह का साथ हो गया। त्रिभुवनजी शास्त्रीजी के बचपन से ही अनन्य मित्र हैं। हम दोनो अश्रु-विगलित नयनो से चिपटकर मिले।फिर सोचने लगा—मृत्यु का आखिर साध्य क्या है? अथर्ववेद मे ऋषियो ने पूछा है—

कथं वातो नेलयति कथं न रमते मनः।
किमापः सत्य प्रेप्सन्तोर नीलयन्ति कदाचन॥

"वायु क्यो नही स्थिर रहती? मन क्यो नही विश्राम करता? क्यों और किस तलाश मे जल दौड़ पड़ता है? अपनी धारा को नदी एक क्षण के लिए क्यो नही रोकती?"

डा० रामप्रकाश अग्रवाल

एक सन्ध्या : अनेक संस्मरण

किसी सामान्य व्यक्ति के जोवन मे भो जब कोई महान पुरुष क्षण भर के लिए हो प्रवेश कर जाता है तव उस छोटे से जीवन मे भी मानो गौरवशाली इतिहास की छाप अंकित हो जाती है। २३ नवम्बर १९६५ मेरे घटना शून्य जीवन का ऐसा ही घटनापूर्ण दिवस है। उस दिन मैने भारत के प्रधान मन्त्री स्व० श्री लालबहादुर शास्त्री को अत्यन्त समीप से देखा था, देखा हो नही वरन् उनके अत्यन्त समोप वैठने का गौरव प्राप्त किया था। और उससे भी बढ़कर, उनको आलोकमयी छाया मे प० नेहरू का स्मरण करते हुए 'मानवेन्द्र' के रचयिता कवि के कृतित्व का परिचय देने के व्याज अपनो वाणी को पावन वनाने का अवसर भो प्राप्त किया था। आज भी जब उस समस्त वातावरण का स्मरण करता हूँ तो रोमाच हो आता है। उस एक सन्ध्या के अनेक सस्मरण मानस-क्षितिज पर घिर आते है।

स्वर्ण की वर्षा

उस दिन साय ६-३० बजे पटेल भवन दिल्ली मे मेरठ के ओजस्वी कवि श्री रघुवीर शरण मित्र के नवनिर्मित महाकाव्य 'मानवेन्द्र' का उद्घाटन-समारोह था, जिसकी अध्यक्षता कर रहे थे कवि-वर हरिवशराय वच्चन और उद्घाटन के कर-कमल लेकर आये थे श्री लालबहादुर शास्त्री। अप्रत्याशित रूप से ही श्री शास्त्रो जी को बहुत विलम्ब हो रहा था। उसी सन्ध्या को इसी भवन के बाहरी भाग मे महिला शक्ति मण्डल दिल्ली की ओर से भी शास्त्री जी के स्वागत का आयोजन था। अतः भवन के भीतर और वाहर के प्रागण मे उच्चवर्गीय जनता की भारी भीड़ थी। भारत के प्रधान मन्त्री और भारत-पाक युद्ध के कुशल विजेता के दर्शन की आतुर प्रतीक्षा चारो ओर उमड़ रही थी।

शास्त्री जी ने लगभग ७ वजे भवन मे प्रवेश किया, साथ मे श्रीमती ललिता शास्त्रो भी थीं। नोटो के हार लिए महिला-शक्ति मण्डल को ओर से महिलाये, वालक, और वालिकाये दो पक्तियो मे खड़ी थी। हमारा लघुकाय राष्ट्र-नायक भारत-लक्ष्मी की मालायें नमित शीश पर सस्मित ग्रहण करता हुआ अर्धांगिनी गौरी के साथ उनके वीच से गुजर रहा था। कोलाहल शान्त हो चुका था। एक सनसनी सी व्याप रही थी। राष्ट्र दम्पत्ति महिला-शक्ति मण्डल के मच पर आसीन हुए। मण्डल की मन्त्री ने भारत-पाक युद्ध के विजेता का अभिनन्दन किया, और भी अनेक महिलाओ ने अपने उद्गार व्यक्त किये। शास्त्री जो को मानवेन्द्र के उद्घाटन-समारोह मे अभी आना था, परन्तु महिला शक्ति मण्डल उनके व्यक्तित्व की ऊर्जा को अधिकाधिक सचित कर लेने का आग्रही था। नोटो की मालाएँ पहिना कर

उन्हें सन्तोष नहीं हुआ था। उनके हाथों की अंगूठियाँ और गले के आभूषण अपने अतिथि पर पुष्प-वर्षा के लिए मचल रहे थे। हम लोग भीतर के प्रांगण से यह दृश्य देख रहे थे। शास्त्री जी बोलने के लिए खड़े हुए कि उस चन्द्रातप में बिजली की चिनगारियाँ सी छूट पड़ीं। क्षण भर का सन्नाटा, और फिर उन पर स्वर्ण की पुष्प-वर्षा होने लगी। अंगूठियाँ जुगनू सी दमक कर गिरती थी और हार बिजली से लहरा कर टूटते थे। अदृष्टपूर्व दृश्य था। धीरे-धीरे स्वर्ण-वर्षा का वेग शान्त हुआ और शास्त्री जी ने प्रशान्त स्वर मे बोलना आरम्भ किया। अधिक दूरी के कारण (विशेषत: बन्द भवन में होने के कारण) हम लोग सब कुछ स्पष्ट नहीं सुन सके, पर यह स्पष्ट था कि शास्त्री जी इस उद्घाटन समारोह में आने की शीघ्रता प्रकट कर रहे थे।

तेजवंत लघु गनिय न रानी

उनके स्वागतार्थ हम लोग गैलरी मे आ गये थे। एक अद्भुत बाल-कौतूहल सा था मन में। यों पहले भी अनेक बार उन्हे निकट से देखा था, पर आज तो प्रधान मन्त्री से भेंट करनी थी। भारतीय जनता के 'राजा मे ईश्वर-दर्शन' के, अथवा मानव मात्र के वीर-पूजा के, संस्कार ही थे जो उनकी चरण-रज न सही पर शरीर-गंध प्राप्त कर लेने के लिए अवश्य चंचल हो रहे थे। मैं प्रवेश-द्वार पर ही जा खड़ा हुआ था। उनके प्रवेश करते ही दृष्टि मस्तिष्क पर गड़ा दी, जैसे उनकी महानता का केन्द्र बिन्दु खोज लेने की पूरी चेष्टा की हो—उनके ललाट की लम्बाई-चौडाई को देखा, भौंहो को देखा, लम्बे कोट को देखा और सादा जूतों को देखा। उनकी प्रत्येक भंगिमा पर दृष्टि तीव्रता से दौड़ रही थी द्वार से प्रवेश करते समय, अभिवादन ग्रहण करते समय, वार्तालाप करते समय, और मंच पर आसीन होते समय भारत की साधुता के इस प्रतिनिधि मे कहाँ छिपी है वह गरिमा जो देश-विदेश की जनता को अपनी ओर आकृष्ट करती है?

शास्त्री जी के मंच पर बैठते ही सहस्राधिक नेत्र केवल एक ललाट पर केन्द्रित हो गये। दुबल शरीर, पर चेहरे पर आत्म तृप्ति की गुलाबी झलक थी और था एक बालसुलभ भोलापन। नेत्रो में अद्भुत शान्ति और शीतलता थी। भीड़ का संकोच, पद का चांचल्य या स्थिति का गर्व उनमे नहीं था। साधारण वस्त्र, साधारण आकृति, साधारण चाल-ढ़ाल, पर नेत्रो मे अवश्य कुछ असाधारण था। उनमें कुछ असाधारण गहराई थी। जब आंख उठाकर देखते या वार्तालाप करते तो लगता था उन नेत्रो के पीछे सागर की अपार लहरे उमड़ रही है। वह ऊपर की गहन शान्ति प्रकट करती थीं कि इस शीतल आवरण के पीछे—हिमांशुक धरातल के नीचे—एक उदयोन्मुख राष्ट्र की महत्वाकांक्षा की बड़वा सुलग रही है। वे जरा भी हिलते कि मैं उनकी ओर देखने लगता, किसी से बात करते कि मेरे कान सतर्क हो जाते, उनकी प्रत्येक भावभंगिमा से मैं उनकी मानवता को खोजने और थाह लेने का प्रयत्न कर रहा था, यद्यपि समीप बैठने के कारण पूरी तरह से देखने मे संकोच भी था। मन में अनेक प्रश्न उठ रहे थे। यही व्यक्ति जवाहरलाल जी का अत्यन्त आसन्न सहयोगी रहा है? इतना गहरा विश्वास पात्र रहा है, किन गुणो से? शासनतंत्र के अनेक सोपानों से गुजरता हुआ यह व्यक्ति किस रहस्यमयी शक्ति से भारत के प्रधान मन्त्री पद पर आसीन होकर अनेकानेक राष्ट्रों की प्रश्नमयी मुद्रा का आलम्बन बन गया है? यह कभी बुद्ध बनकर कलह की ज्वालाओ मे शान्ति के फूल खिलाता है,

कभी विक्रमादित्य बनकर अंधेरे मे छिपे रहस्यो को खोज लाता है, और कभी योगः कर्मसु कौशलम् को चरितार्थ करता हुआ युद्ध का कुशल सचालन भी करता है ! क्या इसी ने असम के दगे शान्त किये थे ? क्या इसी ने मुहम्मद के पवित्र बाल के चोर को काश्मीर मे खोज निकाला था ? क्या इसी नन्हे से व्यक्ति ने भारत-पाक युद्ध मे अद्‌भुत दृढता का परिचय देते हुए देश का माथा ऊँचा किया था ?

ये प्रश्न मेरे मस्तिष्क के आकाश मे उपग्रहो की भाति दौड़ रहे थे। महानता की सीढियो को देख पाने के लिए मेरी बुद्धि व्याकुल थी। मैंने एक दृष्टि सभा की ओर डाली, फिर मच की ओर देखा बच्चन जी को देखा, कवि रघुवीरशरण मित्र को देखा, आस पास बैठे अनेक साहित्यकारो को देखा, पत्रकारो को देखा, उपमन्त्रियो को देखा, नेताओ को देखा, और फिर जहाज का पछी जहाज पर आ बैठा। मेरी दृष्टि शास्त्री जी की लम्बाई-चौडाई को नाप रही थी। तभी दूर अतीत के क्षितिज पर स्वयवर की सभा मे जगज्जननी की व्याकुल माता सुनयना को शका का समाधान करती हुई तिरहुत की विचक्षण सखी के ये शब्द कानो मे गूज उठे—तेजवन्त लघु गनिय न रानो। कृष्ण ने कस को पछाडा था, राम ने धनुष तोड़ा था, शिवाजी भी शरीर के नाटे ही थे। महिमा का निवास, शक्ति का आह्वान, शरीर के आयाम मे नही वरन् आत्मा के बिन्दु मे होता है।

पावन रेणु कहाँ बिखरेगी ?

मै प्रश्नो मे खोया हुआ था। मै भूल चुका था कि मुझे भी इस सभा मे कुछ बोलना है—मानवेन्द्र महाकाव्य और उसके रचयिता कवि का परिचय देना है। भारत के प्रधान मन्त्री के समक्ष बोलना है, लालबहादूर शास्त्री के समक्ष बोलने की धृष्टता करनी है ? अपना नाम सुनते ही मै लड-खड़ाता सा उठा। शास्त्री जी ने उधर दृष्टि डाली। उस दृष्टि की सरलता और सहजता ने मेरे विश्वास को स्थिर किया और मै माइक पर पहुँचा। फिर भी मै पूर्णतया प्रकृतिस्थ होकर नही बोल रहा था। अतः क्या बोल रहा था यह मुझे स्मरण नही, हाँ कभी-कभी जन-स्वीकृति की तालियो से यह आश्वासन अवश्य मिल जाता था कि उस महापुरुष की उपस्थिति के योग्य ही कुछ बोल पा रहा था। उनकी मर्यादा की रक्षा मै कर रहा था। मुझे केवल वे शब्द ही स्मरण है जहाँ मेरी भावुकता ने पूरा जोर लगाते हुए ऐसा कुछ कहा था—"मानवेन्द्र नेहरू ने अपनी वसीयत मे लिखा था कि मेरे शरीर की भस्म भारत के खेतो मे बिखेर दी जाये, और वह भस्म मिट्टी के खेतो मे ही न फैलकर चिन्मय हृदय के खेतो मे भी बिखर गई जहाँ से 'मानवेन्द्र' जैसे महाकाव्यो की फसल उग रही है, पर कौन जानता है कि मानवेन्द्र के इस उत्तराधिकारी की रज कहाँ-कहाँ फैलेगी ? और उस पार न जाने कैसा महाकाव्य लिखा जायेगा ?" आज जब उस वाक्य का स्मरण करता हूँ तो भावना की वाणी को सत्यता का प्रमाण पाकर पुलकित हो उठता हूँ। शास्त्री जी की रेणु तो एशिया से योरोप तक बिखर गई, नेहरू के उत्तराधिकारी की गूगी वसीयत बोलती वसीयत से अधिक अर्थ वाली सिद्ध हुई, और ताशकन्द की समाधि एक अन्तर्राष्ट्रीय मन्दिर बन गई।

देश को दृढ़ प्राचीर बनायेंगे

और भी अनेक साहित्यकारो ने मित्र जी के कृतित्व पर अपने विचार व्यक्त किये, पर उसी प्रसग मे अपने अध्यक्षीय भाषण मे बच्चन जी ने शास्त्री जी का अभिनन्दन ऐसे शब्दो मे किया कि सारा हाल आन्दोलित हो उठा। उन्होने शास्त्री जी के प्रति जनता के अपार विश्वास और महान

आकांक्षाओं का आभास देते हुए कुछ इस प्रकार कहा था—"जवाहरलाल जी पर तो महाकाव्य लिखा जा चुका पर शास्त्री जी पर कैसा महाकाव्य लिखा जायेगा, इसे कौन जानता है ? हम तो निश्चित रूप से यही कह सकते है कि वे देश का ऐसा दृढ प्राचीर बनायेंगे कि शत्रु आँख उठाने का साहस भी न कर सके।"

ऐसे कवित्वमय स्वरो मे कही थी बच्चन जी ने यह बात कि सारा सभा भवन उत्साह की अगाध लहर से हिल उठा था। लगता था दीवारो को भी रोमाच हो आया हो। मैने देखा – शास्त्री जी हिले, जेब से रुमाल निकाला और आखो तक ले गये। तभी अनियन्त्रित रूप से मेरी दृष्टि सामने अतिथियो के बीच बैठी ललिता जी की ओर खिच गई, और वहाँ मैने देखा—उनके माथे की बेदी दीपक सी दमक उठी थी, उनका रोम-रोम शास्त्री जी की आरती उतार रहा था।

श्रीमुख से काव्य-पाठ

सबसे अधिक भावपूर्ण बेला वह थी जब भारत के प्रधानमन्त्री शास्त्री जी ने श्रीमुख से काव्य-पाठ किया। हम लोग इसकी कल्पना भी नही कर सकते थे, पर वह यथार्थ हो रही थी। हमने अत्यन्त आश्चर्य से देखा कि माइक पर पहुँचते ही उन्होने अपनी जेब से एक कागज निकाला – पूरी फुलस्केप शीट। और उन्होंने कहा—

"मुझे 'मानवेन्द्र' महाकाव्य पर एक दृष्टि डालने का अवसर मिला है। इसमे जो अंश मुझे अधिक प्रिय लगे वे इस कागज पर टाइप करा लाया हूँ। मै इन अशों को आपके सामने पढ़ूंगा।" भारत का प्रधानमन्त्री काव्य-पाठ कर रहा है ? उद्घाटन का यह चित्र कल्पनातीत था। शास्त्रीजी ने सहज-सरल रीति से, एक-एक अक्षर के स्पष्ट मधुर उच्चारण के साथ, मानवेन्द्र का काव्य-पाठ किया। जन-समूह गद्गद् हो उठा। एक कुशल राजनीतिज्ञ में इतना गहरा साहित्यानुराग, आज के युग मे अनोखी वस्तु थी। उनका हिन्दी-प्रेम, उनका साहित्य-समाज, उनकी कवि श्रद्धा, आदि सबसे अधिक उनकी वह लोकतत्रीय सरलता उनकी महानता का अनिर्वचनीय उद्घोग कर रही थी।

अचलो ऽयं सनातन.

अनेक संस्मरणो वाली वह सध्या जीवन मे इतनी अमिटता से अकित हो जाएगी, तब इसका अनुमान भी नही किया था। मित्रजी ने उस दिन कहा था— एक दिन शास्त्रीजी के निवास स्थान पर आयेंगे, तब साहित्य-चर्चा करेगे। वह अवसर नही आ सका, पर जितना उस दिन पा लिया वह भी क्या कम है ? मैने उनसे विदाई लेते समय बड़े सकोच के साथ अपने बच्चे की आटोग्राफ बुक पर हस्ताक्षर मागे थे, और उन्होने हल्के स्मित के साथ हस्ताक्षर कर दिये थे। उनकी वह छवि मेरे लिये अति स्मरणीय है। उनके वे हस्ताक्षर आत्मा की अमरता की कहानी कहते प्रतीत होते हैं। एक-एक अक्षर में शास्त्रीजी विराजमान है—अचलोऽय सनातनः।

●

जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी

शास्त्रीजी के साथ काहिरा में

श्री लालबहादुर शास्त्री ने जब २ अक्टूबर, १९६४ को दिल्ली से काहिरा के लिए प्रस्थान किया तब यह उनकी पहली विदेश-यात्रा थी। श्री शास्त्री भारत जैसे महान राष्ट्र का एक विशाल अन्तर राष्ट्रीय शिखर-सम्मेलन मे प्रतिनिधित्व करने जा रहे थे। स्वभावता इस बात की चिन्ता थी सर्वत्र कि श्री लालबहादुर शास्त्री किस प्रकार से ससार की जनता के ऊपर अपना प्रभाव छोड़ेगे। श्री शास्त्री ने न केवल सयुक्त अरब गणराज्य के नागरिकों पर वल्कि एशिया, अफ्रीका और दक्षिणी अमेरिका के राज्याध्यक्षों पर भी, जो प्रभाव छोडा, उससे भारतीय राजनीति की धाक फिर जम गई। राजनीतिज्ञो ने उसी समय मान लिया कि श्री लालबहादुर शास्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू की गद्दी के सही जानशीन हैं।

काहिरा यात्रा के तीन रूप

श्री लालबहादुर शास्त्री को काहिरा-यात्रा के तीन रूप हैं; पहला तो यह कि उन्होंने काहिरा और संयुक्त अरब गणराज्य के जनमानस को किस प्रकार प्रभावित किया। यह बहुत महत्वपूर्ण था क्योंकि काहिरा इस समय अन्तर राष्ट्रीय जगत के मानचित्र पर एक अत्यन्त महत्वपूर्ण केन्द्रविन्दु है। उस समय काहिरा एशिया, अफ्रीका तथा दक्षिण अमेरिका के समस्त गुट-निरपेक्ष राष्ट्रों का केन्द्रविन्दु हो रहा था। इस महत्वपूर्ण भूमि के निवासी श्री नेहरू के प्रति अपार श्रद्धा और स्नेह की भावना रखते हैं। यहाँ के लोग 'नेहरू-नासिर सावा सावा' (नेहरू-नासिर घनिष्ट मित्र हैं) का नारा बुलन्द करते रहे हैं। इन लोगो मे भारत के प्रति सहज स्नेह था और श्री शास्त्री के दर्शनो की तीव्र प्रतीक्षा। २ अक्टूबर को जब श्री लालबहादुर शास्त्री काहिरा के अन्तरराष्ट्रीय हवाई-अड्डे पर उतरे, तब हवाई अड्डे पर उसकी तीनो मंजिलो पर खड़े हुए हजारो अरब युवकों ने तालियो से उनका स्वागत किया। जैसे ही राष्ट्रपति नासिर श्री शास्त्री का स्वागत करने के लिए बढे—'शास्त्री-महरबा, शास्त्री नासिर-जिन्दाबाद' के नारो से आकाश गूँज उठा और इन नारो की आवाज मे तोपों की सलामी भी जैसे दब गई। शास्त्री जी को राष्ट्रपति नासिर ने अपने उपराष्ट्रपतियों से मिलाया और फिर दोनो देशो के राष्ट्रगान के पश्चात चुस्त संगीनधारी अरब सैनिको की सलामी लेने के लिए आगे बढ़े।

श्री शास्त्री धोती और कोट पहन कर उतरे थे। सफेद मौजे, सफेद धोती, बादामी रंग का बन्द गले का कोट और उनके ऊपर सफेद गांधी टोपी मे शास्त्री जी अरब सैनिको की सफेद वर्दी मे अलग ही खिल रहे थे। यह सही है कि उनके साथ राष्ट्रपति नासिर का लम्बा-चौड़ा व्यक्तित्व था, पर ऐसा

लगा जैसे श्री शास्त्री का छोटा कद उनके बड़ा काम आया। वह उनकी ऐसी विशेषता बन गया जिसके कारण उनको दूर से ही पहचाना जा सकता था और वह किसी बड़े की छाया मे दब नहीं जाते थे। जब श्री शास्त्री हवाई अडडे की मुख्य इमारत में घुसे, तब काहिरा में स्थित भारतवासियों को भीड़ उनके स्वागत के लिए खड़ी थी। भारतीयो और मिश्रियो ने 'शास्त्री-जिन्दाबाद' और 'शास्त्री-महरबा' के नारे लगा कर तालिया बजाई। यहा से शास्त्री जी अपने सहयोगियो के साथ ताहिरा-महल मे ठहरने चले गए। इसके बाद जब श्री शास्त्री श्री नासिर के कुब्बे महल मे गए, भारतीय राजदूतावास गए, या जहाँ कही भी गये, सैकड़ो अरबो ने उन्हे घेर किया। एक बार भारतीय राजदूताव स के सम्मुख स्कूल के छात्रो ने उन्हे घेर लिया और प्रत्येक छात्र ने उनसे हाथ मिलाना चाहा। हाथ मिला कर ये छात्र अत्यन्त प्रसन्नता अनुभव कर रहे थे और शास्त्री जी मुसकराते हुए बडे प्रेम के साथ हर छोटे-बड़े से हाथ मिलाते जाते थे। हालाँकि इस प्रकार उन्हे गुटनिरपेक्ष राष्ट्र-सम्मेलन मे जाने में देर हो रही थी।

काहिरा के गुटनिरपेक्ष सम्मेलन मे, जो काहिरा विश्वविद्यालय के विशाल हाल मे हुआ, शास्त्री जी ने प्रवेश किया तो राष्ट्राध्यक्षों ने बड़े जोरो के साथ उनके सम्मान मे तालियाँ बजाई। उस सम्मेलन में राष्ट्रपति नासिर को छोड़कर कोई दूसरा राजनेता ऐसा नहीं था, जिसके प्रवेश करने पर सम्मेलन के प्रतिनिधियों ने इतना सम्मान प्रकट किया हो।

शास्त्रीजी का वह अविस्मरणीय भाषण

श्री लालबहादुर शास्त्री ने अपने भाषण के लिए पहला-दूसरा दिन नही चुना। पहले उन्होंने औरों के भाषण सुने और इसके बाद उन्होने अपना भाषण पढ़ा। शास्त्री जी बड़ी विनम्रता के साथ मच पर गए, सिर झुका कर उन्होने उपस्थित नेताओ का अभिवादन किया और इसके बाद बड़े ही दृढ़ शब्दों में अपना भाषण पढ़ा। जिस प्रकार उन्होंने यह भाषण पढ़ा, उससे सब से अधिक आश्चर्य उनके दल के कुछ अधिकारियों को और कुछ भारतीय अंग्रेजी पत्रकारों को हुआ, जो समझते थे कि काशी विद्यापीठ का हिन्दो माध्यम से पढा हुआ शास्त्री अग्रेजी शब्दों का ठीक प्रकार से उच्चारण हो नही कर सकेगा। श्री शास्त्री ने यह भाषण अपने सलाहकारो को सलाह पर लिखा था, पर उन्होने अन्तिम अवसर पर उसमे एक ऐसा महत्वपूर्ण परिवर्तन कर दिया था, जिसका विदेश मन्त्रालय के उनके सलाहकारो को भी पता नही था। और वह था चीन द्वारा अणुबम विस्फोट करने की घोषणा का निन्दा। उस पूरे मच पर यदि किसी एक व्यक्ति ने चीन के विस्तारवादी और युद्धोन्मत्त रुख को निन्दा की, तो वह श्री लालबहादुर शास्त्री ही थे। श्री शास्त्री के भाषण को इतना महत्व दिया गया था कि यूगोस्लाविया के राष्ट्रपति टीटो, जो एक दिन पूर्व बीमार हो गये थे और जो सम्मेलन मे भाग नही ले रहे थे, श्री शास्त्री का भाषण सुनने के लिए दवाइयाँ लेकर विशेष रूप से उस अधिवेशन मे सम्मिलित हुए। जब उन्होने यह प्रस्ताव किया कि चीन को एक सद्भावना मण्डल भेजा जाए जो उसे अणुबम-विस्फोट करने से रोके, तो उन्होने तालियां बजाई। जिस समय शास्त्रो जी भाषण करके आये, तत्कालीन राष्ट्रपति एन्क्रूमा ने उनके पास आ कर उनको भाषण के लिए बधाई दी और इसो प्रकार की बधाई गिनो के राष्ट्रपति श्री तूरे और इन्डोनेशिया के राष्ट्रपति श्री सुकर्ण ने भो दी। यद्यपि राष्ट्रपति सुकर्ण उनके समझौते और सह-अस्तित्व के सिद्धान्तो के विरोधी थे। इस भाषण का यूगोस्लाविया की तनजुग समा-

शास्त्रीजी के साथ काहिरा में

चार-समिति ने तोन बार प्रसारण किया। रायटर ने १५०० शब्दों का एक केबल भेजा। काहिरा के अखबारो ने मुख्य समाचार के रूप मे इसे प्रकाशित किया।

शास्त्री जी का यह भाषण उनकी राजनीतिक सूझ-बूझ का एक ज्वलन्त उदाहरण है। उन्होने उस भाषण मे जितने प्रस्ताव उठाये, वे सब मान लिए गये। यद्यपि अणुबम के सम्बन्ध में चीन को सद्भावना-मण्डल नही भेजा गया, परन्तु अपील अवश्य की गई कि जिन राज्यो ने अणुबम नही बनाया है वे न बनाए। यह बात दूसरी है कि चीन ऐसी अपीलो को मानने वाला नही है और उसने इस सम्मेलन के थोडे दिनो बाद हो अणुबम का विस्फोट कर दिया। इन्डोनेशिया की विचारधारा श्री शास्त्री की विचारधारा के विपरीत थी, परन्तु इन्डोनेशिया की अन्तारा समाचार-समिति के सम्पादक ने मुझसे कहा कि यह एक बड़ा भारो राजनीतिक भाषण था। यूगोस्लाविया के प्रत्येक समाचारपत्र ने इस भाषण को प्रथम स्थान दिया, रेडियो और टेलीविजन पर भी यह भाषण दिखाया गया और समाचार-पत्रो ने भी अपनी टिप्पणियो मे उसकी प्रशसा की।

जिन राष्ट्रनायको ने श्री शास्त्री के प्रस्तावो का समर्थन किया, उनमे मार्शल टीटो, इथियोपिया के सम्राट हेल सिलासी, उगाडा के प्रधान मन्त्री ओबेतो, साइप्रस के राष्ट्रपति मकारियोस के नाम प्रमुख थे। अफ्रीका के अन्य देश भी व्यक्तिगत बातचीत मे उनका समर्थन करते थे। राष्ट्रनायकों पर श्री शास्त्री ने बड़ा अच्छा प्रभाव डाला। अल्जीरिया के बेन बेला और श्री शास्त्री मे तो यह होड चली कि कौन किससे मिलने जाएगा। श्री शास्त्री का कहना था कि श्री बेन बेला राष्ट्रपति है, इस लिए मुझे उनके यहाँ जाना चाहिए। श्री बेन बेला कहते थे कि शास्त्री जी मुझ से बड़े हैं, इस लिए मै उन के पास आ कर मिलूगा और एक दिन मुलाकात इसी कारण न हो सकी। श्री टीटो शास्त्री जी से मिल कर बहुत प्रसन्न हुए। श्री नासिर जब ११ अक्टूबर की रात को उनको हवाई-जहाज पर बिदा करने आए, तो जहाज की सीढियो के पास खडे होकर कहने लगे—"मै तो आपको अपना बडा भाई मानता हूँ, आप मेरे बड़े भाई की तरह मुझे हमेशा सलाह देते रहे।" नौ दिनो के अन्दर ही श्री शास्त्री ने श्री नासिर के साथ वही हार्दिकता और तादात्म्य उत्पन्न कर लिया था, जो श्री नेहरू के साथ था। अन्य राजनेताओ के साथ भी श्री शास्त्री ने बडे मधुर सम्बन्ध स्थापित किए और उनकी इस सफलता मे उनकी विनम्रता, मृदुभाषिता तथा निष्ठा बहुत सहायक हुई।

शास्त्री जी की विनम्रता किस सीमा तक जा सकती है, इस का परिचय हमे काहिरा मे एक बार और मिला। श्री शास्त्री अक्सर हम पत्रकारो से मिला करते थे और छोटी-से-छोटी बाते बताया करते थे। परिणाम यह होता था कि भारतीय पत्रकारो को सम्मेलन को ऊँच-नीच के बारे मे पूरा पता रहता था। तीन दिन तक शास्त्री जी सयुक्त अरब गणराज्य के मेहमान रहे, इसके बाद वह नाइल हिल्टन होटल मे सम्मेलन के अन्य प्रतिनिधियो के साथ ठहरने के लिए आगए। नाइल हिल्टन होटल भोजनो के प्रबन्ध के लिए मशहूर है। हमे भी उत्तम शाकाहारो भोजन के लिए अक्सर उसी होटल मे जाना पड़ता था। परन्तु जब उस होटल मे राज्याध्यक्ष ठहर गये और अन्य यात्री हटा दिए गए, तब केवल शास्त्री ही ऐसे रह गए जो शाकाहारी भोजन करते थे, जिस को वहाँ पर ठीक तरह से व्यवस्था न हो सकी। अरब सरकार को ओर से सब्जिया और मक्खन शास्त्री जी के कमरो मे आ जाता था और शास्त्रीजी अपने सहायको द्वारा खाना बनवाते थे। इसका पता हमे तब लगा जब कि एक बार शास्त्री ने हम से पूछा कि आपके खानपान का क्या प्रबन्ध चल रहा है। हम ने कहा कि हमारी

तो गुजर हो रही है, आपके क्या हालचाल हैं। तब वह हँस कर बोले कि हम तो अपना बनाते हैं और खाते है। इस पर हम लोगो को बड़ा आश्चर्य हुआ। और भारतीय समाचारपत्रों में भी यह समाचार छपा। शास्त्री जी ने कहा भी कि क्या आप एक दिन हिन्दुस्तानी खाना खाना पसन्द करेंगे? उन्होने अपने सचिव श्री लक्ष्मीकान्त झा से कहा कि झा साहब, आप इन के खाने का प्रबन्ध कीजिए। शास्त्री जी ने एक दिन हम लोगों से कहा कि अरे, आपने तो हाथ से खाना बनाने की खबर भी हिन्दुस्तान में छपवा दी। ऐसा क्यों किया? इस पर हमने कहा कि साहब, यह तो हमारी जिम्मेदारी है, चाहें तो अपने प्रधान मंत्री से भारत के सम्बन्ध में अन्य देशों के राष्ट्रपतियो और प्रधान मंत्रियो से बातचीत करायें, या उससे खाना बनवाएं। हमारा इतना बड़ा राजदूतावास है और हम अपने प्रधान मंत्री के खाने की भी व्यवस्था न कर सकें, तो यहाँ सैकडों आदमी रखने से क्या फायदा! इस पर शास्त्री जी ने झट कहा--'राजदूतों के बारे मे आप इस तरह मे न कहिए, जिस तरह से आप लालबहादुर के बारे में कहते है। वे बहुत बडे आदमी है।'

काहिरा सम्मेलन समाप्त होने लगा, तो धन्यवाद देने का कार्य श्री लालबहादुर शास्त्री को सौंपा गया। उन्होने एक छोटे-से भाषण मे धन्यवाद दिया। उनके इस भाषण से यह स्वीकार कर लिया गया कि उपस्थित प्रतिनिधियो मे सब से वरिष्ठ श्री लालबहादुर शास्त्री है और उन्होंने अपने इस कार्य को योग्यतापूर्वक निभाया भी। काहिरा सम्मेलन द्वारा श्री शास्त्री के सफल नेतृत्व की यह स्वीकृति थी।

आज जब हम श्री शास्त्री की अन्तिम उपलब्धि ताशकन्द-घोषणा पर विचार करते है और जब उसका मिलान काहिरा-सम्मेलन में किए गए उनके भाषण से करते है, तो मालूम होता है कि दोनो कार्य एक ही व्यक्ति की कृति हो सकते है। श्री शास्त्री शान्तिवादी थे। काहिरा सम्मेलन मे उन्होने महात्मा गाँधी और श्री जवाहरलाल नेहरू के शान्ति के सन्देश को दोहराया था। उन्होने शान्ति समझौते और सहअस्तित्व के जिन सिद्धान्तों का निरूपण किया था, उनका कठोर से कठोर परिस्थितियों में भी पालन कर दिखाया। उन्होने काहिरा मे अकेले ही चीन के विरुद्ध अपनी आवाज उठाई थी और जब पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण किया, उस समय अकेले रह कर ही उस आक्रमण का विरोध किया। परन्तु जब शान्ति का अवसर आया तब उसे हाथ से जाने नही दिया। विरोधी के साथ किस प्रकार का व्यवहार रखना चाहिए, इसको एक झाकी उनको काहिरा यात्रा मे ही मिल गई थी। गिनी के राष्ट्रपति तूरे चीन के बड़े समर्थक थे, पर शास्त्री जी ने उन्हे भारत आने का निमत्रण दे कर स्वयं तूरे महोदय को चकित कर दिया। कराची मे इन्डोनेशिया के विदेश मंत्री श्री सुबान्द्रियो ने भारत के विरुद्ध एक बड़ा जहरीला वक्तव्य दिया था, लेकिन श्री शास्त्री ने राष्ट्रपति सुकर्ण से कहा कि भारत आप के रास्ते मे पड़ता है फिर अब आप भारत होकर क्यो नही चलते, यह तो हमारे साथ अन्याय है। काहिरा से लौटते समय वह कराची मे श्री अयूब से मिलने के लिए रुके थे और इस प्रकार श्री शास्त्री ने ताशकन्द घोषणा को स्वीकार कर अपने विरोधियों के साथ समझौता और सम्मान-प्रदर्शन की उस नीति का ही पालन किया, जिस का उन्होने काहिरा मे प्रदर्शन किया था।

लेखक के लिए काहिरा मे श्री शास्त्री के सानिध्य में गुजारे गए दस दिन जीवन की एक अमूल्य थाती की भांति रहेगे।

लल्लन बाबू

बचपन उस छोटे-से बड़े आदमी का

कौन जानता था कि यह शात दिखने वाला छोटा-सा बच्चा नन्हे एक दिन सारी दुनिया पर छा जाएगा ग्रौर इतिहास उसे हमेशा के लिए अपने पृष्ठो मे समेट लेगा ···स्वर्गीय लालबहादुरजी के मामा की कलम से शास्त्रीजी के बचपन के रोचक तथा प्रामाणिक विवरण ··· ·· ···· · ·····

ईश्वर की मानव-रचना मे जो कुछ उसकी देन है, उसको तो वही जानता है, परन्तु इतना तो कहा ही जा सकता है कि माता की गोद से चिता तक मानव-रचना का यदि लेखा-जोखा किया जाए तो प्रतीत होता है कि बाल्यकाल ही इस जीवन की बुनियाद है। घरेलू जीवन ही इस जीवन की व्यापक सफलताग्रो असफलताग्रो को कुजी है—इस सदर्भ मे प्रिय लालबहादुर शास्त्री के घरेलू जीवन पर साधारण-सा विवरण प्रस्तुत करने के लिए उनके ननिहाल की पारिवारिक परिस्थितियो पर प्रकाश डालना ग्रावश्यक है।

प्रिय लालबहादुर शास्त्री अपनी बड़ी तथा छोटी बहन के समान ही ननिहाल मे ही पैदा हुए। इनके नाना मुशी हजारीलालजी का निम्न मध्यम श्रेणी का चार छोटे-बड़े भाइयो का शिक्षित कायस्थ सयुक्त परिवार था जो ग्राज भी उसी प्रकार है। मिर्जापुर के वे लोग निवासी है। मुशी हजारीलालजी अपने जीवन-काल मे मुगलसराय के एक छोटे से प्राइमरी तथा अग्रेजी रेलवे स्कूल के मुख्य ग्रध्यापक थे। ग्राज भी वह स्कूल इन्टर कालेज के रूप मे है। उस समय मुगलसराय जैसे छोटे-से स्थान मे इस स्कूल का बड़ा महत्व था ग्रौर उस स्कूल मे दो-चार साल पढ लेने वाला लड़का रेलवे मे बडी ग्रासानी से नौकरी पा जाता था। यदि यह कहा जाए कि उस समय यह अँग्रेजी स्कूल रेलवे का एक रेक्रूटिग सेन्टर था तो अनुचित न होगा। नाना के जीवन-काल के बाद भी लालबहादुरजी ने अपनी प्रारम्भिक, तथा अग्रेजी के छठे दर्जा तक की शिक्षा प्राप्त की क्योकि उस समय भी नाना का परिवार मुगलसराय मे ही रहता था।

मुशी हजारीलालजी तथा उनके सबसे छोटे भाई मुशी दरबारीलालजी अपनी-अपनी ज्येष्ठ कन्या श्रीमती रामदुलारीदेवी तथा श्रीमती श्यामादेवी (जो बहन रामदुलारी देवी से लगभग एक साल छोटी थी) के विवाह से छुट्टी पा लेने के पहले ही से पारिवारिक ग्रापत्तियो मे पड़ चुके थे। उनके दो बडे भाई युवा अवस्था मे ही स्वर्गवासी हो चुके थे ग्रौर सतप्त दो युवा विधवाग्रो तथा एक नवजात शिशु श्री लक्ष्मीनारायण को अपने पीछे छोड़ गए थे। इतना ही नही, छोटे भाई मुशी दरबारीलालजी की धर्मपत्नी एक कन्या श्रीमती श्यामादेवी तथा एक पुत्र श्री विन्देश्वरीप्रसाद को छोड़कर स्वर्गवासी

हो चुकी थीं। ये बच्चे छः तथा तीन वर्ष के शिशु ही थे। मुंशी दरबारीलालजी की भी उम्र उस समय केवल ३२ वर्ष की ही थी, फिर भी दो विधवा भावजों के घर में होने के कारण इन्होने दूसरा विवाह करना स्वीकार नही किया और दोनों भाई संयुक्त परिवार का संचालन करते रहे।

भगवान या भाग्य की विडंबना विचित्र ही है। शास्त्रीजी की माता रामदुलारीदेवी के विवाह को अभी ८-९ साल ही बीते थे कि शास्त्रीजी के पिता मुंशी शारदाप्रसादजी का एकाएक प्लेग से प्रयाग में ही १९०६ में स्वर्गवास हो गया। मुंशी शारदाप्रसादजी प्रारम्भिक काल मे कायस्थ पाठशाला इलाहाबाद मे एक अध्यापक थे और बाद मे सरकारी बन्दोबस्त विभाग मे नायब तहसीलदार थे, इलाहाबाद मे ही रहे। वह अपने पीछे पाँच साल की कन्या और डेढ़ साल का एक पुत्र, श्री लालबहादुर शास्त्री, तथा तीसरी कन्या सन्तान, जो छः महीने के गर्भ में थी, छोड़ गये।

ननिहाल का परिवार अथाह शोक-सागर मे डूब गया। कोई किनारा उस समय देख पड़ना-सम्भव न था। नाना का परिवार दो युवा भाइयों को खोकर जर्जर हो चुका था कि दुर्भाग्य का दूसरा दौरा हुआ और ज्येष्ठ युवा दामाद भी खो गया। २३ वर्षीय युवा पुत्री श्रीमती रामदुलारी का वैधव्य संताप पिता हजारीलालजी सहन न कर सके। थोडे समय के बाद ही उन्हे लकवा का आघात हुआ जिससे कुछ समय तक पीड़ित रहने के बाद अततः १९०८ मे स्वर्गवासी हो गए। लालबहादुर जी के चार व्यक्तियों के परिवार के अतिरिक्त नाना हजारीलालजी अपने पीछे १० तथा ४ वर्षीय दो कन्याएँ तथा ७ वर्षीय १ पुत्र विधवा नानी के साथ पीछे छोड़ गए।

इस प्रकार नाना मुंशी दरबारीलालजी के अकेले कन्धो पर तीन विधवा भावजे और तीन भतीजी-भतीजे के साथ-साथ लालबहादुरजी के भी चार व्यक्तियो के परिवार का पालन-पोषण, शिक्षा, विवाह आदि की जिम्मेदारी उस समय पड़ी, जब वह अपनी सारी व्यक्तिगत जिम्मेदारियो से छुट्टी पा चुके थे। ऐसे त्यागी, तपस्वी, कुल के पालक तथा कर्त्तव्यपरायण नाना के अटूट स्नेहमय वातावरण में लालबहादुरजी का तथा उनके एक मात्र लगभग चार वर्ष बड़े मामा (इन पक्तियों के लेखक) पुरुषोत्तमलाल का साथ-साथ लालन-पालन हुआ। ये दोनो बालपन से ही एक-दूसरे के मित्र, सहयोगी, छोटे-बड़े भाई के समान मामा-भाजे की मर्यादा निबाहते हुए जीवनपर्यन्त चले। लालबहादुरजी के भारत के प्रधानमन्त्री होने के पश्चात् भी किंचित मात्र कभी भी इस सम्बन्ध मे कोई अन्तर नहीं आया।

लालबहादुरजी के जन्म-काल के अवसर तक इनके स्वय तथा नाना के परिवार मे जन्म पाने वाले सभी बालक-बालिकाएँ उम्र तथा सम्बन्ध मे इनसे बड़े ही थे। कोई मौसी थी तो कोई मामा और कोई बड़ी बहन, यहाँ तक कि इनकी सबसे ज्येष्ठ मौसी श्रीमती श्यामादेवी के भी दो जन्म ले चुके पुत्र इनके बड़े भाई ही ठहरे इसलिए इनका स्नेहमय उपनाम नन्हे तथा नन्हकू पड़ा। इसके बावजूद कि अपने पैतृक परिवार मे यह सबसे ज्येष्ठ थे। इनके बाबा मुंशी नन्दनलाल अपने दो छोटे भाई मुंशी रघुनन्दनलाल तथा मुंशी शिवनन्दनलाल मे सबसे ज्येष्ठ थे। लालबहादुरजी के पिता श्री शारदाप्रसादजी अपने सगे भाइयो तथा अपने दो चाचा के सभी सन्तानो मे ज्येष्ठ ही थे। स्वय लालबहादुरजी अपने सभी चाचा की सन्तानो तथा अपने तीनो दादा के पौत्रो मे सबसे ज्येष्ठ थे, पर यह एक विचित्रता ही थी कि नाना-नानी के एक स्नेहमय नन्हे नाम से घरेलू जीवन मे याद किए गये।

लालवहादुरजी की पूज्य माता श्रीमती रामदुलारीदेवी अपने पिता के परिवार में तथा ससुराल में भी सबसे ज्येष्ठ पुत्री तथा बहन और इधर बडी पतोहू और भाभी रहीं। एक अध्यापक की ज्येष्ठ कन्या होने के फलस्वरूप इन्हे पिता ने उस जमाने मे भी हिन्दी, उर्दू, बॅगला, तथा रोमन की शिक्षा दे रखी थी। वह मुगलसराय के एक बगाली पडौसी के सम्पर्क मे आकर बगला पढना तथा वोलना भी सीख चुकी थी। वह सिलाई, कढाई और सभी घरेलू धन्धो मे कुशल थी। सश से बडी परिश्रमी तथा सेवा-कार्य मे दक्ष थी। वैधव्य काल के आरम्भ मे ही नाना दरबारीलाल की लाई हुई 'योगवशिष्ठ' का नित्य यह पाठ करती थी। अतिथि-सत्कार तो मानो इन्ही के ही हिस्से में पडा था। भाग्य से इन्हे पिता माता, चाचा तथा चाची का अन्त काल तक पूरी सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वह रिश्तेदारो तथा पडोसियो के यहाँ तक जरूरत पडने पर दौड पडती थी और ऐसे अवसरो को अपना भाग्य समझती थी। वह बडी साहसी भी थी और हृदय मे छिपाये बैठी थी कि हमारा एक मात्र पुत्र नन्हे लालवहादुर' ही वने। इसका रहस्य मुझे तब ज्ञात हुआ जब मै लगभग १३-१४ वर्ष का था और लालवहादुरजी लगभग १०-११ वर्ष के।

लालबहादुरजी आदतन कभी-कभी कह बैठते थे कि 'पता नही हमारा नाम लालबहादुर क्यो अम्मा ने रखा। यहाँ तो किसी का नाम बहादुर पर नही है। बनारस वाली मौसी के यहाँ भी कोई वहादुर नही है। रामनगर मे तो सभी लाल-प्रसाद है, फिर मेरा नाम इतना खराब क्यो है ? यह मुझे अच्छा नही लगता।'

मैने कहा कि नाम तो खराब नही है। वह पूछ बैठे कि किसी बडे आदमी का नाम भी क्या ऐसा है ? वहुत सोचने पर सुना नाम याद आया और मै कह बैठा—तेज बहादुर, वह इलाहाबाद के सबसे बडे वकील है।

वहन रामदुलारी बैठे-बैठे हम दोनो की बाते सुन रही थी, हसी और बोली—"नही लल्ला (मेरा उपनाम लल्लन था), नन्हे का नाम वकील वहादुर बनने के लिए जीजा ने नही रखा बल्कि उन्हे कलम बहादुर वनाने के लिए और मैने करम बहादुर बनने के लिए इनका नाम 'लालबहादुर' रखा है।" इतिहास साक्षी है कि लालवहादुर जी की माता का आशीर्वाद सफलीभूत हुआ। लालबहादुर जी को ऐसे अवसरो पर सदा माता का आशीर्वाद प्राप्त होता रहा और कठिन दिनो की तपस्या और जेल के जीवन मे भी वह उनका साहस वढाती रही। लालबहादुर जी सहन शीलता, सुशीलता और विनम्रता के भडार तथा धैय, साहस, सतोष तथा त्याग के असीम सागर साबित हुए। यह सम्पत्ति इन्हे इनकी माता की देन थी जो शुरू से ही उपलब्ध हुई। लालवहादुर जी ने फिर कभी इस नाम पर असतोष प्रगट नही किया।

नाना दरवारीलाल जो उस समय गाजीपुर मे अफीम के महकमे मे हैड क्लर्क थे। पारिवारिक खर्च मे नाना हजारीलाल जी के वाद हाथ वटाने वाला दूसरा कोई नही था। लालवहादुर जी की माता तथा श्यामा मौसी के वाद वडे नाना के पीछे छोडे हुए नवजात शिशु श्री लक्ष्मीनारायण तथा नाना दरवारीलाल के एक मात्र पुत्र श्री विन्देश्वरी प्रसाद (ऊपर वर्णित दो वड़ी वहनो से जो लगभग ३-४ साल छोटे थे) इस समय तक वालिग हो चले थे। नाना दरवारीलालजी विन्देश्वरी प्रसाद जी की देख रेख मे पूरे परिवार को छोड गाजीपुर मे नौकरी करते रहे। घर का सारा प्रवन्ध लालवहादुर जी की

नानी के हाथ में रहता और विन्देश्वरी प्रसाद जी तथा रामदुलारी जी दोनों ही 'अम्मा' के आदेशानुसार घर का संचालन करते।

घर में लालबहादुर जी की नानी ही सारे परिवार की 'अम्मा' थी और नाना दरबारीलाल जी सबके 'चाचा'। पुत्र-पुत्री के भी चाचा, भतीजे-भतीजी के भी चाचा तथा नाती-नतनी के भी चाचा। घर का वातावरण स्नेहयुक्त तथा शान्तिमय सदा बना रहा। कभी छोटे बालकों ने नहीं समझा कि कौन किस का बेटा है। सबका एक ही प्रकार का सम्बोधन 'चाचा और अम्मा' रहता। हाँ, आपस मे दादी, दादा, मामा और मौसी का यथा योग्य सम्बोधन होता और उसके मर्यादा पालन के लिए सब आदेश पाते रहते। श्री लक्ष्मीनारायण, श्री बिन्देश्वरी प्रसाद से कुछ बड़े थे। वह साधु प्रकृति के थे। उन्हे पारिवारिक उलझनो से कोई मतलब नहीं रहता था। सुबह से शाम तक स्नान, रामायण-पाठ तथा हनुमान जी की पूजा मे ही व्यस्त रहते—न किसी काम की चिन्ता न कोई सिर-दर्द।

'चाचा' और 'अम्मा' इससे इनके लिए दुखी और चिन्तित रहते पर पारिवारिक मर्यादा में उन्हें सदा उचित स्थान मिलता। माता रामदुलारी जी के वह सबसे अधिक स्नेहपात्र सदा बने रहे। कुछ समय बीतते ही श्री विन्देश्वरी प्रसाद जी ने वहीं, मुगलसराय में ही रेलवे में नौकरी करली। वहां रेलवे में उस समय नाना हजारीलाल जी के बहुत से शिष्य थे जिससे सभी की सहानुभूति उनको प्राप्त हुई और विन्देश्वरी प्रसाद जी वहां 'मास्टर साहब' के नाम से ही सम्बोधित होने लगे। इस प्रकार वह अपने पिता का कुछ हाथ बटाने के योग्य हुए और लालबहादुर जी उनकी देख-रेख मे कलम तथा तख्ती संभालने लगे और 'कायदे से' बैठने लगे। नाना के परिवार मे पहले मौलवी साहब ही पढने को बैठना सिखाते थे। यह पढना कम था और मौलवी साहब की खिदमत करना ज्यादा। शाइस्तगी अर्थात शिष्टता सीखना, यही शिक्षा का भूषण समाज मे स्वीकृत था।

मैने इनसे एक-दो साल पहले मौलवी बूदन खा से दीक्षा ली जो मुगलसराय ही के पास के पथरा गाव के निवासी थे। यह हकीम भी थे। इनके सामने पेट के दर्द का बहाना भी कभी लाभप्रद न होता था। लालबहादुर जी को तो कभी फूल की छड़ी से भी इन्होने नही छुआ क्योंकि उनके वह 'नाना मौलवी' थे। हाँ, मैंने उनसे काफी कान उमेठवाए है। मेरे बीमार होने पर इन्ही की दवा लाभ करेगी मेरा भी कुछ ऐसा ही विश्वास उन पर था। लालबहादुर जी मौलवी साहब के यहां जब 'बैठना' सीख रहे थे उस समय तक मै स्कूल में प्रारम्भिक दर्जे मे भर्ती हो गया था। लालबहादुर जी शाइस्तगी (शिष्टता) की मूर्ति थे। उर्दू भाषा से उनको दिलचस्पी थी तथा आठवे दर्जे तक वह उर्दू के विद्यार्थी रहे और इसका अच्छा ज्ञान उन्हे हो चुका था। नाना दरबारीलाल जी ने उन्हे उर्दू मे उनको पहला पत्र लिखने पर एक उर्दू की पुस्तक इनाम मे दी थी, जो इनके पास बहुत दिनों तक रही। आठवे दर्जे के बाद उन्होने एकाएक अपना विषय उर्दू से हिन्दी कर दिया और परिश्रम से उसका अध्ययन भी किया।

मामा विन्देश्वरी प्रसाद जी कुश्तीबाज थे। डील-डौल के अच्छे थे। दूध, घी, तथा गोश्त खाने का उन्हे शौक था। वह हम लोगो को भी खिलाते थे पर वह अन्त तक लालबहादुर जी को मांस खिलाने में सफल नहीं हुए। प्रलोभन देने पर भी उन्होने मास कभी छुआ तक नहीं, खाने की कौन कहे-विन्देश्वरी प्रसाद जी लगभग रोज मास खाने के आदी थे। इसके लिए उन्होने बहुत से कबूतर भी पाल

रखे थे। यो तो नाना हजारोलाल जो भी मास के शौकीन थे पर लकवे की बीमारी के बाद पक्षियों क मास उन्हे लाभदायक बताया गया। जैसे—कबूतर, बटेर, तीतर आदि का। इस सिलसिले मे कबूत पाले गये और बाद मे बिन्देश्वरी प्रसाद जी को इसका चस्का पड़ गया। कबूतर पालना, उड़ाना औ उनमे से दूसरे-तीसरे दिन एक-दो मार कर खा भी जाना उनका काम था।

एक दिन सुबह दरबा खोलकर कबूतरो को उन्होने उड़ाया। अचानक एक कबूतर को हाथ मे लेकर बोले—"आज शाम तुम्हारी बारी है, तुम्हारा शोरवा बनेगा।" शाम को दाने डालने पर सभ कबूतर वापस आये पर वह कबूतर नही आया। इधर-उधर बहुत "आओ, आओ" किया पर उस कबू तर का पता न चला। दूसरे दिन सुबह भी जब वह नही दीख पडा तब लालबहादुर जी को गोद मे उठाकर खपरैल पर चढाया और कहा कि देखो कही खपरे मे छिपा तो नही है। दुर्भाग्य से लालबहादुर जी को वह कबूतर एक खपरे के नीचे छिपा दीख पडा। लालबहादुर जी ने कहा—"हा मामा, खपरे मे है।"

मामा ने कहा—"निकालो!" लालबहादुर जी कुछ हिचकिचाए। मामा बिन्देश्वरी प्रसाद जी ने डाटा—"निकालो, निकालता क्यो नही!"

लालबहादुर जी ने डरते-डरते कहा—"आप उसे खा जाए गे!"

मामा ने फिर डाटा पर, उन्होंने फिर एक बार कहा—"आप उसे मार डालेगे!" मामा ने कहा—"निकालो, नही खाए गे!" लालबहादुर जी ने आश्वासन पाकर खपरे के नीचे से कबूतर पकड़ कर मामा को दे दिया और उन्होने इनको नीचे गोद से उतार दिया। मामा बिन्देश्वरी प्रसाद जी हठ मे आ गये और नही माने। उस कबूतर को मारा, पकाया और खाया।

लालबहादुर जी दुखी हो गए। नानी, माता सब उन्हे ही डाटने लगी—"क्यो तुमने निकाला? क्यो तुमने बताया कि खपरे मे छिपा है?" लालबहादुर जी दोषी बन गये। घर मे कोहराम मच गया। मामा ने 'अम्मा' को गाली तक सुनी। घर का चूल्हा उस दिन दोपहर को बन्द रहा। न खाना बना, न उस दिन किसी ने खाना खाया। लालबहादुर जी ने भी कुछ नही खाया। उस समय यह लगभग छह वर्ष के थे, मै नौ वर्ष का था। यह घटना मुझे भली भाँति याद है। रो-धो कर शाम को खाना बना। लालबहादुर जी ने बहुत कहने पर भी शाम को भी खाना नही खाया और उदास रहे। रात को बिना खाये सो गये। रात को मामा बिन्देश्वरी प्रसाद की 'अम्मा' ने फिर लानत-मलामत की और कहा कि 'तुम्हारे पीछे नन्हे ने इस वक्त भी नही खाया।

मामा को यह जानकर वेदना हुई। उन्होने लालबहादुर जी को जगा कर खाना खिलाना चाहा, पर अम्मा 'नानी' ने छूने तक नही दिया। वह दूसरे दिन सुबह उदास उठे। मामा आये और डाट कर कहा 'क्यो वे, रात खाना क्यो नही खाया? अच्छा, आज तो खाओगे!"

लालबहादुर जी चुप रहे। उनके बराबर कहने पर कि "आज तो खाओगे, आज तो खाओगे," वह तमक कर बोले—"आज भी नही खाऊ ँगा।"

मामा यह सुन अवाक हो गये, बोले—"बेटा, हमसे गलती हुई।"

लालबहादुर जी का साहस बढा, बोले—"मै नही खाऊँगा, आपने यह क्यो कहा कि कबूतर निकालो, नही खाऊ गा!"

लड़के के पिता रेलवे मे नौकर थे। जरूरत से कुछ अधिक कमा लेते थे। लड़के को थोड़ा पढ़ा कर १६ वर्ष की उम्र मे रेलवे मे नौकरी करा दी। वह भी वही मुगलसराय में ही रहते थे। रहने वाले गाजीपुर के थे। इससे बड़ी आसानी रही और इस क्वार्टर से उस क्वार्टर तक ही आना जाना पड़ा। खुशी-खुशी विवाह पूर्ण हो गया।

जिन्दगी का एक रास्ता बनता रहा। जाग्रति की ओर लालबहादुर जी जा रहे थे। साथ-साथ मामा थे ही। वह मुगलसराय से छठवी पास कर चुके थे। अब बनारस अपनी बड़ी मौसी के घर जा कर दयानन्द स्कूल मे सातवीं मे पढ़ने लगे। मौसा रघुनाथप्रसाद के पास आना-जाना था ही। मामा के यहाँ पहुँच जाने पर इनका भी अक्सर वहां आना-जाना होने लगा। एक बार वह मामा के साथ ही दारानगर बनारस के कम्पनी बाग से होते हुए काशी स्टेशन आ रहे थे। मामा आगे-आगे थे और वह पीछे। एक फूल ने इन्हे आकर्षित किया और इन्होंने उसे तोड़ लिया। माली दौड़ा और इनको पकड़ कर डांटा—"क्यो फूल तोड़ा ?"

मामा जी आगे बढ गए थे, उन तक भी आवाज पहुँची और वह भी लौट पड़े। तब तक लालबहादुर जी ने रोकर यह कह कर गलती स्वीकार कर ली थी—"क्षमा करो, मैं बिना बाप का लड़का हूँ।"

यह बात मामा को अच्छी न लगी और अम्मा तक पहुँचा दी गई। अम्मा ने यह सुन कर लालबहादुर जी को गोद मे बैठा कर कहा—"गलती तो थी ही, बाप की दुहाई क्यों दी ?"

लालबहादुर जी ने कुछ लज्जित हो कहा— "मै डर गया था।"

अम्मा ने कहा—"गलती हो सकती है, डरने की क्या बात है, उसे सुधारना चाहिए।"

लालबहादुर जी सदा सचेत रहते थे। घर हो या बाहर, उनके घरेलू या सार्वजनिक जीवन स्तर में कोई अन्तर कभी भी नही रहा। मेरी समझ में कोई गलती उनसे होनी ही असम्भव थी। डरने की बात ही क्या ?

लालबहादुर जी अपनी सामाजिक कुप्रथाओं तथा कमजोरियो को कुछ समझने लगे थे। जात-पात का भेद उन्हे अच्छा न लगता। यह उनको खटकने लगा। वह लगभग १२ वर्ष के थे। उनका नाम स्कूल मे लालबहादुर वर्मा लिखा गया था। उस समय नाना हजारीलाल जी के स्थान पर मुख्य अध्यापक मिर्जापुर के ही श्री बसन्तलाल वर्मा थे। वह ननिहाल परिवार के सम्बन्धी भी थे। लालबहादुर वर्मा ने कहा कि मेरा नाम शुद्ध करके केवल लालबहादुर होना चाहिए। श्री बसन्तलाल वर्मा को बहुत आश्चर्य हुआ और कहा—"क्या गलती है, वर्मा क्यो काटा जाय ?"

उन्होने कहा—"जात-पांत मिट जानी चाहिए।" लालबहादुरजी का प्रार्थना-पत्र स्वीकृत हो गया। नाना दरबारीलाल इससे खुश तो नही थे पर मामा बिन्देश्वरीप्रसाद इससे प्रसन्न हुए और लालबहादुरजी की प्रशंसा की। मुझे भी यह गौरव बना रहा कि मेरे नाम के साथ यह फालतू चीज वर्मा या श्रीवास्तव थी ही नही।

ननिहाल के परिवार मे नाना लोगों के बाद मादक वस्तु का कोई प्रयोग न था। इस कारण शुरू से ही तम्बाकू शराब या और कोई वस्तु कभी इस्तैमाल हुई ही नही। लालबहादुरजी के सामने

लड़के के पिता रेलवे मे नौकर थे। जरूरत से कुछ अधिक कमा लेते थे। लड़के को थोड़ा पढा कर १७ वर्ष की उम्र मे रेलवे मे नौकरी करा दी। वह भी वही मुगलसराय मे हो रहते थे। रहने वाले गाजीपुर के थे। इससे वड़ी ग्रासानी रही ग्रौर इस क्वार्टर से उस क्वार्टर तक ही ग्राना जाना पड़ा। खुशी-खुशी विवाह पूर्ण हो गया।

जिन्दगी का एक रास्ता वनता रहा। जाग्रति को ग्रोर लालबहादुर जो जा रहे थे। साथ-साथ मामा थे ही। वह मुगलसराय से छठवी पास कर चुके थे। ग्रब बनारस ग्रपनी बड़ी मौसी के घर जा कर दयानन्द स्कूल मे सातवी मे पढने लगे। मौसा रघुनाथप्रसाद के पास ग्राना-जाना था ही। मामा के यहाँ पहुँच जाने पर इनका भी ग्रक्सर वहा ग्राना-जाना होने लगा। एक बार वह मामा के साथ ही दारानगर वनारस के कम्पनी वाग से होते हुए काशी स्टेशन ग्रा रहे थे। मामा ग्रागे-ग्रागे थे ग्रौर वह पीछे। एक फूल ने इन्हे ग्राकर्षित किया ग्रौर इन्होने उसे तोड़ लिया। माली दौडा ग्रौर इनको पकड कर डाटा—"क्यो फूल तोडा ?"

मामा जी ग्रागे वढ गए थे, उन तक भी ग्रावाज पहुँचो ग्रौर वह भी लौट पडे। तब तक लालवहादुर जी ने रोकर यह कह कर गलती स्वोकार कर ली थी—"क्षमा करो, मै बिना बाप का लडका हूँ।"

यह वात मामा को ग्रच्छी न लगो ग्रौर ग्रम्मा तक पहुँचा दी गई। ग्रम्मा ने यह सुन कर लालवहादुर जी को गोद मे बैठा कर कहा—"गलती तो थी ही, बाप की दुहाई क्यो दी ?"

लालवहादुर जी ने कुछ लज्जित हो कहा—"मै डर गया था।"

ग्रम्मा ने कहा—"गलती हो सकती है, डरने की क्या बात है, उसे सुधारना चाहिए।"

लालवहादुर जी सदा सचेत रहते थे। घर हो या बाहर, उनके घरेलू या सार्वजनिक जोवन स्तर मे कोई ग्रन्तर कभी भी नही रहा। मेरी समझ मे कोई गलतो उनसे होनी ही ग्रसम्भव थी। डरने की वात ही क्या ?

लालवहादुर जी ग्रपनो सामाजिक कुप्रथाग्रो तथा कमजोरियो को कुछ समझने लगे थे। जात-पात का भेद उन्हे ग्रच्छा न लगता। यह उनको खटकने लगा। वह लगभग १२ वर्ष के थे। उनका नाम स्कूल मे लालवहादुर वर्मा लिखा गया था। उस समय नाना हजारीलाल जो के स्थान पर मुख्य ग्रध्यापक मिर्जापुर के ही श्री वसन्तलाल वर्मा थे। वह ननिहाल परिवार के सम्वन्धी भो थे। लालबहादुर वर्मा ने कहा कि मेरा नाम शुद्ध करके केवल लालवहादुर होना चाहिए। श्री वसन्तलाल वर्मा को वहुत ग्राश्चर्य हुग्रा ग्रौर कहा—"क्या गलती है, वर्मा क्यो काटा जाय ?"

उन्होने कहा—"जात-पात मिट जानी चाहिए।" लालवहादुरजी का प्रार्थना-पत्र स्वोकृत हो गया। नाना दरवारोलाल इससे खुश तो नही थे पर मामा विन्देश्वरीप्रसाद इससे प्रसन्न हुए ग्रौर लालवहादरजी की प्रशसा की। मुझे भी यह गौरव वना रहा कि मेरे नाम के साथ यह फालतू चीज वर्मा या श्रीवास्तव थी ही नही।

ननिहाल के परिवार मे नाना लोगो के वाद मादक वस्तु का कोई प्रयोग न था। इस कारण शुरू से ही तम्बाकू शराव या ग्रोर कोई वस्तु कभी इस्तैमाल हुई ही नही। लालवहादुरजी के सामने

ऐसा कभी प्रश्न ही नही आया और न वह इन चोजों को तरफ झुके। मौसा के परिवार का भी यही हाल था—न गोश्त, न शराब और न तम्बाकू। लालबहादुरजी इनसे सदा अछूते रहे।

उनका चरित्र-बल बढता गया, चेतना पैदा होती गई। लालबहादुरजो सबके स्नेह-भाजन बन गए—घर में, मोहल्ले में, स्कूल' में। एक बार मेरे साथ दो-चार लड़के थे और लालबहादुरजी थे। मैने एक लड़के को मारा, लालबहादुरजी ने मेरी कुछ मदद जरूर की। उसकी मा उलाहना लेकर आई और 'अम्मा' से कहा। सयोग से लालबहादुरजी वहीं थे। उनको देखकर उसने कहा कि इन्होने मेरे लड़के को मारा और गाली दी है। अम्मा ने पूछा—"क्या बात है ?"

लालबहादुरजी ने कहा—"मैने नही मारा। मामा ने जरूर मारा। मैंने मामा को सहारा दिया पर गाली तो हम लोग जानते नही।"

गाली देने पर ही लड़के को मामा ने मारा था—यह बात सही थी। लालबहादुरजी तो गाली जानते ही न थे, देना तो दूर रहा। मै कुछ गाली उस समय तक जान चुका था जो सुअर, पाजी आदि तक सीमित थी। लालबहादुरजो इनसे भी अनभिज्ञ थे।

आज उनकी वह अवस्था थी जब वह महसूस करने लगे थे कि अपना वस्त्र, खान-पान, पहनावा आदि स्वदेशी होना चाहिए। कायस्थ परिवार मे पायजामा उस समय भी व्यापक था, शेरवानी थी ही। पर लालबहादुरजी ने श्री बिन्देश्वरीप्रसाद की प्रेरणा तथा आर्य समाज से प्रभावित होकर सदा धोती-कुरता को ही स्वीकार किया। उनकी यह भावना दिन-पर-दिन प्रबल होती गई। खादी उन पर छा गई। लालबहादुरजी धोती-कुरता के प्रतीक बन गए।

लालबहादुरजी लगभग १३ वर्ष के थे जब वह बनारस गए और दारानगर मे मौसी के यहाँ रहकर उन्होंने हरिश्चन्द्र स्कूल मे पढ़ना शुरू किया। वहाँ गंगा में तैरने का अभ्यास बढाने का मौका मिला। शौक में कभी-कभी गंगा भी पार कर जाते थे। कभी-कभी इसको गलत ढग से पत्रों मे चित्रित किया गया है। वह कभी भी दो पैसे को तंग नहीं थे और न कभी रामनगर जाने की उन्हें उत्कण्ठा ही रहती थी। पढ़ते थे बनारस में और रहते भी थे बनारस मे। इस समय तक ननिहाल का परिवार मिर्जापुर में आ गया था। नाना दरबारीलाल रिटायर हो गये थे। मामा बिन्देश्वरी प्रसाद मुगलसराय से बदल गए थे। माता, रामदुलारीजी मिर्जापुर मे ही अपने चाचा और अम्मा के पास सुन्दरीदेवी के साथ रहती थी। रामनगर के लोग जो नौकरी में बाहर रहते थे तथा कुछ रामनगर में रहते थे, वहां जाती-आती थीं।

मुंशी बाबू नन्दलाल, लालबहादुरजी के अपने दादा, उस समय बनारस के चेतगंज मे ही रहते थे पर उनसे कोई सम्पर्क न था। वह लगाव रखना भी नही चाहते थे—न उनसे, न रामनगर वालो से और न रिश्तेदारों के नाते हमारे यहाँ से। मूल कारण 'विमाता' दादी का होना था। यही मूल कारण था जिसने माता रामदुलारी को ननिहाल का सहारा पकड़ने को मजबूर किया। १९२१ मे लालबहादुर जी तथा मौसे के बड़े लड़के ज्ञानस्वरूपजी और इधर मामा पुरुषोत्तमलाल असहयोग आन्दोलन मे शामिल हो गए। नाना दरबारीलालजी को अपना नक्शा बिगड़ता नजर आया। शायद उनके देहान्त होने के कारणो मे एक इसका सदमा भी था। उनका देहान्त १९२१ मे हो गया। लालबहादुरजी को कभी-कभी-कभी इसका दुख होता :

लड़के के पिता रेलवे में नौकर थे। जरूरत से कुछ अधिक कमा लेते थे। लड़के को थोड़ा पढा कर १७ वर्ष की उम्र मे रेलवे मे नौकरी करा दी। वह भी वही मुगलसराय मे ही रहते थे। रहने वाले गाजीपुर के थे। इससे बड़ी आसानी रही और इस क्वार्टर से उस क्वार्टर तक ही आना जाना पड़ा। खुशी-खुशी विवाह पूर्ण हो गया।

जिन्दगी का एक रास्ता बनता रहा। जाग्रति की ओर लालबहादुर जो जा रहे थे। साथ-साथ मामा थे ही। वह मुगलसराय से छठवी पास कर चुके थे। अब बनारस अपनी बड़ी मौसी के घर जा कर दयानन्द स्कूल मे सातवी मे पढ़ने लगे। मौसा रघुनाथप्रसाद के पास आना-जाना था ही। मामा के यहाँ पहुँच जाने पर इनका भी अक्सर वहा आना-जाना होने लगा। एक बार वह मामा के साथ ही दारानगर बनारस के कम्पनी बाग से होते हुए काशी स्टेशन आ रहे थे। मामा आगे-आगे थे और वह पीछे। एक फूल ने इन्हे आकर्पित किया और इन्होने उसे तोड़ लिया। माली दौडा और इनको पकड कर डाटा—"क्यो फूल तोडा ?"

मामा जी आगे वढ गए थे, उन तक भी आवाज पहुँची और वह भी लौट पडे। तब तक लालवहादुर जी ने रोकर यह कह कर गलती स्वीकार कर ली थी—"क्षमा करो, मै बिना बाप का लड़का हूँ।"

यह वात मामा को अच्छी न लगी और अम्मा तक पहुँचा दी गई। अम्मा ने यह सुन कर लालवहादुर जी को गोद मे बैठा कर कहा—"गलती तो थी ही, बाप की दुहाई क्यो दी ?"

लालवहादुर जी ने कुछ लज्जित हो कहा— "मै डर गया था।"

अम्मा ने कहा—"गलती हो सकती है, डरने की क्या बात है, उसे सुधारना चाहिए।"

लालवहादुर जी सदा सचेत रहते थे। घर हो या बाहर, उनके घरेलू या सार्वजनिक जीवन स्तर मे कोई अन्तर कभी भी नही रहा। मेरी समझ मे कोई गलती उनसे होनी ही असम्भव थी। डरने की वात ही क्या ?

लालवहादुर जी अपनी सामाजिक कुप्रथाओ तथा कमजोरियो को कुछ समझने लगे थे। जात-पात का भेद उन्हे अच्छा न लगता। यह उनको खटकने लगा। वह लगभग १२ वर्ष के थे। उनका नाम स्कूल मे लालवहादुर वर्मा लिखा गया था। उस समय नाना हजारीलाल जी के स्थान पर मुख्य अध्यापक मिर्जापुर के ही श्री वसन्तलाल वर्मा थे। वह ननिहाल परिवार के सम्बन्धी भी थे। लालवहादुर वर्मा ने कहा कि मेरा नाम शुद्ध करके केवल लालबहादुर होना चाहिए। श्री बसन्तलाल वर्मा को वहुत आश्चर्य हुआ और कहा—"क्या गलती है, वर्मा क्यो काटा जाय ?"

उन्होने कहा—"जात-पात मिट जानी चाहिए।" लालवहादुरजी का प्रार्थना-पत्र स्वीकृत हो गया। नाना दरवारीलाल इससे खुश तो नही थे पर मामा बिन्देश्वरीप्रसाद इससे प्रसन्न हुए और लालवहादुरजी की प्रशंसा की। मुझे भी यह गौरव बना रहा कि मेरे नाम के साथ यह फालतू चीज वर्मा या श्रीवास्तव थी ही नही।

ननिहाल के परिवार मे नाना लोगो के बाद मादक वस्तु का कोई प्रयोग न था। इस कारण शुरू से ही तम्बाकू शराब या और कोई वस्तु कभी इस्तैमाल हुई ही नही। लालवहादुरजी के सामने

ऐसा कभी प्रश्न ही नहीं आया और न वह इन चीजों की तरफ झुके। मौसा के परिवार का भी यही हाल था—न गोश्त, न शराब और न तम्बाकू। लालबहादुरजी इनसे सदा अछूते रहे।

उनका चरित्र-बल बढता गया, चेतना पैदा होती गई। लालबहादुरजी सबके स्नेह-भाजन बन गए—घर में, मोहल्ले में, स्कूल में। एक बार मेरे साथ दो-चार लड़के थे और लालबहादुरजी थे। मैने एक लड़के को मारा, लालबहादुरजी ने मेरी कुछ मदद जरूर की। उसकी मां उलाहना लेकर आई और 'अम्मा' से कहा। सयोग से लालबहादुरजी वही थे। उनको देखकर उसने कहा कि इन्होंने मेरे लड़के को मारा और गाली दी है। अम्मा ने पूछा—"क्या बात है ?"

लालबहादुरजी ने कहा—"मैने नही मारा। मामा ने जरूर मारा। मैनें मामा को सहारा दिया पर गाली तो हम लोग जानते नहीं।"

गाली देने पर ही लड़के को मामा ने मारा था—यह बात सही थी। लालबहादुरजी तो गाली जानते ही न थे, देना तो दूर रहा। मै कुछ गाली उस समय तक जान चुका था जो सुअर, पाजी आदि तक सीमित थी। लालबहादुरजी इनसे भी अनभिज्ञ थे।

आज उनकी वह अवस्था थी जब वह महसूस करने लगे थे कि अपना वस्त्र, खान-पान, पहनावा आदि स्वदेशी होना चाहिए। कायस्थ परिवार मे पायजामा उस समय भी व्यापक था, शेरबानी थी ही। पर लालबहादुरजी ने श्री बिन्देश्वरीप्रसाद की प्रेरणा तथा आर्य समाज से प्रभावित होकर सदा धोती-कुरता को ही स्वीकार किया। उनकी यह भावना दिन-पर-दिन प्रबल होती गई। खादी उन पर छा गई। लालबहादुरजी धोती-कुरता के प्रतीक बन गए।

लालबहादुरजी लगभग १३ वर्ष के थे जब वह बनारस गए और दारानगर मे मौसी के यहाँ रहकर उन्होंने हरिश्चन्द्र स्कूल में पढना शुरू किया। वहाँ गंगा में तैरने का अभ्यास बढ़ाने का मौका मिला। शौक में कभी-कभी गंगा भी पार कर जाते थे। कभी-कभी इसको गलत ढंग से पत्रों में चित्रित किया गया है। वह कभी भी दो पैसे को तंग नही थे और न कभी रामनगर जाने की उन्हें उत्कण्ठा ही रहती थी। पढ़ते थे बनारस मे और रहते भी थे बनारस मे। इस समय तक ननिहाल का परिवार मिर्जापुर में आ गया था। नाना दरबारीलाल रिटायर हो गये थे। मामा बिन्देश्वरी प्रसाद मुगलसराय से बदल गए थे। माता, रामदुलारीजी मिर्जापुर में ही अपने चाचा और अम्मा के पास सुन्दरीदेवी के साथ रहती थीं। रामनगर के लोग जो नौकरी मे बाहर रहते थे तथा कुछ रामनगर में रहते थे, वहां जाती-आती थीं।

मुंशी बाबू नन्दलाल, लालबहादुरजी के अपने दादा, उस समय बनारस के चेतगंज में ही रहते थे पर उनसे कोई सम्पर्क न था। वह लगाव रखना भी नही चाहते थे—न उनसे, न रामनगर वालो से और न रिश्तेदारों के नाते हमारे यहाँ से। मूल कारण 'विमाता' दादी का होना था। यही मूल कारण था जिसने माता रामदुलारी को ननिहाल का सहारा पकड़ने को मजबूर किया। १९२१ मे लालबहादुर जी तथा मौसे के बड़े लड़के ज्ञानस्वरूपजी और इधर मामा पुरुषोत्तमलाल असहयोग आन्दोलन मे शामिल हो गए। नाना दरबारीलालजी को अपना नक्शा बिगड़ता नजर आया। शायद उनके देहान्त होने के कारणो मे एक इसका सदमा भी था। उनका देहान्त १९२१ मे हो गया। लालबहादुरजी का कभी-कभी-कभी इसका दुख होता :

लालबहादुरजी एक परिश्रमी कर्त्तव्यशील विद्यार्थी थे। वह विद्यार्थी-जीवन से ही सदा स्वावलम्बी बनने का प्रयास करते रहे। विद्यापीठ में पढ़ते समय पढाते भी थे। जहाँ रहते सबको अपनी सेवा मधुर वाणी तथा शिष्टता से संतुष्ट रखते। इन्हें खेल-कूद में अधिक रुचि न था। आपस में कभी-कभी बहुत शिष्ट मजाक कर बैठते थे। शास्त्री जी सदा आत्मनिर्भर रहते थे। उनके आत्मनिर्भर होने का अर्थ यह था कि जो वस्तु जितनी भी उपलब्ध हो, उतने में ही सन्तुष्ट रहना। अपनी आकांक्षाओं की लहर में न बहना। अपनी आवश्यकताओं को सीमित रखना। बोलना भी, उतना ही जितना जरूरी हो। वह अपने सभी काम स्वयं करने की कोशिश करते थे। १९२५ में लालबहादुर जी काशी विद्यापीठ से आचार्य नरेन्द्रदेव, डाक्टर भगवानदास आदि से आशीर्वाद प्राप्त कर लाहौर चले गए।

लालबहादुर जी को उस समय ६० रुपए मासिक सहायता मिलनी आरम्भ हुई। १९२३ में छोटी बहन सुन्दरी देवी का विवाह रामनगर से मामा तथा रामनगर वालों के सहयोग से श्री शम्भुशरण, वकील, हाईकोर्ट, से सम्पन्न हुआ। यह आदर्श विवाह था। कोई लेन-देन न था। सेवा-सत्कार तक ही सब सीमित था। इसके पहले 'अम्मा' नानी यशोदा देवी, का १९२२ में स्वर्गवास हो गया। इसके बाद से ही लालबहादुर जी आत्मनिर्भर होकर लाहौरवासी हो गए और हम लोगों का सम्पर्क मामा-भान्जे तक सीमित हो गया, पर व्यवहार तथा ननिहाल के परिवार का शुभ-चिन्तन एक-सा बना रहा। माता रामदुलारी जी अब कभी मिर्जापुर, कभी रामनगर तथा कभी लालबहादुर जी के साथ रहती। १९२८ में विवाह सम्पन्न होने के पश्चात् वह ज्यादातर बेटे-पतोहू के साथ ही रहती।

लालबहादुर जी किसी को भी सद्भावना की दृष्टि यदि एक बार भी अपनी ओर देख लेते तो उसके सदा आभारी रहते। वह उसे कभी भूलते नही थे—मित्र हो, चाहे रिश्तेदार अथवा राजनीति का साथी। लालबहादुर जी को लाहौर जाने पर ३० रुपये का पहला वेतन जब मिला, उन्होंने फौरन बीमा द्वारा अपनी कृतज्ञतास्वरूप मौसा रघुनाथप्रसाद के चरणों में भेट किया। मौसा और मौसी प्रसन्नता में रो पड़े और बोले कि ननकू ने कुल वेतन भेज दिया अब अपना काम कैसे चलावेगा, इतनी इज्जत तो मेरे लड़के भी शायद न करेंगे। उन्होंने प्रेम से एक रुपया रखकर आशीर्वाद-सहित बाकी रुपया फौरन वापस कर दिया।

शास्त्री जी का घरेलू जीवन अत्यन्त सादा, सरल तथा शिष्टतापूर्ण था। जिससे जो व्यवहार लड़कपन से वह करते आए, जीवन-पर्यन्त उससे वैसा ही व्यवहार करने की सदा चेष्टा करते रहे। व्यस्त जीवन में भी यथासम्भव दुख-सुख के अवसरों पर हिस्सा बंटाने की इच्छा रखते। यथाशक्ति समय निकाल कर पहुँचते और यथायोग्य हाथ भी बंटाते। कभी चूक जाते तो हृदय से दुखी हो जाते और क्षमा याचना भी करते।

हेम बरुआ

लौह संकल्प के धनी शास्त्रीजी

जब नेहरू जी का स्वास्थ्य जवाब देने लगा था तब अक्सर यह प्रश्न उभर कर आता था कि नेहरू जी के बाद कौन प्रधान मन्त्री होगा ? लेकिन जब शास्त्री जी प्रधान मन्त्री बन गए तब यह प्रश्न पूछा जाने लगा कि नेहरूजी के बाद क्या होने वाला है ? लेकिन शास्त्रीजी के व्यक्तित्व का सबसे अधिक प्रभावशाली पक्ष यह था कि उन्होने अल्पकाल में ही न केवल नेहरू जी के स्वप्नो को साकार कर दिया, अपितु भारत-जैसे विशाल देश के प्रधान मन्त्री के रूप में अपनी स्थिति भी मजबूत कर ली। शास्त्री जी ने देश को आशा से अधिक दिया। स्वर्गवासी शास्त्री जी को राष्ट्र को यह सबसे बड़ी देन थी जो पहले कल्पना में भी नहीं आयी थी।

क्षीणकाय किन्तु संकल्पशील

शास्त्री जी शरीर से क्षीण होते हुए भी लौह-संकल्प वाले राजनेता थे। अतः अब यह सोचना भी मूर्खता की बात हो गई है कि विशाल काया मे ही विशाल मस्तिष्क होता है। आचरण से विनम्र और कोमल होते हुए भी शास्त्री जी का दिमाग और उनकी दृष्टि अप्रत्याशित रूप से साफ थी। यह गुण दुर्लभ ही होता है। इस लघुकाय मानव के इन गुणो ने ही उसे कोटि-कोटि भारतवासियो का स्नेह-भाजन बना दिया था। लोगों को उनसे नजदीकी महसूस होती थी क्योंकि वह जन-साधारण के तौर-तरीकों को ही प्रतिबिम्बित करते थे। और जब ११ जनवरी के दुर्भाग्यपूर्ण दिवस को उनका शव ताशकन्द से विमान द्वारा पालम लाया गया तो उपस्थित जन-समुदाय फूट-फूट कर रो पड़ा। सबसे अधिक आश्चर्य की बात तो यह है कि शास्त्री जी ने इतने अल्प कार्यकाल मे ही करोड़ों देशवासियों का दिल जीत लिया था और वह भी अजीब खामोशी के साथ। इस सदर्भ में अब यह प्रश्न उपस्थित होता है कि उनके पास आखिर ऐसा कौन-सा जादू का डण्डा था जो यह चमत्कार सम्भव हो सका ?

सद्गुणों का भण्डार

यह तथ्य है कि शास्त्री जी व्यक्तिगत आकर्षण के धनी थे। यह भी तथ्य है कि शास्त्री जी निष्ठावान्, चरित्रवान् और सिद्धान्तवादी पुरुष थे। यह भो सवमान्य तथ्य है कि गांधो जी और टैगोर सरीखे महामानवों द्वारा पुनःस्थापित भारतीय सांस्कृतिक मूल्यो के प्रति उनकी आस्था और देश-भक्ति

से उनके विरोधियों को भी शंका नहीं थी। लेकिन क्या शास्त्री जी को करोड़ों नर-नारियों का पूज्य बनाने के लिए ये गुण पर्याप्त थे।

प्रतिभाशाली व्यक्ति क्षितिज पर अकस्मात् ही उदित नहीं हो जाता। उसके पीछे एक पीढ़ी के प्रयास होते है। इसी तरह, हर महत्वपूर्ण उपलब्धि की पृष्ठभूमि मे एक सुसम्पन्न एव प्रेरणास्पद इतिहास होता है। सार्वजनिक जीवन मे यह इतिहास प्राय. निष्काम सेवा, लगन और बलिदानों पर आधारित होता है। शास्त्री जी का जीवन इस दृष्टि से पूर्ण था। उनमे बाह्य आडम्बर का भी अभाव था। उन्हे कोई भी व्यक्तिगत कठिनाई निर्दिष्ट पथ से डिगा नही सकती थी। शास्त्री जी का आदश कल्पना की वस्तु नही थी। उनके लिए उनका आदर्श पथ-प्रदर्शन ज्योति-रेखा के समान था जो सदैव चलते रहने के लिए प्रेरित करता था—चरैवेति, चरैवेति, चरैवेति।

शास्त्री जी-नेहरू जी

प्रतिपक्ष मे सत्तारूढ दल का विश्वास ससदीय लोकतन्त्र की एक कसौटी है। शास्त्री जी मे यह गुण पर्याप्त मात्रा में था। नेहरू जी मे भी यह विश्वास विद्यमान था लेकिन यह समग्र प्रतिपक्ष की वजाय प्रतिपक्ष के कतिपय व्यक्तियो पर अधिक जोर देते थे जब कि शास्त्री जी कतिपय व्यक्तियो की अपेक्षा प्रतिपक्ष पर समग्रतया विश्वास करते थे। नेहरू जी से झगड़ने मे आनन्द आता था, पर शास्त्रीजी से झगड़ना असम्भव था।

शास्त्री जी की कार्यविधि अपनी अलग थी जो उनके स्वभाव के अनुरूप थी। वह विनम्र, शालीन, गम्भीर और मिलनसार थे तथा उन्हे विविध मनोदशाओं से तालमेल बिठाने की आश्चर्यजनक क्षमता प्राप्त थी। कहावत है कि वास्तविक महापुरुष की महानता का एक लक्षण यह है कि वह अपने और दूसरो के बीच दीवार खड़ी नही करता। शास्त्री जी मे यह गुण था। इस गुण ने उनकी महानता मे घटोतरी नही की वल्कि उसे वढाया ही।

सबसे बड़ी देन

हमारे राष्ट्र-जीवन मे विचारो का उदारीकरण शास्त्रीजी का सबसे बड़ा योगदान है। यह एक स्वस्थ प्रक्रिया है जिसने हमारे लोकतन्त्र को एक नया आयाम दिया। नेहरूजी शाही शान-शौकत से राज-काज चलाते थे और उनके साथियो के लिए उनसे मतभेद प्रकट करना भी बड़ा मुश्किल था। यह बात नही कि नेहरूजी मतभेदो को पसन्द नही करते थे। लेकिन व्यवहारत यह सम्भव नही हो पाता था। सौभाग्य से, शास्त्रीजी के साथ बात दूसरी ही थी। सक्षेप मे, नेहरूजी शास्त्रीजी नही थे और शास्त्रीजी नेहरूजी नही थे।

क्रोध-जेता महापुरुष

शास्त्रीजी मे मानसिक सतुलन और सयम गजब का था। वह कभी-कभी ही क्रुद्ध होते थे। शास्त्रीजी जानते थे कि लोग नेहरूजी के क्रोध को तो सहन कर लेते थे पर उनके क्रोध को सहन नहीं

कर सकेंगे। नेहरूजी दूसरे ही सांचे में ढले थे। वह एक बुद्धिजीवी थे और भारतीय जीवन की ऊँच-नीच के अनुरूप स्वयं को ढाल लेते थे।

लड़ाकूपन भारतीय राजनीतिक जीवन के संदर्भ में एक ऐसा शब्द है जिसके बारे में सबसे ज्यादा गलतफहमी रही है। शास्त्रीजी प्रचलित शब्दार्थ के अनुसार लड़ाकू नहीं थे लेकिन उनके कोमल चरित्र के नीचे शक्ति का ज्वालामुखी छिपा हुआ था। यह ज्वालामुखी उस समय प्रकाश में आया जब पाकिस्तान ने भारत पर हमला किया। यह ठीक है कि शास्त्रीजी शान्ति-प्रेमी थे। पर वह शांति को समर्पण का पर्याय नही मानते थे। नेहरूजी ने सन् १९६२ के चीनी-आक्रमण से जो सबक सीखा था उसका पूर्ण सदुपयोग शास्त्रीजी ने किया। यह दुर्भाग्यपूर्ण किन्तु सही बात है कि चीनी आक्रमण ने नेहरूजी के प्राण ले लिये जबकि पाक आक्रमण ने शास्त्रीजी की प्रतिष्ठा में श्रीवृद्धि की।

विनोदप्रियता

शास्त्रीजी में विनोदप्रियता भी काफी थी जिससे उनके जीवन और व्यक्तित्व को नया रंग मिला। वह अपने ऊपर भी मजाक कर सकते थे। उन्होने मेरी पुस्तक 'असम साहित्य' के प्रकाशन समारोह मे भाषण देते हुए कहा था, 'मै पुनः एक बार जेल जाना चाहता हूँ, ताकि मुझे पढ़ने-लिखने का पर्याप्त अवकाश मिल सके। लेकिन जब तक श्री हेम बरुआ सत्तारूढ़ नही हो जाते तब तक मेरे जेल जाने की संभावना नही है।' श्रोताओं के बीच में से मैने आवाज लगाई, 'मै आपको अवश्य जेल भेज दूंगा।' श्रोतागण अट्टहास कर उठे। शास्त्रीजी भी खूब हँसे। यह उनकी खुशमिजाजी का ज्वलंत प्रमाण था।

लेकिन इससे पहले कि मै जेल भेज पाता, वह इस लोक से ही विदा हो गये। वह ऐसे लोक को पधार गए है जहाँ से कोई यात्री कभी लौट कर नहीं आया। शास्त्रीजी के लिए इस अन्तर्लोक-यात्रा के पथ पर गुलाब की पंखुड़िया बिछी थी और हम लोगों के लिए—केवल आँसू।

●

ताराचंद वर्मा

भारतीय जन-जीवन के प्रतीक

भारतीय जन-जीवन के प्रतीक श्री लालबहादुर शास्त्री ने अपने जीवन मे कबीर का निम्नलिखित पद चरितार्थ कर दिखाया—

धो दे, धो दे री धोबिनियाँ
मेरी रंग भरी चूंदरिया।
जब आये हम जगत मे
जग हँसे हम रोये
ऐसो करनी कर चले
हम हँसे जग रोये।
धो दे, धो दे·······

शास्त्री जी ने ससार को शांति का संदेश देते हुए अपने जीवन-पुष्प को चढा दिया। वे आज हँस रहे हैं, और भारत ही नहीं सारी दुनिया उनके वियोग मे रो रही है।

शास्त्री जी को निकट से देखने का मौका मुझे नवम्बर १९६४ में मिला। प्रो० कृष्णविहारी सहल के आग्रह से मैं उनके साथ १५ नवम्बर १९६४ को सीकर गया था, जहाँ शास्त्री जी ने आँखो के अस्पताल का उद्घाटन किया था। तभी मुझे निकट से देखने और बात करने का अवसर मिला था। अभिवादन का उत्तर देते हुए उन्होंने पूछा था, "क्या करते हो?" "हिन्दी पुस्तको के प्रकाशन का कार्य कर रहा हूँ—" उत्तर मे मैंने कहा। इस पर शास्त्री जी ने कहा—"आप हिन्दी की सेवा मे लगे हुए हैं, लगे रहिये। इन्हीं सब साधनो से हिन्दी जनगण की भाषा बन सकेगी—कुछ अनुवाद भी करवाते रहिये।" इसी बीच वहा के किसी कार्यकर्ता ने उन्हे आगे चलने को कहा, मैंने अभिवादन किया—और वहीं खड़ा खड़ा सोचता रहा—क्या यही वह व्यक्ति है—जिसने हमारे देश की बागडोर सम्भाल रखी है। सरल सीधे स्वभाव वाला यह व्यक्ति राजनीति के झंझावातो को कैसे सहन करता होगा? इन्हीं विचारो में खोया हुआ मेरा मन सोचने लगा, कुछ भी हो, यह जनता का आदमी है जनता के लिए है। और निश्चित ही गरीबों का बड़ा जबर्दस्त हिमायती होगा। और आज सोचता हूँ—हुआ भी वही। शास्त्री जी ने अभावों के थपेड़े खाये हैं वे जानते थे कि गरीबी क्या है? उन्हें पता था झोपड़ियों मे रहने वाले प्राणियो की क्या हालत है और यही कारण है कि फिर से गाँवो मे लौट चलने का आग्रह उन्होंने किया। गाँवो का

जीवन-स्तर सुधरे-वहाँ के लोग सुख-सुविधा से रह सकें—इन कार्यों की ओर शास्त्री जी का ध्यान सदैव से ही रहा। जन-साधारण में शास्त्री जी के प्रति जो श्रद्धा थी, उसका मूल कारण भी यही था कि वे वस्तुतः तहेदिल से जनता की कठिनाइयो को दूर करना चाहते थे। उपदेशों से दूर रहकर कार्य करने में लगे रहने वाला यह व्यक्ति जनता मे विश्वास का पर्यायवाची बना हुआ था। राष्ट्रनेता के रूप मे इतने कम समय में किसी व्यक्ति ने जनता का इतना विश्वास प्राप्त किया हो, मेरी जानकारी में शास्त्रीजी के अलावा दूसरा कोई व्यक्ति नही है। यह शास्त्री जी की अभूतपूर्व सफलता कही जा सकती है। वस्तुतः शास्त्री जी भारतीय जन-जीवन के प्रतीक थे। शास्त्री जी को जानने का अर्थ था—भारतीय जन-जीवन को जानना।

शास्त्री जी के नाम के साथ मुझे इतिहास की एक घटना याद हो आती है। आल्हा-ऊदल बड़े साहसी एवं वीर थे। उस समय के वीर भी उनकी तलवार की दहशत सुन कर ही बेहोश हो जाते थे। किन्तु यह बात भी विख्यात है कि कलचुरियो से दोस्ती करने मे आल्हा ने अद्वितीय भूमिका अदा की। वस्तुत. बात यह थी कि कलचुरियो की सीमा जैजामुर्क्ति (महोबा) से मिलती-जुलती थी। कलचुरी आये दिन महोबा की सीमा का अतिक्रमण करते थे। कलचुरियो और महोबा के बीच सघर्ष मे आल्हा के पिता और चाचा दोनों ही मारे गये। मा देवल ने अपने इन दोनों पुत्रों (आल्हा-ऊदल) को इसीलिए पाला-पोसा था कि वे बड़े होकर अपने पिता का बदला लेगे और आल्हा-ऊदल ने ऐसा किया भी। कलचुरी युद्ध में पराजित हुए। किन्तु आल्हा ने उन्हे पराजित करके भी बन्दी नही किया बल्कि मित्रता के सूत्र में आबद्ध कर लिया। आल्हा जैसे साहसी एव वीर का भी यह विचार था कि सभी राज्यो को एक सूत्र मे पिरोया जाय ताकि आये दिन रोज-रोज की लड़ाई से जो जन और धन की बर्बादी होती है, उसे बचाया जा सके। ठीक यही भावना भी शास्त्रीजी मे थी। वे विजेता थे किन्तु शाति स्थापना को वे मानवता के लिए वरदान मानते थे—शाति को वे युग-धर्म समझते थे। मूलतः शास्त्री जी मे धर्मराज युधिष्ठिर की तरह शान्ति-भावना विद्यमान थी।

नारायण भक्त

शास्त्रीजी के कुछ संस्मरण

सन् १९६२ ई० के चीन के आक्रमण के बाद पंडित नेहरू का जोधपुर आने का कार्यक्रम था। वे न आ सके, तो उन्होंने शास्त्रीजी को अपनी जगह भेज दिया। जोधपुर में कार्यक्रम था—पडितजी को तोल कर उनके बराबर सोना देने का।

शास्त्रीजी को जब यह मालूम हुआ तो कहने लगे : 'अगर यह बात है, तो मैं बहुत घाटे में रहूँगा। यदि पडितजो को जगह मुझे ही तोलकर सोना देने का निश्चय किया है आप लोगो से तो मेरी दरख्वास्त है कि मेरे स्थान पर किसो ऐसे व्यक्ति को तोला जाय, जो मेरी पसन्द का हो और इस चुनाव के लिए थोड़ा समय मुझे दे ताकि कुछ भारी-भरकम आदमी आपके सामने उपस्थित कर सकूँ।' उनकी बात सुन कर सभी हँसने लगे।

प्रचारभीरु शास्त्रीजी

शास्त्रीजी प्रचार से सदा दूर रहते थे। पिछले साल दिसम्बर महीने में, संसद के केन्द्रीय कक्ष मे ससदीय और संवैधानिक अध्ययन संस्था के उद्घाटन के अवसर पर जब वे आये, तो दूसरे अतिथियों के साथ ही बैठने लगे। राष्ट्रपतिजी के साथ, जहाँ उनके लिए स्थान नियत था, वहाँ पर नही बैठे। जब कई लोग और खुद राष्ट्रपति के आदमी उन्हे लिवाने गये तब नियत जगह पर आये।

इस पर राष्ट्रपतिजी कहने लगे : 'लालबहादुरजी, आप अभी तक इस संकोच से मुक्त नही हुए।'

शास्त्रीजी बोले, 'मै वहाँ ठीक था, फिर भी आपका आदेश सर माथे पर।'

समारोह के बाद डा० लक्ष्मीमल्ल सिघवी से बोले 'आपने मुझे यों ही इतने लम्बे चौड़े शब्दों मे धन्यवाद दे डाला। जहाँ अपनापन है, वहाँ धन्यवाद को क्या जरूरत है।'

जनता का आदमी

इलाहाबाद के पास नैनी की बात है। यहाँ पर पुरानी बस्ती के साथ ही एक औद्योगिक नगर भी है। लिप्टन की चाय का डिब्बाबन्दी कारखाना यही पर है। शास्त्रीजी एक साधारण से समारोह मे इसी कारखाने मे गये।

आयोजको ने एक लम्बी-चौड़ी छत पर दरी बिछाकर सामने कुछ कुर्सियाँ बिछा दी थीं, जिन पर कुछ विशिष्ट लोगों को बैठना था। मजदूर और साधारण लोग पहले से ही दरियो पर बैठे थे। शास्त्रीजी आये और उन्हे एक कुर्सी पर बैठ जाने को कहा गया, परन्तु वह इस प्रस्ताव को टाल कर सामने की दरी पर जा बैठे। बोले, 'मेरा सही स्थान जनता के बीच मे है। उससे अलग कभी-कभी बैठना पड़ता है, पर रुचता नही।'

विमान-दुर्घटना होते-होते बची

संकट के समय तुरन्त निर्णय लेने और बिलकुल न घबराने की शास्त्रीजी में अनुपम क्षमता थी। जनवरी १९५७ ई० में एक दिन दिल्ली से एक छोटे-से विमान में शास्त्रीजी, ढेबर भाई और श्री जगदीश कुदेसिया इलाहाबाद के लिए रवाना हुए। इलाहाबाद पहुँचने के बाद भी पाइलेट ने जहाज नीचे नहीं उतारा और वह आकाश मे हो चक्कर लगाता रहा।

शास्त्रीजी अखबार पढ़ने में लीन थे। जब स्थिति से उन्हें अवगत कराया गया, तो उन्होंने पाइलेट से बातचीत की। पाइलेट ने बताया कि हवाई पट्टी पर उतरने के लिए हवाई जहाज के पहिये नीचे नहीं निकल रहे है और ऐसी स्थिति मे जहाज उतारना मौत को बुलावा देना है।

'लेकिन बहुत देर तक आकाश में भी तो उड़ा नहीं जा सकता,' तब शास्त्रीजो ने अपना सुझाव दिया, "तुम अपना सारा पैट्रोल समाप्त कर दो और यमुना की रेती पर जहाज उतार लो, फिर जो होगा, देखा जाएगा।"

लेकिन यह सब करना नही पड़ा, पाइलेट हवाई 'अड्डे से' निर्देश लेता हुआ प्रयत्न करता रहा और अन्त में सफलता मिली और वे लोग मौत के मुँह से बाहर आये। उस जहाज से उतरते समय भी शास्त्रीजी के चेहरे पर वही सहज मुस्कान थी, घबराहट या चिन्ता का लेशमात्र भी नहीं था।

गुस्सा भी आता था

वे व्यर्थ की बातों से घबराते थे और ऐसे बकवादिया को डांट कर भी भगा दिया करते थे।

एक बार वाराणसी के एक सज्जन जो कि उनके बचपन के मित्र थे, अपने पुत्र को सेना से निकलवाने के लिए दिल्ली मे, शास्त्रीजी के पास पहुँचे। उन दिनों शास्त्रीजी स्वराष्ट्र मन्त्री थे। शास्त्रीजी उनसे बड़े प्रेम से मिले और खूब आदर-सत्कार किया। किन्तु जब उन्होने अपने आने का कारण बताया, तो वे बेहद नाराज हो गये और बोले, "तुम मेरे मित्र हो, इसलिए कुछ नहीं करता, नहीं तो अभी तुम्हें पुलिस के हवाले कर देता। आइन्दा ऐसी अनर्गल बातों के लिए मेरे पास आने का कष्ट मत करना।"

मैं साफ हूँ

एक बार संसद में शास्त्रीजी ने अपने बारे में, डा० राममनोहर लोहिया के यह कहने पर कि 'शास्त्रीजी आपका कद छोटा है, मृदुभाषी है, किन्तु आप साफ नहीं है, सफाई पेश करते हुए कहा था: "मेरे कद के बारे में दो राय नहीं हो सकतीं। यदि आपका यह विचार है कि मै मृदुभाषी हूँ, तो यह एक अच्छी बात है, मगर एक बात मैं आपको साफ बतला दूँ, कि कांग्रेस-दल का जो निर्णय होता है मैं उसका ईमानदारी से पालन करता हूँ।"

शास्त्रीजी के उस दिन के प्रत्युत्पन्न-मतित्व से सभी अत्यधिक प्रभावित हुए।

बच्चों के मामा

स्व० नेहरूजी बच्चों के 'चाचा' थे, तो शास्त्रीजी को उन्होंने अपने आप ही अपना परम प्रिय "मामा" मान लिया था। उन्है बच्चों से बड़ा प्यार था। एक बार दो छोटे बच्चों में यह भावना

पनपी कि गुल्लक मे बचाये गये पैसो को शास्त्रीजी के हाथो मे सौपा जाय। बस, फिर क्या था। अपने शास्त्री मामा के निवास पर जा ही पहुँचे। अन्दर घुसने लगे, तो प्रहरी ने टोका. 'बच्चो, बाहर जाओ। अन्दर आना मना है।'

बच्चे भला यह मानते ? "नही हम अन्दर जायेगे। हमे अपने शास्त्री मामा से मिलना है।" देर तक उन लोगो मे झक-झक होती रही।

उस समय शास्त्रीजी अन्दर ही थे जैसे ही उनके कानो मे यह भनक पड़ी कि कुछ बच्चे आये हे, वे तुरन्त कमरे से निकल कर बाहर आ गये और बच्चो को देखा तो खिल उठे।

"इधर आओ, मै आ गया।" शास्त्रीजी ने बच्चो को इशारे से अपने पास बुलाया। प्रहरी सैल्यूट ठोक कर एक ओर खामोश खड़ा हो गया और बच्चे हँसते हुए उछलते-कूदते अपने मामा के पास जा पहुँचे। शास्त्रजी ने बच्चो से गुल्लक ले ली और उन्हे अपनी गोद मे बिठा कर बहुत देर तक प्यार करते रहे।

बच्चों की सभा

उन्है बच्चो से बातें करना, उन्हे देखना या सुनना एक नयी ताजगी देने वाला होता था। किसी स्थान पर वे जाते तो सबसे पहले वे बच्चो को तरफ अपना ध्यान देते और उनके साथ सहज भाव से बातें भी करते थे।

एक बार उन्हे बच्चो की सभा मे, पुरस्कार वितरण के लिए आमन्त्रित किया गया। जब सभा की कार्यवाही शुरू हुई तो शास्त्रीजी ने प्रारम्भ मे ही कहना शुरू किया—"मुझे इस समारोह मे इसलिए बुलाया गया है कि मेरा कद बच्चो जैसा है।"

वहाँ पर जितने बच्चे इकट्ठे थे सभी ठठा कर हँस पड़े। वातावरण एकदम सरल और आनन्दमय हो गया और उसके आगे की कार्यवाही चली।

सादगी-पसन्द

वे सादगी-पसन्द थे। जिस कमरे मे रहते थे, वह बहुत छोटा था। फर्नीचर के नाम पर उसमे शायद ही कोई चीज मिले। पहनने के लिए कपड़े बहुत ही कम थे। प्राचीन काल के ऋषियो की भाँति वे अपरिग्रही थे।

एक बार सर्दियो मे, उन्हे किसी ने मौजे पहनने की सलाह दी। उनके पास केवल एक जोड़ी जूता था। यह जान कर किसी रिश्तेदार ने उनके इस्तेमाल के लिए एक जोडी जूते और ला दिये। परन्तु शास्त्रीजी को यह बात पसन्द नही आयी और कहने लगे कि "अरे काम तो चल ही रहा था, यह फिजूल खर्ची क्यो की।"

एक बार उनके परिवार के किसी सदस्य ने उनके कमरे मे एक छोटी-सी कालीन बिछा दी, ताकि सर्दी से बचाव हो सके। उन्होने जब देखा तो उसे उठवा दिया और कहा, "भई क्यो तुम लोग मेरी आदत बिगाड़ने पर लगे हुए हो, इसके बिना काम चल ही सकता है।"

●

गंगाधर गाडगिल

शास्त्री जी का शासनकाल : एक विहगावलोकन

नेहरू गुजरे तो अपने देश के भविष्य को चिन्ता-सी हो आयी। इसका मतलब यह नहीं कि नेहरू-युग की नीतियाँ मुझे बहुत पसन्द थी। उल्टे मेरा तो मत बन गया था, और आज भी है, कि उस समय निर्धारित कुछ नीतियों के कारण देश का बहुत लाभ नही हुआ। उस समय निर्धारित अनेक आर्थिक नोतियों के कारण देश का आर्थिक विकास द्विविधाग्रस्त हो रहा था, उस समय निर्धारित विदेशनोति के कारण ऐसी शक्तियाँ उभर रही थी, जो हमारे देश के लिए अहितकर थी, अल्पसंख्यकों सम्बन्धो नोति के कारण भय-सा लगने लगा था कि कही देश के और टुकड़े न हो जाये। यह अधिकाधिक साफ होता जा रहा था कि स्पष्ट रूप से और निष्ठापूर्वक विचार करके निर्णय लेना हमारे प्रशासन के वश के बाहर की बात होती जा रही है।

फिर भी नेहरू थे तो मै और मेरे जैसे अनेक लोग कुछ अत्यन्त महत्वपूर्ण बातों की ओर से निश्चिन्त थे। जनता के मन पर उनकी कुछ ऐसी जबरदस्त पकड़ थी कि इस देश मे आपसो कलह पैदा ही जाने की सम्भावना नही थी। दिल्ली में एक बलशाली सरकार शासन करती रहेगो, ऐसी निश्चिन्तता बनी हुई थी। उनको सार्वजनिक सुचरित्रता और देशभक्ति के सम्बन्ध में किसी के मन में शका नहीं थी-शका करने की गुंजाइश ही नही थी। पिछले सौ वर्षो में हमारे महान् नेताओं ने जिन उच्च आदर्शों की कल्पना और उनका निर्माण किया था, उन आदर्शो को नेहरू ने आगे बढाया, और इसीलिए भ्रष्टाचार और स्वार्थ उन्हे छू न सके। एक विशिष्ट मर्यादा को उलाघ कर देश का नुकसान करना उनकी प्रकृति के अनुकूल नही था। जनतन्त्र नेहरू के रक्त मे घुल-मिल गया था। उनके हाथो उसके नष्ट होने अथवा कमजोर होने का डर नही था। उनका व्यक्तित्व और उनके व्यक्तित्व की धाक इतनी जबरदस्त थी कि कभो ऐसा कोई भय नही लगा कि कोई सेनाधिकारी बगावत करके देश का शासन-सूत्र अपने हाथो मे ले लेगा। ऐसा करने की हिम्मत ही नही थी।

पर नेहरू हमारे बीच नही रहे। अब क्या होगा? कौन इस देश का नेतृत्व करेगा? दिल्ली के उन छोटे-मोटे लोगो की तरफ नजर घुमायी, तो निराशा हाथ लगती थी। इस देश का नेतृत्व करना कोई छोटी-मोटी बात नही है। गणित लगाकर देखा जाये तो इस देश का नेतृत्व करने के लिए जिन थोड़े से थोड़े गुणो की आवश्यकता है, उनका भो किसी एक व्यक्ति में होना लगभग असम्भव ही लगता है।

इस देश का नेता कौन होना चाहिए ?

इस देश मे अनेक भाषाओं और अनेक जातियो-उपजातियों के लोग रहते हैं। एक दूसरे को ओर संशय की दृष्टि से देखने और फूट पैदा करने को इन लोगों की शताब्दियों पुरानी परम्परा है। इन सबका विश्वास प्राप्त करके उन्हे एक सूत्र मे बाधने की शक्ति हमारे नेता मे होनो चाहिए।

उसी प्रकार इस देश मे राजकोय मतो को एक उलझन-सी पैदा हो गयी है। किसी भी एक विचार-प्रणाली के लोगो का बहुमत नही है। इन विविध मतप्रणालियो के लोगो को एक साथ एक पक्ष मे रख कर उन सबो को स्वीकार्य कार्यक्रम तैयार करना हमारे इस नेता की जिम्मेदारी है। जो यह नही कर सकेगा, वह कितना ही कर्त्तव्यनिपुण और चरित्रवान् क्यो न हो, वह हमारा नेतृत्व नही कर सकेगा।

हमारे इस देश की जनता अत्यन्त गरीब है। उनकी गरोबो नष्ट किये बगैर इस देश के जीवन मे स्थिरता आना सम्भव नही है। इस गरीबी से छुटकारा पाने के लिए लोग उतावले हो गये है। और इस गरीवी को दूर करने के लिए जिस त्याग को, जिस अनुशासन की आवश्यकता है, उसके लिए वे तैयार नही हैं। फिर तो शायद भगवान् हो साक्षात् उतर आये, तभी इस देश की गरीबी शोघ्र दूर हो सकती है। उसे दूर करने के लिए लोगो को त्याग करने के लिए तैयार करने की आवश्यकता है। यह समस्या ऐसी जटिल है कि उसे सुलझाने के लिए हमे ऐसा नेता चाहिए, जो लोगो को सफलतापूर्वक प्रेरित कर सके। देश को प्रगति धीरे-धीरे ही होती है पर हमारा नेता तो ऐसा हो जो लोगों को समझा सके कि उनकी समस्याएं सुलझ रही हैं। हम तेजी से आगे बढ रहे है। लोग त्याग करने को तैयार न हो तो भी उनसे त्याग करा सकने की क्षमता हमारे नेता मे होनी चाहिए। ऊपर से आकर्षक और क्रान्तिकारी लगने वाली नीतियो के अवलम्वन के मोह में वह न फॅसे। क्रान्ति एक झटके मे सर्वनाश कर सकती है, परन्तु निर्माण धीरे-धीरे अपना पूरा समय लेकर ही होता है।

इस देश को तेजी से आगे बढाना है। थोडे से साधनो से बहुत से काम करने है। और हमारा राज्यतन्त्र है कि बहुत ही धीमी गति से काम करने वाला है। इसलिए इस देश की समस्याओ को यदि सुलझाना है, तो हमारा नेता राज्यशासन मे अत्यन्त कुशल होना चाहिए। सरकारी शासन पद्धति मे ऊपर से नीचे तक सुधार करने की क्षमता उसमे होनो चाहिए।

इतने बड़े देश मे कोई भी काम करना हो, तो हर कदम पर समाज के बड़े-बड़े गुटो को असन्तुष्ट करना पड़ेगा। इसके विना आगे बढ़ना सम्भव ही नही। इसलिए हर कदम पर लोगो के असन्तोष को पी जाने की गम्भीरता भो हमारे नेता मे होनी चाहिए। और साथ-साथ उसमे इतनो कुशलता भो होनो चाहिए कि उनका यह असन्तोष विस्फोटक सिद्ध न होने पाये।

भ्रष्टाचार इस देश को पुरानो परम्परा है। अनेक स्वरूपो मे इस भ्रष्टाचार के दर्शन होते हैं। हमारा समाज इन भ्रष्टाचारो मे डूब चुका है और अब उस पर यदि अकुश न लगाया गया तो हमारे देश का सर्वनाश होने की सम्भावना है। हमारे नेता मे यह अ कुश लगाने को सामर्थ्य होनी चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि उसका अपना चरित्र निर्मल और शकाओ से परे हो। लेकिन काम इतने से ही नही चलने का। वह यदि चरित्रवान् हुआ और भ्रष्टाचार के विरुद्ध उसने कमर कसके अन्तिम युद्ध छेड दिया, तो वह साधु पुरुप तो माना जायेगा, किन्तु राजनीतिक नेता के रूप मे वह बिलकुल यशस्वी सिद्ध नही होगा। भ्रष्टाचार का यह प्रश्न कुशलता से, धीरे धीरे हल करना होगा, भ्रष्टाचार

के साथ लम्बे अरसे तक रहने को तैयारी करनी होगी। भ्रष्ट पति की पतिव्रता पत्नी के समान उसके साथ व्यवहार करने होगे, उसका सुधार करने की तैयारी रखनी होगी। इसके लिए उसे अपना चरित्र बिल्कुल शुद्ध रखना होगा।

इस देश के अनेक बाहरी शत्रु है। वे इस देश के धैर्य को तोड़ देना चाहते हैं। अन्य दूसरे देश भी हमारे इस परावलम्बी देश का उपयोग अपने हित साधन के लिए करने को उत्सुक है। इस स्थिति में अपने देश के हित-अहित की पहचान कर दूसरों को अहितकर कार्यवाहियों से अपने देश को बचाना होगा। और ऐसी योजना बनानी होगी कि दूसरे देशों की सहायता का प्रवाह सतत चालू रहे। यह इकहरे तार पर चलने जैसी कसरत है। जो नेता ऐसा नहीं कर सकता, वह हमारा नेतृत्व करने में असफल रहेगा।

और शास्त्री जी चुने गये

अब आप ही बताये कि क्या ऐसा नेता ढूँढ पाना सम्भव है, जिसमे ये गुण वर्तमान हों? नेहरू इस हिसाब से स्वयं भी ऊब पड़ते थे, फिर दूसरो का तो कहना ही क्या? बस इसीलिए इस देश के योग्य नेता मिल पाने के बारे में मुझे बड़ी आशका थी।

धीरे-धीरे दिल्ली से समाचार आने लगे कि लालबहादुर शास्त्री के नेता के रूप में चुने जाने की सम्भावना है।

यह व्यक्ति भारतीय राजनीति मे कोई अधिक प्रकाशवान भी नहीं था। बम्बई में भी मैने कभी उसे लोगों के बीच खड़े नहीं देखा था, लेकिन उसका नाम लिया जाने लगा, तो उसके विषय में पत्र-पत्रिकाओं में पढ़ी फुटकर बाते याद आने लगी। एक अस्पष्ट-सा चित्र आँखो के सामने उभरने लगा।

सबसे पहली बात जो याद आयी, वह थी कि यह व्यक्ति एकदम छोटे कद का है। चुटकियों में लोगो पर छा जाने वाला नेहरू जैसा व्यक्तित्व इस व्यक्ति के पास नही है। उसी तरह लोगों पर प्रभाव डालने वाली भाषण शैली अथवा नाटकीय पद्धति भी इस व्यक्ति के पास नही है। इन बातों का मेरी दृष्टि मे तो कोई विशेष महत्व नही था, पर शुरू में तो ये बातें इस व्यक्ति के मार्ग में अड़चनें डालेगी, यह स्पष्ट था।

एक बात और याद आयी। इस व्यक्ति के चरित्र पर किसी ने अंगुली नही उठायी थी। किसी प्रकार का भी कुत्सित आरोप इस व्यक्ति को नही छू पाया था। एक बार बगले की बिजली के बिल का उल्लेख विधान सभा मे आया, पर उल्लेख आते ही उसी क्षण इस व्यक्ति ने सारे बिल खुद ही चुका दिये थे, जबकि इस सम्बन्ध मे उसका कोई दोष नही था। इसी प्रकार जब वह रेलमन्त्री था और दो रेल दुर्घटनाएं हो गयी, तब इस व्यक्ति ने आवश्यकता न होते हुए भी इस्तीफा दे दिया था। और जब कामराज योजना अमल मे लाई गई, इस व्यक्ति ने स्वयं ही इस्तीफा देने का आग्रह किया था।

मतलब यह कि सार्वजनिक तथा व्यक्तिगत चारित्र्य के विषय में इस व्यक्ति का आदर्श अतिशय उच्च था और अपने विषय मे किसी भी प्रकार की शंका उठने की गुंजाइश उसने नही छोड़ी थी। इस देश के भ्रष्टाचार का हलाहल पचा सकने जैसा शुद्ध चरित्र निश्चय ही इस व्यक्ति के पास था।

इस सबके साथ यह भी याद आया कि इस व्यक्ति ने शासन व्यवस्था से कभी भी मुँह नहीं मोड़ा और न ही सन्यास लेकर बैठे रहने का सहज मार्ग इसने स्वीकार किया। यह व्यक्ति पीछे हटना नहीं जानता था। राजकीय क्षेत्र मे वह अनेक वर्षों तक काम करता रहा।

उसके ये गुण नेता बनने की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण थे ।

फिर यह भी ज्ञात हुआ कि यह व्यक्ति कांग्रेस मे ही बढा था । कांग्रेस के महामन्त्री के रूप मे उसने काम किया था । उस सस्था की सभी गुत्थियों और अन्तर्विरोधो की जानकारी उसे थी । उस सस्था की कार्यपद्धति उसकी जानी-बूझी थी । और उस संस्था मे रह कर सबको साथ लेकर सभाल कर, काम करने की इस व्यक्ति को आदत थी ।

और फिर इस व्यक्ति पर वाम पन्थ या दक्षिण पन्थ जैसा कोई 'लेबिल' नही लगा था । किसी भी मतप्रणाली के सैद्धान्तिक आग्रह से वह बधा नही था । नये नेता मे इन गुणो का होना अत्यावश्यक भी था ।

और अन्तिम बात यह कि विरोधी पक्ष भी इस व्यक्ति से द्वेष नही रखते थे । उल्टे उसके प्रति उनके मन मे आदर की भावना थी ।

धीरे-धीरे यह भी पता लगा कि इस व्यक्ति मे प्रशासनिक योग्यता और समझ है । यह भी सुना कि असम की बिगड़ती हुई परिस्थिति को इसी व्यक्ति ने सुधारा था । नेपाल के राज्यकर्ताओ की दुखती हुई नसो को भी बड़े धैर्य से समझ कर इसी व्यक्ति ने शान्त किया था । मास्टर तारासिह को इसी व्यक्ति ने उलझने से रोक रखा था और शेख अब्दुल्ला को कैद से मुक्त करने का नाटकीय निर्णय लेने का साहस भी इसी व्यक्ति ने किया था ।

जितना अधिक मै विचार करता जाता, उतना ही मेरा मन इस व्यक्ति के अनुकूल होता जाता। मुझे लगने लगा कि इस समय तो यही ठीक चुनाव है । पर फिर भी अनेक शकाएं मन मे उठती रही । क्या यह व्यक्ति विशाल कांग्रेस मे हर व्यक्ति को काबू मे रख पायेगा ? क्या इसके पास इतनी समझदारी है कि आर्थिक नीतियो को सही मार्ग पर चला सके ? क्या समाजवाद के पुस्तकीय ज्ञान के पीछे यह भी भागता रहेगा ? क्या चीन और पाकिस्तान के सामने यह हिम्मत से छाती तान कर खडा रह सकेगा ? क्या कांग्रेस की गिरती साख को उठा सकेगा ? और क्या आवश्यकता पड़ने पर लोगो को असन्तुष्ट करके भी किन्ही निर्णयो को अमल मे लाने की हिम्मत इस व्यक्ति मे है ?

ऐसी अनिश्चित मन.स्थिति के बीच मैने सुना कि लालबहादुर शास्त्री प्रधान मन्त्री बन गये । उत्तराधिकारी का युद्ध टल गया था । सत्ताधारी पक्ष ने समझदारी से काम लेकर इस सवाल को हल कर लिया था । इतने मे ही पाया कि भयकर डरावने प्रश्न देश के सामने खडे है और लालबहादुर शास्त्री चुपचाप देख रहे है । ऐसे कोई आसार दिखाई नही दे रहे थे कि उनका पक्ष दृढ हो रहा है या कोई निर्णय लिया जा रहा है । राज्य के काम मे भी कोई चुस्ती नही नजर आ रही थी । काम मे गति न आ पाने की शिकायतें भी आने लगी थी । यहा तक कि वृत्तचित्रो मे लालबहादुर शास्त्री की बौनी-सी मूर्ति चलती-फिरती दीखती, तो लोग मूर्खों जैसे हँस पड़ते थे ।

धीरे-धीरे उनका प्रकाशमान व्यक्तित्व प्रकट हुआ !

धीरे-धीरे इस छोटे से, सीधे-सादे दिखने वाले व्यक्ति का प्रभाव दिखने लगा । पहले तो भ्रष्टाचार की समस्या उठायी और कैरो तथा बख्शी जैसे अत्यन्त प्रतापशाली मन्त्रियो के इस्तीफे उन्होने मजूर कर लिये । इस व्यक्ति ने स्पष्ट कर दिया कि वह देश के सार्वजनिक जीवन मे भ्रष्टाचार नही चलने देगा, लेकिन इससे तो समस्या का समाधान नही हुआ । भ्रष्टाचारी व्यक्ति अकसर करतबी होता

है, सामर्थ्यवान् होता है और देश का हित भी कर देता है। ऐसे व्यक्तियों को सत्ता से उतार देने से नीति तत्वो को विजय अवश्य होतो है, परन्तु कभी-कभी देश का तात्कालिक नुकसान भी होने की सम्भावना रहती है। श्री कृष्ण को भी कभो-कभी असत्य और अन्याय का साथ देना पड़ा था। कभी-कभी शास्त्री जी के ऐसे निर्णयो की आलोचना हुई और कहा गया कि कैरो और बख्शी के जाने पर पजाब और कश्मोर मे गड़बड़िया हुई। पर मुझे लगता है कि कुल मिलाकर उसके निर्णय सही थे। कैरो ने अपनी सारी चतुराई बाजो पर लगा दी होती, तो भी अन्त मे पंजाबो सूबा बनना नही रुकता और अगर बख्शी कश्मीर की बारूद भरी कोठरी पर जमे रहते तो भी कभी न कभी उसका विस्फोट होता ही।

फिर आर्थिक नीति के सम्बन्ध में कभी-कभी बडो समझदारो भरे, व्यावहारिक शब्द कानों में पड़ने लगे। यह भी सुनने मे आया कि खेती, विशेषकर अन्नोत्पादन को अधिक महत्व देना चाहिए, प्रधान मन्त्री के दफ्तर से आदेश निकलने लगे कि लम्बो-लम्बी योजनाए बनाने की जगह एक-दो वर्षो में फल देने वाली योजनाओं पर विचार किया जाये। लोग त्रस्त होने लगे है। योजनाओं को वर्ष भर छुट्टी दे दी जाये अथवा उस पर किये जाने वाले खर्च मे कुछ कमी की जाए। यह भी कहा जाने लगा कि इस सबसे राहत मिलेगी। उन्होने समाजवाद के व्यावहारिक पक्ष पर अधिक बल दिया। आर्थिक विषयो पर शास्त्री जी के समय मे कोई मूलभूत निर्णय नही लिया जा सका (उन्हे उतना समय भी नहीं मिला) पर उनका यह विचार दृढ़ रूप मे सामने आया कि आर्थिक नीति व्यावहारिक होनी चाहिए।

काग्रेस पर भी धीरे-धीरे उन्होने अपनी छाप डालना शुरू किया और बिना शोर किये, वाद-विवाद में पड़े बगैर उन्होने जब मोरारजी को बगलौर मे चुप करके बैठा दिया, तब तो यह सिद्ध हो गया कि कांग्रेस भी उनके काबू में आ गई है। मेरे जैसे तटस्थ निरीक्षको और सामान्य व्यक्तियो ने भी सन्तोष की सांस लो।

महाराष्ट्र-मैसूर सोमा और गोवा के प्रश्न कई वर्षो से उलझे हुए थे। केन्द्र सरकार इन प्रश्नों पर कोई भी निर्णय लेने मे टालमटोल कर रही थी, जो एक दृष्टि से उसकी समझदारी ही थी। वह यह भावना उत्पन्न नही करना चाहते थे कि केन्द्र सरकार ने किसी प्रान्त पर अन्याय किया है। पर उसके साथ उनका यह सोचना भी सही था कि विभिन्न राज्यो के आपसी झगड़े इस देश मे अपरिहार्य है और उनका निबटारा करने को कुशलता केन्द्र सरकार को ही दिखानी चाहिए, उसके लिए कुछ नीतियों का निर्धारण करना चाहिए। शास्त्री जी ने इसकी आवश्यकता अनुभव की और इस जटिल प्रश्न को हाथ मे लिया। उन्होने स्पष्ट कर दिया कि वे इस प्रश्न को सुलझायेगे। उन्होने किसी के मन मे इसका भी कोई सन्देह नहीं रहने दिया कि किसी प्रान्त के मुख्यमन्त्री का विरोध उन्हे अपने निर्णय से हिला न सकेगा। उन्होने स्पष्ट कर दिया कि उनमे प्रशासन के आवश्यक गुण है।

और आखिर मे पाकिस्तान के साथ हुए युद्ध के समय उन्होने अपने नेतृत्व को महानता के जो दर्शन कराये, उसका इतिहास हम सभी जानते है। मै उसे दुहराना नहीं चाहता। परन्तु उन दिनों शास्त्री जी के नेतृत्व की क्या उपलब्धियां रहो यह अवश्य बताना चाहूँगा। उन्होने पाकिस्तान को, संसार को और स्वय भारतवासियों के सामने यह स्पष्ट कर दिया कि भारतीय नेतृत्व कमजोर और

डरपोक नही है और वह शान्ति प्रेमी होते हुये भी अहिंसा की अव्यावहारिक कल्पना का दास नही है। उन्होने यह भी सिद्ध कर दिया कि भारतीय सेना शोभा की वस्तु नही। वह लड़ सकती है और बिजयी हो सकती है। बल प्रयोग करके पाकिस्तान कश्मीर नही ले सकेगा और जहा पाकिस्तान हमला करेगा केवल वही उसका प्रतिकार करके हम चुप नही बैठेगे। पाकिस्तान की मर्जी के अनुसार ही अब पारस्परिक विवाद मर्यादित नही रहेगे। और आखिर ताशकन्द समझौते से उन्होने यह भी जता दिया कि ऐसी गलत धारणा भी हममे नही है कि बल-प्रयोग और सासारिक दबाव को टाल कर हम कश्मीर के प्रश्न को सुलझा लेगे और यह भी, कि भारत की नीति और इच्छा है कि पाकिस्तान से उसके सम्बन्ध मित्रता के रहे।

पाकिस्तान से हुए युद्ध के पश्चात् शास्त्री जी भारतीयो के गले का हार बन गये थे। इस लोकप्रियता के बल पर वे कितने ही दूसरे बड़े-बडे काम कर डालते, ऐसे उनके मनसूबे भी थे, पर दुर्भाग्य से यह सब होना नही था।

पर इस छोटे आदमी ने अठारह महीने मे जो करतब कर दिखाया वह कोई छोटा काम नही था। भारत के इतिहास मे निर्णायक और हितकर छाप लगा कर यह छोटा-सा महान् आदमी हमारे बीच मे से चला गया।

●

आखें थी जो एकटक उनके चेहरे पर लगी थीं। भीड़ के बावजूद वातावरण में एक गरिमा थी।

ललिता जी के जीवन की धुरी : शास्त्री जी

ललिता जी के पास भीड जरा कम होते ही उनके सचिव ने उनके पास पहुँचने का सकेत किया। हाथ अनायास ही माताजी के पैरो की ओर बढ गये। जब हम जमीन पर नीचे ही उनके पास पास बैठने लगे तो उन्होने ममत्व से अपने पास ऊपर बैठने का आग्रह किया। पर उनके चरणो के पास बैठकर हमे लगा कि जैसे हम अपने किसी नजदीक के सम्बन्धी के पास बैठे हो, बड़ी आत्मीयता और स्वाभाविकता से बाते ऐसे शुरू हो गयी जैसे हमारी जान-पहचान बहुत पुरानी है।

ललिता जी का जीवन ही शास्त्री जी पर केन्द्रित था। उनके जीवन की एक-एक सास उनके स्वामी मे पिरोयी हुई थी। उनकी समस्त चेतन-अचेतन गतिविधियो के केन्द्रबिन्दु शास्त्री जी ही थे। घर-परिवार समाज सब उनके बाद आता था और इसीलिए घूम-फिर कर बाते शास्त्री जी पर ही आ जाती थी। चाहे जहाँ से शुरू करो, चाहे कोई बात पूछो, सबकी परिणति शास्त्री जी पर ही होती थी।

ललिता जी को धर्मयुग बहुत पसन्द है, बोली, "पहले जब शास्त्री जी थे तब भी आता था अब भी आता है। अखबारो मे पहले जैसा निकलता था अब नही निकलता है, और तरह से निकलता है। बाते बदल गयी है। अब हँसने की तबियत नही करती है, बडा दुख है। भजन-कीर्तन बन्द नही है, अभी भी करती हूँ पर पहले ऐसा था कि गाते-गाते घर का सारा काम करती थी। एक मिनट के लिए भी भजन गाना बन्द नही होता था, अब ऐसा नही है। गाने को तबियत ही नही करती। शास्त्रीजी जब ताशकन्द गये तो शनिवार से ही हमारी तबियत घबडाने लगी थी। सोमवार को सपना आया इस रूप मे कि बहूरानी के पिता नही रहे, मा सफेद कपडो मे बैठी है। तबही हमका लगा कि कुछ अनहोनी होय का है। पर हम बहूरानी का धीरज दिया कि 'उनके लिए तो शुभ है तुम फिकर न करो' वो दिन चौथका बरत था। सब जनी पूजा के लिए जुरी थी सो रामनाथ चपरासी की बहू कहिस, 'थाल सूना-सूना लग रहा है'। हम कहा, थाल बड़ा है, चीजे कम, एहसे सूना लग रहा है, काहे न और चीजे धर दो। गिलास मा पानी डारा तो ऐसा लगा जैसे पानी माँ मट्टी घुली हो। हमार जी तो बहुत घबडाया पर हम धीरज धरा, पर रात तक सपने की बात पूजा की बात सब सही हो गयी।

"पहले जब शास्त्री जी कहीं जाते थे तो हम राम का नाम जपा करती रहती थी। जब तक उनके पहुच की खबर नही मिल जाती थी, हम जाप बन्द नही करती थी। शास्त्री जी कहीं जाने के पहले कहा करते थे, पहले तुम नास्ता कर लो, बाद मे नही करोगी।

"शास्त्री जी को चाय बहुत पसन्द थी। चाय के साथ दो-चार टुकड़े आलू खाते थे। सवेरे अपने हाथ से चाय का प्याला बना कर हमको देते थे। हम नाही करें तो कहै, 'तुम हमार लिए इतना करती हो'

हम इतना भी नहीं कर सकते ।' अब हम चाय पीना छोड़ दिया है । चाय तो घर में बनती ही है, बच्चों को पिला देती हूँ । आलू प्रसाद समझ कर ले लेते है ।

पहले रात-दिन भगवान् की पूजा करती रहती थी । लिखती बहुत थी, अब लिखती हूँ, तो आंख मे पानी आ जाता है । फूलों की माला हार बनाती रहती हूँ । उनकी भस्मी रखी है, खड़ाऊं रक्खे हैं, अब यही पूजा है । डेढ़-दो के समय दोपहर में समाधि पर चली जाती हूँ । वही घण्टा पौन घण्टा उनसे बात कर लेती हूँ । यही उनके घर आने का समय होता था । मन को बड़ी शान्ति मिलती है, तब घर वापस आ जाती हूँ । शाम को शास्त्री जी जिस कमरे में बैठते थे, वहीं फिर पूजा के दो फूल लेकर चढा देती हूँ, मन को सन्तोष मिल जाता है ।

"मैंने शादी के बाद ही राजनीति में भाग लेना शुरू कर दिया था । सन् २८ मे हमारी शादी हुई थी । एक बार जब शोलापुर मे मार्शल-ला लगा था ३०, ३१ मे, तो मेरी बड़ी लडकी होने वाली थी । धर-पकड़ का जोर था सो मैंने शास्त्री जी से कहा कि 'आप मत जाओ' । नही माने तो हमने कहा 'हम भी चलेंगे ।' तब शास्त्री जी बोले 'तुमने हमे गाली दे दी होती तो इतनी चोट न लगती जितनी तुम्हारी इस बात से लगी है ।' बस, हमने कान पकड़ लिये कि अब कभी ऐसा नही कहेगे । जिससे वे खुश रहें, वही करेंगे । बाद मे भी हम कभी पूछते नही थे कि कहाँ क्या हुआ क्योंकि मालूम था कि कोई खास बात होगी तो वे आप बतायेंगे ।"

शास्त्री जी का स्वप्न : शास्त्री-सेवानिकेतन

"ताशकन्द जाने से पहले १७ दिसम्बर को शास्त्री जी इलाहाबाद गये थे । मिर्जापुर भी गये थे । चुनाव क्षेत्र में माडा भी है । वहा से जा रहे थे तो एक महन्त जी ने रोका और ५-७ मिनट रुकने के लिए कहा । पर शास्त्री जी ने कहा, अभी ठण्डक है, अभी जाने दीजिए, बाद में ताशकन्द से लौटने पर दुबारा इलाहाबाद आऊंगा तो जरूर आऊंगा । यह शास्त्री जी की इच्छा थी जो पूरी नहीं हुई । इसीलिए हम शास्त्री सेवानिकेतन का काम माडा से ही शुरू कर रही हैं ।

"शास्त्री जी को गाँवों से बहुत प्यार था, पढ़े-लिखे लोगों को तो ज्ञान है अपनी मर्यादा बनाये रखने का, गाँव वालो को इसका कोई ज्ञान नही है, तभी तो वे गाव छोड़कर शहरो की ओर भागते है । खाना हमे वे दे, जीवन का साधन वे दे और वही तकलीफ उठाये, यह तो बड़ी गलत बात हुई । गाँव वाले अपनी आबादी से ज्यादा उपज बाहर दे देते है । खुद भुखमरी मे मरते है । हम उन्हे बतायेंगे कि वे अपने पैरों पर खड़े हो, पहले गावों की जरूरतों को पूरा करें फिर बाहर सामान दें । जब उनमे खुशहाली होगी तभी न बाहर वाले भी उनका आदर करेंगे । आज गाँवो मे, घरों मे चीज बनाते है पर अपने बच्चों को ही नही देते है, घर के तोता-मैना में हम प्रेम जगाते है, यह तो हमारे ही देश के लोग है । इसके लिए हम घर-घर जायेंगी । उनकी तकलीफें पूछेंगी । उन्हे बतायेंगे कि बच्चों को जो रुचि हो उसी के अनुसार उन्हे काम सिखाये । शास्त्री जी का यही सब विचार था । उनके जैसा तो हम क्या कर सकेंगे फिर भी प्रयत्न तो करेंगे ही ।

"समाज में बहुत से लोग है, जो नीची दशा मे है, ऊपर उठना चाहते है पर समाज उन्हे उठने का मौका नही देता है, उन्हे उठाना भी हमारा फर्ज है । एक बार हमारे पास एक लड़की आयी,

ग्राखें थी जो एकटक उनके चेहरे पर लगी थीं। भीड़ के बावजूद वातावरण में एक गरिमा थी।

ललिता जी के जीवन की धुरी : शास्त्री जी

ललिता जी के पास भीड़ जरा कम होते ही उनके सचिव ने उनके पास पहुँचने का सकेत किया। हाथ अनायास ही माताजी के पैरो की ओर बढ गये। जब हम जमीन पर नीचे ही उनके पास पास बैंठने लगे तो उन्होने ममत्व से अपने पास ऊपर बैठने का आग्रह किया। पर उनके चरणो के पास बैठकर हमे लगा कि जैसे हम अपने किसी नजदीक के सम्बन्धी के पास बैठे हो, बड़ी आत्मीयता और स्वाभाविकता से बाते ऐसे शुरू हो गयी जैसे हमारी जान-पहचान बहुत पुरानी है।

ललिता जी का जीवन ही शास्त्री जी पर केन्द्रित था। उनके जीवन की एक-एक सास उनके स्वामी मे पिरोयी हुई थी। उनकी समस्त चेतन-अचेतन गतिविधियो के केन्द्रबिन्दु शास्त्री जी ही थे। घर-परिवार समाज सब उनके बाद आता था और इसीलिए घूम-फिर कर बाते शास्त्री जी पर ही आ जाती थी। चाहे जहाँ से शुरू करो, चाहे कोई बात पूछो, सबकी परिणति शास्त्री जी पर ही होती थी।

ललिता जी को धर्मयुग बहुत पसन्द है, बोली, "पहले जब शास्त्री जी थे तब भी आता था अब भी आता है। अखबारो मे पहले जैसा निकलता था अब नही निकलता है, और तरह से निकलता है। बाते बदल गयी है। अब हँसने की तबियत नही करती है, बडा दुख है। भजन-कीर्तन बन्द नही है, अभी भी करती हूँ पर पहले ऐसा था कि गाते-गाते घर का सारा काम करती थी। एक मिनट के लिए भी भजन गाना बन्द नही होता था, अब ऐसा नही है। गाने की तबियत ही नही करती। शास्त्रीजी जब ताशकन्द गये तो शनिवार से ही हमारी तबियत घबडाने लगी थी। सोमवार को सपना आया इस रूप मे कि बहूरानी के पिता नही रहे, मा सफेद कपडो मे बैठी है। तबही हमका लगा कि कुछ अनहोनी होय का है। पर हम बहूरानी का धीरज दिया कि 'उनके लिए तो शुभ है तुम फिकर न करौ' वो दिन चौथका बरत था। सब जनी पूजा के लिए जुरी थी सो रामनाथ चपरासी की बहू कहिस, 'थाल सूना-सूना लग रहा है'। हम कहा, थाल बडा है, चीजे कम, एहसे सूना लग रहा है, काहे न और चीजे घर दो। गिलास मा पानी डारा तो ऐसा लगा जैसे पानी माँ मट्टी घुली हो। हमार जी तो बहुत घबड़ाया पर हम धीरज धरा, पर रात तक सपने की बात पूजा की बात सब सही हो गयी।

"पहले जब शास्त्री जी कही जाते थे तो हम राम का नाम जपा करती रहती थी। जब तक उनके पहुंच की खबर नही मिल जाती थी, हम जाप बन्द नही करती थी। शास्त्री जी कही जाने के पहले कहा करते थे, पहले तुम नास्ता कर लो, बाद मे नही करोगी।

"शास्त्री जी को चाय बहुत पसन्द थी। चाय के साथ दो-चार टुकड़े आलू खाते थे। सबेरे अपने हाथ से चाय का प्याला बना कर हमको देते थे। हम नाही करे तो कहैं, 'तुम हमारे लिए इतना करती हो'

हम इतना भी नहीं कर सकते ।' अब हम चाय पीना छोड़ दिया है । चाय तो घर मे बनती ही है, बच्चों को पिला देती हूँ । आलू प्रसाद समझ कर ले लेते हैं ।

पहले रात-दिन भगवान् की पूजा करती रहती थी । लिखती बहुत थी, अब लिखती हूँ, तो आंख में पानी आ जाता है । फूलो की माला हार बनाती रहती हूँ । उनकी भस्मी रखी है, खड़ाऊं रक्खे हैं, अब यही पूजा है । डेड़-दो के समय दोपहर में समाधि पर चली जाती हूँ । वहीं घण्टा पौन घण्टा उनसे बात कर लेती हूँ । यही उनके घर आने का समय होता था । मन को बड़ी शान्ति मिलती है, तब घर वापस आ जाती हूँ । शाम को शास्त्री जी जिस कमरे में बैठते थे, वही फिर पूजा के दो फूल लेकर चढा देती हूँ, मन को सन्तोष मिल जाता है ।

"मैने शादी के बाद ही राजनीति में भाग लेना शुरू कर दिया था । सन् २८ में हमारी शादी हुई थी । एक बार जब शोलापुर मे मार्शल-ला लगा था ३०, ३१ मे, तो मेरी बड़ी लडकी होने वाली थी । धर-पकड़ का जोर था सो मैने शास्त्री जी से कहा कि 'आप मत जाओ' । नही माने तो हमने कहा 'हम भी चलेगे ।' तब शास्त्री जी बोले 'तुमने हमे गाली दे दी होती तो इतनी चोट न लगती जितनी तुम्हारी इस बात से लगी है ।' बस, हमने कान पकड़ लिये कि अब कभी ऐसा नही कहेगे । जिससे वे खुश रहें, वही करेगे । बाद में भी हम कभी पूछते नही थे कि कहाँ क्या हुआ क्योकि मालूम था कि कोई खास बात होगी तो वे आप बतायेंगे ।"

शास्त्री जी का स्वप्न : शास्त्री-सेवानिकेतन

"ताशकन्द जाने से पहले १७ दिसम्बर को शास्त्री जी इलाहाबाद गये थे । मिर्जापुर भी गये थे । चुनाव क्षेत्र मे माडा भी है । वहां से जा रहे थे तो एक महन्त जी ने रोका और ५-७ मिनट रुकने के लिए कहा । पर शास्त्री जी ने कहा, अभी ठण्डक है, अभी जाने दीजिए, बाद मै ताशकन्द से लौटने पर दुबारा इलाहाबाद आऊंगा तो जरूर आऊंगा । यह शास्त्री जी की इच्छा थी जो पूरी नहीं हुई । इसीलिए हम शास्त्री सेवानिकेतन का काम माडा से ही शुरू कर रही हैं ।

"शास्त्री जी को गॉवो से बहुत प्यार था, पढे-लिखे लोगों को तो ज्ञान है अपनी मर्यादा बनाये रखने का, गॉव वालो को इसका कोई ज्ञान नही है, तभी तो वे गाव छोड़कर शहरों की ओर भागते है । खाना हमे वे द, जीवन का साधन वे दे और वही तकलीफ उठाये, यह तो बडी गलत बात हुई । गॉव वाले अपनी आधी से ज्यादा उपज बाहर दे देते है । खुद भुखमरी में मरते है । हम उन्हे बतायगे कि वे अपने पैरों पर खडे हों, पहले गावो की जरूरतो को पूरा करे फिर बाहर सामान दे । जब उनमें खुशहाली होगी तभी न बाहर वाले भी उनका आदर करेगे । आज गॉवों में, घरों मे चीज बनाते है पर अपने बच्चों को ही नही देते है, घर के तोता-मैना मे हम प्रेम जगाते है, यह तो हमारे ही देश के लोग हैं । इसके लिए हम घर-घर जायेगी । उनकी तकलीफे पूछेगी । उन्हे बतायेगे कि बच्चों को जो रुचि हो उसी के अनुसार उन्हें काम सिखाये । शास्त्री जी का यही सब विचार था । उनके जैसा तो हम क्या कर सकेंगे फिर भी प्रयत्न तो करेगे ही ।

"समाज में बहुत से लोग हैं, जो नीची दशा में है, ऊपर उठना चाहते है पर समाज उन्हे उठने का मौका नहीं देता है, उन्हे उठाना भी हमारा फर्ज है । एक बार हमारे पास एक लड़की आयी,

उसकी मा वेश्या थी—वह लडकी पढ रही थी। मेरे घर आती, मेरे पास दिन भर छिपी बैठी रहती, उसे पढ़ने का बड़ा शौक था। बाद मे जब हम दिल्ली आ गये तो शास्त्री जी ने उसे चिट्ठी लिखी कि कोई मुसीबत आये तो हमारे पास आना। वह लड़की डाक्टरी पढना चाहती थी। पर डाक्टरी मे आने के लिए बड़ी मुसीबते थी सो उन्होने किसी मिनिस्टर से नही कहा। कह देते तो कोई मुश्किल नही होती, झट उसे दाखिला मिल जाता। सीधे उसे सुभद्रा जोशी के पास भेज दिया। आज वह लड़की पूना मे डाक्टरी पढ रही है। तो इन सब कार्यो मे तो चरित्र को और भगवान् को बहुत महत्व देती हूँ। जिसके चरित्र का पतन हो गया है उसे हम पास नही आने देगे।"

मैंने ललिता जी से पूछा, "आप पर भगवान् ने इतना बडा सकट डाला, आप तो इतना पूजा-पाठ करती रहती थी फिर भी इतना बडा संकट। इससे क्या आपकी आस्था को ठेस नही पहुँची है ?" ललिताजी एकदम से बडी विचलित-सी हो उठी। मेरा हाथ पकड लिया और बोली, "आस्था की बात तो यह है कि मै सोचती हूँ मुझसे ही कही कोई गलती हुई होगी जिसकी यह सजा है। जिस दिन शास्त्री जी की खबर आयी, मेरे लड़के अनिल ने जो १८ वर्ष का है कहा, "मा, मै तुम्हे पूजा नही करने दूंगा। क्या फायदा है तुम्हारी पूजा का।" पूजाघर मे जाकर उसने भगवान् की तस्वीर उठाकर फेक दी। मैने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा, यह परीक्षा का समय है, भगवान् पर भरोसा रखो, ऐसे पिता के पुत्र होकर तुम रो रहे हो। तो भगवान् को दोष देना गलत है।

"पहले शास्त्री जी कही बाहर जाते थे तो ध्यान तो उनमे ही लगा रहता था पर कामकाज मे, घर-गृहस्थी मे कभी ध्यान उतर भी जाता था। अब उनका ध्यान नही उतरता है। भोग लगाते है भगवान् को, लगता है शास्त्री जी को। माथा झुकाते है भगवान् पर, झुक जाता है शास्त्री जी पर। तो मिलना भी मधुर था, बिछुडना भी मधुर हो उठा है।"

बाते थीं जो खतम होने का नाम ही नही ले रही थी। इसी बीच तीन-चार बार उनके सचिव मेरे पास आकर फुस-फुसाकर कह गये थे कि बहुत से लोग राह देख रहे हैं- अब बस करिये। पर माता जी तो अपने स्वामी की स्मृति मे खोयी हुई थीं। उठने का दिल हमारा भी नही कर रहा था, पर फिर उठना ही पड़ा। उठते समय माता जी बोलीं, "शाम को भजन है। मुझे भजन पसन्द हैं, इसीसे निर्मला ने (सी० पी० श्रीवास्तव की धर्मपत्नी) रखा है, जरूर आना।" शाम के आने की बात, भगवान् मे उनकी आस्था की बात सोचते हुए आखिर हमने उनसे विदा ली।

कृष्णस्वरूप

ललिता जी : मेरी भाभी

स्व० श्री लालबहादुर शास्त्री तथा ललिता जी के बारे मे बहुत कुछ लिखा गया है और भविष्य में शायद और भी बहुत कुछ लिखा जायेगा। आज ललिता जी के बारे मे कुछ ऐसे पहलुओ पर लिखना चाहता हूँ जो बहुत ही निजी है और जो अभी तक प्रकाश में नही आये है। शास्त्री जी के प्रधानमन्त्री होने के बाद उनके साथ ललिता जी प्रथम बार अक्टूबर, १९६४ मे बम्बई आई। शास्त्री की का प्रोग्राम बहुत ही व्यस्त था। रात १० बजे के करीब हम लोग गवर्नमेन्ट हाउस उनसे मिलने के लिए पहुँचे। शास्त्री जी बाहर बहुत लोगों से घिरे हुए थे और बातो मे व्यस्त थे। उस समय उनके साथ उनकी सबसे बड़ी पुत्री कुसुम भी आयी हुई थी। हम लोग ललिता जी तथा कुसुम से बातो में लग गये। ललिता जी से इधर-उधर की बातें हुई और मैने देखा कि प्रधान मन्त्री की पत्नी होने के नाते उनमें तनिक भी परिवर्तन नही था। रिश्ते मे भाभी लगने की बजह से मैने उनसे बिना झिझक पूछा कि, "नन्हकू भैया जब प्रधान मन्त्री हुए तो आपको कैसा लगा?" इस पर उन्होंने कहा, "बबुआ, सच कहती हूँ जिस दिन शास्त्री जी भारत के प्रधानमन्त्री हुए उस रात मै बहुत रोई, इसलिए नही कि क्यों प्रधान मन्त्री हुए, बल्कि इसलिए कि इतनी बड़ी जिम्मेदारी शास्त्री जी ने ली और उसे निभाना है" और फिर आगे कहा कि "रात भर मै ईश्वर से प्रार्थना करती रही कि इस जिम्मेदारी को अच्छी तरह निभा दे।"

ललिता जी को भजन-कीतन का बहुत शौक है और इसी लगन में होने की बजह से इधर कुछ वर्षो से भजन लिखने भी लगी है। उन्होने कहा कि प्रधान मन्त्री बनने के बाद उस रात को एक भजन भी बनाया और बगल वाले कमरे में बुला कर गुनगुना कर सुनाने भी लगी—

जियरा थर-थर कांपे राम
कैसे पार होइ है नाव।
हमके देव दिलासा राम, कैसे पार होइ है नाव।
हमरे मन मे संसय भारी, वहि का दूर करो त्रिपुरारी।
संकट दूर करो सब राम, कैसे पार होइ है नाव॥
'ललिता' कहती आहे गोहार, भगवन अब तेरे दरबार।
अब तू लाज बचा ले राम, कैसे पार होइ है नाव॥

इतने में शास्त्री जी भी वाहर से आ गये और देखा कि रग ही और है, भजन जमा हुआ है। उनके साथ थोडी देर तक वातें होती रही, काफी थके-से लग रहे थे, उन्हे सुबह के हवाई जहाज से जाना था और हम लोग वापस हुए।

पिछली वार ललिता जी शास्त्री जी के साथ गत अक्टूबर मे बम्बई आयी थी भारत-पाकिस्तान युद्ध के वाद। उस समय शास्त्री जी एक वीर योद्धा के समान थे और उनकी ललकार चारों ओर गूंज रही थी। शास्त्री जी के साथ ललिता जी का भी बहुत ही व्यस्त कार्यक्रम था। अपनी उस व्यस्तता मे भी उन्हे इसका ध्यान था कि हम लोग उनसे मिलने वाले है दोपहर के समय गवर्नमेन्ट हाउस में उनसे मिलने गया। वातचीत के दौरान मैने पूछा कि "युद्ध के दिनो मे शास्त्री जी का क्या हाल था, मन.स्थिति क्या थी ?" इस पर ललिता जी जरा मुस्करायी और लकड़ी छूते हुए उन्होने कहा, "ईश्वर करे कुछ न हो,शास्त्री जी उन दिनो विल्कुल स्वस्थ थे, समय से खाना, पीना, साना, सव उसी प्रकार था। कोई परिवर्तन नही था, वल्कि उनका स्वास्थ्य उन दिनो और अच्छा ही हो गया था। और कुछ वजन भी वढ गया था, जरा भी विचलित नही थे"। शास्त्री जी के स्वभाव की एक बहुत बडी विशेषता थी कि कभी विचलित नही होते थे चाहे जितनी भी बड़ी समस्या सामने क्यो न आ गई हो।

ललिता जी का ईश्वर पर बहुत विश्वास है। प्रतिदिन कुछ समय के लिए राम-नाम का पाठ करती है। उस समय वे किसी से बोलती नही। सारा काम करती रहती है और राम-नाम का जाप चलता रहता है—राम-नाम का सिलसिला टूटने न पाये इसलिए यदि कभी किसी काम के लिए बोलना वहुत आवश्यक हुआ तो राम-नाम के जाप की माला किसी दूसरे के गले थोडी देर के लिए डाल देनी पड़ती है, अर्थात् राम-नाम का जाप उनके मुख से कोई दूसरा ले लेता है और फिर जब ललिता जी आवश्यक काम से निवृत्त हुई तो जाप फिर वापस ले लेती है। मुझे याद है दिल्ली मे एक बार जब उनके निवासस्थान पर था तो इसी प्रकार की समस्या उठ खडी हुई। उन्हे किसी काम के लिए बोलना था और घर मे सभी वच्चे भागते फिर रहे थे, कोई राम नाम उठाने के लिए तैयार नही हो रहा था, मैं ही पकड मे आ गया और कुछ देर के लिए राम नाम का जाप करना पडा।

तिरुपति के वालाजी को शास्त्री जी के स्थान पर शास्त्री परिवार के उपास्य देव कहा जाय तो ज्यादा ठीक होगा। वाला जी का माहात्म्य देश भर मे प्रसिद्ध है। शास्त्री जी के प्रधान मन्त्री बनने से वहुत पहले एक वार शास्त्री परिवार ने दक्षिण की यात्रा की थी तव श्रीमती ललिता शास्त्री ने अपनी पुत्री कुसुम के लिए एक पुत्र की मनौती मानी थी। वाद मे सचमुच कुसुम को पुत्र की प्राप्ति हुई तो ललिता जी ने उसका नाम ही 'वालाजी' रख दिया और जैसा कि स्वाभाविक था शास्त्री परिवार की आस्था वालाजी मे दृढतर हो गयी। ललिता जी ने वालाजी पर अनेक भजन भी वनाये हैं। एक भजन इस प्रकार है—

वाला तेरे दरवार की महिमा अपरम्पार
तू चक्र सुदर्शन धारी लीला है तेरी न्यारी
तू रूप अनेक लिये करतार।
ब्रह्मा विष्णु महेश कहाए, कही राम कही कृष्ण कहाए
वाला रूप धरि किये उद्धार।

तूं सात पहाड़ के वासी, ललिता तेरे दरस की प्यासी
पूजन हित आई तेरे द्वार, महिमा अपरम्पार।

शास्त्री जी के निधन के बाद इतना बड़ा दुख का पहाड़ उनके सर पर गिरा, जिसको उन्होंने हिम्मत से सहन किया। शास्त्री जी के एकाएक निधन के बाद भी ईश्वर के प्रति उनकी भक्ति में तनिक भी कमी नहीं आयी। इसी पिछली जनवरी के महीने मे जब हम लोग दिल्ली गये, उनके हाल को देखने की हिम्मत नहीं होती थी। इतने पर भी बिल्कुल शान्त लेकिन बेबस! लगता था कि ईश्वर आखिर क्यों इतना कठोर बन गया, शायद ईश्वर के पास अच्छे आदमियो की कमी थी इसीलिए शास्त्री जी जैसे महान् व्यक्ति को उन्होने अपने पास बुला लिया और हम सबके प्रति कठोर बन गये।

ललिता जी के रहन-सहन मे बिल्कुल सादगी है। कही कोई दिखावा नहीं है। रूस जाने के पहले जब मिला था पूछा कि वहां तो बहुत ही ठण्ड होगी, क्या कोई कोट वगैरह पहनिएगा? उन्होंने सहज ढग से कहा कि "जब अभी तक कोट वगैरह नही पहना तो अब क्या पहनूँगी, और मुझे अच्छा भी तो नही लगेगा।" और ऐसा हुआ भी, सारे रूस का भ्रमण किया केवल शाल पर।

ललिता जी को पान खाने का शौक है। रूस मे बहुत-सी स्त्रियो ने इसे 'भारतीय लिपिस्टक' समझ रखा था। रूस की स्त्रियो से ललिता जी काफी प्रभावित हुईं ऐसा उनकी बातचीत से लगा।

गेहूँ रहित श्राद्ध किया जाय

उन दिनो जब अनाज की कमी थी। देश की खाद्य स्थिति अच्छी नहीं थी, शास्त्री जी ने इस पर जोर दिया था कि हफ्ते मे एक दिन उपवास रखा जाये, इससे खाने को बचत हो या कुछ ऐसी चीजे खायी जाये जो खाने के चलन मे न हों। इसीलिए शास्त्री जी के श्राद्ध मे ललिता जी ने इच्छा प्रकट की कि बेसन की पूरियां ही बनें और वही गेहूँ की पूरियों की जगह खायी जाये, ताकि किसी और रूप मे गेहूँ न मंगाया जाये, जितना उनके राशन कार्ड मे है, वही मगाया जाये और बाकी बेसन का प्रयोग हो। ऐसा करके ललिता जी ने शास्त्री जी के आदर्शो का पालन किया, और उनकी ईमानदारी निबाही। नहीं तो ललिता जी को गेहूँ मिलने मे क्या कठिनाई हो सकती थी।

पिछली जनवरी में मैने देखा शास्त्री जी के निधन के बाद आदमियो का ताता जो सुबह से लगता था, उसका अन्त ही नही होता था। १० जनपथ मे जहा, शास्त्री जी की भस्मी रखी हुई थी, उसके दर्शन के लिए दर्शको की एक बडी लम्बी कतार सडक के बाहर बहुत दूर से आती थी और १० जनपथ से होते हुए १ यार्क प्लेस, जहां शास्त्री जी का कमरा था, वहां ललिता जी के दर्शन के बाद ही खत्म होती थी। हजारों लाखों की भीड़ ललिता जी के दर्शन के लिए लालायित रहती थी। आज बिना शास्त्री जी के ललिता जी भले ही अपने को अकेली समझे लेकिन भारत की जनता उनके साथ है, जिसने उन्हें इतना मान दिया है।

श्रीमती प्रभा भटनागर

रोशनी जलती रहेगी

वर्ष दो वर्ष नही, दस-बीस वर्ष नही, सौ-पचास वर्ष भी नही, कही शताब्दियो मे जा कर ऐसी महान आत्माएं अवतरित होती है, जिन के दिव्य, अप्रतिम प्रकाश मे आखे चौंधियाँ जाती है।

ऐसा अद्भुत! ऐसा महान्! विस्मित-स्तम्भित से हम ताकते रह जाते है, और वह स्वर्गीय प्रकाश अपनी अनुपम छटा से धरती का प्रागण मुखरित कर जाता है। जिस देश मे वह जन्म लेता है, वहाँ की धरती धन्य हो जाती है। मा का उघडा तन ढक जाता है, कोटि-कोटि जनके सुखे मुख, मुरझाए मन प्रात.-कमल से खिल जाते है। धरती का दैन्य-दुख, अभाव अभियोग मिट जाता है, आपत्कालीन सकटो के बादल छट जाते है।

ऐसे ही थे हमारे भूतपूर्व प्रधान मत्री, जिन्हे अभी भूतपूर्व कहने मे मन बिखर बिखर जा रहा है।

अखबारो के पृष्ठ रग गए, उनके अवसान का दृश्य दिखाते-दिखाते, रेडियो का गला सूख-सूख गया उनकी महायात्रा की कहानी कहते-कहते, पर मन है उसे सच मानने को तैयार नही होता। लगता ही नही कि हमारा प्यारा लालबहादुर हमारा लोकनायक नेता, हमारा सुयोग्य पथ-प्रदर्शक, अब हमारे बीच नही है। सभी तो थे, अभी कल-परसो की ही तो बात है कि हमारे लिए, देश के लिए, विश्व के लिए शान्ति का सौदा करने गए थे।

किसे मालूम था कि जनता का जनार्दन जनता की सेवा करते-करते थक कर सो जाएगा। इस अन्तिम श्रम से वह इतना थक जाएगा कि फिर महाप्रयाण की तैयारी कर लेगा, महानिद्रा मे लीन हो जाएगा हमेशा-हमेशा के लिए।

उसका समस्त मनोबल, समस्त दृढ इच्छा शक्तियाँ, गिरि-सी अडिग विचार धारा, शिखर-सी महान् वह आत्मा, महाकाल के इस निमत्रण की उपेक्षा न कर पाएगी और चुपचाप नतमस्तक स्वय को उसके समर्पित कर देगी।

१८ महीनो तक काटो का ताज पहने हमारा यह बेताज बादशाह जिस कुशलता से देश की बागडोर सभाले चला, वह बेमिसाल है। हम ४७ करोड जन ही नही सारी दुनिया स्तम्भित, विस्मित-सी देखती रह गई उसकी अद्भुत शासन-प्रणाली की अनुपम कार्यक्षमता को।

हमारी तलवार मे शताब्दियो से जग लगा पडा था, पर उसी तलवार ने लडाई के मैदान मे वे-वे करतब दिखाए कि दुश्मनो के दिल दहल गए, उनके छक्के छूट गए और युगो बाद हमे यह दिन नसीब हुआ कि देश ने जीत का अपनी शानदार जीत का मुकट पहना।

हमारी युद्ध-प्रणाली पर, हमारे जवानो के अप्रतिम शौर्य और उत्साह पर और सबसे अधिक हमारे अस्त्र-शस्त्रो की शक्ति पर दुनिया एक दम चौक उठी।

●

खण्ड : २

काव्यांजलियां

सोहनलाल द्विवेदी

पुत्र इतिहास बन गया

वह अशोक की आत्मा, रण का विजयी योधा,
शान्ति चक्र का धर्म प्रवर्तक, शान्ति पुरोधा,
उठा धरा से, पहुँच शिखर, आकाश बन गया,
धरा देखती रही, पुत्र इतिहास बन गया।

शान्ति खोजने गया, शान्ति को गोद सो गया,
मरते-मरते विश्व शान्ति के बीज बो गया,
कोई कुछ भी कहे भाव अब शुद्ध न होगा,
श्रद्धांजलि उसकी सच्ची अब युद्ध न होगा।

बालस्वरूप 'राही'

ग्यारह जनवरी की सुबह

आज सुबह सुबह नही हुई
सूर्य उगा पर अंधेरा झरा ही नही
रात्रि के सन्नाटे को चीर कर
चीखते रहे रात-भर
सायरन के स्वर
हवा में तैरता रहा
किसी मनहूस चील का टूटा हुआ पर
देश के सवेरे को लग गई कोहरे की नजर !
अक्सर देखा है मैंने
जब भी कोई महान आत्मा त्यागती है देह
सूर्य का तेज फीका हो जाता है
वह असामयिक मेघों मे खो जाता है !
असह्य हो उठी है आकस्मिकता !
मालाये जो पिरोई गई थी कंठहार बनने के लिए
चरणो पर चढ रही है !
जयकार के लिए छटपटाते होठ
कस गए हैं दाँतों मे
रोना भी औपचारिकता लगता है !
ओ साधारण की असाधारणता के प्रतीक,
ओ लघु की महता के दृष्टान्त !
तुम्हारे वैयक्तिक स्पर्श से
अब भी महक रहा है देश का कण-कण
बन गये थे तुम हमारी महत्वाकांक्षाओं
के दर्पण !
छोटे-से-छोटा काम भी
तुमने बड़ी गरिमा से किया
जीवन
महाकाव्य की तरह नही
छोटे-छोटे भाव भरे गीतो की तरह जिया !
अन्तत. उपलब्धि की उस चरमता तक गए
पहुँच कर जहा टूट जाता है छन्द
बिखर जाती है पाखरिया
शेष रह जाती है गन्ध !

●

केदारनाथ मिश्र 'प्रभात'

ओ शान्ति के हिमावत ज्वालामुखी !

ओ फौलादी सकल्पो को
आलोक का स्वर देने वाले वीर !
तुमने शिशिरित शिराओं के रक्त को
विद्युत से छूकर जगाया
तुमने तेज को द्रवीभूत किया, बताया
कि हमारे सभी वृक्ष, प्राचीन और नवीन
हमारे सभी पर्वत—शृंग मुक्त और स्वाधीन
हमारे सभी व्रतबद्ध शब्द उच्छल तरगासीन
आक्रम के तूफान को अस्त-व्यस्त कर दे
तिमिर के गर्जित गर्व को ध्वस्त कर दे
तुमने राष्ट्र-जीवन को कर्म दिया
नम्रता को वज्रामा का वर्म दिया
तुम्हारा यज्ञ सफल हुआ
भारत का यश धवल हुआ
ओ देश के गौरव-गरुड को पर देने वाले वीर !
किन्तु यह कैसी अनीहा, कैसा मौन
नहीं देखोगे क्या रक्त सिक्त भारत का नवीन बसंत
जहाँ बम के गोलों ने प्रहार-चिन्ह बनाए थे
नही देखोगे क्या वहा की हरियाली, श्री ज्वलंत
अग्नि-परीक्षा की लपटों मे नहाकर पवित्र हुआ
हर अंकुर, हर फूल, हर पौधा, हर खेत, हर खलिहान

कोयल के गीतों से निकला हुआ हर उफान
तुम्हे पुकारेगा, पूछेगा
ओ शान्ति के हिमावृत ज्वालामुखी !
यह कैसी यात्रा अनन्त
नही देखोगे क्या गणतन्त्रोत्सव का विजयी वसंत ?
ओ इतिहास के पन्नो को नाहर देने वाले वीर !
तुमने शिल्पित किया जिस भारत की प्रतिमा को आग से
पूजा जिसको नये अगारो के किंजल-पराग से
उसका हर वसंत, हर प्रात.कालीन लहर
सरसो और सेमर की पखिल वह्नि-शिखाओ मे
तुम्हे खीचेगी
तुम्हारी याद उन्हे सीचेगी
ओ राष्ट्र कीप्रांशुता को नया शिखर देने वाले वीर !
तुमने अपने सुयश से
अपना स्वर्ग बनाया
और वह सुयश
न केवल इस लोक की ऊँचाइयों पर
दिन-रात खेलेगा
वह देव-लोक के उत्सव पर भी
चांदनी का अमृत उंड़ेलेगा

नरेन्द्र शर्मा

उस पार

घाट नदी का, सावन-भादों, कितना चौड़ा पाट !
एक अकेला बालक तट पर, पार गाँव की बाट !
नाव नही हैं, और नाव हो भी तो नहीं छदाम,
कैसे उतरे पार ? छात्र का जी हो रहा उचाट !

जाना ही होगा घर, मन मे दृढ़ हो गया विचार,
बैठे होंगे घर मां-मामा मेरा पंथ निहार !
उतर पड़ा धारा में बालक सिर पर बस्ता बांध,
दिया लोकमाता नदिया ने जीने का अधिकार !

लाल बहादुर था वह बालक भावी पंत प्रधान !
बाल्य काल मे पार उतरने का पाया था ज्ञान !
युद्ध-संधि, चाहे जैसा भी रूप धरे दिक्काल;
नदी रक्त की हो या जल की, उसके लिए समान !

शिरोधार्य कर्त्तव्य, सुरक्षित सदा शीश का भार !
धारावाहिक विषम परिस्थितियां उसका संसार !
दे जन-मन को सत्व, अग्नि को कंचन, जल को फूल
पार उतार राष्ट्र को जेता चला गया उस पार !

त्रेता युग के राम-राज्य का जन था वह सामान्य !
निर्धन भारत का धन था वह, धरती मां का धान्य!
महामान्य सामान्य रूप मे यश-काय की कीर्त्ति,
वह अनन्य है, यद्यपि नेता-जेता है अन्यान्य !

गाथाशेष देश में उसका सदा रहेगा नाम !
रीति सनातन, चाम नही, प्यारा होता है काम !
जिसे देश से, किन्तु नियति को थी जिससे अति प्रीति,
शीलभद्र उस ललितापति को शत-शत विनत प्रणाम !

पार गया वह, कहां गया वह ? अग-जग यही पुकार !
जिया-मरा वह शील-शौर्य के नियमो के अनुसार !
शांति-तीर्थ के तीर नीर मे प्रतिबिम्बित प्रिय चित्र,
भाग्य-विधाता भारत-माता का वह श्रवण कुमार !

बहुत दिया, कुछ लिया न हम से, ऋणी रहेगा देश !
काम करो, कुछ कहो न, उसका यही अमर सदेश !
वज्रादपि कठोर कुसुमादपि कोमल सत गृहस्थ,
हम उसको पहचान न पाए, यही रहेगा क्लेश !

इतना अपना था कि अवज्ञा हुई हमारे हाथ !
रहा कष्ट मे, किन्तु अन्त मे गया ठाठ के साथ !
कंधा देते बहुत, बहुत का लेता है जो भार,
पार उतारे जो, उसके प्रति झुक जाता है माथ !

●

मेघराज मुकुल

मौत और धरती की हिचकी

गम में डूबी किरण आज,
माँ—धरती की हिचकी सुन रोई।
अन्धकार को ओढ मौत भी,
तम की गहन गुफा मे खोई।

युग—मानव का रक्त चढाकर,
कुर्बानी सिसकी भरती है।
और वेदना की आखो से,
अश्रु भरी करुणा झरती है।

आज शान्ति की लाज बचाकर,
लाल बहादुर शास्त्री !
तुमने निश्चय लाज बचाई विश्व शान्ति की।
लाज बचाई घर, बाहर, पड़ौस की तुमने,
लाज बचाई दु.ख-आवेष्टित मानवता की।

विश्व चकित है, समझ न पाता,
छोटी सी काया ने जाने—
कैसे ज्वालामुखी छिपाया ?
कैसे फूल वज्रवत् क्षण मे—

झंझाओं के सँग मुस्काया !
धैर्य और संकल्पो वाला
हृदय न जाने,
किस बेला मे—
प्रजातन्त्र का जन-बल लेकर,
संस्कृत की गरिमा को छूकर,
अभय हुआ था ?

नये प्रात का मूर्त उजाला,
सत्य-शक्ति ले,
जिसके मुख पर उदय हुआ था !

आत्मसुरक्षा के श्लोकों को—
ज्वलित देख जो,
ताकत का ताकत से ही—
सिर झुका सका था !

जो विनम्रता की वीथी मे,
सदियो का ऋण चुका सका था।

जिसे सादगी वरण कर चुकी थी,
हिसा जिसके चरण झुकी थी,
जन-साधारण होकर भी—
जो बेमिसाल था !!

उलझे हुए सवालो का—
जो मृदु उत्तर था !
सकट की घड़ियो मे,
जो आशा-अवसर था।
नई क्रान्ति को लाने वाला जो सवाल था !
भूख गरीबी के हाथों जो बना ढाल था !!

समझ-बूझ के छन्दों ने—
जिसको अबाधगति पाया।
हर विरोध ने जिसके स्वर को,
अपना कह कर गाया।

दुश्मन दोस्त हो एक जिसके,
वे जादू दिखलाए !
जिसकी अर्थी को कधा—
देने अयूब भी आए !!!

हठ-विवाद झुक गये आज—
जिसकी सुगन्ध के आगे।
कटुता की चादर पर जिसने,
खीचे शुचितम धागे।
सकट की घडियो मे जिसने,
दी मशाल मानव को।
जिसकी मृदुता ने झंझा मे,
झुका दिया दानव को।

जिसकी ज्योति जगमगाती है,
प्रगति-पथ पर।

जिसने दिशा-दृष्टि दे—
आगे और बढ़ाया आजादी को !
जिसे शान्ति ले लोरी देकर आज सुलाया।
जिसकी मौत देखकर—
पिछली सदियां भी बेचैन हो रही।

यह बेवक्त मौत का सदमा,
कैसे धरती सहन करेगी !
कैसे भारत की जनता—
गम के आंसू पी धैर्य धरेगी !!!

अब तक मानव,
देव रूप धर गये स्वर्ग को।
लेकिन आज देख लो—
मानव मानव बन कर,
इस धरती को स्वर्ग बनाकर,
शान्ति जगाकर चला गया है।

जाने वाले—
हे युग मानव !
जन साधारण !
हे जन-नायक !
एक बात का
हम विश्वास दिलाते तुमको—
छोटे से जीवन में तुमने,
'बड़ी बात' की थाती !
जो हमको दी इस क्षण—
उसे सदा हम,
इस समाजवादी संस्कृति की—
सास समझकर,
सदा सुरक्षित,
सदा-सदा जीवित रखेंगे !!

●

शेरजंग गग

देश

एक सुन्दर, खूबसूरत, खुशहाल
भविष्य की कल्पना मे
मृत्यु, युद्ध, भूखमरी के
मनस्तापो को झेलता हुआ
धीर गम्भीर गति से
बढ़ रहा है सारा देश।
सताइस मई को
उसका चेहरा रूआसा हो जाता है
पन्द्रह अगस्त को
उसके होठ मुस्कराने लगते है
निगाहो मे रोशनी के गीत
तैर-तैर जाते है
और वह नये सिरे के सकल्पबद्ध होकर
सुख, समृद्धि तथा शान्ति की राह पर
बढ़ने के लिए
प्रयत्नशील हो उठता है।
इस वर्ष उसकी पीड़ा मे
एक याद और जुड गयी है
ग्यारह जनवरी का भोर
उसकी आखो को नम कर जायेगा
एक नन्हे से आदमी की स्मृति मे
वेचारे का मन भर जायेगा
मित्रविहीन, अकेला, उदास
किन्तु सासो मे भरे हुये अदम्य विश्वास
छब्बीस जनवरी के रोज
पावों में नई ताकत समेट
वह आगे बढ जाता है
आकाशगामी विमान उसे
इन्द्रधनुषी रगो मे सलाम करते हैं
और उसके इस विराट रूप को विश्व
देखता है
देखता रह जाता है।

भारतभूषण अग्रवाल

खिलती रहेगी तुम्हारी हँसी

नही,
न पहाड़ टूटा,
न जमीन कापी,
न समुद्र उफना—
बस चुपचाप, अचानक
शोक की एक काली रात
फैलकर जम गयी
क्षितिज की आंख मे।
उफ उसके बर्फीले पर्दे से छनकर
भी दीखता है :
तुम्हारा वह बायां हाथ अभय-मुद्रा मे उठा हुआ
जब तुमने दूर ताशकन्द मे
हंस करके अपनी बंधी मुट्ठियाँ
खोल दी !
मुट्ठियाँ,
जिनमे तुमने अठारह महीने पहले
बाँधा था
बेचैन जन का एक संकल्प—
जब पहाड़ टूटा था,
जब जमीन काँपी थी.
जब समुद्र उफना था !
नही,
आँसुओं का कोई काम नही है।
आंख मे यद्यपि भरी है रात ?
पर तुम्हारी इस अचल अभय
मुद्रा की छाया मे
खिलती रहेगी तुम्हारी हँसी
एक कृतज्ञ-जन का भविष्य-फूल।

●

बालकवि बैरागी

मेरे देश शकुन ले

सूरज-चाँद-सितारो की छाती पर
सदा-सदा जो लहराता है
वही हमारा अमर तिरंगा
एक बार फिर कपा
हाय रे ! एक बार फिर अकुलाया है—
जो उसको थामे निकला था गगा की धरती से तन कर,
वही हमारा वामन उसको कफन बनाकर
ललिता के द्वारे पर
चिरनिद्रा मे लीन, लिपट कर आया है।

जमुना के पावन तीर !
तुम्हारी भी क्या किस्मत है ?
बापू, चाचा, लालबहादुर,
सब के रथ तुम तक आ कर के ठहर गए चुपचाप स्वयं ही
आजादी के तीन कुभ जुड़ गए तुम्हारे महलो मे
कौन पाप मेरी पीढ़ी का फूटा जो
भटक रहा है सारा यौवन आँसू के इन मेलो मे।

कल तक लोहू पीने वाले मेरे भारत !
आज अमन की खातिर थोड़ा विप भी पी ले
आँसू पोछ, उठा फिर माथा
बदले परिवेशो मे जी ले !
ताशकन्द ने अमन दिया है
बेशक हम से बहुत लिया है।
जो भी हुआ बड़ा बैसा है
लेकिन कोई बात नही है
लालबहादुर की अरथी को मिल जाए कधा अयूब का
ये भी कम सौगात नही हैं।

कंधा—वो भी दायां कंधा ?
बेटों से पहले हेटों का कधा—
मेरे देश ! शकुन ले—
कर प्रणाम उस हस्ताक्षर को
जो ललिता के भव्य भाल की बिदिया के बदले पाया है
मेरा मन तुझ से पहले अकुलाया है।

ओ अयूब के दाँये कधे !
तूने मेरे महाबली का सर चूमा है—
मैं, मेरा घाव भरा मन, मेरे जलते गीत
अमन के सारे सपने तुझ पर न्यौछावर करता हूँ।
मेरे पनघट, मेरे मन्दिर, मेरे गिरजे, मेरी मस्जिद,
मेरी महफिल और चमन ये सारे-मेरे
माँग रहे है वादा तुझ से सिर्फ यही -
कि हमने अपने हाथों से अपना सूरज तोड़
तुझे सौपे है दो टुकड़े,
ये दुनिया जिनको पाकिस्तान कहा करती है—
उन टुकड़ों को
मेरे खण्डित महासूर्य से
लालच मे आकर जलवा मत देना
किसी गैर से ले कर के फिर टूटी बन्दूके
अपने पर रख,
मां पर गोली चलवा मत देना।

सैंतालीस करोड अमन के बन्दे है
दुआ मांगते है कि तुम्हारे ऊपर वाली गर्दन
तनी रहे कुछ खम ना हो
फिर हाथ हमारा छोटे भाई पर उठे नही
ताशकन्द से जमुना तक की राहों पर
और भले कुछ हो
पर मातम ना हो !

विराज

धन्य बहादुर

अप्रत्याशित, अत्याकस्मिक, साथी ! सुन अवसान तुम्हारा;
शुल कसकता है छाती मे, थमती नही अश्रु की धारा,
जितने दिन हम साथ रहे थे, भीषण संकट साथ सहे थे,
और इसी से साथ तुम्हारा हमे हो गया इतना प्यारा।

कलकी ही तो वात को दुश्मन चढ आये सगीने ताने;
प्रखर दर्प से भरकर अपना और हमारा लहू बहाने,
वढा टैक-दल, गरजो तोपे, लेने लगे विमान उड़ाने,
कितना समझाया उनको, पर समझाने से वे कव माने।

उस दिन सुनी तुम्हारे मुख से हमने, वीर स्वय निज वाणी;
रिपु की सुन ललकार सहमने वाले यहाँ नही थे प्राणी,
कई युगो के बाद राष्ट्र तब वीर गर्व से उमग उठा था;
रिपु को वढते देख कि जव तुमने क्रुद्ध भृकुटि थी तानी।

और तुम्हारा भ-इगित पा, चेत उठे सैनिक मतवाले;
सोए नाहर जाग उठे ज्यो फुफकारे ज्यो विपधर काले,
वढते हुये शत्रु का माथा चट्टानो से आ टकराया;
कायर पीठ दिखाकर भागे और गये भर हिम्मत वाले

गव खर्व कर दिया शत्रु का, शेखी धूल मिला दी सारो;
ली वाजी वह जीत, अठारह वर्ष पूर्व जो हमने हारो,
विना शक्ति के न्याय न मिलता, तुमने कठिन सत्य पहचाना;
और मजे की वात कि अव तुम कहलाओगे शान्ति पुजारी।

दरवाजे पर आ ललकारे जव अन्यायो अत्याचारो;
शान्ति, शान्ति जय करने की तव न कभी थो नोति तुम्हारी,
जिस क्षण दुश्मन ने भारत की सीमा मे निज पाव वढाया;
निकल म्यान से वाहर आई चट नगी तलवार हमारी।

तुम थे वामन रूप, इसी से मित्र शत्रु सब थे भरमाए;
हुआ अपरिमित तेज प्रकट, जब तुम असली स्वरूप में आए,
उसी तेज का कन-कन लेकर बना यहाँ जन-जन मतवाला;
उन मतवालों ने फिर संभव कार्य असंभव कर दिखलाए।

बढ़े वीर सैनिक निर्भय हो लोह-दानवों से टकराने;
लोहे से मानव दुर्जय है, यह नूतन सिद्धान्त बनाने,
और उन्होंने दानवों का सचमुच विनाश कर डाला;
तोपें, टैंक, विमान सभी तो लगा दिए निज ठीक ठिकाने।

मीठा स्वाद का तुमने हमको पहली बार चखाया;
सदियों से लज्जानत शीशो को तुमने इस बार उठाया
तुम सुभाष के बाद देश के निकले महावीर सेनानी;
संकट ने आ स्वयं तुम्हारे मस्तक पर जयतिलक लगाया।

नगर-नगर पर, गांव-गांव पर, बम बरसाये थे उन्मादी;
अन्न न दगे, शस्त्र न देगे, धमकाते थे अवसर वादी,
तब आवाज तुम्हारी हम सुनते थे अविचल सीधी सादी;
भूखे रह लेगे, पर छिनने न कभी यों देगे आजादी।

जिस मिट्टी में हम जन्मे हैं, हुआ उसी से जन्म तुम्हारा;
उसी गरीबी में तुम पनपे जिसम पलता भारत सारा,
वेश हमारे बात हमारी, और सभी आदर्श हमारे;
नेता, नहीं हमें तो लगता, भाई ही छीन लिया हमारा।

तुम चम्पा के फूल सदृश, बस थोड़ा काल बिकसने पाए;
लेकिन उतने ही में तुमने वन-उपवन सारे महकाए,
वह सुवास अब रमी रहेगी भारत के कौन-कौन में;
जो भी आए, जब भी आए उसका चित्त मुद्रित हो जाए।

●

रवि दिवाकर

एक बहादुर लाल देश का हुआ राम को प्यारा

अभी और आघात जननी के मन पर लगा करारा
एक वहादुर लाल देश का हुआ राम को प्यारा।
एक नही सैकड़ो बरस मे भारत अपनी छाया—
जिस के तन-दर्पण मे लख कर मै था हर्षाया,

सग सग जिस के सैतालिस कोटि चला करते थे,
प्राण-ज्योति से माँ-मन्दिर मे दीप जला करते थे,
जिसने जनता को जनार्दन समझ साधना की थी,
अर्पण कर सर्वस्व राष्ट्र की प्रगति-कामना की थी,

धुंधला चित देश का जिसने भर कर रंग निखारा,
एक वहादुर लाल देश का हुआ राम को प्यारा।
जिसने दृढ़ सकल्प देश का जग मे किया उजागर
वता दिया भारत का बच्चा-बच्चा है नर-नाहर,

जिसने की घोपणा—'शान्ति है बलवानो का भूषण,
हथियारो से नही हौसलो से जीता जाता रण',
पूर्व प्रतिष्ठा फिर जिसने धरती की वापस ला दी,
फिर भारत के शौर्य और पौरुप की धाक जमा दी,

डूब गया है आज वही जाने कैसे ध्रुव तारा,
एक वहादुर लाल देश का हुआ राम को प्यारा।
आज देश की तरुणाई ने खोया अपना नेता,
विजय रो रही विलख-विलख कर खो निज अभय विजेता

कोटि-कोटि हृदयो के प्यारे लाल बहादुर तुझ पर—
पीडा मे डुवा कवि करता श्रद्धा-सुमन निछावर,
अमर रहे तेरे संकल्पो का भू पर उजियारा,
एक वहादुर लाल देश का हुआ राम को प्यारा।

●

राबिन शॉ 'पुष्प'

मौत के बाद एक अनदेखा घर

आकाश की चादर से—
रोज की तरह,
अभी धूप का—
पतला साया
पिघल कर टपका भी नहीं था,
अभी तक—
लाश को तरह
अंगीठियां सर्द थी,
और रजाइयों के भीतर की—
सुसुम आंच
बाहर की ठण्डी हवाओ के साथ
किसी तरह का भी—
समझौता न कर पाईं थीं,
कि एक बात—
किसी कागज पर फैलती हुई
रोशनाई-सी बढ़ती ही गई।
धूप का—
न पतला साया पिघला,
न अंगीठियां सुलगीं,
न सुसुम आंच ने—
सर्द हवाओं से समझौता किया....
मगर जिस्में—
दालानों में,
बाजारों मे,
या फिर सड़को पर आ गईं,
जिस्में—
यानी जिस्मों की भीड़।

o

वक्त ने—
बेवकूफ जिद्दी बच्चे की तरह,
अपने ही हाथो से—
सही रंग भरने के बावजूद भी
एक खूबसूरत से चित्र को फाड़ दिया।

ओह!
अब भी रात है…
[एक पैंतीस या दो के आस-पास]
परन्तु शायद पहली बार—
रात मे ही,
सुबह जग गई है…
और ऐसा लगता है—
इछोगिल यकायक बूढ़ी हो गई,
उसके चेहरे पर—
बेशुमार झुरियां उभर आईं,
पुंछ—
नेफा की तरफ देखकर
बेतहाशा चीखता जा रहा है…
काश्मीर की सिसक—
धुनी हुई रूई-सी उड़ती है,
और हिम के श्वेत कगन—
बेवा की चूड़ियो की तरह
टूट-टूट कर गिरते है,
कतार मे—
सलीके से खड़े हुए चीनारो के पेड़
मातम मनाते हुए—
सिपाहियो की तरह
बेहद थके और उदास हैं,
और डल—
श्रीनगर का
रोशनी से भीगा-भीगा
अक्स पानी के आइने मे देखकर
बार-बार सोचती है—
वह अब भी एक कंदील है,
जिसके उजाले की खातिर—
कोई फरिश्ता
अपनी सासे परदेश मे ही भूल आया…!

o

बार-बार
एक पुराना अखबार
हवा मे सिर पीटता है—
'नो होम फॉर ए होम मिनिस्टर'

दिल्ली कहती है—
'मैं उसका घर हूँ।'
नेफा चिल्लाता है—'मैं'।
कश्मीर की—
गलती हुई
बर्फ कहती है—'मेरी सर्द रगों में,
पहली बार उसने गर्म खून दिया है····
मैं उसका घर हूँ।
चारों तरफ से चीखें उभरती हैं—
'मैं ·· मैं ··मैं····'
और एक मिडिल स्कूल के—
मामूली शिक्षक की पत्नी,
अतीत की नदी में—
बहुत दूर तक बह जाती है····
उसकी कमजोर कांपती आंखों में—
कोई आंसू वाली झालर बुन देता है,
और वह—
कुछ नहीं कहती,
कुछ भी नहीं····
बस, अपनी बहू के
सूने से—
उदास माथे की—
खाली जगह को टुकुर-टुकुर
निहारती है,
जहाँ कभी एक बड़ा-सा
लाल टीका था,
और उसके
मन में,
सिर्फ एक सवाल पैदा होता है—
घर ?
औरत का टीका—
खुद घर-बार होता है,
देश का त्यौहार होता है,
भरा पूरा ससार होता है,
और एक बार फिर—
वह कांच की तरह
टुकड़ों में बिखर जाती है····।

डॉ० विनय

युग-युग तक चरण पखारेगी भारत के, तेरी पावनता

ये कैसा गूंजा आर्त नाद
फिर धरती अकुलाई है।
फिर लगी ठेस मा के ममत्व को
फिर धरती अकुलाई है।

मिच गये नेत्र, नम गये माथ
हे जग-जीवन के कर्णधार!
क्यो तुमने फिर करवट बदली ?
चल गई तुम्हारी फिर कटार।

मैं मान गया इस सूक्ष्म दृष्टि को,
माला का मनका बीन लिया।
जो फूल हँसा था उपवन मे—
सहसा हमसे यो छीन लिया।

मै देख रहा हूँ शुभ्र चादनी की चादर,
झिलमिल करती सी और दिखाई देती है
धरती की गोदी शून्य हो गई है लेकिन
नभ के तारो मे भीड़ दिखाई देती है।

उनके मन की सीमा मे सत्य-अहिंसा ने,
अपने समर्थ रक्षक को ही पहचाना था,
जब नेहरू जैसा लाल छिन गया था उनसे—
तब लालबहादुर को ही अपना माना था।

कुछ नहीं क्षोभ, कुछ नहीं शोक
यह जीवन का आना जाना।
यह कर्म-बद्धता प्राणों को,
आत्मा का अस्त्र बदल लेना।

कर गये सभी कुछ वे, जिसको
उनके जीवन मे करना था—
जो शेष-करे सन्तति आगे।
यह प्राण, देव को वरना था।

हे शान्ति दूत है आत्म-विजय—
देवत्व समन्वित मानवता।
युग युग तक चरण पखारेगी—
भारत के, तेरी पावनता।

उस महिमा को, उस गौरव को
धरती के लाल बहादुर को।
थे गीली आँखें नमन करें
भारत के पूर्ण विभाकर को।

●

मधुर शास्त्री

ओ दुर्दि

पिछले गुलाब के आंसू सूख नहो पाये
असमय आये पतझर ने गीले किये नयन
अभो-अभी बस दो कदम चली थी मानवता
मोच आ गयी पग मे
युग का हृदय थमा
कोमल की आयु घटाने वाले इस तम को

मेरे मन का सूर्य करेगा
अब नही क्षमा

माग भरी कश्मीरी केसर की अभी-अभी
हल्दी लगे हुए हाथो मे भर गयी अगन
प्रिय, समय तुम्हारे लिए भले अनजाना हो
लेकिन तुम ने तो
मूल्य चुकाया क्षण-क्षण का
टेढ़े-मेढे प्रश्नो के सीधे उत्तर से

लगते थे सज्ञा मे
समुदाय विशेष का

तुम राजनीति मे नैतिक मौलिकता थे
तुम सोये, भारत की सस्कृति ने किया शयन
थकता जीवन नही कभी, सदा मृत्यु थकती
क्षमता जगती जब
पीड़ा होती है दूनी
इतिहास बताता है इस भारत-जननी की

गोद भले सूनी हो
पर कोख नही सूनी

हां सुन्दरता को नजर लगी वीरानो की
ओ दुर्दिन, हंसो नही महकेगा यही चमन

●

मधु भारतीय

क्या सचमुच सूर्य उगेगा नहीं !

तुम बोले
हमारे कण्ठ खुल गये
तुम चले
हमारे पैरों में पंख लग गये,
तुम हंसे
निराशा से काले पड़े चेहरे
धुल गये,
तुमने सिर उठाया
हम गर्व से तन गये,
तुम्हारी भृकुटियो मे बल पड़े
तूफान थम गए,
तुम्हारो हथेलियों के नीचे
बिखरे मोती माला बने
जुगनु ज्योति बने ।
ओ लघु तन !
अल्प काल मे ही
ऐसा क्या टोना किया तुमने
हम, हम न रहे
तुम्ही विराट हो गये ।
मृत्यु—
तुम्हें
हमारे बीच से ले जाने मे
घबराई होगी
इसीलिए ताशकन्द मे
हमारी दृष्टि से दूर ले जाकर उसने
अंधेरी रात मे तुम्हे चुपके से तोड़ लिया ;
क्या सचमुच सूर्य
अब उगेगा नहीं !
हमारी चेतना पर जमा कुहरा
घटेगा नहीं ?

वहाँ तक हम हैं।

जहाँ-जहाँ तक सुनाई देती है
तुम्हारो आवाज
वहा-वहा तक दिखाई देती है
तमतमाए हुए चेहरे, कसी हुई मुट्ठिया
तने हुए भाल !
लालबहादुर,
तुमने क्षमा को प्रतिशोध से
विनय को स्वाभिमान से
सहिष्णुता को क्रोध से सयुक्त कर दिया है।
कोटि-कोटि देशवासियो को
आत्मदया से, अपमान से, कुण्ठा से
हीनभाव से मुक्त कर दिया है।
अब जहाँ तक इतिहास है
जहा तक अस्तित्व है
(होने का आभास है)
वहाँ तक हम है।
फूटते हुए निर्झर की तरह
सीचते हुए नदी की तरह
बहाते हुए सागर की तरह।
अब हमारे पखो के सामने
जितने भी आकाश है, बहुत कम है।
अब
जहा तक अस्तित्व है
जहा तक इतिहास है
वहां तक हम है।

डा० शम्भूनाथ सिंह

वामन से विराट

क्षण भर में यह क्या हो गया
कि सभी हरी पत्तियों पर
चोट के निशान पड़ गये है
और रस के सोते वहना भूल गये है।
रात कहो कोई तारा नही टूटा,
नही हुआ कोई अशुभ शकुन,
कही कोई आग नही लगी
नही आया भूकम्प
या समुद्री तूफान;
फिर भी वन्द होती सी लगती हैं
सबके दिलों की धड़कनें,
साँस रुक रही है
और महासागरों की ऊँची लहरें
हम सबको तोड़ती-मरोड़ती
ऊपर से गुजर रही हैं।
समय की गदा कही एक
मिट्टी की लघु मूर्ति पर गिरी है।
टूटी हुई मूर्ति धूल वन जायेगी
लेकिन उस छोटी मूर्ति को
यह विराट छाया!
क्या इसे भी
समय की तलवार काट सकती है?
एक छोटा हस्ताक्षर
सभी छोटे हस्ताक्षरो के वीच
सहसा हजारों किलोवाट
विद्युत शक्ति से जल उठा है।
यह कभी न बुझने वाली रोशनी
और क्षितिज को छूती यह विराट छाया ही
उस वामन मूर्ति की
शाश्वत रसायन है।

दुख की इस घड़ी में

तुम्हारे दो हाथ हैं
और मेरे भी दो हाथ हैं
आओ इस दुख की घड़ी में
हम एक दूसरे को
गाढ़कर आलिंगन में बांध लें।
हमारी काली और सूनी
इन रातों के पार
ईमानदार कोई सुबह
उतर रही होगी
जरूर उतर रही होगी।
हमने सूरज देखे हैं
और तारे भी
हमने अगन्ध बाजारें देखे हैं
और सुगन्ध बहारें भी;
आज आसमान सूना-सूना है
पूरा देश झुका-झुका है
बादल पश्चिम से आ रहे हैं
और उत्तर से भी
बादल जो वर्षा के नहीं हैं
ओलों के हैं
और भी—साफ कहूं
तो जो गोलों के हैं।
मगर तुम्हारे दो हाथ हैं
और मेरे भी दो हाथ हैं

आओ इस दुख की घड़ी मे
हम एक-दूसरे को
गाढ़तर आलिगन मे बांध लें।
गाढ़ आलिगन
शक्ति स्रोत होता है
जोत मिलती है उससे
बुझी हुई आँखों को
उड़ान मिलती है उससे
थकी हुई पाँखों को
कँपते हुए टखने
स्थिर हो जाते है
क्षण-भंगुर हम
चिर हो जाते है।
आओ हम एक दूसरे को
गाढ़तर आलिगन में बांध लें
टूटे हुए इस देश को
कण-कण अनुराध ले।
तुम्हारे दो हाथ है
और मेरे भी।

शाति का शहीद

अहो शान्ति के दीप ! बुझ गए पथ बीच तुम सहसा,
कौन जानता था आएगा अन्धकार फिर ऐसा।

आह! अभी तो सूख न पाये थे पिछले भी आँसू,
अभी हिचकियाँ लगी हुई थी टूट पडे फिर आसू।

किस कौशल से खीच रहे थे तुम तट पर नौका को,
अभिनव आश्वासन देते थे भारत की जनता को।

छोटा सा शरीर, दुर्बल, पर नेत्रो मे आभा थी,
सरल वेश, मुख सौम्य भाल पर खेल रही प्रतिभा थी।

गाधी की गगा मिलती थी नेहरू की यमुना में,
सगम-से थे लालबहादुर भारत की जनता मे।

गाधी टोपी, नेहरू जाकेट, बना राष्ट्र का बाना,
लालबहादुर की धोती को सबने भारत माना।

आह जनवरी मे ही हमने राष्ट्रपिता को खोया,
इसी अभागे मास पाप का बीज कभी क्या बोया।

घर की देहली से बाहर ही अन्तिम श्वास लुटाया,
'ललिता' का सिन्दूर-बिन्दु भी चरण न छूने पाया।

कुटनीति की शान्ति-सर्पिणी प्राण निगल लेती है,
हम को देकर विष, औरो को रत्न उगल देती है।

ओ भारत के भाल ? हमारी श्रद्धा का चन्दन लो,
ओ जननी के लाल ! भारतीयो का पग वन्दन लो।

काश्मीर की घाटी मे भी, काशी की गलियो मे,
स्वर्ण-शिखा बन क्या न जगोगे तुम दीपावलियो मे।

यमुना की बाहो पर हमने तीन सपूत सुलाए,
राजघाट, फिर शान्ति घाट, अब विजय घाट बन जाये।

●

कमला चौधरी

कृष्ण हुए साकार

महा मेधावी तुम्हे प्रणाम !
धीर-वीर तुम लौह-पुरुष था लालबहादुर नाम !

तन छोटा सुकुमार हृदय में साहस भरा अपार
छोटे कदमो से नापा था दुर्गम पारावार,
ऊँचे उठे हिमालय जैसे चकित हुआ संसार
एक इशारे से जन-मन मे जागा एकाकार ।

बोल रहे जयकार तुम्हारी भारत के घर-ग्राम !
महा मेधावी तुम्हे प्रणाम !

विनय भरी मधुमय वाणी से फूट पड़ी हुँकार,
सोया शेर जगाया तुमने चकित हुआ संसार,
खोल उठा निज खून वोर का खड़क उठे हथियार,
याद करेगा दुश्मन निश-दिन खाई जैसी मार !

मातृभूमि को पुनः बनाया शूरवीर का धाम ।
महा मेधावी तुम्हें प्रणाम ।

यह बलिदानी देश पुरातन हुआ सजग तैयार,
नमन तुम्हारे संचालन को किए प्राण संचार,
राष्ट्र-भावना बढी देश में, किया उचित उपचार,
मातृभूमि मे एक बार फिर कृष्ण हुए साकार ।

मानव याद करेंगे कहकर महापुरुष अभिराम ।
महा मेधावी तुम्हे प्रणाम ।

विजय मिली अभियान न आया किया शान्ति आह्वान
हाथ मिलाया जा दुश्मन से भूल मान-अपमान,
युद्ध सदा को मिटे जगत से हो मानव कल्याण ।
शान्ति-धार पर के आने को प्राण किए बलिदान ।

सत्य अहिंसा में थे तुम धनुधारी राजाराम ।
महा मेधावी तुम्हें प्रणाम ।

लालबहादुर लिख गये गीता का अध्याय

समवेत स्वरों में—

छोटे से इन्सान की गाथा अमर, विशाल।
भारत माँ ने खो दिया वो गुदड़ी का लाल।।

एक स्वर—

ऐसा ही इन्सान हुआ था इस धरती पर,
कितने अपने जीवन का बलिदान दे दिया,
आज देश की माटी उसकी कथा गा रही,
जिसने हमको नई-दिशा का ज्ञान दे दिया,
यों तो सभी जन्म लेते हैं
और सभी मर जाते हैं
नाम अमर रहते उनके, जो
काम भले कर जाते हैं,
हिन्दू-मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई
सब अधिकार समान हैं,
जिसका जन्म देश को बल दे
सचमुच वही महान है,

समवेत स्वर—

ये धरती है मर्यादा पुरुषोत्तम राजा राम की,
ये धरती है कृष्ण लाडले, गीता के जय गान की
ये धरती है अटल अहिंसा के अनुगामी बुद्ध की,
ये धरती है जनमत-पक्ष के अभिमानी युद्ध की
ये धरती है जहाँ गूँजती गुरु नानक की वाणी,
ये धरती है जहाँ 'अजानें' कोटि-कोटि कल्याणी,
ये धरती है जहाँ प्रभु ईसा के जन रहते हैं,
ये धरती है जहाँ सभी स्वर एक धरम कहते हैं,
ये धरती है गांधी ने जिसको जन तन्त्र दिया है,
ये धरती है नेहरू से जिसने युग मन्त्र लिया है,
ये धरती है कर्मवीर, धर्मवीर, ज्ञानवीरों की,
ये धरती है त्यागवीर बलिदानी रणवीरों की।

एक स्वर—

परम्परा के इसी चरण में
सूरज उदय हुआ आशा का ।
गगा की लहरों से उभरा
इन्द्र धनुष सबकी भाषा का ।

युगल स्वर—

दो अक्टूबर का दिवस, सन उन्नीस सौ चार ।
जनमा मुगलसराय मे, भारत 'लाल' अधार ।।
दो अक्टूबर दे गई, युग को दो वरदान ।
राष्ट्रपिता का जन्मदिन, राष्ट्रपुत्र की शान ।।

समवेत स्वर—

बचपन जिसका गाँवों में ही पढ़ लिखकर के बीता था,
घने अभावों को सहकर जो, अपना जीवन जीता था,
बचपन ही मे पिता खो दिया, धनाभाव भी गहरा था,
भारत की आजादी पर तब, अंग्रेजों का पहरा था,
जेल गये दुख बहुत उठाये, लालबहादुर झुके नहीं
मातृ भूमि पर प्राण चढ़ाने, आगे बढ़कर रुके नहीं ।

एक स्वर—

काशी विद्यापोठ से पास किया इम्तहान ।
लालबहादुर शास्त्री, जन सेवक, जनमान ।।

समवेत स्वर—

संघर्षो से जिसका जीवन, उज्जवल और विशाल हुआ ।
सत्य अहिसा का अनुयायी, यह छोटा सा लाल हुआ ।।
जिसके बच्चे बीमारी में दूध नही पी पाते थे,
बचपन में जो पढ़ने, गंगा पार तैर कर जाते थे,
किसे पता था ये लघु काया, और साहसी बालक मन,
आगे चलकर अखिल विश्व का बन जायेगा उद्‌बोधन,
भारत मे आजादी आई, लेकिन पूरा हुआ न प्रण,
देश एक हो करे तरक्की, यही सोचते थे हर क्षण ।

युगल स्वर—

सन चौसठ उन्नीस सौ, माह जून बुधवार ।
दो तारीख चुने गये, भारत करणधार ।।

समवेत स्वर—

सीधे-सादे, भोले-भाले, लेकिन व्रज सरीखा मन,
एक लक्ष्य पर चलने वाले, सकल्पो का सचित धन,
शाति हमारा मूल मत्र है, केवल शक्ति नही महान,
कौरव, रावण, कस भला कब रख पाते अपना अभिमान,
समय पडे जिसने बतलाया, हम साहस के धारी है,
अमन-चैन की रक्षा के हित, उद्धत खड्ग दुधारी हैं,
खून बहाने से अच्छा है, मोल चुकाये माटी का,
आओ मिलकर सपना लिखदे, हम केसर की घाटी का,
आगे बढ पायेगा वो ही, जिसका चरण सबल है,
सफल वही हो पाते जिनका हर आधार प्रबल है,
जय जवान और जय किसान का नारा हमे दिया था,
जिसने भारत माँ का फिर से जय अभिषेक किया था,
हम सब इस धरती की आभा, जियो सभी को जीने दो,
मानव जन्म, कलश मधुमूरति, सबको अमृत पीने दो,

समवेत शोकाकुल स्वरो में—

मास अठारह मे दिया, जिसने युग को न्याय।
लालबहादुर लिख गये, गीता के अध्याय ।।
शांतिदूत थे शास्त्री, मानवता के मूल।
धन्य धूल भारत भली, खिलते ऐसे फूल ।।
क्रूर काल ने फिर किया, हम सब का उपहास।
डूबी किरण प्रकाश की, हार गया इतिहास ।।
नया वर्ष आया अशुभ, डूब गया नक्षत्र।
सूरज फिर ऊगा नही, अधियारा सर्वत्र ।।
प्रथम माह, इस वर्ष का, ग्यारह थी तारीख।
पुन. नियति ने तोड दी, भाग्य भारती लीक ।।
ताशकन्द की घोषणा, विश्व शान्ति की राह।
लालबहादुर दे गये विश्व शान्ति की चाह ।।
....

धन्य है यह देश जिसने 'लाल' पाया था,
धन्य है वह मात जिसने 'देव' जाया था,
पीढ़ियो के पुण्य से ये जन्म होते हैं,
मृत्यु पर जिनके युगो के प्राण रोते हैं।
धन्य हे यह देश ....

हेतनारायण माथुर

श्रद्धा प्रसून

(१)

पहरेदारो ! सो मत जाना, स्वप्नों के संसार मे ।
कमजोरी का नाम न आये, संघर्षो के ज्वार में ।।
मातृ भूमि पर शीश कटाने वाले अमर सिपाही !
इसी राह पर चले निरन्तर तुमसे कितने राहो,
धाक तुम्हारी से शत्रु दल, थर-थर, थर-थर कांपा
घूम-घूम कर तुमने सैनिक समर क्षेत्र सब नापा ।
यद्यपि वीर यह जग निष्ठुर है, कौन तुम्हे पहिचाने ?
मै गाता हूँ गीत तुम्हारे, ओ सैनिक अनजाने ।

(२)

बड़े-बड़े सेनापतियों ने जीते हों संघर्ष,
किन्तु सिपाही, सच तो यह है, तुमने जीता युद्ध,
सिपाही तुमने जीता युद्ध, देश को दी भारी कुर्बानी
कण्ठ मेरा अवरुद्ध आज, गद्‌गद् है मेरी वाणी,
धन्य तुम्हारा त्याग, अमर ओ मूक बलिदानी,
मै गाता हूँ गीत तुम्हारे, ओ सैनिक अनजाने ।

(३)

देश धन्य है तुमसे सैनिक, नही व्यथ बलिदान,
सही अर्थ मे बचा तुम्हीं से है माता का मान ।
जिसके बदले फूँक दिए है तुमने अपने प्राण
भूल सकेगा—कैसे कोई, यह भारी अहसान ?
तुमने जीवन दिया आन पर, दुनिया यह क्या जाने,
मैं गाता हूँ गीत तुम्हारे, ओ सैनिक अनजाने ।

(४)

नहीं दुन्दुभी बजी, नहीं रथ आये तुनको लेने,
नहीं सुनहरी हुई सजावट तुम्हें सलामी देने,
नगर-नगर में डगर-डगर मे चर्चा उनकी छाई,
जो पहले से नामी कर्नल, मरे अनेक सिपाही।
प्यार तुम्हारा मातृ भूमि का, कौन यहाँ पहिचाने,
मैं गाता हूँ गीत तुम्हारे, ओ सैनिक अनजाने।

(५)

मुझे ज्ञात है वीर, तुम्हारे बच्चों का क्या हाल,
वयोवृद्ध माता, भगिनी, बेवा पत्नी बेहाल,
किन्तु, सिपाही साहस रखना, माता हुई निहाल,
तुमने सचमुच वीर, संजोया था पूजा का थाल,
त्याग तुम्हारा सदा अमर है, ओ सैनिक बलिदानी।
अन्य करोड़ो वीर को यह सुन्दर अमिट निशानी,
नया सिपाही यत्न करेगा, इस महिमा को पाने,
मैं गाता हूँ गीत तुम्हारे, ओ सैनिक अनजाने।

●

देवीप्रसाद राही

मान मत मुझको

मान मत मुझको तू शब्दो का सिपाही केवल,
खून के नाम पर देते हैं जो स्याही केवल !
मैं तो औलाद हूँ, उनका जो शहादत में तेरे
प्राण देकर के ही देते हैं गवाही केवल !

गजेन्द्रकुमार जैन

शक्ति से शांति मन्त्र प्रकटेगा

लघु काया, दृढ हाथ और मुख पर मंजुल स्मृति रेखा।
प्रखर बुद्धि सुस्पष्ट दृष्टि से पूर्ण अहर्निश देखा ।।
उन्नत मस्तक, नम्र नयन, जन की पीड़ा का साक्षी।
वज्र कठोर, कुसुम कोमल, भारत नौका का माझी ।।

'युद्ध देहि' कहा दुश्मन, ने उसने युद्ध दिया था।
'युद्ध शान्ति का साधन ही है' यह भी समझ लिया था ।।
पाकर समर निमन्त्रण जैसे इसने समर सहेजा।
उसी सहजता से स्वीकारा, शान्ति निमन्त्रण भेजा ।।

भय सकुल मानवता की पीड़ा को उससे जाना।
इसी लिए तो ताशकन्द हो पाया उसका जाना ।।

ताश्कन्द के उद्‌बोधन की गूंज रही थी वाणी।
अब युद्धों की नहीं, सृजन की बाते हो कल्याणी ।।

कल रात्रि अब चुकने वाली, बिखरेगा अधियारा।
आने वाला प्रात, शान्ति का सूरज उगने वाला ।।

किन्तु पौ फटे देर हुई क्या जागी नही ललाई ?
सहसा ही उत्तर दिशि से क्यों काली बदली आई ?
दशो दिशा मे गहन उदासी की छाया क्यो फैली ?
विलग खड़े क्यो विह्वलता की औढे चादर मैली ?

लालबहादुर गया, देश की लेकर भोति गया है।
मृग को कस्तूरी की देकर प्रथम प्रतीति गया है ।।

अब न गन्ध,अन्धाकुल होकर भारत मृग भटकेगा।
मात्र शान्ति ही नही, "शक्ति से शान्ति" मंत्र प्रकटेगा ।।

मौन हुआ है, 'जय जवान' का नारा देने वाला।
मत घबराओ देश ! सजग है सीमा का रखवाला ।।
श्रमिक जूटे है उत्पादन मे, कमी न हो पायेगी।
कृषक उठे, अपना भोजन फिर धरती उपजायेगी ।।

सच है टूटा नभ का अति जाज्वल्यमान वह तारा।
किन्तु प्रकाश-रेख से ज्योतित अब भी मार्ग हमारा ।।
जन गण मन से अमर रहेगा, युग युग यह सेनानी।
जब तक दीपित चन्द्र सूर्य, जब तक सागर मे पानी ।।

नानूराम संस्कर्त्ता

शास्त्री जी का मरसिया

ओ भारत का भाण ! अवेला तूं आथव्यो ।
उर मे उठै उफाण, लखि अंधियारी रातडी ।।
मुलका लोकी मीत ! किसना इण कलजुग तण ।
जस समझौते जीत, ससतर सास्तर सोधकर ।।

ना कीधी परवाह, मान बढाई रुतवरी ।
धन परधान नराह, जस व्यायो सारे जगत ।।
कासव-सुत दिन नाह, कित ऊगै कित आथवैं ।
विसवैं कीर्ति अथाह, पूरब पच्छम ऐकसी ।।

नैण झरै नदियाँह, विलखा लागै है वदन ।
रहसी दुख सदियाह, इण भारत रै उर थया ।।
वाबड़ ज्यो वेगाह, ओ मेढी भल आवज्यो ।
टोळी टाबरियाह, रौवै डस-डस रैण-दिन ।।

पड़िया सिर आपत्त, घड़िया दुख घड़िया लयाँ ।
कूण पलूसैं मत्थ, तुज्झ विहूणा डीकरा ।।
अटल अमद अडोक, वधसी दिन-दिन वेलज्यूं ।
आज्यो लोहा-लीक, देह दुजा देवा नरा ।।

राधेश्याम 'योगी'

ध्रुव तारा टूट गया

हिन्द-गगन गौरव का फिर
ध्रुवतारा टूट गया।
भारत मां का एक बलिष्ट
सहारा छूट गया।
आज देश की आंख-आंख से,
बहता खारा पानी।
बचपन और बुढापा रोता,
रोती बिलख जवानी।
आज कुमारी अन्तरीप से
केशर की क्यारी तक।
सिसक न रोया हो, ऐसा
होगा न अभागा प्राणी।
सन्त-सूरमा, शासक-सर्व
दुलारा रूठ गया।
भारत मां का एक बलिष्ट
सहारा टूट गया।
जो ऊँचाई से ऊँचा था,
गहराई से गहरा।
जिसके दृढ निश्चय, स्वदेश
का देते रहते पहरा।
जिसके विश्वासों को छूकर
छल का बल शर्माया।
आह, मृत्यु ने उसके माथे
बांध दिया है सेहरा।
मात्र एशिया नहीं विश्व का

प्यारा छूट गया।
भारत मा का एक बलिष्ट
सहारा टूट गया।
कुछ जीकर भी मृत समान
तुम मरकर अमर रहोगे।
जन मानस मे शाश्वत तुम
बन अमृत धार बहोगे।
भारत मा के लाल, बहादुर
लाल तुम्हारी जय हो।
मृत्यु जय हे। निधन के धन
लाल तुम्हारी जय हो।
निधन तुम्हारा सुन, धीरज का
धीरज छूट गया।
भारत मा का एक बलिष्ट
सहारा टूट गया।

काका हाथरसी

काका की अश्रुझड़ियाँ

दिल्ली छोड़ी वह दिना कैसो हो मनहूस,
गए यहाँ सो रूस तुम, गये यहाँ सो 'रूस'!
गए यहाँ सो रूस, बिलखतौ जनगण छोड्यो,
मर्त्यलोक सो चले, स्वर्ग सो नातो जोड़्यो।
'काका' भयो न जग मे कोऊ ऐसो बन्दा,
द्वै द्वै देशन के प्रधान दें या को कन्धा।
करुण-हास्य कैसे निभैं, दोऊ रस विपरीत,
असुवन सो कैसे लिखू, हास्य व्यग्य के गीत।
हास्य-व्यग्य के गीत, जबहि जब औसर आए,
लालकिले में लालबहादुर हमनु हसाए।
कहै काका, शास्त्री जी! बदलौ खूब चुकायौ,
हमने तुम्हे हसायौ, तुमने हमे रुआयौ!

मनभावने चले गये

(१)

देश अनुराग को ललोंही सों ललायमान,
लाल वो बहादुरी जगावते चले गये ।
त्याग, तप, तेज को जगाय नव भव्य जोति,
जनता के मन को रिझावते चले गये ॥
'राम कवि' भारत की नैया कू अठारह मास,
झंझा की झोकन सो उबारते चले गये ।
केसर को क्यारी की गघा ताशकन्द बोच,
वाटिका मे सान्ति की वसाबते चले गये ॥

(२)

ताशकन्द बोच, तास खेलते अयूब संग,
शान्ति सील तुरप लगवाते चले गये ।
सह अस्तित्व साह, इक्का एकता को लिये,
युद्ध के गुलाम को दबावते चले गये ॥
भारत की धाक पक्की पाक पै जमाए, फेरि,
नीव प्रेम-भाव की बराबते चले गये ।
हसने हंसाय, रुस जाय, सान्ति शास्त्र गाय,
खेल खेलते हो, मनभावने चले गये ॥

(३)

गौरव, गरूर, स्वाभिमान के तिरंग लिए,
चटक तिरगे की बढ़ाय के चले गये ।
उर पै हिमालय के वीरता को साका नया,
केसर की स्याही सो लिखाय के चले गये ॥
'राम कवि' भारत के सत्य की कलंक रेख,
हाथन सो अपने मिटाय के चले गये ।
वामन से अडिग चरन की चपेटन सो,
गर्वीन का गर्व-दुर्ग ढ़ाय के चले गये ॥

भोलाशकर शर्मा 'विराग'

चल बसा

हा, भारत मां का
पूत चल बसा ।

भारत मा का राजदुलारा
जन मन की आंखो का तारा
प्रेम अहिसा का अनुगामी

शान्ति दूत का
दूत चल बसा !

जन मानस में भारी उदासी
शोकमग्न हैं भारतवासी
भारत की नौका का नाविक

नेहरू का प्रतिरूप
चल वसा !

पचतत्व सम्बन्ध तोडकर
असमय मे ही हमे छोड़कर
भारत भर का "लालवहादुर"

मानस मन का
भूप चल वसा !

●

कृष्णकुमार पारीक

भारत माता का विलाप

मैंने हंसकर विदा किया था
विश्व-शान्ति वरदान तुझे।
चला गया क्यों बिना दिखाये
विजय-जन्य मुस्कान मुझे ?

मैने सदा दुलारा तुमको
तूने मुझको मान दिया।
क्यों फिर अमित शोक-सागर में
मुझे डुबोना ठान लिया ?

क्या अपराध हुआ था मुझसे
जो तू इतना निठुर हुआ।
कहा नहीं कुछ, सुना नहीं कुछ
क्यों सहसा यों बधिर हुआ ?

प्रथम 'जवाहर' और 'लाल' अब
जीवन के पथ में खोया।
मुझको लुटता देख विश्व भी
दीन-हीन बन कर रोया ?

मानवता के महायज्ञ का
हुआ पुत्र तू स्वयं हविष्य।
तेरा यह बलिदान लिखेगा
तेरा सुन्दर भव्य भविष्य ?

नागार्जुन

लौ चली गयी बिल्कुल ऊपर…

सब खडे रहे उसकी बलिवेदी के समीप
लौ चली गयी बिल्कुल ऊपर,
रह गया रिक्त आकाशदीप !

सहमी रणचण्डी किस प्रकार
तरुणाई ने रचा खेल
दुर्मद दानव के नथनो मे
वह डाल गया कैसी नकेल

तानाशाही के सीने पर वह वज्र-कील
वह लाद गया हिसा पर कैसे पचशील

वह शक्तिदूत, वह शान्तिदूत
वह जरा मरणजित यश.पूत
वह वामन का परमावतार

अपनी मिट्टी की महिमा का वह कलाकार
वह अति साधारण, अति महान
वह ओज-तेज का कीर्ति-मान
सादगी-विनय से पूर-पूर

वह आडम्बर से दूर-दूर
वह परम अकिंचन कर्मवीर, वह सत्यसध

वह बारूदी बदबू पर ताजी मलय गन्ध
रक्ताभ भूमि पर उग आयेन व दूर्वांकुर

फिर विश्वमच पर मुखरित हैं
अपनी जनलक्ष्मी के नूपुर
फिर लगे दमकने हिमगिरि के उत्तुग सानु
फिर प्रकट हुआ भारतमाता का भाग्यभानु

सब खडे हुए उसकी बलिवेदी के समीप
लौ चली गयी बिल्कुल ऊपर

रह गया रिक्त आकाशदीप ।

कमलेश सक्सेना

स्मृति ही शेष रही

यह कसी पौ फटी—
सूरज की प्रातः किरण
उगते ही
धुंधला गईं:
गगन का शून्य तम,
धरा का खुला तन,
सारा वातावरण,
विक्षुब्ध-सा हो गया;
और फिर सहसा ही
दिशाओं का भीगा मन
थर-थर कांप गया;
छागई नीरवता—
ओर से छोर तक
जैसे कोई महोदधि का
क्लांत मन ज्वार बन
उठा हो गिरा हो,
जल-तल पर बिखर कर
अपने मे ही समा गया हो,
डूब कर सो गया हो।
कितना सन्नाटा है।
चेतना जड़ हुई
खड़ी रही मूर्तिमयी,
क्योकि आज सहसा ही
युग का कोई प्रतीक

मोत जो जोवन का
धरा से उठ गया,
खो गया शून्य को
अदृश्यतम परतो मे,
और करूणामयी
स्मृति ही शेष रही।
शेप रही अवसादो को
घनी-घनी छाया ही।
किन्तु इस छाया के
पार कुछ ऐसा है—
जिससे अभिभूत हम
औरो से अधिक तम।
पुष्प की गध का
जो एक जादू है—
जो कि समा जाता है,
जो कि छा जाता है,
तन पर और मन पर;
हृदय-आकाश पर;
वैसा ही जादू सा
छोड़ गई ज्योति वह
जो कि अब धरा से
आसमान बन गई,
और नक्षत्र-सी
वही कही जड़ गई।
नीरवता शाति का
यह प्रशस्त खुला पथ,
गगन से धरा तक
ज्योतिर्मय किरण-रथ,
समस्त जन-कल्याण मे।
मानवीय मूल्यो का

एक आधार-बिन्दु,
सत्य और न्यायों का
सबल आदर्श-केन्द्र,
हमें कठिनाइयों पर,
समस्त ऊचाइयों पर—
सफल ले जायगा ।
और हम उन्नति के—
भारतीय सस्कृति के—
देश देशान्तर मे
केतु लहरायेंगे ।
यही दृढ़ निश्चय है ।
यही उस आत्मा का
ध्येय एक इष्ट है ।
जन-मन का भाववृंत
इन्हीं आदर्शो से
पल्लवित-पुष्पित है ।

डा० रमासिह

शास्त्री जी के प्रति

जैसे—ज्योति का उफनता हुआ निर्झर
द्रुत वेग से पथ को नाप
ज्योति-सिन्धु में समा गया ...
जैसे—दिव्य विद्युत कौधकर चमकी
गहन तिमिर को चीर
शून्य में लीन हो गई ...
जैसे—किसी पुनीत यज्ञ को प्रज्वलित शिखाओं में
एक सिद्ध आत्मा
हविषा बनकर अर्पित हो गई....

.वराज दिनेश

मेरे युग के वामन

भारतीय राजनीति के आकाश पर,
तुम इस तरह प्रगट हुए,
अम्दर पर आता है।
जैसे चाँद, अस्ताचलगामी सूर्य के वाद
तिमिर मे डूबी हुई धरती को—
धीरज वधाता है।
जैसे कोई सहयात्री,
मेले मे खोए हुए वालक पर स्नेह विखराता है।
चूमता, चुमकारता है, लोरिया सुनाता है।।
एकाएक अस्त हुआ था हमारा सूर्य
चारों ओर छा गया तव गहन तिमिर
हर हृदय आकुल विह्वल, उद्भ्रान्त
दिग्दिगन्त गूंजता हुआ एक प्रश्न
अव कौन ?
नेहरू के वाद अव कौन ?
किन्तु प्रत्युत्तर मे हर दिशा थी मौन।
प्रश्न इधर उधर घूमता और लौट आता था
मस्तिष्क, हृदय हर जगह मौन छाए जाता था।
हम सव मेले मे खोये हुए वालक से आकुल थे।
ऐसे मे प्रगट हुए तुम।
तुमने कहा—
मैं मिटते हुए सूर्य की छाया हूँ,
नया भोर आने तक मैं तुम्हे उजाला दूंगा।
मैं अपनी स्निग्ध किरणों से अन्धकार पी लूंगा।।
तुम्हारे लिए नया सूर्य लाऊंगा
तुम्हे हर विपत्ति से वचाऊंगा।
और वास्तव मे तुमने जितना कहा था
उससे अधिक कर दिखलाया।
मेले की भीड़ मे खोये हुए हम सव, आश्वस्त हुए।
पहली वार हमने यह अनुभव किया—

कि राजनीति ईमानदारी से भी हो सकती है
कूटनीति कूटनीति रहकर भी,
अपनी कलुषता धो सकती है
हमारे लिए तो तुम ही नए सूर्य बन चुके थे ।।
मेरे युग के वामन ।
इस महान सक्रान्ति काल मे
तुम देवदूत की तरह प्रकट हुए
तुमने अपनी प्रखर बौद्धिकता का परिचय दिया ।
अपनी तरल, सरल हँसी से, युग का अँधकार पिया ।
तीन पग उठाए, सब क्षितिज मापे ।
पहले पग मे,
युग की बिखरती हुई राजनीति को स्थिरता दी
देश के विवेक को विश्वास का सम्बल दिया
ढिलमिल राजनीतिज्ञों को,
शीघ्र निर्णय की क्षमता से अवगत कराया ।।
दूसरे पग मे,
युद्धोन्मादी शत्रु को कठोर प्रत्युत्तर दिया
उसे बता दिया कि युद्ध का परिणाम क्या होता है।
सारे संसार को जता दिया
कि शान्ति का अर्थ कायरता नही है ।।
तीसरे पग मे,
सिसकती हुई शान्ति के, ज्वरग्रस्त मस्तक पर
अपने ममतामय अधरो का चुम्बन धरा
उसकी व्यथा पी ।
बिलखती, उदास, मानवता को
जीने की नई दिशा दी ।
शाति के मसौदे पर, अपने अन्तिम हस्ताक्षर किए,
और अन्तर्धान हो गए ।
तब से हम सब,
इस सक्रातिकाल मे भटके हुए,
फिर से नया सूर्य खोज रहे हैं ।।

स्व० श्री वंशीधर विद्यालंकार

आज सृष्टि की सब मानवता, लालबहादुर को रोती है !

आँख कौन-सी जो करुणा से अविरल सजल नहीं होती है,
आज सृष्टि की सब मानवता, लालबहादुर को रोती है !

जैसे लाज सूर्य की रखता दीपक है अपनी होली कर,
वैसे लाज देश की तुमने रखी जवाहर के जाने पर,
टिम-टिम करती लौ से दीपक जिस प्रकाश को दे जाता है :
उसके ऋण को अखिल विश्व का क्या आलोक चुका पाता है ?
एक रश्मि भी अंधकार में पथ को परिदर्शक होती है,
आज सृष्टि की सब मानवता, लालबहादुर को रोती है !

दीपक लघु था, बत्ती लघु थी, उभय पार्श्व से आलोकित थी,
हृदय-पात्र था पूर्ण स्नेह से, मात्रा जिसकी अलघु, अमित थी,
बत्ती हुई समाप्त, बुझ गया दीपक, पर है स्नेह उमड़ता :
सदियों तक प्रकाश देने की, असामान्य है जिसमें क्षमता !
सब महानता ऐसी लघुता के आगे छोटी होती है,
आज सृष्टि की सब मानवता, लालबहादुर को रोती है !

आकृति से वामन थे जितने, विष्णु स्वरूप कार्य में उतने,
जितने दुर्बल थे शरीर से, उतने ही बल थे निबल के,
अति साधारण से होकर भी, रहे असाधारण तुम कितने !
जहाँ दूब से तुम विनम्र थे, वहाँ गगन से तुम ऊँचे थे !
वह मनुष्य है कहाँ – तुम्हारी जिससे कुछ समता होती है :
आज सृष्टि की सब मानवता, लालबहादुर को रोती है !

नहीं चाहते थे अस्त्रों को, नही चाहते थे तुम लडना,
नहीं चाहते थे तुम रण की नाशक गति-विधियों में पडना ;
यही चाहते थे जग के जन रहे प्रेम से सदा परस्पर :
रहे न कोई अक्षम, आश्रित, भूखा, नंगा और निरक्षर !
सह-जीवन से ही स्वतन्त्रता, राष्ट्रो में विकसित होती है,
आज सृष्टि की सब मानवता, लालबहादुर को रोती है !

तुम प्रसन्न रहते थे दुख में, तुम अशाति में शांति-मूर्ति थे,
जीवन भर तुम रहे मृत्यु मे और मृत्यु मे अमर हो गए :
उसे कर दिया तुमने सम्भव जो कि असम्भव-सा दिखता था,
जो जीवन से नही कर सके, जोवन देकर उसे कर दिया !
तुम को खोकर जग-जोवन की क्षति की पूर्ति नही होती है,
आज सृष्टि की सब मानवता, लालबहादुर को रोती है !

दिल की गति के रुक जाने से गति रुक सकती क्या जीवन को
ध्वनि सुन पड़ती जग-जीवन में स्पष्ट तुम्हारे हृत्स्पन्दन की :
राष्ट्रो के भौगोलिक बन्धन टूट रहे हैं धीरे-धीरे,
एक राष्ट्र के प्रश्न बन रहे अनायास ही सब राष्ट्रों के !
देश, जाति की सहज भिन्नता तुम मे एकरूप होतो है,
आज सृष्टि की सब मानवता, लालबहादूर को रोती है !

जीवन प्रकाश जोशी

युद्ध नहीं रे, शान्ति चाहिए!

केवल मास अठारह बीते
अँधियारे से ग्रसे हुए
जब देश-दिवस के रंगमंच पर
वामन-सा वपु
माखन-सा मन
और लिए मस्तिष्क अटल
कौटिल्य सरीखा
जटिल भूमिका का तुमने प्रारम्भ किया था!

बिखरे-बिखरे
काल-रूप जो
मेघखण्ड इस देशान्तर पर
मंडराते थे
अब मौके का लाभ उठाकर
महाकाल बन गए अचानक!

विप्लव गरजा
कश्मीरी झीलों-फूलों
शुचि हिम-शिखरों पर
महाध्वंस की ज्वाला भड़की
और उत्तरी सीमा पर भी
विश्व निगलने वाले
अजगर ने भी सहसा
जहरीली फुत्कार भरी, जब
तुमने
घोर, गम्भीर, वीर स्वर-संयत
दुनिया से यह बात कही थी—
'भारत सदा शांति-प्रेमी है
पर वह अपनी रक्षा के हित
स्वाभिमान हित

युद्ध लड़ेगा,
युद्ध लड़ेगा !'

ओर समय ने सिद्ध कर दिया
तुमने सब कुछ सत्य कहा था
भारत विजयी हुआ युद्ध मे
पर तुम यह अनुभव करते थे
युद्ध विजय कितनी हो फिर भी
मानवता की विजय नही है।

खुला हुआ इतिहास-पृष्ठ है
जिसके पीछे —
मानवता के लोहू से है
लिखे गए अध्याय बहुत-से
(क्रूर घटनाक्रम, नर-संहार
नृशंस शृगाल ; भेड़िए और तेंदुए
जिसके प्रतिनिधि)
और असख्यो
बूढे, बच्चे, मांएं, बहनें, बहुएँ
इस इतिहास-उदर मे
दबे-सड़े,
जो मानवता को दूषित करते !

ताशकन्द मे
तुम हो, है मार्शल अयूब भी
जैसे प्रेम क्रोध आपस में गले मिले हों !

दुनिया विस्मित
भय, आशंका मिश्रित
पर आशा की ज्योति जगाए
कोसीजिन की शान्ति-कामना !

खुला हुआ इतिहास-पृष्ठ है
सदियो बीते बाद खुला है
ऐसा अद्भुत पावन पन्ना !

कोसीजिन की शान्ति-कामना-ज्योति
अचंचल
औ' अयूब की रूह
रोशनी पीती जाती ..
लो ..
तुमने निज वरदहस्त से
हस्ताक्षर क्या किए
धर दिया समाधिस्थ हो
ऐसा श्वेत कमल ज्योतिमय
जो प्रेरणा का चिर प्रतीक बन
युग-युग को औ' देश-देश को
बतलायेगा—
युद्ध नही रे,
शांति चाहिए !
चिर-समाधि मे लीन हुए तुम
युद्ध शक्ति को
शांति-कमल मे बन्दी करके
राम को मेरी मानवता का
प्रणाम है !

सरोजिनी कुलश्रेष्ठ

प्रिये, साथ मत आना !

यह ताशकद है
कितना सुन्दर, भव्य कि जैसे
स्वर्गपुरी का एक भाग हो
नील गगन की छाह सुशीतल
निर्झर, नदियाँ और वाटिका भरी गुलाबो की
जैसे किसी चित्र की रचना
नर-नारी खिलते फूलो-से
स्वस्थ देह के सुगढ गढे-से
कचन वर्ण, झील सी नीली गहरी आँखे
तुम आती तो इन्हे देखती
और देखती ही रह जाती।

जहां-जहा मै गया, नगर ने
अगणित वदनवार सजाए
ढेर-ढेर फूलो के गुच्छे
और साथ मे स्वागत की मुसकाने
सच मानो तुम याद आ गई
वे सारे क्षण कौध गए स्मृति मे
थी तुम मेरे साथ-साथ जब
यात्राओ मे देश-देश की !

इस यात्रा की बात और है
मै हूँ इतना व्यस्त कि जितना कभी नही था
भारत का इतिहास अमर होने वाला है
माता मेरी कितनी पीडा हाय, सह चुका
खो कर अपने रत्न रक्त के आसू से भरपूर रो चुकी
दिया मुझ विश्वास
देश के प्रति सैनिक ने
और मुझे भी उन की ही चिन्ता है।
सच कहता हूँ, कभी चैन की नीद न सोया
वीर-भूमि की, वीर-प्रसू की ही चिन्ता है !
कश्मीर-भारत का टुकड़ा
कैसे दे दू-कही घाव है और दर्द-सा उठ आता है।
तुम होती तो कुछ तो शाति मुझे मिल जाती।

आज कर दिए है हस्ताक्षर
मैंने अपने सन्धि-पत्र पर
एक बडा सन्तोप कि अब दो देश
युद्ध मे नही लडेगे
महानाश के पथ पर मिल कर
नही बढे गे
पर इतना जो रक्त वह चुका
निज स्वदेश की आन-मान पर
अगणित वीर हुए न्योछावर
उनकी पत्नी, मा, वहनो को
क्या कह कर आश्वासन दूँगा ।
भोजन अभी किया है मैंने
लेकिन तुम से सच कहता हूँ
इस मे कोई स्वाद न आया ।
यो विदेश कुछ नही-क्षणो की दूरी
पर ऐसा लगता है, जैसे बहुत दूर हूँ ।
जीवन भर तुम साथ रही हो
दिया सदा नव-जोवन तुम ने।
निज कर्त्तव्य भूलता कैसे
निज नव-पथ सुझाया तुम ने
मैने भार लिया कधो पर
तुम ने मेरा भार उठाया
साथ दिया जीवन भर तुम ने
लेकिन साथ निभा न सका मै
अरुण किरण जागेगी नभ मे
लेकिन कल मै उठ न सकूगा ।
हाय, दर्द बढता जाता है
अब चिर-विदा प्रिय तुम दे दो !
उस जग मे तुम साथ न आना।
हाय, अकेला और अकेला
आज राम के धाम चला मै
हे मा क्षमा
प्रणाम सभी
मरा अन्तिम वार प्रणाम !

अनिल वरण गंगोपाध्याय

ताशकन्द का महायात्री

अनेक दिनों में आज इसी दिन
स्मृतियो के भावावेश में
मन के पारिजात झर रहे है।
दूर वहा क्षीण होती हुई यमुना को
रजत-रेखा दीखती है।
ठढो हवा मे कम्पित,
आवले की डालों पर
अकेला कपोतश्वेत
अतन्द्र प्रहरी है।
सिन्दूरी मेघ-सा घाघरा पहने
कोई लद्दाखी गोपी
पथ के किनारे अपनी गागर से
ढाल रही शीतल जल है।
शाति-वन की वीथिका में
रजनीगधा और असंख्य गेंदा फूलों
की गोद मे
धनंजयी चिता
रेशमी दुकूल सी लहर रहो।
शाति वन का दूत उनको
बुला कर ले गया है।
वह अब नही है!
ताशकंद की शाति-सभा में
उनका हस्ताक्षर अंकित है।
वह अब नही है!
पौष की ठंडी हवा में

कितनी उद्दाम शब्दहीन ध्वनि है।
दिल्ली का उज्ज्वल नीलाकाश
कितना शात शीशे सा स्वच्छ है।
दक्षिणी राजघाट के
तुलसी-मच पर
आलाप ले रहा है एक सुर
'प्रेम मुदित मन से कहो—राम, राम, राम।'
अगरु, कुकुम कस्तूरी और चदनी
धूप का धूआ सुरभित है।
चारो दिशाएँ मधुमीत है
धरती की धूल मधुमय है,
शीत की ठडी लहर मे धूम लहरा गया।
साठ वसतो मे सवरी वाग-सी,
घृत-दधि सेवित चदनी चिता
वैश्वानर के स्पर्श से
हू-हू कर जल उठी
हुताशन की लपटो पर
नई शिखा खिल रही है।
यमुना के काक-चक्षु पारदर्शी जल मे
उसकी छाया पड़ रही है,
अतीत की प्रतिच्छाया-सी !
आज वह नही है !
सूर्य सुता के जल मे लहरे नही है
गीत है—
भारत माता के शोकाच्छन्न आँसुओं को !
सामने है शाति का अथाह पारावार !

अनु० शुक्ल कांता खन्ना

खुदा हाफ़िज़

मित्रता के गहनों से विभूषित शत्रुओं
शत्रुता को पी जाने वाले मित्रों
मध्यस्थों
तटस्थो
खुदा हाफिज, खुदा हाफिज।

जितना अपेक्षित था
कदाचित पूरा नहीं हुआ
लेकिन
जो भी हुआ वह उत्तम।
भगवान भला ही करेगा।
खुदा हाफिज, खुदा हाफिज।

यह मै नहीं
यह तो बोलता है हिमालय।
यह है जाह्नवी का स्वर पावन।
यह है मुखरित अशोक का कलिंग विजय।
मेरी धरती है महान
मैं तो छोटा-सा इन्सान
महानता द्वारा प्रेषित मुझ जैसे ही लघु होते हैं।
खुदा हाफिज, खुदा हाफिज।

स्मरण रहे
देशों विदेशों की सीमाएँ
अन्याय से लांघने के लिए
नहीं होतीं।
और आदमी की भुजाएँ होती है
उत्कट प्रेमालिंगन के लिए
खुदा हाफिज, खुदा हाफिज,

मैं जाने को हूं
यह प्रेषित का चोला
अब उतारने को हूं।
अगर हुक्म मिला तो
फिर आऊंगा
आपसे फिर मिलूंगा।
रात अब थक चुकी है
चन्द्रकोर भी अब झुकी है
बांग दे रहा है मिनसार
आतिथ्य के लिए आभार
सौजन्य के लिए शुक्रिया।
अच्छा अब नमस्कार, खुदा हाफिज—

अनु० हरिनारायण व्यास

●

शांति भारद्वाज "राकेश"

एक गुलाब : एक गेहूँ

आज—
फिर आसमान से टूट पड़ा सूरज
आज—
फिर बदलियों की भर आई आँखें
आज—
फिर नोच लिए
समय की धार ने
शांति कपोत के पंख
कल—
उपवन की मटियाई गंध उड़ी,
आज—
उजड़ गया धरती का मातृत्व
एक दिन—
गुलाब की झाड़ी निपूती हुई,
एक दिन
धान की बालियों का रखवाला चला गया

विनोद रस्तोगो

नेता चला गया

अभो-अभो रेडियो पर सुना,
हमारा प्रिय नेता नही रहा
नए महाभारत का विजेता नही रहा ।
स्तब्ध रह गया,
जितना दुख जोवन भर नही सहा—
उतना एक निमिष मे हो सह गया ।
जन मानस का राजहंस
उड़ कर चला गया,
और हम रह गए देखते
हाथ मलते, पछताते,
विलखते, कलपते और आसू बहाते ।
जो जीवन भर करता रहा सेवा हमारो
हम अन्तिम समय में—
उसकी सेवा भी न कर पाए,
औषध तो दूर—
गंगाजल भो न दे पाए ।
कैसी विडम्बना है ।
धर्मभीरू, निर्भीक, वीर-धोर
नीतिज्ञ, शांति प्रिय, गम्भोर,
फूल से भी कोमल और
वज्र सा परम कठोर
देखने में नन्हा, पर
सागर-सा अथाह और
हिमालय सा अछोर ।

ऐसा था हमारा प्रिय नेता—
शांति का मसीहा, युद्ध का विजेता।
धर्मराज, पार्थ, भीम नकुल और सहदेव
पहले थे पाँच
किन्तु हो गये एक थे।
हमारा प्रिय नेता चला गया,
किन्तु जाते-जाते भी देगया शांति-पथ,
युद्ध की विभीषिका से त्रस्त
मानवता को शांति का अमोघ मंत्र
दिवंगत के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि
होगी नहीं शब्दो की
कर्मों की होगी
आओ, हम प्रतिज्ञा करें
उसके आदर्शों पर स्थिर रहेगे हम
और उन सपनो को करेंगे साकार
जो प्रिय नेता ने आखो में संजोए थे
जिनके लिए वह जिया और मरा।

जगमोहन नाथ 'अवस्थी'

लुट गया सौदागर

लुट गया शांति का सौदागर समझौते के बाजार मे !
नेकी और बदी बिकती है दुनिया के हर कोने पर,
लेकिन सोना मिट्टी होता थोड़ा गाफिल होने पर !
सौदे में धोखा खाया तो पूंजी ही लुट जाती है,
बनी-बनाई साख मनुज की मिट्टी मे मिल जाती है !
इसीलिए तो समझ-बूझकर चलना पड़ता संसार में,

लुट गया शांति का सौदागर समझौते के बाजार में !
शान्ति-मसीहा ने घायल मानवता का मरहम बन कर,
दिखा दिया युग को सेवा की ज्वाला में तपकर, जलकर,
बांध न पाई माया की जंजीरें उस प्रह्लाद को,
बनकर शंकर पिया अांत में युग के गरल विषाद को
लेन देन की खोटी दुनिया है किसके अधिकार में ;

लुट गया शॉति का सौदागर समझौते के बाजार में !
दौड धूप की राह पुरानी, मगर बदलते चेहरे हैं;
तृष्णा डोली, उमर दुल्हनिया चली, सास के पहरे है ।
पनघट बने मील के पत्थर, मरघट सबका गांव है,
भवसागर में यह तन केवल कागज की-सी नाव है ।
लाद चला जब बंजारा ; क्या भेद अश्रु-अंगार में,
लुट गया शांति का सौदागर समझौते के बाजार में ।

विलास विहारी

हम कैसे करें विश्वास

हम कैसे करे विश्वास
कि तुम नही हो !
नन्हे सूरज-सा दो`त
विद्युत का हस्ताक्षर
अमरलता सी फैली
देश भर मे तुम्हारी आस्था
तुम्हारा स्नेह
भला कभी मर सकता है।
नही-कभी नही
तो हम कैसे करे विश्वास
कि तुम नही हो !
अभी-अभी हमने सुना है—
शान्ति का सदेश
तुम्हारे मुख से
अभी ही तो देखा है हमने—
मुस्कुराता नन्हा सा वह मुखड़ा
मस्तक पर टोपी
धोती और बंडी
स्वेत पंख सा उज्जवल
जीवन्त व्यक्तित्व
तो भला कैसे करे विश्वास
कि तुम नही हो!
अभी भी कश्मीरी घाटियो मे
हाजीपीर की तलहटियो मे
बढ़ती जा रही है प्रतिध्वनि

तुम्हारे निर्भय स्वर के
अनुगूंज को;
आस्था मे भीगी
तुम्हारे जय-जयकार को
तो कैसे करें विश्वास
कि तुम नहीं हो।
हर कुटी के द्वार पर
तुम्हारी छाया है
कर्मठ मजदूरो के ऊपर
तुम्हारा साया है
जन-जन के मानस मे
तुम समाये हो
सबके हृदय मे
उतर आये हो
हर आगन, हर गली,
हर चौराहे पर
तुम्हारे होने का है एहसास
बूढ़ी माता की आंखो में
अभी भी आशा की नजर बाकी है
तब भला कैसे करे विश्वास
कि तुम नही हो।

आखिरी रात

रक्षा करो ! रक्षा करो ! भगवान् !
खुदा हाफिज ! खुदा हाफिज !
बोलो मेरे राम !
मेरे शत्रुओ !
आज तुम्हे देख कर
मुझे खुशी हो रही है,
क्योंकि तुम ने मित्रता के गहने पहन रखे है !
मेरे मित्रो !
आज तुम्हे देख कर
मुझे खुशी हो रही है
क्योंकि तुम ने अपने अन्दर छिपे जहर को
पी लिया है, जिसे
मैंने पहले कभी नही देखा था।
तुम सब जो
बहुत संभल कर, आँचल बचाए
बीच की रेखा पर चलना चाहते हो,
और तुम सब जो
दोनो किनारो पर बैठे तमाशा देखते हो,
राम राम ! तुम सब को राम राम !
भगवान तुम्हारी रक्षा करे,
खुदा हाफिज ! खुदा हाफिज !
तुमने जब मुझे भेजा था
तो शायद बहुत
अन्दाज लगाया था,
आशाये बाँधी थी,
अरमान किए थे,
परन्तु मैं तनहा, नन्हा-सा आदमी
नन्हे-से पांवो और नन्हे-से हाथो पर
इतना बड़ा मस्तक,

जिस पर पैंतालीस करोड़ तिलक।
तुम्हारे ही बल पर
इतनी दूर चला आया
ताशकन्द तक।
फिर भी मैं शायद
तुम्हारे लिए ताशकन्द का
सुनहरा फूल नही ला पाया;
किन्तु जो कुछ भी कर पाया
उतना काफी है,
जितना मिल सका, वही क्या कम है?
उत्तम है, उत्तम है।
भगवान भला ही करेगा
भगवान अच्छा ही करेगा,
खुदा हाफिज! खुदा हाफिज।
मैं नन्हा-सा आदमी,
नन्ही मेरी आवाज,
यह कौन मेरे कण्ठ से बोला
जैसे पहने हो सरताज?
समझा-समझा,
हिमालय है।
मेरा ऊँचा, मेरा सच्चा हिमालय!
जो आज मेरे कण्ठ मे उतर आया है,
और—
कैलास के शिखरों के ऊपर
इस्पात की टाँगो पर खड़े
भूतनाथ शकर की जटाओ से
हर-हर निकलने वाली
गंगा ने मुझे अपना स्वर दिया है।
कलिग के युद्ध मे
अशोक के जितने भी शस्त्र थे।
वे सब एक साथ जाग गये हैं
और मेरे कण्ठ में भर गये हैं।
कोई बात नही यदि
मैं छोटा-सा इन्सान हूँ,
मेरी धरती तो महान है।
मेरा भारत तो महान है!

आखिरी रात

रक्षा करो ! रक्षा करो ! भगवान् !
खुदा हाफिज ! खुदा हाफिज !
बोलो मेरे राम !
मेरे शत्रुओ !
आज तुम्हे देख कर
मुझे खुशी हो रही है,
क्योकि तुम ने मित्रता के गहने पहन रखे है !
मेरे मित्रो !
आज तुम्हे देख कर
मुझे खुशी हो रही है
क्योकि तुम ने अपने अन्दर छिपे जहर को
पी लिया है, जिसे
मैंने पहले कभी नही देखा था।
तुम सब जो
बहुत सभल कर, आँचल बचाए
बीच की रेखा पर चलना चाहते हो,
और तुम सब जो
दोनो किनारो पर बैठे तमाशा देखते हो,
राम राम ! तुम सब को राम राम !
भगवान तुम्हारी रक्षा करे,
खुदा हाफिज ! खुदा हाफिज !
तुमने जब मुझे भेजा था
तो शायद बहुत
अन्दाज लगाया था,
आशाये बाँधी थी,
अरमान किए थे,
परन्तु मै तनहा, नन्हा-सा आदमी
नन्हे-से पांवो और नन्हे-से हाथो पर
इतना बड़ा मस्तक,

जिस पर पैंतालीस करोड़ तिलक ।
तुम्हारे ही बल पर
इतनी दूर चला आया
ताशकन्द तक ।
फिर भी मै शायद
तुम्हारे लिए ताशकन्द का
सुनहरा फूल नही ला पाया;
किन्तु जो कुछ भी कर पाया
उतना काफी है,
जितना मिल सका, वही क्या कम है ?
उत्तम है, उत्तम है ।
भगवान भला ही करेगा
भगवान अच्छा ही करेगा,
खुदा हाफिज ! खुदा हाफिज ।
मै नन्हा-सा आदमी,
नन्ही मेरी आवाज,
यह कौन मेरे कण्ठ से बोला
जैसे पहने हो सरताज ?
समझा-समझा,
हिमालय है ।
मेरा ऊँचा, मेरा सच्चा हिमालय !
जो आज मेरे कण्ठ मे उतर आया है,
और—
कैलास के शिखरों के ऊपर
इस्पात की टाँगो पर खडे
भूतनाथ शकर की जटाओं से
हर-हर निकलने वाली
गंगा ने मुझे अपना स्वर दिया है ।
कलिग के युद्ध मे
अशोक के जितने भी शस्त्र थे ।
वे सब एक साथ जाग गये हैं
और मेरे कण्ठ मे भर गये हैं ।
कोई बात नही यदि
मै छोटा-सा इन्सान हूँ,
मेरी धरती तो महान है ।
मेरा भारत तो महान है !

ऋपियो की सन्तान है,
और ऋषियो के सन्देश
लम्बे-चौडे नही होते,
मंत्रो मे वे अपनी वात कहते है ।
रक्षा करो ! रक्षा करो ! भगवान !
खुदा हाफिज ! खुदा हाफिज !
वोलो मेरे राम !

याद रखो,
अपने देश की चहारदीवारी
और दूसरे देश की सीमा
लाँघने के लिए नही होती,
वह तो एक दूसरे का सहारा लेकर
टिके रहने के लिए होती है
हल्की-सी दस्तक देकर,
इजाजत माँग कर,
एक-दूसरे से मिलने के लिए होती है,
और ये लम्बी, गज भर की भुजाएँ
एक-दूसरे को—
सगीनो से भौकने के लिए नही होती,
जोश मे भर सीने से लगा लेने के लिए
होती है ।
रक्षा करो ! रक्षा करो ! भगवान ।
खुदा हाफिज ! खुदा हाफिज !
वोलो मेरे राम !

पालम से ले कर
ताशकन्द का हवाई-अड्डा
और उजवेक मेजवानो का
यह खुशनुमा मकान,
अभी-अभी तो मैं यहाँ आया था,
तुम्हारा काम भी पूरा न हो पाया था,
कि देवताओ के दूत आ गए
और मुझसे मेरी देह माँग रहे है—
मिट्टी की देह मेरी माँ की गोद की निशानी
जिसे मैं साथ ले आया था !
वही धूल, वही निशानी
तुम लोगे ?

तो लो, मैं चला !
मेरी निशानी माँ को दे देना,
कहना, संभाल कर रखे,
अगर उसकी कोख फिर से मिली
तो इस पुरातन मिट्टी को लेने
मै फिर संसार में उतरूँगा,
सेवा करूँगा।

और अब—

रात बीत चुकी है,
चन्द्रमा की कोर भी
बुझ चुकी है;
ताशकन्द मे सबेरे का मुर्गा
बाग दे रहा है; खरबूजे और
अंगूरों की बेलो मे खलबली है
और कपास की आँखो के मोटे कोयों में
सूरज की पहली रोशनी जली है।
शुक्र खुदा का कि
दस्तखत हो चुके है,
काम खतम है,
दूसरे खेमे मे भी
सब अमन है।
अब कोई काम बाकी नही है।
दूरभाष के तारों पर
दिल्ली से भी बात हो चुकी है।

अच्छा, तो मै चला !
आपकी मेहरबानी के लिए शुक्रिया,
आपकी मेजवानी के लिए धन्यवाद !
तो फिर नमस्कार !
दो-स्वि-दानिया !
भगवान भला करे,
भगवान रक्षा करे,
खुदा हाफिज ! खुदा हाफिज।

(डा०) कु० चन्द्रप्रकाश सिंह

लिखा नया इतिहास

उदित हुए बन तुम वामन को अकल कला अभिराम।
अदित सदृश इस भारतम् के तपफल पूर्ण प्रकाम ।।
कुटिया से बढ एक चरण मे नाम लिया प्रासाद।
लोकतन्त्र का हरा दूसरा डग भर निखिल प्रमाद ।।

और तीसरा डग भर तुमने लिखा नया इतिहास।
रावी-तट पर निज सेना का अप्रतिम विजय-विलास ।।
आधा डग वह—ताशकद का महत् शान्ति-अभियान।
मानवता के लिए तुम्हारा महिमामय वलिदान ।।

युद्ध-शान्ति दोनों का साधक तुम सा हुआ न धन्य।
मूर्त त्रिविक्रम के विक्रम की तुम मे अनुभूति अनन्य ।।
रहे दैन्य में अविचल अविकृत साहस-भरित अदीन।
वैभव में थे तुम विदेह से संतत राग-विहीन ।।

शसित-व्रत सेवारत अविरत अपरिग्रही महान्।
अधन अगेह किन्तु अव्याहृत रहा तुम्हारा दान ।।
सन्यासी से राग-द्वेप से परे रहे तुम नित्य।
प्रकट हुआ बन शील तुम्हारा राष्ट्रपिता का सत्य ।।

जन-जीवन से विलग हुआ था निज शासक-समुदाय।
मरणोन्मुख था लोकतन्त्र यह निश्चेतन निरुपाय ।।
निज निष्ठा से उसमे तुमने किये समर्पित प्राण।
गूंज उठा फिर ग्राम-ग्राम मे जनता का जयगान ।।

कठ-कठ मे मुखर हुआ फिर "जय किसान" सब ओर।
वही तुम्हारी कोर्ति-कथा को व्याप्ति अनन्त अछोरा ।।
रच निज शासन की गीता के अष्टादश अध्याय।
सौंप दिया सब राजनीति को नि.श्रेयस का दाय ।।

वसुन्धरा का एक सुमन फिर गुथा शान्ति-माला में।
भारत माँ का एक लाल फिर चढा चिता ज्वाला मे ॥
फिर मानवता की राधा की बँधी-बधी लट छूटी।
फिर धरती के नदन-वन की सुरतरु शाखा टूटी ॥
पांचजन्य को फूँक प्रेम की वंशी बजा निराली।
बीच रास मे तज ललिता को चला गया वनमाली ॥
एक एक ग्यारह करके ग्यारह को स्वर्ग सिधारा।
रामदुलारी का दूलार वह बनकर राम दुलारा ॥
झुका सफलता सम्मुख कितना ही हो काल बहादुर।
करुणा रोई लाल मिले तो ऐसा लाल बहादुर ॥
लाल किले ने एक बहादुर लाल कभी खोया था।
जो विदेश में रहकर दो गज धरती को रोया था ॥
और दूसरा लाल बहादुर भी विदेश मे खोया।
लेकिन उसके लिए विश्वभर का धरती-तल रोया ॥
वामन ने लघु हो महान बलि का था शीश झुकाया।
शास्त्री ने लघु बलि से बलि को और महान बनाया ॥
अट्ठारह वर्षो मे जो नेहरू ने लिखी पुनीता।
अट्ठारह मासो में वह शास्त्री ने गाई गीता ॥
और स्वय अर्जुन हो अट्ठारह अध्याय पचाकर ॥
घोर महाभारत से वे भारत को गये बचाकर।
नेहरू अथवा शास्त्री दोनों ही हमके हामी थे।
वे भारत के हृदय-हृदय मे सगमके हामी थे ॥
तभी हृदय के सगम का सदेश मधुर लाये थे।
क्योकि केन्द्र मे वे सगम की नगरी से आये थे ॥
शास्त्री जी ने निज जीवन से स्वयं सिद्ध कर डाला।
नही बुझी अब तक भारत की धुनियो की ज्वाला ॥
यहाँ दीन की गुदड़ी मे भी लाल पला करते है।
यहाँ चक्रवर्ती झोपड़ियों मे मचला करते है ॥
'प्राण जायँ बस वचन न जाई' का प्रण अपनाती है।
मानवता पर यह धरती न्योछावर हो जाती है ॥
(यहाँ गरीबी सच्चाई का राजतिलक पाती है ॥)
लाल अनेकों धन्य हो गये भारत भू पर आकर।
पर भारत माँ धन्य हो गई लाल बहादुर पाकर ॥

पुष्पा राही

सूरज के पंख नहीं उगे आज

सुबह कहाँ आई है
वैसी की वैसी है रात !
सन्नाटा और अधिक
गहरा हो आया है
भीतर भी
बाहर भी
अन्धकार
एकमात्र अन्धकार छाया है !
सूरज के पंख नही उगे आज
बादल ने काट दिए !
कैसे विश्वास करे
कल तक तो उगता था
सूरज वह साथ-साथ
चलता था साथ-साथ
राह जगमगाने को
जलता था साथ-साथ
आज मगर कैसे वह
बिना उगे ढल गया
कोटि-कोटि किरणों को
छांह मे बदल गया !
कैसे आवाज दे
अपने तो सारे स्वर,
उसके स्वर में ढले;
कैसे कुछ काम करे
साहस के बुझे दिए
उसके सकेतो पर थे जले;
कैसे आगे बढ़े
अपने तो पाँव ये
उसके पीछे चले;
कैसे अब
कैसे अब पाए गे
हम सब
वे स्वर, सकेत और पांव वे !
बादल का टुकड़ा वह
ले गया
सूयमुखी जीवन इस देश का
सुबह कहां आई है
वैसी की वैसी है रात !

खण्ड : ३

विचार

सेन्ट्रल जेल, नैनो से सन् १९४३ मे लिखा गया ललिताजो के नाम शास्त्रोजी का पत्र ।

मन की एकाग्रता और स्वास्थ्य

मेरे पिछले महीने के शुरू हफ्ते में ही तुम्हारा पत्र आ गया था। इसलिए अबकी वार तुम लोगों का समाचार मुझे देर से मिलेगा। और मेरा भी तुम्हे देर से ही मिल रहा है। बीच मे तुम लोगो का कई वार ख्याल आया लेकिन अभी इस पत्र के उत्तर की प्रतीक्षा एक सप्ताह तक और करनी होगी। तुम्हारी तबियत इन दिनो कैसी रहती है। पहले से कुछ अच्छी है या नही। इलाहाबाद आने का इरादा था, आने का विचार है या नही। पटना से कुछ समाचार क्या इधर मिला था। अम्मा तो अभी वही होगी। सुन्दर और श्री जी आशा है अच्छी तरह होगी। बेटी वापिस चली गई है या यही है अभी। मेरा, बिटो और सूरजमुखी से सस्नेह नमस्कार कहना।

तुम्हारी पढाई का क्या समाचार है। पढ़ाई चल रही है या नही। परीक्षा देने के सम्बन्ध मे क्या विचार है। जितना हो सके पढने मे समय लगाना। कोर्स के अलावा और भी दूसरी किताबे जितनी अधिक पढी जा सके, पढनी चाहिये। लेकिन इसके लिए सबसे पहली शर्त यह है कि स्वास्थ्य ठीक रहे। स्वास्थ्य ठोक नही रहता तो मन एकाग्र नही होता। और मन यदि हल्का नही हो तो पढने आदि मे चित्त नही लगता। इसलिए शरीर और स्वास्थ्य को तरफ से किसी को बेफिक्री नही होनी चाहिए। जब तक तुम यह नही लिखोगी कि तुम्हारा स्वास्थ्य सुधर रहा है, मुझे चिन्ता बनी रहेगी।

मै अच्छी तरह हूँ। तबियत बिलकुल ठीक है। इधर एक महीना पढने मे ढील डाल दी थी लेकिन अब फिर शुरू कर दिया है। मुझे किसी चीज की जरूरत नही है। भाई साहब[1] के क्या हाल है। आशा है अब गठिया की शिकायत ठीक हो गई होगी। मेरा उनसे और दोनो भाई साहब[2] से प्रणाम कहना।

---

१. अम्बिकाप्रसाद जी से तात्पर्य है

२. चन्द्रिकाप्रसाद जी, एव ब्रजबिहारी जी से तात्पर्य है।

—सम्पादक

सैन्ट्रल जेल नैनी, से ८-१०-१९४३ को लिखा गया कुसुमवाला (पुत्री) के नाम शास्त्रीजी का पत्र।

अन्याय को नहीं सहना चाहिए

सुना है तुम लोग वडे शरारती हो गये हो। शरारत थोडो करनी चाहिए, ज्यादा नही शायद तुम लम्वी भी हो गई हो। लम्वा आदमी तो शरारती कम होता है। नाटा नटखट होता है आशा है तुम ज्यादा शरारत नही करतो होगी। हरीबाबू शायद करते होगे। मगर तुम्हारी अम्मा के पत्र से मालूम हुआ कि वह पढते खूब है। पढते हुए यदि खिलवाड करे तो अच्छा लगता है। लेकिन खिलवाड ऐसा न हो जिससे घर के वडो को बुरा लगे। सुमन तो पहले से ही गम्भीर थी। अब भी वैसी ही होगी। हा कभी-कभी तुमसे और हरि से झगड लेती होगी। मगर दिल मे सुमन तुमसे और हरि से वहुत प्रेम करती है यह मै जानता हूँ। जिन भाई बहिनो को मैं बिना लडे झगडे प्रेम से रहते देखता हूँ। उनसे मै वहुत प्रसन्न होता हूँ। आशा है तुम दोनो भाई बहिन अच्छी तरह रहोगे।

आज विजय दशमी है, इस समय तुम लोग खूब खुशी मना रहे होगे और शायद शाम को रामचन्द्र जी की जीत का मेला देखने भी जाओ। रामचन्द्र जी किससे लडे थे—रावण से। क्यों? उसके अन्याय के खिलाफ, उनकी विजय को दुनिया आज तक मनाती है। इतना बड़ा मेला और पर्व होता है तो लडके और लडकियो को भी अन्याय को नही सहना चाहिये। कोई किसी को सताये तो रोकना चाहिए। तुम रामायण के अयोध्या काण्ड या सुन्दर काण्ड की कुछ चौपाइया और दोहे याद कर सको तो करना। और उसके गाने का तरीका भी सीख लो। सुमन और हरि भी याद करें तो अच्छा है। सुन्दर[1] जव सुमन के बराबर थी तव उन्हे पूरा सुन्दर काण्ड याद था। तुम लोग भी जरूर याद करो। हरिवावू और सुमन बेटी से खूब प्यार कहना। कमला[2] को भी प्यार!

---

१. शास्त्रीजी की वहिन

२. शास्त्रीजी की भतीजी

सम्पादक—

"स्वर्गीय प्रधानमन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने ६ अक्तूबर, १९६३ को श्री राजेश्वर प्रसाद, आई० ए० एस० को, जो उस समय लन्दन मे थे, एक व्यक्तिगत पत्र लिखा था। व्यक्तिगत होते हुये भी, शास्त्री जी ने कामराज योजना के अन्तर्गत अपने त्यागपत्र देने के कारणो पर इस पत्र मे प्रकाश डाला है। इसमे उनके राजनीतिक एवं सामाजिक विचारो की एक झलक मिलती है। इससे यह भी ज्ञात होता है कि कितना सरल और सादा जीवन वे व्यतीत करते थे और श्रीमती ललिता शास्त्री द्वारा सुख-दुख में कितना सहयोग और सम्बल उन्हे प्राप्त था।"

शास्त्रीजी का एक महत्वपूर्ण पत्र

नमस्कार। आपका २ सितम्बर का पत्र समय पर मिल गया था और २८ सितम्बर का कल मिला। खेद है कि पहले आपको न लिख सका। पिछले एक मास में अधिक व्यस्त रहना पड़ा है। इधर नये मुख्य मन्त्रियों का चुनाव और उसकी कैबिनेट आदि के सम्बन्ध में भी बहुत समय लगा। उत्तर प्रदेश के झगडे को हम अभी तक नही सुलझा पाये। वहाँ की स्थिति से चिन्ता होती है। प्रदेश को कितनी क्षति पहुँच रही है, वह प्रदेश के साथी कम ही अनुभव कर रहे है। परस्पर की व्यक्तिगत होड़ लगी हुयी है।

पडितजी ने बहुत चाहा कि मै अपने पद पर बना रहूँ। कहा भी कई बार परन्तु अपने पद से हटना मुझे अच्छा लगा। दूसरे को उपदेश देते-देते और स्वयं कुछ न करने की कसक मेरे मन मे रहती ही थी। जिस तेजी से कांग्रेस में हम नीचे की ओर खसक रहे है वह भयावह मालूम देता है। गवर्नमेन्ट का शासन जिलो मे वेग से निम्न स्तर की ओर जा रहा है। कोई स्वस्थ विरोधी दल बन नही पाया है। ऐसी स्थिति मे यदि हम सरकार से बाहर आकर कुछ कर सकें तो पद त्याग का स्वागत ही करना चाहिये।

अभी तक तो लक्षण बहुत अच्छे नही दिखाई दिये हैं। परन्तु प्रारम्भ में यह बड़ा कदम कुछ दुविधा उत्पन्न करे तो आश्चर्य ही क्या। हम जो कुछ अनुभवी और बुजुर्ग माने जाते हैं, उनका इम्तेहान है। मै तो समझता हूँ कि दोष हमारा है, न कि हमारे प्रदेश अथवा जिले के कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं का। अगले कुछ महीने यह स्पष्ट कर देंगे कि हमारी कितनी उपयोगिता बाहर है। मैं निराश नही हुआ हूँ।

कठिनाइया तो घर मे उठानी ही पड़ेंगी। आदमी अपने को साथ ही लेता है। मकान अभी बदला नही है पर छोटे मकान में [illegible]। एक [illegible] कम कर दी गयी है, दूध भी। कपड़ा भी घर के हाथ से धोने लगे है, रामजी की मोटर इस्तेमाल करता हूँ। पेट्रोल अपना दूंगा। और भी बातें [illegible] कर करनी पड़ेंगी। दो बार पहले हट चुका हूँ, यह तीसरा नम्बर है। पिछले दो बार के [illegible]।

सुविधायें कुछ अधिक ही है। हरि भो काम मे लगे हुए है। और संसद का भी अलाउन्स है। हा, खर्च का वोझ जरूर वढ गया हे। सच तो यह है कि मेरी पत्नी का सच्चा और अनुपम सहयोग है और उनसे वडा वल तथा सहारा मिलता है—अतएव चल हो जायगा। आप लोगो का चिन्तित होना स्वाभाविक हे। आगे को कम सोचना जान पड़ता है अच्छा हे। यह विश्वास-सा होता है कि जो वह करता हे वह हमें सहर्ष स्वीकार करना है—

हारिये न हिम्मत, विसारिये न राम को।
जाहि विधि राखे राम ताहि विधि रहिये॥

२ अक्तूवर को हम लोग राजघाट गये थे। पुराना ही दृश्य था – सिवाय समाधि पर नये निर्माण के। गाधीजी को याद रुला देती है। हम सव आराम और पदो की लालसा मे पडे है। पदो द्वारा सेवा और अर्चना की भावना कम है। गाधीजी का वैराग्य दृढ था। कवीर का पद उनकी जीवन की झाकी हे—

दास कबीरा जतन से ओढी,
ज्यो की त्यो धर दीनी चदरिया।

राजघाट पर पण्डित जी को मेरे जन्म दिन को भी याद आ गई। थोडी सी बात हुई वह 'नवभारत' मे इस प्रकार प्रकाशित हुआ :—

गाधी जी का जन्म दिन सबका जन्म दिन

नयी दिल्ली – २ अक्तूवर सवेरे राजघाट पर श्री नेहरू ने शास्त्री जी से पूछा "सुना है आज तुम्हारा जन्म दिन हे।" शास्त्री जी जो आमतौर से यह बात बताते नही है, कहा—"आज तो गाधी जी का जन्म दिन हे और उसी से मेरा ही क्यो सबका जन्म दिन है।"

आप तथा आपकी पत्नी स्वस्थ और खुश है यह जानकर प्रसन्नता हुई। आप नये अनुभव और नयी जानकारी लेकर आवेगे। सरकार और देश के लिए अधिक उपयोगी होगे। मै जानता हूँ कि आपने अपने प्रत्येक क्षण का सुन्दर उपयोग किया होगा। अभी से आप हम सबकी वधाई ले ले।

अजय, अलोक, रवि और अन्शु सभी अच्छे है। दो वार यहा भी खाने पर आये थे। महेश्वर प्रसाद जी के यहा भी खाने पर सव मिले थे। वडी अच्छी तरह रह रहे हे यद्यपि उनका मन आप दोनो के विना अतृप्त ही रहता होगा और वे आपकी वाट ही जोहते होगे। आप और शायद आपसे अधिक आपकी पत्नी उनको देखने के लिए अधीर होगी। सोचती होगी चलने का दिन जल्द हो क्यो नही आ जाता। आपके वडे भाई साहव से भी भेट हुई थी। महेश्वर प्रसाद जी अभी गृह मन्त्रालय मे ही हे।

और सव कुशल हे।

धान म त्रीश्री लालबहादुर शास्त्रो ने पदग्रहण करने के बाद
दनाक ११ जून १९६४ को रात पहली बार अपने राष्ट्र
यापी ब्रॉडकास्ट मे भारत और पाकिस्तान के बीच सद्भा-
ना, मैत्री और पारस्परिक सहयोग की आवश्यकता
र जोर दिया और कहा कि ये न केवल दोनो देशो के
ए लाभदायक होगे बल्कि एशिया की शाति और समृद्धि
भी इनका वहुत बडा योगदान रहेगा। राष्ट्र के नाम
न्देश का सम्पादित अंश इस प्रकार से है।

संसार युद्ध विहीन और शांतिपूर्ण हो

राष्ट्रपति अयूब खाँ की हाल की रेडियो वार्ता की चर्चा करते हुए श्री शास्त्री ने कहा कि उनके वक्तव्य मे विवेक और समझदारी दिखायी गयी है और वक्तव्य मौजूं मौके पर दिया गया है।

श्री शास्त्री ने कहा कि चाहे जो हो भारत और पाकिस्तान के बीच सम्बन्ध की सम्प्रति सी स्थिति है उसमे इसके लिए दोनों देशो की सरकारों और जनता के सकल्प और सद्भावना की ावश्यकता है।

प्रधान मंत्री ने कहा है कि भारत की तटस्थता की नीति बनी रहेगी और दूसरे देशों के ाथ अपने सम्बन्ध और विश्व समस्याओं के प्रति हमारे रूख का यह नीति मौलिक आधार भी बनी हेंगी।

अफ्रीकी एशियाई एकता के महत्व पर जोर डालते हुए श्री शास्त्री ने कहा कि एशियाई फ्रीकी गुट का हम नेता बनना नही चाहते। विश्व शाति और जनता की स्वतन्त्रता के प्रश्न पर पने अफ्रीकी और एशियाई मित्र राष्ट्रों का एक सहयोगी बने रहने में ही हमें सन्तोप है।

चीनी-भारतोय सीमा-संघर्ष के संबध मे श्री शास्त्री ने कहा कि भारत ने कोलम्बो प्रस्तावो को मान लिया और अब यह चीन के ऊपर है कि वह उन्हे माने और अपने रूख पर फिर से विचार करे और साथ ही चीन मे तथा हमारे अफ्रीकी-एशियाई राष्ट्रो मे भारत विरोधी प्रचार वह न्द करे।

श्री शास्त्री ने हिन्दी और अंग्रेजी दोनो भाषाओ मे वार्ता प्रसारित की और कहा कि भारत को स्वतन्त्र, सबल और समृद्ध बनाने तथा युद्ध विहीन शातिपूर्ण विश्व के निर्माण कार्य को ूरा करने से बढ़कर महात्मा गाधी तथा जवाहरलाल जी की कोई और स्मृति नही हो सकती।

उन्होने कहा कि प्रधान मंत्रित्व का गुरुतर भार उसके कार्यो और जिम्मेदारियों का मैंने विनम्रता और देशवासियों के प्रति अपने प्रेम और श्रद्धा की भावना से ही अपने कधे पर लिया है।

श्री शास्त्री ने आश्वासन दिया कि प्रशासकीय सुधारो की समस्याओ को ओर उनका ध्यान रहे इसका वे पूरा प्रयास करेगे। आर्थिक परिवर्तन के लिए प्रभावकारी साधन बनाने के निमित प्रशासकीय सगठन, इसकी प्रणालियो और प्रक्रियाओ का आधुनिकीकरण आवश्यक है।

उन्होंने कहा कि लोगो को अनुशासन के साथ सयुक्त रूप मे काम करना चाहिये और राजनीतिक दलो के सदस्यो को चाहिये कि वे राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के कार्य मे सहायता का हाथ बटायें।

श्री शास्त्री ने कहा कि चाहे देश के किसी भाग के लोगो की किसी प्रश्न पर कोई भी भावना कैसी भी मजबूत क्यो न हो उन्हे यह नही भूलना चाहिए कि प्रथमतः वे भारतीय है और एक राष्ट्र तथा एक देश अपरिवर्तनीय ढाचे के भीतर सभी मतभेदो को सुलझा ले।

राष्ट्र एक अग्नि परीक्षा मे गुजरा है। मेरा विश्वास है कि इस परीक्षा से राष्ट्रीय भावना और स्वाभिमान और पुष्ट होकर, दमक कर निकले है। देश ने फिर से यह दिखलाया कि स्वतन्त्रता और सार्वभौमिक अखण्डता का कोई मूल्य नही आका जा सकता। कोई भी परीक्षा, कोई भी वलिदान, इसके लिए छोटे है।

साथ ही हमने फिर से सिद्ध किया है कि हम अग्नि परीक्षा से नही घबराते तो हम अग्नि से खिलवाड करना भी उचित नहीं समझते। हमने हमेशा शान्ति के लिये प्रयत्न किए है और भीषण युद्ध को ज्वाला के बीच भी हमे शाति की याद भूला नही।

हमारी विजय किसी दूसरे राष्ट्र के प्रदेश की विजय नही और न ही हमे इसकी कोई आकाक्षा है। हमारी लडाई हमारे सिद्धान्तो के लिए है। और यह जब तक राष्ट्र उन पर अटल रहेगा तब तक कोई भी उसका बाल बाका नही कर सकता।

—लालबहादुर शास्त्री

नेता चुने जाने के बाद कांग्रेस संसदीय पार्टी के समक्ष श्री लाल बहादुर शास्त्री ने अपने सक्षिप्त भाषण मे यह प्रतिज्ञा की कि वे सदा समाजवाद के लिए कार्य करेंगे।

नेहरू के बताये मार्ग पर चलना ही लाभदायक

श्री लालबहादुर शास्त्री ने प्रेस कांफ्रेस में कहा कि स्वर्गीय प्रधान-मन्त्री नेहरू की परराष्ट्र-नीति लाभदायक रही है और वह भविष्य में भी देश के लिये लाभदायक रहेगी। उन्होने कहा कि हम किसी शक्ति गुट मे नही मिल सकते। विश्व मे करीब-करीब सभी देशों से हमारा मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध है। बिना किसी गुट मे शामिल हुए हम उस मैत्री को और बढायेगे। देश मे शातिपूर्ण आर्थिक क्रांति हमारा लक्ष्य होगा। राष्ट्रीय सम्पत्ति का सतुलित विभाजन के द्वारा ही हम नये समाज की रचना कर सकते है। थोड़े व्यक्तियो के हाथ में पूंजो के साधन छोड़ कर असख्य व्यक्तियो का शोषण होते रहना उचित नही है।

देश मे बढती हुई कीमते और उसके दुष्परिणामों की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि—"मै शीघ्र ही खाद्य और कृषिमन्त्री, योजना मत्रालय तथा वित्त मन्त्रणालय से इस विषय मे परामर्श करूंगा और मूल्य-वृद्धि को रोकने के लिए आवश्यक उपायो पर विचार-विमर्श करूंगा"।

श्री शास्त्री ने अन्य प्रमुख समस्याओ की चर्चा करते हुए कहा कि राष्ट्रीय एकता के निर्माण के लिये उनका निराकरण भी आवश्यक है। हर हालत मे हम देश को प्रथम स्थान देंगे। प्रदेश, सम्प्रदाय तथा धर्म आदि के सबन्ध मे कोई भी विचार देश के बाद हो किया जा सकता है। इस देश मे रहने वाले अल्पसख्यको की सुरक्षा भी होनी चाहिये।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे स्वर्गीय प्रधानमन्त्री, श्री जवाहरलाल नेहरू की नीति अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुई है और भविष्य मे भी वह हमारे लिए हितकर होगो, ऐसा मेरा विश्वास है। इस सदर्भ मे उन्होने तटस्थता की नीति, निरस्त्रीकरण तथा लाओस के विषय मे भारत की जो नीति रही है उसे श्री शास्त्री ने दुहराया। लाओस मे शीघ्रातिशीघ्र शाति स्थापित हो, इसलिये भारत १४ राष्ट्रो के जनेवा-सम्मेलन बुलाये जाने के पक्ष मे है।

श्री शास्त्री ने पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खॉ के उस रेडियो भाषण का स्वागत किया जिसमे उन्होने भारत के साथ मैत्री को महत्ता दी है।

नये प्रधानमन्त्री ने देश की जनता मे अपना विश्वास प्रकट करते हुए कहा कि "हम नेता कभी कभी, असफल सिद्ध होते है, किन्तु जनता असफल सिद्ध नही ठहरती। अभी हाल मे जनता ने और उनके प्रतिनिधियो ने अपनी यह प्रबल इच्छा व्यक्त की कि प्रधानमन्त्री पद के लिये सघर्ष नही होना चाहिये"।

देश के विकास के लिये सभी व्यक्तियो का सहयोग प्राप्त हो इसकी मैं पूरी कोशिश करूंगा। "हम सभी को खासकर जो सत्तारूढ है, ऐक्य भाव प्रकट कर अधिक जिम्मेवारी तथा कुशलता से काम करना होगा। समस्याओ के निराकरण के लिये हमे अधिक परिश्रम भी करने होगे।"

'अतीत की स्मृतियाँ' नामक ग्रंथ विमोचन समारोह मे शास्त्रीजी ने निम्न उद्गार प्रकट किये।

ऊंचे दर्जे के कवि और त्याग की मूर्त्ति

ओजस्वी राष्ट्रीय कवि की याद

हम लोग नवीनजी को नवीनजी कम ही कहते थे। कभी बालकृष्ण, कभी शर्माजी, इसी तरह कहकर उन्हे पुकारते थे। हम देखते है कि वे कैसे ऊंचे दर्जे के कवि थे। अपने विचारो मे और भाषा के प्रयोग मे वे कितने आजाद थे। बोलने मे कम ही ऐसे लोग थे जिनका इतना ओजस्वी भाषण हिन्दी मे होता हो जितना शर्माजी का। लेखन अत्यन्त प्रभावशाली और भाषा भी बड़ी पारिमार्जित। उनके लिए तो एक दूसरा ही क्षेत्र था। मैने अभी तक मुश्किल से ही कोई ऐसा आदमी पाया हो, इतना भावुकता से भरा हुआ। उनके अन्दर भावुकता कूट-कूट कर भरी हुई थी, वे उसका सिम्बल, उसकी तस्वीर थे। और जब वे ऐसे व्यक्ति थे, तो यह कैसे सम्भव था कि गाधी की आवाज पर वे पीछे रह जाते और आजादी के मैदान मे न उतर आते।

गणेशशकरजी का व उनका आपस का दोस्ताना सम्बन्ध ही नही था, भाई से भी ज्यादा एक-दूसरे को वे प्यार करते थे। गणेशशकरजी को शर्माजी हमेशा ही बडा मानते थे। गणेशशकरजी मे यह खूबी थी, और वही शर्माजी की भी रही, कि विचारो के रास्ते मे कभी रुकावट या बाधा नही डालते थे। दूसरे विचार वालो की मदद करते थे, काम करने की शैली मे फर्क भी हो, लेकिन भाई-भाई की तरह एक-दूसरे पर विश्वास करते थे और सहायता करते थे। क्रातिकारियो के विषय मे यह मशहूर है कि गणेशजी के यहाँ से कोई क्रातिकारी या शर्माजी के यहाँ से कोई रिवोल्यूशनरी खाली नही लौटता था। कितना भी खतरा लेकर वे उनकी पूरी तरह से मदद करते थे।

उनकी एक खूबी कहिए, वह थी उनकी भावुकता, जिसका मैने अभी जिक्र किया था। उन्हे एक चीज से दूसरी चीज की ओर बहा ले जाना बहुत मुश्किल काम नही था। एक बात उन्होने कही, बड़े जोरो से कही, और कोई आदमी अगर उसी तरह, एक दर्द भरी आवाज मे, जोश और ताकत के साथ दूसरी बात रख दे, तो शर्माजी चक्कर मे पड जाते और उसी बात को मान लेते थे। यहाँ तक कि पूर्व-वक्ता से लडने को भी तैयार हो जाते थे। तो यह एक तरह से प्यार की भावुकता है जो दिल की सच्चाई और सफाई को प्रकट करती है। मै तो उसे इसी रूप मे देखता हूँ। कभी-कभी सोचता हूँ कि लोग मुझे थोडा-बहुत सीधा-सादा मानते है, मगर मै कही ज्यादा चालाक हूँ। क्योकि वह भावुकता, वह 'इमोशनलिज्म' मेरे अन्दर बहुत कम है। और जहाँ 'इमोशन' कम हो वहा जरूर ही चालाकी ज्यादा होगी तो इस दृष्टि से मै जब बालकृष्ण शर्मा की पैमाइश और उनकी जाच पडताल करता हूँ तो उन्हे मै बहुत ऊंचा व्यक्ति मानता हू।

जेलखाने के वे पुराने दृश्य

मेरा उनका साथ बहुत पहले से भी रहा और चार-पाँच वर्ष जेल में भी हम लोग साथ-साथ रहे। कभी-कभी जब प्रोग्रेसिव लोग—वे स्वय प्रोग्रेसिव तब जरा कम थे, मगर थे—तो प्रोग्रेसिव, या क्या कहूँ, उन्नतिशील विचारों के जो व्यक्ति थे, वे कभी-कभी जब शर्माजी के पास पहुँच जाते, तो वे जेल मे हम लोगों को भूल जाते थे और फिर जोरों से बोलते और सोशलिज्म और कम्यूनिज्म के विचारो की दुनिया मे डूबे रहते थे। अपनी कविता 'जब से देखा मैने जन को, जन के आगे हाथ पसारे' एक दो बार शर्माजी सुना-चुके थे। बडी बहस चल रही थी; और उन्होने हम लोगो के खिलाफ कहा मै कुछ कजरवेटिव विचारों का आदमी हूँ। फिर थोड़ी देर बाद देखा तो शर्माजी कुछ आराम करने चले गये थे, खाना खाने के बाद। वहाँ जेल से एक मशक्कती मिलता था, जो सफाई-वफाई किया करता था। उस समय देखा कि वह पखा डुला रहा था और शर्माजी सो रहे थे। जब शर्माजी उठे, तो मुझे कुछ हंसी आयी और मैने कहा शर्माजी मुझे कविता तो आती नही, लेकिन यह क्या, अभी तक तो आप कविता मे यह कह रहे थे कि एक आदमी को दूसरे के सामने हाथ पसारे देखा। मुझे तो ऐसा लगा कि मैने देखा, 'जन को जन पर विजन डुलाते।' यह सुना तो शर्माजी बहुत हँसे और हँसे ही नही उन पर इतना असर पड़ा कि कहने लगे, 'मै कल से इसको बन्द कर दूगा।' अगले दिन जब हम लोग वहां गये, तो देखा पखा भी नही था और डुलाने वाला भी नदारद। मैने तब कहा कि इसके बन्द करने का सवाल तो नही था।

बालकृष्णजी एक ऐसे व्यक्ति थे जिनका मुझ पर एक जबरदस्त असर पड़ा।

जब मै एक काल-कोठरी मे बन्द था और वे भी बन्द थे। उनको सजा ज्यादा मिली थी, क्योंकि वे नेता थे। जैसे ही वे एक जेल से दूसरे जेल ले जाये जाने लगे, मेरे सामने उनको दो-तीन मिनट का मौका मिला। उन्होने मुझे बुलाया, तो मैंने अपनी छोटी-सी कोठरी के जगले से उनको देखा। जब मुझे उन्होंने देखा तो वे मेरी तरफ आये। मिलने की इजाजत तो थी नहीं, लेकिन आये। मैंने उनका स्वरूप देखा तो सचमुच मेरी आँखो मे आँसू आ गये। उनके सारे बाल-वाल मुंड़ा दिये गये थे। वे एक निहायत सुन्दर आदमी थे, उनका व्यक्तित्व अत्यन्त आकर्षक था, बहुत खिचाव था उनमे—उनकी आखो में, उनकी मुद्रा मे? तो देखा—सारे बाल मुंडे हुए, एक लगोटी-भर उनके पास थी। नवम्बर-दिसम्बर के जाड़े के दिन थे। उनका हाल यह देखा तो मेरे भी आंसू आ गये और वे भी रोने लगे। मगर उस आदमी मे कहीं कोई फर्क हो, कोई अन्तर हो, कही कोई शिकन आये, इसका कहीं नामो-निशान नही था। मगर मै तो उनकी और बातो को छोड़कर सिर्फ उनकी भावुकता को ही देखता हूँ—जैसा कि मैंने जिक्र किया, नवीनजी जैसा व्यक्ति किसी भी हद तक सब कुछ छोड़ने को तैयार हो जाता। यह उनका एक गुण था और ऐसे व्यक्ति कम ही मिलते है।

मैने शर्माजी के दोनो स्वरूप देखे है। उनकी भावुकता भी देखी है, उनकी गम्भीरता भी देखी है। कठिन से कठिन समय मे जब कि लोग यह समझते थे कि आज गाधी एक कमजोरी दिखला रहा है और जबकि ऑल इण्डिया काग्रेस की मीटिग मे लगता था कि गाधी का प्रस्ताव गिर जायेगा, उस समय कभी शर्माजी को गर्म लोगो के साथ जाते नही देखा। मुझे याद है कि लाहौर काग्रेस मे, जो वायसरॉय पर बम गिरा था, शायद तीन-चार रोज पहले, उस पर और १६२६ मे यह प्रस्ताव

होने जा रहा था कि ३० दिसम्बर, १९२९ को १२ बजे रात्रि को भारत ने पूर्ण स्वतन्त्रता का, 'कम्प्लीट-इण्डिपेण्डेन्स' का ऐलान किया जायेगा। एक साल के बाद जबरदस्त लड़ाई लड़ने जा रहे हैं, उस समय गान्धीजी ने प्रस्ताव यह रखा था कि वायसरॉय बम से बच गये हैं, भारतीय कांग्रेस अधिवेशन उनको इस बात के लिए बधाई देता है और देश से इस बात की आशा रखता है कि हम किसी प्रकार का हिंसात्मक काम ऐसा नहीं करेंगे जिससे कि हमारी आजादी की लड़ाई में बाधा पड़े। अब आप अन्दाजा कीजियेगा कि उस जमाने में, उस समय जबकि एक गहरी लड़ाई हम लड़ने वाले हैं, गान्धीजी और हम तैयारी कर रहे हैं, और फिर एक वायसराय पर बम फेंका जाता है और उसकी रक्षा के लिये हम प्रार्थना करते हैं, बचने पर बधाई देते हैं! कैसी यह एक टक्कर और आपस में एक-दूसरे के विरुद्ध बने हैं। आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी में मुझे याद है, लाहौर में जो भाषण सुने आलिम साहब खड़े होकर ऐसी जोरदार स्पीचें देते, जिसका कोई ठिकाना नहीं। खैर मैं ब्यौरे में नहीं जाऊंगा। जब वोट देने की नौबत आयी, तो मैं भी उसी कैम्प में और शर्माजी भी। मैंने जब पूछा तो शर्माजी ने कहा मेरे लिए कोई सोचने का सवाल नहीं। जो गान्धीजी ने प्रस्ताव रखा है उसका सोलह आने हमें समर्थन करना है, क्योंकि जब बड़े काम करने होते हैं, तो छोटी-मोटी बातों में उलझा नहीं जाता, फंसा नहीं जाता और इसीलिए हम सबने मिलकर वोट दिया। विरोध का प्रश्न नहीं था। थोड़े लोग विरोध में थे जो ऐसी बातें करते थे।

और ज्यादा तो नहीं इतना अवश्य कहूंगा कि शर्माजी में एक असीम त्याग की मात्रा थी। उनके अन्दर लालच—जो आज हमें लालच पदों का है, वह लालच शर्माजी में नहीं था। नहीं के बराबर था। खैर, मैं स्वयं तो एक तमाशा ही बन गया हूं। निकलता हूं फिर आता हूं, फिर निकलता हूं फिर आता हूं। तो यह कहना कि पदों का लालच नहीं है यह तो गलत बात है। मगर शर्माजी का मुझे ख्याल है कि जितने दिन उन्होंने काम किया, उनकी सेवाएं असीम थीं और उनका त्याग, उनका कष्ट वह भी बहुत बड़ा था—फिर भी वे किसी से भी टक्कर ले सकते थे। लेकिन उनको कोई ऑफिस या पद उस जमाने में नहीं मिला। सन् १९३७ में पहली मिनिस्ट्री बनी थी यू० पी० में। बाद में सन् १९४६ से लेकर जब तक वे जीवित रहे कोई ऑफिस या कोई पद किसी रूप में उन्हें नहीं मिला। मगर कहीं उनके मन में कोई क्लेश नहीं था, क्रोध नहीं था, कोई ईर्ष्या नहीं थी।

बिना शिकायत उल्टे पांव कानपुर वापिस

एक बात मुझे याद आयी कि एक बार यू० पी० लेजिस्लेटिव कौन्सिल में उनको नामजद किया जाना था और उनको यह कह दिया गया था कि फलां तारीख को नामजद होंगे और कौन्सिल की मीटिंग भी है उस तारीख को और आप आयें। और वे तैयार होकर कौन्सिल की मीटिंग के एक दिन पहले उसे 'अटेंड' करने के लिए आ गये। और थोड़ी-बहुत तो शक्ल-सूरत बदलनी पड़ती है जब कोई कौन्सिल या पार्लियामेंट वगैरह में आये! तो शर्माजी बेचारे आये, थोड़ा सज-धजकर। मगर शाम क्या हुई—यह चीज मुझे भूली नहीं—कुछ ऐसी कठिनाई हुई जिससे उनकी नामजदगी नहीं हुई और पन्तजी ने उनसे कहा कि भाई बालकृष्ण, बहुत दिक्कत पड़ गयी, हमें एक दूसरे व्यक्ति को नामजद करना पड़ गया। (और वह जमाना जो था गवर्नरों का था। इसलिए मुश्किल पड़ी।)

मुझे उम्मीद है कि तुम इसका ज्यादा-कुछ खयाल नहीं करोगे। और शर्माजी उल्टे पांव कानपुर लौट आये। मगर कभी मैंने उनको यह कहते नही सूना कि मेरे साथ अन्याय हुआ, या मेरे साथ ज्यादती हुई।

वैसे मुझे लगता है कि दुनिया कोई खत्म तो होती नही :

खुदा जाने ये किसकी जल्वागाहे-नाज है दुनिया,
हजारो जा चुके, लेकिन वही रगत है महफिल की।

यह दुनिया तो नही बदलती, रगत कुछ बदलती जाती है। मै कभी-कभी आजकल महसूस करता हूँ कि ऐसे लोग जो जाते है उनकी जगह हम भर नही पाते। जो भावनाएँ, जो बाते उनमें थी, एक सुन्दरता थी। एक भेद था और जीवन थोडा-सा एक दूसरे ढग का रस था वह जैसे फीका-सा पड़ता नजर आता है। यह दुनिया तो चलेगी लेकिन रिश्तो को कायम रख सकेंगे, जैसे कि शर्माजी ने रखा ? मै समझता हूँ कि उससे हमारा भी भला होगा, समाज का भी भला होगा और हमारे देश का भी भला होगा।

जवाहरलालजी ने शास्त्रीजी को एक दिन जगल का फूल कह दिया, मगर उनका यह वक्तव्य उनके लिए बडा मँहगा पड गया। शास्त्रीजी ने जवाब दिया —'जगल बगीचे से अच्छा है, वहाँ ज्यादा आजादी है, हवा भी ज्यादा साफ रहती है। वहाँ कोई माली जिस्म को कलम करने नही आता है और खिले फूल को कोई तोड़ता भी नही। बगीचे मे तो सौ हाथ तोडने को भटकते है।'

पंडितजी ने कहा—'मगर पूजा तो बगीचे के फूल से ही होती है, देवता के शीश पर—या चरणो मे कह दो - फूल तो बगीचे का ही चढता है और आम लोगो को भी मयम्सर बगीचे का फूल ही होता है।'

शास्त्रीजी ने अपने स्वाभाविक हास-परिहास के साथ तर्क किया—'क्या देवता के सिर पर चढना ही सब कुछ है, केवल सुगध बिखेरना क्या कुछ कम है ? सुगध फैलाते-फैलाते फूल झर जागे, हमे तो फूल की सार्थकता यही लगती है। फूल देवताओ के लिए ही क्यो खिले, क्या और जीव तुच्छ है ?'

—सम्पादक

भीषण वर्षा के बावजूद पुरानी दिल्ली स्थित ऐतिहासिक लाल किले के सामने के मैदान मे १५ अगस्त १९६४ को आयोजित स्वतन्त्रता दिवस समारोह मे उपस्थित भारी जनसमूह के बीच भाषण करते हुए प्रधान मन्त्री श्री लाल बहादुर शास्त्री ने यह आशा व्यक्त की कि भारत और पाकिस्तान के बीच मतभेदो को एकता एव मित्रता के भाव से दूर करने के उद्देश्य से दोनो देशो की पारस्परिक वार्ता अगले चन्द दिनो मे होगी। उक्त भाषण का सम्पादित साराश रूप यहाँ दिया जा रहा है।

आत्म सम्मान की रक्षा करें

प्रधानमन्त्री ने कहा—"हमे पाकिस्तान के साथ किसी समझौते पर पहुँचना चाहिए और आत्म सम्मान के आधार पर उससे सहयोग करने के लिए तैयार रहना चाहिए एव हमे पारस्परिक वार्ता द्वारा मतभेदो तथा सघर्षो से बाहर निकलने का रास्ता ढूँढ़ने की अवश्य कोशिश करनी चाहिए।"

उन्होने हाल मे राष्ट्रपति के उस वक्तव्य का स्वागत किया जिसमे उन्होने (श्री अयूब खाँ) भारत के साथ मैत्री पूर्ण सम्बन्ध कायम करने की इच्छा जाहिर की है। श्री शास्त्री ने कहा—भारत ने भी वैसी ही भावना प्रकट की है। भारत ने पारस्परिक मित्रता के आधार पर पाकिस्तान के साथ रहने की भावना दिखायी है।

पाक-भारत सीमा पर हुए सघर्षो को श्री शास्त्री ने दुर्भाग्यपूर्ण बताया और कहा कि ये घटनाएँ न तो भारत के लिए और न पाकिस्तान के लिए ही हितकर है। इसी प्रकार एक देश से शरणार्थियो का दूसरे देश मे जाना भी दोनो के लिए बडा अहितकर है।

चीन के सम्बन्ध मे श्री शास्त्री ने कहा कि उसका अभी तक भारत के प्रति अपना रुख नही बदला है। इसलिए उसके साथ हमारा रुख भी नही बदल सकता है। हम उसके साथ बातचीत के जरिए सीमा विवाद निपटाने को तैयार है लेकिन अपने सम्मान और गौरव को तिलाजलि देकर नही। हम सेना या अणुबम के आगे झुकने वाले नही। हमारे देश को पद दलित करने की, जो भी कोशिश करेगा, हमारी जनता उसका अवश्य कड़ा मुकाबला करेगी। हमारी करोडो की जनसख्या इतनी अधिक शक्ति रखती है कि किसी भी खतरे का मुकाबला कर सकते है।

श्री शास्त्री ने आगामी अक्टूबर मास मे लका की प्रधान मन्त्री श्रीमती भडारनायके के दिल्ली आने के कार्यक्रम पर हर्ष प्रकट किया और कहा कि यो तो भारत का बर्मा, लका, नेपाल, अफगानिस्तान आदि पडोसी राष्ट्रो से बड़ा अच्छा सम्बन्ध है, लेकिन कभी-कभी छिटफुट समस्याएँ उठ खड़ी होती है, जैसे प्रवासी भारतीयो के साथ कड़ा रुख होना, उनका भारत वापिस आ जाना, आदि। श्रीमती भडारनायके के दिल्ली आने पर इस सम्बन्ध मे वार्ता होगी और यह अवश्य ऐसी समस्याएँ दूर

करने में उपयोगी सिद्ध होंगी। इस सिलसिले में विदेश मन्त्री सरदार स्वर्णसिंह भी नेपाल, बर्मा आदि पड़ौसी देशों की यात्रा पर जा रहे है।

उन्होंने विश्व की गुटबन्दी से अलग रहने की नीति दुहराते हुए कहा कि विश्व की भयावह समस्याओं के बीच भारत के लिए यही नीति श्रेयस्कर है। हम विश्व की समस्याओं के मुकाबले के लिए अपनी कार्रवाही सदा स्वतन्त्र रखना चाहते है चाहे यह गुट निरपेक्षता हो या निःशस्त्रीकरण, उपनिवेशवाद उन्मूलन या जाति तथा रंग-भेद की समस्या सम्बन्धित ही क्यों न हो।

प्रधान मन्त्री ने जाति, भाषा, धर्म सम्प्रदाय आदि के कारण भारत की एकता पर आने वाले खतरों की भी चर्चा की और कहा कि उससे उत्पन्न संघर्षो मे ही यदि हम उलझे रहेगे तो हमारी सारी शक्ति पानी मे मिल जाएगी और हम कमजोर बने रह जायेगे।

उन्होंने विरोधी दलो के वर्त्तमान रुख की चर्चा करते हुए कहा कि यदि जनतन्त्री ढंग से रचनात्मक आलोचना की जाय, तो सरकार सदा उसका स्वागत करती है। लेकिन कुछ ऐसे भी प्रश्न है जो दलीय आधार पर हल नही किए जा सकते है। उदाहरणार्थ, खाद्य स्थिति और मूल्य वृद्धि से जनित समस्याये राजनीतिक दलो के आधार पर की गई कार्रवाही से कभी नही दूर की जा सकती है। ये समस्याएं राष्ट्रीय रूप मे है इसलिए उन्हे दूर करने के लिए राष्ट्रीय दृष्टिकोण रखना चाहिए।

हमारा राष्ट्र सबसे बडी परीक्षा से गुजर रहा है। हमारे सामने बडा कठिन समय उपस्थित हुआ था, लेकिन इसमे एक लाभ भी हुआ। सारी दुनियाँ ने देख लिया कि भारत के हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई और अन्य लोग एक राष्ट्र के रूप मे किस प्रकार दृढ सकल्प से एक उद्देश्य के लिए मिलकर काम कर सकते है। रणक्षेत्र मे सभी सम्प्रदाय के वीरो ने मातृभूमि के लिए अपने प्राण न्योछावर किए है और दिखला दिया है कि वे सब पहले भी भारतीय है, और अन्त मे भी भारतीय है।

— लालबहादुर शास्त्री

गांधी-जयन्ती के पुनीत अवसर पर, प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री की विगत एक अक्तूबर १९६४ को देश के किसान भाइयों के नाम आकाशवाणी से एक अपील

उपज बढ़ाकर ही मातृभूमि की समुचित सेवा संभव

मैं भारत के तीस करोड़ काश्तकारों से जो लगभग छः लाख गाँवों में रह कर, पैंतीस करोड़ एकड़ भूमि में कृषि-उत्पादन करते हैं इस सन्देश द्वारा अपील कर रहा हूँ कि वे देश की इस संकटकालीन स्थिति में खेतों की पैदावार अधिक-से-अधिक बढ़ाकर अपनी मातृभूमि की सेवा करें। अपने कुटुम्ब, समाज और देश के हित के लिये, आज इससे बढ़कर कोई दूसरा कर्त्तव्य आपके सामने नहीं हो सकता।

आप सभी जानते हैं कि किसी भी राष्ट्र की समृद्धि वहाँ के कृषि और औद्योगिक उत्पादन पर ही आधारित है। देश का धन या तो जमीन से, या कारखानों में पैदा होता है। और कारखानों की पैदावार भी, बहुत हद तक, खेती की सफलता और उसकी उपज पर ही निर्भर है। राष्ट्र की आय बढ़ाने और देश को समृद्ध बनाने का दायित्व इस प्रकार प्रत्येक कृषि प्रधान देश में किसानों के विशाल कन्धों का ही आश्रय लेता है। हम सबके लिए यह एक परीक्षा की घड़ी है। धरतीमाता की सेवा करनी है और उसके प्रसाद और वरदान से अपनी झोली भरनी है।

इधर गत वर्षों में देश में खेती की पैदावार बढ़ी है। पहली योजना में खेती की पैदावार १७ प्रतिशत और दूसरी में २० प्रतिशत बढ़ी। तीसरी योजना में ३० प्रतिशत पैदावार बढ़ाने का लक्ष्य है। इस बढ़ोत्तरी का श्रेय देश के उन करोड़ों मरीसानों को है, जिन्होंने अपना पसीना बहाकर देश को भूखमरी से बचाया। यह ठीक है कि उपज आशा के अनुसार नहीं बढ़ पायी, फिर भी पैदावार बराबर बढ़ ही रही है परन्तु जनसंख्या के अनुपात में यह कम रही। दैवी प्रकोपों के कारण जैसे देश के कुछ भागों में ज्यादा वर्षा तथा कहीं-कहीं सूखा, और कहीं भागों में सर्दी में अधिक पाला पड़ने से खेती की उपज में अन्तर आया और वह तीसरी योजना के लक्ष्यों से नीचे गिरी। इससे हमें निराश नहीं होना है। खेती एक ऐसा विषय है कि इसमें इस प्रकार के घट-बढ़ को रोका नहीं जा सकता है। अन्त में भाग्य भी श्रम का साथ देता है।

मुझे तो यह विश्वास है कि हमारे देश के किसानों में वह शक्ति है कि तीसरी योजना के समय में जो कमी दिखाई दे रही है, उसे अपनी मेहनत से अगली रब्बी में ही पूरा करके देश में गल्ले की समस्या को हल कर सकते हैं और देश के आर्थिक विकास को एक नयी दिशा प्रदान कर सकते हैं।

किसान भाइयो ! आप काश्तकारी के बारे में मुझसे कहीं अधिक जानते हैं और भली प्रकार समझते हैं। मेरे लिए यही उचित है कि मैं इस सन्देश में, आपका ध्यान केवल कुछ मोटी बातों की ओर मोड़ूँ, जैसे—

(१) खेतो की अच्छी तैयारी, तथा गोबर और कम्पोस्ट खाद का उचित मात्रा में इस्तैमाल कर खेत को ऐसा बना देना कि उससे अधिक-से-अधिक पैदा हो सके। इसमें बाहरी साधनो की बहुत ज्यादा जरूरत नही है और अधिकतर कामयाबी आपके अपने तथा आपके परिवार के परिश्रम पर ही निर्भर है।

(२) अच्छे बीजो तथा खाद की महत्ता को समझकर उनका अधिकाधिक इस्तेमाल करना। उर्वरकों के प्रयोग से निश्चय ही पैदावार तुरन्त बढती है। यह भी देखा गया है कि कुछ किसान भाई बीज बहुत अधिक मात्रा मे इस्तैमाल करते है। अनुसन्धान और रिसर्च द्वारा पता चला है कि कुछ कम बीज का प्रयोग करने से फसल की पैदावार ज्यादा बढती है, क्योकि हर पौधो को पूरी ख़ुराक मिलने का मौका मिलता है।

(३) हमारे देश के अधिकांश भागों मे खेतों की कामयाबी सिचाई पर निर्भर है। अभी तक सिचाई की सुविधाएँ जरूरत के मुताबिक सब जगह नही है। परन्तु जहाँ पर ये सुविधाएँ है भी, वहां उनका उपयोग पूरा-पूरा नही होता; क्योकि अधिकतर जगहो मे गूलो तथा खेतो मे क्यारी, बरहों का निर्माण नही हुआ। यह विषय बहुत जरूरी है तथा मेरा अनुरोध है कि आप भाई अपने-अपने इलाकों मे इस ओर ध्यान देकर शीघ्र ही कुओ, तालाबो और गूलो का निर्माण कर पानी का ठीक-ठीक इस्तैमाल करे। इससे कृषि-उत्पादन मे तुरन्त बढोत्तरी होगी।

(४) बहुत से खेतो से हम दो फसले ले सकते है, परन्तु ले नही पाते। हमे कोशिश करनी चाहिए कि एक फसल का खेत रहे ही नही। अक्सर देखा गया है कि जुताई और खेत की तैयारी न होने के कारण काफी खेत बिना बोये रह जाते है। आज जरूरत है कि हम जमीन के चप्पे-चप्पे टुकड़े-टुकड़े मे समय से बुवाई कर उसका लाभ उठाये।

(५) इस समय जब हम अन्न-संकट से घिरे है, हमारी आवश्यकता है कि हम जल्द उगने वाली तथा अधिक उपज देने वाली फसलें पैदा करे। साग-सब्जियो पर भी ध्यान दे। आप स्वयं देख ले कि एक एकड़ भूमि मे अच्छी खेती द्वारा आप २५-३० मन गेहूँ पैदा कर सकते है, परन्तु उसी एक एकड़ मे आप ३००—४०० मन आलू या २५०—३०० मन गोभी, टमाटर वगैरह उगा सकते है।

(६) हमारे देश मे कीट-नाशक दवाइया तथा अच्छे-अच्छे कृषि-यन्त्रों का सुचारू रूप से इस्तेमाल अभी नही हो सका है। यह हमारी प्रति एकड़ औसत पैदावार की कमी का एक खास कारण है। जैसे ही खेत मे कीड़ा या बीमारी लगे, उसका इन दवाओ द्वारा निराकरण करना चाहिए। आपके ग्राम-सेवक तथा विकास-कार्यकर्त्ताओ द्वारा इस विषय मे अधिक जानकारी प्राप्त हो सकती है।

आप लोगो को यह शायद मालूम है कि खेती की उपज की वस्तुओ की कीमतें निर्धारित की जा रही है। इससे जहाँ आपकी मेहनत की ठीक कीमत आपको मिल सकेगी, बीच मे अनुचित मुनाफा लेने वालो पर भी एक रोक लगायी जा सकेगी। यह हमारी सदा कोशिश रही है कि किसान को अपनी मेहनत का समुचित फल लगातार मिलता रहे। यह सही है कि आगामी रबी फसल में उपज बढ़ाने के वास्ते आपको अच्छे बीज और खाद प्रयोग करने के लिए कुछ रुपया खर्च करना है। इसलिए रबी फसल की उपज की कीमत इस प्रकार नियत की जा रही है कि आपको इन सब पर पूरी निकासी और समुचित फायदा मिल सके।

पचायत राज का सवसे जरूरो काम ज्यादा-से-ज्यादा कृषि उत्पादन कर देश की मालो हालत सुधारनी है। खेती की पैदावार का विषय इतना महत्वपूर्ण है कि यही आजकल सामुदायिक विकास आन्दोलन कम्युनिटी डेवलपमेन्ट की सफलता की मुख्य कसौटी है। अगर लोगो के खाने के लिए अनाज बाहर से मगाना पड़े और अपने उद्योगो के लिए जरूरी कच्चे सामान के वास्ते हमे दूसरे देशो का मुँह ताकना पड़े, तो देश की अर्थ-व्यवस्था को नीव कैसे मजबूत बन सकती है और जनता के रहन-सहन का स्तर कैसे ऊपर उठ सकता है।

कृषि-उत्पादन आन्दोलन को सफलता के लिए, यह बहुत ही जरूरी है कि अलग-अलग विभागो मे, जिनका इससे घना सम्वन्ध है, ताल-मेल हो तथा जरूरी चीजे जैसे उन्नत वीज, मिश्रित खाद, सिचाई का ठीक इन्तजाम, उन्नत हल आदि, कोटनाशक दवाइयाँ तथा कर्ज के रूप मे धन आदि उचित मात्रा मे प्राप्त हो। इन सब पर समय-समय पर विचार कर सरकारी इन्तजाम मे उचित परिवर्तन किए गये है तथा कर्ज और दूसरी जरूरतो को पूरा करने का भी प्रवन्ध किया गया है। यह दावा करना कि सब इन्तजाम विलकुल पक्के है ठीक न होगा। समस्या गम्भीर और जटिल भी है। परन्तु मेरा दृढ विश्वास है कि जितने भी साधन हमारे पास है, यदि उनका पूरी तरह से इस्तेमाल हो तो हम कृषि-उत्पादन को वड़ी मात्रा मे वल और वढावा दे सकते है।

इन साधनो के उचित उपयोग के लिए विकास प्रखडो, पचायतो, सहकारी समितियो, कृषक समाजो, ग्राम-सहायको और अन्य सब काम करने वालो को किसान भाइयो को मदद के लिए पूरे उत्साह और लगन से उनके सामने जाना चाहिए। सरकारी कर्मचारी, खास तौर पर जो जिला और प्रखड-स्तर पर काम करते है, उनके लिए भी देश-सेवा का यह सुनहला मौका है। वे देश को अन्न देने मे मददगार हो सकते है। मुझे विश्वास है कि वे कृषि उत्पादन के लिये, जो चीजे जरूरी है, उन तक समय से पहुँचाने मे दिल-जान तोड़कर कार्य करेगे। उन्हे कठिन परिश्रम से हटना नही है। कृषक समाज उनका अनुग्रहीत होगा।

गाधी जी के नेतृत्व मे कॉग्रेस कार्यकर्त्ताओ ने देश के गांव-गाव मे जाकर आजादी के नारे और माग को, देश के हर व्यक्ति तक पहुँचाया तथा इस आन्दोलन मे सक्रिय भाग लेने के लिए सबको उत्साहित किया। इस सकटकाल मे, जबकि हमारे सामने खाने की कठिन समस्या खड़ी है, यह समय की पुकार है कि देश के चाहे वे किसी भी मत अथवा पार्टी के हो, इस कृषि आन्दोलन का झण्डा उठाएँ और गाव-गाव जाकर किसान भाइयो की कठिनाइयो को दूर कर खेती की पैदावार वढाने मे उनकी मदद करे। इस आन्दोलन को अपने क्षेत्र के कोने-कोने मे फैलाना इस जाग्रति की ज्योति की अलख जगाना आज की सच्ची देश-सेवा है।

वर्षा-ऋतु समाप्त हो रही है तथा क्वार का महीना शरद ऋतु के आगमन का सन्देश दे रहा है। यह महीना हर किसान भाई के लिए बडे काम का है। इसी माह मे आप पौ फटने के पहले ही, अपने हल, बैल लेकर खेतो की जुताई के लिए कठिन परिश्रम करते है, ताकि खेतो की मिट्टी भुरभुरी और बोने लायक बन जाए और खर-पतवारो का पूरी तरह नाश हो जाय। देश के आर्थिक जीवन मे भी हमे एक नया दिन लाना है। अपनी मशक्कत और मेहनत से गल्ला की कमी और गरीबी को परास्त करना है। आने वाली फसल को देश के उज्ज्वल भविष्य का एक नए सुप्रभात का प्रतीक वनाना है।

मैं, किन शब्दों में देश के हर किसान से निवेदन करूँ कि देश को सुखी और समृद्धि-शाली बनाने के लिए आगामी रबी आन्दोलन में तन, मन, धन से योगदान दें। मैं सहकारी समितियों और पंचायतों के चुने हुए मेम्बरों तथा अन्य सभी कार्यकर्त्ताओं से भी अपील करता हूँ कि इस संकट-कालीन स्थिति में वे किसान भाइयों के लिए नए मोर्चे पर, बढकर मदद करें। जहा दिल और दृढ़ता है, वहाँ सफलता में सन्देह कहा।

कल गाधी-जयन्ती का पुनीत अवसर है और कल मै पहली बार समुद्र पार करके विदेश जा रहा हूँ। संयुक्त अरब-गणराज्य के प्रमुख शहर काहिरा में दुनिया के लगभग ५०-६० देशों के प्रेसीडेन्ट, प्रधानमन्त्री तथा विदेश मन्त्री इकट्ठे हो रहे है। हम सब की खोज ही रहेगी कि किस प्रकार दुनियाँ को न्यूक्लियर लडाई के खतरे से बचाया जाय और शान्ति को कायम रखा जाय। विदेश मे भी मेरा ध्यान देश की ओर बना रहेगा। जाते समय मे आप सबकी शुभकामना साथ ले जाना चाहता हूँ।

जय हिन्द !

हस्ताक्षर किए है

दिमागी सतहो पर
काई-सी जमी
मान्यताओं को
खुरच कर तुमने
नन्हे-नन्हे हाथो से
गहराई मे
अपने बडप्पन के हस्ताक्षर किए है।
जगमगाती रातो को दुवारा
दुल्हन-सा सजा देखने के लिए
सीमा पर निस्संकोच टहलते
प्रहरी को बधाई देते हुए
भयभीत इन्सानो के दिलो से
नफरत का विप
सोख लेने के लिए
एक नए भविष्य की तलाश मे
जीवन से समझौता कर
मृत्यु को वर
तुमने अमर जीवन के दस्तावेज पर
हस्ताक्षर किए हे।

—शेरजग गर्ग

दुनिया से भी अणुबम को मिटायेंगे

मुझे प्रसन्नता है कि राजस्थान की राजधानी जयपुर में जाने से पहले मैं यहाँ इस गांव में काशी का बास में आ सका हूँ। मुझे और भी ज्यादा खुशी है कि ऐसे गांव में आने का मौका मिला है, जहां कि सेठ जमनालाल जी का जन्म हुआ था। मैंने वह छोटी सी कोठरी देखी, अंधेरी कोठरी है; खिड़की भी इसमें नहीं और इस छोटे से स्थान में इतने बड़े आदमी ने जन्म लिया। यह देखकर मुझे बहुत ताज्जुब नहीं हुआ, क्योंकि मैं गांधी जी के जन्म स्थान पर भी गया और वह कोठरी देखी जिसमें गांधी जी पैदा हुए थे और देखकर ताज्जुब हुआ, इससे भी जरा छोटी कोठरी है जो कि जमनालाल जी की है इससे थोड़ी सी छोटी है और वह भी वैसे ही अंधेरी। तो असल में भारत के बड़े-बड़े लोग हमारे नेता ज्यादातर साधारण लोग थे। साधारण कुटुम्ब में उन्होंने जन्म लिया और इसलिए भी उनके मन में यह कल्पना हुई कि कैसे हम अपने बड़े कुटुम्ब को बड़े परिवार को, अपने अकेले घर को नहीं बल्कि सारे देश को जो हमारा बड़ा कुटुम्ब है, उसको कैसे बनाएं, इसको कैसे बड़ा करें। वसुधैव कुटुम्बकम् हमारे यहां का नियम है, एक सिद्धान्त है। खाली हमें भारत को ही नहीं बल्कि सारे वसुधा को सारी पृथ्वी को, सारी दुनिया को हम एक कुटुम्ब के रूप में, एक भाई-चारे के रूप में, एक भाई-बहन के नाते देखना चाहते हैं। यह भारत ही ऐसी बड़ी बात कह सकता है। आज राष्ट्र और देश एक-दूसरे से लड़ते हैं, टक्कर खाते हैं, एटम बम बन रहा है। दुनिया को नाश करने वाला बड़ा-बड़ा परमाणुओं का, अणुओं का बम रहा है और क्यों इसलिए कि एक देश दूसरे पर सन्देह करता है, शक करता है, एक देश दूसरे देश पर कब्जा करना चाहता है। चाहता है कि मैंने अपने साम्राज्य अपना राज्य बढ़ायें, तो आज यह दुनिया की हालत है। उस दुनिया में भारत एक ऐसा देश है, एक ऐसा कोना है जहां से पहले भी शान्ति की आवाज उठी और आज भी। हम कमजोर हों से सही गांधी जी का जवाहरलाल जी का, सेठ जमनालाल जी का, आचार्य विनोबा जी की जानदार आवाज बड़ी आवाज थी, लेकिन हमको भी अब हम भी उसी देश के रहने वाले हैं इसलिए मैं भी कुछ अपनी सी आवाज उठाना चाहता हूँ, अकेले अपने बल पर नहीं बल्कि यहां के ४५-४६ करोड़ आदमियों की तरफ से, बहनों की तरफ से, माताओं की तरफ से, भाइयों से भाइयों की ओर से यह आवाज दुनिया में आज भी हम उठाना चाहते हैं कि दुनिया में लड़ाई न हो, दुनिया में झगड़ा न हो और शान्ति से हम जीवन बिता सकें, लड़ाई का नतीजा क्या है? कितने-कितने बच्चे, कितने नौजवान

हमारे कटते है, मिटते है, कितने कुटुम्ब, परिवार तबाह होते है, बरवाद होते है, कितनो माताओं और बहनों के सिन्दूर मिटते है तो ऐसी लड़ाई को लेकर हम और आप क्या करे। इतना ही नही अब तो जो यह बड़ी लड़ाई होगी तो एक बम डाल दिया तो आधा राजस्थान खतम है। और यदि कोई जिन्दा भी रहा तो किसी की आख खराब, किसी को टांग टूट जायगी और वह इस प्रकार वर्षो चलेगा, वो फिर आदमी जिन्दा नही रह सकता है। एक एटम बम जापान मे छूटा था, आज तक भी उसके आदमी मरीज एवं बेकार अस्पताल मे पड़े है, चल नही सकते, फिर नही सकते, आंख फटी हुई है, केन्सर है, इस हालत मे उस समय से लोग आज तक पड़े हुए है जापान मे वो बड़ा साधारण एटमबम था, मामूली। अब तो जो एटमबम है परमाणुओ का, अणुओ का जो बम बना है वह तो बहुत ही भयानक है, बहुत खतरनाक है, और वह दुनिया को मिटाने वाला है। अभी चीन ने एक अणुवम छोडा, छोड़ा क्या प्रयोग किया, इस्तेमाल किया—चीन आज हमारा विरोधी है और चाहता है हमको डराना अब हम घबराकर के कहे कि हम भी अणुबम बनायेंगे। हम भी अणुओं का बम बनायेंगे तो यह गलत बात होगी, वो तो तबाही का रास्ता अख्यितार करना है, इसलिए हमे घबराना नही चाहिए, चीन के डराने से डरना नही चाहिये। तो हम डरे नही, न डरेंगे, हम तो चीन के अणुबम को भी खतम करेंगे और हो सका तो दुनिया से भी अणुबम को मिटायेंगे, इसलिए हम आज भारत की ओर से भारत की तरफ से दुनिया मे शान्ति बनाये रखने में मदद करना चाहते है और कोई महासमर और बड़ी लड़ाई नही आने देना चाहते हैं। क्यो, क्योकि आज भारत हमारा गरीब है आज भारत में काम नही सबको मिलता बेरोजगारी है, आज खेतो की पैदावार हमारी कम है, आज पीने का पानी भी आपके गाव तक में नही मिलता है। आज दो सौ, ढाई सौ—तीन सौ फीट पर यहा सुना नीचे पानी मिलता है। कुआँ भी नही, सड़क भी नही है, पुल भी नही है, बिजली तो बाद की बात है। यह आज देश की हालत है और फिर तब हमारा काम क्या हो जाता है। पहला काम यह कि हम लड़ाई हटाएँ, दूर रखे अपने देश को बनाएँ और देश बनता कैसे है जब तक किसान नही उठेगा, जब तक गरीब नही उठेगा, जब तक आपकी जेब में कुछ थोड़ा पैसा और नही जाएगा, जब तक थोडा धन और शिक्षा हमारे देश में नहीं बढेगी तब तक यह देश गरीब रहेगा, यह देश उठेगा नही, और हमने बहुत किया स्वराज्य के आने के बाद १४-१५ साल काम करने का मौका मिला है, बहुत हमने कल-कारखाने बडे-बडे खोले है, बिजली ले गये है, बडे-बड़े बांध बनाये है, पुल बनाये है। अपने देश मे हवाई जहाज बनते है, मोटर कार बनाते है, रेल का इंजिन बनाते है, सभी बहुत चीजे होने लगी है जो कल्पना से बाहर थी, जिसको हम सोच नही सकते थे कि अपने देश मे जहाँ सूई भी नही बनती थी, पहले अंग्रेजो राज्य के जमाने मे बाहर से मंगाते थे, खेती की पैदावार को बढ़ावे ताकि अपने देश मे खाने-पहिनने को काफी हो। मै यह समझता हूँ कि जमनालाल जी बजाज का यह जन्म स्थान एक ऐसा आदर्श गाव, आदर्श केन्द्र बनना चाहिए जहाँ इसके इलाके के रहने वाले भाइयो की जितनी जरूरी बाते है वह पूरी हो। ऐसा यानी शिक्षा का काम आपने उठाया बहुत अच्छा, लडकियो की पढाई का काम और लडकियों मे यानि ट्रेनिंग शिक्षा मिले जो लड़कियां जाकर औरो को सिखा सके, बता सके, यह जरूरी है क्योकि देश को असली ताकत अगर मा बच्चों को समझती नही है। मै कोई बहुत बड़ी शिक्षा का पढा-पढा कर खाली नौकरी की तरफ दौड़ने का कायल नही हूँ। औरते भी नौकरी तलाश कर रही है, लड़के भी तलाश कर रहे है। काम मिलता नहीं। लड़के बिगड़ते है, बुरा मानते है। मा-बाप भी नाराज होते है। मै उस

तरह की बहुत शिक्षा का कायल नहीं हूं। लेकिन मैं उसके बारे में कुछ ज्यादा इस समय कहना भी नहीं चाहता। मगर इतना मैं जरूर चाहता हूं कि हमारी बहनें और मातायें समझ सकें कि देश में क्या हो रहा है और यह समझ सके कि उनके बच्चों को क्या करना है और बच्चों को किस तरह की दीक्षा देनी है, किस तरह की बात बतानी है। लड़का अपना अच्छा हो, ढंग से बोले, अच्छी तरह से बात करे माता-पिता बुजर्गों से अच्छा व्यवहार बर्ताव करें और देश के काम में जो जिस काम में लगे हैं उस काम को ईमानदारी से, सच्चाई से जिम्मेदारी से करे। यह शिक्षा अगर माता से मिल जाय बचपन में ही तो देश की काया पलट हो सकती है। इसलिए मैं बहुत इसका स्वागत करता हूं। महिलाओं की औरतों की एक-एक संस्था एक स्कूल बने और बड़े कालेज हो और जैसा अभी कहा गया पास में एक और ट्रेनिंग की, शिक्षा की, संस्था महिलाओं की, जिसके लिए ५० हजार रुपया डुगड़ साहब ने दिया वह भी बने और आप इस इलाके में महिलाओं के अन्दर, औरतों में एक जागृति पैदा करे यह बहुत ही अच्छा है, लेकिन और भी बातें आप सोचे कि आप यहां क्या कर सकते हैं। ऐसा बहुत तो नहीं, लेकिन जब डुगड़ साहब मौजूद हैं यहां और इन्होंने कहा, हमारे सुखाड़िया जी ने कि वो जेब में चेक लेकर चलते हैं फिर उनसे कुछ और भी आशा रखनी चाहिए। थोड़ा पैसा उनका खराब भी कराएं तो कोई हर्ज नहीं है। और मेरे मन में तो यह आया कि इस इलाके को राजस्थान को क्यों दे, कोई थोड़ा बहुत इलाहाबाद को भी दे जहां से मैं आता हूं। इलाहाबाद का जिस इलाके, जहाँ से मैं चुना गया हूं। आपके इलाके से वह ज्यादा ही पिछड़ा हुआ है। इस माने में कि यहां तो आप कम से कम ४-५ मील की सड़क पर आ गये, वहां तो आप ४० मील चलते जाइये कच्ची सड़क भी नहीं है, पगडंडियो पर, जंगलों के बीच से जाना पड़ता है। तो अगर ऐसी ही डुगड़ साहब की नजर उसपर भी हो जाय तो कुछ काम अच्छा बन सकता है और इसलिए मैंने कहा कि जब वो जेब में चैक लेकर चलते ही हैं तो और तरफ भी ध्यान रखे तो हर्ज नहीं। (शास्त्रीजी यह कह रहे हैं कि २० हजार रु० भेंट करने की कामना रखते हैं) अच्छा तो यह तो फौरन मिल गया खैर वादा तो उनका पूरा हो गया, लेकिन जल्दी में कह के अभी थोड़ा ही दिया है। कहते हैं २० हजार रुपया मैं पास दूंगा। (श्री डुगड़ की आवाज— भाई जनता कुबेर है उसको क्या देवे मैं गरीब लोगों में इनको बिखेरना चाहता हूं। लेकिन टोकन आफ रिस्पेक्ट है यह) हां मैं काहे अपने लिए नहीं चाहता बस इन गरीब जनता को ही चाहता हूं कि आप मदद को और दें। खैर ये बात तो मैंने हंसी में कह दी। लेकिन मैं चाहता हूं यहां एक किसी रूप में एक स्मारक जमनालाल जी का बनना चाहिए और जो उनका जन्म स्थान है मैं बहुत कोई यह नहीं चाहता कि बहुत पैसे उस पर खर्च हों। लेकिन फिर भी कोई न कोई एक और उसी जगह पर जहां उनका मकान है या उस गांव में कोई एक स्मारक का रूप अच्छा बनाया जाय और इसमें थोड़ा पैसा भी लगे तो कोई चिन्ता की बात नहीं क्योंकि वह एक ज्योति होनी चाहिए। एक रोशनी होनी चाहिए वह स्वरूप स्मारक एक रोशनी का एक ज्योति का स्वरूप हो जिससे हर एक आदमी जो यहां आवे वह दूर से ही देखकर यह समझ ले कि यह जमनालाल जी का स्मारक है, यह स्थान है जहां वो पैदा हुए थे। जमनालाल जी ने बड़ी सेवा की देश की। देश की तो की, मैं छोटे भाव में नहीं कहता लेकिन मारवाड़ियों में और जागृति पैदा करने की जिम्मेदारी किसी की सबसे पहली और सबसे बड़ी है तो वो जमनालाल जी की है। एक मारवाड़ी समाज समझा जाता था जैसे रुपया कमाने की तो यह अच्छी मशीन बना लेते हैं। मगर और बातों की कमी है। ऐसा मैं साफ आपसे कह

रहा हूँ, लेकिन जमनालाल जी ने उसको बदल दिया, धारा को बिल्कुल पलट दिया और कहा कि नहीं, वे कहते थे कि खुल के देश के, काम करने से मेरे व्यापार मे कोई घाटा नही हुआ बल्कि मेरा फायदा हुआ और यह बात ठीक कहते थे क्योकि आदमी अगर थोड़ा त्याग करता है अपनी कमाई भी करे, अपनी आमदनी भी करे, लेकिन थोड़े उसके साथ त्याग हो दूसरे की सेवा करने की इच्छा हो तो उसका निजी काय बढ़ता है और वो लोग भी उसको आदर से देखते है। खैर जमनालाल जी तो गाधी जी के साथ आकर बिलकुल बदल गये थे और बड़े व्यावहारिक आदमी थे, बड़े प्रेक्टीकल थे। वे कोई बहुत ज्यादा ऐसे तर्क मे, लोजिक मे पडने वाले आदमी नही थे, और इतनी मैत्री व दोस्ती रखते थे। सब उनको प्यार करते थे।

जवाहरलाल जी का मुझे पता है कि अपनी घर की बातचीत अगर वो किसी से करते थे अपने खर्च वर्च की बात किसी से करते थे अपनी किताब वगैरह की और रायल्टी के बारे मे किसी से बात करते, अपना हिसाब-किताब भी जो कुछ अपने पास था वह सब उन्होने जमनालाल जी को दे रखा था, और उन्ही पर पूरा इतमीनान और भरोसा करके वे छोड देते थे। जो कोई बात पूछो उनको वे जमनालाल जी जाने। तो इस तरह का उनका अपना व्यवहार था। जमनालाल जी का और सबके दिल को उन्होने जीता था। गाधी जी से लेकर और भी जो उनके सम्पर्क मे आते थे। मै आशा करता हूँ कि एक ऐसे महान पुरुष के जन्म स्थान पर आकर हम सब कुछ सीखेगे और अपने जीवन को उस तरह ढालने की कोशिश करेगे। यहा पर मुझे ग्रामदान के सिलसिले में ६१ गाव की ग्रामदान के रूप मे देने की बात कही गई, बहुत से भाई यहा गाव के इकट्ठा थे उन्होंने फार्म भी दिए अपने अलग-अलग गाव के कि उन्होने पूरा ग्रामदान मे देने को मजूर कर लिया है। मै बहुत धन्यवाद देता हूँ उनको, बड़ा अनुग्रहीत हूँ कि उन्होने यह ग्रामदान का निश्चय किया और ६१ गाव का यह बड़ा काम है, ग्रामदान आ जाय, लेकिन उससे बडा काम यह है कि जो गाव दान मे मिले उस गाव का ठीक सगठन हो, सहयोग से कौपरेटिव ढग पर वहा काम हो—उन गावो मे यदि कोई परिवर्तन न हुआ, कुछ तबदीली नही हुई तब फिर ग्रामदान बेकार हो जाता है। इसलिए मै आशा करता हूँ कि हमारे जितने काम करने वाले भाई है—उन गावो मे उसका एक प्रोग्राम बनायेगे और मै जानता हूँ वो गाव का प्रोग्राम बना हुआ है। विनोबा जी ने कह रखा है और आदेश भी उनके है लेकिन फिर भी उस काम को तेजी से, मजबूती से लगातार लगकर करना यह जरूरी है। ऐसा न हो कि ४ महीने काम किया, तीन महीने बात फिर ढीली पड़ गई। ग्रामदान का काम बहुत ही सुन्दर काम है, लेकिन उसको आगे बढ़ाना वह जरूरी बात होती है। और मै तो आजकल कहता हूँ हर जगह हर एकको गाव की ओर जाने का हमारा ध्यान होना चाहिए, यह मै नहीं कहता कि शहरो की चिन्ता न की जाय। यह भी नही कहता हूँ कि शहरो मे तरक्की के काम न किए जाय। लेकिन गाव की ओर हमारा और आपका ध्यान होना बहुत ही जरूरी है और अगर आज अपने देश मे हम खाने भर को, अनाज नही पैदा करते तो फिर यह देश गरीब रहेगा और हम कारखाने खोल ले, हम बड़ी-बड़ी मशीन चला ले, हम बिजली बना ले, लेकिन जब तक खाने भर को हम अनाज नही पैदा कर सकते, पहिनने के लिए कपड़ा पैदा नही कर सकते। तब तक जब तक खाना और कपड़ा न मिले किसी देश की माली हालत, आर्थिक उसके धन की हालत तो कभी संभलेगी नही तो यह जरूरी हो गया कि हम गाव की ओर ध्यान दे और खेती की पैदावार बढ़ाये आपके यहा तो बड़ी कठिनाई है, रेतीली

जमीन है आपकी और साथ ही साथ पानी है नही। तो मुश्किल होता है कि आप कैसे अपनी खेती की पैदावार को बढाये, लेकिन फिर भी उस समय की कल्पना करनी चाहिए। अभी राधाकृष्णन जी ने कहा कि कोई भागीदार आना चाहिए। तो अब बन्दा तो भागीदार पता नही कौन होगा और थोडा बहुत अगर कोई हो सकता है तो सुखाड़िया जी हो सकते है। मदद चाहेगे थोड़ी बहुत दिल्ली से भी उनको मिल सकती है, लेकिन यह उतना सरल यानी राजस्थान की सरकार उस पर ध्यान दे, लेकिन इतना सहज भी मगर असम्भव भी नही बहुत मुश्किल भी नही। समय की बात है कि जैसे-जैसे थोड़ा देश का विकास होता जाय, तरक्की होती जाय और हमारा धन, हमारी धन की शक्ति, रुपये की शक्ति बढती जाय तब हम भी अपने ये रेतीले जमीनो को भी जहा आज बालू है, रेगिस्तान है इसको बदल सकते है और विज्ञान और साइन्स ऐसा बढा है कि इसको बदला जा सकता है, मगर उससे पहले यह जरूरी है कि पीने को पानी तो कम से कम मिले और खेती का सवाल आवेगा, लेकिन पीने के पानी का प्रबन्ध ठीक-ठीक हो और इसमे अभी राजस्थान सरकार को सुखाड़िया जी बतला रहे थे कि भारत सरकार की ओर से करीब दो करोड़ रुपया मिला है कि पीने के पानी का उससे प्रबन्ध हो, इन्तजाम किया जाय। हमारा फैसला है कि हम अकेले ४-५ साल के अन्दर कोई ऐसा गाव नही बचेगा देश के किसी कोने मे, जहा पीने के पानी का इन्तजाम न हो। चाहे कुएँ, खोदे जाय, चाहे जैसे भी हो अच्छा और शुद्ध पवित्र पानी साफ सुथरा यह मिल सके पीने का ये ४-५ वर्ष के अन्दर। कोई गाव ऐसा नही बचना चाहिए, चाहे पहाडी हो, चाहे रेतीले जमीन पर गाव हो, चाहे कही हो उसका प्रबन्ध होना चाहिए तो उस ओर हम लगेगे, लग रहे है और काम फौरन पूरा चालू होगा। मै आपका ज्यादा समय नही लेना चाहता। आप सबको बधाई देना चाहता हूँ कि एक आप यहाँ पर लड़कियो की शिक्षा का इन्तजाम कर रहे है अपने बहनो को अपनी बच्चियो को एक बढने का मौका देवे और इन माताओ के आशीर्वाद से और जमनालाल जी की इस छाया मे जब यह सस्था काम करेगी तो उससे एक नई जागृति इस इलाके मे पैदा होगी। मै आप सबकी सफलता चाहता हूँ और हृदय से कामना करता हूँ कि यह केन्द्र जमनालाल जी का गाव एक सस्कृति का एक कलचर का एक बड़ा केन्द्र बने, इसको जगाये और यहा जो जागृति हो उससे सारा राजस्थान जागे।

बहुत धन्यवाद !

बजाज ग्राम (राजस्थान) मे १५ नवम्बर ६४ को दिया गया शास्त्रीजी का भाषण ।

हमें गरीबी से लड़ना है

आज का दिन मेरे लिए बड़ा शुभ दिन है और मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि कल जवाहरलालजी का वैसे वो हमारे बीच में नही है, लेकिन कल हमने इसे मानने से इन्कार किया कि पडितजी हमारे बीच मे नही है, हमने उनका जन्म दिन बहुत ही अच्छी तरह से दिल्ली शहर के कोने-कोने मे मनाया और बड़ी सुन्दर सभाए, मीटिगे आदि हुईं । आज मैं यहाँ हूँ जमनालालजी और जवाहरलालजी करीब-करीब एक ही उम्र के थे । यह दोनों दिन कल के और आज के एक पवित्र दिन है, शुभ दिन है और कल बडे शहर मे, नगर मे, दिल्ली मे रहा । आज इस तरह के गाव मे जहाँ रेत है, जहाँ पहाड़ी है, जहा जगल है इस बीच मे आने का मौका मिला । यह इस बात को बताता है कि अभी भारत किस रूप मे है और कैसे उसको बढ़ाना है । एक तरफ दिल्ली की बिजली, दिल्ली के सडक, नई दिल्ली की इमारत, मकान, बंगले, मोटर दूसरी तरफ यह बजाज ग्राम, ये सीकर के आस पास के गाव और काशी का वास, ये भी गांव है जहाँ सड़को की कमी, जहा रोशनी की कमी जहा पानी की कमी और जहा खेत को तरक्की देने का, उन्नति करने का अवसर कम, मौका कम, यह एक खाई है, बीच मे जैसे गड्ढा है, जिसको भरना है । जिसको पूरा करना है । हम जवाहरलालजी का नाम याद करे या जमनालालजी का स्मरण करें, लेकिन उनके साथ वफादारी इसमे है कि हमारे देश के बीच मे जो आज अन्तर है जो फरक है जो ऊपर का और नीचे का अन्तर है जो अमीर और गरीब का अन्तर है, उसमे हम कमी लावे, हम सारे समाज को ऊंचा उठाये । मै यह देखकर बडा प्रसन्न हो रहा हूँ कि इस इलाके को आप जिसकी मैने अभी चर्चा की कि जहाँ कमियाँ है उसे आप बनाने, बढाने की कोशिश कर रहे है और आज सवेरे से मैने एक तो वहां का जो महिलाओ का, औरतो का, बहनो को जो स्कूल खोलने का आज उसकी नीव रखी, काशीकावास मे वह एक अच्छा काम, सुन्दर काम है । अभी मैने यहाँ आपकी गोशाला देखी और अब यहाँ मै तीसरी जगह आया हूँ इस अस्पताल को मैने देखा जो आप बढाते चले जा रहे है, इसमें सबसे बड़ी बात यह है कि सरकारी मदद इस अस्पताल मे बहुत कम है । या शायद नही के बराबर है । यह सब राजा साहब ने, मै उनको बधाई देता हूँ कि उन्होने अपना यह मकान सामने का दिया जिसमे जमीन है, जिसमे बाग है और एक मौका दिया कि यहाँ पर अस्पताल बनाया जाय । सच बात यह है कि आज जिसके पास धन है जिनके पास सम्पत्ति है वे इसी रूप मे देश की सेवा कर सकते है । वे देश का धन बढ़ाये, वह पहला काम है क्योकि जो सारा धन बढ़ता है वह सब घूम फिर कर के जनता के, देश के लोगो के काम आता है, लेकिन ऐसा काम भी अलग-अलग जगहों पर हो चाहे वह अस्पताल के रूप मे हो, चाहे वह कुएं के रूप मे हो, चाहे वह औषधियों और दवाओं के रूप मे हो, चाहे धर्मशाला या तालाब के रूप मे हो । ये सब काम जिनके पास पैसा है वो उसमे से दे, हिस्सा बटाये देश के हाथ में कुछ इन चीजो को देकर देश के लोगों को आराम पहुँचाये । यह आज का नही हमारे देश का, भारत

का पुराना तरीका रहा है। इन अच्छे कामों के लिए हमेशा लोग सरकार पर नहीं निर्भर करते थे, अपने आप खर्च करते थे। आज भी गोशाला हो, धर्मशाला हो और तालाब हो कुँए हो ऐसी चीजों मे अगर आप लोग जो भाई दे सकते हैं खर्च करे तो उसका स्वागत उसके लिए बधाई और आपने इस काम को यहाँ शुरु किया तो इसके लिए बहुत बहुत बधाई। १० लाख, १२ लाख या साढे १२ लाख रुपया आपने खर्च किया है। मैंने देखा अभी एक छोटा सा यानी जहाँ मरीज रखेंगे छोटे-छोटे मकान बनाए, दो कमरे है, उसमें एक बरामदा है, स्नान वगैरह का इन्तजाम उसका अलग कमरा है और यह जानकर मुझे खुशी हुई कि उसमे करीब साढे चार हजार रुपया के लगभग खर्च हुआ है बहुत कम है यह जिस तरह के वो कमरे हैं, जिस तरह का और इन्तजाम किया गया है साढे चार या पाँच हजार रुपये खर्च होना ठीक है? चार हजार एक सौ रुपया खर्च हुआ है यह इससे साबित होता है कि आदमी अगर अपने हाथ से कुछ थोड़ा आँख से कुछ देखता रहे देखभाल करता रहे एक एक पैसा बचाने की कोशिश करे तो कितने सस्ते मे मकान भी बन जाते है और यह अस्पताल भी जो बना है यह भी एक सस्ता अस्पताल है। यह सरकारी इन्तजाम इतना बड़ा है कि मुश्किल हो जाता है कि आदमी सीधे हर एक काम की देख, उसकी जाँच-पड़ताल करता रहे। हम लोग कहते हैं कि पर्सनल, एक व्यक्तिगत दिलचस्पी सरकारी कामो मे नही रहती। एक मशीन चलती है और एक मशीन अपना काम करती रहती है। तो उनकी कठिनाई भी है, मगर फिर भी मै चाहता हूँ कि हमारे चाहे पी० डब्ल्यू० डी० हो, चाहे और दूसरे महकमे हो, मकान बनाने वाले, आज का समय ऐसा है कि हमको १५-२० वर्ष अपना एक-एक पैसा, एक-एक कौड़ी बचाकर चलना है। हम १५-२० वर्ष मे इस देश को काफी बदल देंगे। पैसा आवेगा कुछ थोड़ा ज्यादा भी खर्च हो जाय तो हम बर्दाश्त कर सकेंगे, लेकिन आज तो एक एक कौड़ी, एक एक पैसा बचा-बचाकर अपने लाखो करोड़ो आदमियो की सेवा करना है, जनता की खिदमत करना है, इसलिए आज सरकारी काम मे भी बचत की आवश्यकता है। आपने यह अस्पताल यहां बनाया, अच्छी बात है। मेरा अपना खयाल था कि यह जनरल हास्पिटल है। यानी और तरह का भी इलाज यहां होगा, लेकिन मालूम हुआ कि यह दिक की, तपेदिक की जो बीमारी होती है, क्षय की बीमारी उसके लिए ही यह अस्पताल विशेष रूप से बनाया गया है और करीब एक विचार है कि यहा ६ सौ मरीज रख सकेंगे आपका प्रयास सुन्दर है मै जहाँ तक समझता हूँ यह गाँव मे ही है, क्षय रोग तो गाँव मे भी होते है। लेकिन कम होते हैं और खास तौर से यह टी० बी० की बीमारी, क्षय की बीमारी, शहरो की बीमारी है। शहरों मे छोटे-छोटे घरो मे बन्द जगहों मे लोग रहते है, अच्छा पानी नही, अच्छी हवा नही और उसका नतीजा कुछ थोड़ा-सा वहाँ शहरो की जिन्दगी मे एक बड़ी चिन्ता भी पैदा होती रहती है। टक्कर होती रहती हैं। यह टी० बी० की बीमारी एक तो खाना वगैरह ठीक न मिले दूसरे मन मे बड़ी चिन्ता रहे, बड़ा संघर्ष रहे तो उससे भी यह रोग पैदा होता है। तो शहर ऐसे हैं जहाँ रोग कुछ न कुछ झगड़ा, लड़ाई वैसे गाव के भाई भी तेज हैं लड़ाई झगड़ा करने मे और काफी फौजदारी वगैरह भी करते रहते हैं। और राजस्थान के लोग तो और लम्बे-चौड़े-तगड़े हैं तो यहाँ भी टक्कर होती होगी। मगर उतनी चिन्ता नही रहती कि मन मे आप एक रोग है, एक कष्ट है, एक पीड़ा हर समय रहती है, वो बात जो शहरों मे होती है वह यहाँ नही है। इसलिये यह चाहता हूँ कि हर आदमी यह सोचे कि उसको अस्पताल के नजदीक नही जाना, अपनी तन्दुरुस्ती को बनाये, अपने स्वास्थ्य को ठीक रखे। खाना पीना जो कुछ मिलता है गांव मे

भाई साधारणत: अब दूध और घी की कमो हौ, लेकिन वो भी आपके यहा नही रहने वालो। आप मेहनत करते है, आप अच्छा जैसा कि हमें कहते अच्छी आव हवा में रहते है, तो यहाँ टी० बो० वगैरह का मर्ज नहीं होना चाहिए, नही आना चाहिये। अस्पताल तो जब आदमी जाय तो मजबूर हो तब जाय, इसलिये यह शहर के तो ज्यादा ठीक फिर भी अब अभी आपने जो नम्बर बताया कि करोब २ लाख आदमी राजस्थान मे क्षय से पीड़ित होते है तो जो उस तरफ जो काम हो सके वो हो, लेकिन गाँव के भाइयो से मै निवेदन करूगा कि दवा की तरफ ज्यादा नही दौड़े यह जो पिचकारी और इन्जेक्शन लगता है इससे भी अपने को बचाने को कोशिश करे। आज तो ऐसा हो गया सिर मे दर्द है उन्होने कहा इन्जेक्शन लगाओ। वो क्या कहते है, पिचकारी है क्या उसकी दो सुई लगाओ जल्दी। अब ये छोटे-छोटे एक दिन का बुखार हुआ सुई लगाओ। पुराने जमाने मे कोई, मै अपने बचपन का कहता हूँ तीन दिन तक बुखार रहता था कोई दवा नही दी जाती थी, खाना बन्द, पानी पोओ। तीन दिन के बाद बुखार उतर गया। अगर चार दिन, पाँच दिन बुखार चले तव सोचने लगते थे, माता-पिता कि भाई यह तो कुछ तबियत इसकी ज्यादा खराब हो रहो है। लेकिन अब तो हाल यह है कि स्कूलो मे, कालेज मे पढने वाले लडके एक बार जरा खासी आयी उन्होने कहा साहब कोई गोली दीजिये डाक्टर साहब और वो अक्सर फिर खा खा करके अपनी तन्दुरस्ती खराब करते है। तो उस बात को ध्यान मे रखते हुये मै चाहता हूँ कि गाव की अपनी तन्दुरस्ती को लोग ठीक रखे और गाव मे कोई क्षय का रोग न फैलने पाये और अगर हो तब फिर उसका इलाज यहाँ इस अस्पताल मे हो। मैं यह जानकर कि आप यहाँ इसको बजाज बाड़ी का नाम देना चाहते हो। उससे भी मुझे बडी प्रसन्नता हुई। जमनालालजी हमारे देश के इने-गिने लोगों में थे और उन थोड़े-से पैसे वालो में थे जिन्होने आख बन्द करके स्वराज्य की आजादी की लडाई में वे आगे बढ़े, वे कूद पड़े और कभी जिन्होने अपना कदम पीछे नहीं हटाया। बहुत ही कष्ट तकलीफ उस जमाने मे हुई, मगर फिर भी यह बड़े नेता हमारे आगे बढते ही गये।

गांधी जी, जवाहरलाल जी, सरदार पटेल, मौलाना आजाद, जमनालाल जी बजाज, राज-गोपालाचार्य जी बहुतो ने एक से एक उस समय गाधी जो के दिग्गज, गाधी जी के साथी, गांधी जी के मददगार थे और जितना जमनालाल जी अपने ढग से सबकी मदद करते थे—उन बड़े-बड़े नेताओं की। किस तरह करते थे, अब मै नाम सबका लेना नहीं चाहता, लेकिन मुझे राजेन्द्र बाबू का पता है, जो राष्ट्रपति थे जो अब नही है, हमारे बीच में राजेन्द्र प्रसाद जी। उनको, उनकी सारी चिन्ता जमनालाल जी ने एक १० मिनट के अन्दर दूर करदो थो। आज मै प्राइममिनस्टर हूँ, लेकिन इसके पहले जब स्वराज्य के लडाई मे लड़ता था तो मेरो हालत क्या थी। ये मेरी पत्नी यहाँ बैठी हुई है तकलीफ इनको होती थी, मेरे बच्चों को होतो थी मै जेल में था, मेरा एक बच्चा ६०-६२ दिन टाइफाइड़ मे पड़ा रहा और इनके पास इतना पैसा नही था कि ये दूध पिला सके और मै जेल मे बन्द। मेरे पास भी क्या था, कोई एक पैसा तो मेरे पास था नही तो जो कुछ थोड़ा बहुत जो हमारे महीने मे ६०-६२-६५ रुपये हो जाते थे। उनमें इनको और अपने बच्चो को चलाना। कोई सस्ती का जमाना था, लेकिन तब भी मुश्किल बात थी जैसा मैने कहा डाक्टर कहे कि दूध पिलाओ और इनके पास पैसा नही था। बच्चो को दूध पिलाए तो उस कठिनाई के समय से हम निकले है और हम जानते है मै जानता हूँ कि आज गरीब को, आज एक साधारण आमदनो वालों

की क्या हालत है जो उसको चोट हैं, वह मेरे समझ मे हैं। मै जानता हूँ। तो मै इसलिए कह रहा था कि जमनालाल जी और हमने एक सभी की एक बडी सहायता की है, मदद की है पैसे के लालच मे नही की, पैसे को तिनके के समान समझा। जहाँ देश का काम था उसको उसमे लगाया। हाँ घर का भी काम चले, उनका भी व्यापार और तिजारत बढे ये भी रखा साथ-साथ। मगर एक भावना थी देश के लिए त्याग करने को, देश के लिए देने को, देश के लिए जेल जाने को-तो आप यह जो बजाजवाडी रखेगे यह जमनालाल जी के प्रति नही है कोई सम्मान, आदर, यह तो आप अपना सम्मान और आदर करेगे—अगर इसे आप बजाजवाड़ी के नाम से इस गाव को कहेंगे। आज देश को इस बात को जरुरत है कि हम अपने खेतो को बढाये। सबसे बडा काम आज हमारा है कि कैसे किसान ज्यादा पैदा करता है और अगर आज हम अपनी खेती, हम अपनी पैदावार को गेहूँ, चावल, मक्का, जौ, बाजरा इसको नही ज्यादा बढायेगे तो फिर अमेरिका से हमको करोडो और अरबो रुपया लेना पडेगा और वहाँ से हम अनाज लेते है। यह हमारे और आपके लिए कुछ थोड़ी बहुत एक लज्जा की बात है। इतना बडा फैला हुआ विशाल देश भारत जहाँ जमीन की कमी नही, जहाँ एक तरफ से आप देखे तो पानी की कमी नही, आज इस देश मे अपने लिए खाने भर को भी पैदा नही कर पाते है और अमेरिका से गेहूँ मगा-मंगा कर गावो मे बेचते है। गावो मे आज कहाँ का गेहूँ मिलता है यह अमेरिका से आया हुआ गेहूँ भारत से नही और जैसा मैने कहा कि एक हमारे ऊपर कर्जा लदता जाता है, भारत पर कर्ज बढता जाता है क्योकि हम बाहर से मगाकर आज देश को खिला रहे है, पहले तो शहर मे ही दूकाने थी सस्ते दुकाने अनाज की, आज गावों मे भी हो गई है और बहुत हो गई हैं। तो यह कैसे देश बनेगा, जब तक कि ये किसान इस बात का फैसला नही करेगे कि हम मेहनत करके मसकत करके कुछ अच्छा खाद देकर, कुछ अच्छा बीज देकर हम जितना भी हो सकता है उसमे ज्यादा बढाकर पैदा करेगे। देखना चाहिए, खोजना चाहिए, नकली खाद न मिले तो अपने हरी खाद है उसके द्वारा इन्तजाम करना चाहिए। मै उसके ज्यादा ब्यौरे मे जाना नही चाहता, लेकिन मै यह निवेदन करना चाहता हूँ कि आपके यहाँ कठिनाई है, मगर मै सारे देश के किसानो के लिए कह रहा हूँ। ठीक अगले तीन वष, चार वर्ष मे यह स्थिति पैदा होनी चाहिए कि जिसमे हम एक दूसरो के सामने हर वक्त हाथ फैलाते रहे, यह न हो। उसके साथ ही साथ हमे एक कपडा और मकान और एक दवा-दारू का इन्तजाम और बच्चो की शिक्षा ये एक ४-५ चीज हैं जो हमे गाव-गाव के अन्दर करना है। हम बड़े अस्पताल, हम छोटे अस्पताल भी चाहते है डिस्पेन्सरी भी चाहते है। कोई डाक्टर वहाँ हो वो काफी है, वैद्य हो तो वैद्य के द्वारा मदद ली जाय। होमियोपेथी वाले होमियोपेथ का, हकीम हो हकीम की मदद ले यानी जैसा मैंने कहा मशा यह कि चट-पट कैसे कुछ सहायता पहुँचाई जा सकती है। अगर खाली इस इन्तजार मे कि बडा अस्पताल बनेगा, बडे डाक्टर आयगे, तो यह काम नही चलने वाला। जहाँ जिससे मदद मिल जाय चटपट कुछ मदद दिलाई जाय, फिर बड़ी-बड़ी सहायता अस्पताल वगैरह तो आखिर मे मर्ज कोई बढ जाता है तो बडी जगह लाना ही पडता है। तो आज इस तरह के ये ४-५ चीजो का इन्तजाम खाने का, पहनने का, रहने का, दवा दारू का, शिक्षा का इतनी बाते अगर कर सके हम आज तो आप देखेंगे कि हालत देश की, समाज की बदलेगी। आज हम एक नया समाज बनाना चाहते है, एक नया भारत बनाना चाहते है, हसता खेलता हुआ देश देखना चाहते है, हम दुनिया मे लड़ाई नही चाहते, हम एटम

बम को नही चाहते इसलिए अणुबम या किसो तरह को लडाई, समर-महासमर यह हम नहो चाहते। हम चाहते है कि देश मे शान्ति के साथ देश का विकास करे। देश को बढाये, गरीबी को मिटाये, बेरोजगारी को दूर करे। लोगों को काम मिले और हमारे बच्चे नोजवान थोडा सुख सुविधा से रह सके। इस तरह के समाज की हमारी कल्पना है। मै आशा करता हू कि आप सब भाइयो की मदद और सहायता -हमे मिलेगी, भारत सरकार को मिलेगी। प्रदेश की सरकारों को मिलेगी और आपका और सरकारी काम करने वालो का एक अच्छा सम्बन्ध बनेगा। मे सरकारी अफसरो से कहना चाहता हूँ कि एक दो जगहो और भो पहले कहा है कि आज सरकारी काम करने वालो का बहुत बड़ा इम्तहान है और वो किस तरह से एक गरीब आदमी की सेवा करते है। अगर मेरे जैसा आदमो इस अस्पताल मे कोट पहनकर आये या सफेद कुर्ता पहन कर आये और डाक्टर साहब उनको खातिर से बैठावे, उनको देखभाल उनको ठीक से इलाज करे, उनको अच्छी तरह दवा दे, और एक फटा पुराना कपडा पहने हुए किसान इस अस्पताल मे आये और बैठा रहे तीन घन्टे के बाद डाक्टर तो उसे देखने को उनको मिले तो फिर यह अस्पताल की बड़ी बिल्डिग उस आदमो के लिए, जनता के लिए बहुत महत्व नही रखतो, उसको बहुत वह कदर नही करेगा। मे तो कहता हूँ कि समय ऐसा आया है कि आज आप हमारे जैसे आदमी कपड़े पहने हुए को कहिए कि साहब आप आधा घण्टा बैठ जाइये। पहले मै इस गरोब को जो गॉव के किसान है उनको देखलू। यह मनोवृति मे एक बदलने की एक एटीच्यूड आफ माइन्ड उसमे परिवतन होने की जरूरत है और इस भावना से प्रेरित होकर आज हमार सरकारो अफसर चाहे अस्पताल में हो, चाहे खेत में हो, चाहे स्कूल मे हों, चाहे कही हो जब इस भावना से वो सेवा करेगे तो आपका प्यार आपकी मुहब्बत उनको मिलेगी और उनकी मदद, उनकी सहायता, उनका सहयोग आपको मिलेगा। यह समन्वय, यह सगम हो जैसे गगा, जमुना और सरस्वतो का संगम प्रयाग मे है ऐसे ही आज गवर्नमेन्ट का मिनिस्टर का, प्राइममिनिस्टर का और सरकारो अफसरों का और जनता का, ये तोनो का अगर सगम हो तब आप देखेगे कि यह देश कैसे बढता है, किस तेजी से हम आगे जाते है। हम देश को हँसता-खेलता देखेंगे, धनवान पायेगे और सुखी पायेंगे, मे आशा करता हूँ कि राजस्थान जो आज लगता है कि एक रेगिस्तान, हम आप कुछ वर्षो के बाद इसको बदलता हुआ पायेगे। इसी शुभ कामना के साथ मे आज इस सस्था मे जो बुलाया गया इसके लिए धन्यवाद दना चाहता हूँ जो दूगड़ साहब ने और जो मुबलिकाजी ने कुछ इलाहाबाद पर मेहरबानो की उसके लिए धन्यवाद देना चाहता हूं। ८० हजार वहाँ मिला था काशी का वास मे, फिर यहाँ आया तो ३० हजार और मिल गया। तो मालूम होता है कि अगर कही और तीसरी जगह जाऊगा तो कुछ और मिलेगा। इसलिए मैने कहा कि मे उन दोनो भाइयो को बहुत हृदय मे धन्यवाद देता हूं बहुत ही, पिछड़े इलाके मे जो उनका पैसा है वो गरीबो मे लोगो को शिक्षा मे एक एक पाई खर्च होगी। अभी एक चीज को मैने चर्चा नही की। मने जो यहाँ गोशाला वैसे कह तो दिया था कि देखा था मुझे अन्दाजा नही था और यह मेरी कमो थी, गलतो थी, मै नही जानता कि राजस्थान मे इतनो सुन्दर गाये है और इतने खूबसूरत तगड़े बैल और सॉड़ है। मै पजाब का तो जानता था कि पजाब के बारे मे अभी मैंने पूछा भी कि यह कौन सी ब्रोड है तो कहा गया हरियाना है। अब सबको कोशिश करनी चाहिये कि यह ब्रोड जानवरो की यह इसको बढ़ाये, तरक्को दे। मै अभो गुजरात गया था। देखकर हैरान रह

सीकर (राजस्थान) की सार्वजनिक सभा में १५ नवम्बर, ६४ को दिया गया भाषण।

एक नया समाजवादी समाज बनाना है

मैं आपसे निवेदन करूँगा कि थोड़ी देर के लिए आप जरा शान्ति खामोश रहे। मुझे भी एक और अस्पताल, आँख के अस्पताल को खोलना है और उसके बाद झुंझुनु जाना और वहाँ से दिल्ली के लिए रवाना होना है। दिल्ली मे ही पहुँचते ही वहाँ भी दूसरे काम है। इसलिए बहुत समय, बहुत वक्त तक यहाँ नही रुक सकूँगा। फिर भी एक दो बातें आपके सामने जो मै रखना चाहता हूँ, रखूँगा। मुझे आज बड़ी खुशी है कि मै सीकर जिले मे आ सका हूँ जहाँ जमनालाल जी बजाज रहते थे, जहाँ पैदा हुए उस गाँव मे भी मै गया और हमे आज इस बात की खुशी हुई कि इस इलाके मे कभी भी पहले आने का मौका नहीं मिला था, आज उस गाँव से मैने शुरू किया, जहाँ आपके जिले का सबसे बड़ा आदमी पैदा हुआ और उसने सारे देश मे एक बडी ऊँची जगह पाई। सेठजी ने गांधी जी को लीडरशिप मे उनके नेतृत्व मे जवाहरलाल जी, सरदार पटेल, मौलाना आजाद ये सभी गाधीजी के झण्डे के नीचे आये और उन्होने देश की आजादी की लड़ाई लड़ी। हम उस लड़ाई मे जीते और आज काम हमारे और आपके हाथ मे है। एक बड़ा काम एक बड़ी मन्जिल हमने पार की, हमने पूरा किया लेकिन अब भी हमारे सामने बड़े-बड़े सवाल है और उन सवालो को हल करना उन प्रश्नों को जो उसकी कठिनाइयाँ है, दिक्कतें है, उनको दूर करना, इस समय हमारी बड़ी जिम्मेदारी है। स्वराज्य तो आया लेकिन स्वराज्य के आने के बाद किसान कैसा है, उसकी हालत कैसी है, उसकी धन को आमदनी की शक्ति क्या ? उसके खेत की पैदावार कैसी है और आज मेहनत करने वाले दूसरे भाई या थोड़ी तनख्वाह पाने वाले १००-२०० रुपये पाने वाले भाई या और जो दूसरे छोटे-मोटे दूकानदार है उनकी क्या हालत है। यह आज सबसे बड़ा सवाल हमारे सामने है। हमने पिछले एक, दस-१२ वर्ष मे आजादी के आने के बाद कुछ काम किया। बड़े-बड़े काम भी किए, छोटे काम भी किए, लेकिन देश अभी इतना पीछे है कि हम जितना करते है, वह बहुत कम मालूम होता है। मै अभी पूछ रहा था सुखाड़िया जी से कि यह बिजली यहाँ कहाँ से आई तो उन्होने कहा भाखड़ा बांध जो पजाब मे है बहुत बड़ा बाध, भाखड़ा का बना है जहाँ से यह बिजली आई है। अब आप देखिए भाखड़ा का नाम आप सुनते होंगे। वही उस पर करोड़ो क्या एक लगभग अरब के रुपये खर्च हुआ, उस बाध के ऊपर, लेकिन यहाँ वालों को क्या पता था कि कभी वहाँ से यहाँ बिजली आयेगी। यह जो बड़े-बड़े बाँध, बड़े-बड़े बिजली के कारखाने और दूसरे साधन जो बड़ो बनती है चाहे स्टील बने, पक्का लोहा, फौलाद जो एक जगह जहाँ बनता है, वहाँ तो फायदा होता है, लेकिन वही सामान सारे देश मे फैलता है और अगर आज स्टील न हो, पक्का लोहा न हो, फौलाद न हो तो न आपका हल बनता है न आपकी कुदाली बन सकती है न आपकी नहरें बन सकती है। सभी मे कुछ ईंट, कुछ सीमेन्ट, कुछ लोहा, कुछ पक्का लोहा यह चाहिए। खैर बड़ी-बड़ी चीजो मे मोटर बनाना है, हवाई जहाज बनाना है, दूसरे फौजी सामान हथियार बनाने है। सब मे स्टील चाहिए। तो इसलिए हमने बड़े-बड़े काम किये। भारी-भारी

कारखाने हमने बनाए है और उससे देश को लाभ होगा जैसे आज भाखड़ा (पंजाब) यहाँ आपको राजस्थान मे पानी और बिजली देता है। आज वहाँ की बिजली दिल्ली मे पहुँचती है। तो इस तरीके से बड़े-बड़े काम सारे देश मे, या बहुत बड़े क्षेत्र मे, दायरे मे मदद पहुँचाते है। लेकिन उसके साथ-साथ हमे यह भी सोचना है कि हम किस तरह से अपने साधारण आदमियो को जो आदमी, जो भाई कि आज कम आमदनी जिनकी है, हम उनको भी कैसे साथ-साथ कुछ सुविधा और सहुलियत पहुँचाते रहते है। आज जरूरत इस बात की है कि जहा हम बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनाए जहाँ हम बडा-बड़ा प्लेन बनाए, भारी-भारी कल और कारखाने कायम करे वहाँ हमको यह भी देखना है कि क्या हम ५ वर्ष के बाद इस हालत मे होगे कि हम कह सके कि साधारण आदमी (कामन मेन) जो थोडे पैसे से मेहनत करके अपने जीवन को बसर करता है, उसको हम खाने को अन्न, पहनने को कपड़ा रहने को मकान यह हम दे सके। क्या हम यह कह सकते है कि हम काम देगे छोटा या बडा हर आदमी को। क्या हम कह सकते है कि हमारे बच्चो की शिक्षा का दवादारू का हर एक बच्चे का इन्तजाम होगा। और जो चीजे हम दे खाने की, कपडे की वो कम से कम दाम मे हो कि जिस दाम को वो बर्दास्त कर सके। यह एक बडा सवाल मेरे सामने है। मै प्लेन योजना भारी-भारी, स्कीम को पसन्द करता हूँ, लेकिन उसका चाहता हूँ एक सामंजस्य, एक जैसे लाइन यह है कि आज सीधी लाइन, इसी लाइन पर बडा कारखाना भी बने साथ ही साथ हम खाने को भी दे सके। हम पहनने को कपडा भी दे सके। हमे जरूरत है जिन्दगी की जो सामान चीज है उसको एक ठीक दाम पर लोगो को दे सके और अगर हमारा प्लेन और हमारी योजना इस बात का इन्तजाम नही कर सकती तो फिर मुझे प्लेन मे, योजना मे कोई बड़ी दिलचस्पी, कोई बडा प्रेम नही रहता। मैने इसीलिए जैसे ही जिम्मेदारी ये उठाई, प्रधान मन्त्री पद लिया उसी समय मैने अपने योजना कमीशन से, (प्लानिग कमीशन से) जो हमारे देश का चित्र, नक्शा बनाते है, उनसे मैने कहा कि अब प्लेन को अगला जो प्लेन अगली जो योजना हो उसमे आप मुझे बैठाइए गरीब आदमी की जगह दीजिए। कमजोर को दीजिए जो दबा हुआ है उसको स्थान दीजिए और जब वे उठेगे तो सारा देश उसके साथ उठता है और मुझे इस बात की खुशी है कि प्लेनिग कमीशन हमारी जो योजना बनाने वाले कमीशन है काफी बडे लायक लोग हैं उसमे। वह इस बात पर ध्यान दे रहे है कि किसी तरह से वे विचारधारा को जो मैने उनके सामने रखी उस पर वो उसको मिलाए, उसको और प्लेन और योजना के साथ बैठाएँ। आप जानते है कि आज सबसे बड़ा सवाल हमारे देश मे अनाज का बन गया है और भी कठिनाइयाँ है, दाम भी बढे हुए है, कीमते ज्यादा है और चीजो की। लेकिन उसके साथ जो अनाज की खाने की कमी पड गई है वह एक बड़ा टेडा सवाल बना हुआ है और हम आज लाखों और करोड़ो रुपया खर्च करके बाहर से गेहूँ मगाते है। उस वक्त भी आज जो, गेहूँ और चावल आता है उसको हम बहुत सस्ते दामो पर यहाँ बेचते है। एक का दो हम देते है। लेकिन उसे घटाकर आपको एक ही में बेचते है। आज ३५—४० करोड रुपया महीना इस पर खर्च हो रहा है कि जो हम अमरीका से गेहूँ मंगाते है उसको सस्ता करके ये छोटी-छोटी दूकानो पर फेयर प्राइस शौप्स पर बेचे। अब एक तरफ तो हम वहाँ से खरीदते है। बाहर सोने के रुप मे हमे दाम देना पडता है। ये चाँदी का रुपया नही चलता है और फिर उसे यहाँ लाकर और ठीक ही है उचित ही है कि हम सस्ते दाम पर बेचे, क्योंकि बेचते है। आज भारत सरकार क्यो ३०-४०-५० करोड़ रुपया महीना खर्च करती है?

बाकी सस्ते दाम पर आज जो लोग कठिनाई में है उनको सस्ते दाम पर चावल और गेहूँ मिल। यह इंतजाम तो सारा कर रहे हैं, लेकिन यह इन्तजाम कब तक बाहर से मंगाकर अपने देशवासियों को हम खिलायेंगे। कब तक हम अनाज पर उस तरह से अरबों और करोड़ों रुपया खर्च करके अपने देश के कर्जे को बढायेंगे। कर्जे का बोझा लदता चला जायगा। भारी-भारी टैक्स हम लादते चले जायेंगे। उस टैक्स के बोझ से लोग दबते जायेंगे और रुपया लगाओ और उसी हिसाब से पैदा न करो तब फिर दाम और बढ़ता है। फिर यह कागज का नोट और निकलने लगता है। यह आपको सोचना है, क्योंकि रुपया लगे और उसी के हिसाब से पैदा हो। आज हम खती में सबसे ज्यादा रुपया खर्च करना चाहते है। हम चाहते है कि किसान को अच्छा बीज मिले, अच्छी खाद मिले, पानी मिले, चाहे नहर आए चाहे ट्यूब बैल लगे, चाहे साधारण कुएँ बने, लेकिन पानी मिले और अगर किसान को कुछ कर्जे की जरूरत है तो कर्जा मिले। ये जो आज हम बात करना चाहते है, इसीलिए कि ताकि किसान अपनी खेती की पैदावार को बढा सके, लेकिन रुपया लगे और लगने के बाद फिर चावल कम पैदा हो, गेहूँ कम पैदा हो, तब वह जितना रुपया लगा है, वह बेकार जाता है। सामान कम पैदा होगा दाम बढेगा और जब दाम बढता तब तनख्वाह बढती है, तनख्वाह बढती है तो खर्चा बढता है। हर कारखाने का दाम बढ जाएगा, हर चीज का आज यहाँ पर कारखाने लगाना चाहे, सीमेन्ट का दाम बढ जायगा, टीन का दाम बढ़ जायगा, मशीन का दाम बढ जायगा तो होता क्या है दाम बढता चला जाता है, फिर सरकार एक कागज के नोट निकालती है, वह दाम को बढाता है। नतीजा यह है कि आज आप देखें कि अगर हम अपनी पैदावार को खेती की और कारखाने की चीजों को हम ज्यादा नही बनाते तो फिर यह और वह दामों का बढाना नहीं रुकेगा। इसलिए इस बात की आज बडी जरूरत है कि हम जहाँ काम करते है जो जहाँ काम करता है, एक इरादा मन मे निश्चिय पक्का करले कि हम अब जो बीघा खेत है, अगर हम छ: मन पैदा करते है चार मन करते हैं यह इरादा करलें कि हम पाँच मन करेंगे, छ मन करेंगे। क्यों नहीं हम पैदा कर सकते। अगर हिन्दुस्तान मे इधर का इलाका आपका जरा मुश्किल है, मगर फिर भी आपकी जमीन अच्छी है, रेतीली इलाका है, लेकिन रेगिस्तान एक तरह से यहाँ शुरू होता है। इसलिए सीकर की जमीन अच्छी है, पैदाबार की, उसमें गुंजायश है। मेहनत और थोड़ा और उसमें खर्च करने की जरूरत है, लेकिन अगर इङ्गलिस्तान का किसान आप समझते कि टोपा और जो पेन्ट पहनते है वे मेहनत नहीं करते तो आप जाकर लन्दन में देखिए वहाँ के खेतों को इङ्गलिस्तान के टोप और पेन्ट लगाए किसान दिन रात मेहनत करता है। खेत को जोतता है और आज कम से कम सींचे हुए खेत में २४ मन से कम पैदा नहीं होता है। यह कम से कम है कि २४ मन तक एक एकड़ में पैदा करता है। बल्कि एक एकड़ से कम में पैदा करता है। सूखे हुए जहाँ सिचाई नही है ११-१२ मन पैदा करता है। अगर इङ्गलिस्तान का किसान पैदा कर सकता है तो हमारी जमीन तो अच्छी है। हमारी जमीन ज्यादा उबरी है, ज्यादा इसमे पैदा हो सकता है। यह भारत की जमीन है, यह गङ्गा और जमुना की नदियो से यह भिगोई हुई जमीन है।। यह जमीन में आज हम अपने जरूरत भर के लिए पैदा नहीं कर सकते तो फिर इङ्गलिस्तान के सामने हमे अपना सर झुकाना पड़ेगा।

अमरीका के सामने हमे जाकर कहना पडेगा कि कि हमे गेहूँ दीजिए, हमे चावल दीजिए। और करोड़ों रुपया उनको देकर फिर यह सामान हमे लेना पड़ता है। इसलिए मैं ज्यादा तो नही कह सकता, नही तो इसका और ब्यौरे से आपको समझाने की कोशिश करता। लेकिन

इतना ही कहूँगा कि इस समय अगर हम आप चाहते है कि मंहगाई थोडी कम हो, अगर हम चाहते हैं कि जो इस वक्त सामान की कमी हैं, चीज नही मिलती तो सबसे पहले यह निश्चय करना पडेगा कि हम अपने सामान, अपने चीज को ज्यादा पैदा करे। किसान खेत मे करे, कारखाने मे काम करने वाला कारखाने मे करे, दफ्तर मे काम करने वाला जो बाबू है या और अफसर है उनको यह देखना पडेगा कि वे अपने काम को ईमानदारी से, मेहनत से करे कि कागज आपका जल्दी से जल्दी निकालता रहे। यह नही कि आप दरख्वास्त दे, तो दरख्वास्त पड़ी हुई है। ४ महीने के बाद देखी जाय, ६ महीने के बाद आपको टूटा-फूटा जवाब देवे। यह बात नही। वहाँ से चटपट एक-एक दरख्वास्त, एक-एक कागज, एक-एक महीने से ज्यादा तो कोई कागज रुकना ही नहीं चाहिए। ३ दिन, ४ दिन, ५ दिन, ७ दिन ठीक बात है। उसी को लेना चाहिए। लेकिन कोई कागज दफ्तर मे जाकर एक महीने से ज्यादा रुकता है, इसके माने यह है कि आपके साथ अन्याय होता है, नामुनासिब बात होती है। इसलिए चाहे मिनिस्टर और चाहे अफसर और चाहे एक किसान या चाहे मजदूर या चाहे व्यापारी और रोजगारी या हरएक अपनी ड्यूटी को ठीक से पूरा अदा न करे तो देश कैसे बनेगा। आज चीजो का दाम ठीक है कभी यह बढ जाता है। लेकिन कभी-कभी व्यापारी भाई जो भी आज दिल्ली मे जाकर देखिए, तरकारी लेने जाइए, सब्जी शाक उसका भी दाम बढा हुआ है। बहुत ज्यादा जो चीज चाहते है तो लोग दाम बढा देते है। फायदा, मुनाफा करने को मैं नही मना करता। मुनाफा और फायदा करने का रोजगारी का अधिकार है उसका हक है क्योंकि कोई जब कमायेगा तभी तो जाकर वह अपने काम को करेगा। तो व्यापारी ज्यादा भी फायदा कर ले, मगर एक समय देखना पडता है, मौका देखना पडता है। आज अगर अनाज मे जब कि अनाज की कमी पड़ रही है आप थोड़ा अनाज, दबाले अनाज को बाजार मे न ले जाये, एक जगह से दूसरी जगह भेज दे जहा ज्यादा पैसा मिले, यह बात नामुनासिब है। यह उचित नही और इसी-लिए मैंने यह कहा हे कि दाम सामान का मुकर्रर किया जाय। गेहूँ, चावल किसान से अगर खरीदना भी है तो नियत दाम से ही। आज अभी तक देश मे गेहूँ और चावल की खरीददारी का दाम नही तय हुआ था। यानी किसान कितने मे बेचे, कम से कम उसको कितने मिले, हमने पहले पहला बार भारत सरकार ने यह फैसला किया कि हम अनाज का गेहूँ, चावल का दाम मुकर्रर कर दगे खरीदने का। चाहे सरकार खरीदे, चाहे व्यापारी खरीदे। लेकिन कम से कम जो दाम नियत है उनसे ऊँचे नही खरीद सकता। तो एक बड़ा काम, एक क्रान्तिकारी कदम हमने उठाया है और मै समझता हूँ कि किसान उसमे उसी दाम पर जो सरकार ने तय किया है सरकार को बेचे, उसका स्वागत है। हम उसी दाम पर एक-एक पाई देंगे। व्यापारियो को आप देना चाहे, आप उन्हे बेचे, मगर एक बात है पक्की कि जो दाम तय है उसी पर काम होना चाहिए। हमने यह भी फैसला किया है कि जो थोक माल का भाव है खरीदते है या बेचते है जो फुटकर दूकान पर अनाज बिकता है गेहूँ और चावल उसका भी दाम तय रहेगा। यानी उस दाम से ज्यादा पर न बेचा जाय और उतना ही नही मेरी ख्वाहिस यह भी है कि कपड़ा, चीनी जो आजकल बहुत चला हुआ है वेजीटेबिल आइल, वनस्पति, नमक, तेल ऐसी चीजो का भी दाज ५-६ चीजों का दाम और तय किया जाय। ज्यादा चीजे मैं नही लेना चाहता। मै चाहता हूँ कि खाना, कपड़ा और ये चार-पाँच चीजे इसका दाम तय रहे। ठीक उसमे फायदा भी हो, व्यापारी का। ऐसे दाम नही तय करें कि व्यापारी नुकसान उठाये। लेकिन जो दाम तय है उस दाम पर ही

विके और अगर नहीं बिकता तो हमने एक सख्त कानून भी बनाया है, आर्डिनेंस बनाया है। उस आर्डीनेन्स के अन्दर बड़ा लम्बा चौड़ा मुकदमा नही चलेगा। समरी ट्राइल होगा, शिकायत आई—जज या मजिस्ट्रेट ने देखा और चटपट एक दिन के अन्दर फैसला किया। यह एक ६ महीने तक मुकदमा चल रहा है। फिर अगले ६ महीने अपील चल रही है। ये सब अपील वगैरह की गुंजायश नहीं होगी क्योंकि हम चाहते हैं कि आज गरीब, आज कमजोर, आज कामन मैन, आज उसकी रक्षा करना उसको एक कम से कम ठीक उचित दाम पर सामान मिले, उसका प्रवन्ध करना हैं। में आशा करता हूँ कि यह जो कदम हम उठा रहे है उसमें आप सबको मदद मिलेगी और मे सरकारी अफसरों से, खासतौर पर कहना चाहता हूँ कि यह उनका काम है कि वे देखें, यह जिला मजिस्ट्रेट का काम है, ये उनके डिप्टी कलेक्टर का काम है। कोई जरूरत नही हर दूकान पर जाने की। वे सिर्फ ये दिखलाये कि उनकी नजर से उनको आख है जो दो जगह घूम आये लोगो को मालूम हुआ कि कलक्टर साहब, डिप्टी साहब चक्कर लगा रहे है। काफी है और अगर कोई गलती करे उस आदमी को कड़ी सजा मिले फिर सब पर उसका एक असर रहता है। इस तरह से प्रवन्ध और इन्तजाम अगर हमारे सरकारी अफसर करेंगे तभी हमारी स्कीम चलेगी कामयाब होगी क्योंकि सरकारी अफसर हमारे हाथ पैर है। उनके ही द्वारा सरकार का काम चलता है और अगर अपने काम को वें वफादारी से करे और लोगो के हित मे तो वे अपना ही भला करेंगे और सारे देश का करेंगे। मे यह जानता हूँ कि जब तक देश की हालत को अपने अन्दर की हम मजवूत नही करते, हमारी सरहद भी, हमारे जहा आज फ्रन्टीयर है जहाँ आज चीन खड़ा है उसका भी मुकाबला हम तभी करेंगे जब हम देश के अन्दर मजबूत रहेंगे। एक चीन ने एक ऐटमबम, एक अणु-बम छोड़ा है और वह एक बड़ा खतरनाक चीज है, वो दुनियां को तबाह करने वाली चीज है, बन्दूक, रायफल, गन यह सब चलता है। आपने भी मारा हमने भी मारा। छोटे सादे बम भी वे भी ऐसे है कि आपने मारा १०-२०-२००-५०० हजार को मार दिया। आप भी बम चलाएं, हम भी चलाएं, लेकिन यह तो एटमबम ऐसी चीज है जिसमे मनुष्यता आदमियत, सभ्यता यह सब खत्म हो जाती है। इसलिए ऐसी चीज का मुकाबला एटमबम का हम अपने ढंग से करेंगे। मैने कहा है कि हम दुनियाँ को जगाना चाहते है आज दुनियाँ के ५ देशो मे एटमबम है। खाली ५ मे और बाकी सैंकड़ो मुल्क आज वगैर एटमबम के है तो आज जितने देश और है हम सब मिलकर आज इस बात की आवाज उठाएं कि यह चीन का एटमबम नही चलेगा, इसका डुबो दिया जायगा। इसको समुद्र में डाल दिया जायगा। तो मे नही समझता हूँ कि आज चीन इस बात की हिम्मत करेगा कि एटमबम बनाए या और ज्यादा बनाए। हमारी तो राय यह है कि दुनिया से एटमबम मिटा दिया जाना चाहिए, हटा देना चाहिए, चाहे वह अमरीका के पास हो, चाहे रूस के पास हो, चाहे इङ्गलिस्तान के पास हो, चाहे फ्रांस के पास हो। हम अपने देश मे आज लड़ाई क्या लड़ेंगे एटमबम की। आज तो एटमबम हमारे लिए गरीबी है, एटमबम बेरोजगारी है। कहते है ये एटमबम इसलिए है कि देश को नाश कर सकता है। कब तक लोग परेशानी और बेचैनी में बैठे रहेंगे। इसलिए हम एटमबम के झगड़े में नही पड़ना चाहते, यह में आपको बतला दूं कि सरकार सावधान है। भारत सरकार देख रही है कि क्या चीन का एटमबम है उसका क्या नतीजा क्या असर है। हम अपनी फौज की ताकत को बढ़ाते जा रहे हैं। हम आज दुगने से ज्यादा जहाँ तीन सौ करोड़ रुपये से ज्यादा खर्च करते थे आज सात सौ करोड रुपये से ज्यादा खर्च कर रहे हैं। तो फौजी शक्ति और फौजी ताकत को बढ़ाते जा रहे है, बढ़ाते जायेंगे और

असली लड़ाई तो मैदान में होती है। एटमबम रहे लेकिन असली लड़ाई मैदान और अब तो पहाड़ों की है। तो हम उसमें अपनी हिफाजत और रक्षा का इन्तजाम कर रहे है। आपको उसकी चिंता और फिक्र नहीं होनी चाहिए। लेकिन यह जरूरी है कि यह एटमबम का जो झगड़ा है वह आप सरकार पर छोड़िए और सरकार दुनियाँ मे उसका मुकाबला करे। हम अकेले करे, हम मिलकर करे, हम ५० देशों के साथ करे, जैसे भी करे उसका रास्ता हमे सोचना हैं और आप अगर डर जायँ, घबरा जायं तो फिर उसमे हमारा देश कमजोर होगा। इसलिए उसकी आपको फिक्र और चिन्ता नही होनी चाहिए। एक बात और वह भी जैसे मैने कहा कि दो ही चीज देश को चाहिए। एक समाज हमारा धनवान बने, हमारी आर्थिक हालत अच्छी बने एक नया समाजवादी समाज हम बनाये, दूसरा यह है कि हम अपने देश मे एका रखे। हमारे देश मे आपस मे टक्कर न हो। कोई भाषा पर लड़ रहा है, कोई कहता है तामिल होना चाहिए, कोई कहता है अंग्रेजी होना चाहिए, कोई कहता है बंगाली ही चले और कहे कि साहब हिन्दी हम नही मानते। लेकिन भाषा के नाम पर या प्रान्त के, सूबे के नाम पर या धर्म के नाम पर, मजहब के नाम पर, अगर हम लड़ेंगे तो फिर हमारा देश टूटेगा। आज एक राष्ट्र भाषा होनी चाहिए, एक जबान, एक भाषा हो, जो उत्तर से लेकर दक्षिण तक, पूरब से लेकर पश्चिम तक जोड़े। क्योंकि अगर राजस्थान मे मान लीजिए कि बंगाल के भाई आये तो आप बोलेंगे हिन्दी मे और वह बोलेंगे बंगाली मे, कैसे आप समझेंगे। आपका वह एक तरह से विदेश बन जायेगा। अपने शहर मे लेकिन अगर हिन्दी वे भी जानेंगे तो आपस मे बातचीत हो सकती है आपस मे व्यापार, रोजगार हो सकेगा, आना जाना होगा, विद्यार्थी यहाँ से वहाँ जाये पढ़ने वाले लड़के वहाँ से यहा आये। एक रास्ता एक आम खुला रहेगा। तो इसलिए चाहे भाषा हो, चाहे सूबा हो, चाहे मजहब की बात, हिन्दी, मुसलमान, ईसाई, सिक्ख, पारसी ये सब अगर हम मिलकर नही रहते तो फिर भारत की भारतीयता कमजोर हो जायगी। हिन्दू धर्म भारत मे बड़ा उदार है यह किसी मजहब को, धर्म को छोटा नही मानता। हिन्दू धर्म तो कहता हैं कि सभी धर्म सभी मजहब एक है। इसको ईश्वर के नाम से कहिए, खुदा के नाम से कहिए, गाड के नाम से कहिए, जैसे जिस नाम से आप कहे, लेकिन सब एक है और यह बात आज दुनिया जानती हे कि भारत मे संकीर्णता नही है। भारत के रहने वाले छोटे दिमाग के नही हैं। भारत का नाम सारी दुनिया में है, एक तो इससे है कि जैसा हमने कहा कि लोग कहते है हम उदार हैं। इस छोटी-मोटी बातो मे नहीं पडते हे। हम अपने देश को गरीबी के जंजाल से निकालना चाहते हैं और एक प्लेन के बाद दूसरा प्लेन बनाते ही रहे है। इसका जो एक जबरदस्त असर दुनिया पर है। उस असर को हमे और आपको कायम रखना है। मैं आशा करता हूँ कि आप सब भाई यह जो बड़ा काम हमने उठाया, एक बड़ी मंजिल की तरफ जा रहे हैं एक नया समाज बनाना चाहते है, एक नया, भारत बनाना चाहते हैं, इसमे आप कन्धो से कन्धा मिलाकर हमारे साथ आगे आयेंगे, सरकार से मिलेंगे मिलकर हम और आप इस बात की कोशिश करे जैसे अर्जुन अपनी चिड़िया को ही देखता था, उसको कोई दूसरी चीज नजर नही आती थी। जिस तरह से उनके गुरु ने पूछा कि तुम्हे क्या दिखलाई पड़ता है। सबसे पूछते रहे। किसी ने पेड़ कहा, किसी ने पत्ता कहा, किसी ने शाखा कहा, अर्जुन ने कहा कि मुझे तो चिड़िया दिखलाई पड़ रही हैं, जिस पर हमे अपना निशाना लगाना है। आज उस तरह हमारी और आपकी आँखे अपने उस लक्ष्य की तरफ रहनी चाहिए। हमको गरीबी को मिटाना, बेरोजगारी को दूर करना, एक नया समाजवादी समाज बनाना ये चिडिया हमारे सामने रहे, यह निशाना हमारे सामने रहे हम और आप आगे बढते चले जायँ तो हमारा भारत ऊंचा होगा, हम सुखी होंगे, आप सुखी होंगे दुनिया सुखी होगी। बहुत धन्यवाद।

११ फरवरी १९६५ को, आकाशवाणी से राष्ट्र के नाम सदेश प्रसारित करते हुए प्रधान मंत्री, श्री लाल बहादुर शास्त्री ने हिन्दी-विरोधी आन्दोलन वन्द करने की अपील करते हुए कहा कि भाषा के प्रश्न पर स्वर्गीय श्री नेहरू के आश्वासनो का अक्षरशः पालन किया जाएगा। प्रस्तुत निबन्ध मे प्रधान मन्त्री के वक्तव्य का साराश मूल रूप मे दिया गया है।

राजभाषा का प्रश्न

मैं आज बहुत दुःख और भारी दिल के साथ, आपसे कुछ बातें करने आया हूँ। मद्रास राज्य में भाषा के प्रश्न पर शायद कुछ डर और आशकाओ के कारण दुःखद दुर्घटनाएं घटी है और लोगो की जाने भी गई है। मै बता नही सकता कि मुझे इससे कितना अफसोस हुआ है। जिन लोगों की क्षति हुई है, उनसे मुझे पुरी सहानुभूति है।"

ऐसा जान पड़ता है, कुछ लोगों का ख्याल है कि भाषा के सवाल पर जिन बातो का भरोसा दिलाया गया था, उन्हे पूरा नही किया गया है। सवैधानिक और कानूनी स्थिति और भारत सरकार के नीति सम्बन्धी फैसलो के बारे मे भी गलतफहमी दिखाई देती है। मै सच्चे दिल से विश्वास करता हूँ कि ये सारे डर, दुर्भाग्य से हालात को ठीक तरह न समझने के कारण पैदा हुए है। इसलिये मै सारी बातें आपके सामने साफ-साफ करके रखना चाहता हूँ। फिर आपसे आग्रह करूंगा कि उन पर ठंडे दिल से विचार करे।

अगस्त और सितम्बर, १९५९ मे श्री जवाहरलाल नेहरू ने ससद में उन लोगों का कुछ आश्वासन दिये थे, जिनकी भाषा हिन्दी नही है। इन आश्वासनो से बहुत सतोष हुआ था। आश्वासन क्या थे, मै उन्ही के दो भाषणों के कुछ हिस्से पढकर सुनाता हूँ। नेहरू जी ने कहा था "कोई भी राज्य सरकार, अर्थात् केन्द्र सरकार अथवा किसी दूसरे राज्य के साथ अंग्रेजी मे पत्र-व्यवहार कर सकता है।" उन्होने आगे कहा था कि "कोई राज्य अपने भीतरी कामो मे शायद प्रादेशिक भाषा से काम ले, पर अखिल भारतीय स्तर पर राज्यो से बीच कामकाज के लिये, अग्रेजी के इस्तेमाल पर कोई पाबन्दी नहीं होगी।" उन्होने कहा था : "इसके लिये भी समय का कोई बन्धन नही होगा, जब तक कि लोग आम तौर पर न चाहे। जिन लोगो की भाषा हिन्दी नही है और जिस पर असर पड़ेगा, उनका ही सहमत होना जरूरी है।"

एक और भाषण मे उन्होने कहा था : 'मै दो बातों पर विश्वास रखता हूँ। एक तो किसी पर कुछ जबर्दस्ती नही थोपा जाना चाहिये। दूसरे अनिश्चित समय तक, मैं नही जानता कब तक, मै अंग्रेजी को सहायक भाषा के तौर पर रखना चाहूँगा, क्योकि मेरी यह इच्छा नहीं है कि अहिन्दी भाषी

लोग यह महसूस कर कि उन पर तरक्की के कुछ दरवाजे बन्द हो गए हैं। इसलिये मै उसे एक दूसरी भाषा के रूप मे रखना चाहूँगा, जब तक लोगो को इसकी जरूरत हो। इसका फैसला मै हिन्दी बोलने वाले लोगो पर नही, बल्कि उन लोगो पर छोड़ना चाहूगा, जिनकी भाषा हिन्दी नही है।' इसको आगे व्याख्या करते हुए पडित जी ने कहा था "हिन्दी बराबर तरक्की कर रही है मैं इसके लिये कोशिश करता हूँ। लेकिन मुझे यह अच्छा लगेगा कि लोगो को अंग्रेजी की जरूरत है, वे इसका इस्तेमाल करें। कुछ राज्यो ने ऐसा किया है। वे अंग्रेजी का इस्तेमाल जारी रख सकते है और वहां उसकी जगह लेने के लिये भाषाओ का धीरे-धीरे विकास हो सकता है।"

ये आश्वासन पडितजी ने दिये थे और मै फिर कह देना चाहता हूँ कि हम इन पर सच्चेदिल से और पूरी तरह कायम हैं। इन्हे पूरा किया जायगा, अक्षरश पूरा किया जायगा। किसी को कोई शक न रह जाय, इसलिये मैं एक बार फिर सरकार के नीति सम्बन्धी फैसले बताए देता हूँ।

सबसे पहली बात यह है कि हर राज्य को अपनी मर्जी की भाषा मे काम करने की पूरी आजादी है, यह भाषा चाहे प्रादेशिक हो, या अंग्रेजी।

दूसरे एक राज्य का दूसरे राज्य के साथ जो भी पत्र-व्यवहार होगा, वह या तो अंग्रेजी मे होगा या अंग्रेजी का अविकृत अनुवाद साथ मे होगा। यह फैसला सभी मुख्य मन्त्रियो की सम्मति से किया गया था। कोई राज्य या व्यक्ति हिन्दी मे केन्द्र के साथ जो पत्र-व्यवहार करेगा उसका अंग्रेजी अनुवाद भी उपलब्ध होगा।

तीसरे, जिन राज्यो की भाषा हिन्दी नही है, उन्हे केन्द्र सरकार के साथ पत्र-व्यवहार अंग्रेजी मे करने की पूरी स्वतन्त्रता होगी। यह व्यवस्था तब तक नही बदली जायगी, जब तक ये राज्य खुद नही चाहेगे।

चौथे, केन्द्र सरकार के स्तर पर कामकाज मे अंग्रेजी का इस्तेमाल जारी रहेगा।

मैने जो कुछ अभी कहा है, उससे यह बात साफ हो जानी चाहिये कि अहिन्दी भाषी राज्यो पर हिन्दी को जबरदस्ती लगाने का कोई सवाल नही है। यह भी स्पष्ट है कि अहिन्दी भाषी राज्य, जब तक वहा के लोग यह जरूरी समझे, अंग्रेजी का इस्तेमाल कर सकते है।

अब मै सरकारी नौकरियो की भर्त्ती के बारे मे कुछ कहना चाहता हूँ। विद्यार्थियों के मन मे इसी सवाल पर गम्भीर आशकाएँ और डर है। अब तक यूनियन पब्लिक सर्विस कमीशन की परीक्षाओं मे बैठने के लिये केवल अंग्रेजी ही माध्यम रहा है। आगे भी अंग्रेजी माध्यम रहेगा और इसे तब तक नही हटाया जाएगा, जब तक अहिन्दी भाषी इलाको के लोग खुद नही कहेगे।

यह सच है कि हमारे सविधान के अनुसार, जो १९५० मे पास हुआ था, हिन्दी इस वर्ष २६ जनवरी से सघ की सरकारी भाषा बन गई है। साधारण तौर पर उस दिन से अंग्रेजी का कोई सरकारी दर्जा न रहता। पर इस तारीख से दो वर्ष पहले कानून पास किया गया जिसके अनुसार साथ मे अंग्रेजी मे कामकाज करने की भी व्यवस्था करदी गई। इस प्रकार कानूनी तौर पर अंग्रेजी सहायक भाषा और परीक्षाओ के माध्यम के रूप मे बनी रहेगी। १९६० मे यह तय किया गया कि हिन्दी को भी कुछ समय बाद परीक्षाओ का दूसरा माध्यम बना दिया जाय। यह मामला सभी राज्यो के मुख्य मन्त्रियो के सामने रखा गया और उनसे सलाह करके यह फैसला किया गया कि हिन्दी को दूसरा माध्यम

बनाने से पहले परीक्षाओं में बैठने वालों की योग्यता को समान रूप से आंकने का उचित आधार बना लिया जाय। हिन्दी माध्यम की इजाजत तभी दी जायगी, जब इस दृष्टि से कोई ठीक योजना बन जाएगी। भारत सरकार इस उद्देश्य से सभी मुख्य मंत्रियो और देश के अलग-अलग इलाकों के प्रमुख शिक्षा-शास्त्रियों से सलाह लेगी। इस में समय लग सकता है। हमें पूरी तसल्ली करनी होगी कि जो तरीका अपनाया जाए, उसे मुख्य मन्त्री ठीक समझते हो। योग्यता को समान रूप से आंकने की योजना ऐसी होगी जिससे किसी को भी डर न रहे कि किसी एक वर्ग के उम्मीदवारो को फायदा या नुकसान होगा। मै विद्यार्थियो को विश्वास दिलाता हूँ इस बात की पूरी कोशिश की जायगी कि उन्हें नौकरी मिलने के उचित अवसर मिलते रहें।

मुझे आशा है कि मैने सरकार के फैसलों और नीतियों के बारे में जो कुछ कहा है, उससे यह बात साफ हो गई होगी कि हम अहिन्दी भाषी लोगों के हितों की पूरी तरह रक्षा करना चाहते है। और हमारी जरा भी इच्छा नही है कि अहिन्दी भाषी राज्यों को कोई परेशानी या असुविधा हो। ये बातें सदा हमारे सामने रहेगी। हम मुख्य मंत्रियो से सलाह करके यह सोचेंगे कि इन आश्वासनों को पूरा करने के लिये किन उपायो पर चला जाए।

मुझे दुख है कि सारे मामले पर बातचीत करने की कोशिश नहीं की गई है, बल्कि एक आन्दोलन चलाया जा रहा है। मै बड़ी नम्रता मे कहूँगा कि हमारे जैसे महान् लोकतंत्र मे शिकायतें पेश करने या मतभेद, विचारो का फर्क जाहिर करने का यह उचित तरीका नही। हमारा देश, बहुत बड़ा है; यहाँ के लोगो के धर्म, भाषाएं, रहन-सहन के तरीके और रस्म-रिवाज अलग-अलग है। लेकिन यह सब होने पर भी हम एक राष्ट्र है। हम सबने मिलकर आजादी की लड़ाई लड़ी है और सबको विश्वास है कि हमारा देश बहुत उन्नति करेगा।

मै आपसे अपील करता हूँ कि आप रुके और सारी हालत पर ठन्डे दिल से विचार करें। यह सवाल देश की एकता का है। हम चाहे किसी इलाके के रहने बाले हो और कोई भी जबान बोलते हों, हमे यह सोचना है कि सारे देश की भलाई किस चीज मे है।

महात्मा गाँधी, पडित नेहरू, हमारे दूसरे राष्ट्रीय नेता और हमारा संविधान बनाने वाले सभी बुद्धिमान लोग थे और दूर की बात सोचते थे। उन सब का यह फैसला था कि एक समान भाषा होनी चाहिए जिससे देश के सभी लोग एक सुगठित राष्ट्र के रूप में एक सूत्र मे बंध जाएं। इसमें किसी को सन्देह नही हो सकता कि यह एक शानदार, एक महान उद्देश्य है। लेकिन हमे ऐसे तरीकों से यह उद्देश्य पूरा करने की कोशिश करनी चाहिए जिससे सबमे भरोसा पैदा हो। मैं सभी देशवासियों से अनुरोध करता हूँ कि आप इस सवाल को छोटी-मोटी बातों से ऊपर उठकर सोचें, सूझबूझ और तर्क के साथ इस पर विचार करे। अगर आप मे से कुछ लोग अब भी यह समझते है कि उनकी कोई मुनासिब शिकायेते है या कोई ऐसी सरकारी कार्रवाई की गई है जो सही की जानी चाहिए थी' तो मैं और मेरे साथी फौरन ही आपकी बात सुनने और उस पर विचार करने को तैयार है। ऐसे करते समय हम आपकी सभी उचित आशकाओ को दूर करने की कोशिश करेगे। मुझे आशा है, मेरी आज की इस बातचीत से आपको इतना आश्वासन मिल गया होगा कि आप इस आन्दोलन को समाप्त कर सके।

कच्छ की सीमा पर पाकिस्तान का आक्रमण

कच्छ की सीमा पर पाकिस्तान की फौजों का लगातार आक्रमण हो रहा है और उनसे हमारा कड़ा मुकाबला हुआ है। हमारे आदमी बड़ी वीरता से अपने देश की सीमाओं की रक्षा कर रहे हैं और मैं उनको बता देना चाहता हूँ कि यह सदन और देश के सब लोग तहेदिल से उनके साथ हैं और अपने देश की अखण्डता की रक्षा के लिए हम कोई भी बलिदान करने में न चूकेंगे।

हमारे सामने गम्भीर स्थिति है और मैं घटनाओं का सिलसिलेवार बयान कर रहा हूँ।

पिछले कुछ महीनों से पाकिस्तान हमारी पूर्वी तथा पश्चिमी दोनों सीमाओं पर अनेक जगह समय-समय पर गोलाबारी करता रहा है और हमारे आदमियों से उसकी मुठभेड़ हुई है। हमारे आदमियों ने सब जगह बचाव की कार्रवाई की है और बड़े संयम से काम लिया है। पाकिस्तानी अतिक्रमण की इन घटनाओं में सबसे ताजी घटना कच्छ की सीमा पर हुई है। कुछ दिन पहले कच्छ-सिंध सीमा के पास एक रास्ते पर पाकिस्तानी गश्ती दल देखे गए। हमारे गश्ती दलों के ललकारने पर पाकिस्तानी गश्ती दलों ने कहा कि यह सड़क पुरानी चुँगी की सड़क है और पाकिस्तान की सीमा के भीतर है। उसी समय यह भी देखा गया कि पाकिस्तान ने कंजरकोट को दखल कर लिया है और वहाँ एक चौकी बनाली है।

जमीन के नियमों के तीसरे पैरा के मुताबिक राजकोट रेंजर्स के डी० आई० जी० पुलिस ने पश्चिम पाकिस्तान रेंजर्स के डी० जी० से कहा कि इस मामले पर बातचीत करने के लिए और पहले की स्थिति का फैसला करने के लिए दोनों आदमियों में मुलाकात होनी चाहिए। पश्चिम पाकिस्तान रेंजर्स के डायरेक्टर जनरल खुद नहीं आए, लेकिन उन्होंने अपने स्थानीय कमांडर को भेजा जिसने राजकोट रेंजर्स के डी० आई० जी० से मुलाकात की। इस मुलाकात का कोई नतीजा नहीं निकला और हमारे तथा पाकिस्तानी गश्ती दलों में मुकाबले होते रहे।

९ अप्रैल को सवेरे तड़के हमारी सरदार सीमा चौकी पर भारी तोपों और मझौली मशीनगनों से गोलाबारी हुई और इसके बाद २५ पाउंड वाली तोपों से गोलाबारी की आड़ में पाकिस्तान की ५१ वीं पैदल ब्रिगेड की दो बटालियन हमारी चौकी की ओर बढ़ीं। गृह मंत्री ने १० अप्रैल को सदन में इस लड़ाई का हाल बताया था। पाकिस्तानी सैनिक जो बन्दी बनाए गए, उन्होंने यह मंजूर किया और उनके पास से ऐसे कागजात मिले जिससे साबित होता है कि इस हमले की योजना पहले से बनाई गई थी। हमारी चौकी पर पाकिस्तानी सेना के आक्रमण की योजना मार्च के दूसरे हफ्ते में बनाई गई

और उसके बाद पाकिस्तानी फौजों की गतिविधि शुरू हुई। आक्रमण का हुकुम ७ अप्रैल को दिया गया और ९ अप्रैल को सवेरे आक्रमण हुआ।

इसके बाद जैसा कि सदन को मालूम है, सेनाध्यक्ष को सीमा की रक्षा की कार्रवाई संभालने का निर्देश दिया गया और हमारी फौजी टुकड़ियां उसी दिन शाम को वीगाकोट में पहुँच गई। पाकिस्तान की ओर से गोलाबारी जारी रही और हमारी फौजों ने इसका जवाब दिया।

इसके बाद से कच्छ-सिंध सीमा के दक्षिण हमारे इलाके पर कई जगह पाकिस्तानी सेनाएँ बढ़ते हुए वेग से हमला कर रही है। २४ अप्रैल को पाइंट ८४ पर तैनात हमारी कम्पनी की चौकी पर सवेरे गोलाबारी हुई और उसके बाद पाकिस्तानी पैदल सेना ने टैंकों और बख्तरबन्द गाड़ियों के साथ उस पर आक्रमण किया। २६ अप्रैल को हमारी बियारबेट की सीमा चौकी पर पाकिस्तानी सेनाओं ने टैंकों और बख्तरबन्द गाड़ियों को लेकर आक्रमण किया। यह हमले अभी भी जारी है।

पाकिस्तानी सेना की यह कार्रवाई खुला आक्रमण है। उन्होंने सीमा के ६-८ मील दक्षिण भारतीय इलाके के अन्दर तक घुसकर भारतीय चौकियों पर आक्रमण किया है, पाकिस्तान खुद कबूल करता है और यह इलाका कभी भी उसके कब्जे मे नहीं रहा है। माननीय सदस्यो ने पाकिस्तानी विदेश मंत्री श्री भुट्टो का १४ अप्रैल का बयान देखा होगा जिसमे उन्होंने अपने पक्ष के समर्थन मे कहा है कि यह लड़ाई २४ वी अक्षांश रेखा के उत्तर मे पड़ने वाले इलाके के ऊपर है। झगड़े की वजह यह नहीं है कि सीमा पर निशान नही लगाए गए है, बल्कि यह है कि झगड़े का इलाका भारत के कब्जा-मुखालिफाना मे है। यह उनका कहना है। दूसरे शब्दो मे पाकिस्तान ने ऐसे इलाके पर फौजी हमला करना उचित समझा है जिस पर उसका कभी भी कब्जा नही रहा और वह मंजूर करता है कि यह भारत के कब्जे मे है। इस तरह पाकिस्तान का कसूर खुद उसकी बातों से साबित है। पाकिस्तान ने स्थिति को बदलने के लिए और अपने दावे को मनमाने के लिए फौजी ताकत से काम लिया है। यह बात संयुक्त राष्ट्र के घोषणा पत्र के और १९६० के भारत पाकिस्तान सीमा समझौते के अन्तर्गत बनाए गए जमीन के नियमो के खिलाफ है। पाकिस्तान का यह काम हमारे इलाके पर साफ और खुला हमला है।

जैसा कि पाकिस्तान की हमेशा की आदत रही है, एक तरफ तो राजनीतिक सूत्रो से मामले को शान्ति से तय करने के लिए बातचीत चल रही थी और दूसरी तरफ पाकिस्तान अपने हमले तेज करता जा रहा है और हमारी चौकियो पर टैंको और तोपो से हमला भी करता जा रहा है।

१९ अप्रैल को विदेश सचिव ने पाकिस्तान के हाई कमिश्नर को एक सुझाव दिया, जो वैसा ही था जैसा पाकिस्तानी विदेश मन्त्रालय ने कराची मे हमारे हाई कमिश्नर को कुछ दिन पहले दिया था। सुझाव यह था कि लड़ाई बन्द हो और उसके बाद यथास्थिति मालूम करने और कायम करने के लिए दोनों ओर के अधिकारियो मे बात हो और उसके बाद सीमा के सवाल पर दोनों ओर से और ऊंचे स्तर पर बातचीत हो। २४ अप्रैल को सवेरे पाकिस्तानी हाई कमिश्नर ने हमारे विदेश सचिव को एक दूसरा सुझाव दिया कि युद्ध विराम हो और उसके बाद हिन्दुस्तान और पाकिस्तान, दोनो ओर की फौजें या नागरिक दल उन इलाको से हट जाए जिनको वह विवादग्रस्त बताते है। लेकिन इस सुझाव को देने के पहले उसी दिन सवेरे पाकिस्तान की एक ब्रिगेड फौज ने कादबेट के पश्चिम प्वाइंट ८४ पर हमारी चौकी पर भारी तोपो से हमला बोल दिया।

इन वार्ता के दौरान पाकिस्तान बराबर अपनी बातें बदलता रहा है और परस्पर-विरोधी बयान देता रहा है। १८ फरवरी, १९६५ को कजरकोट पर राजकोट रेंजर्स के डी० आई० जी० और पाकिस्तान के इंडस रेंजर्स के कमांडर ले० कर्नल आफताब अली की मुलाकात हुई जिसमे उन्होने यह कहा कि उन्होंने कंजरकोट पर कब्जा नही किया है, बल्कि वे कजरकोट के दक्षिण उस सड़क तक गश्त लगाते रहे है, जो उनके कहने के मुताबिक सौराई और डीग को मिलाने वाली पुरानी चुंगी की सड़क है। हमारे १८ फरवरी १९६५ के विरोध पत्र के जवाब मे पाकिस्तान सरकार के पहली मार्च, १९६५ के नोट मे यह कहा गया कि कजरकोट की गढी को पाकिस्तान के इंडस रेंजर्स दखल नही दिया है। लेकिन आज न सिर्फ पाकिस्तान का कजरकोट गढ़ी पर कब्जा ही है, बल्कि अब उसके दावे चुंगी की सडक पर गश्त लगाने की बात से कही आगे बढ़ गए है। अब पाकिस्तान कच्छ-सिंध सीमा के दक्षिण और ५४ वे अक्षांश के उत्तर एक बहुत बड़े इलाके पर अपना अधिकार जमा रहा है।

मै साफ तौर पर और मजबूती से कह देना चाहता हूँ कि हम पाकिस्तान के इन दावो को एकदम नामजूर करते है। पाकिस्तान का कहना है कि कच्छ का रन एक भीतरी समुद्र है और इसलिए पाकिस्तान इस इलाके के आधे हिस्से का हकदार है। यह बात बिलकुल निराधार है। कच्छ का रन न तो भीतरी समुद्र है और न कभी माना गया। पाकिस्तान की स्थापना से बहुत पहले सन् १९०६ मे भारत की तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने यह फैसला किया कि कच्छ के रन को झील या भीतरी समुद्र नही, बल्कि दलदल कहना चाहिए। इस बात से इन्कार नही किया जा सकता कि कच्छ का रन दलदल है। दलदल मे होने वाले पशु-पक्षी और वनस्पति और अन्य सब बाते इसमे पाई जाती है। बरसात के दिनो मे तेज हवा और अरब समुद्र मे बहुत ऊंचे ज्वारो के कारण इस नीचे इलाके मे समुद्र का पानी भर जाता है। इसके अलावा बरसात से बढी हुई नदियो का पानी भी इसमे बहकर आ जाता है। इस कारण यह प्रदेश मई के मध्य से अक्टूबर के अन्त तक पानी मे डूबा रहता है। वर्षा के बाकी भाग मे इसका कुछ हिस्सा सूखा रहता है और कुछ दलदल।

पाकिस्तान ने अपने दावो मे इस ऐतिहासिक तथ्य की उपेक्षा की है कि यद्यपि कच्छ सिंध सीमा पर निशान नही लगे है, पर नक्शो मे यह साफ तौर से अंकित है और इसे अच्छी तरह माना गया है। देश के बंटवारे से पहले कच्छ-सिंध सीमा अंग्रेजी राज के सिन्ध प्रान्त और कच्छ रियासत को अलग करती थी। अन्तर्राष्ट्रीय सीमा न होने के कारण इस पर निशान लगाने की आवश्यकता नही हुई। पर १८७२ से १९४३ के बीच और उसके बाद भी जो नक्शे प्रकाशित हुए, उनमे यह सीमा साफ दिखाई गई है और यह सर्वविदित और मान्य रही। देश के बंटवारे से पहले के ७५ वर्षो के सरकारी दस्तावेजो मे सीमा का विस्तृत विवरण दिया गया है।

१५ अगस्त १९४७ से पहले के सरकारी नक्शो मे जो सीमा दिखाई गई है, उस पर आपत्ति नही की जा सकती।

१९०७ मे कराची मे प्रकाशित सिंध प्रान्त के सरकारी गजेटियर-१९०९ मे प्रकाशित बम्बई प्रेसिडेंसी के गजेटियर आफ इंडिया, ब्रिटिश भारत मन्त्री द्वारा १९०८ मे प्रकाशित इम्पीरियल गजेटियर आफ इंडिया मे यह बात साफ कही गई है कि कच्छ का रन सिंध प्रान्त के बाहर है।

भारत की तत्कालीन ब्रिटिश सरकार के राजनीतिक विभाग के १९३७, १९३९ और १९४२ के दस्तावेजो मे विभिन्न अधिकारियो के राजनीतिक अधिकार-क्षेत्रो के ब्यौरे मे, कच्छ के रन को सदा

पश्चिम भारत की रियासतों की एजेंसी के मातहत दिखाया गया, और इसे कभी भी सिंध प्रान्त में नहीं दिखाया गया।

जैसा कि माननीय सदस्य जानते हैं, पश्चिमी भारत की रियासतों की एजेंसी की सब रियासतें भारत-संघ में शामिल हो गईं। सिंध प्रान्त और कच्छ की सीमा के बारे में इतने प्रमाण है कि किसी झगड़े की गुंजाइश नहीं रह जाती है।

हाल की घुसपैठ शुरू होने के समय से ही भारत सरकार यह कह रही है कि स्थानीय अफसरों की बैठकें होनी चाहिए और उच्च स्तर पर भी बातचीत होनी चाहिए। मसलन, हमने पाकिस्तान को सुझाव दिया कि दोनों देशों के सर्वेयर जनरल मिले और सीमा पर निशान लगाने के बारे में विचार करें। पाकिस्तान ने इन्कार कर दिया। हमने पाकिस्तान को जमीन के नियमों की याद दिलाई और कहा कि यथास्थिति कायम करने के लिए स्थानीय कमांडरों की बैठक होनी चाहिए। हमने अपने १८ फरवरी के पत्र में यह भी सुझाव दिया कि पाकिस्तान जिस स्तर पर चाहे दोनों देशों के प्रतिनिधियों की बैठक बुलाई जाए और इसके बाद भी हमने कई बार इस प्रस्ताव को दोहराया। लेकिन पाकिस्तान से कोई उचित उत्तर नहीं मिला।

१३ अप्रैल, १९६५ को पाकिस्तान सरकार ने तीन सुझाव दिए। (१) युद्धविराम, (२) यथा-स्थिति का निर्धारण और उसे कायम करने के लिए दोनों सरकारों के प्रतिनिधियों की बैठक और (३) उच्चस्तर की बैठक। भारत सरकार ने अगले दिन ही अपने हाई कमिश्नर को कहा कि पाकिस्तान सर-कार से कह दे कि हमें ये सुझाव मंजूर है। लेकिन बड़े खेद की बात है कि पाकिस्तान सरकार बाद में अपनी बात से फिर गई।

१९ अप्रैल को भारत सरकार ने फिर तुरन्त युद्धविराम पर जोर दिया। लेकिन पाकिस्तान सरकार ने २३ अप्रैल को एक बिल्कुल नया फार्मूला पेश किया। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ, पाकिस्तान ने इसमें उस प्रदेश से भारतीय सेना के हटने की मांग की है, जिसे वह मनमाने तौर पर झगड़े का इलाका कहता है, जो वस्तुतः पूरी तरह से हमारा प्रदेश है।

अब पाकिस्तान इसी मांग पर डटा हुआ है। उनके रुख से साफ है कि वह लड़ाई पर तुला है और हमारे शान्ति प्रस्ताव को तैयार नहीं।

श्रीमान्, मैंने पाकिस्तान के झूठे दावों, नापाक इरादों और हमारे खिलाफ फौजी ताकत के खुल्लम-खुल्ला प्रयोग को पूरी तरह साफ करने के लिए यह लम्बा विवरण दिया है।

पाकिस्तान के नेताओं, पाकिस्तान के अखबारों और साम्प्रदायिकता का उन्माद फैलाने वाले पाकिस्तानियों ने पिछले बीस वर्षों में भारत के विरुद्ध जो द्वेष का प्रचार किया है, वही पाकिस्तान के इस अनुचित रवैये का एक मुख्य कारण है।

जिन घटनाओं की मैंने अभी चर्चा की है, उनसे हमें गहरी चिन्ता है। स्वाधीनता के समय से ही भारत शान्ति, अन्तर्राष्ट्रीय सौहार्द और सद्भावना का हामी रहा है। हम अपने करोड़ों देश वासियों की दशा सुधारने के लिए शान्ति चाहते हैं। हमने विकास के काम में अपने साधन लगाने की कोशिश की है। जो भी व्यक्ति निष्पक्ष भाव से इस स्थिति पर विचार करेगा, वह इसी नतीजे पर पहुँचेगा कि भारत की सीमा पर झगड़ा खड़ा करने या लड़ाई मोल लेने से कोई फायदा नहीं है।

पर, चीन और पाकिस्तान हमारे दो पड़ोसियों ने हमारे खिलाफ आक्रमण का रुख अपनाया है। ऐसा लगता है कि हाल में इन दोनों में सांठगांठ हुई है कि वे दोनों मिलकर खुराफात करेंगे।

इन परिस्थितियों में सरकार का कर्तव्य स्पष्ट है जिसे सरकार पूरी तरह और कारगर ढंग

से निभाएगी। हम अपनी सीमा और अपनी प्रादेशिक अखन्डता की रक्षा के लिए देश के सारे जन और और धन को लगा देंगे। मैं जानता हूँ कि आज भारत की ४९ करोड़ जनता में से, एक-एक आदमी अपनी मातृभूमि की रक्षा में सब कुछ बलिदान करने को तैयार है। जब तक जरूरी होगा, हम गरीबी में रह लेंगे, लेकिन अपनी आजादी पर आंच न आने देंगे।

अब हमको, और मेरा मतलब सिर्फ सरकार से ही नहीं, लेकिन सदन को बल्कि सारे देश को भी इस बात पर विचार करना है कि हम कौन-सा रास्ता अपनाएँ। हम शान्ति का रास्ता अपनाने को तैयार हैं, लेकिन अकले हमारे करने से तो शान्ति नहीं रहेगी। पाकिस्तान को अपनी लडाई की हरकतों से बाज आना होगा। अगर वह ऐसा करता है तो कोई वजह नहीं कि पुराने सिंध प्रान्त और कच्छ रियासत के बीच की पुरानी सीमा और भारत व पाकिस्तान की वर्तमान सीमा का फैसला आपसी बातचीत से क्यों न किया जा सके। और इसमें लम्बी बातचीत का सवाल नहीं। यह तो सिर्फ तथ्यों का सवाल है कोई मोलभाव का नहीं। यह काम दोनों देशों के विशेषज्ञ कर सकते हैं। यह तभी हो सकता है, जब तुरन्त लडाई बन्द हो और पूर्व स्थिति कायम हो।

मैं यह भी बता देना चाहता हूँ कि कच्छ सीमा की लड़ाई में भौगौलिक दृष्टि से पाकिस्तान को कुछ सुभीता है। यही नहीं हमारी सैनिक चौकियाँ उन क्षेत्रों में हैं, जहां कुछ दिन बाद पानी भर जाएगा और तब उन्हें मजबूरन वहां से हटना पड़ेगा। लेकिन अगर पाकिस्तान अपने दुराग्रह पर कायम रहता है और आक्रामक कारवाई जारी रखता है, तो हमारी सेना देश की रक्षा करेगी और तै करेगी कि किस तरीके से वह लड़ाई करे और किस तरह अपने सैनिक और हथियारों से काम ले। हमारे मित्र देशों का आग्रह है कि जल्दी से जल्दी युद्धविराम हो। हम इसके लिए तैयार हैं। लेकिन मैं सदन को बता देना चाहता हूँ कि हम युद्ध के लिए भी तैयार हैं।

मैं बडी गम्भीरता से सोच-विचार कर और अपनी जिम्मेदारी को समझकर ही ये शब्द कह रहा हूँ। यह बडी नाजुक और निर्णायक घडी है। मैं समझता हूँ कि भारत और पाकिस्तान 'दोनों देश आज इतिहास के महत्व पूर्ण मोड पर खडे हैं। विवेक और समझदारी, सुलह और दोस्ती का रास्ता अभी भी खुला हुआ है। पहले हमारी पुलिस और अब हमारी सेना प्रशसनीय साहस के साथ दुश्मन की भारी सख्या से मातृभूमि की रक्षा कर रही है, फिर भी शान्ति का रास्ता अभी भी बन्द नहीं हुआ है। लेकिन इस रास्ते पर हम अकेले नहीं चल सकते। शान्ति और मित्रता दोनों तरफ से होती है, एक तरफ से नहीं।

मैं आशा करता हूँ कि वह स्थिति नहीं आएगी, जब पीछे लौटना सम्भव न रहे। मुझे यह अभी भी आशा है कि पाकिस्तान अब भी अपने १३ अप्रैल के प्रस्तावों के मुताबिक युद्धविराम के लिए राजी हो जाएगा, जिन्हें भारत मजूर कर चुका है।

मैं जानता हूँ कि इस घड़ी में हरेक भारतवासी अपनी मातृभूमि के लिए, अपनी आजादी और देश की अखण्डता की रक्षा के लिए तैयार है। सब लोगों से मेरी यह अपील है कि आप जहाँ भी हैं और जो भी काम कर रहे हैं, उसे सच्ची लगन से करते रहें। अपनी पूरी शक्ति से देश की निस्वार्थ सेवा करते रहें। इस घडी राष्ट्रीय एकता की सबसे बडी आवश्यकता है मौखिक एकता नहीं, दिलों की एकता। सभी भारतीयों को चाहे वे किसी भी धर्म या वर्ग के हों, एक होकर हर सकट का मुकाबला करने और हर तरह के त्याग के लिए तैयार रहना है। हमें ऐसी कोई बात मन में नहीं लानी है, जो एकता को भंग करे। हम सबको एक होकर राष्ट्रीय भाव से, अनुशासन के साथ देश की स्वतन्त्रता और अखण्डता के लिए एक चित्त से काम करना है। अन्त में मैं सदन से अनुरोध करता हूँ कि इस घड़ी में वह सरकार का पूरे दिल से शक्तिशाली समर्थन करे।

राज्य सभा में ३ मई १९६५ को कच्छ युद्ध विराम पर दिया गया भाषण।

कच्छ का रन भारतीय प्रदेश है

मेरा निवेदन है कि कच्छ सीमा पर पाकिस्तान की सेना के लगातार और अब भी जारी हमलों से उत्पन्न स्थिति पर विचार किया जाए।

मै समझता हूँ कि सदन के माननीय सदस्य स्थिति की पूरी जानकारी प्राप्त करने और इन गंभीर घटनाओं पर सरकार की नीति जानने के कितने इच्छुक होगे। सबसे पहले मै सदन को यह सूचित करना चाहता हूँ कि पिछले दो-तीन दिनों में कच्छ सीमा पर कोई बड़ी लड़ाई नही हुई है, और पाकिस्तान की आक्रामक सेना हमारे प्रदेश मे और आगे बढ़ने नही पाई है। दूसरे यह कि इन मुठभेड़ों में आक्रामक को भारी क्षति हुई है। हमारे सैनिकों का हौसला बड़ा बुलन्द है। मै जानता हूँ कि यह सदन और सारे देशवासी उन सैनिकों के पीछे है और भारत की अखण्डता को पूरी तरह बनाए रखने के लिए संगठित और दृढ संकल्प है।मै स्थिति के तिथ्य सक्षेप मे बताता हूँ।

सन् १८७१ से सर्वे आफ इन्डिया के नक्शों के विभिन्न संस्करणों मे कच्छ-सिन्ध सीमा स्पष्ट दिखाई गई है और इस सुनिश्चित सीमा पर किसी को सन्देह नहीं हो सकता। जमीन पर इस सीमा का काफी भाग अङ्कित नहीं है। यह इसलिए कि पहले सिध प्रान्त और कच्छ दरबार के बीच की सीमा पर कोई विवाद नहीं था; और अङ्गरेजो के समय भारत के प्रान्तों व रियासतो की सीमाओं पर खम्भे गाड़ने की कोई प्रथा नही थी, क्योकि वे अन्तर्राष्ट्रीय सीमाएं नही थी।

१५ अगस्त, १९४७ को भारत के कुछ हिस्सों को काट कर पाकिस्तान देश बनाया गया। भारत स्वतन्त्रता कानून के अन्तर्गत, पाकिस्तान के हिस्से गिनाए गए, जिनमें सिध प्रान्त भी था। इस प्रकार सिध और कच्छ की सीमा अन्तर्राष्ट्रीय सीमा बन गई। १५ अगस्त, १९४७ की सिध प्रान्त का जो प्रदेश था, उससे ज्यादा पर पाकिस्तान को दावा करने का कोई अधिकार नहीं है। नक्शे में कच्छ-सिध सीमा कजरकोट के बिल्कुल उत्तर में दिखाई गई है और इस सीमा से नीचे का तमाम प्रदेश स्पष्ट रूप से भारतीय है, जो किसी भी हालत में पाकिस्तान का नही हो सकता। यह प्रदेश हमेशा से कच्छ के शासक के अधिकार में रहा। कच्छ के महाराज का शासन हमेशा कानून मे और वास्तविकता में भी कच्छ-सिध सीमा तक था, जसा कि सर्वे आफ इन्डिया के १८७१, १८८६, १८९८, १९४३ और १९४६ के नक्शो में भो दिखाया गया है। स्वतन्त्रता से पहले यह १९४६ का नक्शा अन्तिम था।

भारत विभाजन से पहले के ७५ वर्षो मे अन्य सरकारी कागज-पत्रों मे भी कच्छ और सिध की सीमा का विस्तार से वर्णन किया गया है। करॉची मे १९०७ मे प्रकाशित सिध के सरकारी गजेटियर मे, १९०९ में प्रकाशित बम्बई प्रेसिडेन्सी के भारत के गजेटियर मे और १९०८ मे ब्रिटेन के भारत

सचिव द्वारा प्रकाशित भारत के इम्पीरियल गजेटियर मे यह स्पष्ट रूप से बताया गया है कि कच्छ का रन सिंध प्रान्त से बिल्कुल अलग था। भारत की ब्रिटिश सरकार के राजनीतिक विभाग के १९३७, १९३९ और १९४२ के उन सभी कागजो मे, जिनमे विभिन्न अधिकारियो के अधिकार क्षेत्र नियत किये गए, यह स्पष्ट दिखाया गया है कि कच्छ का रन पश्चिमी भारत की रियासतों की एजेंसी मे आता है, सिंध प्रान्त मे नही। सदन को पता ही है कि पश्चिमी भारत की रियासतो की एजेंसी विभाजन के बाद पूरी तरह भारत का ही अङ्ग बनी।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि पाकिस्तान ने कच्छ सीमा पर आक्रमण किया है। यह आक्रमण पिछले चार महीनो मे पाकिस्तान के आक्रामक रवैये के अनुकूल ही है। भारत-पाकिस्तान सीमा के, पूर्वी और पश्चिमी दोनो ओर की सीमा के विभिन्न स्थानो मे पाकिस्तान बार-बार गोलाबारी करता रहा है। उसने बिल्कुल गैर जिम्मेवारी का और दुस्साहस का परिचय दिया है।

कुछ दिन पहले प्रधान मन्त्री विलसन ने मुझे एक सन्देश भेजा था और मै समझता हूँ कि ऐसा ही एक सन्देश प्रेसीडेन्ट अयूब खाँ को भेजा गया। इसमे कुछ प्रस्ताव किए गए है जिनके अन्तर्गत युद्ध-विराम किया जा सके। इङ्गलैण्ड के प्रधान मन्त्री अब भी प्रयत्नशील है, अतः फिलहाल मै इस सम्बन्ध मे कुछ और नही कह सकता। लेकिन मै सदन को आश्वासन दिलाता हूँ कि श्री विलसन के साथ मेरा जो पत्र-व्यवहार हुआ है या आगे होगा, उसमे हम अपनी इस बात से कभी नही हटेंगे कि युद्धविराम के साथ ही युद्ध से पहल की स्थिति भी कायम होनी चाहिए।

भारत सरकार और भारतीय जनता के मन मे पाकिस्तान की जनता के प्रति कोई द्वेष नही है। हम उनके सुख की शुभकामना करते है और उन्हे समृद्धि के रास्ते पर चलता हुआ देखना चाहते हैं। हम यह जानते है कि पाकिस्तान की और भारत की जनता की, अर्थात् इस उपमहाद्वीप के ६० करोड लोगो की सुख-समृद्धि, शान्ति पर ही निर्भर है। यही कारण है कि हम पिछले वर्षो मे शान्ति का ही रास्ता अपनाए हुए है। भारत की भूमि पर किसी भी प्रकार के युद्ध से वे सब महान प्रयत्न बेकार हो सकते है, जो दोनो देशो ने अपनी जनता का रहन-सहन सुधारने के लिए किए है। ये प्रयत्न अभी शुरू ही हुए है और हमे अभी काफी रास्ता तय करना है। लेकिन प्रेसीडेन्ट अयूब ने भारत और पाकिस्तान के बीच पूरे खुले युद्ध की बात कही है। हम काफी सयम बरतते रहे है, इसलिए नही कि हम प्रेसीडेन्ट अयूब की चुनौती का मुकाबला करने के लिए तैयार नही है, बल्कि इसलिए कि हम चाहते है कि आक्रमण और युद्ध के बजाय विवेक और बुद्धिमता से काम लिया जाय जाना चाहिए। प्रेसीडेन्ट अयूब शायद यह समझते हैं कि उन्हे तो अपनी मरजी से भारतीय प्रदेश पर आक्रमण करने का अधिकार है लेकिन भारत को उसके जवाब मे प्रभावशाली कदम उठाने का हक नही है। हम इसे स्वीकार नही करते। पाकिस्तान का रवैया यह है कि पहले तो पडौसी के प्रदेश पर दावा करो, फिर अचानक पडौसी पर हमला बोल दो और फिर यह झूठा प्रचार शुरू कर दो कि हम तो केवल अपनी रक्षा मे यह कार्रवाही कर रहे है। मै प्रेसीडेन्ट अयूब से कह देना चाहता हूँ कि उन्होने जो रास्ता अपनाया है, उसके परिणामो पर भी वे जरा सावधानी से विचार कर ले। अब तक कच्छ की सीमा पर पाकिस्तानी आक्रमण से अपने बचाव के लिए हमने केवल स्थानीय सुरक्षात्मक कारवाई ही की है। भारत की ओर से बदले मे कोई बड़ी कारवाई नही की गई है। इसीलिए यह आक्रमण एकतरफा है। हमने सयम से काम लिया है, लेकिन अगर पाकिस्तान की सरकार अपनी आक्रामक कारई वापर ही आमादा रहती है

तो भारत सरकार के सामने इसके सिवा और कोई चारा नहीं रह जाएगा कि हम स्वयं ही यह फैसला करें कि हमे अपनी मातृभूमि को अखण्डता को रक्षा का सबसे अच्छा तरीका क्या है ?

मै एक बार फिर भारत सरकार की स्थिति स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। अगर साथ ही लड़ाई से पहले की स्थिति कायम करने का समझौता हो जाता है, तो हमें युद्धविराम का आदेश देने मे कोई आपत्ति नहीं होगी। पूर्व स्थिति कायम होने के बाद हम पाकिस्तान के प्रतिनिधियो के साथ मिल-बैठकर भूतपूर्व सिध प्रान्त तथा कच्छ राज्य के बीच की सुनिश्चित सीमा के अनुसार सीमाकन के बारे में बात करने के लिए तैयार है। साथ ही मै यह भी जोरदार और स्पष्ट शब्दों मे कह देना चाहता हूँ कि भारत सरकार की नजर मे कच्छ के रन के प्रदेश के बारे में कोई विवाद नहीं है। मै यह भी स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि प्रेसीडेन्ट अयूब ने पूरे युद्ध को जो धमकी दी है, उससे हम अपने उचित कर्त्तव्य से विचलित नही होगे। विश्व मे कोई भी सरकार यह गवारा नही कर सकती कि उसका कोई पड़ौसी देश जबरन उसकी भूमि छीनकर अपने मे मिला ले। भारत सरकार वर्तमान स्थिति में अपने उत्तरदायित्वों को भलीभांति समझती है और उन्हे निभाने के लिए भी दृढ़ सकल्प है।

इस समय हमारी आजादी पर वास्तविक खतरा है और उसका मुकावला करने के लिए हमे अपने सभी साधनो और शक्ति से काम लेना है। हम आर्थिक विकास की कुल योजनाओं को त्याग सकते है, लेकिन अपनी रक्षा-व्यवस्था को किसी भी रूप मे कमजोर नही होने देगे।

जनता मे सच्ची एकता होनी चाहिए। समाजविरोधी तत्व जो अफवाये उड़ाना चाहते है, उन्हे हमे कदापि सहारा नही देना चाहिए। मुझे यह जानकर बड़ी शक्ति मिली है कि हमारी जनता का हौसला बड़ा बुलन्द है और आज प्रत्येक भारतीय अपनी मातृभूमि की रक्षा मे हर प्रकार का बलिदान देने के लिए तैयार है।

कच्छ का रन भारतीय प्रदेश रहा है और आज भी है। स्वय पाकिस्तान के अनुसार यह क्षेत्र हमारे कब्जे मे रहा है। यद्यपि श्री भुट्टो भले ही यह कहे कि यह क्षेत्र मुखालिफाना कब्जे मे रहा है। अब पाकिस्तान इस प्रदेश को जबरन हड़पना चाहता है। हम ऐसा नही होने देगे। विश्व मे किसी भी देश की सरकार ऐसा नही होने दे सकती। अब तक हमने बड़े सयम से काम लिया है, लेकिन अब हमारे सब्र का प्याला भर चुका है।

मै इस कठिन स्थिति पर कुछ और नही कहना चाहता। यह हमारे देश और जनता के लिए परीक्षा की घड़ी है। मै भारतवासियो से कहना चाहता हू कि कि वे सगठित रहे, अपने महान् देश पर गर्व करें, और अपने काम सच्ची लगन से करते रहे, पाकिस्तान के झूठे प्रचार पर ध्यान न दे और अपने आप पर तथा अपने महान् देश मे आस्था रखे। अन्त मे सदन से मेरी प्रार्थना है कि वह मातृभूमि की रक्षा मे सगठित रहने का सकल्प करे।

२७ मई : समर्पण का दिन

२७ मई भारत की जनता के लिए सदैव शोक दिवस रहेगा। पिछले वर्ष हम इस दिन अपनी बहुमूल्य निधि खो बैठे।

जवाहरलाल जी हमारे बीच से ऐसे समय मे उठ गये जब उनकी देश को बेहद जरूरत थी। राष्ट्रपिता द्वारा प्रतिपादित अहिंसा के सिद्धान्त से शताब्दियों पुरानी दासता से मुक्ति दिलाना मात्र उनका अन्तिम लक्ष्य नही था। स्वाधीनता का आविर्भाव उनकी लम्बी और दुरूह यात्रा मे एक मील का पत्थर था। अधिक भयकर सघर्ष किया जाना एव उसमे विजय प्राप्त करना बाकी था। अशिक्षा और अज्ञान, गरीबी और अभाव, रोग और अन्धविश्वास के खिलाफ अथक रूप से लडाई जारी रखना जरूरी था। सामाजिक अन्याय को दूर करने और सबल द्वारा निर्बल का शोषण रोकने की आवश्यकता थी। देश के लाखो लोगो के लिए जिन्हे जीवन की मूल आवश्यकता पर्याप्त मात्रा मे भी उपलब्ध नही है, भोजन, वस्त्र और आवास की व्यवस्था करने की दिशा मे तुरन्त कदम उठाने की आवश्यकता थी। जन-साधारण और समाज के पिछले वर्ग की स्थिति मे सुधार लाने के लिए बहुत कुछ किया जाना शेष था। जवाहरलाल जी को इस भारी दायित्व और तत्सम्बन्धी कठिनाइयो के बारे मे कोई भ्रम नहीं था। लेकिन वह अपने देशवासियो और भारत के उज्ज्वल भविष्य मे अटूट विश्वास रखते थे। उनका कभी कभी उन्नति की धीमी गति को देखकर बेचैन हो जाना स्वाभाविक था, क्योकि वह अपने लक्ष्य की पूर्ति अपने जीवन काल मे ही करने के लिए इच्छुक थे, लेकिन कराल काल ने उन्हे अपने विचारो को कार्यान्वित करने का पर्याप्त समय नही दिया।

देश और विदेश मे हाल मे हुई कुछ घटनाओ से, जवाहरलाल जी अपने जीवन काल मे ही जिन लक्ष्यो के लिए सघर्ष करते रहे उनकी आवश्यकता आज स्पष्ट हो गयी है—राष्ट्रीय एकता स्थापित करने और कायम रखने की परम आवश्यकता आज समझी जाने लगी है। भारत जैसे विशाल देश मे जिसमे विभिन्न वर्गों के लोग रहते है, जो विभिन्न भाषाये बोलते है और जिनके रीति-रिवाज भिन्न है, अनेक समस्याओ का होना स्वाभाविक है। लेकिन इस अनेकता मे भी बुनियादी एकता हर कीमत पर कायम रखने की आवश्यकता है। इस एकता को कायम रखने मे हमारे असफल रहने के माने होगे हमारी आशाओ और भविष्य की आकाक्षाओ पर तुषारपात और इससे हमारे अस्तित्व को भी खतरा पैदा हो सकता है। विघटनकारी प्रवृत्तियाँ, साम्प्रदायिकता, प्रातीयता, सकीर्ण फिरकापरस्ती और गुट-बाजी का हमारे समाज मे कोई स्थान नही। हम एक बहुत मुश्किल दौर से गुजर रहे है और यदि जवाहरलाल जी के स्वप्न को साकार करना है अर्थात् भारत को सुख-सम्पन्न बनाना है तो हम से हरेक को कधा लगाना होगा।

हमे एक लम्बा सफर तय करना है, इसलिए हम रास्ते मे सुस्ता नही सकते। २७ मई का दिन हमारे लिए शोक करने का दिन नही होना चाहिए बल्कि यह एक समर्पण का दिन है। इसलिए हमे इस पवित्र दिवस पर जवाहरलाल जी के आदर्शो के लिए, जो उन्होने राष्ट्र के सामने रखे और जिनकी पूर्ति के लिए वह आखिर दम तक धैर्य और साहस के साथ सघर्ष करते रहे, समर्पण करना चाहिए।

२७ मई १९६५ को रामलीला मैदान मे श्री जवाहरलाल नेहरू की प्रथम बरसी के अवसर पर दिया गया भाषण

ऊँचे दर्जे का इन्सान

आज एक साल पूरा हुआ पण्डित जी को हमसे अलग हुए। लेकिन उनकी याद ज्यों की त्यों बनी हुई है और वे हमे हर चीज मे नजर आते है। वे खुद मौजूद न हों, लेकिन उनके विचार, उनके ख्यालात, उनका काम करने का ढग और उनके सामने जो जिन्दगी का लक्ष्य और मकसद था, वह सब आज हमारे सामने है। उसकी एक तस्वीर है, एक जीती-जागती तस्वीर और इसलिये आज हम इस दिन को चाहे मनाये इस खयाल से कि वो हमारे बीच मे नही है, लेकिन मुनासिब यह लगता है कि हम यह समझे कि जवाहरलालजी हमारे बीच में है, मौजूद है और पूरी तरह से मौजूद है। यह जो जवाहर-ज्योति आपके सामने जल रही है, यह भी इस बात की यादगार है कि जो दिया उन्होने जलाया, वह अब भी जल रहा है।

उनकी याद हमेशा ताजी रहेगी और हमारे दिल और दिमाग मे बनी रहेगी। हमारी आजादी की लड़ाई के जवाहरलालजी सबसे बड़े सिपहसालार थे—गाधीजी के बाद। अगर किसी एक आदमी ने मुल्क की आजादी मे, स्वतन्त्रता की लडाई में, सबसे ज्यदा हिस्सा लिया और ४५ करोड़ आदमियों का नेतृत्व और उनकी रहबरी की, तो वह जवाहरलालजी थे और उनकी सिपहसालारी में, उनके नेतृत्व में देश आगे बढ़ता चला गया और जो भी त्याग और कुर्बानी की मांग उन्होने की, उससे देश ने कभी मुँह नही मोड़ा, उसमे आगे बढ़ते चले गये और आज उनकी यह देन है कि हम अपने मुल्क में आजाद है और अपने देश की हुकूमत हमारे हाथ मे है। आजादी तो मिली, लेकिन आज उस आजादी की रक्षा और हिफाजत की बात हमारे सामने सबसे बडी है। आज एक बड़ा सवाल हमारे सामने पेश है कि जो हम एक आजाद मुल्क है और हमारी जो एक सोवरेटी तयशुदा है, एक मानी हुई है, उस पर क्या किसी तरह की कोई आच आ सकती है? इसलिये जिस चीज को जवाहरलालजी ने हिन्दुस्तान को दिया, अब हमारा फर्ज यह है कि उस चीज की हिफाजत, उसकी रक्षा हम पूरी ताकत और पूरी शक्ति के साथ करे।

अभी आप जानते है कि थोड़े ही दिन पहले कच्छ मे पाकिस्तान की तरफ से हमला हुआ और उस हमले का हमने मजबूती के साथ मुकाबला किया। हम जानते है कि अगर मुकाबले की बात आये, तो मे आज इस सिलसिले मे कोई बहुत ऐसी टक्कर की बात नही कहना चाहता, लेकिन मैं जानता हूँ कि हमारा मुल्क, हमारा देश उसका जवाब कितनी मजबूती और कामयाबी के साथ दे सकता है। हम जवाहरलालजी के रास्ते पर चलते हुए इस बात को नही भूल सकते कि अगर दुनिया मे लड़ाई बच सकती है, तो हमे उसे बचाना चाहिए। वार, जग, महासमर ये किस को तबाह करती है और किसको बरवाद करती है? आखिर ये थोडे से पालिटीशियन्स, राजनीतिक क्षेत्र मे काम करने वाल नेतागण या गवर्नमेट में बैठे हुए ओहदेदार लोग, पदाधिकारी ये लड़ाई की वाते करते है, लेकिन तबाही और बर्बादी जनता की होती है, आवाम की होती है, साधारण लोगो की होती है। इसलिये

एक तरफ ना हमारे सामने यह खयाल है कि ये पालिटोशियन्स अगर सिर्फ लड़ाई लड़ना चाहते हैं और उसको बढाना चाहते हैं, आज दुनिया मे कोई लड़ाई आम तोर पर महदूद या सीमित लड़ाई नही रहने वाली है, आज की लड़ाई से दुनिया की लडाई बन जाएगी और इसलिये एक वर्ल्ड वार एक दुनिया को अगर लड़ाई नहीं बचा सके, तो हमारे लिये यह सोचने की बात होती है कि हम वह चीज करे या न करें और आप जानते है कि जवाहरलालजी ने हमेशा शाति और सुलह का रास्ता, अगर मुनासिब समझा, मुल्क की आजादी के खयाल से भी मुनासिब समझा तो उन्होने उस रास्ते को अपनाया और उस रास्ते को देश को मानने के लिये कहा। हमारे इस झगडे मे झगड़ा हमारी राय मे बिल्कुल साफ है कि रेन आफ कच्छ, यह जो कच्छ की खाडी है, यह पूरा हिन्दुस्तान का पूरा हिस्सा है, उसका टुकडा है, और उसमे किसी तरह का कोई हक या अधिकार पाकिस्तान का नही बनता। लेकिन यह आर सही है कि उसके काफी हिस्से को डिमारकेट नहीं किया गया है, सरहद की लाइन नही खींची है जो हमारी बाते उस सिलसिले मे १९६० मे पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के बीच मे हुई थी, उसमे यह तय हुआ था कि हम उसमे बातचीत आपस मे करेंगे और बातचीत करके यह जो एक लाइन है, सरहद की वह खीची जाएगी। लेकिन हमारे याद दिलाने के बावजूद भी पाकिस्तान ने उस तरफ कोई ध्यान नही दिया और यक-ब-यक उस इलाके मे उन्होने हमला किया। अब भी हम इस बात को मानने के लिए तैयार हैं कि अगर इस मसले का फैसला पाकिस्तान चाहता है, तो उसे उस खाडी को, उस रैन आफ कच्छ को बिल्कुल खाली कर देना होगा। उसे चाहे विथारबेट हो, चाहे कजरकोट हो, वहाँ से उसे हटना होगा, वहाँ से उसको अपनी फौज हटानी होगी। यह एक साफ बात है। मैने इस चीज को न कभी छुपाया और न कभी दबाया। लेकिन जैसा मैंने कहा कि अगर इस जरिये से, इस तरीके से इस मसले को हम बात-चीत से हल कर सके, तो हमे उसमें एतराज नहीं। लेकिन यह ठीक है जैसा मैंने पहले कहा मुल्क की इज्जत और शान को कायम रखते हुए अगर हम शाति और सुलह से इस मसले को हल करते हे तो हमे उससे हटना नही चाहिये। अपनी जो बेसिक पालिसी है और नीति है, उससे हमे भागना नही चाहिए। हमारी बात चल रही हैं और हम नही जानते कि उसका फैसला क्या होगा। कुछ उसमे देर लग गयी। मेरा ख्याल था कि ये बातें जल्दी तय होगी और जब मैं रूस जा रहा था, तब मुझे ऐसा मालूम होता था कि मेरे जाने के एक-दो दिन बाद ही इस मसले का एक आखिरी फैसला हो जाएगा, मगर बहुत सी दिक्कते आयी और उसकी वजह से ये बात कुछ बढती ही गई और मुझे अफसोस है कि अब तक किसी आखिरी बात पर हम नही पहुँचे। लेकिन इसमे दो-चार रोज की देर भी लगे, तब भी हमे इस बात से, इस रास्ते से नहीं हटना चाहिये, जो रास्ता कि सही और माकूल मानते है। यह कहना कि हम तमाम और सरहदो का सवाल इस कच्छ के सवाल के साथ शामिल कर दे यह बात हमे ठीक नही लगती। (जहाँ भी बार्डर्स की हमारी दिक्कते है पाकिस्तान से हम उस सब पर बातचीत करने के लिए और उसको हल करने के लिए तैयार है। यह हमारा फैसला रहा है और आज भी वह फैसला है।) लेकिन यह कहा जाय कि कच्छ के फैसले के साथ हम यह भी शामिल करे कि हम तमाम और बार्डर्स के फैसले भी करेंगे साथ ही साथ, यह बात यानी इसके साथ जोडना यह मुनासिब नही मालूम होता। कच्छ का मसला एक अलग मसला है, एक अलग सवाल है। वह हमारे सामने आज आया है। उस पर आज लडाई हुई, उसके बारे मे बाते हो रही है। हमे उसका फैसला अलग से करना है।

लेकिन मै आपसे कहना चाहता हूँ कि जब मैं कराची गया था और प्रेसीडेंट अयूब से मिला था, उस वक्त मैंने उनसे कहा था कि हम और दूसरे सवालों की बाते करते है, लेकिन सबसे पहला सवाल तो यह है कि आज जो सरहदों पर हमारे बार्डर्स पर झगड़े होते है, जो लोग मारे जाते है, या मरते है, उसको हमें रोकना चाहिये और ये बार्डर्स के मामले, सरहद के मामले हमे आपस में बैठकर बात-चीत करके तय करने चाहिए और मुझे खुशी है कि प्रेसीडेंट अयूब ने उस बात को बहुत अच्छी तरह से माना। मुझे भी इस बात की परेशानी है कि बेगुनाह लोग मरते है, बेगुनाह लोगों को चोटे पहुँचती है, निर्दोष लोग मारे जाते है, लिहाजा इस सवाल को हमें हल करना चाहिये, लेकिन फिर उनकी तरफ से कोई बात आई नही। हो सकता है उनके इलैक्शंस, चुनाव हो रहे थे। जो कुछ भी हो, लेकिन वह कोई बात नही आई।

आज भी मै कहता हूँ कि हमारी पालिसी, हमारी नीति यह है कि हम अपने बार्डर्स के सवालों को शांति के साथ हल करना चाहते है। जो सन् १९६० में हमारा फैसला हुआ था, उस फैसले के मुताबिक हम बातचीत करने को तैयार है, लेकिन उसको कच्छ के साथ जोडना, मिलाना इस सवाल के साथ, वह एक मुश्किल बात है। उसके साथ जोड़कर एक काम्पलीकेशन, एक गुत्थी पैदा करने की बातें है, तो हमें अफसोस है, हमे जरा मुश्किल मालूम होता है कि हम उस बात को माने। तो ऐसी स्थिति मे आज हमारे और आपके सामने एक बड़ा सवाल अपनी देश की हिफाजत, रक्षा करने का है। अयूब साहब लड़ाई लड़ने की बाते करते है। इधर दो-तीन उनके व्याख्यान, तकरीरे हुई है, जिसमे उन्होने कुछ-एक धमकियां दी हैं हिन्दुस्तान को। हम धमकियां तो देना नहीं चाहते, क्योंकि उस तरह कि भाषा और जुबान का इस्तेमाल करना न उन्हे जेबा देता है न हमे शोभा देता है। आज पाकिस्तान के अखबार, आज पाकिस्तान के लीडर, आज वहाँ के मिनिस्टर जिस तरह की बातें कर रहे हैं, जिस तरह की नफरत पैदा कर रहे है, वे ऐसी बाते है, जिनसे किसी को फायदा पहुँचने वाला नहीं है। लेकिन में आपसे यह निवेदन करना चाहता हूँ कि अगर अयूब साहब ऐसी बाते कहते रहे, तो हम भी जानते है कि हम अपनी जिम्मेदारी को कैसे अदा कर सकते है।

मै आपसे यह दरख्वास्त करना चाहता हूँ कि आज मुल्क को हर बात के लिये तैयार रहने की जरूरत है। हम नही जानते कि क्या हालत पैदा होगी और उसमे फिर आपको, इस मुल्क के रहने वाले तमाम बहनो और भाइयो को एक बड़ी मजबूती से, बड़ी दिलेरी से काम करना होगा। अपने शहर और नगर की हिफाजत और रक्षा के लिये जी जान से लगना होगा, आपको हवाई जहाजों से और बमो से फिर डरना और घबड़ाना नही होगा। आपको हजारों और लाखो की तादाद मे देश के सिपाही के रूप मे, मै सरहदो पर लड़ने की बात नही कहता हूँ, सिपाही के रूप मे खड़ा होना होगा। सीना-ब-सीना कन्धे से कन्धा मिलाकर जो देश की मांग हो उसको आप पूरा करने के लिये तैयार हों। यह भी मै जानता हूँ कि हमारी फौजों की ताकत, उसके पीछे असल में देश की ताकत है, देश का एका है, देश का इत्तफाक है, देश का मेल है, अगर हम मजहब के नाम पर लडें, धर्म के नाम पर लड़ें, चाहे भाषा और जबान के नाम पर लड़े तो यह तो देश को कमजोर करने वाली बाते होगी। जवाहरलाल जी ने जैसा पहले भी कहा गया उनकी सबसे बड़ी देन यह थी कि उन्होंने इस मुल्क को उत्तर से लेकर दक्षिण तक और पूर्व से लेकर पश्चिम तक जोड़ा, बाँधा, एक मे मिलाकर रखा। धर्म, मजहब, जांत-

प्रांत, सूबा, प्रदेश, जुबान, भाषा इनकी लड़ाइयो को उन्होने रोका, उसको बचाया और सारे देश को एक नेशनलिज्म का, कौमियत का, राष्ट्रीयता का पाठ पढाया। आज वह चीज हमारे सामने है, खास-तौर पर जबकि हमे और दूसरे खतरे, दूसरे सकट नजर आते है। इसलिये मै आपसे यह निवेदन करना चाहता हूँ कि तमाम हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, पारसी जो भी आज हमारे देश मे अलग-अलग धर्म और मजहब के मानने वाले हैं उनको आज हर-एक को आपस मे मिलकर प्रेम और मुहब्बत से रहना होगा। कभी-कभी कुछ लोग इसमे एक दिक्कत पैदा करना चाहते है। साम्प्रदायिकता और कम्यूनिज्म को बात बढाना चाहते हैं जिससे आपस मे बजाय मेल के मन-मुटाव पैदा हो। एक ऐसी फिजा, एक ऐसा वायुमण्डल बनाना चाहते है। मै यह कहूँगा कि वह देश के साथ न्याय नही, इन्साफ नहीं एक बड़ी जबरदस्त बे-इन्साफी कर रहे है। इसलिए आज इस बात को जरूरत है कि हम आपस मे काफी मेल और मुहब्बत पैदा करे। मुझे कोइ शक नही है कि इस देश की चाहे मैजोरिटी हो, चाहे मायनारिटी, चाहे अक्सरियत हो, चाहे बहुमत हो, चाहे अल्पमत हो ये सब आज अपने दिमागो मे, दिलो मे यह बात तय किये हुए है कि देश को आजादी की रक्षा के लिए उनसे जो भी बन पडेगा उसको पूरा करेगे। यह देश कभी झुकने वाला नही है।

भाषा और जबान के लिये मै कुछ ज्यादा कहना नही चाहता। लेकिन उस पर अभी हमने विचार किया, गवर्नमेट ने गौर किया और हम आखिरी फैसले पर नही पहुँचे हैं। हम उस पर कुछ राय सूबो और प्रदेशो से कर रहे हैं लेकिन हमारी कोशिश यह है कि हम इस तरह के प्रस्ताव रखे जिससे कि जहाँ तक हो सके हम सारे देश को अपने साथ ले जाये और यही एक रास्ता है इस मुल्क को एक डैमोक्रेटिक तरीको से चलाने का। जहा तक हो सके हम ज्यादा से ज्यादा लोगो को अपने साथ ले जाएँ और इसमे भी इसीलिए मैंने कहा कि भाषा, जुबान और लैंग्वेज के मसले पर भी हम जल्दी कुछ फैसले करेगे और मैं उम्मीद करता हूँ कि किसी भी हमारे सूबे के रहने वाले भाई इस भाषा और जबान के सिलसिले मे नाराजगी और कडूवापन पैदा नही करेगे। आज ऐसी स्थिति भी है कि जिसमे इस चीज को और ज्यादा बचाना है।

मै आपका वक्त ज्यादा नही लेना चाहता लेकिन जवाहरलालजी ने जो एक बात अपनी जिन्दगी मे सबसे बडी की वह यह थी कि हिन्दुस्तान को दुनिया के नक्शे पर रखा। उन्होने एक अपनी वैदेशिक नीति, फारन पालिसी ऐसी बनाई जिसने दुनिया को एक रास्ता दिखलाया और आज उसी पालिसी के नाते ही मै रूस गया और रूस में वहाँ के लोगो का, वहा की गवर्नमेट के अधिकारियो और अफसरो का, प्राइम मिनिस्टर का, मिनिस्टर्स का उन सबका एक बड़ा प्रेम मिला। यह ठोक है कि एक तबदीली हिन्दुस्तान मे हुई, पन्डितजी नही रहे और वहाँ भी रूस मे भी एक परिवर्तन, एक तबदीली हुई, तो हम दोनो ही एक मायने मे गवर्नमेट मे नये थे। फिर भी रूस मे जो हमारी बाते हुई बड़ी साफ और बहुत दोस्ताने की, मित्रता की बातें हुई। मुझे यह बात अच्छी लगी कि वहाँ कोई तिकडम और तरकीब की बाते नही होती, जो बात उनको ठीक लगी वह उन्होंने मानी, जो मुझे ठीक लगी वह मैने मानी, जो उनको ठीक नही लगी उन्होने साफ कहा कि हमे इसमे एतराज है। तो एक उस तरह की डिप्लोमेसी जो कि तरकीबो की डिप्लोमेसी होती है वह चीज मुझे रूस मे देखने को नही मिली और इनका मुझ पर एक जबरदस्त असर पड़ा। हमारी पालिसी, हमारी नीति, हमारी नान-एलाइनमेंट की पालिसी मे हम किसी गुट मे पड़ना नही चाहते—चाहे ईस्टर्न ब्लाक हो, चाहे वैस्टर्न

लड़ाई एक हाथ से नही बजती है, इसमें दोनो हाथ बजते है तभी लड़ाई बजती है। मगर हमे इस बात को—याद रखना होगा कि एक-एक आदमी जो हमारे देश का एक-एक रहने वाला है, देशभक्ति उसके अन्दर कूट-कूट कर भरी हुई हो और उसके दिल मे इस बात का फैसला हो कि देश जो भी चाहेगा, जो भी त्याग, जो भी बलिदान चाहेगा उसको हम देने को तैयार रहेगे और अपने देश की हिफाजत, देश की सुरक्षा को मजबूत बनाएगे। यह सदेश है, यह मैसेज है, जवाहरलाल जी का और उस मैसेज को, उस सदेश को हमे आगे ले जाना है। हमे उस मजबूती से कायम रखना और बनाये रखना है। जवाहरलाल जी एक हिन्दुस्तान के ही नागरिक नही बल्कि सारे दुनिया के सिटीजन बन गये थे। दुनिया के किसी भी कोने मे, किसी भी देश मे जरा भी तकलीफ हो तो उनके दिल में चोट लगती थी मगर फिर भी अपने देश, अपने मुल्क के लिए सदा ही उनके मन मे यह बात रही कि भारत बढे, हिन्दुस्तान तरक्की करे, यहा की गरीबी मिटे, यहां की बेरोजगारी दूर हो।

आज यह बड़ा सवाल हमारे सामने है। हम दोहराते है इसे दोहराते रहेगे जब तक कि हम अपने देश की हालत को सुधार नही लेते, बना नही लेते और हमे भरोसा है। आज हम उधार लेते हैं दूसरे मुल्को से और कर्ज अपने प्लान, योजनाओ के लिए लेते है, मदद हमे मिलती है हम उनके लिए अनुगृहीत है। मगर हमे याद रखना होगा कि हमे अपने हाथ-पैर पर खड़ा होना है, कुछ दिनो मे हमको यह सहायता और मदद बन्द करने को ओर जाना है। हम चाहे कम खा कर रहे, कम पहन कर रहे लेकिन अपने देश की सुरक्षा और अपने देश को बढाना अपने हाथ-पैर से करे ताकि हम कर्ज से बच जाए। इस ओर हमे पहुँचना है और एक जो काम पडा और यह सदेश हमारे नेता जवाहरलाल जी छोड गये उसे भी हमे करना है। इस अवसर पर मै यही श्रद्धाजलि अर्पित करता हूँ और हमेशा करता रहूँगा। जो बडा रास्ता ऊँची मजिल उन्होने हमारे सामने रखी उस पर हम चलेगे वहा हम पहुँचेगे यही मुझ आशा है, मुझे भरोसा है और मै जानता हूँ कि हिन्दुस्तान का एक-एक रहने वाला इस रास्ते को मानता है और उस रास्ते पर चलेगा।

लन्दन मे १७ जून १६६५ को भारतीय पत्रकार संघ ने प्रधान मन्त्री, श्री लालबहादुर शास्त्री के सम्मान मे प्रेस-भोज का आयोजन किया। भोज मे संसार भर के लगभग २५० पत्र-प्रतिनिधि और अन्य विशिष्ट व्यक्ति आमन्त्रित थे। प्रेस-भोज मे दिया गया भाषण।

विश्व में शांति कायम करना हमारा लक्ष्य है

जैसा कि आप लोग जानते है, मैं अभी कनाडा के ५ दिन के दौरे से लौटा हूँ। यद्यपि थोड़े समय में मैं उस विशाल देश के बहुत थोड़े भाग को ही देख सका, पर मैं उसकी सुन्दरता और कनाडा की सरकार तथा लोगों की निष्ठा और मित्रता से अत्यधिक प्रभावित हुआ। कनाडा के प्रधान मन्त्री लिस्टर पियरसन और उसके सहयोगियो से मेरी बातचीत अत्यधिक मित्रतापूर्ण वातावरण मे हुई और हम लोगों ने जिन महत्वपूर्ण विषयो पर बातचीत की, उनके बारे मे हमारी राय एक थी। मै समझता हूँ कि कनाडा और भारत सरकार के विभिन्न भागों में शान्ति कायम रखने के लिए आज की तरह ही भविष्य में भी सहयोग करेंगे।

राष्ट्रमण्डल प्रधान मन्त्री सम्मेलन मे हिस्सा लेने के लिए लन्दन आने पर मुझे अत्यधिक खुशी है। मै पहली बार इस सम्मेलन मे भाग ले रहा हूँ। मुझे आशा है कि इस सम्मेलन मे जो विवाद होगा, उससे बहुत से तनावों और कठिनाइयों को दूर करने में मदद मिलेगी।

राष्ट्रमण्डल प्रधान मन्त्री सम्मेलन के प्राय: तुरन्त बाद अलजियर्स मे अफ्रीका-एशिया सम्मेलन होगा। १९५५ में बाडुंग में जो पहला अफ्रीका-एशिया सम्मेलन हुआ था, भारत उसके आयोजन कर्ताओं मे था। अतः भारत इस सम्मेलन को सफल बनाने के लिए हर सम्भव उपाय करने को तैयार है। दुर्भाग्य की बात है कि सम्मेलन मे सदस्यो के प्रवेश के बारे मे अभी से मतभेद शुरू हो गये है। यदि मित्रतापूर्वक इस मामले का निपटारा नही होता, तो कठिनाई हो सकती है। अफ्रीका और एशिया के देशों के सामने अनेक बड़ी-बड़ी कठिनाइया है और हम आशा करते है कि यह सम्मेलन इस समस्याओ के सुलझाने के बारे में मार्ग-दर्शन करेगा। यह भी आवश्यक है कि इस सम्मेलन मे दो देशो के झगड़ो पर विचार नही होना चाहिए, क्योकि इससे बेकार का विवाद बढेगा। हमारी आज की सबसे बड़ी समस्या शान्ति कायम रखने की है। निशस्त्रीकरण की समस्या इससे सम्बद्ध है। इसके अलावा उपनिवेशवाद और जातीय भेदभाव को समाप्त करने तथा आर्थिक विकास और सहयोग अन्य महत्वपूर्ण विषय है। अफ्रीका और एशिया के प्राय: सब देश पूरी तरह विकसित नही है और उन्हे मिलकर यह निश्चय करना है कि वे अपने लोगो का रहन-सहन ऊँचा करने के सघर्ष मे एक-दूसरे की क्या सहायता कर सकते है।

इस समय ससार के सामने सबसे बड़ी समस्या वियतनाम की है। निस्सदेह इस समस्या पर राष्ट्रमण्डल प्रधान मन्त्री सम्मेलन और एशिया-अफ्रीका सम्मेलन, दोनो मे विचार होगा। इस समय इस समस्या का कोई हल सुझाना बड़ा कठिन है, क्योंकि इस समय दोनो पक्ष अड़े हुए है, लेकिन ससार के अन्य देशो को तनाव घटाने के लिए अपने प्रयास जारी रखने चाहिए। यह कोशिश होनी चाहिए कि सम्बन्धित पक्षों की बातचीत शुरू हो। यदि यह काम हो जाता है, तो तनाव अपने आप कम हो जायगा मैं समझता हूँ कि यदि उत्तर वियतनाम पर विमानों से बम वर्षा रोक दी जाय, तो यह बात सहायक सिद्ध होगी, क्योकि इस बम वर्षा से बुरी स्थिति और बिगड़ सकती है। मै आशा करता हू कि उत्तर वियतनाम भी तनाव घटाने के लिए प्रयास करेगा। एक बात पूरी तरह निश्चित हैं कि वियतनाम की समस्या को लड़ाई से नही सुलझाया जा सकता। दोनो ओर से लड़ाई बन्द करना आवश्यक है। मैं आशा करता हूँ कि १७ तटस्थ देशो की अपील की उपेक्षा नही होगी, क्योकि इसके अलावा शान्तिपूर्ण निपटारे का और कोई मार्ग नही हैं।

जहा तक भारत का सम्बन्ध है, हम शान्ति से अधिक किसी अन्य बात को महत्व नही देते। कोई अन्य देश ऐसा उदाहरण नही दे सकता, जैसा भारत ने अपनी शान्ति प्रियता की निष्ठा को व्यक्त करने के लिए आणविक हथियार न बनाने का निश्चय करके दिया है। यद्यपि इस निश्चय के फलस्वरूप हमारे सामने क्या खतरे आ सकते है, यह बात भी पूरी तरह स्पष्ट है। हमारी उत्तरी सीमा पर जो स्थिति है, उसे देखते हुए यदि हम अपनी रक्षा के लिए अणु अस्त्र बनाते, तो इस बात को पूरी तरह समझा जा सकता था। लेकिन हमारी या दो ऐसे अन्य देशो की इस कार्रवाई से अणु अस्त्र बनाने की होड और तेज होती और यह एक ऐसी होड है, जिसे चालू हो जाने पर रोकना बड़ा मुश्किल है।

भारत अपने देश के लोगो का रहन-सहन ऊचा करने के विशाल काम मे लगा है। हमारे देश के ४६ करोड लोग ससार की कुल आबादी का एक बड़ा हिस्सा है और इनकी आर्थिक स्थिति मे सुधार के लिए जो भी काम होगा, उससे विश्व समाज को लाभ होगा। इस कार्य की अत्यधिक विशालता के बावजूद हमने इसे स्वतन्त्रता और सामाजिक न्याय के वातावरण मे पूरा करने का निश्चय किया है।

हमारे देश की आबादी इस समय ४६ करोड से अधिक हो रही है और हमारा यह लक्ष्य है कि अगले पाच वर्षो मे प्रत्येक बच्चे को १४ वर्ष की उम्र तक स्कूलो मे मुफ्त शिक्षा मिले। प्रत्येक परिवार को चिकित्सा और मकान की न्यूनतम सुविधा उपलब्ध हो और प्रत्येक व्यक्ति को पर्याप्त भोजन और कपडा मिले। आप मे से बहुतों को ये बहुत सामान्य लक्ष्य मालूम पडेगे और वस्तुत ये हैं भी। पर इन लक्ष्यो की पूर्ति के लिए भी हमे अत्यधिक सघर्ष करना होगा और अपने सीमित साधनो मे उद्योग और कृषि की भरपूर उन्नति करनी होगी।

मै अकसर यह आलोचना सुनता हूँ कि हम अत्यधिक व्यय साध्य और विशाल योजनाओ पर अपने सीमित साधनो का बरबाद कर रहे है। यह बात सच है कि हमारी कुछ योजनाएँ बड़ी है, पर यदि व्यापक दृष्टि से देखा जाए, तो यह अपेक्षाकृत साधारण है। आबादी की अत्यधिक वृद्धि के फलस्वरूप केवल खेतो से ही काम नही चल सकता, चाहे हम इसे कितना भी विकसित क्यो न करे और इसे विकसित करने का हमारा दृढ़ निश्चय है भी। पर यदि हमे अपने लोगो का रहन-सहन ऊँचा करना

, तो उद्योगों को बढ़ाना होगा। जैसे-जैसे हम अपने इस्पात कारखाने, परमाणु बिजलो घर, ध्वनि की गति से भो तेज उडने वाले विमान और अन्य जटिल मशीनें स्वयं बनाते जा रहे है, हममें यह विश्वास जग रहा है कि ऐसी कोई कारीगरो या शिल्प नहीं है, जिसमें हम पारंगत नही हो सकते।

कल के संसार में सर्वत्र समृद्धि होनी चाहिए और विकसित तथा अविकसित देशो का अन्तर मिट जाना चाहिए। संयुक्त राष्ट्रसंघ ने जिस विकास देश की घोषणा को है, उसमें विकासशील देशों की आवश्यकताओं की ओर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है। यदि ससार के लोग सतोष का जीवन बिता सके, यदि कला और सस्कृति का विकास हो, यदि संसार के विभिन्न देशों के लोगों का सम्पर्क बढ़े, तो यह निश्चित है कि हम युद्ध के भय से मुक्त ससार के निर्माण के अपने लक्ष्य के बहुत समोप पहुँच गये है।

'शास्त्री जी ने कहा था'

राजस्थान की सीमाओ पर हाल मे हुए संघर्ष का उल्लेख करते हुए श्री शास्त्री ने कहा था कि रेगिस्तानी इलाकों में छुटपुट कार्रवाई और घुसपैठ करके पाकिस्तान कुछ जमीन पर अधिकार दिखाने की चेष्टा कर रहा है, किन्तु उसे सफल नही होने दिया जायगा। भारत की शातिप्रियता को नोति का स्पष्टीकरण करते हुए स्वर्गीय श्री शास्त्री ने कहा था—"हम शाति चाहते है लेकिन इसलिए नहीं कि हम कमजोर है, बल्कि इसलिए कि हम शाति को देश की प्रगति तथा मानव जाति को विनाश से बचाने के लिए आवश्यक समझते है।"

एक चतुर राजनीतिज्ञ और बुद्धिमान प्रशासक की तरह वे समय की गति को पहचानते थे। उन्होंने कहा था कि आज की दुनिया मे यह संभव नही है कि एक देश दूसरे देश की भूमि को ताकत और दवाव से हड़प लें। यदि चीन और पाकिस्तान इस भ्रम मे है कि कि वे भारत की भूमि सैनिक बल से हड़प लेगे तो उन्हे निराशा ही हाथ लगेगी। भारत अपनी एक इन्च भूमि पर भी किसी देश को कब्जा नही करने देगा।

दुनिया से भी अणुबम को मिटायेंगे

१ जुलाई, १९६५ को आकाशवाणी से राष्ट्र के नाम अपील करते हुए प्रधान मन्त्री लालबहादुर शास्त्री ने देशवासियो से नए भारत के निर्माण मे पूरी तरह से हाथ बंटाने का अनुरोध किया।

आत्मविश्वास से आगे बढ़ना है

पिछली बार जब मैंने आपसे रेडियो पर कुछ बात कही थी, तबसे कई महत्वपूर्ण घटनाये घटी। कुछ घटनाओ से हमे सदमा पहुँचा और चिन्ता हुई। लेकिन कुछ दूसरो घटनाओ से हमारे मन मे एक बार फिर यह विश्वास और भरोसा पैदा हुआ कि हम एक राष्ट्र के रूप मे आगे बढ़ सकते है।

पिछले कुछ सप्ताह मे मैने कई देशों की यात्रा की है। निजी रूप से मुझे इस यात्रा से बहुत कुछ समझने और जानने का मौका मिला है। मैं जहाँ भी गया लोगो और सरकारो ने मेरे साथ सद्भाव और प्रेम का व्यवहार किया। वास्तव मे यह भारत की ४७ करोड़ जनता का स्वागत था, जिसके प्रतिनिधि के रूप मे मैं गया था। हाल की विदेश यात्राओ मे सबसे पहले मै सोवियत यूनियन गया। कई बातो में यह यात्रा सदा याद रहेगी। सोवियत सरकार और जनता के मन में भारत के लोगों के लिए दोस्ती की पूरी भावना है। उन्होने सदा कठिनाई के समय भी हमारा साथ दिया है। वे हमारे आर्थिक विकास मे ज्यादा से ज्यादा मदद देना चाहते है। सचमुच ही यह यात्रा लाभकारी रही। बाद मे मुझे कनाडा जाने और लन्दन मे राष्ट्र मण्डल प्रधान मन्त्री सम्मेलन मे हिस्सा लेने का मौका मिला। रास्ते मे एक दिन के लिए मैं काहिरा मे रुका। इन देशो मे भारत के लिए बहुत सद्भाव है। वे सब हमारे दोस्त हैं और उनके साथ हमारे सम्बन्ध जरूर ही मजबूत होगे। भारत और सयुक्त अरब गणराज्य के बीच जो गहरा दोस्ती का नाता है उसके बारे मे आप सब जानते है। मेरे लिए उसके बारे मे कुछ ज्यादा कहने की जरूरत नही है। कनाडा ने भी हमारे साथ सदा मित्रता का नाता रखा है और खासकर आर्थिक उन्नति और एटमी शक्ति के विकास मे हमे सहायता दी है। कनाडा के लोगो ने मेरा जो आदर सत्कार किया, उसका मेरे मन पर विशेष प्रभाव पड़ा।

राष्ट्र मण्डल प्रधान मन्त्री सम्मेलन का अनुभव मेरे लिए बहुत मूल्यवान था। अलग-अलग महाद्वीपो के बहुत सारे देशो की सरकारों के नेता समान हित राजनीतिक और आर्थिक मामलो पर विचार करने के लिए इकट्ठे हुए थे। हमने जो कुछ विचार किया, और जिन नतीजो पर पहुँचे, उनका जरूर ही ससार की वर्तमान स्थिति पर असर पडेगा।

मै जहाँ भी गया, मैंने देखा कि भारत की जनता का लोगो से मन मे बडा सम्मान है। भारत के लोगो को बुद्धिमान और प्रौढ समझा जाता है जो किसी स्वार्थ के लिए नही बल्कि सिद्धान्त रूप से शान्ति चाहते ह। हमारे सयम और सभल कर चलने की आदत को सराहा गया है। विदेशों मे भारत की जो तस्वीर, जो कल्पना है, वह एक ऐसे बड़े और स्थिर लोकतन्त्र की है, जिसका संसार की शान्ति के लिए बहुत महत्व है।

मैं जिन देशों में गया, उनकी आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था अलग-अलग है। फिर भी मुझ पर सबसे ज्यादा असर इस बात का पड़ा कि सब सच्चे दिल से शान्ति चाहते हैं। सोवियत संघ ने अपनी ही भूमि पर लड़ाई की भयकरता को देखा है, जिसमें लाखों करोड़ों कीमती जाने नष्ट हो गयीं। इसलिए वहाँ के लोगो का यह सोचना स्वाभाविक ही है कि फिर लड़ाई नही होनी चाहिए। कनाडा के लोगों ने भारतवासियों के साथ मिलकर दुनियां के कई हिस्सों में संयुक्त राष्ट्र के शान्ति बनाए रखने के कामों में भाग लिया है।

जिन देशो मे मै गया वे सब स्वतन्त्रता के बाद से भारत की शान्तिपूर्ण नीतियों को दिल से कद्र करते है। मैने विभिन्न सरकारों के नेताओं को बताया कि भारत ने शान्ति के रास्ते पर चलने का निश्चय किया है। लेकिन मैने यह भी साफ कर दिया है कि उसके कारण अपने देश की स्वतन्त्रता और अखण्डता को नुकसान न पहुँचने देगे। कुछ मौकों पर कच्छ-सिंध सीमा के बारे मे भारत और पाकिस्तान के झगड़े को चर्चा होना स्वाभाविक था और यह चर्चा हुई। सीमा संघर्ष के फैसले की सम्भावना के बारे मे चिन्ता प्रगट की गई। मैने अपनी बात पूरी तरह बताई और कहा कि हमें भड़काने की कोशिश के बावजूद हमने सयम से काम लिया। हम अब भी शान्ति के रास्ते पर चलने को तैयार है। लेकिन शर्त यह है कि हमसे ले लिया गया क्षेत्र खाली किया जाए।

मै जानता हूँ कि पाकिस्तान ने कच्छ की सीमा पर जो हमला किया उसके बारे मे आप सब को बहुत चिन्ता रही। हमे अफसोस है कि हमारे दोनो देशो से सम्बन्ध अच्छे नही रहे है और हमारी सीमा की चौकियो पर हथियार बन्द हमला होने से इन सम्बन्धो के लिए बड़ा खतरा पैदा हो गया है। हमने अपने देश को अखडता की रक्षा की और यह साफ कर दिया कि लड़ाई जैसी तैयारियाँ जारी रहने से हम भी ऐसी कारवाइयाँ करने पर मजबूर होगे जो हमारी आजादी के बचाव के लिए जरूरी होंगी। हमने यह भी साफ तौर पर बताया कि लड़ाई फैलने से तभी रुक सकेगी जब हमला करके लिया गया इलाका जितनी जल्दी हो सके, खाली कर दिया जाए। तब ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री श्री हैरल्ड विल्सन ने कुछ प्रस्ताव भेजे। हमने स्पष्ट कर दिया कि लड़ाई बन्दी तब तक नही हो सकती जब तक हमला करके जो क्षेत्र लिए गए है उनको खाली करने के बारे में फैसला न हो जाये और इस साल पहली जनवरी जैसी हालत फिर न हो जाये। इस सम्बन्ध में हमारी मूल नीति का ससद मे बार-बार एलान किया गया।

जैसा कि आपने आज सबेरे के अखबार में पढा होगा, आज सुबह से लड़ाई-बन्दी का समझौता लागू हो गया है। साथ ही पाकिस्तान ने इस इलाके से अपनी फौजे हटाना स्वीकार कर लिया है, अपनी ओर से हमने बता दिया है कि चूंकि हमारा लड़ाई का वातावरण बनाए रखने का कोई इरादा नही है इसलिए हम वर्तमान अगली चौकियों से अपने सैनिक हटा लेगे ताकि मुठभेड़ होने का खतरा न रहे। जहाँ तक गश्त लगाने का सम्बन्ध है दोनों पक्ष मान गये है कि इस साल पहली जनवरी वाली हालत बहाल कर दी जाये।

कच्छ के रनो मे पाकिस्तान की कोई फौजी चौकी नही होगी और पुलिस चौकी भी नहीं रहेगी। इस तरह हमले द्वारा जो क्षेत्र लिया गया था वह साफ और पूरी तरह से खाली कर दिया जाएगा। पहली जनवरी की हालत बहाल करने के लिए हमे यह मानना पड़ा कि पाकिस्तानी पुलिस डिंग-सुराई मार्ग पर जो हमारे प्रदेश मे है गश्त कर सकेगी।

समझौते के अधीन कच्छ के रन मे पाकिस्तान को केवल यही एक अधिकार मिला है कि वह एक निश्चित भाग पर सीमित रूप से गश्त कर सकेगा। जाहिर है भारतीय पुलिस करीमशाही के रास्ते छाड़वेट से कजरकोट तक गश्त करती रहेगी। यह मार्ग वियारवेट और वियोकोट से गुजरता है। हम अपनी पहले की पुलिस चौकियाँ भी दोबारा कायम कर सकेगे। इस प्रकार इस इलाके पर भारत का सिविल कन्ट्रोल पूरी तरह से पहले की तरह हो जायगा।

बहुत अच्छा हुआ कि आखिर मे समझदारी की बात पायी गई और खतरनाक हालत को काबू से बाहर न होने दिया गया। हाल की घटनाओ से यह साफ हो गया है कि ताकत के इस्तेमाल से तो समस्या सचमुच हल नही हो सकती।

देशवासियो ! मुझे झगड़ो और तनाव की बाते करने से अफसोस होता है। शान्ति मे मेरा विश्वास है क्योकि दूसरी बडी बातो के अलावा हमारे देश के आर्थिक विकास के लिए भी शान्ति का बड़ा महत्व है। हमे बीमारी, गरीबी और अज्ञान को दूर करना है। अपनी जनता की साधारण जरूरतो को पूरा करने के लिए भी हमे पैदावार बढाना है और सेवाओ का विस्तार करना है। अगस्त, १९४७ मे आजादी हासिल करने के बाद अपनी जनता को जो बचन दिया था, उसे हमे पूरा करना है हमने तब से काफी फासला तय किया है, लेकिन अभी रास्ता लम्बा और कठिन है।

कभी-कभी हमे कुछ ऐसी समस्याओं का सामना करना पडता है, जो असाध्य भी दिखाई देती है। विदेशी सिक्के की कठिनाई की ही मिसाल लीजिए। हम इतना माल बाहर नही भेज सकते, जिससे हम अपनी जरूरत का सारा कच्चा माल और दूसरी चीजे खरीद सके। हमे विदेशो से माल मँगाने पर कडी पाबन्दियाँ लगानी पडी है। ऐसा मालूम होता है कि देश को आने वाले महीनो मे कुछ ज्यादा सयम से काम लेना पडेगा और कठिनाई सहनी पड़ेगी। अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओ और मित्र देशो से हमे जो सहायता मिले, वह बहुत लाभदायक है। फिर भी हम विदेशो को माल भेज कर जो विदेशी सिक्का कमाते हैं और जितनी विदेशी मुद्रा खर्च करते है, उसमे बहुत फर्क है। हमे यह देखना है कि कैसे कम से कम समय मे, इस अन्तर को ज्यादा से ज्यादा घटाया जाए। इस प्रकार से निर्यात को बढावा देना और आयात मे बहुत कमी करनी है। हमारे कारखानो, उद्योगो के लिए यह एक मुकाबले की बात है कि वे देश मे मिलने वाली चीजो का ज्यादा से ज्यादा इस्तेमाल करे। सच तो यह है कि इतना भी काफी न होगा। पैदावार की गति को बनाए रखने, बल्कि तेज करने के लिए हमे सभी साधन जुटाने होगे और सभी तरीके खोजने होगे। मै व्यापारियो और उद्योगपतियो से कहूँगा कि वे यह सोचे कि इस कठिन हालत मे वे कैसे अपनी और देश की ज्यादा से ज्यादा मदद कर सकते है। अनाज की समस्या अब पहले जितनी कठिन नही है, लेकिन फिर भी वह हल नही हुई है। अनाज की पैदावार मे काफी वृद्धि हुई है, लेकिन हमारी आबादी भी तेजी के साथ बढ रही है।

खाद्य समस्या का एक और पहलू है, जिस पर मै खास तरह से जोर देना चाहता हूं। जहाँ हमे पैदावार ज्यादा से ज्यादा बढानी है, वहाँ खाने की चीजो की बर्बादी भी रोकनी है। जबकि हमारे हमारे देश को बाहर से अनाज मगाना पडता है, तो हमारे लिए लाजमी है कि हम अनाज का कोई दाना भी बर्बाद न होने दे। बडी-बडी दावतो और बीसो किस्म के खाने की चीजो को परोसने का यह समय नही है। होटलो आदि को भी खाने की चीजो के इस्तेमाल के बारे मे बहुत सयम बरतना होगा। आखिर मे केवल एक और बात की चर्चा करूँगा।

हम सब चाहते है कि हमारो जनता की आर्थिक दशा सुधरे। लेकिन अगर हमें इस उद्देश्य को पूरा करना है, तो हमें यह भी देखना होगा कि हम किन उपायों से काम लेते है। मेहनत और लगन से काम लेते है। मेहनत और लगन से काम किए बिना दुनियां के किसी देश ने तरक्की नही की है। सारे राष्ट्र को मिलकर दृढ संकल्प के साथ काम करने से ही सफलता हो सकती है। भारत में हमने लोकतन्त्री तरीकों से ऐसा समाज बनाने का फैसला किया है, जिसमे सबकी साधारण जरूरते पूरी हों। काम बहुत बड़ा है, हम सबको मिलकर प्रयत्न करना होगा। अपने विकास के इस दौर मे हमें अपनी पूरो शक्ति से देश की सेवा करनी है और यह तभी हो सकता है, जब हम एक होकर अनुशासन के साथ काम करें। केवल इसी तरीके से हम अपनी राजनीतिक और आर्थिक ताकत बढा सकते है। हमें भूलना नही चाहिए कि देश अपने बल पर जो कुछ कर सकता है, उसी पर उसकी इज्जत और प्रतिष्ठा निर्भर रहती है। यह काम हमारी ताकत से बाहर नही है। इसके लिए हमें अपने दिलों मे वह ज्योति जलानी होगी, जो स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय हमको प्रेरित करती थी और हमे पूरे आत्मविश्वास से आगे बढ़ना है।

मै चाहता हूँ कि आप सब ऐसे महान देश के नागरिक होने का गौरव अनुभव करें, जिसकी परम्परायें बहुत ऊँची रही है और जिसका भविष्य बहुत उज्ज्वल है। मै चाहता हूँ कि आप सब नए भारत को बनाने के लिए इस बड़े काम मे पूरी तरह जी जान से हाथ बटाएं।

परिवार-नियन्त्रण

हमारी आबादी बहुत बड़ी है-लगभग ४७ करोड़-और इससे हमारा काम बहुत अधिक बढ गया है। देश मे जो सामान तैयार होता है और जो व्यवस्था की जाती है, उसे बहुत बड़ी आबादी तक पहुंचाना होता है और यह आबादी भी स्थिर नही है। यह निरन्तर बढ रही है। हमारी आबादी हर साल १ करोड़ से भी अधिक बढती जा रही है। जो आर्थिक उन्नति हो रही है, उसका अधिकांश भाग इस तेजी से बढती हुई आबादी मे खप जाता है। इसी कारण से हमारी खाद्य समस्या भी बढ़ी है।

जिस कमाने वाले का परिवार बड़ा है। उसकी आर्थिक स्थिति भी गम्भीर है। जिन माता-पिता के अधिक बच्चे है, उन्हे अपने बच्चो को अच्छा खाना देना, कपड़े देना तथा शिक्षा देना बहुत कठिन हो जाता है।

इसलिए राष्ट्र तथा व्यक्ति की दृष्टि से भी परिवार नियंत्रण बहुत महत्वपूर्ण हो गया है। मुझे यह जानकर खुशी हुई है कि स्वास्थ्य मंत्रालय जनता को परिवार नियत्रण की शिक्षा देने के लिए परिवार नियन्त्रण सूचना सप्ताह मना रहा है। मै इस प्रयत्न की सफलता के लिए अपनी शुभकामना भेजता हूँ।

कच्छ सीमा पर पाकिस्तानी हमले के बाद १३ अगस्त १९६५ को आकाशवाणी से प्रसारित महत्वपूर्ण भाषण।

ताकत का जवाब ताकत से दिया जाएगा

लगभग एक हफ्ते पहले, सरकार को यह सूचना मिली थी कि पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर से सशस्त्र हमलावरों ने नागरिक वेश मे युद्ध विराम रेखा पार करली है और वे कई जगहों पर तोड तथा विनाश कर रहे है। इन कुछ दिनों मे हमलावरो ने पुल, पुलिस थाने और पेट्रोल-डिपो आदि पर हमला किया है और यह जाहिर है कि उन्होने एक ऐसी योजना के मुताबिक काम किया है, जिसे पाकिस्तान के उन लोगो ने तैयार किया जो इन कार्यवाहियो का सचालन कर रहे है। इसमे कोई शक नही कि यह हमारे देश पर एक ऐसा हथियारबन्द हमला है, जिस पर हल्का पर्दा पड़ा हुआ है और इसी रूप मे हमे उसका मुकाबिला करना है। हमारी बहादुर रक्षा सेना और पुलिस इस स्थिति का मजबूती और सफलता से सामना कर रही है। हमलावरो का पता लगाने के लिए फौरन कार्रवाई की जा चुकी है। कई जगहो पर मुकाबिले हुए हैं और हमलावरो को भारी हानि पहुँची है। अभी तक १२६ हमलावर मारे जा चुके हैं। हमारी रक्षा-सेना ने ८३ अफसरो और जवानो को गिरफ्तार भी किया है। हमलावरो के दूसरे दलों को घेर लिया गया है और वे पकड़े जाने वाले है। हम उन्हे हटा कर ही रहेंगे कश्मीर मे गडबड़ी पैदा करने की पाकिस्तान की सबसे हाल की कोशिश खत्म करना है। तोड़-फोड़ की कार्यवाही करने वालो से कोई मुरव्वत नही बरती जाएगी। बेशक हमे कशमीर मे लगातार सतर्क रहना पड़ेगा, क्योंकि यह मुमकिन है कि और ज्यादा गडबड़ी पैदा करने की कोशिश की जाए।

एक तरफ तो पाकिस्तान का कहना है कि उसका इस कारवाई में कोई भी हाथ नही है और दूसरी तरफ वह हमलावरो का मुख्य प्रवक्ता बन बैठा है। सारे संसार को मालूम है कि पाकिस्तान ने सन् १९४७ मे ऐसी ही हालत पैदा की थी और तब भी उसने पहले यही कहा था कि वह बेकसूर है। बाद मे पाकिस्तान को यह मानना पड़ा था कि बहुत-से हमलावर पाकिस्तान की हथियारबन्द फौज के थे।

पाकिस्तान एक कहानी गढ़ना चाहता है कि कश्मीर के रहने वाले लोगों ने विद्रोह कर दिया है। वह किसी विद्रोही कौंसिल की भी बाते करता है। ये सब पाकिस्तान की मनगढ़न्त बाते हैं। पाकिस्तान का प्रचार बिलकुल झूठा और निराधार है। जम्मू और कश्मीर के लोगो ने दृढता दिखाई है। उन्हे अभी भी याद है कि पाकिस्तानी हमलावरो ने पहले भी किस तरह तोड़-फोड़ और लूट-खसोट की थी। कश्मीर मे न कोई विद्रोह है और न कोई विद्रोही कौंसिल। वास्तव में जम्मू और कश्मीर के लोगो ने खुद ही पाकिस्तान के प्रचारको गलत साबित कर दिया है।

घटनाओं की चर्चा करनी पड़ रही है, जो दुर्भाग्य से बिहार के कुछ शहरो मे, कलकत्ते में, हैदराबाद मे और दूसरी एक-आध जगहो मे हुई है। वहाँ जो कुछ हुआ, उससे किसी का भला नही होगा। ऐसी घटनाएँ फिर नही होनी चाहिए। मै खासतौर से बहादुर सिक्खो से जोर देकर यह कहना चाहूँगा कि वे देश को दूसरी सब चीजो से ऊपर रखने की अपनी पुरानी परम्परा को कायम रखे। मुझे पूरी उम्मीद है कि वे किसी आन्दोलन या विरोध की बात नही सोचेंगे।

अगले दो दिनो मे सैकडो साल की गुलामी के बाद हमारी आजादी के १८ साल पूरे होगे। हर साल हमारी उस पीढी के सिपाही कम होते जाते है, जिसने आजादी हासिल करने के लिए जद्दोजहद की और मुसीबते सही ताकि आगे की पीढिया आजाद रह सके। हर साल उन लोगो का अनुपात बढता जाता है, जिनके लिए विदेशी हुकूमत इतिहास की पुस्तकों मे पढी जाने वाली चीज है, न कि उनके निजी तजुरबे की बात। यह बात स्कूल और कालेजो के विद्यार्थियो पर खास तौर से लागू होती है। वे भाग्यवान है कि उन्होने अपनी जिन्दगी आजादी मे गुजारी है, लेकिन यह बात अफसोस की होगी, यदि वे यह समझ ले कि आजादी तो घर की चीज है या यह भूल जाए की निरन्तर सतर्कता ही आजादी की असली कीमत है।

निस्सन्देह, हम खतरनाक समय से गुजर रहे है, लेकिन यह समय ऐसा भी है जब हमारे सामने बहुत कुछ कर दिखाने का मौका है। जो राष्ट्रीय लक्ष्य हमने अपने सामने रखे है, जिस तरह हमको अपने देश की एकता व स्वतन्त्रता को कायम रखना है, उनके लिए हमे एक होकर और अपने भविष्य मे विश्वास रखकर दृढ़ता से आगे बढ़ना चाहिए।

❁

लालबहादुर जी ने इतिहास के कठिन क्षणो मे देश की सर्वोत्तम सेवायें की। उन्होने अपने ऊपर इतना कार्य-भार ले लिया था कि वह उनके नश्वर शरीर से नही सभल सका। वह अपने हृदय से देश और देशवासियो से प्रेम करते थे।

विनोबा का जय जगत

१५ अगस्त, १९६५ को लालकिले पर प्रधानमन्त्री के रूप में दिया गया भाषण, जिसमें कहा गया—काश्मीर से एक-एक पाकिस्तानी आक्रमणकारी खदेडा जायेगा।

हम रहें या न रहें-झण्डे की शान बनी रहे

आज १८ साल पूरे हुए, हमारी आजादी के, हमारी स्वतन्त्रता के और पिछले तमाम वर्षो में हमारे नेता यहां आते थे और इस झण्डे को फहराते थे। पहला मौका जब यहाँ से यूनियन जैक उतरा और यह राष्ट्रीय पताका फहराई गई, तब भी उन्होने ही इस काम को किया था। आज उनकी थाती, इस जिम्मेदारी को उन्होने हमारे हाथों मे सौपा है और हमारा काम है कि उस जिम्मेदारी को हम ईमानदारी से और सच्चाई से निभायें।

आजादी आने के बाद यह स्वाभाविक बात थी कि हम अपने देश की हालत पर सोचते और कोशिश करते कि अपने देश के रहने वाले बहनों और भाइयों तथा बच्चों की हालत अच्छी बने और सुधरे। हम गुलामी मे पड़े हुए अपने देश को बना सकने में असमर्थ थे और हमारे लिए एक कठिनाई और मुश्किल का जीवन बिताना था। आजादी के आने के बाद हमने मुल्क के आर्थिक ढाँचे को, यहाँ की माली हालत को बदलने की कोशिश की और उसमें लग रहे हैं। जहाँ एक तरफ मुल्क बढा है, उसने तरक्की की है, वहाँ दूसरी तरफ हमारे लिए मुश्किलें भी आई है और लोगों को कठिनाइयाँ भी उठानी पड़ी हैं। हमने अपने देश में जो आज दूसरे देशों पर निर्भर रहने की बात है, उसमे कुछ कमी लाने की कोशिश की है। जो कुछ कि पिछले १०० सालों में, अंग्रेजी जमाने मे जो हम नही कर सके थे, उसको हमने पिछले १५ वर्षो में पूरा करने की कोशिश की है। चाहे, हमारे वे बड़े-बड़े कल और कारखाने हों या हमारे लिए पेट्रोल और तेल, जिसका कि यहाँ नाममात्र के करीब-करीब नहीं था। आज उसकी खानों को हम नये तरीके से बढ़ा रहे है और अपनी पेट्रोल की शक्ति को पैदा कर रहे हैं। जहाँ बिजली और पावर कुछ थोड़े से शहरों की चीज थी, आज हम उसे कस्बों मे ले जा रहे है, बल्कि हमारी कोशिश है कि हम उसे गांव-गांव तक पहुंचाये और आज बहुत काफी गांवों मे, अलग-अलग सूबो में बिजली गई है और पहुँची है। हमारी कोशिश इस बात की है कि अपने यहाँ हम स्टील बनाये और पैदा करे, जो कि आज अब भी हमें काफी मात्रा मे बाहर से मंगाना पडता है। बड़ी-बड़ी मशीनें, जो आज हम बाहर से मंगाते हैं, उनको भी हम कायम करना चाहते है और आज हमारी कोशिश है कि चाहे वह सीमेन्ट का कारखाना हो, चाहे वह कपड़े की मशीनें हों और चाहे वह स्टील प्लांट हो, या फर्टीलाइजर के लिए मशीनें हों, उन्हें हम अपने देश में बनाये, ताकि हम दूसरे देशों पर बहुत समय तक के लिए निर्भर न करें और जहाँ तक हो, अपनी शक्ति और ताकत को खुद बढ़ाएँ।

जैसा मैंने आपसे कहा, इसके लिए हमें अपने बडे-बडे प्लान, अपनी बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनानी पड़ीं और उन योजनाओं के जरिए हमने करोड़ों और अरबों रुपये अपने देश में लगाए। उसका थोड़ा

असर यह भी था कि हमे कुछ अपने रुपयों को, अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए, जिसे डेफिसिट फाइनेंसिग कहते हैं, यानी नोट छाप कर अपनी जरूरत को पूरा करना, वह भी हमे करना पड़ा और आज भी उसके लिए हमारे सामने एक सवाल है कि हम अपना वड़ा प्लान, अपनी चौथी पंचवर्षीय योजना, जो हम बनाने जा रहे हैं, उसे हम किस तरह चलाये, कैसे उसके रुपये को, उसकी जरूरत को, पूरा करे, जिससे कि हम डेफिसिट फाइनेंसिग में न पड़ें। हमे ज्यादा नोट छाप कर अपनी जरूरत को पूरा न करना पडे, क्योंकि उससे दाम बढते हैं, कीमतें बढ़ती हैं और लोगों की दिक्कतो को मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि आज लोगो को कठिनाइयो का सामना करना पड़ रहा है। तो हमारा इरादा जरूर है कि हम बडी योजना, बड़ा प्लान बनाएं, क्योंकि आज जो भी प्लान और योजना बने, वह हमारे देश की जरूरत के ख्याल से बने। लेकिन एक तरफ हमारे सामने सवाल था कि हम धीरे-धीरे बढें, उसमें ३० साल, ४० साल, ५० साल, ६० साल लग जाएं। दूसरी तरफ, लोगो की मांगें हैं, सूबों और प्रदेशों की जरूरतें हैं और वे चाहते हैं कि वे जल्द से जल्द पूरी हो। तो अब जब हमें यह देखना पडता है कि हम एक छोटी सी योजना बनाएं, लेकिन दूसरी तरफ जब हम लोगों की जरूरतों को देखते हैं, तो फिर हमे यह महसूस होता है कि हम बहुत धीमे-धीरे नही चल सकते। हमे तेजी से आगे जाना पड़ेगा और अगर उसके लिए कुछ तकलीफें और मुसीबतें भी उठानी पड़ी और उठानी हों, तो उसे हमे उठाने के लिए तैयार रहना होगा। जैसा आप जानते हैं, फिर भी हम २०,५०० करोड़ रु० का चौथा जो हमारा प्लान है, हमारी जो योजना है, वह हम उस बात को ध्यान मे रख कर हम वैसी एक बडी योजना बनाना चाहते हैं। हमने बनाया भी है और उसकी आखिरी मंजूरी जल्दी होने वाली है। मगर यह हम जरूर चाहते हैं कि इस योजना के लिए हमे डेफिसिट फाइनेंसिग न करना पड़ें। हमें नोटो को छाप कर अपनी जरूरत को पूरा न करना पड़े, इसलिए हमारा इरादा है कि उसको हम पूरी तरह से बचायेंगे और हम नही बढाएंगे, लेकिन यह और भी ज्यादा जरूरी है कि अपने देश की कृषि की हालत को, खेती की पैदावार को हम ज्यादा बढ़ाएं।

मेरी राय में आज अगर हमारे लिए कोई सबसे बड़ा और जरूरी काम है, तो आज अपनी खेती की पैदावार को बढाना और अपने देश में ज्यादा गेहूं और चावल पैदा करना है। क्योंकि अगर बाहर के देशो से आप अनाज मंगाते रहे और करोड़ो और अरबो रुपया बाहर भेजते रहे, तो उसका एक जबरदस्त असर हमारी आर्थिक हालत पर पड़ेगा। हम एक कमजोरी की हालत मे बने रहेंगे और अनाज की कमी रहती है, तो उसके दाम भी बढ़ते हैं और जब अनाज का दाम बढ़ता है और जैसा इस समय है तो वह मुसीबत लोगो की, जनता की बहुत बढ़ जाती है। इसलिए आज जैसा मैंने कहा, यह बहुत ही जरूरी है कि हम अपने देश में अनाज ज्यादा से ज्यादा पैदा करे और यह बात असम्भव नही है, यह नामुमकिन नहीं है। हमारे पास काफी शक्ति है, हमारे पास किसानो की इतनी बड़ी संख्या है, हमारे पास साधन हैं, उनको हम इस्तेमाल करगे और पूरी लगन से, मेहनत से इस बात के लिए जुट जायेंगे और हम अपनी खेती की पैदावार को बढायेंगे, तो फिर हमे कौन रोक सकता है कि हम अपनी जरूरत को पूरा न कर सकें। और इसलिए मैं चाहता हूं और यह जो हमारा अगला प्लान है, वह खेती और कृषि को प्राथमिकता देगा और उसके लिए हमे जो खर्च करना पड़ेगा, हम उसको करने की कोशिश करेंगे। मेरा यह निवेदन है कि इस काम मे खेती की पैदावार के बढ़ाने के सिलसिले में हमारी पूरी कोशिश हरेक की होनी चाहिए—चाहे वह किसान हो, चाहे वह हमारी सरकार मे काम करने वाले हों,

चाहे हम लोग हों, मिनिस्टर्स हो। आज उनका एक बहुत बड़ा बोझा उन पर है, उनको एक बड़ी जिम्मेदारी है और उस काम को हमे पूरी शक्ति के साथ और बड़े लगन के साथ पूरा करना है। मै यह भी चाहता हूँ, वैसे तो हम चाहते है कि धीरे-धीरे हम अनाज के बटवारे के सिलसिले में, उसकी खरीदारी में, प्रवेश की, सूबे की सरकार और केन्द्रीय सरकार—सेन्ट्रल गवर्नमेन्ट—यह इस काम को अपने हाथ में लें। लेकिन आज की स्थिति में वह पूरा कर सकना सहज बात नही है। मगर आज की स्थिति में और जो हालत इस समय खासतौर से अपने देश में पैदा हो गई है, इसमें जो व्यापारी वर्ग है, उनसे भी इस बात की दर्खास्त करना चाहता हूं, इस बात की अपील करना चाहता हूँ कि उन्हे अपनी जिम्मेदारी को समझना है और अपनी जिम्मेदारी को निभाना है। मै कोई वैसा नहीं कहता, लेकिन आज जैसी जरूरत देश मे है और जिस खास हालत मे हम आ गये है, उसमें जो काम करने वाले है अनाज के बंटवारे का या खरीदारी का उन पर एक बड़ा बोझा है और सरकार उसमे उनकी मदद कर सकती है, तो हम उसमें भी तैयार है, हम बातचीत करना चाहते है, हम रास्ता निकालना चाहते है, जिसमें सरकार अपने काम को करे और वह अपने काम को पूरी तरह से अजाम दे। तो मै यह आशा करता हूँ कि जो हमारे अगले पाँच वर्ष है, उसमे हम कोशिश करें कि हम अपने देश में इतना पैदा कर लें कि जिसमे हमे दूसरे देशो पर निर्भर न रहना पड़े और फिर हम साथ ही साथ अपने उद्योग-धन्धों, कल-कारखानो और दूसरे हमारे सब कामों को तेजी और मजबूती से आगे बढ़ाते रहे।

आप जानते है, मै अभी कुछ पिछले महीने-डेढ़ महीने मे कई देशों में बाहर गया। जहाँ एक तरफ मै सोवियत यूनियन और यूगोस्लाविया गया, वहाँ दूसरी तरफ मै कनाडा और युनाइटेड किंगडम मे गया और बीच में युनाइटेड अरब रिपब्लिक भी गया। आप देखेंगे कि इन देशों मे एक बड़े प्रेम के साथ हमारा स्वागत हुआ। लेकिन जो हमारी बाते हुई, वह बाते हमारी बहुत लाभदायक और बहुत अच्छी हुई। आप यह भी देखेंगे कि हमारा सम्बन्ध, हमारा मेल चाहे एक विचारधारा के देश हो, चाहे दूसरे विचारधारा के देश हों, चाहे बीच में रहने वाले देश हो, हमारा एक परस्पर का मेल, हमारा ताल्लुकात, हमारे सम्बन्ध सभी से अच्छे है और यह हमारी नीति आज की नही, पहले की है। पण्डितजी ने इस नीति को बनाया और हम समझते है कि भारत एक ऐसा मुल्क है, जिस पर दुनिया के देशों की नजर है और हम चाहते है कि हम कोई ऐसी बात न करें, जिससे कि दुनिया को एक गलत रास्ता हम दिखाएँ। हम सारी दुनिया मे मेल और मोहब्बत चाहते है। हम सारी दुनियाँ मे सुलह और शांति चाहते है और इसलिए बराबर हमारा यह रुख रहा है कि जो कुछ भी हम उसके लिए कर सके, पूरी तरह से करने की कोशिश करें।

हम सभी जानते है कि आज दुनियां मे एक खतरा सा बना हुआ है। कुछ पता नही चलता है कि किस समय क्या हाल पैदा हो। आज एक बड़ा सवाल वियतनाम का आ गया है। कोई नही जानता कि किस वक्त वहाँ क्या हालत बने और दुनियाँ किस भवर मे पड़ जाए। हमने कोशिश की और हम चहाते है कि वियतनाम का मामला शान्ति के साथ हल हो, सभी देश आज चाहते है वहां शान्ति हो। मै सोवियत यूनियन गया, वहां भी देखा कि वे पूरी तरह से शान्ति चाहते है और उनका मन, उनका ध्यान सुलह और शान्ति की ओर ही है, मगर हम चाहते है कि आज जो हम कोशिश कहते है, तो चीन के रहने वाले भाई हमारी टीका-टिप्पणी करते है, हमें बुरा-भला कसते है। मै अभी बेलग्रेड गया, तो उसकी बड़ी आलोचना चीन के पत्रों में हुई और चीन के नेताओं ने की। लेकिन जहाँ तक तमाम देश

जो आज शान्ति और सुलह चाहते हैं, जैसा मैंने कहा सोवियत यूनियन, जो आज पूरी तरह से शान्ति चाहता है, आज यूरोप और अमरीका के सारे देश यह कहते है कि वे सुलह पसन्द करेगे, लेकिन एक देश है, जो चाहता है कि न वियतनाम मे शान्ति रहे और न भारत मे शान्ति रहे और वह चीन है। हमे इस बात का रंज है कि हम बाहर के देशो की ओर तो देख रहे है, लेकिन हमे इस बात का रज है कि आज हमारा देश भी एक खतरे के अन्दर है। आज चीन इस बात में दिलचस्पी लेता है कि भारत मे झगड़ा बना रहे, सघर्ष रहे और हमारी तरक्की और उन्नति मे बाधा पडे। हमारा देश एक आजादी पसन्द देश है, लेकिन आज उनको यह नही भाता कि हम अपने ढग से अपने देश को चलाएँ और अपनी तरक्की हम अपने रास्ते से करे। हम एक विचारधारा रखते है, हम कुछ सिद्धान्तो और उसूलों को मानते हे। आज से नही पिछले चालीस-पैंतालीस सालो मे हमने उन सिद्धान्तो को, उन उसूलो को माना है उस पर चले है, उस पर अमल किया है मगर वह रास्ता चीन को पसन्द नही और इसलिए जैसा मैंने कहा—कही वह सलाह देते है, कही वह राय देते है, कही वह सिखाते है कि भारत को किसी न किसी तरह से धक्का लगे।

आप जानते है कि अभी थोड़े दिन पहले कच्छ पर हमला हुआ। और उस कच्छ के हमले का हमने मुकाबला किया लेकिन यह बात हमारे मन मे थी और हमने कहा भी कि अगर कच्छ से पाकिस्तान अपनी फौजो को हटा ले, कच्छ को पूरी तरह से खाली कर दे तब हम बातचीत करने को तैयार होगे और वह बात जो हमने कही उसे हमने पूरा किया। पाकिस्तान आज कच्छ मे कही नही है, उसकी पुलिस नही है, उसकी जो चौकिया थी वे चौकियाँ आज कही नही है। जो हमारा पूरा अधिकार, सिविल अधिकार हमारा कच्छ पर था वह हमे प्राप्त है। उसमे जैसा आप जानते है उसके बाद हमने एक समझौता, एक सुलह किया और इसीलिये किया कि हम अपनी तरफ से जहाँ तक हो शान्ति को बिगड़ने न दे और दुनिया मे एक बवडर पैदा न करे। हमने उसे माना और उस बारे मे कुछ बाते आगे बढ़ने वाली थी कुछ बाते होने वाली थी, लेकिन इसी बीच मे कश्मीर पर हमला पाकिस्तान ने किया। मे इसे समझ-बूझ कर कहता हूँ। यह कहना कि वहाँ आजाद कश्मीर से लोग चले आ रहे ह, यह बात बिल्कुल गलत है। यह सब पाकिस्तान की मदद से, उसकी सहायता से और उस की पूरी जिम्मेदारी से आज कश्मीर मे रेडस आ गये है और उन्होने इस बात की शायद ख्वाहिश की थी कि वह कश्मीर मे एक क्रान्ति सी पैदा कर देगे और वहाँ के लोगो को उभार देगे। मुझे इस बात का बडा ताज्जुब है कि जहा एक तरफ हमने शान्ति के रास्ते को पकडा और मेल और दोस्ती का हाथ बढाया वहाँ दूसरी तरफ हमे यह देखने को मिलता है कि कश्मीर पर हमला किया जा रहा है। और मैं जानता हूँ कि पाकिस्तान का उसको बढाने का पूरा इरादा है। हम इस हालत मे क्या करे? हमारा रास्ता साफ है। मे यह पूरी तरह से समझता हूँ कि अब हमारे लिये बातचीत करने की कोई गुंजाइश नही है, उसे हम सोच भी नही सकते हे। कश्मीर मे हजार हम चाहे, हमारा दिल चाहे कि हम वहाँ पर शान्ति बनाये रखे लेकिन जब इस तरह हमला हो तो एक सरकार के नाते हमारा क्या जवाब हो सकता है सिवाय इसके कि हम हथियारो का जवाब हथियारो से दे और मुझे कोई शक नहीं है कि आज कश्मीर के रहने वाले बहादुरो से, हिम्मत से इस मौके का सामना कर रहे है। आज कश्मीर मे रहने वाले मुसलमान, हिन्दू और सिक्ख सब पूरी तरह से आज ये रेडर्स आ रहे है, इनका उन्होने मुकाबला किया है और उनके अन्दर आज यह पूरी भावना है कि ये रेडर्स, जो हमलावर हैं,

इनको कश्मीर से पूरी तरह हटा देना है और मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि आज हमारी कश्मीर की सरकार, सादिक साहब जो वहाँ के चीफ मिनिस्टर है, उस सूबे के लीडर है उन्होंने और उनके साथियो ने बड़ी मजबूती से बड़ी दिलेरी से, बड़ी बहादुरी से पिछले १०-१५ दिनो के अन्दर काम किया है। मैं इसके लिए कश्मीर की सरकार को बधाई देना चाहता हूँ और कश्मीर मे रहने वाले अपने तमाम भाइयों और बहनों को भी बधाई देना चाहता हूँ कि जिस हिम्मत से उन्होंने काम किया है, मेरा विश्वास है कि आप सबकी तरफ से मैं यह कह सकता हूँ कश्मीर के रहने वालों से कि हमारा दिल उनके साथ है, हमारा तन-मन-धन उनके साथ है, हम पूरी तरह से आज से उनके साथ है। हमारी फौजे वहाँ जुटी है, हमारी पुलिस वहाँ मौजूद है और जो वहाँ आये है उनको एक-एक को चुन कर वहाँ से हटा देना चाहते है और निकाल देना चाहते है और निकालेगे इसमे कोई शक नही और इसीलिए आज एक बड़ी जिम्मेदारी, जो एक बड़ा सकट हमारे ऊपर आया है उसके लिए हमे और आप सबको तैयार रहना होगा। आज आराम का वक्त नही है। आज एक त्याग का, बलिदान का, कुर्बानी का जो भी रास्ता हो वह हमे अख्तियार करने के लिए तैयार रहना होगा। यह आज थोड़े दिन की बात नही है कि वह चन्द दिनो के लिए आये और वह चले जायेगे। जैसा हमने कहा कि हम नही जानते कि यह खतरा कब तक बना रहेगा क्योकि आज उनके मन मे यह बात आ गई है कि वह कश्मीर को ले, हथियारो के जरिये ले तो फिर उनको भी अपनी इज्जत की बात शायद मन मे रहेगी। लेकिन वो इज्जत उनकी आज हमारे देश की मर्यादा की, हमारे देश की शान की भी कुछ माग है और मै आपकी तरफ से यह कहने वाला हूँ और कहना चाहता हूं कि कश्मीर का एक टुकड़ा भी पाकिस्तान को मिलने वाला नही है। लेकिन मै आपका समय ज्यादा लेना नही चाहता। मै इतना ही निवेदन करूगा कि आज देश मे हमारे लिए एका की जरूरत है, मेल की जरूरत है और आज मै यही चाहता हूँ, सारे देश को आज यह अनुभव करना है, आज यह महसूस करना है कि आज देश की सुरक्षा और उसकी हिफाजत का सवाल है और उसमे हमारे ऊपर यह बौझा है कि हम अपने तमाम अन्तरो को, मतभेदों को, फरको को जो भी हमारे अन्दर है उनको हम मिटाये। आज इस बात की जरूरत नही है कि हम आन्दोलन चलायें, एजीटेशन करे। आज इस बात की जरूरत नही है कि हम हड़ताले करे और स्ट्राक्स चलाये। यह समय ऐसा है, अगले हमारे महीने ऐसे है जिसमे हर-एक अपनी मुशीबत और कठिनाइयो को बर्दाश्त करे। देश के साथ कन्धे से कन्धा मिला कर हमें आगे बढ़ना होगा और आज जो हमारे ऊपर खतरा है उसको मिटाना होगा। इसलिये मेरा निवेदन है देश के तमाम रहने वाले भाइयो से कि हम आपस मे मेल और एका रखे क्योकि अगर देश के अन्दर गड़बड़ी हुई तो हम सरहद की हिफाजत और रक्षा कैसे कर सकेगे ? इसलिये अपनी फौजों को मजबूत बनाना है और हमारी फौजे, हमारे सिपाही आज जिस बहादुरी, जिस हिम्मत और जिस बलिदान और त्याग से काम कर रहे है उसके लिए हम सब अनुगृहीत है और हम उनका शुक्रिया अदा करते है। उनको धन्यवाद देते है। लेकिन अगर उनकी ताकत को मजबूत करना है, उनको बलवान बनाना है तो फिर आज हम सब देश के अन्दर शान्ति रखे, मेल रखे, धर्म और मजहब के नाम पर न लड़े, साम्प्रदायिकता की बात को न लाये और अपने छोटे-मोटे दूसरे जो झगड़े है उनमे भी इस समय न पड़े। तो मुझे विश्वास है, मुझे भरोसा है कि आज हमारे देश के रहने वाले भाई और बहन मेरी इस बात को गम्भीरता से सुनेगे और अगले महीनों मे इस तरह चलेगे जिसमे सारा देश

जो आज शान्ति और सुलह चाहते है, जैसा मैंने कहा सोवियत यूनियन, जो आज पूरी तरह से शान्ति चाहता है, आज यूरोप और अमरीका के सारे देश यह कहते हैं कि वे सुलह पसन्द करेंगे, लेकिन एक देश है, जो चाहता है कि न वियतनाम मे शान्ति रहे और न भारत मे शान्ति रहे और वह चीन है। हमे इस बात का रंज है कि हम बाहर के देशो की ओर तो देख रहे है, लेकिन हमे इस बात का रंज है कि आज हमारा देश भी एक खतरे के अन्दर है। आज चीन इस बात मे दिलचस्पी लेता है कि भारत मे झगड़ा बना रहे, संघर्ष रहे और हमारी तरक्की और उन्नति मे बाधा पड़े। हमारा देश एक आजादी पसन्द देश है, लेकिन आज उनको यह नही भाता कि हम अपने ढंग से अपने देश को चलाएँ और अपनी तरक्की हम अपने रास्ते से करें। हम एक विचारधारा रखते है, हम कुछ सिद्धान्तो और उसूलो को मानते है। आज से नही पिछले चालीस-पैंतालीस सालो मे हमने उन सिद्धान्तो को, उन उसूलो को माना है उस पर चले है, उस पर अमल किया है मगर वह रास्ता चीन को पसन्द नही और इसलिए जैसा मैंने कहा—कही वह सलाह देते है, कही वह राय देते है, कही वह सिखाते है कि भारत को किसी न किसी तरह से धक्का लगे।

आप जानते है कि अभी थोड़े दिन पहले कच्छ पर हमला हुआ। और उस कच्छ के हमले का हमने मुकाबला किया लेकिन यह बात हमारे मन मे थी और हमने कहा भी कि अगर कच्छ से पाकिस्तान अपनी फौजो को हटा ले, कच्छ को पूरी तरह से खाली कर दे तब हम बातचीत करने को तैयार होंगे और वह बात जो हमने कही उसे हमने पूरा किया। पाकिस्तान आज कच्छ मे कही नही है, उसकी पुलिस नही है, उसकी जो चौकिया थी वे चौकियाँ आज कही नही है। जो हमारा पूरा अधिकार, सिविल अधिकार हमारा कच्छ पर था वह हमें प्राप्त है। उसमे जैसा आप जानते है उसके बाद हमने एक समझौता, एक सुलह किया और इसीलिये किया कि हम अपनी तरफ से जहाँ तक हो शान्ति को बिगड़ने न दें और दुनिया मे एक बवडर पैदा न करें। हमने उसे माना और उस बारे में कुछ बाते आगे बढ़ने वाली थी कुछ बाते होने वाली थी, लेकिन इसी बीच मे कश्मीर पर हमला पाकिस्तान ने किया। मैं इसे समझ-बूझ कर कहता हूँ। यह कहना कि वहाँ आजाद कश्मीर से लोग चले आ रहे है, यह बात बिल्कुल गलत है। यह सब पाकिस्तान की मदद से, उसकी सहायता से और उस की पूरी जिम्मेदारी से आज कश्मीर मे रेडर्स आ गये है और उन्होंने इस बात की शायद ख्वाहिश की थी कि वह कश्मीर मे एक क्रान्ति सी पैदा कर देंगे और वहाँ के लोगो को उभार देंगे। मुझे इस बात का बड़ा ताज्जुब है कि जहा एक तरफ हमने शान्ति के रास्ते को पकडा और मेल और दोस्ती का हाथ बढाया वहाँ दूसरी तरफ हमे यह देखने को मिलता है कि कश्मीर पर हमला किया जा रहा है। और मै जानता हू कि पाकिस्तान का उसको बढाने का पूरा इरादा है। हम इस हालत मे क्या करे? हमारा रास्ता साफ है। मै यह पूरी तरह से समझता हूँ कि अब हमारे लिये बातचीत करने की कोई गुंजाइश नहीं है, उसे हम सोच भी नही सकते है। कश्मीर मे हजार हम चाहे, हमारा दिल चाहे कि हम वहाँ पर शान्ति बनाये रखें लेकिन जब इस तरह हमला हो तो एक सरकार के नाते हमारा क्या जवाब हो सकता है सिवाय इसके कि हम हथियारों का जवाब हथियारो से दे और मुझे कोई शक नहीं है कि आज कश्मीर के रहने वाले बहादुरी से, हिम्मत से इस मौके का सामना कर रहे है। आज कश्मीर मे रहने वाले मुसलमान, हिन्दू और सिक्ख सब पूरी तरह से आज ये रेडर्स आ रहे है, इनका उन्होंने मुकाबला किया है और उनके अन्दर आज यह पूरी भावना है कि ये रेडर्स, जो हमलावर हैं,

इनको कश्मीर से पूरी तरह हटा देना है और मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि आज हमारी कश्मीर की सरकार, सादिक साहब जो वहाँ के चीफ मिनिस्टर है, उस सूबे के लीडर हैं उन्होंने और उनके साथियो ने बड़ी मजबूती से बड़ी दिलेरी से, बड़ी बहादुरी से पिछले १०-१५ दिनों के अन्दर काम किया है। मै इसके लिए कश्मीर की सरकार को बधाई देना चाहता हूँ और कश्मीर मे रहने वाले अपने तमाम भाइयों और बहनों को भी बधाई देना चाहता हूँ कि जिस हिम्मत से उन्होने काम किया है, मेरा विश्वास है कि आप सबकी तरफ से मैं यह कह सकता हूँ कश्मीर के रहने वालो से कि हमारा दिल उनके साथ है, हमारा तन-मन-धन उनके साथ है, हम पूरी तरह से आज से उनके साथ है। हमारी फौजे वहाँ जुटी है, हमारी पुलिस वहाँ मौजूद है और जो वहाँ आये है उनको एक-एक को चुन कर वहाँ से हटा देना चाहते है और निकाल देना चाहते है और निकालेगे इसमे कोई शक नही और इसीलिए आज एक बड़ी जिम्मेदारी, जो एक बड़ा सकट हमारे ऊपर आया है उसके लिए हमे और आप सबको तैयार रहना होगा। आज आराम का वक्त नही है। आज एक त्याग का, बलिदान का, कुर्बानी का जो भी रास्ता हो वह हमें अख्तियार करने के लिए तैयार रहना होगा। यह आज थोड़े दिन की बात नही है कि वह चन्द दिनो के लिए आये और वह चले जायेंगे। जैसा हमने कहा कि हम नही जानते कि यह खतरा कब तक बना रहेगा क्योंकि आज उनके मन मे यह बात आ गई है कि वह कश्मीर को ले, हथियारो के जरिये लें तो फिर उनको भी अपनी इज्जत की बात शायद मन मे रहेगी। लेकिन वो इज्जत उनकी आज हमारे देश की मर्यादा की, हमारे देश की शान की भी कुछ माग है और मै आपकी तरफ से यह कहने वाला हूँ और कहना चाहता हूं कि कश्मीर का एक टुकड़ा भी पाकिस्तान को मिलने वाला नही है। लेकिन मै आपका समय ज्यादा लेना नही चाहता। मै इतना ही निवेदन करूगा कि आज देश मे हमारे लिए एका की जरूरत है, मेल की जरूरत है और आज मै यही चाहता हूँ, सारे देश को आज यह अनुभव करना है, आज यह महसूस करना है कि आज देश की सुरक्षा और उसकी हिफाजत का सवाल है और उसमे हमारे ऊपर यह बोझा है कि हम अपने तमाम अन्तरों को, मतभेदो को, फरको को जो भी हमारे अन्दर है उनको हम मिटाये। आज इस बात की जरूरत नही है कि हम आन्दोलन चलायें, एजीटेशन करे। आज इस बात की जरूरत नही है कि हम हड़ताले करे और स्ट्राइक्स चलाये। यह समय ऐसा है, अगले हमारे महीने ऐसे है जिसमे हर-एक अपनी मुसीबत और कठिनाइयो को बर्दाश्त करे। देश के साथ कन्धे से कन्धा मिला कर हमे आगे बढना होगा और आज जो हमारे ऊपर खतरा है उसको मिटाना होगा। इसलिये मेरा निवेदन है देश के तमाम रहने वाले भाइयो से कि हम आपस मे मेल और एका रखे क्योकि अगर देश के अन्दर गड़बड़ी हुई तो हम सरहद की हिफाजत और रक्षा कैसे कर सकेंगे ? इसलिये अपनी फौजों को मजबूत बनाना है और हमारी फौजें, हमारे सिपाही आज जिस बहादुरी, जिस हिम्मत और जिस बलिदान और त्याग से काम कर रहे है उसके लिए हम सब अनुगृहीत है और हम उनका शुक्रिया अदा करते है। उनको धन्यवाद देते है। लेकिन अगर उनकी ताकत को मजबूत करना है, उनको बलवान बनाना है तो फिर आज हम सब देश के अन्दर शान्ति रखे, मेल रखे, धर्म और मजहब के नाम पर न लड़े, साम्प्रदायिकता की बात को न लाये और अपने छोटे-मोटे दूसरे जो झगड़े है उनमे भी इस समय न पड़ें। तो मुझे विश्वास है, मुझे भरोसा है कि आज हमारे देश के रहने वाले भाई और बहन मेरी इस बात को गम्भीरता से सुनेंगे और अगले महीनों मे इस तरह चलेंगे जिसमे सारा देश

शान्त रहे और हम मजबूती के साथ अपनी सरहदों की हिफाजत में लगे रहे और जो हमारे मुकाबले में आये हैं उनको हम हटायें।

मैं आपसे यह कहूँगा कि जिस झण्डे के नीचे हम और आप खड़े है और बैठे हैं आज इसकी रक्षा और हिफाजत का सवाल है। इसकी शान बनाये रखनी है, इसे कायम रखना है। हम रहें या न रहें लेकिन यह झण्डा रहना चाहिये और देश रहना चाहिये और मुझे विश्वास है कि यह झण्डा रहेगा, हम और आप रहे या न रहे लेकिन भारत का सिर ऊँचा होगा। भारत दुनिया के देशो मे एक बड़ा देश होगा और शायद भारत दुनिया को कुछ भी दे सके। बहुत धन्यवाद।

●

लालबहादुर से गंगा ने कहा

तुम तो आ गये लाल! इस समय?

याद है जब तुम कुछ ही महीनो के थे मेरे तट पर खेला करते थे अपने नाना के घर रामनगर मे। तुम्हे तो शायद याद न होगा जब एक दिन तुम्हारी माँ मेले मे तुम्हे खो गयी थी, पर मेरे तट पर मेरे इतने प्यारे पुत्र को क्या डर था। एक निस्सन्तान मल्लाह ने तुम्हे उठाकर अपनी पत्नी को देते हुए कहा था—"देख, भगवान ने कितना सुन्दर बालक हमे दिया है।" और खोज के बाद जब तुम मिल गये थे तब तुम्हारी माँ ने तुम्हे अंक मे भर लिया था।

और भी अनेक दृश्य याद रहे हैं जब मेरे तट पर तुम घरौंदे बनाया करते थे, खूब खेलते थे और मेरी जय बोलते थे। मगर वह दृश्य तुम्हे जरूर याद होगा जब एक दिन शाम हो जाने पर बस्ता सिर पर रख कर स्कूल से लौटते हुए तुम मुझे तैर कर पार गये थे। मुझे तभी तुम्हारे साहस का परिचय मिल गया था।

और तुम वर्षों मेरे तट पर इसी प्रयाग मे रहे। अपना राजनीतिक जीवन तुमने यहाँ से ही शुरू किया। महानगरपालिका के जब तुम सदस्य थे तब मेरे बारे मे अक्सर योजना बनाते थे। कितना प्यार था तुम्हे मुझसे। अभी पिछले महीने दिसम्बर को ही तो बात है जब तुम यहाँ आये थे। उस समय प्रयागवासियो से फिर जल्दी आने का वायदा करके तुम कलकत्ता और रंगून चले गये थे। तो क्या वायदा इस रूप मे लौट कर पूरा किया तुमने।

महाराज ययाति से लेकर अब तक कितने ही महापुरुषो का भस्मिनेशेप मेरे अंक मे समाया है। तुम्हारे ही आदरणीय और पूजनीय नेता मोहनदास गाधी, पुरुषोत्तमदास टण्डन, जवाहरलाल नेहरू के अस्थिकलश मेरी गोद मे समर्पित किये गये थे। याद है आठ जून, १९६४ को जब तुम अपने नेता जवाहरलाल नेहरू के भस्मि-विसर्जन के लिए यहां आये थे—तुमने तब इन्दिरा गाधी को हृदय से ढाढस बधाया था और राष्ट्र की ओर से आश्वासन दिये थे। आज इन्दिरा गाधी तुम्हारे परिवार वालो को तुम्हारी जैसी ही हैसियत मे धैर्य बधायेगी।

संसार का यह चक्र इसी तरह चलता है। आओ मेरी गोद मे सदा के लिए सो जाओ—

अक्षयकुमार जैन

यह लडाई उसूल की लडाई है। सवाल यह है कि क्या किसी मुल्क को यह हक है कि वह दूसरे मुल्क मे जनता की चुनी हुई सरकार को उलटने के लिए अपने हथियार-बन्द आदमियो को भेजे? पाकिस्तानी हमले के बाद ३ सितम्बर १९६५ को आकाशवाणी से राष्ट्र के नाम सन्देश।

पाकिस्तान की चुनौती के मुकाबले के लिए डट कर तैयार हो जायं

मैं आज आपको पाकिस्तान के हमले और उससे जो हालत पैदा हो गई है, उसके सम्बन्ध में बताना चाहता हूँ और इस नाजुक घड़ी मे हमारे ऊपर जो जिम्मेदारियां और चिन्ताएं आ पड़ी है, उनमें आपके साथ हिस्सा बटाना चाहता हूँ। जैसा आप जानते है, पहली सितम्बर को पाकिस्तान ने जम्मू के छम्ब के इलाके मे एक ब्रिगेड फौज लेकर हमारे ऊपर भारी हमला किया। इस हमले में भारी तोपे और भारी टैंक भी शामिल थे। हमारी फौजो ने बहादुरी से उसका सामना किया और अनेक पाकिस्तानी टैंकों और बहुत-सी फौजी गाडियों को नष्ट कर दिया। पाकिस्तान का पहला धक्का रोक दिया गया है। पाकिस्तान उस इलाके मे क्या कर रहा है, इसका पता इस बात से चलता है कि उसकी हवाई फौजे बेगुनाह शहरी लोगो पर बम बरसा कर औरतों, बच्चो और मरदों की जान ले रही है और उन्होने एक मस्जिद को भी बरबाद कर दिया है। जम्मू और कश्मीर के लोग इस हमले का सामना बड़ी हिम्मत से कर रहे हैं।

मै अपनी रक्षा सेनाओ को दिल से बधाई देना चाहता हूँ। सारे मुल्क को उनके ऊपर फख्र है और उन पर पूरा विश्वास है कि वे मुल्क की हिफाजत अच्छी तरह करेगी। सारा देश उनके साथ है।

इस हमले के पहले जो हथियारबन्द हमलावर कश्मीर मे पुलो और सरकारी व फौजी ठिकानो को बर्बाद करने के लिए और तोड-फोड़ के और काम करने के लिए घुसे थे, उनकी कोशिशे नाकामयाब कर दी गयी है। हमलावरो को वहा के लोगो से कोई हमदर्दी या मदद नही मिली। बल्कि उन्होने खाने-पीने का सामान लेने के लिए वहाँ के लोगो को लूटा और उनके घरो में आग लगाई। शुरू मे कुछ दिन तक अंधेरे मे छुप कर ये हमलावर कुछ गावों में घुसने मे कामयाब हो गये थे, लेकिन उनकी साजिश लगभग नाकामयाब कर दी गयी है और बहुत से हमलावरों को भाग कर घने जंगलों में छुपना पडा है। फिर भी हमको लगातार खबरदार रहना है, क्योकि ये हमलावर अभी भी कश्मीर के अन्दर छिपे है और तोड़-फोड़ की कोशिश करते है।

ये हमलावर नये किस्म के हथियारों से लैस थे। उनकी पूरी कार्रवाई का नक्शा पाकिस्तान ने ही बनाया और उनको कश्मीर में भेजा। हमारा यकीन है कि सयुक्त राष्ट्रसघ (यू० एन० ओ०) के

सेक्रेटरी जनरल को चीफ मिलिटरी ग्राब्जरवर ने जो रिपोर्ट दी है, उससे यह बात पूरी तरह साबित हो जाती है। हमारे बार-बार कहने पर भी यह रिपोर्ट छापी नहीं गयी है। हमारे लिए कोई चारा नहीं था, सिवाय इसके कि हमारी फौजें लड़ाई-बन्दी लाइन के उस पार जाकर हमलावरों के ग्राने के रास्तों पर कब्जा करें। अपने बचाव के लिए यह जरूरी था। लेकिन अभी भी पाकिस्तानी फौज की पूरी मदद से, वे कश्मीर के अन्दर आने की कोशिश कर रहे हैं। पाकिस्तान ने इस बात से इन्कार किया है कि उनके आने में उसका कोई हाथ है। पाकिस्तान सरकार ने यह कहानी गढ़ने की कोशिश की है, और प्रेसिडेंट अयूब खां ने अपनी पहली सितम्बर के ब्राडकास्ट में इसे दोहराया भी है कि ये आजादी के सिपाही हैं और कश्मीर में अन्दरूनी बगावत हो गयी है। सारी दुनिया जानती है कि कश्मीर में कोई बगावत नहीं हुई है। कश्मीर के रहने वाले बिल्कुल शान्त रहे हैं और हमलावरों को पकड़ने में उन्होंने सरकार की मदद की है। पाकिस्तान के भेजे हुए इन हथियारबन्द लोगों ने लूटमार की है, आग लगाई है और लोगों को जान से मारा है। हमारी पूरी हमदर्दी उनके साथ है। वहां के रहने वालों की बहादुरी और बरदाश्त के लिए मैं उन्हें दिल से बधाई देता हूं।

सन् १९४७-४८ में भी कश्मीर में, अपनी फौजों के भेजने के कई महीने बाद तक पाकिस्तान इस बात से इन्कार करता रहा कि उसकी फौजें वहाँ लड़ रही हैं। सन् १९४८ में जब इस बात को छिपाना नामुमकिन हो गया, तभी पाकिस्तान की तरफ से भारत और पाकिस्तान के लिये यू० एन० ओ० कमीशन के सामने यह कबूल किया गया कि पाकिस्तानी फौजें कई महीनों से वहां लड़ रही हैं।

इस साल ३० जून को गुजरात-पश्चिम पाकिस्तान सरहद के बारे में, भारत और पाकिस्तान में जो समझौता हुआ, उसमें पाकिस्तान ने बड़ी संजीदगी से यह आशा जाहिर की कि इस समझौते से भारत और पाकिस्तान के सम्बन्ध सुधरेंगे और तनाव घटेगा। मगर दुनिया को यह जान कर धक्का लगेगा कि जिस वक्त इस समझौते पर दस्तखत हो रहे थे, उस वक्त पाकिस्तान कश्मीर में हथियारबन्द लोगों के भेजने का प्लान बना चुका था और मई में इन लोगों को ट्रेन कर रहा था। इनका हमला ठीक एक महीने बाद शुरू हुआ जबकि ३० जून के कच्छ समझौते की स्याही भी नहीं सूख पाई थी। पाकिस्तान की मंशा और क्या इच्छा है, यह इस बात से बिल्कुल ही साफ हो जाता है।

पाकिस्तान के सरकारी हल्कों ने हिन्दुस्तान पर यह जुर्म लगाया है कि वह कश्मीर में इंपीरियलिज्म से काम ले रहा है। अयूब साहब इस बात को भूल गये हैं कि जम्मू-कश्मीर राज्य, कानूनी तौर से और असलियत में भी भारत का एक हिस्सा है। कश्मीर के रहने वाले, भारत के नागरिक हैं और उनको वे सब अधिकार और हक मिले हुए हैं, जिनकी हमारे कांस्टीट्यूशन में गारण्टी है। उधर दूसरी तरफ आजाद कश्मीर में क्या हाल है। वहां के रहने वाले भाई इन हकों के लिये तरसते हैं।

मैं यह कहना चाहता हूँ कि पाकिस्तान के लोगों और वहां की जनता से हमारी कोई लड़ाई नहीं है। हम उनकी भलाई और तरक्की चाहते हैं। और हम उनके साथ दोस्ती और अमन से रहना चाहते हैं।

लेकिन हमारा मुकाबला एक ऐसी हुकूमत से है, जो हमारी तरह आजादी, अमन, लोकतंत्र में—जम्हूरियत में—विश्वास नहीं रखती। वह कश्मीर में रायशुमारी लेने की बात करती है, मगर खुद अपने मुल्क में वह आजादी से चुनाव कराने को तैयार नहीं। जम्मू-कश्मीर राज्य में सन् १९४९ से लेकर अब तक तीन बार आम चुनाव हो चुके हैं। पहले जो एक राजा की मौरूसी रियासत थी, अब

भारत के नुमाइन्दो के नामो का एलान भी कर दिया गया। मगर पाकिस्तान ने इस बहाने पर इस मुलाकात को टाल दिया कि वह अपने आम चुनावो मे फँसा हुआ है। मै इन बातो को इसलिये कह रहा हूँ क्योंकि ऐसा मालूम होता है कि प्रेसिडेंट अयूब इनको बिलकुल भूल गए हैं। क्योंकि इसके अलावा, उन्होने अपनो तकरीर मे जो कुछ कहा, उसकी और कोई वजह नही हो सकती।

इस नाजुक घडी मे देशवासियो, हमारे मुल्क के रहने वालो को क्या जिम्मेदारियाँ है, क्या फर्ज और कर्त्तव्य हैं? इस वक्त आपका सबसे बड़ा फर्ज यह है कि आप इस बात की पूरी कोशिश करें कि देश मे सब मजहब के लोग मेलजोल से आपस मे किसी तरह रहे और शाति न टूटने पाये।

पजाब और दिल्ली मे फौरन सिविल डिफेस—नागरिक सुरक्षा को योजना लागू की जा रही है। बाद में इसे और हल्को मे भी लागू किया जायगा। आप लोग इस योजना मे अपना भाग लेने के लिये उन्ही जजबात—भावना—से आगे बढे, जिससे हमारे सिपाही मोर्चे पर लड़ रहे है। कारखाने के कामगारो से मैं निजी तौर पर अपील करना चाहता हूँ। मै उनकी देशभक्ति से वाकिफ हूँ और मुझे पूरा यकीन है कि उनके मन मे सबसे ऊँची जगह अपने देश के लिये ही है। हमे अपने कारखानो मे ज्यादा-से-ज्यादा सामान बनाना है, अपने डाक-तार, सड़क, रेल, हवाई और पानी के रास्तो को चालू रखना है। अपने बन्दरगाहो मे दिन-रात काम करना है और अपनी सप्लाई लाइन को चौबीसो घटे चालू रखना है। हरेक कामगार भाई को इस काम को पूरा करने के लिये अपनी जान लड़ा देनी चाहिये।

मुल्क को आगे आने वाले कठिन समय के लिये तैयार होना है। हर आदमी को अपना फर्ज पूरी तरह, दिल से अदा करना चाहिये। हो सकता है कि हवाई हमलो से हमे नुकसान उठाना पडे। राष्ट्र को—कौम को—हँसते-हँसते कष्ट और मुसीबत उठाने और कुर्बानी देने के लिये तैयार होना होगा। आजादी की रक्षा के लिये उसकी हिफाजत के लिये यह कीमत हम सबको देनी ही होगी। आज सारे राष्ट्र के लिये—सारी कौम के लिये—यह पुकार है कि वह इस चुनौती का डट कर सामना करने के लिये तैयार हो जाय।

—जय हिन्द

शास्त्री जी ने भारतीय इतिहास के सबसे अधिक कठिन संकट मे देश को सफल नेतृत्व दिया। उन्हे एक महान् देशभक्त और शान्ति के सच्चे पुजारी के रूप मे सदैव याद किया जाएगा।

राजबहादुर

भारत-पाक युद्धविराम के बाद उत्पन्न स्थिति पर
२४ सितम्बर १९६५ को संसद मे दिया गया भाषण।

देश के सामने खतरा अभी भी बना है।

आज जिन माननीय सदस्यों ने वादविवाद में हिस्सा लिया है, उनके प्रति मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। कई लोगो ने भाषण किए और उन्होने अपने-अपने ढंग से अपने विचार प्रकट किए। परन्तु मुझे सदन की हर दिशा से एक ही आवाज सुनाई दी—वह आवाज थी देशभक्ति को, अपने देश को प्रभुसत्ता और प्रादेशिक अखण्डता की किसी भी हमलावर से रक्षा करने की, राष्ट्रीय दृढ निश्चय को। यह सारे देश की जनता की आवाज थी, जिसे उनके चुने हुए ससद के प्रतिनिधियों ने साफ साफ शब्दों मे व्यक्त किया था। माननीय सदस्यो को स्मरण होगा, जब पिछली बार अप्रैल मे मैने सदन में वक्तव्य दिया था, तब उसमे मैने देश के लोगो से दिली एकता पैदा करने के लिए अपील की थी। यह एकता आज पूरी तरह से पैदा हो गई है और इस संकट की घड़ी में इसे कारगर रूप से प्रदर्शित किया जा चुका है। परीक्षा के इस समय मे, वास्तव मे एकता की ही सबसे बडी शक्ति हमारे पास थी। पाकिस्तान के हमले के बावजूद युद्ध विराम हो चुका है।

यह संभव है कि जब हम आगे की समस्याओ को निपटाने लगेंगे, तो और कठिनाइयाँ और जटिलताये पैदा हों। यह काम आसान नही। विशेषत. जब हम यह देखते है कि युद्धविराम मंजूर कर लेने के बाद भी प्रेसिडेंट अयूब खां तथा उनके विदेश मत्री ने धमकिया दी। मैने राष्ट्रसघ के महा-सचिव को अपने १४ सितम्बर के पत्र मे भारत के दृष्टिकोण को पूरी तरह स्पष्ट कर दिया है। सुरक्षा परिषद के तीन प्रस्तावो के संबंध मे जहाँ तक हमारा सवाल है, हम समझते है कि ये पाकिस्तान की नियमित सेनाओ और घुसपैठियो दोनो के लिए उतने ही लागू है। पाकिस्तान को इस बात की जिम्मे-दारी उठानी होगी कि उसने हमारे जम्मू-कश्मीर राज्य मे जो घुसपैठिये भेजे है, उनको वापस ले। परन्तु महासचिव की रिपोर्ट के बावजूद भी घुसपैठियो को भेजने के लिए वह अपनी जिम्मेदारी स्वीकार नही कर रहा है। यदि पाकिस्तान अपनी इस बात पर अडा रहता है तो भारत को उन्हें जबर्दस्ती बाहर निकालने और उसके खिलाफ अपने ढंग से कार्रवाई करनी होगी। इसके अलावा भविष्य मे हम उन व्यवस्थाओं को नही होने देंगे जिनसे घुसपैठियो के फिर से घुस आने का उद्देश बना रहे।

अपने जम्मू तथा कश्मीर राज्य के संबंध में जैसा कि सदन को मालूम है; हमारा मत दृढ और साफ है। यह राज्य भारत का अभिन्न अंग है, और भारतीय सघ की एक संविधानिक इकाई है। अतः पुनः आत्मनिर्णय लिये जाने का प्रश्न नही उठता। जम्मू तथा कश्मीर की जनता ने अपने

भारत के नुमाइन्दों के नामों का एलान भी कर दिया गया। मगर पाकिस्तान ने इस बहाने पर इस मुलाकात को टाल दिया कि वह अपने आम चुनावों में फँसा हुआ है। मैं इन बातों को इसलिये कह रहा हूँ क्योंकि ऐसा मालूम होता है कि प्रेसिडेंट अयूब इनको बिलकुल भूल गए हैं। क्योंकि इसके अलावा, उन्होंने अपनी तकरीर में जो कुछ कहा, उसकी और कोई वजह नहीं हो सकती।

इस नाजुक घड़ी में देशवासियों, हमारे मुल्क के रहने वालों की क्या जिम्मेदारियाँ हैं, क्या फर्ज और कर्त्तव्य हैं? इस वक्त आपका सबसे बड़ा फर्ज यह है कि आप इस बात की पूरी कोशिश करें कि देश में सब मजहब के लोग मेलजोल से आपस में किसी तरह रहें और शांति न टूटने पाये।

पंजाब और दिल्ली में फौरन सिविल डिफेंस—नागरिक सुरक्षा की योजना लागू की जा रही है। बाद में इसे और हल्कों में भी लागू किया जायगा। आप लोग इस योजना में अपना भाग लेने के लिये उन्हीं जजबात—भावना—से आगे बढ़ें, जिससे हमारे सिपाही मोर्चे पर लड़ रहे हैं। कारखाने के कामगारों से मैं निजी तौर पर अपील करना चाहता हूँ। मैं उनकी देशभक्ति से वाकिफ हूँ और मुझे पूरा यकीन है कि उनके मन में सबसे ऊँची जगह अपने देश के लिये ही है। हमें अपने कारखानों में ज्यादा-से-ज्यादा सामान बनाना है, अपने डाक-तार, सड़क, रेल, हवाई और पानी के रास्तों को चालू रखना है। अपने बन्दरगाहों में दिन-रात काम करना है और अपनी सप्लाई लाइन को चौबीसों घंटे चालू रखना है। हरेक कामगार भाई को इस काम को पूरा करने के लिये अपनी जान लड़ा देनी चाहिये।

मुल्क को आगे आने वाले कठिन समय के लिये तैयार होना है। हर आदमी को अपना फर्ज पूरी तरह, दिल से अदा करना चाहिये। हो सकता है कि हवाई हमलों से हमें नुकसान उठाना पड़े। राष्ट्र को—कौम को—हँसते-हँसते कष्ट और मुसीबत उठाने और कुर्बानी देने के लिये तैयार होना होगा। आजादी की रक्षा के लिये उसकी हिफाजत के लिये यह कीमत हम सबको देनी ही होगी। आज सारे राष्ट्र के लिये—सारी कौम के लिये—यह पुकार है कि वह इस चुनौती का डट कर सामना करने के लिये तैयार हो जाय।

—जय हिन्द

शास्त्री जी ने भारतीय इतिहास के सबसे अधिक कठिन संकट में देश को सफल नेतृत्व दिया। उन्हें एक महान् देशभक्त और शान्ति के सच्चे पुजारी के रूप में सदैव याद किया जायगा।

राजबहादुर

भारत-पाक युद्धविराम के बाद उत्पन्न स्थिति पर
२४ सितम्बर १९६५ को संसद मे दिया गया भाषण।

देश के सामने खतरा अभी भी बना है।

आज जिन माननीय सदस्यों ने वादविवाद में हिस्सा लिया है, उनके प्रति मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। कई लोगों ने भाषण किए और उन्होने अपने-अपने ढंग से अपने विचार प्रकट किए। परन्तु मुझे सदन की हर दिशा से एक ही आवाज सुनाई दी—वह आवाज थी देशभक्ति की, अपने देश की प्रभुसत्ता और प्रादेशिक अखण्डता की किसी भी हमलावर से रक्षा करने की, राष्ट्रीय दृढ़ निश्चय की। यह सारे देश की जनता की आवाज थी, जिसे उनके चुने हुए ससद के प्रतिनिधियों ने साफ साफ शब्दों मे व्यक्त किया था। माननीय सदस्यों को स्मरण होगा, जब पिछली बार अप्रैल में मैंने सदन में वक्तव्य दिया था, तब उसमे मैंने देश के लोगो से दिली एकता पैदा करने के लिए अपील की थी। यह एकता आज पूरी तरह से पैदा हो गई है और इस संकट की घड़ी में इसे कारगर रूप से प्रदर्शित किया जा चुका है। परीक्षा के इस समय में, वास्तव में एकता की ही सबसे बडी शक्ति हमारे पास थी। पाकिस्तान के हमले के बावजूद युद्ध विराम हो चुका है।

यह संभव है कि जब हम आगे की समस्याओं को निपटाने लगेंगे, तो और कठिनाइयाँ और जटिलतायें पैदा हों। यह काम आसान नहीं। विशेषतः जब हम यह देखते है कि युद्धविराम मंजूर कर लेने के बाद भी प्रेसिडेंट अयूब खां तथा उनके विदेश मत्री ने धमकिया दी। मैंने राष्ट्रसघ के महा-सचिव को अपने १४ सितम्बर के पत्र में भारत के दृष्टिकोण को पूरी तरह स्पष्ट कर दिया है। सुरक्षा परिषद के तीन प्रस्तावो के संबंध मे जहाँ तक हमारा सवाल है, हम समझते है कि ये पाकिस्तान की नियमित सेनाओ और घुसपैठियो दोनो के लिए उतने ही लागू है। पाकिस्तान को इस बात की जिम्मेदारी उठानी होगी कि उसने हमारे जम्मू-कश्मीर राज्य मे जो घुसपैठिये भेजे है, उनको वापस ले। परन्तु महासचिव की रिपोर्ट के बावजूद भी घुसपैठियों को भेजने के लिए वह अपनी जिम्मेदारी स्वीकार नही कर रहा है। यदि पाकिस्तान अपनी इस बात पर अडा रहता है तो भारत को उन्हे जबर्दस्ती बाहर निकालने और उसके खिलाफ अपने ढग से कार्रवाई करनी होगी। इसके अलावा भविष्य मे हम उन व्यवस्थाओं को नहीं होने देगे जिनसे घुसपैठियों के फिर से घुस आने का उद्देश बना रहे।

अपने जम्मू तथा कश्मीर राज्य के संबंध में जैसा कि सदन को मालूम है; हमारा मत दृढ और साफ है। यह राज्य भारत का अभिन्न अग है, और भारतीय सघ की एक संविधानिक इकाई है। अतः पुनः आत्मनिर्णय लिये जाने का प्रश्न नही उठता। जम्मू तथा कश्मीर की जनता ने अपने

आत्मनिर्णय के अधिकार को तीन आम चुनावों के जरिए जो वयस्क मताधिकार के आधार पर किए गए थे, उपयोग कर लिया है।

हमले की चुनौती का सामना करने में भारत सरकार ने जिस नीति को अपनाया था, ऐसा जो सार्वजनिक सहयोग मिला है, उसके लिए मैं कृतज्ञ हूँ। इससे हमारा हौसला बढ़ा है। फिर भी मैं यह कहना चाहूँगा कि अभी भी हमारे सामने खतरा बना हुआ है, हालांकि युद्धविराम हो चुका है। यह खतरा वास्तविक है। इन खतरों का सामना करने के लिए हमें तैयार रहना होगा और अपनी तैयारियों में किसी भी तरह की शिथिलता नहीं लानी होगी।

श्री पीटर अलवारिस ने यह मत व्यक्त किया है कि सोवियत रूस इस बात पर प्रायः राजी हो गया प्रतीत होता है कि कश्मीर के प्रश्न को फिर से उठाया जाय। ऐसा कहना सही नहीं होगा। रूस शांति का प्रबल समर्थक है। उसने युद्ध की विभीषिका को देखा है और वह मैत्री की भावना से इस बात की कोशिश करना चाहता है कि भारत और पाकिस्तान के बीच सम्बन्धों में सुधार हो। रूस के इरादे साफ हैं और इसलिए हमने उनके सुझावों का स्वागत किया है।

श्री भगवत झा आजाद के गैर सरकारी प्रस्ताव पर वादविवाद संसद के अगले अधिवेशन में होगा। अतः अभी मैं इसके बारे में कुछ नहीं कह सकता। कुछ नहीं कहना चाहूँगा।

कुछ माननीय सदस्यों ने हमारे विदेश में दूतावासों के कार्य की चर्चा की है। मैं सदन को पूरी सचाई के साथ यह बता सकता हूँ कि इस मौके पर हमारे सारे दूतावास सतर्क और सावधान रहे हैं।

उन्होंने उन देशों की सरकारों के सामने जिनमें वे नियुक्त हैं, भारत के न्यायसंगत पक्ष की तथा दिन-प्रतिदिन की घटनाओं के बारे में लगातार पूरी सूचनायें दी हैं। ये सरकारें क्या रुख अपनाती हैं, यह इस बात पर निर्भर नहीं है कि हमारे राजदूत उनसे क्या कहते हैं। हमें पूर्वाग्रहों और पक्षपात-पूर्ण रवैये का सामना करना पड़ता है। फिर भी हमें लगातार अन्य रूप से उनके सामने यथासम्भव अच्छे ढंग से अपने पक्ष को रखना ही चाहिए, ताकि दुनिया भर में हम मित्र बना सकें।

○

"लालबहादुर शास्त्री इस बात के प्रतीक हैं कि आम आदमी को भी लोकतन्त्र में कितनी ऊँची उपलब्धियाँ हो सकती हैं; यद्यपि वह निर्धन परिवार में जन्मे किन्तु अपनी ईमानदारी कठोर परिश्रम और त्याग के बल पर उन्होंने राष्ट्रीय सरकार में सर्वोच्च पद प्राप्त कर लिया। निःस्वार्थ भाव से राष्ट्रसेवा करने की उनमें अद्भुत लगन थी। वास्तव में महानता तो उन पर थोप दी गई।

उन्होंने संसदीय प्रणाली में एक नए अध्याय का सूत्रपात किया। उन्होंने सभी दलों के नेताओं से अनौपचारिक विचार-विमर्श कर राष्ट्रीय नीति निर्धारित करने की शुरुआत की। अपनी विनम्रता तथा ईमानदारी से ही वह विरोधी पक्ष को भी विशिष्ट महत्व के प्रश्नों पर अपने साथ लेकर चल सके।

—हुकमसिंह

१७, सितम्बर, १९६५ को प्रधानमन्त्री, श्री लालबहादुर शास्त्री का ससद के दोनो सदनो में दिया गया वक्तव्य ।

संसद् में प्रधान मन्त्री का वक्तव्य

मैं सदन को सूचित करना चाहता हूँ कि आज सुबह हमें चीन सरकार से एक पत्र मिला है, जिसमे कहा गया है कि हम तीन दिन के भीतर अपने उन कथित सनिक सस्थानो को हटा ले, जो चीन-सिक्किम सीमा के पार तिब्बत के प्रदेश मे बताता है। मै यहाँ चीन के पत्र के कुछ अश पढ़कर सुनाना चाहता हूँ, यद्यपि चीन का पत्र और हमारा उत्तर सदन की मेज पर रखा जाएगा।

"भारत सरकार अपने पत्रो मे सदा की तरह चीन भारत की सीमा और चीन-सिक्किम सीमा पर भारतीय फौजो को अतिक्रमण की कार्रवाइयो को छिपाने का प्रयास कर रही है। पर उसे इस प्रयास मे सफलता नही मिल सकती। १९६२ मे जब चीन ने स्वेच्छा से भारत-चीन सीमा पर युद्ध-विराम किया था और अपनी फौजो को हटा लिया था, उसके बाद से भारत की फौजो ने भी उत्तेजनात्मक कार्रवाइयाँ बन्द नहीं की और जमीन पर तथा आकाश मे चीन की सीमा का ३०० बार अतिक्रमण हुआ है। चीन सरकार ने बार बार भारत सरकार को विरोध-पत्र भेजे है और चेतावनियाँ दी है तथा कुछ मित्र देशों को भी इसकी सूचना भेजी है। तथ्य सामने है और भारत सरकार शब्दजाल के द्वारा इन्हे झुठला नही सकती। इसके अलावा चीन सरकार ने बार बार यह प्रस्ताव किया है कि चीन-सिक्किम सीमा के चीन की ओर से प्रदेश मे भारत ने गैरकानूनी तौर पर जो सैनिक ठिकाने बनाए है और हर बार जिनकी उपस्थिति के बारे मे इन्कार दिया है, उनकी जाँच चीन और भारत की संयुक्त जाँच टोली द्वारा की जाए। अब भारत सरकार बहाना बनाकर यह कह रही है कि यदि कोई स्वतन्त्र और तटस्थ प्रेक्षक वहाँ जाकर देखे तभी इस मामले का निपटारा हो सकता है। यह बेशर्मी से यह भी कहती है कि भारतीय फौजो ने सिक्किम-चीन सीमा को कभी पार नही किया जिसका विधिवत् निर्धारण हो चुका है और भारत ने सीमा के चीन की ओर के इलाके मे या सीमा पर भी कोई पक्के ठिकाने नही बनाए है। यह सफेद झूठ है। वह किस प्रकार उन बातों से किसी को धोखे मे डालने की बात सोचती है।

"जैसा सब जानते है, भारत सरकार सिक्किम के प्रदेश का इस्तेमाल लम्बे अर्से से चीन के खिलाफ कर रही है। पहले समय का क्या उल्लेख करे, सितम्बर १९६२ से भारतीय फौजो ने चीन-सिक्किम सीमा पार की है, जिस सीमा का बहुत समय पहले ही निर्धारण हो चुका है और हमले के लिए चीन-सिक्किम सीमा के चीन की ओर के इलाके मे या सीमा पर ही पक्के ठिकाने बनाए है। इस समय बड़े और छोटे ५६ ऐसे ठिकाने बने हैं। पिछले कुछ वर्षो में चीन-सिक्किम सीमा के सब महत्व-पूर्ण दर्रो पर ये ठिकाने बनाए गए है और इस प्रकार मनमाने ढग से चीन के प्रदेश मे घुसपैठ की गई है और उसकी प्रभुसत्ता का उल्लंघन किया गया है। इन वर्षो मे चीन सरकार ने भारत सरकार को इस

सम्बन्ध में तेरह वार लिखा। पर भारत सरकार से अव तक इस सम्बन्ध मे कोई भी बात सुनने के लिये इन्कार कर दिया है और वह चीन की प्रभुसत्ता तथा प्रादेशिक अखण्डता का जरा भी सम्मान नहीं कर रही है। अपनी आक्रामक कार्यवाहियो को रोकने की वात तो दूर, भारत सरकार ने चीन के प्रदेश मे हड़ताल और उत्तेजना फैलाने के लिए अपनी फौजो को भेजा है।"

चीन ने अपने इस पत्र मे जो वाते उठाई हैं, हम उन सबका उत्तर दे रहे है। अब जैसा कि मैंने कहा है, मैं भारत का उत्तर सदन की मेज पर भी रखूँगा। मै यहाँ अपने उत्तर के कुछ उद्धरण पढ़कर सुना रहा हूँ।

"चीन सरकार द्वारा भारत-चीन सीमा की समस्या उठाए जाने के वाद से भारत सरकार ने इस प्रश्न को शान्ति और सम्मानपूर्वक सुलझाने का पूरा प्रयास किया है। अक्टूबर-नवम्बर, १९६२ मे चीन के अकारण हमले के वाद भी भारत सरकार की हमेशा यही कोशिश रही है कि शातिपूर्वक ऐसा हल निकाला जाए, जो दोनो पक्षो के लिए सम्मानजनक हो।

"भारत सरकार ने पहले चीन सरकार को जो अनेक पत्र भेजे है उनमे भारत सरकार ने कहा है कि भारत की फौजो को ये कड़े निर्देश दिए गए है कि वे पूर्वी और मध्य क्षेत्रो मे अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तथा पश्चिम क्षेत्र मे तथाकथित "वास्तविक नियन्त्रण रेखा" को पार न करे। वहुत सावधानी से विस्तृत जाच के वाद भारत सरकार इस वात से आश्वस्त हुई है कि भारत की स्थल सेना और विमानो ने इन निर्देशो का पूरी तरह पालन किया है और अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तथा पश्चिम क्षेत्र मे "वास्तविक नियन्त्रण रेखा" को कभी भी कही भी पार नही किया है। अत भारत सरकार इस वात से पूरी तरह आश्वस्त है कि चीन के जिस पत्र का उत्तर भेजा जा रहा है, उसके आरोप पूरी तरह निराधार हैं। भारत सरकार इन आरोपो को अस्वीकार करती है और एक वार फिर जोर देकर यह बात दोहराती है कि चीन ने अपने पत्र मे पश्चिम, मध्य और पूर्व क्षेत्रो मे जिन विशाल भारतीय प्रदेशो पर अपना दावा किया है, उन्हे वह स्वीकार नही करती। जहाँ तक कश्मीर के और भारत तथा पाकिस्तान के के वीच, वर्तमान दुर्भाग्यपूर्ण सघर्ष के सवध मे, चीन के रुख का प्रश्न है, यह केवल चीन का हस्तक्षेप है, जिसके द्वारा वह इस सघर्ष को वढाना और व्यापक वनाना चाहता है। इस मामले की पृष्ठभूमि यह है कि सितम्वर, १९६२ मे चीन-भारत सीमा के सिक्किम की ओर के इलाके मे कुछ रक्षात्मक ठिकाने वनाए गए। नवम्वर, १९६२ मे लड़ाई वन्द होने के वाद से इन ठिकानो पर सैनिक तैनात नही है। चीन सरकार के यह आरोप लगाने पर कि इनमें से कुछ ठिकाने सीमा पर उनके इलाके मे है, भारत ने १२ सितम्वर, १९६५ के अपने पत्र मे यह सुझाव दिया कि सीमा पर जाकर स्वय पूरी स्थिति देखने के लिए कोई स्वतन्त्र प्रेक्षक भेजा जाए। दुर्भाग्यवश चीन सरकार ने इस उचित प्रस्ताव को स्वीकार नही किया और फिर भारत और चीन के अधिकारियो के सयुक्त निरीक्षण के अपने प्रस्ताव को दोहराया है। चीन सरकार को आज जो उत्तर भेजा जा रहा है, उसमे हम उसे सूचित कर रहे है कि उसके आरोप विल्कुल गलत है। फिर भी हम यह नही चाहते कि चीन को आक्रामक कार्यवाही के लिए किसी वहाने की गुंजाइश रहे। हम उसे सूचित कर रहे है कि सिक्किम-तिव्वत सीमा के उन स्थानो को संयुक्त-निरीक्षण पर हमे कोई आपत्ति नही है, जिसके वारे मे चीन ने यह कहा है कि भारतीय फौजो ने तिव्वत के प्रदेश मे सैनिक ठिकाने वनाए है। भारत सरकार जल्दी से जल्दी अपनी ओर से इस निरीक्षण की व्यवस्था करने को तैयार

है। वह इस कार्य के लिए किसी भी ऐस समय, जो दोनों पक्षों के लिए सुविधाजनक हो, उपयुक्त अधिकारियों को भेजने को तैयार है।

हमने चीन सरकार को इसी आधार पर उत्तर दिया है और आशा करते है कि चीन सरकार इस पर राजी हो जाएगी। चोन के पत्र और हमारे उत्तर की प्रतियाँ सदन की मेज पर रख दी गई है।

मै यह जानता हूँ कि माननोय सदस्यों को चोन सरकार के इरादों पर चिन्ता होगो। हम आशा करतेहै कि चीन वर्तमान स्थिति का लाभ उठाकर भारत पर हमला नहीं करेगा। मै सदन को विश्वास दिलाता हूँ कि हम पूरो तरह सतर्क है और यदि हम पर हमला हुआ, तो हम अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए पूरे संकल्प स लड़े गे। चीन का सैन्यबल हमें देश की प्रादेशिक अखण्डता की रक्षा से विचलित नही कर सकेगा। मै भविष्य की घटनाओ से सदन को अवगत कराता रहूँगा।

भारत के जन-प्रिय नेता स्वर्गीय शास्त्री जी के विषय मे जितना कहा जाय, थोडा होगा। अल्पकाल मे ही उन्होने भारत की समस्याओ को सुलझाने का जैसा सुन्दर प्रयास किया, वह अब हमारे इतिहास का एक सुनहरा पृष्ठ है। जब देश के सामने सकट को घडो आई तो जिस दृढता, साहस, सूझ-बूझ और धर्य के साथ उन्होने देश का नेतृत्व किया, उसने सारे संसार को बता दिया कि अपने मूलभूत सिद्धान्तो की रक्षा के हेतु भारत हमेशा कटिबद्ध रहेगा। वह शान्ति के उपासक थे क्योकि यह विरासत उनको महात्मा गाधी और पं० जवाहरलाल नेहरू से मिलो थी। इसोलिए ताशकन्द को कान्फ्रेन्स मे भारत और पाकिस्तान के बोच मैत्री हो, इसके लिए अथक परिश्रम किया और एक शानदार कामयाबी हासिल को। वह स्वयं गरोब परिवार के थे, इसलिए गरोबो के लिए उनके दिल मे एक सहानुभूति थी। वह ऐसा समाज बनाने के लिए, जिसमे भारतवर्ष के सब निवासियो को अपनी-अपनी आवश्यकताएँ पूरी करने का मौका मिले, हमेशा चिन्तित रहते थे। जो उन्होने इस दौरान मे किया, वह इसो दिशा मे भारत को आगे ले जाने के लिए किया। हमारे बीच से एक ज्योति पुज उठ गया। मुझ पूरा विश्वास है कि उनके आदर्श और उनका जोवन हमेशा इस देश को रोशनी दिखाता रहेगा। हम भारतवासी उनके स्वप्न को साकार बनाने का प्रयत्न करे, यही दिवंगत नेता के प्रति हमारो सच्चा श्रद्धांजलि होगी।

— गुलजारीलाल नन्दा

२२ सितम्बर, १९६५ को संसद में शास्त्री ने
युद्ध विराम आदेश पर वक्तव्य दिया।

'भारत एक होकर उठ खड़ा हुआ'

प्रधान मन्त्री ने आज संसद् मे अपने वक्तव्य मे कहा कि ५ अगस्त, १९६५ को पाकिस्तान ने हजारों सशस्त्र आक्रमणकारियो को चोरी से जम्मू-काश्मीर मे युद्धविराम रेखा के पार भेजकर जो भारी आक्रमण शुरु किया था और जिसके फलस्वरूप भारत को यह लडाई लडनी पड रही थी, इसके विषय मे २० सितम्बर, १९६५ को सुरक्षा परिषद् ने एक प्रस्ताव पास किया था, उसकी कॉपी मै सदन की मेज पर रख रहा हूँ।

सुरक्षा परिषद् ने इसमे यह कहा था कि दोनों सरकारे २२ सितम्बर, १९६५ अर्थात् आज भारतीय समय के हिसाब से १२ ३० बजे दिन मे युद्ध रोक देने का आदेश दे दे। युद्धविराम के बारे में भारत सरकार के विचारो को विस्तार के साथ और बिल्कुल स्पष्ट रूप से मैने सितम्बर, १४ और १५, १९६५ को जो दो पत्र सयुक्त राष्ट्र सघ के महासचिव को लिखे थे, उनमे लिख दिया था। इन पत्रो में भारत सरकार ने स्पष्ट रूप से यह स्वीकार किया था कि हम बिना कोई पहले से शर्त लगाये युद्धविराम का आदेश दे देंगे, जब हमे यह सूचना मिल जायगी कि पाकिस्तान ने भी ऐसा ही करना स्वीकार कर लिया है। इसलिए सुरक्षा परिषद् का प्रस्ताव मिलने पर हमने अपने इसी रुख के अनुसार महासचिव को यह लिख दिया कि हम निर्धारित दिन और समय से युद्धविराम का आदेश देने को तैयार है बशर्ते पाकिस्तान भी ऐसा ही करने को तैयार हो। इस पत्र की कॉपी भी सदन की मेज पर रख दी गई है।

कल दिन भर महासचिव से और कोई सन्देश नही मिला, मगर आज सवेरे तडके हमे उनका यह सन्देश मिला कि हम सुरक्षा परिषद् के प्रस्ताव के अनुसार एकतरफा युद्धविराम कर दे और हम यह शर्त रख सकते है कि यदि पाकिस्तानी सेना हमारे ऊपर हमला करे तो हमारे सैनिक उसका जवाब दे सकते है। लेकिन यह बात बिल्कुल नामुमकिन है। जब लडाई चल रही हो तो एक पक्ष के लिए यह सम्भव नही है कि यह अपने सिपाहियो को गोली चलाने से रोक दे और दूसरे पक्ष को लडाई जारी रखने को पूरी छूट दे दे। इसलिए सयुक्त राष्ट्रसघ मे हमारे प्रतिनिधि ने महासचिव को इसी आशय की सूचना दे दी।

थोडी देर पहले यह सूचना मिली कि पाकिस्तान के विदेश मन्त्री के अनुरोध पर सुरक्षा परिषद् की जरूरी बैठक बुलाई गई। जिसमे पाकिस्तान की ओर से यह घोषणा की गई कि वे भी युद्ध-विराम और गोलीबारी बन्द करने का आदेश देने को राजी हो गये है। हमारी ओर से रणक्षेत्र मे हमारे सेनानायको को आदेश दिए जा रहे है कि वे कल सवेरे साढे तीन बजे से पूरी तरह से युद्ध रोक दे।

सुरक्षा परिषद् के प्रस्ताव मे अन्य विषयो का भी जिक्र है, जिन पर बाद मे विचार करना होगा। किन्तु मैंने सदन मे और महासचिव को अपने हाल के पत्र मे भी बता दिया है कि भारत सरकार की नीति उन विषयो पर, जो इस लड़ाई से सम्बन्धित है और जिनका हमारे लिए अत्यन्त महत्व है, क्या है?

का कार्य है। वलवन्तराय जी, उनकी पत्नी और उनके साथ यात्रा करने वालों ने देश की आजादी के लिए अपने प्राणों की वलि दी है। उन्हे हमेशा याद रखेंगे।

चीन का अल्टीमेटम अभी भी हमारे सामने है। आपको मालूम है कि इस समय सितम्बर १६ को चीन सरकार ने अपने अल्टीमेटम की अवधि ७२ घण्टे और बढ़ाने का ऐलान किया, प्रायः उसी समय से हमारी सीमा पर अनेक स्थानों पर उनकी सेना ने छेड़छाड़ शुरू कर दी। सिक्किम सीमा पर, जिसके बारे में चीनियो ने बिल्कुल वे बुनियाद और धमकी भरे आरोप किए है, चीनी सैनिको ने सितम्बर २० को दोंग चुइला और सितम्बर २१ को नाथूला पर सीमा पार की है, यद्यपि यह सीमा अच्छी तरह से निश्चित और मान्य है। उन्होने हमारी कुछ निरीक्षण चौकियों पर गोली चलाई। उन्होंने हमारे और इलाकों मे भी घुसपैठ करने की कोशिश की। हमारी सेना को स्पष्ट आदेश है कि वह आक्रमणकारी को पीछे धकेल दे।

चीन ने २० सितम्बर को जो नोट भेजा था, जिसमे उन्होने यह आरोप किया था कि भारत ने डुमचाले मे सीमा का अतिक्रमण किया है और सैनिक भेजे हैं, इसका जवाव हमने कल दिया है। हमने लिख दिया है कि यह चीन का आरोप झूठा है और चीन ने छमत्सस्कुर मे हमारे इलाके मे घुसकर गोली चलाने के लिए यह वहाना गढा है।

सदन को मालूम है कि १६ सितम्बर को चीन सरकार ने बड़ी अनुचित भाषा मे हमे एक नोट भेजा था, जिसमे अल्टीमेटम की अवधि वढाई थी और फौजी निर्माणो को नष्ट करने की माँग की गई थी। इसका उत्तर और कल हमने जो दो अन्य नोट भेजे थे, उनकी कॉपियां सदन की मेज पर रख दी गई हैं। हमने चीन सरकार से पहले ही कह दिया था कि अगर दोनों ओर के अधिकारियों के संयुक्त निरीक्षण के वाद पता चले कि सीमा के उस पार तिब्बत की ओर कोई फौजी निर्माण किए गए हैं तो उनको नष्ट करने पर कोई एतराज नहीं हो सकता। मुझे पता चला है कि चीन ने यह घोषित किया है कि ऐसे कुछ निर्माण हमारे सैनिको ने पीछे हटने के पहले गिरा दिए हैं। यह वात मनगढ़न्त है। सीमा पर चीन की कार्यवाहियो को और हमारे इलाके मे उनके सशस्त्र आदमियो के घुसने को हम बड़ी गम्भीरता से देखते हैं। १६ सितम्बर के वाद चीन के नोट के जवाव मे २१ सितम्बर को हमने जो नोट भेजा है, उसमे हमने चीन सरकार से आग्रह किया है कि वह लडाई-झगड़े का रास्ता छोड़कर शांति और समझदारी का रास्ता अपनाए। मुझे आशा है कि चीन अव भी हमारी इस वात को मानेगा और ऐसा करेगा, जिससे कोई बड़ा सकट न खड़ा हो। परन्तु हमे मालूम नही कि चीन क्या करेगा, इसलिए हमे पूरी सीमा पर सावधानी वरतनी होगी।

राष्ट्र के लिए यह सबसे वड़ी परीक्षा की घड़ी है। लेकिन हमारे देश के लोगो मे यह जोश और वढता है, जिससे आजादी की रक्षा होती है। हमे वहुत से उतार-चढ़ाव का सामना करना पड़ सकता है, परन्तु मुझे मालूम है कि लोग इस ओर भी बड़े खतरे का सामना करने के लिए कृतसकल्प हैं। हमारी सेनाओ पर और भी भारी जिम्मेदारी आ सकती है। हम इस स्थिति की गम्भीरता को कम करके नही आंकते। परन्तु हमने अपनी आजादी पर इस खतरे का मुकावला करने का दृढ़ निश्चय कर लिया है।

●

१० अक्टूबर को आल इण्डिया रेडियो से प्रसारित भाषण।

आत्मनिर्भर और शक्तिशाली बनें

पिछले कुछ सप्ताह में जो घटनाएं घटो है, उनसे सभो देशवासियों में अपनी जिम्मेदारियों की एक नई और गहरो भावना जगी है। इनमें सबसे बड़ो जिम्मेदारो अपनी स्वाधीनता को बनाए रखने को है। हमें अचानक ऐसी चूनौती (चैलेंज) का सामना करना पड़ा, जो हमारे लिए एक नई चीज थो। लेकिन हमने तेजो के साथ और अच्छे ढंग से इसका मुकाबला किया। भारत के बहादुर सिपाहियों और वायुसैनिकों ने सर हथेलो पर रखकर इस चैलेंज का जवाब दिया। वोर सैनिकों ने जानलेवा जख्मो की परवाह न को और हँसते हुए मौत को गले लगाया, इसलिए कि उनका देश आजादी और इज्जत के साथ जिन्दा रहे। ये बहादुर सिपाहो कौन थे ? हमारे ही तो बेटे और भाई थे। उन्होंने हमें वीरता और त्याग का रास्ता दिखाया और हम सबको उन पर गर्व और नाज है। लेकिन काम अभी पूरा नहीं हुआ है। सच पूछिए तो यह काम कभो खत्म होने वाला नहीं है। तन-मन-धन से भारतमाता की रक्षा करने का कर्त्तव्य सदा हमारे सामने रहेगा।

प्यारे देशवासियो ! देश को आजादो को बनाए रखना केवल सिपाहियों का हो काम नहीं है। सारे देश को मजबूत बनना है। जिस उत्साह, दृढ़ता और त्याग की भावना ने लड़ाई के मैदान में हमारे जवानों को प्रेरणा दी थी, वहो भावना आज हम सबके अन्दर होनी चाहिए और उसो मजबूती से हमको भी अपना कर्त्तव्य और फर्ज पूरा करना है। इसके लिए बातों की नहीं, कुछ कर दिखाने को जरूरत है।

एक सबक जो हम सबको सोखना है और जिसे हमें दिल से समझना है, वह यह कि आजादी की रक्षा के लिए हमारे देश की अपनी शक्ति बढ़नी चाहिए और हमें जितना भी हो सके अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए। हमें अपना आर्थिक ढाचा ऐसा बनाना है कि जरूरी चोजें हम अपने-आप बनाएँ और पैदा करें।

मै आपसे अन्न और अनाज के बारे में कुछ बातें करना चाहता हूँ। इसका महत्व सबसे ज्यादा है। अपनो जरूरत भर का अनाज पैदा करना आज मैं उतना हो जरूरी समझता हूँ जितना रक्षा का प्रबन्ध करना। दूर भविष्य को ध्यान मे रखते हुए यह जरूरी है कि हम भोजन में कमो करके नहीं, बल्कि देश के अन्दर ही काफो अनाज पैदा करके आत्मनिर्भर बनें। इससे हम एक स्वस्थ और ताकतवर राष्ट्र बना सकेंगे। अनाज के लिए बाहर के देशों के सहारे रहना न केवल देश की अर्थ-व्यवस्था के लिए बुरा है, बल्कि इससे हमारे आत्मविश्वास और स्वाभिमान, इज्जत और भरोसे को भी ठेस पहुँचती है। हमें अपने पैरो पर खड़ा होना है और अपनी जरूरत का अनाज खुद पैदा करने के लिए अभी से प्रयत्न करना है। आज अनाज का मोर्चा लगभग उतना ही अहम, महत्वपूर्ण है जितना फौजी मोर्चा।

देश मे अनाज की कमी का अन्दाजा बाहर से हर साल मंगाए जाने वाले अनाज की मात्रा से लगता है। हमारे अनाज की खपत का आठ फीसदी से भी कम, या यो समझिये कोई बारहवा हिस्सा, बाहर के देशो से आता है। अगर हम जी-जान से कोशिश करे तो कोई वजह नही कि इतनी-सी कमी को पूरा न किया जा सके। हमे इस सवाल को इसी समय हाथ मे लेना चाहिए। रबी की बोवाई अभी-अभी होने वाली है और यही सबसे महत्वपूर्ण समय है। इस समय हम जो कुछ कर पायेंगे, उस पर हमारे देश का आने वाले साल मे बहुत कुछ भाग्य निर्भर रहेगा। "जहाँ पहले एक दाना उगता था, वहा अब दो उगेगे"—यही हमारा उद्देश्य, यही हमारा नारा होना चाहिए।

जहा तक खेतो के काम का सम्बन्ध है, मेरे किसान भाई इस बारे मे मुझसे कही ज्यादा जानते है। इसलिए मुझे विस्तार या तफसील मे नहीं जाना है। खेतो की पैदावार बढाने का मतलब घनी खेती करना है। जहाँ पहले एक फसल उगती थी, उसी जमीन पर दो फसले उगाई जाएँ। अगर दो फसलें उगाई जा चुकी है तो तीसरी फसल के लिए कोशिश की जाए। अगर सही तरीके से यह तय कर लिया जाय कि किस फसल के बाद कौन-सी चीज पैदा करनी है, तो यह दो और तीन फसले पैदा करना कठिन नही है। बड़ी फसलो के साथ कुछ छोटी फसले भी पैदा करने की पूरी कोशिश होनी चाहिए।

आप सब जानते है कि हमारे पास रासायनिक खाद (फर्टिलाइजर) इतनी नही है, जितनी हमे चाहिए। विदेशी मुद्रा की कमी के कारण हम उसे बहुत बाहर से इस समय नही मगा सकते। हमे इस कमी को पूरा करने के लिए कम्पोस्ट खाद तैयार करने को ओर पूरा ध्यान देना चाहिए। कम्पोस्ट खाद मे गोबर की साधारण खाद से ज्यादा नाइट्रोजन और फसलो को ताकत देने वाली दूसरी चीजे होती है। इसलिए, कम्पोस्ट खाद ज्यादा-से-ज्यादा तैयार करने मे, हमे पूरी तरह लग जाना चाहिए। मुझे शक नही है कि इससे खेतो को पैदावार काफी हद तक बढ़ाई जा सकती है।

आपको मालूम ही है कि खेती की सफलता सिंचाई से है। देश के सभी इलाको मे सिंचाई का पूरा प्रबन्ध नही है। लेकिन जहा भी सिंचाई का इन्तजाम है, वहाँ इन साधनो का किफायत के साथ इस्तेमाल होना चाहिए और ज्यादा-से-ज्यादा लाभ उठाया जाना चाहिए। सिचाई के साधनो से पूरा फायदा उठाने के लिए पहले से कार्रवाई की जाए। इस साल देश भर मे बारिश आम वर्षो के मुकाबले कम हुई है। तरावट की कमी के कारण रबी की फसलो के लिए कुछ दिक्कत है, लेकिन इससे हमे अपने उद्देश्य से नही हटना है, कोशिशो मे कमी नही करनी है। जहाँ सिंचाई के साधन काफी न हो, वहाँ कच्चे कुएँ खोदे जा सकते हैं।

सकट के इस समय मे हर इलाके के लोगो को चाहिए कि वे अपने यहाँ की हालत को देखते हुए अनाज और दूसरी जो भी फसले उगा सके, उगाए। जमीन के हर टुकड़े पर खेती की जाए। शहरो मे भी खाली जमीन के हर टुकड़े पर, बागो के छोटे-छोटे हिस्सो पर, जहाँ भी हो सके, सब्जियां उगाई जाए। सब्जी का सुन्दर सजा हुआ बगीचा हर घर के लिए गर्व की चीज होना चाहिए। केला और पपीता जैसे जल्द फल देने वाले पेड़ भी बड़ी तादाद मे उगाए जा सकते हैं ये चीजे अनाज के कम खर्च मे हमारी मदद करेगी।

अब तक मैने अनाज की पैदावार बढ़ाने के लिए कोशिश करने की बात कही है। जाहिर है सिर्फ अनाज पैदा करना ही काफी नहीं है। हमें सारी जनता को अनाज देना है। हमारा उद्देश्य यह होना चाहिए कि अनाज की मुनासिब और सही बॉट हो। इस काम मे भी किसान सबसे ज्यादा सहायता कर सकते है। किसानो को कारखानो और खानों के मजदूरों, खेतिहर मजदूरों, नगरवासियों और फिर देश की रक्षा करने वाले सैनिकों को खिलाना है। किसान भाई अपनी जरूरत का अनाज बड़ी खुशी से अपने पास रखे। लेकिन जो बचे उसे उन्हे बेचना ही चाहिये। अपने पास रखना देश पर संकट लाना होगा। आपको यह विश्वास दिलाया जा चुका है कि आपकी उपज की मुनासिब कीमत मिलेगी। मै खास तौर से बड़े किसानों से कहना चाहता हूँ, जो अनाज अपने पास रोक रख सकने की कुछ शक्ति रखते है, वे आगे आएं और उनके पास जो भी अधिक अनाज पड़ा है, या आगे भी उनके पास बचे, उसे वे मंडी में ले आए। संकट की इस घड़ी मे यही उनकी सबसे बड़ी देश-सेवा होगी। किसानों का इस समय एक ही नारा होना चाहिए :–"ज्यादा पैदा करो और ज्यादा बेचो।" हर गांव मे खेती को बढाने का काम तेजी और मजबूती से होना चाहिए। मुझे आशा है, ग्राम-पचायते और किसानों की को-ऑपरेटिव सोसाइटियॉ इस काम मे पूरी तरह से हाथ बंटाएंगी। आजादी की लड़ाई मे भारत के किसान सदा आगे रहें। मुझे भरोसा है कि आज भी जरूरत की इस घड़ी में वे देश का साथ देंगे।

व्यापारियों से मेरा कहना है कि वे माल को अपने पास बचाकर न रखें। उन्हे यह देखना चाहिए कि लोगों को खाने-पीने की सभी जरूरी चीजे मुनासिब दामों पर मिलती रहे। मुझे इस बात की खुशी है कि व्यापारियों ने कीमतो को बढ़ने से रोकने की कोशिश की है। आशा है, कठिनाई के इन दिनो में वे राष्ट्रसेवा की इसी भावना से काम करेंगे। आज संकट के इस समय मै उनकी जिम्मेदारी बहुत बड़ी है।

जहॉ तक हमे दूसरे लोगों से सम्बन्ध है, हमारे लिए जरूरी है कि हम अनाज या और कोई चीज जो कम हो, उसे खरीद कर जमा करने की कोशिश न करें। हम सिर्फ उतना ही माल खरीदें जो हमारी साधारण जरूरतों के लिये काफी हो। किसी के पास न हो और किसी के पास ज्यादा, यह आज हम कैसे देख और सोच सकते है। यदि त्याग करना पड़े तो सबको बराबर का त्याग करना चाहिए। हम लोग थोड़े संयम से काम लेकर देश की काफी मदद कर सकते है।

अमरीका के विशेष रूप से हम आभारी है तथा कुछ दूसरे मित्र-देशों के भी जो हमे अनाज दे रहे है। लेकिन हमें ऐसी हालत के लिये तैयार रहना चाहिए, जब हम विदेशो से अपनी जरूरत के लिए अनाज नही मंगा पायेंगे। ऐसी हालत का सामना करने को हमे तैयार रहना है। अनाज है, तो हर एक को खाने को मिलेगा। अगर कम है तो, सब को खुशी के साथ थोड़ा त्याग करने के लिये तत्पर रहना होगा।

हम अनाज की पैदावार बढ़ाने की कोशिश तो कर ही रहे है, लेकिन पूरी तरह अपने पैरों पर खड़े होने में कुछ देर लगेगी। तब तक हमें अनाज की खपत में कुछ संयम से काम लेना होगा। खाने-पीने की सभी चीजों की खपत कम होनी चाहिए। पार्टियों और दावतों का यह समय नहीं है। व्याह-शादियों पर भी किसी तरह का दिखावा नहीं होना चाहिए और बहुत से खाने नही परोसे जाने चाहिए। होटलों और रेस्तोरानों को समय के अनुसार चलना चाहिए। आज जरूरत त्याग की है, किफायत की है। लोगों को इसी की ओर आना चाहिए और सारे देश को इस ओर ले जाना चाहिए।

महिलाओं के कर्त्तव्य के बारे मे भी मैं कुछ बातें कहूँगा। वे आज के सकट मे बहुत सहायता कर सकती हैं। वे खाने में ऐसी चीजे परोसें जो आसपास के इलाके मे ज्यादा पैदा होती हो, पर ज्यादा खाई नही जाती हो। इस प्रकार वे घर के लोगो की खुराक की आदतो को बदल सकती हैं। हम अपने भोजन मे कुछ गेहूँ और कुछ मक्का, जौ, बाजरा और चना आदि खा सकते हैं। गृहिणी को चाहिए कि वह अनाज की खपत मे किफायत करे और इस बात की कोशिश करे कि कुछ भी बेकार नष्ट न हो। दुर्भाग्य से आजकल के दिनो मे भी खाने-पीने की काफी चीजे खराब हो जाती हैं, ऐसा नहीं होना चाहिए। खुशहाल घरो मे सब्जियाँ, फल, गोश्त और मछली आदि ज्यादा खाकर अनाज की खपत मे कमी की जा सकती है। मैं चाहता हूँ ऐसे परिवार मे हर हफ्ते कम-से-कम कुछ बार का खाना बिना अनाज के परोसा जाय। भारत की महिलाओ ने देश की सेवा मे सदा योग दिया है। अब वे अनाज की बचत और त्याग मे भी देश का नेतृत्व करे।

रबी की बोआई जल्द शुरू होने वाली है और आने वाले तीन-चार हफ्तो का महत्व बड़ा है। कोई जमीन का टुकड़ा खाली नही रहना चाहिए। जमीन के छोटे-से-छोटे टुकड़े को भी काम मे लाना है। सरकार की सारी मशीनरी, सगठन, को किसानो की सहायता के लिए तैयार किया जा रहा है। मैं मुख्यमन्त्रियो से अनुरोध कर रहा हूँ कि वे जिला-अधिकारियो को अपने इलाको मे अनाज उत्पादन आन्दोलन फौरन शुरू करने का हुक्म द। इस काम में सामुदायिक विकास, कम्यूनिटी डेवलपमेण्ट सगठन को बहुत कुछ करना है। बीज, रासायनिक खाद, पानी और दूसरी जरूरी चीजो को किसानों तक पहु-चाने के लिए अच्छे-से-अच्छे ढग और पूरे तालमेल के साथ काम किया जाए। हर जिले की अपनी योजना हो और अलग-अलग सरकारी कर्मचारियो पर गावो के समूहो की जिम्मेदारी सौप दी जाए। यह उनका फर्ज होग कि वे किसानों के साथ पूरा सम्पर्क रख और उनकी कठिनाइयो को दूर करने के लिए भरसक कोशिश करें। जिले मे अधिकारियो के पूरे दल को मोर्चे पर लड़ने वाले सिपाही की सी भावना से काम करना होगा। डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट अपने आपको, पूरी नम्रता के साथ, एक कमाडर की तरह समझे, जिसे इस आन्दोलन को चलाना है और अपना लक्ष्य पूरा करना है। अपने रोजाना काम को डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट को, किसी और सीनियर अफसर को सौप देना चाहिए और अपना ध्यान और ताकत लगभग पूरी तरह से खेती की पैदावार की ओर लगानी चाहिए। अगर अधिकारी इस काम को न केवल अपना फर्ज समझ कर बल्कि सकट की घड़ी मे देश के प्रति अपनी जिम्मेदारी मानकर जुट जायेंगे, तो उनकी कोशिशे जरूर सफल होंगी।

वक्त बहुत नाजुक है, खतरा अभी टला नही है। सकट के समय मे बहादुर जवानो ने जो रास्ता दिखाया है, क्या हमारे किसान उससे पीछे रह सकते है? जवान अपना खून बहा रहा है, देश के लिए अपनी जान की बाजी लगाए बैठा है। किसान को अपनी मेहनत और अपना पसीना देना है। किसान हमारे देश के प्राण हैं। उन्हे आज लाखो की तादात मे उत्साह और मेहनत से खेती मे जुट जाना है। उनके सामने एक ही मन्त्र है "अनाज की पैदावार बढाओ"। हम दूसरे देशों पर निर्भर न रहे। हम अपनी आजादी को सजोये रखे। हम पर जो कुछ भी बाते, देश का सम्मान सदा बना रहे। हमें आत्मनिर्भर, शक्तिशाली देश बनना है और हम बनकर रहेंगे।

○

२० अक्टूबर १९६५ को, राष्ट्रीय एकता दिवस के अवसर पर प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने रेडियो से एक संदेश प्रसारित किया।

देश की ताकत बढ़ाने के लिए रुपया चाहिए

पिछले कुछ दिन मै दौरे में कई जगह गया हूँ। सबसे पहले मै लाहौर और स्यालकोट क्षेत्रों में अगले मोर्चों पर गया। वहाँ मैने फौज और वायु सेना के जवानों को हौसले से भरपूर और लड़ाई के लिए चुस्त और चौकस पाया। बम्बई, औरंगाबाद और पैठन गाँव में मैने लाखों लोगों को देखा। उनके चेहरों पर एक नये विश्वास की चमक थी और उनकी आंखों मे नये सपने झलक रहे थे। तीन साल पहले चीन के हमले के बाद जब हमने २० अक्तूबर को राष्ट्रीय एकता दिवस मनाना शुरू किया, तो हमने अपने सामने एक उद्देश्य रखा। वह उद्देश्य – वह मकसद – आज पूरी तरह हासिल हो गया है। आज एकता का एक सुन्दर चित्र देश के सामने है और इस एकता को सारी दुनिया ने देख लिया है। लोगों मे आज एक नये जोश का संचार हुआ है और वे सभी क्षेत्रों में हर कमी को पूरा करना चाहते है।

हम अभी भी संकट के बीच में हैं और ऐसा लगता है कि यह हालत अभी काफी समय तक रहेगी। इसलिए हमें चीजों को काफी लम्बे अरसे के ख्याल से देखना होगा और सभी पक्षों और पहलुओं पर विचार करना होगा।

कल एकता दिवस मनाया जायगा। इस मौके पर इस साल हम यह संकल्प लें कि हम अपने पाँव पर खड़े होने की पूरी कोशिश दृढतापूर्वक करेगे। इस ओर जनता का ध्यान खिचा है। आत्म-निर्भरता का मतलब यह नहीं है कि हमारे पास हमारी जरूरत की हरेक चीज हो। दुनिया का कोई भी देश सब तरह से अपने ऊपर निर्भर नही हो सकता। आत्मनिर्भरता मन को एक रुझान है। एक गरीब आदमी भी आत्मनिर्भर हो सकता है और एक अमीर आदमी का काम औरों पर निर्भर हुए बिना शायद न चले। आत्मनिर्भरता का मतलब यह है कि हमारे पास जो कुछ भो है उसका हम अधिक अच्छा इस्तेमाल करे और जो नहीं है, उसके बिना काम चलाने का हौसला रखें।

तीन ऐसे क्षेत्र है, जिनमें आत्मनिर्भरता की सबसे ज्यादा जरूरत है। सबसे पहले तो यह जरूरी है कि हमारी फौज इस ढंग से तैयार हो कि वे हमारी सीमाओं की रक्षा कर सके और हमारे सामने जो चुनौती है, उसका सामना कर सकें। इसलिए अपने रक्षा उद्योगों का हमें अधिक से अधिक तेजी से विकास करना है। दूसरा मतलब यह है कि अनाज की अपनी जरूरत को हम खुद पूरा कर सकें। इसके बारे में, मै आपसे अभी कुछ ही दिन पहले कह चुका हूँ। ऐसा लगता है कि किसान को अपनी जिम्मेदारी का अनुभव है और उनके सहयोग से हौसला बढता है और सन्तोष होता है।

जो लोग हमारी मदद के लिए आगे आते हैं, उनके हम कृतज्ञ है, शुक्रगुजार है। लेकिन हमें अपने ही पांवों पर मजबूती से खड़े होने के लिए भी तैयार रहना है और यह काम आज और अभी करना है। हमें अपने आपसे जो सवाल पूछना है, वह यह है कि हम अपनी कोशिश से खुद क्या कर सकते है, जिससे विकास और रक्षा की हमारी जरूरतों के लिए साधन जुटाए जा सकें।

ये साधन हमे खुद पैदा करने हैं। अपने उत्पादन का काफी बड़ा हिस्सा हमें लोगों की रोज-मर्रा की जरूरत पूरा करने के लिए तो लगाना ही होगा, लेकिन अगर हम अपने ऊपर निर्भर होकर तेजी से बढ़ना चाहते हैं, तो हमें दो बाते करनी हैं, एक तो हमें ज्यादा पैदा करना होगा और खपत कम करनी होगी।

मैं जानता हूँ कि हमारी आमदनी कम है और हमारे लिए चीजो की मौजूदा खपत को घटाने की बात सोचना आसान नहीं है। लेकिन फिर भी हमे याद रखना है कि अगर हम आज अधिक बचत करते है, तो कल हमे ज्यादा खर्च करने का मौका मिलेगा। यह बात जितनी सही हमारे निजी मामलो मे है, उतनी ही राष्ट्र के मामलो के लिए भी है। अपने बच्चो के लिए और आने वाली पीढ़ियो के लिए हमे आज त्याग करना है। इसलिए यह हो सकता है कि हमे बहुत-सी चीजो के बिना ही रहना पड़े। पिछले १५ वर्षों मे तीन पंचवर्षीय योजनाओ के जरिये जहाँ आमदनी बढी है, वही अनाज, चीनी, कपड़ा, बाइसिकिल, रेडियो, और इसी तरह की दूसरी चीजो की खपत भी साल-दर-साल बढती जा रही है। लेकिन अगर हमे तेजी से आगे बढना है, तो खपत की बढती हुई रफ्तार को धीमा करना होगा। आमदनी बढ़ती रह सकती है, लेकिन खर्च को कम रखना होगा और बचत बढ़ानी होगी।

छोटी बचतो की—सेविंग्स को—कई स्कीमे आज चल रही हैं। सिर्फ दो रुपए मे भी डाकखानों मे बचत खाता खोला जा सकता है। नेशनल सेविंग्स सर्टिफिकेट सिर्फ दस रु० मे खरीदा जा सकता है। जिसके बदले दस साल मे १८ रु० मिल सकते है। इसके अलावा १२ साल के नेशनल डिफेंस सर्टिफिकेट की स्कीम भी है, जिसमे पैसा लगाने से बहुत अच्छी दर पर ब्याज मिलता है, जिस पर कोई टैक्स भी नही लगता। आज की हालत मे डिफेंस सेविंग्स सार्टिफिकेटो मे पैसा लगाने की कोशिशो को नयी तेजी पकड़नी है। देश भर मे लोगो को इसकी अह-मियत समझनी है और इसमे पैसा लगाना है। अगर पूरी कोशिश की जाए, तो कोई वजह नही कि बहुत अच्छे नतीजे न निकले। मिसाल के तौर पर, महाराष्ट्र सरकार ने कुछ ही दिनो मे कोशिश करके लगभग २ करोड़ रु० के सर्टिफिकेटो की बिक्री का अभी वहाँ काम शुरू ही हुआ है। जिन लोगो की आमदनी कम है, वे भी इनमे पैसे लगाकर रक्षा की कोशिश मे, और खुद अपनी भी मदद कर सकते है।

अब हम एक नयी स्कीम शुरू करना चाहते है। सरकार ने फैसला किया है कि नेशनल डिफेंस लोन यानी राष्ट्रीय रक्षा ऋण का काम शुरू किया जाए। एक सात वर्ष का कर्ज होगा, जिस पर पौने पाँच फीसदी ब्याज मिलेगा और दूसरा तीन साल का कर्ज होगा, जिस पर सवा चार फीसदी ब्याज दिया जाएगा। इस कर्ज की कोई सीमा नही होगी। इनमे धन रुपयो मे और विदेशी मुद्रा—फारेन एक्सचेंज मे भी लगाया जा सकता है। देश से बाहर रहने वाले विदेशी-मुद्रा—फारेन एक्सचेंज—मे धन लगा सकते है और उन्हें मूल और ब्याज बाहर ले जाने की सहूलियत दी जाएगी। इस पर टैक्स नही लगेगा।

हमारे देश के लोग मुल्क की रक्षा के लिए खुले दिल से धन देने को हमेशा तैयार रहे हैं। मौजूदा संकट मे भी लोगों ने अपने आप ही डिफेंस फण्ड मे पैसा दिया है। और मुझे हर दिन दिल्ली के रहने वालो और देश के सभी हिस्सो से, और सभी तरह के लोगो से छोटी-बड़ी रकमे फण्ड के लिए मिल रही है। मुझे बिल्कुल शक नही कि नये नेशनल डिफेंस लोन के लिए लोगो मे इसी तरह का उत्साह

वाहर से मगाने मे सहायता करें। साथ ही सोने पर उनका अधिकार बना रहेगा और जब चाहें वे उसे वेच सकेंगे या तोहफे के तौर पर दे सकेंगे। इसके साथ ही इस सोने से उन्हे आमदनी भी होने लगेगी।

आज के सकट के समय मे विदेशी मुद्रा एक और जरिए से भी मिल सकती है। हमारे वहुत-से देशवासी विदेशो में रहते है और वे मुल्क की काफी मदद कर सकते है। मै जानता हूँ कि उनके दिलो मे भी वैसी ही भावनाएं है, जैसे हमारे दिलो मे है। वल्कि वे कही ज्यादा गहराई से आज के हालात को महसूस कर रहे है, क्योकि वे अपने देश से दूर है। चाहे ऐसे लोग वाहर जाकर बस गए हो, या कुछ समय के लिए देश से वाहर गए हो वे अक्सर इस देश में अपने रिश्तेदारो और दूसरे लोगो को पैसा भेजते रहते है। ऐसा देखा गया है कि यह पैसा लोग गैरकानूनी तरीके से भेजते है, जिससे उन्हे ज्यादा फायदा हो। लेकिन आज जवकि देश एक वड़े सकट से गुजर रहा है, मैं विदेश मे रहने वाले सभी भारतीयो से अपील करूँगा कि वे जो भी पैसा भेजे, वह सरकारी जरियो से ही भेजे। एक ऐसी स्कीम जारी करने का फैसला किया गया है, जिसके मातहत उन भारतीय नागरिको को, जो विदेशो से बैंकों के जरिए धन प्राप्त करते हैं, इस धन के साठ फीसदी तक के लिए इम्पोर्ट लाइसेस दिए जाएँगे। विदेशों मे रहने वाले जिन भारतीयो के पास रिजर्व बैंक की अनुमति से विदेशी मुद्रा है, वे अगर उस धन को भारत मे ले आते हे, तो इस स्कीम के मुताविक उन्हे भी इम्पोर्ट लाइसेस का फायदा मिलेगा। ये इम्पोर्ट लाइसेस कुछ खास किस्म की चीजो के लिए दिए जाऐंगे, खास तौर पर ऐसे कच्चे माल के लिए जिसकी कमी है, और ऐसी मशीनो वगैरह के लिए, जिनकी जरूरत देश में उत्पादन बढाने के लिए पड़ती है।

मैंने जिन स्कीमो के वारे मे बताया है, उनके सम्बन्ध मे कायदे से एलान अलग से वित्त मंत्रालय करेगा। लेकिन ये मामले सिर्फ वित्त से सम्बन्धित नही है। देश को ताकत बढाने के लिए रुपया चाहिए, विदेशी मुद्रा चाहिए और सोना चाहिए। हरेक आदमी को, जितना भी वह दे सके, यह सब देना है, मगर यह समझ कर देना है कि इससे वह मुल्क को अपनी जरूरते आप पूरी करने के काविल वनाएगा।

मेरे देशवासियो, हमे वक्त नही खोना है और मिलकर कोशिश करनी है कि अव से कहीं ज्यादा तेजी के साथ देश को आत्मनिर्भर वनाएँ और आर्थिक तरक्की के रास्ते पर आगे वढें। हमारे देश मे प्रकृति ने हमे वहुत कुछ दिया है और हमारे लोगो मे जी-जान से जुटकर काम करने की क्षमता भी है। आइए, हम इस सघर्ष मे जुट जाए और आप देखेगे कि कामयावी हमारे पाव चूमती है।

जय हिन्द !

२७ अक्टूबर १९६५ को राष्ट्रीय विकास परिषद् की २१वी बैठक मे दिया गया भाषण।

समाजवाद और हमारा कर्त्तव्य

समाजवाद हमारा ध्येय है और इसके माने है, सरकारी क्षेत्र का विस्तार। आर्थिक विकास के लिए भारी उद्योग आवश्यक है। हमे चौथी योजना मे भारी उद्योगों पर अधिक ध्यान देना है, तभी हमारी योजना अधिक सही और प्रभावकारी हो सकेगी। प्रधान मन्त्री ने कहा कि मैं योजना-आयोग की सलाह से, इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि वैज्ञानिकों, इन्जीनियरों, अर्थशास्त्रियो और अन्य विशेषज्ञों की राष्ट्रीय योजना परिषद् बनाने से हमे अधिक लाभ होगा।

परिषद् की यह पहली बैठक है, इसमे हमे जवाहरलालजी का मार्गदर्शन नही मिलेगा। यह उन्हीं का स्वप्न था, जिससे भारत मे योजना की शुरूआत हुई और उन्ही के उदाहरण तथा सलाह से अन्य उन्नतिशील देश भी प्रेरित हुए। काहिरा में राष्ट्रपति नासिर ने मुझे बताया कि उन्होने नेहरूजी से बातें करने के बाद ही, अपने यहाँ योजनामण्डल बनाने का निर्णय किया। उन्होने नेहरूजी से ही योजना का विचार ग्रहण किया था। १९३८ ई० में जब सुभाष बाबू कांग्रेस के सभापति थे और प्रान्तों में लोकप्रिय सरकारें बनी थी, तब भी जवाहरलालजी की अध्यक्षता में राष्ट्रीय योजना-समिति बनाई गई थी। बाद में, १९५० ई० मे उन्होने भारत के प्रथम प्रधानमन्त्री के रूप में योजना-आयोग की स्थापना का निर्णय किया और राष्ट्रीय विकास परिषद् बनाई।

अब वे हमारे बीच नही हैं। लेकिन देश के सामने उनके जो ध्येय थे, वे हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे। अतः, हमारे ऊपर भारी जिम्मेदारी आ गई है और मुझे इस जिम्मेदारी को निभाने के लिए परिषद् के पूरे सहयोग की अपेक्षा है। मेरा सुझाव है कि जब तक चौथी पंचवर्षीय योजना अन्तिम रूप से तैयार न हो जाए, तब तक हम हर दूसरे या तीसरे महीने मिलते रहें।

हमें इस जटिल दुनियाँ मे काम करना है। हाल में, तटस्थ राष्ट्रों का सम्मेलन हुआ, जिसमें सहअस्तित्व, शान्ति और निरस्त्रीकरण पर जोर दिया गया। चीन ने अणुबम का विस्फोट किया है। अनेक अन्य क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए है। हमे अपनी प्राचीन परम्परा के अनुसार शान्त रहना है और अपनी शक्ति तथा अपने साधनों से ही परिस्थितियो का सामना करना है। रक्षा-प्रबन्ध बढाना जरूरी है, लेकिन हम जंगखोर नही बनना चाहते। हम मतभेद और शीतयुद्ध का वातावरण भी नही बनाना चाहते। भारत हमेशा शान्ति का ध्वज लहराता रहेगा, लेकिन साथ ही उसे अपनी स्वतन्त्रता, सर्वसत्ता और अखण्डता की रक्षा करनी होगी।

मै दुनियाँ की स्थिति के बारे मे ज्यादा ब्यौरे में नहीं जाना चाहता। मै सिर्फ इस पर जोर देना चाहता हूँ कि दूसरों के मुकाबले हमारी शक्ति इस बात पर निर्भर है कि अन्दर से वास्तव मे हममे कितनी ताकत है। इसी को ध्यान में रखकर हमें तीसरी योजना की बाकी अवधि और चौथी योजना को महत्व देना है।

इस समय हमारे सामने योजना-आयोग द्वारा तयार किया गया चौथी योजना का ज्ञापन है। हमे इसमें किन बातो पर विचार करना है, यह मैं योजना-आयोग के उपाध्यक्ष पर छोड़ता हूँ। लेकिन, हमारी योजना का यह सार होना चाहिए कि हम आज की समस्याओं और भावी उन्नति, साधनो और आवश्यकताओ के बीच सन्तुलन रखे। पहली योजना की सफलता पर हमे गर्व है। राष्ट्रीय आय १८ प्रतिशत बढी, जबकि लक्ष्य १२ प्रतिशत रखा गया था। दूसरी योजना की शुरूआत भी हमने बहुत अच्छी तरह की, लेकिन बीच में हमारे सामने विदेशी-मुद्रा की समस्या खड़ी हो गई और हमे कुछ योजनाओ में कमी करनी पडी। फिर भी, विदेशो से हमे जो सहायता मिली, उससे हम राष्ट्रीय आय को २१.५ प्रतिशत बढ़ाने मे सफल हुए, जबकि लक्ष्य २५ प्रतिशत रखा गया था। इन दो योजनाओं के दस वर्षो मे कुल राष्ट्रीय आय ४४ प्रतिशत, प्रति व्यक्ति आय १८.५ प्रतिशत और प्रति व्यक्ति खपत १६ प्रतिशत बढी।

पिछले साल तीसरी योजना का जो मध्यावधि मूल्यांकन किया गया, उसे पता चला कि योजना की पहले दो साल की प्रगति सन्तोषजनक नहीं रही। अब प्रगति अच्छी है, परन्तु बहुत अच्छी नही। राष्ट्रीय आय १९६१-६२ मे २.६ प्रतिशत, १९६२-६३ मे २.४ प्रतिशत और १९६३-६४ में ४ प्रतिशत बढी, जबकि हमारा ध्येय हर साल ५ प्रतिशत बढ़ाना था। अतः हमें अपने प्रयत्न को दुगुना बढ़ाना चाहिए। हमारी प्रगति के इस धीमेपन से ही चीजो की कमी हुई और मूल्य बढ़े। अब हमारे सामने समस्या है कि हम इन कठिनाइयों को कैसे दूर करे। हमारे सामने जो कठिनाइयां हैं, उन पर खास-तौर पर हमे विचार करना है और उन्हे दूर करने के तरीके निकालने हैं। पहली समस्या है, पैदावार बढ़ाना, अनाज लेना और उसे बांटना और रोजाना काम आने वाली कुछ जरूरी चीजो को नियमित रूप से देना।

हम सभी जानते हैं कि खेती में हमने सन्तोषजनक प्रगति नही की है। अब हमें ठोस कार्यक्रम बनाने की जरूरत है। ऐसा कार्यक्रम जो उपलब्ध साधनो और सुविधाओ से चलाया जा सके और तत्काल लाभ दे सके। हम रासायनिक खाद की कमी की शिकायत करते हैं, लेकिन क्या हम कूड़े-कर्कट आदि की खाद का भरपूर उपयोग कर रहे हैं? हम सिंचाई की बड़ी-बड़ी योजनाएँ बना रहे है और यह ठीक भी है। लेकिन हम छोटी सिंचाई के बारे मे क्या कर रहे हैं? क्या हम अधिक कुएँ नहीं खोल सकते? क्या तालाबो को और गहरा नहीं बनाया जा सकता? क्या सिंचाई के लिए उपलब्ध पानी का भरपूर उपयोग नही किया जा सकता? यह सब हम आसानी से कर सकते हैं। हमें केवल दृढ़ता से प्रयत्न करना है और विदेशो पर निर्भर नही रहना है।

हम प्रायः राष्ट्रीय स्तर और राज्य-स्तर पर विचार करते हैं और गाँवों को अवहेलना कर देते हैं। गाँवो में किसान का सम्पर्क सरकार के विभिन्न विभागो से पड़ता है। इन विभागों में जिला-अधिकारी जो मेल रखता था, अब नही रखा जाता। मेरा सुझाव है कि जिला-अधिकारी को इन विभागो मे मेल रखने वाला होना चाहिए और उसी को सरकार की ओर मार्ग-दर्शन रहना चाहिए। हो सकता है कि शासन के लिए बड़े जिलो को दो भागो मे बाटना पड़े। परन्तु, यह किया जाना ही चाहिए।

प्रशासन को सुधारना बहुत जरूरी है। बिना इसे सुधारे अर्थ-व्यवस्था स्थिर नहीं हो सकती। प्रशासन के सुधारने से ही सरकारी योजनाएँ तेजी से पूरी की जा सकती हैं और निजी क्षेत्र मे भी जिम्मेदारी से काम हो सकता है।

चौथी योजना का मुख्य ध्येय क्या होना चाहिए ? हमारी योजना उतनी ही बड़ी होनी चाहिए, जितनी के लिए हम साधन ढूंढ सकें।

परिषद् को इस पर विचार करना चाहिए कि हम अपने साधनों को कैसे काम में लायें। परिषद् इस पर विचार करने के लिए एक उप-समिति नियुक्त करना पसन्द करेगी। जहाँ तक गाँवों का सवाल है, कोई नहीं चाहता कि किसानो पर अधिक भार पड़े।

फिर भी, मै जानता हूँ कि अगर वे देखेंगे कि उन्हें किसी काम से लाभ मिल रहा है, तो वे अधिक धन देने के लिए तैयार हो जायेंगे। एक ओर सरकार उनसे मालगुजारी आदि वसूल करती है और दूसरी ओर वे सड़क, पुल, अस्पताल, स्कूल आदि बनते भी देखते है। लेकिन, वे इन दोनो में कोई मेल नही देखते। यदि हम नया पुल बनाये और उसके लिए चुंगी ले, तो किसान इस बात को समझ सकते हैं और यह मान सकते है कि वे उस पुल के लिए पैसा दे रहे है, उन पर बेकार का कर नही लगाया गया है। इस तरह की कड़ी जोड़कर हम उनसे और अधिक धन एकत्र कर सकते है।

१९५८ से हमें विदेशी मुद्रा की कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है। चौथी योजना मे भी हमारे सामने यही समस्या रहेगी। इसलिए, निर्यात को तेजी से बढाना बहुत जरूरी है।

सिचाई और बाढ़-नियन्त्रण के कार्यक्रमों में राज्यो मे मेल रखना बहुत जरूरी है। प्रायः यह होता है कि एक राज्य जो काम करता है, उससे दूसरे राज्य के सामने कठिनाइयाँ आ जाती है। इसलिए, इस समस्या को हमें क्षेत्रीय आधार पर विचार करना है और मेरा विचार है कि इसके लिए यदि विशेष संस्था बनाई जाय, तो अधिक अच्छा रहेगा। यदि सिचाई और बाढ़-नियन्त्रण के क्षेत्र में हमने अच्छा काम किया तो इससे पैदावार बढ़ने मे भी काफी मदद मिलेगी।

मुझे और योजना-आयोग के उपाध्यक्ष को लगा कि यदि चौथी योजना तैयार करने में कुछ और विशेषज्ञों की सहायता ली जाय, तो अधिक अच्छा रहेगा। दुर्भाग्य से देश में उच्चकोटि के विशेषज्ञ बहुत अधिक नही है। जो थोड़े बहुत है, वे अपने महत्वपूर्ण कामों को छोड़ कर पूरा समय योजना बनाने में नहीं लगा सकते। इसलिए, योजना-आयोग की सलाह से मै इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि इन वैज्ञानिकों, इन्जीनियरों, अर्थशास्त्रियो और अन्य विशेषज्ञों की तदर्थ संस्था बनाई जाय, जिसमें वे कुछ समय काम करके योजना-आयोग को सहायता दे। यह संस्था बनाने का मतलब यह नहीं है कि एक दूसरी सलाहकार संस्था स्थापित हो, जो एक या दो दिन बैठक करें और अपनी रिपोर्ट पेश करे। इस तदर्थ संस्था को बनाने का तात्पर्य यह है कि यह दिल्ली मे एक सप्ताह या पन्द्रह दिन लगातार बैठे और हमारे राष्ट्रीय प्रयत्न में योग दे।

इस संस्था का नाम "राष्ट्रीय योजना परिषद्" रखने का प्रस्ताव है और इसमें १५ से २० सदस्य होगे। आयोग के उपाध्यक्ष ही इस परिषद् के अध्यक्ष रहेंगे।

मै चाहता हूँ कि हमारी चौथी योजना एक तो उद्योग के लिए हो और दूसरी खेतों के लिए और वे अपने में सम्पूर्ण हों तथा एक-दूसरे से जुड़ी हों। इनमे रोजगार के अधिक अवसर हों। उद्योग की योजना में प्रत्येक बड़ी योजना विस्तारपूर्वक तैयार की जाय और उसके चलाने के लिए समयसारणी बनाई जाय। उसके बारे मे, यह भी जानना होगा कि हमें उसमें कितने निर्माण सामग्री, मशीन तथा कच्चे माल की जरूरत होगी और कब होगी। पहले जो भी योजनाएँ थीं, उन पर अनुमान से कहीं अधिक खर्च हुआ। कुछ ऊँच-नीच हो सकता है, लेकिन इतना अधिक फर्क नहीं होना चाहिए। हमें

इसका भी अनुमान लगा लेना चाहिए कि जो चीज बनेगी, उसका क्या मूल्य होगा और उससे कितना लाभ मिलेगा। यदि सही ढग से यह अनुमान लगाया गया तो काम पर आसानी से नजर रखी जा सकेगी, कमियों का पता लगेगा और यह भी मालूम हो जायगा कि खर्च बढ़ने या देर होने के लिए कौन जिम्मेदार है।

उद्योग की तरह खेती के लिए भी यही दृष्टिकोण आवश्यक है। खेती पर या सिंचाई, बीज और खाद पर कितना खर्च होगा, इतना कहना पर्याप्त नही है। हमे जानना चाहिए कि प्रत्येक योजना के लिए क्या चीजे चाहिए और क्या उपलब्ध है और कितना उत्पादन बढने का अनुमान है।

हमारा ध्येय समाजवाद है। इसलिए, हमे सरकारी क्षेत्र को तेजी से बढ़ाना है। प्रत्येक योजना मे यह निर्धारित रहता है कि सरकारी क्षेत्र मे क्या काम होगा और निजी क्षेत्र मे क्या होना चाहिए। एक क्षेत्र मे भी असफलता से योजना पर असर पड़ता है और अर्थ-व्यवस्था असन्तुलित होती है। इसलिए हमें यह ध्यान मे रखना है कि निजी क्षेत्र मे जो लक्ष्य रखे गये हैं, वे पूरे हो।

औद्योगिक नीति प्रस्ताव मे पहले ही यह कह दिया गया है कि दोनो क्षेत्रो के बीच कोई रेखा नही खीची जा सकती। इस समय चीजो के मूल्य बढ रहे है और जनता को अपनी रोजाना की चीज खरीदने मे बहुत कठिनाई हो रही है। इसलिए, यह जरूरी हो गया है कि सरकारी क्षेत्र मे भी उपभोक्ता सामान बनाने के उद्योग शुरू किए जाए। सरकार को कपड़ा मिले, चीनी मिले तथा सीमेन्ट और दवा बनाने के कारखाने लगाने चाहिए। तभी कमी पूरी होगी, लाभ बढ़ेगा और रोजगार के अवसर बढेंगे।

भारी उद्योग हमारी अधिक उन्नति की रीढ़ है। इस्पात और मशीनो का उत्पादन बढ़ना चाहिए।

यहाँ पर मैंने केवल कुछ समस्याओं का जिक्र किया है, जिनका हमे सामना करना है। जब तक हम मूल्य स्थिर नही करते, उत्पादन नही बढाते और प्रशासन को नही सुधारते, तब तक योजना अच्छी तरह नही चल सकती।

चौथी योजना राष्ट्र के सामने एक चुनौती है। इस चुनौती का सामना तभी किया जा सकता है जब हम हर काम को करने के लिए तैयार हों। मुझे विश्वास है कि यह परिषद राष्ट्र का सही नेतृत्व करेगी।

भारत-पाक युद्ध-विराम के बाद उत्पन्न स्थिति पर लोकसभा मे ५ नवम्बर १९६५ को दिया गया भाषण।

हम किसी भी खतरे के मुकाबले से पीछे नहीं हटेंगे

युद्ध-विराम अभी पूरी तरह से प्रभावी होना दूर की बात है। इसका प्रमुख कारण यह है कि पाकिस्तानी सेनाएं उन चौकियों और क्षेत्रों पर अधिकार करने का लगातार प्रयास कर रही है जो युद्ध-विराम होने से पहले उनके पास नही थे। इन्हीं पाकिस्तानी उल्लंघनो के कारण उन स्थानों में, जहाँ हमारी सेनाएं पाक सेना के आमने-सामने डटी है, अभी स्थिति अशांत है। सदन को याद होगा कि युद्ध-विराम की वास्तविक घड़ी जो सुरक्षा-परिषद् के २० सितम्बर १९६५ के प्रस्ताव में निश्चित की गयी थी, १५ घण्टे पीछे टल गयी थी, क्योंकि पाकिस्तान ने अन्तिम क्षण तक युद्ध-विराम स्वीकार करने मे विलम्ब किया। युद्ध-विराम को दोनों पक्षो द्वारा स्वीकार करने के समय तथा इसके वास्तविक कार्यान्वयन के समय के बीच की अवधि में पाकिस्तानी सेनाएं और भूमि हथियाने की कोशिश करती रही, विशेषतः दक्षिण-पश्चिम राजस्थान मे। युद्ध-विराम के बाद भी पाकिस्तानी सेनाओं ने कुछेक चौकियों पर और गांवों में (राजस्थान के) अधिकार जमाया था। ये स्थान एक दूसरे से बहुत दूर-दूर है और ऐसी जगह पर थे, जहाँ पहले लड़ाई नहीं हुई थी।

युद्ध-विराम का नग्न उल्लंघन करके पाकिस्तान ने राजस्थान के अलावा फाजिल्का क्षेत्र में २४ तथा २५ सितम्बर को और टिथवाल क्षेत्र मे ११ अक्तूबरको भारी आक्रमण भी किये। छम्ब क्षत्र में भी युद्ध-विराम के बाद वे लगातार आगे बढ़ने की कोशिश करते रहे है।

धोखे से युद्ध-विराम के बाद जिस भूमि पर पाकिस्तानियों ने अधिकार कर लिया है, उससे उन्हे हटाने में भारतीय सेना को युद्ध-विराम से बाधा नहीं होगी। जहाँ कहीं भी ये उल्लंघन हुए है, वहाँ हमारे पास इसके अलावा और कोई चारा नहीं है कि हम स्थिति का मुकाबला करे और पाकिस्तान के हथकण्डो को नाकाम करे। युद्ध-विराम के इन उल्लंघनो को नाकारा करने के हमारे प्रयास युद्ध-विराम के उल्लँघन नहीं कहे जा सकते। यह आवश्यक है कि सुरक्षा-परिषद् इस मामले पर गम्भीरता से विचार करे। हम उनका पाकिस्तान द्वारा इन युद्ध-विराम उल्लंघनों की ओर बार-बार ध्यान आकर्षित करते रहे है। पाकिस्तान के युद्ध-विराम उल्लंघनों की संख्या अब लगभग एक हजार तक पहुँच चुकी है। सुरक्षा परिषद् को इस बात को सुनिश्चित करना होगा कि युद्ध-विराम के और अधिक उल्लंघन न हों और युद्ध-विराम के बाद जिन स्थानों पर कब्जा किया गया है, उनको खाली कराया जाय। यदि शांति की राह पर वास्तविक प्रगति करनी है, तो युद्ध-विराम को सच्चे मायने में प्रभावी बनाना होगा। जब तक युद्ध-विराम प्रभावी नही होता है, तब तक इसके बाद का कदम, सशस्त्र व्यक्तियों को पीछे हटाना सम्भव नहीं हो सकता। महासचिव को १८ अक्तूबर १९६५ को लिखे गये अपने पत्र में मैने इस बात को जोर देकर कहा था।

एक ओर सबसे महत्त्व की बात यह है कि सशस्त्र व्यक्तियो के हटाने के सम्बन्ध में जो वार्त्ताएँ हों, वे इस प्रकार हों कि ५ अगस्त १९६५ को तरह हमलावरो को घुसपैठ को जो विधि पाकिस्तान ने शुरू की थी, वह फिर दोहराई न जा सके। युद्ध-विराम लागू होने से पहले भी मैंने महासचिव को अपनी वार्त्ताओ और चिट्ठियों द्वारा इस बात पर जोर दिया था। मैने सदन में जो कुछ कहा है, उसके प्रतिकूल जहाँ तक मुझे ज्ञात है, राष्ट्रसघ या राष्ट्रसघ को सुरक्षा-परिषद् मे किसी भी भारतीय प्रतिनिधि ने कोई बात नही कही है। मै इस बात पर फिर से जोर देना चाहता हूँ। क्योंकि ऐसी रिपोर्ट मिली है कि पाकिस्तान-अधिकृत कश्मीर मे और कबायली क्षेत्रो मे फिर से हमलावरों को सगठित करने का काम हो रहा है। पिछले कुछ महीनो की दुःखद घटनाओ से राष्ट्र-सघ और सुरक्षा-परिषद् ने इस बात का अनुभव कर ही लिया होगा कि इलाज से हमेशा परहेज भला ही नही होता, बल्कि आसान भी होता है। यदि हमलावरो द्वारा कार्रवाई प्रारम्भ करते ही और जनरल निम्मो द्वारा इसकी रिपोर्ट पेश करते ही, सख्त कार्रवाई की जाती, तो जो जान-माल की दुःखद हानि इसके बाद हुई, उसका बहुत-सा हिस्सा रोका जा सकता था। उस समय हमारे भरपूर प्रयासो के बावजूद, सख्त और तुरन्त कार्रवाई नही की गयी। मैं आशा करता हूँ कि पाकिस्तान-अधिकृत कश्मीर मे, नये हमलावरो को कश्मीर मे भेजने की जो तैयारियां हो रही है, उनके बारे मे वे तुरन्त खोजबीन प्रारम्भ करेगे।

मै यहाँ कहने से मजबूर हूँ कि दुनिया बहुत-सी तबाही से बची रहे। यदि कही भी हमलावरो को और आक्रामक को सहन न किया जाय और आक्रामक का पता लगाने के लिये सचाई से प्रयत्न किए जायें। वर्तमान सघर्ष मे पाकिस्तान के आक्रमण की बात को कोई भी देख सकता है। सयुक्त राष्ट्रसंघ के मुख्य परिवेक्षक ने स्पष्ट और सच्चा निर्णय दिया था। सुरक्षा-परिषद् ने भी ५ अगस्त को एक महत्त्व-पूर्ण तिथि बताया था। इस तिथि को भारत ने कोई भी कार्रवाई न की थी। पाकिस्तान ने ही इस दिन भारी सख्या मे हमलावरो को भेजना शुरू किया था और स्पष्टत. वह हमलावर है। निहित रूप से पाकिस्तानी हमले पर ध्यान दिया गया था, लेकिन यह काफी नही था। एक स्पष्ट निर्णय लिये जाने की आवश्यकता थी। एक सस्था जो संसार की शान्ति बनाये रखने को जिम्मेदार है, उसे स्पष्ट निर्णय लेने के लिये तैयार रहना चाहिये। यह और भी जरूरी इसलिये है कि लुके-छिपे और बिना लड़ाई की घोषणा किये हुए, तबाही के लिये हमलावरो को भेजने की विधि अपनायी जाने लगी है। यही कारण था कि भारत पहले से ही इस बात पर जोर देता रहा कि हमलावर को हमलावर ठहराया जाय। पाकिस्तान शुरू से ही कश्मीर मे हमलावरो के भेजने की साजिश के पीछे अपना हाथ होने से इनकार करता रहा है। वास्तविक स्थिति इतनी साफ है कि कोई भी निष्पक्ष संस्था या एजेन्सी इसको प्रमाणित कर सकती है। मैं इस सम्बन्ध मे अब भी यह सुझाव देना चाहता हूँ कि हमलावर को किसी इसी प्रकार की विधि से परखा जाय और घोषित किया जाय।

ऐसा लगता है कि पाकिस्तान, वास्तव मे युद्ध-विराम मे, जिसे उसने बड़े ढोल-हवाले के साथ स्वीकृत किया था, दिलचस्पी नही रखता है। पाकिस्तान सुरक्षा-परिषद् के प्रस्तावो के अधीन जो आगे कदम उठाए जाने वाले है, सभी सशस्त्र व्यक्तियो का पीछे हटाया जाना, जिसमे न केवल सेनाएँ शामिल हैं, बल्कि घुसपैठ करने वाले भी शामिल है, कोई दिलचस्पी नही रखता। इन आवश्यक कदमो के

विपरीत पाकिस्तान इस बात की दलील दे रहा है कि राजनीतिक मसले को पहले सुलझाया जाय। इसके साफ-साफ मायने यह होते हैं कि सुरक्षा-परिषद् उसे वह सब कुछ दे दे, जिसे वह अपने सशस्त्र हमलावरों या नियमित सेनाओं के बल पर नही पा सका। इस उद्देश्य से पाकिस्तान के विदेश मन्त्री ने सुरक्षा-परिषद् की एक बैठक बुलाने की कोशिश की और उसमे कश्मीर के अन्दरूनी मामले पर वाद-विवाद प्रारम्भ कराना चाहा और इसमें हर तरह के ऊलजलूल बेबुनियाद आरोप लगाए। हमारे विदेश मन्त्री ने इस बात को स्पष्ट कर दिया कि हम सुरक्षा-परिषद् से इस मामले मे सहयोग करने को पूरी तरह से तैयार है कि शाति स्थापित हो, वहाँ हम कश्मीर के अन्दरूनी मामलों में होने वाले वाद-विवाद में किसी प्रकार भी शामिल नही हो सकते। जब यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया कि श्री भुट्टो को हमारे जम्मू-कश्मीर राज्य के अन्दरूनी प्रशासन के बारे मे वाद-विवाद उठाने से नही रोका जा सकता, तो हमारे प्रतिनिधिमण्डल ने सुरक्षा-परिषद् को आगे की बैठकों में भाग लेना अस्वीकार कर दिया।

यदि पाकिस्तान वर्तमान तनाव की स्थिति को हल्का करना चाहता है तो उसे पहले युद्ध-विराम के समझौते पर अमल करना चाहिये। उसे युद्ध-विराम के दिन-प्रतिदिन के उल्लघनो को समाप्त करना होगा। उसके बाद वह हमारे क्षेत्र से सशस्त्र व्यक्तियों को वापस बुलाए और हम भी उन इलाको से जो हमने पाकिस्तान मे हथियाए है, अपनी सेनाओं को वापस बुला लेगे। इससे भी अधिक आवश्यक यह है कि पाकिस्तान उन सब खुराफातों को बन्द करे, जो वह बलपूर्वक एक और आक्रमण करने की तैयारी के लिये कर रहा है। उसे पाक-अधिकृत कश्मीर मे अनियमित सैनिकों की भरती रोकनी होगी। उसे युद्ध-विराम रेखा के समीप के ही स्थानों पर खाई खोदना और मोर्चे खड़े करना बन्द करना होगा, जैसा कि वह सारी युद्ध-विराम रेखा के क्षेत्रो मे करता रहा है। उसे हथियार और गोलाबारूद प्राप्त करने के अपने प्रयत्नों को भी बन्द करना होगा। जो सामान और जहाज उसने अपने कब्जे मे लिए है, उनको भी छोड़ना होगा। उसे चीन के साथ अपने गठबन्धन को भी तोड़ना होगा, जिसका आधार भारत के खिलाफ समान विद्वेष की भावना है और जिसका उद्देश्य इस देश को कमजोर बनाना और उसकी एकता को विखण्डित करना है। संक्षेप मे पहले पाकिस्तान सामान्य सम्बन्ध बनाने का प्रयत्न करे, फिर उसके बाद इस बात पर चर्चा होगी कि उससे हमारे सम्बन्ध कैसे अच्छे बने।

एक बार यदि सच्चे ढग से पाकिस्तान शान्ति की राह पर चलना शुरू कर दे, तो भारत के लोग भी ऐसा करने के लिए बिल्कुल तैयार है। दुर्भाग्यवश अभी तक जो कुछ हमारे पास साक्षी है, उसके आधार पर यह नही कहा जा सकता कि पाकिस्तान मे हृदय-परिवर्तन के कोई भी चिह्न हैं, वहाँ फिर से एक नए तरीके से मसले पर ध्यान देना शुरू किया गया है या लड़ाई से अधिक शान्ति को तरजीह देने की इच्छा है। ऐसी परिस्थितियो मे हमे अपनी नीतियो को दो अलग-अलग आधारों पर बनाना पड़ा है। एक तरफ हमे इस बात के लिए सतर्क रहना है कि पाकिस्तान द्वारा जो घृणा का वातावरण पैदा किया गया है, जिसे पाकिस्तानी नेता तेज करने का कोशिश कर रहे है, उसके कारण हम अपनी मूलभूत नीतियाँ—शान्ति, धर्मनिरपेक्षता और आर्थिक विकास से न डिगे। दूसरी तरफ हमे चौकस रहना है और अपनी मातृभूमि पर होने वाले किसी भी आक्रमण का सामना करने के लिये तैयार रहना है।

जहाँ तक पाकिस्तान से हमारे सम्बन्धों का सवाल है, हम उससे एक सभ्य राष्ट्र की तरह बर्ताव करेंगे। पाकिस्तान ने सभी राजनयिक अधिकारों की अवहेलना करके पाकिस्तान में हमारे उच्चायोग की तलाशी, बन्दूकें और संगीनें दिखाकर ली। भारत में पाकिस्तानी आयोग के सदस्यों की गतिविधियों पर पाबन्दी तो लगाई गई है, किन्तु उनकी सुरक्षा की पूरी व्यवस्था की गई थी और उन्हें किसी तरह से भी परेशान और तंग नहीं किया गया।

पाकिस्तान से हमने अपने उच्चायुक्त को वापस बुलाने का निश्चय किया, न कि उनसे कोई बदला लेने का और निकट भविष्य में उनको वापस भेजने का हमारा कोई इरादा नहीं।

सिन्धु पानी सन्धि के अन्तर्गत पाकिस्तान को अदायगी करने के सम्बन्ध में काफी विचार-विमर्श किया गया है। कल सिंचाई और बिजली मन्त्री ने इस सम्बन्ध में लोकसभा में एक वक्तव्य दिया था और सदन में इस विषय पर विचार किया जायगा। हमने जो वायदे किए हैं, हम उनसे पीछे नहीं हटना चाहते हैं, चाहे वह सिन्धु-पानी सन्धि या कच्छ-समझौते से सम्बन्धित हों। हम शक्ति का जवाब शक्ति से देने को तैयार हैं, लेकिन साथ-साथ अपने वायदों पर कायम रहना चाहते हैं।

जहाँ तक देश की सुरक्षा के लिये तैयारी का सवाल है, हम वह सब कुछ कर रहे हैं, जो आवश्यक हैं। हम इस बात के प्रति सजग हैं कि पाकिस्तान और उसका साथी चीन मिल-जुल कर समुचित अवसर पाकर हमला करने का निश्चय करे। अतः हमें किसी भी स्थिति का सामना करने के लिये सदा तैयार रहना चाहिये। हम अपने रक्षा-प्रयत्नों में जल्दी-से-जल्दी अधिक-से-अधिक आत्म-निर्भरता प्राप्त करना चाहते हैं। हमारे जो सैनिक मोर्चों पर लड़ रहे हैं, उनको अधिक-से-अधिक अच्छी वस्तुएं प्राप्त करने का अधिकार है और उनको इन्हें मुहैया करने में हम लोग पीछे नहीं रहेंगे।

रक्षा मन्त्रालय में रक्षा-आपूर्त्ति का एक नया विभाग बनाया गया है। इसका उद्देश्य यह है कि वह इस बात की खोजबीन करे कि जिन रक्षा-सम्बन्धी साज-सामानों के लिये हम विदेशों पर निर्भर हैं, उनमें से कितने पुर्जे, यन्त्र और साज-सामान हम देश में ही बना सकते हैं। फिर भी हो सकता है कि हमें हथियार या उनको बनाने की मशीन बाहर से मंगाना पड़े। इसी बड़ी आवश्यकता को देखते हुए मैंने देश के लोगों से इस बात की अपील की थी कि वे एक बड़े पैमाने पर स्वर्ण-बाण्ड खरीदें। हम जो देश में सोना मौजूद है, उसको एक बड़ी मात्रा में देश की सेवा में लगाना है ताकि हम मजबूत और स्वावलम्बी बन सकें। हमने रक्षा-ऋण तथा राष्ट्रीय रक्षा स्वर्ण-बांड योजना पर खूब सोच विचार किया है और इस बात की कोशिश की है कि ये अधिक-से-अधिक व्यावहारिक हों और लोगों का अधिक-से-अधिक आकर्षित कर सकें। ये दोनों योजनाएं इस वक्त चालू हैं। ये दोनों योजनाएं स्वयं में भी लाभकारी हैं, लेकिन सबसे बड़ा महत्त्व इनका यह है कि इस प्रकार हम देश की रक्षा-व्यवस्था में हाथ बंटाते हैं। आज सारे देश के लोग देश को मजबूत बनाने के लिए हर सम्भव त्याग करने की प्रबल इच्छा रखते हैं। मुझे पूरी आशा है कि लोग इन योजनाओं में विशेषतः स्वर्ण-बांड योजना में आशातीत सहयोग देंगे, ताकि हमारा यह उद्देश्य पूरा हो सके।

सदन सम्भवतः यह बात जानने के लिए इच्छुक होगा कि हम भारत-पाकिस्तान के भावी सम्बन्धों को और भावी घटनाओं के बारे में क्या विचार रखते हैं। हमारी स्थिति स्पष्ट है। हम

२६ नवम्बर १९६५ को रामलीला मैदान में पाकिस्तानी आक्रमण के बाद शास्त्री जी का एक ऐतिहासिक भाषण।

......और हम भी लाहौर की तरफ टहल कर चले गये

पाँच अगस्त एक ऐसी तारीख है जो हमारे इतिहास में, तवारीख मे एक खास जगह पायेगी और इस तारीख को भूलना कुछ समय तक के लिए, कुछ वर्षों के लिए, कुछ वक्त तक के लिए बहुत मुश्किल होगा। अभी वह ५ तारीख का सिलसिला खत्म नहीं हुआ। आप जानते हैं कि ५ अगस्त को कश्मीर के अन्दर पाकिस्तान के हजारो आदमी हथियारों के साथ और काफी तेज बढे और जोरदार हथियारो के साथ कश्मीर में आये और उन्होंने एक खास हालत सिर्फ कश्मीर मे नही बल्कि हम सब के लिए एक खतरे की हालत पैदा की। एक सूबे के अन्दर अगर ५-६-७ हजार आदमी बाहर से पहुँच जाएँ और हथियारो के साथ तो आप अन्दाजा कर सकते हैं कितनी यह खतरनाक सूरत पैदा हो सकती है। अभी भुट्टो साहब ने कहा था कुछ महीने पहले कि कश्मीर के लिए उनका एक 'मास्टर-प्लान' है। यह कहा था कि हमारी कोई बड़ी स्कीम है और उस स्कीम के मातहत हम कश्मीर के अन्दर काम करेंगे। एक कदम के बाद दूसरा कदम उठायेंगे। यह बात हमने सुनी थी, कुछ उसके थोड़े बहुत खतरे का हमे अन्दाजा भी हुआ था। लेकिन दरअसल यह ख्याल नही था कि कच्छ के झगड़े के बाद और कच्छ पर एक समझौता होने के बाद इतनी जल्दी कश्मीर पर वह अपना 'मास्टर प्लान' चलाने की कोशिश करेंगे। आप जानते हैं कि कच्छ मे हमने बहुत बचाया, हमने कोशिश की कच्छ के झगड़े पर कि अगर हम सुलह और शान्ति से उस मसले को तय कर सकते हैं तो करने की कोशिश करें और हमने ऐसा किया। हमने एक दस्तखत किया कि जिससे हम कच्छ के बारे मे आपस मे बातचीत करेंगे। लेकिन सबसे रंज की बात हमारे लिए और जिससे कि मुझे बहुत धक्का लगा वह यह कि, जब वह और हम कच्छ के समझौते पर दस्तखत कर रहे थे उस वक्त पाकिस्तान मे कश्मीर पर हमला करने की तैयारी पूरी तरह से हो रही थी। इससे ज्यादा नामुनासिब बात, गलत बात और क्या हो सकती है? हम तो अपनी तरफ से यह कोशिश करे कि जो हमारी सरहदों के मामले है वे सुलह और समझौते से तय हो, लेकिन दूसरी तरफ वह भी उस पर दस्तखत करे मगर दस्तखत करते हुए इस बात की तैयारी करे कि वह कच्छ से भी कही ज्यादा बड़ा हमला हमारे मुल्क पर करेंगे और यह जो एक कच्छ की बात उन्होने अपनी तरफ से की वह सिर्फ एक दिखावटी बात थी, बनावटी बात थी। ऐसी सूरत मे जब यह कश्मीर पर उनका हमला हुआ तब हमे उसका मुकाबला पूरी शक्ति और पूरी ताकत के साथ करना था। उनका खयाल था कि कश्मीर मे एक बगावत होगी, वे समझते थे कि क्रान्ति होगी कश्मीर में और सारा कश्मीर इसके लिए तैयार बैठा है कि वे पाकिस्तान के साथ चला जाये और उन्होने उस क्रान्ति या उस इन-कलाब को पैदा करने के लिए यह हथियारबन्द आदमी कश्मीर मे भेजे और जब उन्होने उन्हें भेजा तब हमे भी अपनी सिक्योरिटी फार्सेज के जरिए उनका मुकाबला करना पड़ा, ताकत के साथ। आसान बात नही थी, छिपे हुए, चुपके-चुपके सैकड़ों पहाडी रास्तो से उनका आना और कहीं आग लगा देना,

कहीं पुलिस की चौकियों पर हमला कर देना, कोशिश करना कि वह हवाई अड्डे पर पहुँचें, बस्तों में आग लगाये, इन तमाम चीजों को जब वे कर रहे थे तो जैसा मैंने कहा कि एक तरफ हमारी सिक्योरिटी फोर्सेज उनका मुकाबला कर रहीं थी, दूसरी तरफ कश्मीर के रहने वाले उनको न कोई जगह देते थे, न पनाह देते थे, न खाने के लिए सामान देते थे और उन्होने यह साबित किया कि कश्मीर एक आजाद हिन्दुस्तान का हिस्सा है और उसका पाकिस्तान से कोई मतलब नहीं, कोई सरोकार नहीं।

यह बात है मेरे खयाल में पाकिस्तान को इससे एक बड़ा धक्का लगा कि उन्होंने जो तस्वीर बनाई थी, यह समझा था कि कश्मीर तो दो-तीन दिनों के अन्दर पाकिस्तान में आकर मिल जायगा और जब उन्होंने देखा कि वे इस बात में कामयाब और सफल नहीं हुए तब उन्होंने एक दूसरा रास्ता हमले का अख्तियार किया। हमने अपनी तरफ से, आप देखेंगे, कि हमने कोई आक्रमण, कोई हमला अपनी तरफ से, एक भी इंच पर पाकिस्तान के शुरू में नहीं किया और जबकि, वह हमलावर भेज रहा था, कश्मीर मे, तब भी हमने उनको रोकने का ही काम किया। लेकिन जबकि पाकि तान को उसमे नाकामयाबी हुई, कश्मीर मजबूती से डटा रहा, कश्मीर की गवर्नमेन्ट और कश्मीर के रहने वालो ने इनका मुकाबला किया तब फिर पाकिस्तान ने सोचा कि अब फौजों के साथ कश्मीर पर हमला करना चाहिये। अभी तक तो वह छिपा हुआ था, अभी तक छिपकर हमला किया था, कहता था कि यह जो लोग आये है, ये तो कश्मीर के अन्दर के लोग है, कश्मीर में रहने वाले है और यहाँ कश्मीर में रहने वाले ही हिन्दुस्तान की गवर्नमेन्ट के खिलाफ काम कर रहे हैं। लेकिन यह बात कब तक छिपी रहती, जब उनको उसमे सफलता और कामयाबी नही मिली तब उन्होने छम्ब के इलाके मे पूरी फौज के साथ, सजधज के साथ, पूरे सामान के साथ १०० टेंको के साथ हमला किया। मामूली बात नहीं थी कि ८०-८५-९० टैंक लिए वे एक इलाके पर हमला करे। वे एक पूरी तैयारी के साथ आये थे और हमे अपनी तैयारी, उसका मुकाबला करने में चटपट तैयारी को करना था कि हम उनका उसमे मुकाबला करें। लेकिन न सिर्फ उन्होने सीज-फायर लाइन को पार किया छम्ब में बल्कि जो इन्टरनेशनल बोर्डर था उसको भी उन्होंने पार किया। इन्टरनेशनल सरहद को पार करके वे छम्ब और जम्मू के अन्दर आये और जैसे मैंने कहा एक जबरदस्त फौज लेकर आये जिसका कि हमने चटपट एक तेजी के साथ मुकाबला किया। लेकिन साथ ही साथ जहा छम्ब पर उनका हमला हुआ, उनकी नजर हमारे और इलाको पर भी थी। वो पंजाब, हमारे पूर्वी पंजाब के प्रदेश पर भी उनकी नजर थी और वहाँ वे हमला करना चाहते थे। आप जानते है कि अमृतसर पर बाघा के पास जो हमारा हवाई अड्डा है वहाँ उन्होने अपना हवाई जहाज भेजा, राकेट गिराया और एक हवाई अड्डे को बरबाद करने की कोशिश की।

यह भी अयूब साहब कहते रहे, हमे क्या हम तो अपने टेंकों को लेकर आगे बढ़ेगे। सैंकड़ो टैंकों के साथ और टहलते हुए दिल्ली पहुँच जायेंगे। तो इस तरह टहलते-घूमते हुए दिल्ली में आने का उनका इरादा था और जब यह इरादा हो तो कुछ अगर हम भी थोड़ा लाहौर की तरफ टहल कर चले गये तो मैं समझता हूं कि मैने या हम लोगो ने कोई गलत बात तो ऐसी नहीं की। हमारे लिए चारा क्या है और चारा क्या था? हमारे यूनाइटेट किंगडम की सरकार ने, ब्रिटिश सरकार ने बड़ा हमारे ऊपर हमला किया कि जब हम लाहौर की तरफ बढे तब उन्होने कहा कि हिन्दुस्तान ने

पाकिस्तान पर हमला किया है और जब हजारो हमलावर काश्मीर के अन्दर घुसे तब ब्रिटिश गवनमेंट की जुबान बिल्कुल बन्द थी। जब हम पर हमला किया पाकिस्तान ने और इन्टरनेशनल सरहद को पार किया, जैसा मैंने कहा, इतने बड़े टैंको और फोर्सेज के साथ उन्होने हमला किया तब फिर गवनमेट या यूनाइटेड किंगडम के प्राइम मिनिस्टर ने यह नही कहा कि पाकिस्तान ने हिन्दुस्तान पर हमला किया है।

जब हमने देखा कि पाकिस्तान इस तेजी से बढ रहा है कि अगर सिफ हम अपनी रक्षा और हिफाजत की बात करते हैं, तब फिर हमारी वह हालत नही रहेगी जिसमे हम पाकिस्तान को बढ़ते हुए रोक सके।

और आज अपने मुल्क को आजादी को खतरे मे डालना, न हम इसे कर सकते है और न कोई गवर्नमेन्ट दुनियाँ की इसे कर सकती है। हमारा इरादा यह था, हमारा पक्का इरादा है कि हम शान्ति को मानते हैं। लेकिन शान्ति के साथ अगर हम दुश्मन का मुकाबला शान्ति के साथ कर सकते हैं तो करेगे। लेकिन कायरता और बुजदिलो के लिए जगह नही हो सकती। हथियारो का जवाब हथियार ही है और इसी से उसका मुकाबला होगा।

और इसलिए आज इस बात की जरूरत थी, जो हमारी फौजो ने किया और जब उन्होने अब आखिर राज की बात तो नही बतानी चाहिए, लेकिन जब हमारे पास हमारे जनरल्स आये और उन्होने इसके बारे मे पूछा तो मैं क्या जवाब दे सकता था ? मैंने कहा, बहादुरो बढते जाओ और कोई बात सोचने की नही।

यह एक किस्सा लड़ाई का एक मायने मे कुछ अभी थोडे दिन के लिए रुका है। मैं इतना ही कहूँगा, हम बढ़ते गये हैं चाहे सियालकोट हो, चाहे कसूर हो, चाहे लाहौर हो और चाहे उधर राजस्थान मे वह गडरा शहर जो हमने लिया। उधर हमने अनेक जगहो पर अपनी फोजे पहुँचाई है और वह फौज वहाँ हैं। अगर आज दुनिया ने और सिक्योरिटी काउंसिल ने एक शान्ति की आवाज उठाई, सुलह की बात कही, लड़ाई को रोकने की बात कही, हमे इसमे एतराज नही, हम जहाँ तक हो सके, नही चाहते कि यह जग या लड़ाई, बड़ी लड़ाई हो और सारी दुनिया उस लड़ाई के अन्दर आ जाए। हम दुनिया की लड़ाइयो को बचाते रहे हैं। हम कोशिश करते रहे हैं कि और जगह भी दुनिया मे लड़ाई न हो, चाहे हम उसमें सफल हुए या नही, हमारे नेता जवाहरलालजी ने अपने जीवनकाल मे दुनिया मे शान्ति बनाये रखने की पूरी कोशिश की और कई ऐसे काम किये कमाल के कि जिसमे दुनिया मे आग लगते-लगते बची। तो आज हम उन सिद्धान्तो को नही भूल सकते हैं और हमारा देश, हम तो अपने देश मे शान्ति और धीरज से रहना चाहते हैं। अपने मुल्क की हालत को बदलना चाहते हैं, यहाँ गरीबी को मिटाना चाहते है। एक नया समाज बनाना चाहते हैं। हम न किसी की जमीन चाहिये, न हमे किसी का इलाका चाहिये, हम अपने देश मे खुश है और हम जरा भी नही चाहते कि हमारी वजह से दुनिया मे कोई महासमर हो या कोई बड़ी लड़ाई हो। तो जब यह सुलह की बात कहा गयी और लड़ाई को बन्द करने की बात कही गयी तो हमने उसे माना, फौरन माना। जब यहाँ पर सेक्रेटरी जनरल आये, यूनाइटेड नेशंस के, तो उनसे बातचीत की। बातचीत के बाद हमने उन्हे जवाब दिया कि अगर आप लड़ाई-बन्दी की बात चाहते हैं तो

हम उसे मानने के लिए तैयार हैं और आप जानते हैं कि जब सिक्योरिटी काउंसिल ने वह प्रस्ताव पास किया तो हमने फौरन अपनी मंजूरी लड़ाई-बंदी की दी।

वह लड़ाई-बन्दी तो हुई लेकिन पाकिस्तान की तरफ से आखिरी दिन भी और एक दिन बाद भी जब कि यह लड़ाई-बन्दी का एलान हुआ, तब भी कुछ-न-कुछ हमला, कुछ-न-कुछ शैलिंग कुछ अपने हथियारों के साथ जिन इलाकों में हम थे लाहौर के पास या कसूर के पास उन्होंने आने की कोशिश की। कुछ हमले किये। अब यह कहां तक मुनासिब है इसका फैसला यूनाइटेड नेशंस या सिक्योरिटी काउंसिल करे।

कहा गया है कि हमने हमला किया। एक भी उनके इलाके में, किसी नई जगह कहीं भी हमारी फौजों ने इस लडाई के बन्द होने के बाद कहीं कोई हमला किया हो, यह बात बिलकुल गलत है और हमने नहीं किया। मगर खैर वह करते हैं और हमें उसका जवाब तो देना ही है यानी उनको रोकना है। लेकिन अपनी तरफ से नेकनीयती के साथ लड़ाई-बन्दी को कायम रखना चाहते हैं। मगर यह है क्या कि पाकिस्तान तो धमकी देता चला जाए, भुट्टो साहब रोज धमकी की तकरीरें करते जाएं और सिक्योरिटी काउंसिल या बड़े-बड़े मुल्क उनसे दबते चले जाएं तो फिर हम इस दबने को कैसे बर्दाश्त कर सकते हैं और कब तक बर्दाश्त करेंगे। अगर भुट्टो साहब यह चाहते हैं कि कश्मीर का फैसला हो जाए तब वे अपनी फौजों को हटायेंगे तो मैं यह उनसे दरख्वास्त करना चाहता हूँ कि न कश्मीर का इस तरह फैसला हो सकता है और अगर वे फौजें अपनी हटाने को तैयार नहीं तो हम भी वहीं बैठेंगे और बैठे रहेंगे, जहाँ आज हैं। हम उनसे बहुत आगे हैं और बहुत जगहों पर हैं पाकिस्तान में। इसलिए हमें कोई बहुत चिन्ता नहीं है। अगर वे बैठा रहना चाहते हैं तो हम भी बैठे रहेंगे।

यह कश्मीर का मसला उस पर आज कुछ कहने की या दोहराने की जरूरत नहीं। व चाहते हैं कि हम हाजीपीर से हट जाए, टीथवाल से हट जाए, कारगिल से हट जाएं। अरे साहब, आप तो सारे हमारे आजाद कश्मीर पर कब्जा किये हुए बैठे हैं, वह सारा कश्मीर जो आजाद कश्मीर कहलाता है कोई पाकिस्तान का हिस्सा है ? गैरकानूनी तरीके पर आपने उसको दबा कर रखा हुआ है। सिक्योरिटी काउंसिल की पुरानी तजवीजें, उसके पुराने प्रस्ताव, उसके पुराने रेजोल्यूशंस को देखिये तो। जम्मू-कश्मीर का, जिसमें आजाद कश्मीर शामिल है उसका सारा इंतजाम, उसका सारा एडमिनिस्ट्रेशन सब जम्मू-कश्मीर गवर्नमेंट के अन्डर होना चाहिये, उन्हीं को चलाना चाहिये। यह सिक्योरिटी काउंसिल का पुराना रिजोल्यूशन है। तो पहले तो आप खाली कीजिये तब हमसे कहिये-ये टीथवाल और कारगिल के बारे में। हम तो चन्द कदम आगे गये हैं कोई बहुत ज्यादा तो नहीं, खैर कदम नहीं मीलों में आगे गये हैं। मगर इस तरह से कश्मीर की बात को डर और धमकी से कराने की या चलाने की कोशिश करना, हमारी जगह पक्की है कश्मीर के बारे में। कश्मीर हिन्दुस्तान का एक अटूट हिस्सा है और वह टूट नहीं सकता है और यह बात आज समझ लेनी है। हमें रंज है, हमें अफसोस है कि पाकिस्तान ने कश्मीर के लेने के लिए एक फौजी हमला किया है। कौन सा यह इन्टरनेशनल लॉ है, कौन-सा यह कानून है कि जहां कहीं इस तरह का कोई एक मामला सिक्योरिटी काउंसिल में पड़ा हुआ हो, वहाँ एक मुल्क दूसरे मुल्क पर हमला करे फौजों के जरिये, अपनी ताकत और हथियारों के द्वारा उस पर कब्जा करना चाहे यह कहाँ तक कानूनी बात है और यह कहाँ तक

और हम भी लाहौर की तरफ टहल कर चले गये

मुनासिब बात है ? इसलिए मैं चाहता हूँ कि आज दुनिया के हमारे सब देश और सिक्योरिटी काउंसिल इस बात को महसूस करे कि आज हमारी हिन्दुस्तान की सही लीगल पोजीशन क्या है ? हमारी कानूनी हैसियत, हमारी कानूनी बातें क्या है और हमारा क्या हक और क्या अधिकार और क्या अख्तियार कश्मीर पर है और जब वह दूसरी बातों को सोचे कि कैसे कश्मीर से मामले को हल किया जाये। ठीक है हिन्दुस्तान और पाकिस्तान का सम्बन्ध अच्छा हो, उसके लिए कोई कोशिश करता है तो जरूर करे, उसमें हमें एतराज नहीं है, आखिर हमें पड़ौसी मुल्क बन कर रहना है और यह आपस में एक खिंचाव, एक मन-मुटाव, एक दुश्मनी के जज्बे और भावना से रहना यह पड़ौसी मुल्कों के अन्दर बहुत बड़ी मुसीबत और दिक्कतें पैदा करता है, तो वह बात एक अलग बात है। लेकिन अगर कश्मीर की बुनियाद बना कर यह सारे समझौते की शक्ल बनाने की कोशिश करे तो हमारे लिए मानना उसको नामुमकिन है और हम अपनी जगह से नहीं हट सकते है।

यह सिक्योरिटी काउंसिल की मीटिंग कहते है, सात दिन के अन्दर में बुलाई जाए और पाकिस्तान कहता है कि एक हफ्ते में सिक्योरिटी काउंसिल की मीटिंग बुलाइये। किस बात के लिए बुलाइये ? क्या करना है सिक्योरिटी काउंसिल में और सिक्योरिटी काउंसिल में अभी तो पहला हिस्सा जो प्रस्ताव का है सही मायने में सीजफायर भी नहीं हुआ एक तरह से। वह भी बात पक्की नहीं हुई। तो यह दूसरी और बातों का सवाल अभी कैसे पैदा होता है ? पहले, पहला हिस्सा तो पूरा हो, फिर कश्मीर का सवाल उठता या और चीजें उठती है। लेकिन सिक्योरिटी काउंसिल में भुट्टो साहब अपनी आवाज सुनने के बड़े ख्वाहिशमन्द है। कभी कभी लोगों को अपनी आवाज सुनना बहुत अच्छा लगता है ? तो या तो वे इसलिए सिक्योरिटी काउंसिल की मीटिंग चाहते है। लेकिन मैं यह कहना चाहता हूं और सिक्योरिटी काउंसिल के लीडरान को अगर गैर-जरूरी तारीख पर और बगैर सही कदम उठाये हुए और बातों के पूरा होते हुए अगर सिक्योरिटी काउंसिल की मीटिंग हुई तो हम क्या करेंगे जाकर ? शायद हमें सोचना पड़े कि हम जाएं भी या न जाएं। लेकिन हम उम्मीद करते हैं कि सिक्योरिटी काउंसिल अपनी मीटिंग को सोच-समझकर बुलाएगी और एक सही बात, सही रास्ता जो यह सारा प्रासेस होने वाला है, जो कुछ यह प्रस्ताव है, जो तजवीज उनकी है, वह सही ढंग से जब अमल में लाई जाए तब उसके बाद-ठीक है वे सिक्योरिटी काउंसिल को बुलाना जरूरी समझें तो बुलाएं और हम उसमें हिस्सा लेंगे। हम बहस में हिस्सा लेंगे, हम अपनी बातें कहेंगे।

मैं आपसे यह भी निवेदन करना चाहता हूं कि यह जो लड़ाई-बन्दी है उसको कोई ऐसी चीज, एक पक्की बात मान लेना और हम किसी मायने में ढीले हो जायं तो यह एक बात, मुनासिब बात नहीं होगी। हमें बहुत सोच-समझ कर बात करना है और जरा भी यह समझना कि आज हम लड़ाई के अन्दर नहीं हैं तो हम बड़ी भूल में पड़ जायेंगे और मेरा आपसे खास तौर पर निवेदन है कि दो-तीन चीजें जरूरी है। हम नहीं जानते कि यह लड़ाई कब, क्या शक्ल अख्तियार कर ले और फिर चीन का भी हमला, चीन की भी धमकी लगी हुई है। एक भयानक स्थिति का मुकाबला हमें करना है। उससे कोई घबड़ाने की बात नहीं, मगर आप इससे अन्दाजा करें कि आज मुल्क में कितने डिसिप्लिन की जरूरत होगी, कितने अनुशासन की जरूरत होगी, कितनी तकलीफ उठाने के लिये तैयार रहना पड़ेगा, कितना त्याग करने के लिये हमें तत्पर रहना होगा। यह बात आज अपने मनों में हमको रखनी है, अपने दिलों में रखनी है और उसके मुताबिक काम करना है। हमें अपने और काम रोकने पड सकते हैं, लेकिन अपनी

फौजी ताकत को बढ़ाना, उसकी शक्ल को बराबर तरक्की देना, अपने हथियारों को ठीक रखना, उनको भी और ज्यादा बढ़ाना यह सारी चीजें ऐसी हैं जिनको पहली जगह देनी पड़ेगी। चाहे हमको खाना न मिले लेकिन हमें उस चीज को पूरी तरह से करना है। मै आज तो नहीं कहता लेकिन मौका आ सकता है जब हमे खाने की भी मुसीबत और दिक्कत आ पड़े। हमारे दोस्त कुछ मुल्क हैं, वे मदद करना चाहें उसका स्वागत करेंगे। लेकिन न भी मदद करना चाहें, ऐसा मौका आ सकता है जब वे मदद न करना चाहें, फिर हमें यहाँ अपने अन्दर कम से कम खाने की बात जो है उसको किसी-न-किसी तरह से पूरा करना होगा और मै समझता हूँ कि इन दिनो और अगले दो-तीन महीनों के अन्दर हमें तमाम गांवों-गांवों मे इस बात की खबर पहुँचानी है कि इस समय अपने देश में हमें अनाज पैदा करना है। कैश क्राप्स की जो खेती है, उनको, कैश क्राप्स को रोकना है, कम करना है लेकिन गेहूँ, चावल, जौ, बाजरा इन चीजों को ज्यादा से ज्यादा पैदा करना है और मै चाहता हूँ कि आज एक-एक गाँव के अन्दर ऐसा सङ्गठन हो कि जिससे हम ज्यादा से ज्यादा अपनी उपज, अपनी पैदावार, अपनी खेती को तरक्की दे सकें और फिर जो भी हम पैदा करें उसको सारे देश के लिये करें। तो हमे एक तरफ तो पैदावार को बढाना है और दूसरी तरफ खर्च कम करना है, कम इस्तेमाल करना है। अब यहाँ तो मेरे लिये, मै जैसे माँस या गोश्त नही खाता, तो खैर अपने लिये तो नही लेकिन जो खाते है उनको मेरी राय मे चावल या गेहूँ कम खाना चाहिये। उसको बचाना है, उसको कम करना चाहिये। होटलों में ज्यादा खर्च होता है, बड़े शान-बान के साथ एक के बाद दूसरी प्लेट चली आती है, यह सब रोकना चाहिये। जो जरूरी है, जितना खाने के लिये उतना ही खाना चाहिये। मै आपसे इन बातों को बड़ी गम्भीरता से कह रहा हूँ। हमे सोचना है कि हम किस तरह से अपने खर्च को बचा सकते है। शादी-ब्याह में भी आज थोड़ी दावत हों, लम्बी चौड़ी दावतें करना यह मुनासिब नहीं है। तो इस तरह से जो-जो तरीके है, जो हो सकता है उसे हमें अपनाना चाहिये और हमे कोशिश करनी चाहिये कि हम बचा कर अपने पास रखने की कोशिश न करें।

यह भी मै आपसे निवेदन करना चाहता हूँ कि आज इस लड़ाई के समय लोग समझे कि चलो भाई एक-दो महीने के लिए रख लो, यह गलत बात है। जितनी आज जरूरत है, हफ्ता भर, दस दिन, जितने दिन के लिए आप लाते है, एक भी दाना अपने घर में उससे ज्यादा रखना यह देश के साथ अन्याय करना है। क्या डरना है, बचाकर क्या करेंगे, दो-चार-दस आदमी अपनी हिफाजत कर ले लेकिन लाखो की हिफाजत न रहे तो अपने जीने से क्या फायदा? यह जीने से मरना अच्छा है। हम जानते है कि हम अपनी हिफाजत कर सकेंगे लेकिन मैने आपसे कहा था कि मै जब रशिया गया था तो लेनिनग्राद में एक शहर के अन्दर पाँच लाख आदमी मरे, अपने शहर की हिफाजत मे अपने हथियारो के द्वारा पाँच लाख एक शहर में, लेकिन छह लाख आदमी मरे जिनको खाना नही मिल सका। तो जब लड़ाई का समय आता है, मै यह नहीं कहता कि यह भयानक चित्र अपने देश मे होने वाला है, मरने की बात तो और है। लेकिन हम उम्मीद करते है कि आज हम अपने देश में अपनी जरूरत भर के लिए पैदा करेंगे और हर आदमी अपने भाई को, अपने पड़ौसी को, उसके साथ आधी रोटी बाँट कर खायेगा, लेकिन देश के अन्दर भुखमरी नही होने देगा। आज इस बात का हमें निश्चय करना है।

कीमतों के बारे में, दामों के बारे में भी, मै तमाम व्यापारियों से कहना चाहता हूँ, ठीक है

गवर्नमेंट अपनी जिम्मेदारी को निभाये, कानूनी कार्रवाई करे। लेकिन मैं तो आज यह अपील करना चाहता हूँ सबसे कि यह कानूनी और नजरबन्दी की, आज यह बातें करना अच्छी नही लगती। आज इस समय जरूरत इस बात की है कि हरएक कीमतों को ठीक हालत मे बना कर रखने की कोशिश करें। वह बहुत न बढ़े। उनमे स्थायीपन रहे कि जिसकी वजह से लोगों का काम सहूलियत के साथ चल सके : तो उधर भी हमे बराबर ध्यान देने की जरूरत है।

मैं जानता हूँ कि जब समय आता है, तब फिर आपस मे अपने-आप हम संगठन करते है, हम सिविल डिफेंस का इन्तजाम कर लेते है। देखते-देखते दिल्ली शहर मे दो-चार दिनो के अन्दर जो यहाँ रहने वाले लोगो ने जिस तरह से सिविल डिफेंस का इन्तजाम किया मै उसके लिए बधाई देना चाहता हूँ। तमाम शहर का शहर अंधेरे मे था लेकिन कोई घटना, कोई वाकयात नही। बच्चे भी, लोग भी, जहाँ भी कही रोशनी हो उसको बुझाने की कोशिश मे लगे हुए थे। बहुत शान के साथ बगैर पहले से तैयारी किये हुए हमने इस ब्लेक आउट को और सारे कामो को पूरा किया। मै चाहता हूँ कि अफसरान जो करे या जो न करे, आपको जो नसीहते और जो हिदायतें मिले, यह जमाना ऐसा है कि इसमे यह नही देखा जाता कि सरकारी अफसरान आकर काम कर रहे हैं या नही, बल्कि हमको, आपको, हर-एक को अपने डिफेंस के लिए, अपनी हिफाजत के लिये, अपनी चौकीदारी के लिए, कोई बम गिरे तो उससे घबड़ा कर भागने की नही बल्कि डटकर वहाँ मदद करने का काम है। यह सारा काम हमे अपने आप सगठित करना है, हर शहर मे करना है, सारे देश में करना है, और मुझे विश्वास है कि हमारे देश के रहने वाले नौजवान इन कामो से पीछे हटने वाले नही है।

एक चीज और कहना चाहता हूँ। बी०बी०सी० ने यह कहा है, वह एक अंग्रेजी एजेंसी है, कि लालबहादुर तो हिन्दू है, यह प्राइम मिनिस्टर हिन्दू है और इसलिए आज कुछ लड़ाई लड़ने को तैयार हो गया है। हिन्दूपन कुछ उसके दिमाग मे है या क्या है ? बड़े सुन्दर-सुन्दर लफ्ज उन्होंने कहे है। खैर, यह हमारे देश मे, मै हिन्दू जरूर हूँ और ये मीर मुश्ताक साहब मुसलमान है और एँथोनी साहब एंग्लो-इंडियन है कुछ दूसरे सिक्ख है, पारसी है। हमारी तो यही खूबी है कि हमारे देश मे हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिक्ख, पारसी सभी धर्म और मजहब हैं। हमारे यहाँ मन्दिर है, मस्जिद है, गुरुद्वारे हैं, गिर्जाघर हैं, लेकिन हमारी खूबी यह है कि उसको हम सभी पालिटिक्स मे, सियासत में नही लाते। हम कोई हिन्दू राष्ट्र नही बनाते या मुस्लिम राज्य बनाने की कोशिश नही करते, यह देश हमारा एक ऐसा देश है जो कि पाकिस्तान की तरह एक इस्लामी मजहब और इस्लामी धर्म की मानने वाला एक इस्लामी मुल्क नही है। हमारा तो एक आज उनसे अन्तर और फर्क यह है कि जहाँ एक तरफ वो मजहब को, सियासत और पालिटिक्स का एक हिस्सा बना कर रखते है, वहाँ हमारे यहा धर्म का, मजहब को, हर एक को आजादी है, कि वह अपने धर्म और मजहब को माने। अपनी पूजा, अपनी परस्तिश करे। लेकिन इस बात को याद रखिए कि जहाँ तक देश की राजनीति की बात है, हरएक हिन्दुस्तानी है। हिन्दुस्तान का रहने वाला है, चाहे वह सिक्ख हो, चाहे पारसी हो, चाहे मुसलमान हो, चाहे हिन्दू हो और इस तरह की बातों को चलाना, एक गलत प्रचार करना, दुनिया को यह बताना कि हम तो सिर्फ छोटी दृष्टि से, एक छोटी निगाह से देखकर इस बात को कर रहे है, तो आखिर चीन तो कोई मुसलमानी देश नही है। आज हमने जिस तरह से पाकिस्तान की बात को, हमने उन्ही लफ्जों मे चीन के बारे में भी कहा। अगर वह हमारे ऊपर हमला करता है तथा चाहे उसकी जो भी

ताकत हो, हम उसका भी अपनी पूरी शक्ति और ताकत के साथ मुकाबला करेंगे। तो यह मजहब और धर्म की बात नहीं है। यह तो अपने मुल्क की आजादी की, उसकी रक्षा की, उसकी हिफाजत की बात है। हमारे देश की एक इंच, एक टुकड़ा भी कट कर नही जा सकता। उसको हमें बचाना है और उसके लिए हथेली पर जान रखकर हर एक भाई-बहन को आगे बढना है।

देश ने बड़ा एका दिखलाया है, बड़ा मेल, बडा आपस में सङ्गठन, बड़ा डिसिप्लिन। इसने एक नयी जान देश के अन्दर पैदा की है और हमें भरोसा है, मुझे विश्वास है कि इस एके को कायम रखेंगे। कोई इसको बिगाडना चाहे तो वह पाकिस्तान के हाथ में खेलेंगे, यही मैं कहना चाहता हूँ। जो इस एके को बिगाड़ेगा, जो यहाँ आपस मे झगड़ा पैदा करेगा, जो शाति को तोड़ेगा, उसको मैं समझूँगा कि वह पाकिस्तान की मदद करता है और एक देशद्रोही की बात करता है। इसलिए इस मेल, इस एके को बनाये रखना है। हमे यहाँ अगर आपस मे सङ्गठित रहे, अपने खाने का इन्तजाम कर लिया, अपने डिफेन्स को मजबूत करने के लिए जो कुछ हमसे कहा जाए उसे देने को हम तैयार हो गये और होगे तो, मुझे विश्वास है कि हमारी फौजें हमारे मैदान मे, आगे जहाँ भी उनको मौका मिलेगा, वे जी-जान से देश की आजादी की रक्षा करेंगी।

कल मै अस्पताल में गया था और कुछ अपने सिपाहियों को, अपने जवानो को देखा, कुछ अफसरो को देखा। कितनी उनको जबरदस्त चोटे लगी है, कैसे वे जख्मी है, लेकिन मैंने एक के चेहरे पर भी आँसू नहीं देखे, बल्कि मुस्कुराहट पाई। एक अफसर ने कहा जिसका पैर जिस पर गोला गिरा था और जिसका पैर घुटने से काट दिया गया था, उसने कहा मुझसे—जब यहाँ मुझ पर जख्म लगा और यह पैर मेरा लटक रहा था, उसके बाद मैने उधर के पाकिस्तान के अफसर को, अपनी गोली से मारकर गिराया, चोट लगने के बाद भी। एक दूसरा अफसर भूपेन्द्रसिंह, उनको देखकर जी भर आया। सारा बदन, सारा जिस्म खून से लथपथ था एक टुकड़ा कपड़ा भी उनके शरीर पर रहना मुश्किल है आज भी, इस वक्त भी खून से तर और कितने जख्म और कितनी चोट लगी हुई थी। लेकिन उन्होने मुझसे कहा, आँखे बन्द थी—मुझे अफसोस है कि मै बेअदबी कर रहा हूँ कि हमारे प्राइम मिनिस्टर आये है और मै लेटा हुआ हूँ। उन्होने कहा—अकेले मैने, जब कि मुझ पर लगती थी गोलियाँ या बमो के गोले आते थे, लेकिन अकेले मैने ७ टैंक मार गिराए। उन्होने कहा—मैने ७ तोड़े और मेरी यूनिट ने ३१ टैंकों को मार गिराया और उन्होने कहा—कि मै अच्छा हूँ या न हूँ, अच्छे तो हो ही जायेगे मुझे पूरी उम्मीद है, लेकिन उन्होने कहा—हमने देश का सर ऊँचा किया है। और मैंने भी उनसे कहा कि हमें भी आप पर अभिमान है, आपके लिए फिक्र है। सारे देश को घमण्ड है कि आप लोगो ने किस शान के साथ अपने दुश्मनों का मुकाबला इतनी शक्ति और ताकत के साथ किया है। इसमे कोई शक नही है कि आज सारा देश चाहे हमारी फौज हो, चाहे हमारे हवाई जहाजों से उड़ाने वाले पायलेट्स हों, आज एक-एक बच्चा, एक-एक नौजवान उनके लिए दिल में आदर रखता है और शान से उनके कामों को याद करता है। मुझे विश्वास है कि हम सब आज पूरी ताकत के साथ, अपनी फौजों के पीछे खड़े रहेगे और उनको इस बात का मौका देंगे कि वह हमारे देश को एक कामयाबी के बाद, एक जीत के बाद दूसरी जीत पर बराबर लेते चले जाए। मुझे विश्वास है कि न्याय हमारे साथ है और जीत हमारी होगी।

प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री का १० दिसम्बर १९६५ को ताशकन्द वार्ता से सम्बन्धित लोक-सभा मे दिया गया वक्तव्य ।

हम सब एक होकर देश के भाग्य का निर्माण करें

सितम्बर १८ को मुझे रूस की मन्त्रिपरिषद् के अध्यक्ष श्री कोसीगिन से एक पत्र मिला, जिसमे उन्होने प्रेसिडेन्ट अयूब खा और मेरे बीच रूस के मन्त्रि-परिषद् के अध्यक्ष के तत्वावधान मे, यदि दोनो पक्ष चाहे तो, वार्ता का सुझाव रखा था, ताकि भारत और पाकिस्तान के बीच फिर से शान्ति स्थापित हो। मने रूस को मन्त्रि-परिषद् के अध्यक्ष को २२ सितम्बर को इसका जवाब भेजा। इसमे मैने भारत तथा पाकिस्तान के बीच शान्ति स्थापना के लिए प्रेसीडेन्ट अयूब खा तथा अपने बीच वार्ता के प्रस्ताव को स्वीकार किया। रूस को मन्त्रि-परिषद् के अध्यक्ष ने इसी प्रकार का पत्र प्रेसीडेण्ट अयूब खा को भी भेजा। प्रेसीडेन्ट अयूब खाँ ने श्री कोसीगिन को जवाब मे जो पत्र भेजा, जिसका साराश बाद मे रूस के पत्रो मे भी छपा था, उससे पता चलता है कि पाकिस्तान के प्रेसिडेन्ट ने रूस को मन्त्रि-परिषद् के अध्यक्ष को उनके प्रस्तावो के लिए धन्यवाद दिया और कहा कि वार्ताएँ तभी हो सकती है, जबकि उनके लिए पहले से तैयारी हो और उसके लिए जरूरी है कि यह तैयारी पहल सुरक्षा-परिषद् मे ही की जा सकती है। मैंने सदन को २२ सितम्बर को श्री कोसीगिन के प्रस्तावो के बारे मे सूचित किया था और कहा था कि हमने इनको स्वीकार किया है।

नवम्बर १६ को मुझे श्री कोसीगिन ने एक पत्र भेजा कि उनको पाकिस्तान के विदेश मन्त्री से उनके प्रेसीडिण्ट की ओर से एक पत्र मिला है जिसमे उन्होने कहा है कि वे चाहते है कि, जैसा कि रूस की मन्त्रि-परिषद् के अध्यक्ष ने प्रस्ताव रखा था, प्रेसीडेण्ट अयूब और मेरे बीच वार्ता ताशकन्द मे होनी चाहिए। रूसी प्रधान मन्त्री ने इस प्रस्तावित बातचीत के सम्बन्ध मे मेरे विचार जानने चाहे थे, और जैसा कि मैंने सदन के सामने १६ नवम्बर को कहा था, मैंने प्रस्ताव को अस्वीकृत नही किया। पर साथ-ही-साथ इस बात को साफ कर दिया कि जहाँ तक काश्मीर के प्रश्न का सवाल है, हम अपने इस विचार से बिल्कुल भी नही डिगगे कि काश्मीर भारत का अभिन्न अग है और अपने क्षेत्र छोड़ने का कोई प्रश्न नही उठता है।

इसके बाद, मास्को मे हमारे राजदूत और सोवियत सरकार के बीच अनौपचारिक बातचीत हुई। सोवियत राजदूत मुझसे भी मिले। २७ नवम्बर को श्री कोसीगिन से मुझे एक पत्र मिला जिसमे उन्होने कहा था कि पाकिस्तान के प्रेसीडिण्ट ताशकन्द मे बिना कोई शर्त लगाए बातचीत करने को तैयार है। वार्ता की तिथियो के सम्बन्ध कुछ सुझाव दिए गए। मैने श्री कोसीगिन को जवाब दिया कि मै जनवरी, १९६६ के पहले सप्ताह मे उक्त बातचीत म भाग ले सकूँगा और अब यह घोषणा की जा चुकी है कि यह वार्ता ४ जनवरी १९६६ से आरम्भ होगी।

१ फरवरी १९६६ से प्रारम्भ होने वाली प्रेसीडेण्ट जानसन से मेरी आगामी वार्ता के कारण, दोनों देशों के बीच सद्भाव बढेगा और दोनो देश एक दूसरे के पक्ष को अच्छी तरह से समझ सकेंगे। प्रेसीडेण्ट जानसन ने भारत को अनाज अधिक मात्रा मे भेजने का जो फैसला किया है, उसके लिए मै उनको हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। इससे वर्त्तमान अन्न-सकट के दूर करने मे बड़ी सहायता मिलेगी।

सदन को ज्ञात है कि कुछ महीने पहले बर्मा के प्रेसीडेण्ट जनरल नेविन ने भारत-यात्रा करके हमे गौरवान्वित किया था। उस समय प्रेसीडेण्ट नेविन ने मुझे बर्मा आने का निमन्त्रण दिया था। तब से मैं इस मित्र पड़ौसी देश की यात्रा का इन्तजार कर रहा हूँ। अतः मुझे इस बात पर प्रसन्नता होती है कि बहुत जल्दी ही मुझे वहाँ जाने का अवसर मिलेगा। मैं २० दिसम्बर को प्रात. को बर्मा को रवाना हूँगा और २३ दिसम्बर को प्रात.काल भारत लौट आऊँगा।

हमारे आगे भारी काम है और मुझे इस बात का विश्वास है कि मै अपने साथ इन गौरव-शाली सदन के माननीय सदस्यो की सदिच्छाएँ ले जाऊँगा। जिन-जिन देशो की यात्रा मैं करूँगा, उनको अपने देश के लोगों की शुभ कामनाएँ अर्पित करूँगा। यह हमारा फर्ज और कर्त्तव्य है कि हम दूसरे देशो के लोगो को अपना दृष्टिकोण और नीतियो को समझाएँ और इस बात की कोशिश करें कि आपस मे हम एक दूसरे को अच्छी तरह समझ सकें। मै इस बात पर जोर देने की आवश्यकता समझता हूँ कि भारत का शान्ति और अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव मे अडिग विश्वास है। हम सभी से, विशेषतः अपने पड़ौ-सियों से मैत्री करना चाहते है। हम अपनी शक्तियो को अपने देश की आर्थिक अवस्था को सुधारने और अपने देश के लोगो के जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने के बडे काम मे लगाना चाहते है। जो धनराशि आज रक्षा के काम मे खर्च होती है, हम उसे गरीबी से लड़ाई लडने मे खर्च करना चाहते है, यदि हमारी सारी सीमा पर हमारे देश की प्रादेशिक अखण्डता को भारी खतरा न होता। जो हमारे सामने समस्याएँ आएँगी, वे बडी चुनौतियाँ होंगी और मै सदन को यह बताना अनावश्यक समझता हूँ, हम इन समस्याओं का सामना पूरी सावधानी और सतर्कता से करेंगे।

देश अब भी नाजुक घडियों से गुजर रहा है। हमे अपने देश के अन्दर कठिन अनाज की घरेलू समस्याओं को सुलझाना है और साथ-ही-साथ योजनाओं के लिए साधन जुटाने की कठिन स्थिति का भी मुकाबला करना है। मुझे इसमे कोई सन्देह नहीं कि इस वक्त हमारे सामने जो चुनौती है, वह हमारे लिए एक स्वर्णिम अवसर है कि हम अपनी सारी शक्ति इसका सामना करने के लिए लगा दें। प्रत्येक व्यक्ति और पूरा राष्ट्र आज एक नये ढग से सोच रहा है। इस बात का लोगों मे एहसास हुआ है कि हम अपने आपसे जहाँ तक सभव हो, सहायता करें। हाल के महीनो ने इस बात को साबित कर दिया है कि हमारी सबसे बड़ी शक्ति हमारे लोगो के बीच एकता की है। जहाँ किसी राष्ट्रीय समस्या का प्रश्न आता है, सारे लोग एक होकर आगे बढते हैं। वास्तव मे मैं सारे राजनीतिक दलो का उनके द्वारा इस कठिन समय मे दिए गए सहयोग के लिए आभारी हूँ। मेरी यह हार्दिक आशा है कि इस भावना को चिरंजीवी बनाया जायगा। आइए, हम सब एक होकर काम मे जुट जाएँ और इस तरह देश के भाग्य का निर्माण करें।

०

ताशकन्द मे ४ जनवरी, १९६६ को ताशकन्द-सम्मेलन के आरम्भ पर स्व० लालबहादुर शास्त्री द्वारा दिया गया भाषण

नये अध्याय का सूत्रपात करना है

अध्यक्ष कोसिजिन ! आपके जिस साहसपूर्ण कदम ने मुझे और पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खाँ को इस ऐतिहासिक एशियाई नगर में एक स्थान पर मिलाया है, मेरी जनता, मेरी सरकार और मैं उस कदम की हृदय से सराहना करते है। सबसे पहले मैं उसी भावना को व्यक्त करना चाहता हूँ। मुझे यह कहते हुए अपार हर्ष होता है कि हमे इस नगर मे जो आतिथ्य मिल रहा है, हमारी जिस तरह प्रेमपूर्वक देखभाल की जा रही है, उसके लिए मै और मेरा प्रतिनिधिमण्डल हृदय से आपका आभारी है। ताशकन्द की जनता ने हमारा जो भव्य स्वागत किया, वह सचमुच हमारे हृदय को छू गया।

मुझे ज्ञात है कि हमारे दोनो देशो के बीच अनेक ऐसे मतभेद है, जिसका हल नही हो सकता है। जिन देशो मे बहुत अच्छे सम्बन्ध होते है उनके बीच भी मतभेद और विवाद पाये जाते है। हमारे सामने आज प्रश्न यह है कि क्या हमे उन मतभेदों और विवादो को हल करने के लिए शक्ति के तरीके के बारे मे सोचना है या हमे यह तय करके घोषणा कर देनी है कि हम शक्ति का कभी इस्तेमाल नहीं करेंगे। यदि दूसरे देश, जो बहुत साधन सम्पन्न है और जिनके बीच मतभेद है, सशस्त्र संघर्ष बचाकर शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के आधार पर साथ-साथ जीवित रह सकते है, तो क्या भारत और पाकिस्तान जैसे देशो का, जिनके सामने मुख्य समस्या अपने-अपने जनगण की आर्थिक दशा सुधारने की है, यह कर्त्तव्य नही कि वे हथियारो की मदद से समस्याओं को हल करने का विचार त्याग दे ?

'ताशकन्द सम्मेलन' के लिए आपके निमन्त्रण को हमने तुरन्त स्वीकार कर लिया। अपने शान्ति के उद्देश्य से प्रेरित होकर ही हमे निमन्त्रण किया है। इस उद्देश्य की जितनी प्रशसा की जाय, थोड़ी है। शान्ति भारत और पाकिस्तान के लिए तो परम आवश्यक है ही, सारी दुनिया के लिए भी यह बहुत जरूरी है। हमे भारत-पाक सम्बन्धो मे एक नये अध्याय का सूत्रपात करने का प्रयत्न करना चाहिए। मै पुरानी बाते नही दुहराना चाहता। मै समझता हूँ और मेरा ख्याल है कि हमारे दोनों देशो के बीच यह युद्ध बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण घटना रही। हमें इस सम्मेलन मे अपने पुराने गुस्से निकालने की जरूरत नही, बल्कि हमें भविष्य की ओर देखना है।

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो के प्रसग मे आक्रमण का जवाब देने के लिए ही शक्ति-प्रयोग का का औचित्य माना जा सकता है, इसलिए यदि हम एक-दूसरे को शक्ति का प्रयोग न करने का आश्वासन देते है, तो इसका अर्थ यह होगा कि हम एक दूसरे की प्रादेशिक अक्षुण्णता का सम्मान करते हैं। हमारा सदा से यह कहना है, और आज भी मै कहता हूँ कि हम पाकिस्तान की प्रभुसत्ता और प्रादेशिक अक्षुण्णता को बिना किसी हिचक के स्वीकार करते हैं। इसी प्रकार हमे भी अपनी प्रभुसत्ता तथा प्रादेशिक अक्षुण्णता की रक्षा करनी है। शान्ति और अच्छे सम्बन्धों के लिए एक दूसरे की प्रभुसत्ता का सम्मान अत्यन्त आवश्यक होता है।

यदि इस सिद्धान्त को एक बार स्पष्ट रूप से स्वीकार कर लिया जाए, तो भारत-पाकिस्तान सम्बन्धो के पूरे स्वरूप को दोनों देशो के जनगण के दिल मे बदल दिया जा सकता है। मैं आपकी अनुमति से यहाँ स्पष्ट शब्दो मे और पूरी सच्चाई के साथ यह कहना चाहता हूँ कि हमारी कामना है

कि पाकिस्तान की जनता फूले-फले। हम स्वयं अपनी जनता के जीवन मे सुधार लाने का प्रयत्न कर रहे हैं। हमारा विश्वास है कि यदि भारत और पाकिस्तान के बीच अच्छे सम्बन्ध बन जायँ, तो यह उप-महाद्वीप शीघ्र ही समृद्ध हो सकता है।

जैसा कि हमने कहा, इस तरह के सम्बन्ध की आधारशिला शातिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति की स्वीकृति होनी चाहिए। इस नीति का पालन करते हुए अनेक मोर्चों पर कदम उठाने होगे। मसलन शीतयुद्ध के वातावरण को समाप्त करना होगा। यदि समाचार-पत्रो और रेडियो के प्रचारो द्वारा दोनो देशा क जनगण मे वैर या अविश्वास की भावना भरने का क्रम जारी रहेगा, तो हम दोनो सरकारों के प्रधान चाहे जो कुछ करे सघर्ष का खतरा सदैव बना रहेगा। दोनो देशो के सारे सम्बन्धों में सुधार लाने को ही हमे अपना लक्ष बनाना चाहिए। हमारा व्यापार सकुचित होता जा रहा है, उसमे विकास होना चाहिए। भारत और पाकिस्तान से होकर अनेक नदियाँ बहती है, आज वे विवाद-स्रोत बनी है। होना यह चाहिए कि उनके द्वारा हमारा सहयोग और बढे। इससे हमारे दोनो देशो को लाभ पहुँचेगा। इसी प्रकार आर्थिक सहयोग के अनेक क्षेत्र है। इन्हे और समझदारी के आधार पर परस्पर हित की दिशा मे आगे बढाया जा सकता है।

यह सब कहते समय मेरा यह सुझाव नही है कि हमे दोनों देशो के बीच पाये जाने वाले अनेक मतभेदो से अपनो आँखे बन्द कर लेनी चाहिये। मै उन मतभेदो को गिनाना नही चाहता। लेकिन मेरा यह कहना जरूर है कि इन समस्याओ को शक्ति प्रयोग से नही, बातचीत के द्वारा हल करना चाहिये। सशस्त्र सघर्ष समस्याओ को हल करने की बजाय नई समस्याएँ पैदा करता है, इससे युद्ध और सुलह के रास्ते मे रोडे आते हैं। दूसरी ओर शान्तपूर्ण वातावरण मे अपने विचारो को हल करने की दिशा मे हम सही अर्थो मे प्रगति कर सकते है।

यदि इस सम्मेलन मे, जिसे अध्यक्ष कोसिजिन ने बुलाया है, हमारे मतभेदो के हल के लिए शक्ति का प्रयोग न करने का समझौता हो जाता है तो यह सचमुच एक महत्वपूर्ण उपलब्धि होती है। इससे हमारे बीच अच्छे पड़ौसियो के सम्बन्धो का मार्ग प्रशस्त होता है, जिसकी दोनो देशो को बडी आवश्यकता है और जिससे हमारी अन्य समस्याओ के हल आसान हो जायेगे। हम अन्य प्रश्नो पर भी बात कर सकते है, ऐसा करना भी चाहिए, लेकिन यदि उन पर हमारा मतभेद भी हो और तुरन्त समझने का कोई रास्ता नही निकल पा रहा हो तो भी हमे शान्ति का रास्ता नही छोडना चाहिए।

हमारे कधो पर एक बहुत बडी जिम्मेदारी है। हमारे उस महाद्वीप मे ६० करोड़ जनता बसती है। यह पूरी मानव जाति का पाँचवाँ भाग है। यदि भारत और पाकिस्तान को प्रगति करनी है, तो उन्हे शान्तिपूर्वक रहना होगा। यदि सघर्ष और वैर बना रहा, तो हमारे जनगण और बडी-बडी मुसीबतो मे फसते जायेगे। इसके बजाय कि हम आपस मे लडे, हमे आज गरीबी, बीमारी और युद्ध के विरुद्ध युद्ध छेड़ना है। दोनो देशो के जनसाधारण की समस्याएँ, आशाएँ तथा सपने एक है। वे सघर्ष और युद्ध नही, शान्ति और प्रगति चाहते है। उन्हे अस्त्र-शस्त्र की नही, भोजन को आवश्यकता है, वस्त्र और घर की जरूरत है। यदि हमे अपनी जनता की इन आवश्यकताओ को पूरा करना है तो हमे इस सम्मेलन मे कुछ ठोस और विशिष्ट उपलब्धि के लिए प्रयत्नशील होना होगा।

यह एक ऐतिहासिक सम्मेलन है। सारी दुनियाँ की निगाहे हमारे ऊपर लगी हुई है। हमे दुनियाँ को यह कहने का मौका नही देना है कि पाकिस्तान के राष्ट्रपति और भारत के प्रधानमत्री ताशकंद मे मिले तो जरूर, लेकिन कोई समझौता न कर सके। आइये, हम अपने कार्यो से दिखा दे कि हममे अपनी समस्याओ को विश्व के सदर्भ मे रखकर देखने की क्षमता है।

खण्ड : ४

प्रमुख घटनाएँ

एवं

चित्र

जीवन का घटना-क्रम
सन् १६०४–१६६६

२ अक्तूबर १६०४—उत्तर प्रदेश के वाराणसो जिले में मुगलसराय नगर मे जन्म हुआ।

सन् १६२०—हरिश्चन्द्र हाई स्कूल में शिक्षा प्राप्त की। अध्ययनकाल में महात्मा गांधी के असहयोग आन्दोलन से प्रभावित हुए।

सन् १६२१—अध्ययन छोड़कर असहयोग आन्दोलन में शामिल हुए। उन्हें प्रथम बार ढाई वर्ष की जेल की सजा मिली।

सन् १६२४-२५—रिहाई के बाद काशी विद्यापोठ में उन्होने फिर से अपना अध्ययन प्रारम्भ किया और प्रथम श्रेणी में शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण की।

सन् १६२६—सर्वेन्ट्स ऑफ पीपल्स सोसायटी के आजीवन सदस्य बने। इलाहाबाद जाकर उसे अपने कार्यक्षेत्र के प्रमुख केन्द्र बना लिया। इसी समय इलाहाबाद म्युनिसिपल बोर्ड मे चुने गये और सात वर्ष तक उसके सदस्य रहे। आप ४ वर्ष तक इलाहाबाद इम्प्रूवमेन्ट ट्रस्ट के भो सदस्य रहे।

सन् १६२७—२३ वर्ष की आयु में ललितादेवी से विवाह हुआ। आप इलाहाबाद जिला कांग्रेस कमेटी के प्रधान मन्त्री रहे।

सन् १६३०-३६—इलाहाबाद जिला कांग्रेस कमेटी के आप ६ वर्ष तक अध्यक्ष रहे। आप दो बार उत्तर प्रदेश कांग्रेस समिति के मन्त्री चुने गये। सविनय अवज्ञा आन्दोलन में भाग लिया। फैजाबाद मे कारावास।

सन् १६३७—उत्तर प्रदेश विधान सभा के लिए चुने गये।

सन् १६४१—पुनः गिरफ्तार हुए।

सन् १६४२—'भारत छोड़ो' आन्दोलन में नजरबन्द।

सन् १६४५-४६—उत्तर प्रदेश संसदीय बोर्ड के मन्त्री होने के अलावा श्री शास्त्री १६४६ में पुनः उत्तर प्रदेश विधान सभा मे चुने गये और मुख्य मन्त्री प० गोविन्दवल्लभ पन्त के संसदीय सचिव नियुक्त किये गये।

सन् १६४७-५०—आप उत्तर प्रदेश के पन्त मन्त्रिमण्डल मे गृह और यातायात मन्त्री नियुक्त हुए और ४ वर्ष तक इस पद पर रहे।

सन् १६५१—शास्त्री जी ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का महामन्त्री का भार ग्रहण करने के लिए मन्त्रि-पद से इस्तीफा दिया।

सन् १६५२—आम चुनाव के बाद आप राज्यसभा में चुने गये। १६५२ मे केन्द्रीय रेल और परिवहन मन्त्री नियुक्त किए गये।

सन् १६५६—अरियांलुर रेल-दुर्घटना के कारण रेल-मन्त्री पद से त्यागपत्र दिया।

सन् १६५७—इलाहाबाद से लोकसभा में चुने गये।

सन् १९५८—मार्च तक संचार और परिवहन मन्त्री पद पर बने रहे। इसके बाद आप वाणिज्य तथा उद्योग मन्त्री नियुक्त किये गये।

सन् १९६१—पं० गोविन्दवल्लभ पन्त के देहान्त के बाद ४ अप्रैल, १९६१ को आप केन्द्रीय गृह मन्त्री नियुक्त किये गये।

सन् १९६२—आप १९६२ के आम चुनाव मे इलाहाबाद निर्वाचन क्षेत्र से पुनः लोकसभा में चुने गये।

अगस्त, १९६३—१९६३ के अगस्त मे कामराज योजना के अन्तर्गत कांग्रेस का कार्य करने लिये शास्त्रीजी ने मन्त्रिमण्डल से त्यागपत्र दिया।

सन् १९६४

२४ जनवरी, १९६४—नेहरू जी के अस्वस्थ रहने के कारण उन्हे २४ जनवरी, १९६४ को पुनः मन्त्रि-मण्डल मे ले लिया गया। उन्हे किसी विभाग का काम नही सौंपा गया और वे सीधे-सीधे नेहरूजी को उनके हर काम मे मदद करते रहे। वे नेहरू जी के अत्यन्त विश्वासपात्र थे।

२ जून, १९६४—श्री शास्त्री कॉग्रेस संसदीय दल के नेता चुने गये। दल के सदस्यों के सामने भाषण करते हुए उन्होने अपनी सरकार का प्रमुख लक्ष्य समाजवाद बताया और कहा, 'हमारी नीतियाँ पहल से निर्धारित हैं, उन पर शीघ्रता से और सही सही अमल करने की आवश्यकता है। शाम को पत्रकारो से बातचीत करते हुए उन्होने कहा कि बढ़ती हुई कीमते देश की सबसे बड़ी समस्या है। उन्होने श्री नेहरू द्वारा निर्धारित आन्तरिक और विदेश नीति का अनुसरण करने की घोषणा की।

९ जून—श्री शास्त्री ने प्रधान मन्त्री पद की शपथ ली।

११ जून – राष्ट्र के नाम अपने सदेश मे श्री शास्त्री ने देश की आन्तरिक और विदेश नीति की व्याख्या की। साथ ही भारत और पाकिस्तान मे सद्भावना, मैत्री और सहयोग पर बल दिया।

२१ जून—सरदार प्रतापसिंह कैरो के सम्बन्ध मे दास आयोग की रिपोर्ट प्रकाशित। सोवियत संघ के उपप्रधान मन्त्री श्री मिकोयन ने शास्त्री जी को रूस आने का निमन्त्रण दिया।

२३ जून—योजना आयोग की बैठक की पहली बार अध्यक्षता की।

२४ जून— प्रधान मन्त्री की मुख्य मत्रियो से खाद्य और बढती हुई कीमतों की समस्या पर बातचीत। उन्होने उपभोक्ता वस्तुओं के मूल्य निर्धारण पर जोर दिया।

२७ जून—श्री शास्त्री ने तीन मूर्ति भवन को श्री नेहरू स्मारक बनाने की घोषणा की।

४ जुलाई—काश्मीर मे पाकिस्तान द्वारा युद्धविराम रेखा के अतिक्रमण की सूचना। अस्वस्थ स्वास्थ्य के कारण राष्ट्रमण्डलीय प्रधान मन्त्री सम्मेलन मे जाने का कार्यक्रम रद्द।

१८ जुलाई—मन्त्रिमण्डल में परिवर्तन। सरदार स्वरनसिंह परराष्ट्र मन्त्री नियुक्त।

२२ जुलाई - श्री त्रिभुवननारायण सिंह उद्योग और सप्लाई मन्त्री नियुक्त।

१५ अगस्त—स्वाधीनता दिवस के अवसर पर श्री शास्त्री ने लाल किले के परकोटे पर से राष्ट्रीय ध्वज फहराया। अपने भाषण मे उन्होने खाद्य उत्पादन बढ़ाने की जोरदार अपील की।

६ सितम्बर—नागालैण्ड में लड़ाई-बन्दी की घोषणा।

७ सितम्बर—विज्ञान और टैक्नालाजी मे आपसी सहयोग के सम्बन्ध में संयुक्त अरब गणराज्य और भारत के बीच करार।

१० सितम्बर—केरल मे राष्ट्रपति का शासन लागू।

११ सितम्बर—भारत को सैनिक सामान देने के लिए सोवियत रूस से करार पर हस्ताक्षर।

१५ सितम्बर—मन्त्रियों के लिए आचार संहिता तैयार। जिसके अनुसार प्रत्येक मन्त्री को मन्त्री पद पर आने से पहले अपनी सम्पत्ति का व्यौरा देना होगा।

१८ सितम्बर—लोकसभा मे सरकार के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव रद्द।

२१ सितम्बर—सैनिक सामान के लिये ब्रिटेन द्वारा ४७ लाख पौण्ड के ऋण को घोषणा।

लोकसभा में सरकार की यह घोषणा कि भारत ८ लाख २५ हजार जवानों की सेना और वायु सेना के ४५ स्क्वेड्रन रखेगा। पुराने विमानो के स्थानो पर नए विमान रखे जायेंगे। मिग विमान बनाने के कारखाने को स्थापित किया जाएगा। एच० एफ० २४—विमान भी बनते रहेंगे।

२८ सितम्बर—भारत और सयुक्त अरब गणराज्य के बीच अतिस्वन विमान (मेक—२) बनाने में सहयोग करने का करार।

२ अक्टूबर—श्री शास्त्री का जन्म-दिवस। तटस्थ राष्ट्रों के सम्मेलन मे भाग लेने काहिरा रवाना।

३ अक्टूबर—काहिरा मे राष्ट्रपति नासिर से बातचीत।

४ अक्टूबर—काहिरा में युगोस्लाविया के राष्ट्रपति टीटो से विचार-विनिमय।

६ अक्टूबर—प्रेसीडेण्ट नासिर और श्री शास्त्री ने संयुक्त विज्ञप्ति मे गुटो से अलग रहने और शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व की नीति पर अपना पुनः विश्वास प्रकट किया।

८ अक्टूबर—तटस्थ राष्ट्रों के सम्मेलन में श्री शास्त्री का भाषण। शान्ति बनाये रखने के लिए ५ सूत्री कार्यक्रम प्रतिपादित।

११ अक्टूबर—तटस्थ राष्ट्रो के सम्मेलन को समाप्ति पर जारी की गई विज्ञप्ति मे गुटों मे शामिल न होने की नीति पर जोर और उपनिवेशवाद समाप्त करने के लिए पूरी सहायता देने का संकल्प।

१२ अक्टूबर—काहिरा से लौटते हुए कराची मे श्री शास्त्री की प्रेसीडेण्ट अयूब से भेट। दोनों नेताओं ने दोनों देशों के सम्बन्धों मे सुधार की इच्छा जाहिर की।

१४ अक्टूबर—श्रीलंका और भारत के बीच हवाई सेना चालू करने का समझौता।

१९ अक्टूबर—राष्ट्रीय एकता दिवस पर राष्ट्र के नाम श्री शास्त्री का रेडियो संदेश।

२० अक्टूबर—सेनाओं के लिए अपने रेडियो भाषण मे श्री शास्त्री ने जवानों के काम की सराहना की।

२२ अक्टूबर—श्रीमती भंडारनायके के सम्मान में श्री शास्त्री द्वारा एक भोज का आयोजन। परमाणु हथियारों के विरुद्ध जनमत तैयार करने की अपील।

२६ अक्टूबर—मुख्य मन्त्रियों के सम्मेलन में श्री शास्त्री का भाषण। मुनाफाखोरों को शीघ्र सजा देने की व्यवस्था करने का सुझाव।

२७ अक्टूबर—राष्ट्रीय विकास परिषद् के २१वें सम्मेलन का उद्घाटन। आम जनता की तकलीफों को दूर करने के लिए सरकारी क्षेत्र के उपभोक्ता वस्तुओ के निर्माण का प्रस्ताव। समाजवादी समाज की स्थापना के संकल्प को दोहराया।

३० अक्टूबर—श्रीलंका में भारत वंशियो के सम्बन्ध में श्रीलका और भारत को सरकारों मे समझौता।
५ नवम्बर—प्रधान मन्त्री द्वारा १५ करोड़ रु० की तूतीकोरिन वन्दरगाह योजना का समारम्भ ।
१४ नवम्बर—राष्ट्रीय रक्षा कालेज मे प्रधान मन्त्री का भाषण। पाकिस्तान से आपसी वातचोत के जरिए समस्याओ के समझौते की इच्छा ।

विश्व शान्ति सम्मेलन मे श्री शास्त्री ने परमाणु अस्त्रों को खत्म करने की अपील ।

२३ नवम्बर—लोकसभा मे प्रधान मन्त्री ने अणुशक्ति के शान्तिमय कार्यो मे इस्तेमाल की नोति को दोहराया। श्री शास्त्री ने पुनः घोषणा की कि भारत अणुबम नही वनाएगा।
२६ नवम्बर—चीन स घबराने की आवश्यकता नही। हम उसका सामना करने मे पूरी तरह समर्थ है —शास्त्री जी की घोषणा।
२ दिसम्बर—श्री शास्त्री को पोप से वम्बई मे भेट।
३ दिसम्बर— प्रधान मन्त्रो लन्दन पहुँचे। ब्रिटिश प्रधान मन्त्री से वातचोत।
४ दिसम्बर— लन्दन मे श्री शास्त्री ने सम्वाददाताओ को वताया कि इस समय एक वड़ी समस्या यह है कि परमाणु शक्ति सम्पन्न वड़े देश किस प्रकार छोटे देशो को परमाणु हमले से वचाव का आश्वासन दे।

ब्रिटेन के पत्रो ने लिखा कि श्रो शास्त्री ने अपने स्वभाव से लन्दन का दिल जीत लिया है।

५ दिसम्बर—श्री शास्त्री ने लन्दन मे पत्रकारो से वातचीत करते हुए कहा कि भारत चीन को अब भी सयुक्त राष्ट्रसघ का सदस्य वनाने के पक्ष मे है।
७ दिसम्बर—लन्दन से स्वदेश आये।
१३ दिसम्बर—इलाहावाद के कुल भास्कर आश्रम डिग्रो कालेज मे अपने दीक्षान्त भाषण मे श्री शास्त्री ने कहा कि योजना आयोग से खेती की उपज वढ़ाने के लिए एक अलग अल्पकालीन कार्यक्रम वनाने को कहा गया है।
१८ दिसम्बर—प्रधान मन्त्री द्वारा वैज्ञानिको को राष्ट्रीय अकादमी वनाने का प्रस्ताव।
२१ दिसम्बर—शान्तिनिकेतन मे श्री शास्त्री ने पाकिस्तान से युद्ध न करने को सन्धि के प्रस्ताव को दोहराया।
२५ दिसम्बर—प्रधान मन्त्री ने लोकसभा मे वताया कि चोन से वार्ता अभी सम्भव नही है क्योकि चीन ने कोलवो प्रस्तावो को ठुकरा दिया है।
२६ दिसम्बर—वाराणसो मे अपने भाषण मे श्री शास्त्री ने कहा कि सरकार काले धन को निकालने के लिए कडा कदम उठायेगी।

सन् १९६५

५ जनवरी—हल्दिया क्षेत्र मे तेलशोधक कारखाना स्थापित करने की सरकार की घोषणा।
११ जनवरी—भूटान के राजा से श्री शास्त्री की कलकत्ता मे भेट।
१६ जनवरी—राष्ट्रभाषा प्रचार सभा मे भाषण करते हुए श्री शास्त्री ने अहिन्दी-भाषी क्षेत्रो के लोगो को आश्वासन देते हुए कहा कि हिन्दो का विकास इस प्रकार किया जायेगा, जिससे उन्हे नुकसान की सम्भावना नही रहेगी।

२२ जनवरी—प्रधान मन्त्री द्वारा ट्राबे० मे लूटोनियम संयत्र का उद्घाटन। प्रधान मन्त्री ने संयुक्त राष्ट्रसंघ और निरस्त्रीकरण समिति से परमाणु युद्ध की सम्भावना को मिटाने की अपील की।

२४ जनवरी—श्री शास्त्री द्वारा शरावती पन बिजली योजना के पहले बिजलीघर का उद्घाटन।

३० जनवरी—दिल्ली को एक सभा में भाषण करते हुए श्री शास्त्री ने कहा कि दक्षिण भारतीयों पर हिन्दी थोपी नही जाएगी।

५ फरवरी—बर्मा के प्रधान मंत्री श्री नेविन की भारत-यात्रा और शास्त्री जी से विचार-विनिमय।

८ फरवरी—दक्षिण-पूर्व एशिया की ताजा घटनाओं को देखते हुए प्रेसीडेंट जानसन और श्री कोसीगिन से आपस मे मिलने का आग्रह। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मडल मे भाषण।

श्री शास्त्री और फ्रांसीसी प्रधान मंत्री ने दक्षिण विएतनाम के सबध मे बातचीत की।

११ फरवरी—अपने रेडियो भाषण मे श्री शास्त्री ने कहा कि सरकार भाषा के संबध मे श्री नेहरू द्वारा दिए गए आश्वासनो को अवहेलना नहीं करेगी।

जनरल नेविन तथा श्री शास्त्री का संयुक्त वक्तव्य। दोनों देशों का गुटों से अलग रहने की नीति पर अडिग रहने का संकल्प।

१७ फरवरी—अफगान प्रधान मंत्री का दिल्ली आगमन। श्री शास्त्री से बातचीत।

२२ फरवरी—उड़ीसा, बिहार और मैसूर के मुख्य मंत्रियों पर लगाए गए आरोपों के संबंध में श्री शास्त्री का लोकसभा में ब्यान। मैसूर और बिहार के मुख्य मंत्रियों के विरुद्ध जांच से इंकार।

२३ फरवरी—मुख्य मंत्रियों के दो-दिवसीय भाषा सम्बन्धी सम्मेलन का श्री शास्त्री द्वारा समारम्भ।

२४ फरवरी—कच्छ के २० मील क्षेत्र पर पाकिस्तान का धावा।

२५ फरवरी—मुख्य मंत्रियों के निर्णयों के संबंध में श्री शास्त्री द्वारा संसद् मे वक्तव्य। सम्मेलन में यह स्वीकार किया गया कि हिन्दी देश की राष्ट्रभाषा है और अंग्रेजी सहयोगी भाषा के रूप में चलेगी। राष्ट्रीय एकता परिषद् को फिर से जागृत करने का निश्चय।

२७ फरवरी—पहला बचत का बजट पेश। व्यक्तिगत करो मे भारी कमी।

३ मार्च—कच्छ सीमा पर पाक सेना का जमाव। कजरकोट क्षत्र में १५००० एकड़ भूमि मे घुसपैठ।

६ मार्च—गुजरात में धुरव पन बिजलीघर का प्रधान मंत्री द्वारा उद्घाटन। प्रधान मंत्री की रूस और अमेरिका यात्रा की घोषणा।

७ मार्च—प्रधान मंत्री द्वारा कंडला मुक्त व्यापार क्षेत्र का उद्घाटन। प्रधान मंत्री ने कहा कि भारत कच्छ-पाकिस्तान सीमा पर अपनी सीमाओं की रक्षा करेगा।

२१ मार्च—मै अभी भी पाकिस्तान सरकार से अपील करता हूँ कि वह सैनिक बल का उपयोग न करे। हैदराबाद की सार्वजनिक सभा मे वक्तव्य।

२२ मार्च—प्रधान मन्त्री की विरोधी दल के सदस्यों से भाषा के सवाल पर बातचीत।

१ अप्रैल—श्री शास्त्री ने लोकसभा में बताया कि भारत सरकार शेख अब्दुल्ला की चाऊ एन-लाई से मुलाकात को एक गम्भीर मामला समझती है।

२ अप्रैल—शेख अब्दुल्ला का पारपत्र जद्दाह को छोड़कर सभी देशों के लिए रद्द करने की घोषणा।

१२ अप्रैल—प्रधान मंत्री ने लोकसभा मे बताया कि भारत कञ्जरकोट से पाकिस्तानी अतिक्रमण को अवश्य खत्म करेगा।

१५ अप्रैल—प्रधान मंत्री ने दक्षिण वियतनाम में बमबारी बन्द करने की अपील की।

१६ अप्रैल—प्रेसीडेंट जानसन ने श्री शास्त्री को अपनी अमेरिका यात्रा की तारीख बदलने के लिए लिखा। इलाहाबाद में नेहरू की प्रतिमा का उद्घाटन।

१८ अप्रैल—श्री शास्त्री द्वारा आर्थिक विषमता मिटाने के लिए क्रान्तिकारी उपाय करने का सुझाव।

२१ अप्रैल—भारत सहायता क्लब द्वारा भारत को तीसरी योजना के अंतिम वर्ष के लिए ४ अरब ८९ करोड़ रु० की सहायता का आश्वासन।

२३ अप्रैल—श्री शास्त्री का नेपाल पहुँचने पर काठमांडू में भारी स्वागत।

२४ अप्रैल—श्री शास्त्री द्वारा पश्चिमी कोसी नहर की खुदाई का समारम्भ।

२५ अप्रैल—भारत-नेपाल संयुक्त विज्ञप्ति में भारत-नेपाल के बढ़ते हुए सहयोग को महत्व।

२५ अप्रैल—नेपाल से लौट कर पालम हवाई अड्डे पर श्री शास्त्री ने घोषणा की कि भारत पाकिस्तान के प्रत्येक आक्रमण के विरुद्ध अपनी सीमा की रक्षा करेगा।

२८ अप्रैल—लोकसभा में पाकिस्तान के कच्छ पर आक्रमण पर चर्चा। श्री शास्त्री ने कहा कि यदि पाकिस्तान आक्रामक कार्रवाइयों से बाज न आया तो भारतीय सेनाएं अपने देश की रक्षा के लिये अपनी रण-नीति के सुविधानुसार फैसला करेंगी।

३० अप्रैल—प्रधान मंत्री ने लोकसभा में बताया कि ब्रिटेन ने कच्छ सीमा पर युद्धबन्दी के लिए दिलचस्पी दिखाई है। श्री शास्त्री ने कहा कि भारत ऐसे प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करेगा, जो भारतीय हितों के प्रतिकूल होगा।

३ मई—राज्यसभा में श्री शास्त्री ने घोषणा की कि भारत पाकिस्तान को जबरदस्ती कच्छ पर कब्जा नहीं करने देगा।

५ मई—श्री शास्त्री ने लोकसभा को बताया कि कच्छ के रन में भारतीय सेनाएँ बातचीत के दौरान, स्थिति को और अधिक बिगड़ने नहीं देंगी। लेकिन अगर पाकिस्तान ने आक्रमण किया तो उनका मुंहतोड़ जवाब दिया जाएगा।

५ मई—श्री शास्त्री ने शिलांग स्थित पाकिस्तान उप-उच्चायोग के खिलाफ कार्रवाई करने का आश्वासन दिया।

६ मई—श्री शास्त्री ने लोकसभा में कहा कि कच्छ में यथास्थिति कायम होने पर ही हम आगे बातचीत करेंगे।

७ मई—श्री शास्त्री ने कहा कि मध्यस्थता का कोई भी प्रस्ताव तभी स्वीकार किया जायगा जब कच्छ-सिंध सीमा पर पूर्वस्थिति कायम होगी।

७ मई—राष्ट्रीय रक्षा समिति में श्री शास्त्री ने कहा कि हम हर कीमत पर अपनी सीमाओं की रक्षा करेंगे। पाकिस्तान को यह समझना चाहिए कि आक्रमण से हमेशा नुकसान रहता है।

७ मई—प्रधान मंत्री ने मुख्य मन्त्रियों से देश की आंतरिक स्थिति पर विचार-विमर्श किया।

६ मई—पाकिस्तान को आक्रमण का लाभ उठाने नहीं दिया जाएगा। श्री शास्त्री का स्वतन्त्रता सेनानियों के सम्मेलन में भाषण।

१२ मई—प्रधान मन्त्री अपनी ८ दिवसीय राजकीय यात्रा पर मास्को पहुँचे। भारी स्वागत। श्री कोसीगिन और श्री ब्रेजनेव से भेंट।

१२ मई—भोज में शास्त्री जी ने गुटों से अलग रहने की नीति की व्याख्या की ।

१५ मई—श्री शास्त्री का भारत-सोवियत मैत्री सभा में भाषण। उन्होंने कहा, भारत-रूस मित्रता स्थायी है और विश्वशांति के लिए अग्रसर है ।

१५ मई—श्री शास्त्री और श्री कोसीगिन की बातचीत समाप्त ।

१८ मई—ताशकंद मे श्री शास्त्री ने पत्रकारों से बातचीत करते हुए बताया कि भारत-रूस मैत्री से न केवल दोनों को ही लाभ पहुँचेगा बल्कि पूरे मानव समाज को लाभ पहुँचेगा ।

२० मई—श्री शास्त्री स्वदेश लौटे ।

८ जून—काहिरा लन्दन होते हुए कनाडा के लिए प्रस्थान ।

१० जून—कनाडा की यात्रा पर श्री शास्त्री औटावा पहुँचे ।

१४ जून—शास्त्री-प्रियसन संयुक्त विज्ञप्ति । कनाडा द्वारा भारत-चीन सीमा विवाद में भारत का साथ देने का आश्वासन ।

१७ जून—श्री शास्त्री राष्ट्रमण्डल सम्मेलन में भाग लेने लन्दन पहुँचे ।

२७ जून—श्री शास्त्री की श्री नासिर से काहिरा में बातचीत और स्वदेश लौटे । ३० जून कच्छ में युद्धविराम सन्धि पर हस्ताक्षर ।

८ जुलाई—श्री शास्त्री ने पाकिस्तान से युद्ध-वर्जन का प्रस्ताव दोहराया ।

३० जुलाई—ब्रियानी में श्री शास्त्री, श्री टीटो से मिले ।

१ अगस्त—श्री शास्त्री-टीटो संयुक्त विज्ञप्ति । वियतनाम पर सम्मेलन बुलाने का सुझाव ।

३ अगस्त—श्री शास्त्री तथा श्री मिल्टन ओबाते की बातचीत ।

१४ अगस्त—राष्ट्र के नाम संदेश मे श्री शास्त्री ने कहा कि ताकत का जवाब ताकत से दिया जायेगा ।

१५ अगस्त—लालकिले पर महत्वपूर्ण भाषण ।

२ सितम्बर—शास्त्री जी का राष्ट्र के नाम सन्देश ।

१२ सितम्बर—श्री शास्त्री तथा ऊ थांट की बातचीत ।

१८ सितम्बर—श्री शास्त्री ने चीन के अल्टीमेटम को अस्वीकृत किया ।

२२ सितम्बर—भारत-पाक युद्धविराम ।

२४ सितम्बर—श्री शास्त्री ने रूस के इस आमन्त्रण को स्वीकार किया कि उनकी और श्री अयूब की शिखर वार्ता हो ।

२ अक्टूबर—श्री शास्त्री का जन्म-दिन ।

१' अक्टूबर—रेडियो से संदेश में श्री शास्त्री ने किसानों से उपज बढाने की अपील ।

१३ अक्टूबर—श्री शास्त्री अग्रिम मोर्चों तथा हवाई अड्डों पर गये ।

१५ अक्टूबर—श्री शास्त्री स्यालकोट क्षेत्र तथा कुछ हवाई अड्डों पर गए ।

१९ अक्टूबर—औरंगाबाद में श्री शास्त्री ने कहा कि भारत की नीति परमाणु बम बनाने की नहीं है ।

२४ अक्टूबर—श्री शास्त्री ने जोधपुर में जेल-अस्पताल देखा ।

२३ नवम्बर—श्री शास्त्री ने राज्य सभा मे बताया कि ताशकन्द में श्री अयूब से बातचीत करने को तैयार हैं ।

२७ नवम्बर—श्री शास्त्री तथा नेपाल के महाराजा के बीच बातचीत का आरम्भ।

१० दिसम्बर—श्री शास्त्री द्वारा लोकसभा मे आगामी विदेश यात्रा के कार्यक्रम की घोषणा। २० दिसंबर से २३ दिसम्बर तक बर्मा मे रहेंगे, ४ जनवरी, १९६६ को ताशकन्द वार्ता मे भाग लेंगे और १ फरवरी १९६६ को अमरीका मे श्री जानसन से बात करेंगे।

२० दिसम्बर—रंगून में श्री शास्त्री तथा श्री मती शास्त्री का भारी स्वागत।

२१ दिसम्बर—रंगून में शास्त्री-नेविन बातचीत।

सन् १९६६

३ जनवरी—श्री अयूब खां से बातचीत के लिए ताशकन्द रवाना।

१० जनवरी—ताशकन्द समझौते पर हस्ताक्षर।

११ जनवरी—निधन। दोपहर ढ़ाई बजे शास्त्री जी का शव रूसी विमान द्वारा पालम हवाई अड्डे पर लाया गया।

१२ जनवरी—विजय घाट पर १२ बजकर २२ मिनट पर दाह-संस्कार।

संग्रह कर्ता—सन्तोष सहल

○

पालम से विजय-घाट तक

दस जनवरी की संध्या। आकाशवाणी के समाचार बुलेटिन तथा दैनिक पत्रों के विशेष संस्करणों ने दिल्लीवासियों को ताशकन्द समझौते का समाचार दिया। प्रातःकाल जिस सम्मेलन की विफलता लगभग निश्चित-सी दिखाई दे रही थी, उसी की सफलता का शुभ समाचार पाकर राजधानी में उल्लास छा जाना स्वाभाविक था। यही कारण है कि उस रात ताशकन्द-सम्मेलन ही दिल्लीवासियों की चर्चा का विषय था और प्रत्येक व्यक्ति प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री की दूरदर्शिता, उनकी राजनीतिक सूझ-बूझ और उनकी व्यवहारकुशलता की चर्चा कर रहा था।

परन्तु कुछ ही घण्टों मे सब कुछ बदल गया। अगले दिन अर्थात ११ जनवरी को शारदाय कोहरे में लिपटी राजधानी के नागरिकों ने जब आंखें खोलीं, तब वे स्तब्ध रह गये। ताशकन्द-समझौते की स्याही सूखने से पूर्व ही उस पर भारत की ओर से हस्ताक्षर करने वाले प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री स्वर्ग सिधार चुके थे।

मरणोपरान्त 'भारतरत्न'

७ बजकर ४० मिनट पर राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन ने राष्ट्र के नाम सन्देश प्रसारित करते हुये स्व० शास्त्री जी को 'भारतरत्न' की उपाधि से अलंकृत करने की घोषणा की। मरणोपरान्त भारतरत्न दिये जाने का यह प्रथम उदाहरण था।

ज्यों ही दिल्लीवासियों को ज्ञात हुआ कि उनके प्रिय नेता का शव एक विशेष विमान द्वारा दोपहर में दिल्ली के पालम हवाई अड्डे पर पहुँच रहा है, हजारों की संख्या मे लोग उसी ओर चल पड़े उसी पालम की ओर जहां एक सप्ताह पूर्व शास्त्री जी को ताशकन्द-सम्मेलन की सफलता का आशीर्वाद एवं शुभ-कामनाएँ देकर विदा किया गया था।

सप्ताह पूर्व दी गई विदाई की तुलना में कई हजार गुना अधिक लोग वहाँ उपस्थित थे। पर जिसकी वे अगवानी करने आये थे, वह केवल शास्त्री जी का पार्थिव शरीर था। ताशकन्द-समझौते पर हस्ताक्षर करके शास्त्री जी ने भारत और पाकिस्तान के इतिहास में तो एक नये अध्याय का सूत्रपात किया, परन्तु वह स्वयं भी इतिहास का एक अंग बन गये।

रूसी विमान में शास्त्री जी का शव

जिस समय रूसी विमान इल्युशन १८ पालम पर उतरा, वातावरण में एक असहनीय वेदना थी। हजारों की उपस्थिति के बावजूद चारों ओर मौत को सी नीरवता थी। और ठीक जिस समय जब विमान हवाई पटरी पर उतरा, कुछ बादलों ने आ कर सूर्य को भी आच्छादित कर दिया और ऐसा लगा मानो सूर्य देवता ने भी शोक-विह्वल होकर अपना मुख आंचल मे छिपा लिया हो।

विमान से विदेश-मन्त्री श्री स्वर्णसिह उतरे और फिर बाहर आये प्रतिरक्षा-मन्त्री श्री चौहान। उनके पीछे भारतीय प्रतिनिधिमण्डल के वे सब सदस्य उतरे जो शास्त्री जो के साथ ताशकन्द गये थे। इन सबके उतरने के उपरान्त शास्त्री जी के ज्येष्ठ पुत्र हरिबाबू विमान के भीतर अपने पिता के दर्शन

करने गये। उस समय वहाँ राष्ट्रपति, उप-राष्ट्रपति, कार्यवाहक प्रधान मन्त्री, दिल्ली के महापौर, केन्द्रीय मन्त्री, राज्यों के मुख्यमन्त्री, संसद् सदस्य, नई दिल्ली स्थित विदेशी राजदूत, सेना के तीनों अध्यक्ष तथा असंख्य नर-नारी उपस्थित थे।

शास्त्री जी का शव पूरे सैनिक सम्मान के साथ उतारा गया। विमान से तोपगाड़ी तक ६ जनरलों ने उसे कन्धा दिया। जल, थल तथा वायुसेना के १०० जवानों की एक पल्टन ने दिवंगत प्रधान मन्त्री को सलामी दी। उस समय राजपूताना राइफल्स का रेजीमेन्टल बैण्ड शोक-धुन बजा रहा था।

पालम से शास्त्री जी का शव फूलों से सजी तोपगाड़ी पर जनपथ की ओर रवाना हुआ। मार्ग में दोनों ओर खड़े हजारों दिल्लीवासियों ने पुष्प-वर्षा कर और जय-जयकार कर अपने प्रिय नेता को श्रद्धांजलि अर्पित की। जिस समय शव प्रधान मन्त्री के निवासस्थान १० जनपथ पहुँचा, वहां का दृश्य बड़ा ही हृदय-विदारक था। अपने पति का शव देख श्रीमती ललिता शास्त्री फूट-फूट कर रो उठीं और अचेत हो गईं। शास्त्री जी की ९० वर्षीया वृद्धा मां को तो विश्वास ही नहीं हो रहा था कि अब उनका पुत्र जीवित नहीं है।

जनपथ पर ५ लाख दर्शनार्थी

आवश्यक धार्मिक अनुष्ठानों के बाद लगभग साढ़े आठ बजे शास्त्री जी का शव बंगले के सम्मुख पोर्टिको में बनाये गये एक मंच पर रखा गया ताकि बाहर एकत्रित जनता अपने हृदय-सम्राट् के अन्तिम दर्शन कर सके। सारी रात लोग दर्शनों को आते रहे। जनवरी का कंपा देने वाला शीत, ओस और लहू जमा देने वाली शीतल हवा भी जन-साधारण को रात भर पंक्तिबद्ध खड़े होने से नहीं रोक सकी।

लोग रात भर आते रहे। यहां तक कि जब प्रातः साढ़े सात बजे बंगले का मुख्य द्वार बन्द हुआ तब ५ लाख से अधिक लोग शास्त्री जी के शव पर पुष्पांजलि अर्पित कर चुके थे। केवल जनपथ पर जो पुष्प चढ़ाये गये, वे दस मन से अधिक थे। जो ५ लाख भाग्यवान् थे, उन्होंने तो अपने नेता के अन्तिम दर्शन कर लिये। जो भीड़ के कारण समय रहते भीतर नहीं पहुँच पाये, उन्होंने बाहर शव-यात्रा के समय दर्शन करके अपने श्रद्धा के सुमन चढ़ाये।

वेदना की मूर्ति ललिता जी

ललिता जी, उनके चारों पुत्र, पुत्रियाँ तथा परिवार के अन्य लोग रात भर शव के पास बैठे रहे। शव के निकट नंगी तलवार लिए रात भर सैनिक पहरा देते रहे। पुष्प, धूप और अगरबत्तियों से सुवासित वातावरण में पूरी रात गीता तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थों का पाठ होता रहा।

शोक-विह्वल ललिता जी बीच-बीच में अपने पति के चरण छूतीं और कभी-कभी ऐसी अचेत हो जातीं कि आवश्यक उपचार के लिए उन्हें उठा कर ले जाना पड़ता। उनके मुख की कान्ति धूमिल हो गई थी। और बिना उस लाल बिन्दी के जो उनके सौभाग्य और सुखी वैवाहिक जीवन का प्रतीक बन चमकती थी, उनके ललाट पर विचित्र सा सूनापन था।

शास्त्री जी की अन्तिम यात्रा

ठीक ९॥ बजे शास्त्री जी के शव की अन्तिम यात्रा आरम्भ हुई। जिस समय शव यात्रा आरम्भ हुई, वायुसेना के बैण्ड ने विदाई-धुन बजाई। जनपथ से यमुना-तट का सात मील लम्बा मार्ग स्त्री-पुरुष

और बच्चों की भीड़ से खचाखच भरा था। लगभग १५ लाख नर-नारी और बूढे-बच्चे अपने दिवंगत नेता की अन्तिम झलक पाने के लिए मार्ग के दोनों ओर खड़े थे। ज्यों ही शव लिए तोपगाड़ी आतो, लोग आँसू बहाते, पुष्प-वर्षा करते और रुंधे गले से शान्ति-पुत्र का जय-जयकार करते।

शव-यात्रा का नेतृत्व दिल्ली और राजस्थान क्षेत्र के क्षेत्रीय कमाण्डर मेजर जनरल रजवाड़े ने किया। उनके साथ जल-थल और वायुसेना की चार-चार पल्टनें गार्ड आफ दि बिग्रेड को गारद, तीनों सेनाओं के बैण्ड, २४ बिगुलवादक तथा तीनों सेनाध्यक्ष थे। और उनके पीछे थी मोटर कारों की लम्बी पंक्ति और पैदल चलते असंख्य नर-नारी।

यमुना के तट पर नेहरू जी के निकट

यमुना के उसी तट पर जहाँ शास्त्री जी के गुरू गाधी और उनके परम सहयोगी जवाहर की समाधियाँ बनी हुई है, वही शास्त्री जी की अन्त्येष्टि की गई। लाल किले के पिछवाड़े, शान्ति-वन के बाईं ओर और विद्युत शवदाह-गृह के दाईं ओर समतल को गई धरती पर, १२ बज कर ३२ मिनट पर ज्येष्ठ पुत्र श्री हरिकृष्ण ने अपने पिता के पार्थिव शरीर को अग्नि भेंट की। इस अवसर शास्त्री-परिवार के कुल परोहित प० राजाराम भी उपस्थित थे, जो इस कार्य के लिए विशेष रूप से प्रयाग से यहाँ आए थे।

जिस समय डेढ़ मन चन्दन, ५ मन ढाक और ६ मन अन्य लकड़ियों की बनी चिता पर डेढ़ मन शुद्ध घी, कपूर, सामग्री और गंगाजल डाल कर अग्नि प्रज्वलित की गई, उस समय बिगुलवादकों ने विदाई शोक-ध्वनि बजा कर अन्तिम सैनिक सलामी दी।

अन्त्येष्टि के समय यमुना-तट पर उपस्थित लाखों की भीड़ में राष्ट्रपति, उप-राष्ट्रपति, कार्यवाहक प्रधान मन्त्री, कांग्रेस अध्यक्ष, केन्द्रीय मन्त्री, राज्यों के राज्यपाल, मुख्यमन्त्री, संसद्-सदस्य, स्थानीय नेता, सेना के तीनों अध्यक्ष, विदेशी राजदूतों के अतिरिक्त विदेशो से आए वे गणमान्य व्यक्ति भी थे, जो राज्याध्यक्षों और सरकारों की ओर से श्रद्धा-सुमन अर्पित करने के लिए दिल्ली आए थें। इनमे सोबियत सघ के प्रधान मन्त्री श्री कोसीगिन, अमेरिका के उप-राष्ट्रपति श्री हमफ्री, महारानी एलिजाबेथ के निजी प्रतिनिधि लार्ड माउंट-बेटन, नेपाल, अफगानिस्तान के प्रधान मन्त्री, ब्रिटेन, यूगोस्लाविया तथा कम्बोडिया के उप प्रधान मन्त्री, ईरान के शाह, राष्ट्रपति नासिर, राष्ट्रपति डिगाल और राष्ट्रपति अयूब के विशेष प्रतिनिधि, कनाडा, लाओस, जापान के प्रधान मन्त्रियों के विशेष प्रतिनिधि, सिक्किम के चोग्याल, भूटान के महाराज तथा दलाई लामा के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

जिस समय हरि बाबू ने अपने पिता को चिता को अग्नि दो, उपस्थित जनसमूह की आँखों से आँसू फूट पड़े। सिसकते और रोते हुए उन्होने अपने उस दिवगत प्रधान मन्त्री को अन्तिम विदाई दी जो सच्चे अर्थों में नेहरू जी के उतराधिकारी और जनमानस के प्रतिनिधि थे।

इसी दिन सायंकाल दिल्ली के रामलीला मैदान मे एक विशाल सभा मे स्वर्गीय नेता को श्रद्धांजलि अर्पित की गई। राष्ट्रपति की अध्यक्षता मे आयोजित इस सभा मे विदेशों से आए विशिष्ट नेता भी उपस्थित थे। सभा मे व्यक्त की गई भावभीनि श्रद्धाजलियो में सब ने मुक्त कण्ठ से शास्त्री जी को प्रशंसा की और उनके बहुमुखी व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला।

●

कृष्ण बिहारी सहल

और अब

श्री लालबहादुर शास्त्री सेवा-निकेतन

२८ अक्टूबर १९६६ को "लालबहादुर शास्त्री : व्यक्तित्व और विचार" नामक ग्रन्थ के सन्दर्भ मे मैं अपने प्रकाशक श्री ताराचन्द वर्मा के साथ श्रीमती ललिता शास्त्री के निवासस्थान पर मिलने गया था। उस दिन श्रीमती शास्त्री माड़ा से, जहाँ लालबहादुर शास्त्री सेवा-निकेतन की स्थापना हुई है, लौट कर आई ही थीं।

अपना परिचय देते हुए मैंने उनके चरण स्पर्श किए और उनके पास ही बैठ गया।

ललिता जी को इतने निकट से देखने और बात करके का मेरा यह पहला ही अवसर था। सीधी-सादी पोषाक मे श्रीमती शास्त्री को देखकर लगा शास्त्री जी अभी भी जीवित है। वही सरलता और वही गम्भीरता उनके चेहरे पर भी थी, जो कभी शास्त्री जी के चेहरे पर रहा करती थी। देवी-स्वरूपा ललिता जी को देखने पर कोई भी श्रद्धा से अभिभूत हुए बिना नही रह सकता।

मैंने अपने ग्रथ की रूपरेखा के विषय मे ललिता जी से बाते की। मैने जानना चाहा कि उक्त ग्रन्थ के लिए आपके क्या सुझाव है ? ललिता जी क्षरण भर रुकी होगी। फिर कहने लगी—यह आप अच्छा कार्य कर रहे है इसके माध्यम से समाज को शास्त्री जी के विचारों और आदर्शो को समझने मे सहायता मिलेगी : मै इस विषय मे अधिक क्या कहूँ—यह तो अब काफी छप ही गया है। आपके प्रयास की सार्थकता इसी मे है कि यह ग्रन्थ सभी को सुलभ हो।" मुझे लग रहा था ललिता जी बोल तो रही हैं, पर लगता हे इनका मन अन्दर ही अन्दर कह रहा हे—शास्त्री जी कुछ दिन और रहते तो वे बहुत कुछ कर पाते। मै सोच ही रहा था कि ललिता जी बोली मैं इन दिनों शास्त्री जी की आकाक्षाओ उनकी इच्छाओ को पूरा करना चाहती हूँ। इसीलिए माँड़ा मे शास्त्री सेवा-निकेतन की स्थापना की है। आप नही जानते , उनकी बडी इच्छा थी कि वे गावो का सुधार कर—वहाँ के जन-जन को आराम मिले, और इन्ही बातो के बीच शास्त्री जी की अन्य बहुत सी बाते हम लोगो के बीच होने लगीं। पृथ्वी-पुत्र शास्त्री जी जो झोपड़ी से १० जनपथ तक आ पाये यह उनके संघर्षशील जीवन की कहानी है। उनके प्रारम्भिक और स्वतन्त्रता आन्दोलन के जीवन की कुछ ऐसी बाते चल पडी थी—जिनके कारण मेरे मित्र श्री ताराचन्द वर्मा के नेत्रो से आंसू बह निकले। पास ही बैठे श्री वर्मा की उस स्थिति को देखकर मै अन्दर ही अन्दर रो उठा—अपनी दृष्टि को बदलता हूँ तो देखता हूँ ललिता जी की आँखे गीली हैं। अपने अवरुद्ध कण्ठ से प्रसग को बदलना चाहा पर, वहा का वातावरण ही कुछ ऐसा हो गया था कि मै चाहते हुए भी ऐसा नही कर पाया और अन्त मे विवश होकर मैंने नम्रतापूर्वक कहा था, कल आऊँगा—तभी शास्त्री सेवा निकेतन की पूरी जानकारी प्राप्त करूँगा। और चरण स्पर्श के बाद हम चुपचाप वहाँ से चले आये—पता ही नही लगा कार कब होटल पहुँची—रास्ता कब कैसे पार हो गया। भारी मन को लिए हुए हम (मैं और श्री वर्मा) एक दूसरे को देखते रहे— मानो कहना चाहते थे—भगवान बड़ा निष्ठुर है।

२६ अक्टूबर को सुबह लगभग आठ बजे मैं ललिता जी के घर पहुँचा था। पता लगा अभी थोड़ा समय श्रीमती शास्त्री को पूजा करने में और लगेगा। इसी बीच स्व० शास्त्री जी के सुपुत्र श्रीहरिकृष्ण बाहर आये। अभिवादन हुआ, एक दूसरे के परिचय के बाद मैने आने का प्रयोजन उनके सामने रखा। बाते चलती रहीं, इसी बीच ललिता जी के पी० ए० ने बताया कि हम अन्दर ललिताजी से मिल सकते है और हम विना कुछ कहे अन्दर चले गये। देवीस्वरूपा भारतीय सभ्यता और संस्कृति मे ढली हुई ललिता जी से अभिवादन कर, हम कल की बात से आगे बढ़े।

श्रीमती शास्त्री ने कहा २५ अप्रैल को मै मांडा गई थी और वहाँ मैंने कहा था 'में शास्त्रीजी के सपनो को साकार रूप देना चाहती हूँ। वे सोचा करते थे कि वास्तविक जीवन और कार्य देहातों में है। अगर देहातों में रहने वालों का जीवन-स्तर सुधारा जा सके तो भारतवर्ष का नक्शा बदल सकता है—क्योंकि हिन्दुस्तान की आत्मा गाँवो में है। हाँ, मेरा कार्य किसी भी राजनीतिक पार्टी से सम्बन्ध नहीं रखता है। मै बिलकुल स्वतन्त्र हूँ और सबके सहयोग पर पूर्णत: निर्भर करती हूँ। मैं चाहती हूँ कि गाँव मे रहने वाली स्त्रियाँ कुछ सीख और रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाएँ। कोई भी देश या समाज तभी उन्नति कर सकता है जब स्त्रियां भी पुरुषो के साथ सहयोग करे। मैं गांवों में रहने वाले बच्चों के भविष्य को भी सुधार कर सुरक्षित करना चाहती हूँ। देश का भविष्य इन्हीं बच्चो के कन्धों पर है।

ललिता जी के उक्त कथन को सुनकर मै विश्व इतिहास के पन्नों में बिखर गया। शायद हो कोई ऐसा जननायक अथवा कोई नेता हुआ हो—जिसके अधूरे कार्यो को पूर्ण करने की जिम्मेदारी उनकी पत्नियो ने ली हो। राष्ट्रनायक अथवा विशिष्ट नेता के चले जाने के बाद उसके अनुयायियों ने भले ही कुछ किया हो लेकिन उनकी पत्नियों ने कभी कुछ किया हो ऐसी मेरो जानकारो में एक भी उदाहरण नहीं है। ऐसी हालत मे ललिता जो द्वारा उठाया हुआ कष्ठसाध्य यह बेड़ा उनके लिए कितना मंहगा पड़ेगा इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है। ललिता जी का यह सेवा-कार्य निश्चित हो भारत के लिए नूतन समाज का निर्माण करेगा—शास्त्री जी के अधूरे कार्य को आगे बढ़ायेगा।

मांडा को ही इसके लिए उपयुक्त स्थान क्यों समझा गया—के प्रश्न में ललिता जी ने बताया मांड़ा शास्त्रो जो का निर्वाचन-क्षेत्र रहा है और फिर यह स्थान हर दृष्टि से पिछड़ा हुआ भो तो बहुत है।

सेवा-निकेतन के उद्देश्यों के बारे में जब जानना चाहा तो उन्होंने एक छपो हुई पुस्तिका मेरे सामने रखो जिसमें 'निकेतन' की स्थापना के महत्वपूर्ण उद्देश्यों का सक्षिप्त विवरण छपा हुआ था—जो इस प्रकार से है—

उद्देश्य—(क) राष्ट्रपिता गांधो और राष्ट्रनायक नेहरू के जिन आदर्शो को राष्ट्रपुरुष श्री लालबहादुर शास्त्रो अपने जीवन में साकार करना चाहते थे, उदाहरणतया सादा जीवन, उच्च विचार, समाज सेवा, परोपकार आदि, उन्हें पूरा करना।

(ख) राष्ट्र के उन्नयन, उसकी सुरक्षा और विकास के प्रतीक स्वर्गीय शास्त्री जो के "जय जवान जय किसान" नारे को सार्थक करना।

(ग) (१) ऐसे आदर्श ग्रामों की स्थापना करना जिसमें ग्रामीण जन आत्म-निर्भर हो सके। ये ग्राम स्वर्गीय शास्त्री जो के उन विचारो को साकार करेंगे जिनके द्वारा किसानों और गरीब ग्रामीणों का राष्ट्रीय परम्परा के अनुसार सम्वर्धन व उवयन हो।

२) ऐसे आदर्श ग्रामो में स्वर्गीय शास्त्री जी की स्मृति को चिरस्थायी रखने के लिए उनके नाम पर रचनात्मक केन्द्र खोले जाये।

३) इन ग्रामो के सब काम परस्पर सहयोग एवं सद्भावना के आधार पर होगे। इन उद्देश्यो की परिपूर्ति के लिए सस्था की ओर से सभी उचित प्रयास किये जायेगे उदाहरणार्थ—पाठशालाये, तकनीकी एव ग्रामोद्योग सम्बन्धी शिक्षणालय, चिकित्सालय, वस्त्र एव जीवनोपयोगी वस्तुओ के भण्डार तथा कृषि एवं ग्रामोद्योग का समुचित सगठन किया जायेगा।

(घ) ऐसे कार्यकर्त्ताओ को तैयार करना जो आजीवन ग्रामो के विकास, सुरक्षा तथा शान्ति के लिए कार्य करे और जन साधारण को प्रेरित करे।

(ङ) ग्रामवासियो के आर्थिक, शैक्षणिक, सामाजिक, सास्कृतिक और नैतिक स्तर को ऊँचा उठाना।

(च) महिलाओ के उत्थान और विकास के लिए तरह-तरह के उपयोगी गृह-उद्योगों के प्रशिक्षण सगठन आदि का प्रबन्ध करना तथा महिलाओं ओर बच्चों के कल्याण और उन्नयन सम्बन्धी कार्यक्रमों का संचालन करना।

(छ) विशेष रूप से पिछडे वर्ग-अनुसूचित एवं आदिम जातियों के उत्थान एवं विकास के लिए काय करना तथा उनके आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक शैक्षणिक और नैतिक स्तर को ऊँचा उठाने के लिए सभी आवश्यक कदम उठाना।

आज जब मैं इन उद्देश्यो को पढता हूँ तो लगता है अगर यह सब उद्देश्य धीरे धीरे फलीभूत हो जायँ तो वह दिन दूर नही जब भारत अपने वर्तमान भारत से कही अधिक बेहतर और सुसंस्कृत भारत बन जायेगा।

भारतरत्न शास्त्री जी के हृदय और विचारों का अनुसरण हम सभी भारतीयों को करना चाहिए ताकि अपने प्रिय नेता के प्रति सच्ची श्रद्धाजलि दे सके—मेरी दृष्टि मे इससे बढकर कोई और दूसरी श्रद्धांजलि नही।

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रकाशक श्री ताराचन्द वर्मा ने जब शास्त्री सेवा-निकेतन के उद्देश्यो को पढ़ा तो उन्हे लगा कि इस पुनीत कार्य मे मै भी कुछ योगदान दूँ। और इसी पुनीत भावना से प्रेरित होकर उन्होने मा ललिता जी को कहा कि "लालबहादुर शास्त्री व्यक्तित्व और विचार" ग्रन्थ से जो आय होगी—उसका कुछ प्रतिशत शास्त्री सेवा-निकेतन मे दूँगा। इस मागलिक घोषणा के बाद हम उनसे विदा लेकर चले आये। आज भी ललिता जी का स्मरण करता हूँ तो लगता है—वह समय कितना अच्छा था जब मैं उनके पास बैठा था, काश ऐसा अवसर बराबर मिलता रहे।

○

राष्ट्र नेताओं के बीच

मत्रणा
और
राष्ट्रपिता
को
श्रद्धाजली

प्रधान मत्री के साथ

राजघाट पर श्रद्धांजली
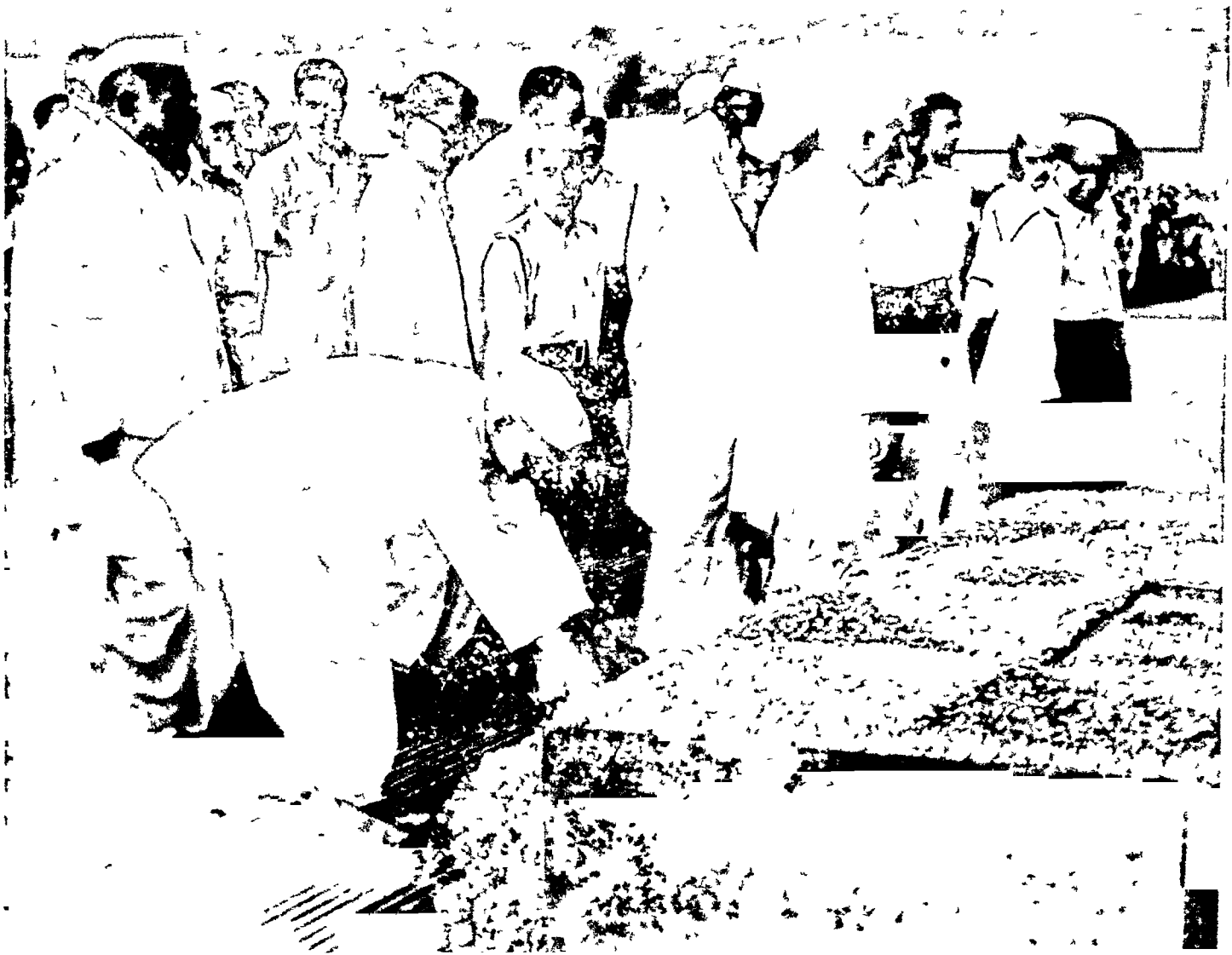
शोकाकुल राष्ट्र नेता

शान्ति
वन
श्रद्धाजली

मनन
करते
हुए

देश की बागडोर संभाली

प्रधान मन्त्री
पद की शपथ
लेने जाते हुए।

अध्ययन
मे

शान्ति के पुजारी, युद्ध के विजेता

नया नारा

जय जवान

जय किसान
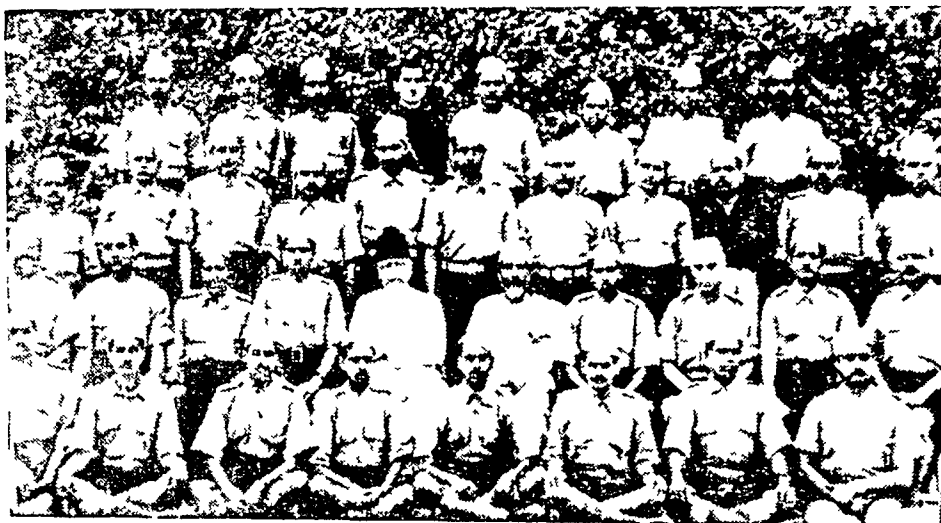
देश का सिपाही

विविध रूपो मे

उप-राष्ट्रपति डॉ० ज़ाकिरहुसैन के साथ

श्रीमती गांधी से विचार विमर्श

संतुलित भोजन
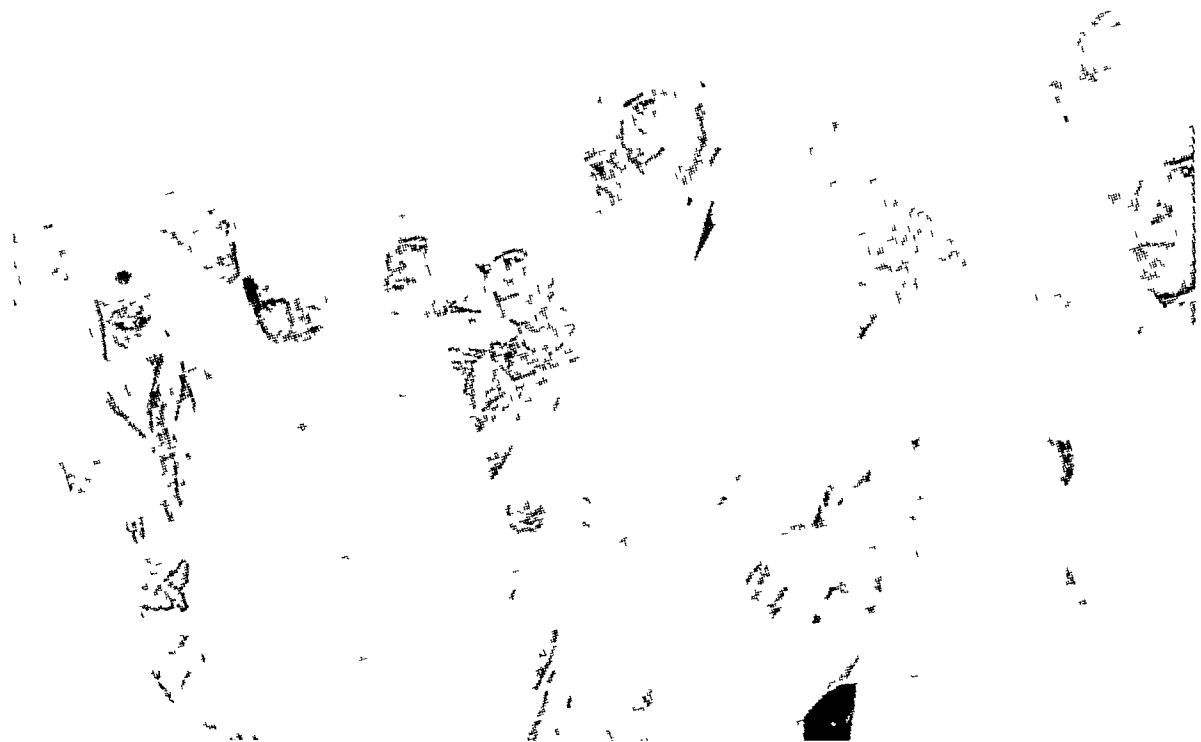
शहीद फिल्म के निर्देशक कलाकारो के साथ

भरे पूरे परिवार में

बच्चों

के

बीच

श्रीमती ललिता शास्त्री

पूज्य मा के साथ

वात्सल्य
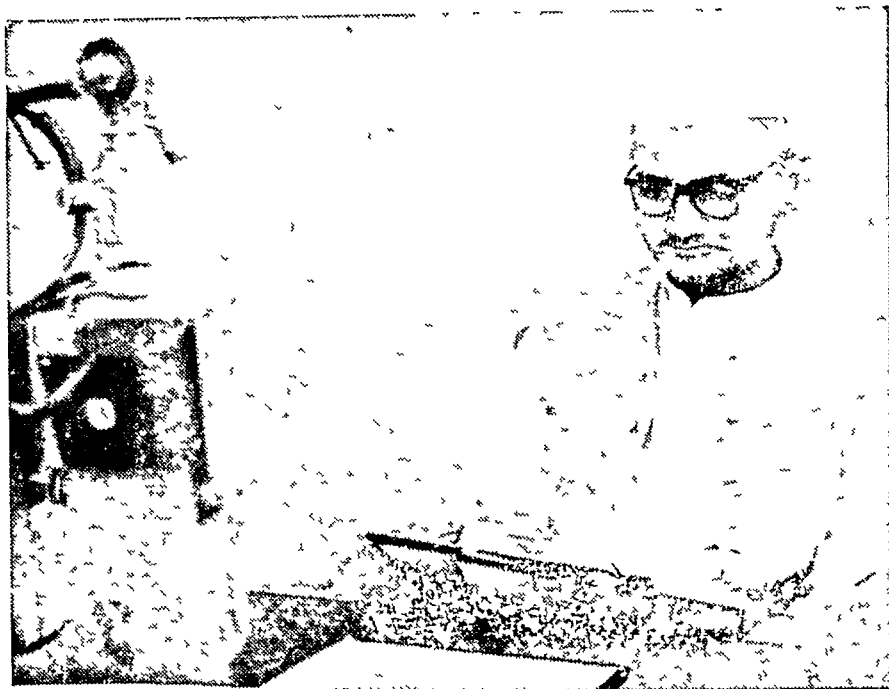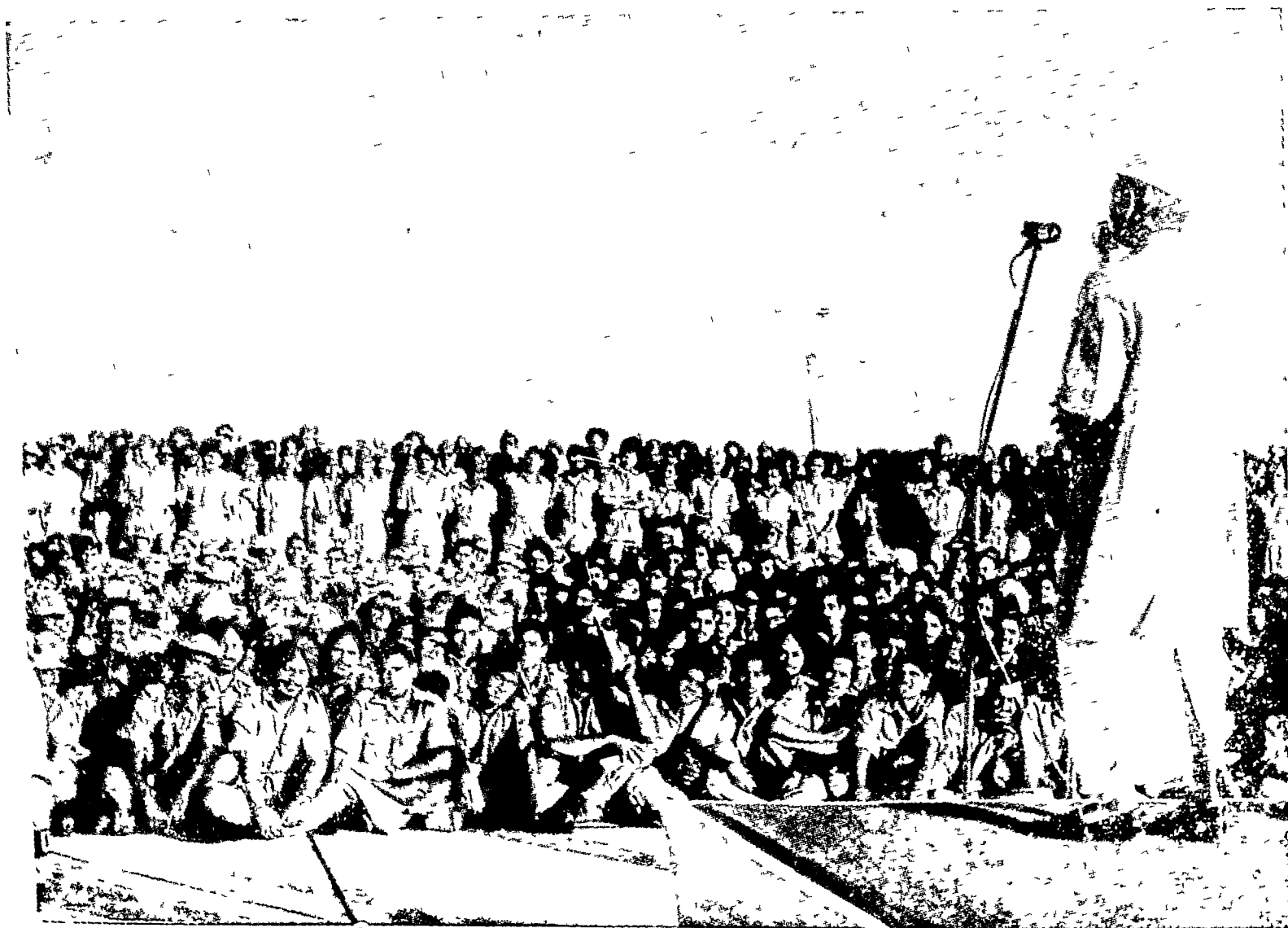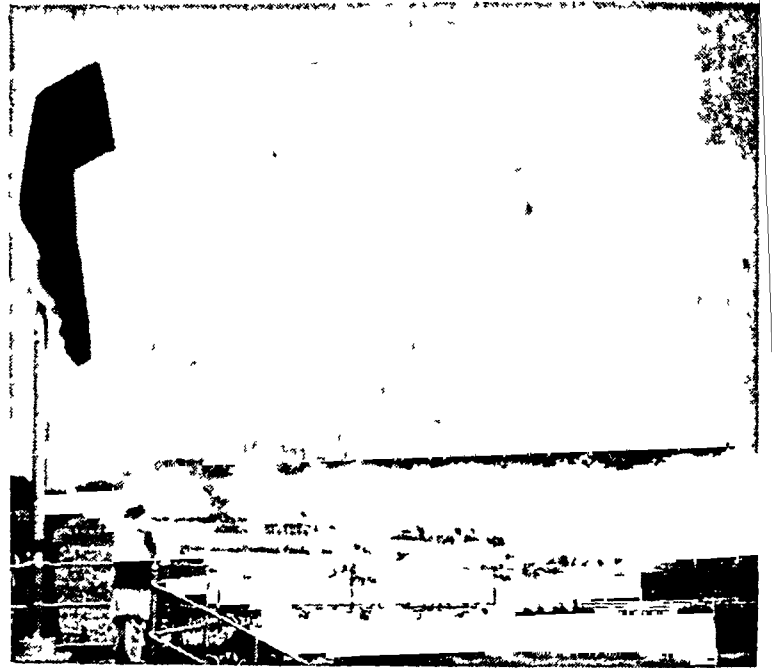
जनता के बीच

जनता के बीच
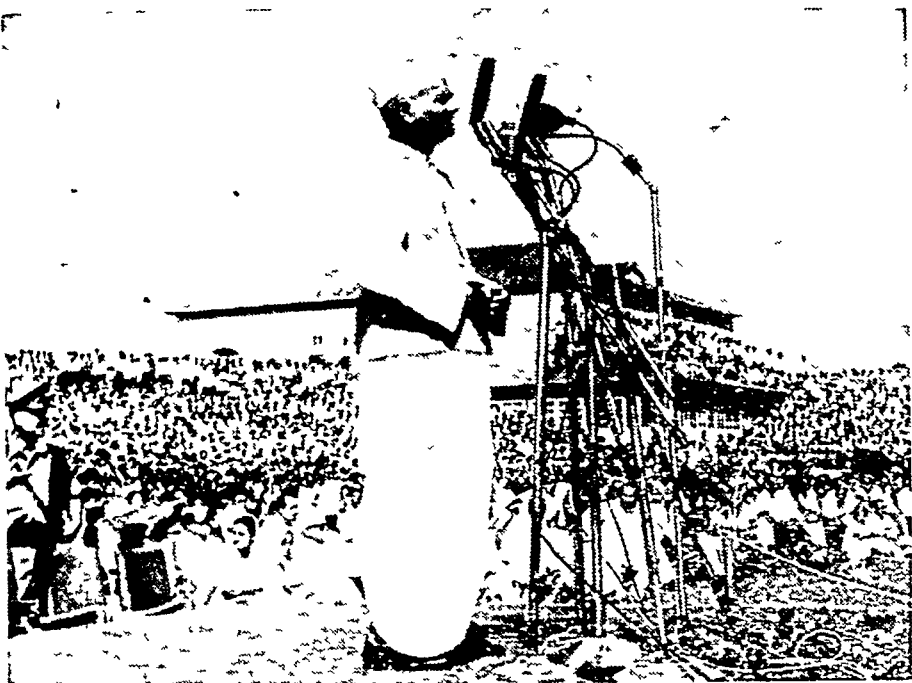
भाषण देते हुए

पत्रका
के
साथ
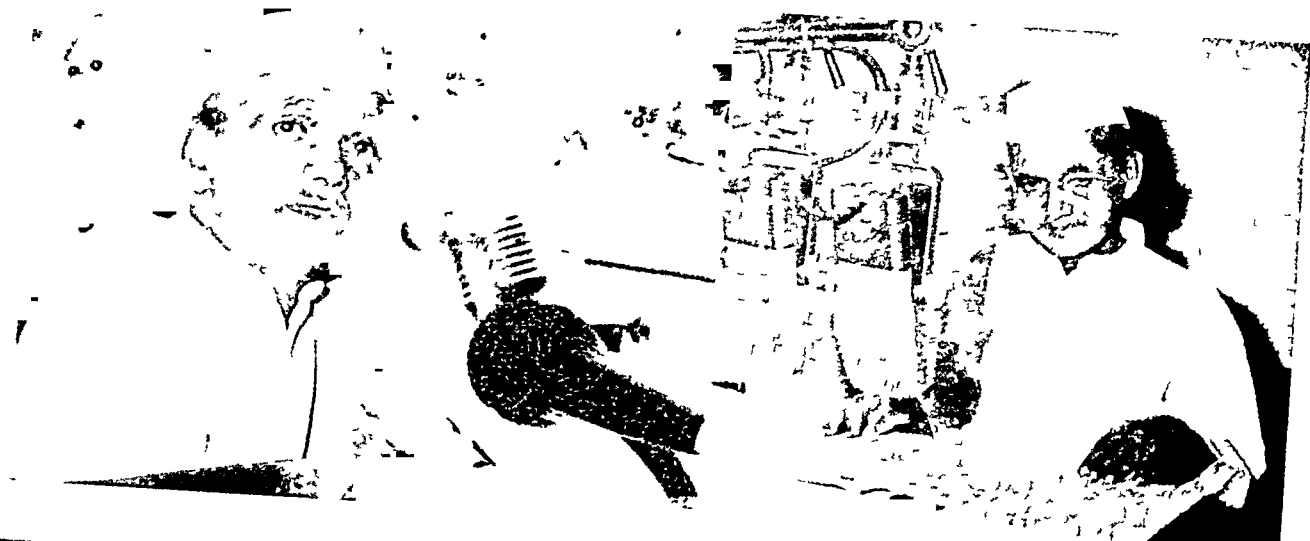
नेपाल के नरेश के साथ

मार्शल टीटो के साथ

दलाई लामा के साथ
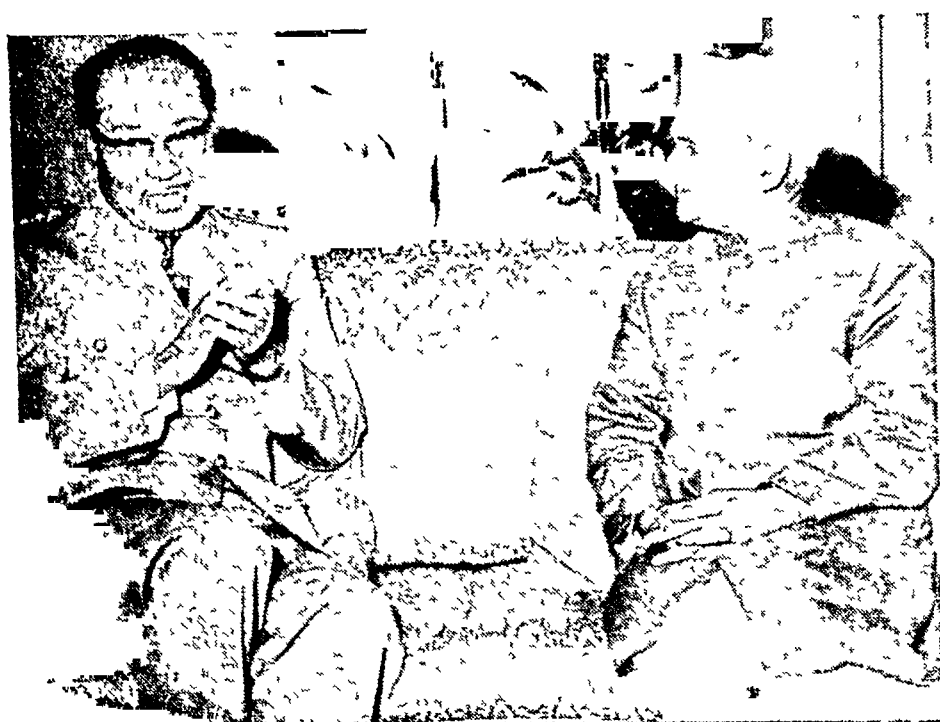
श्री कोसीजिन से हाथ मिलाते हुए

कर्नल नासर के साथ

पोप का स्वागत

विदेशी नेताओं के साथ

श्रीमती

भडार नायक

के

साथ

क्रान

के

प्रधान मंत्री

ी पोम्पिदू
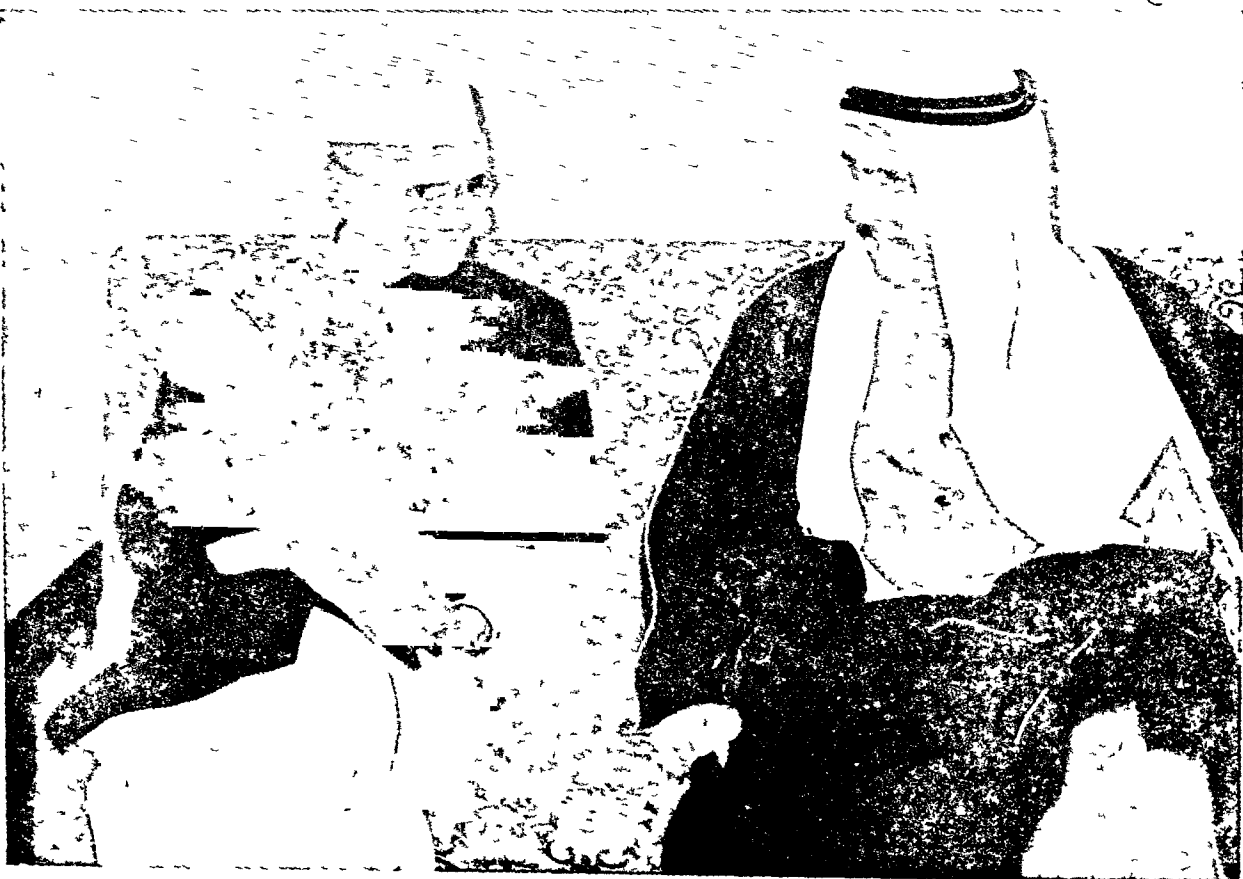
के
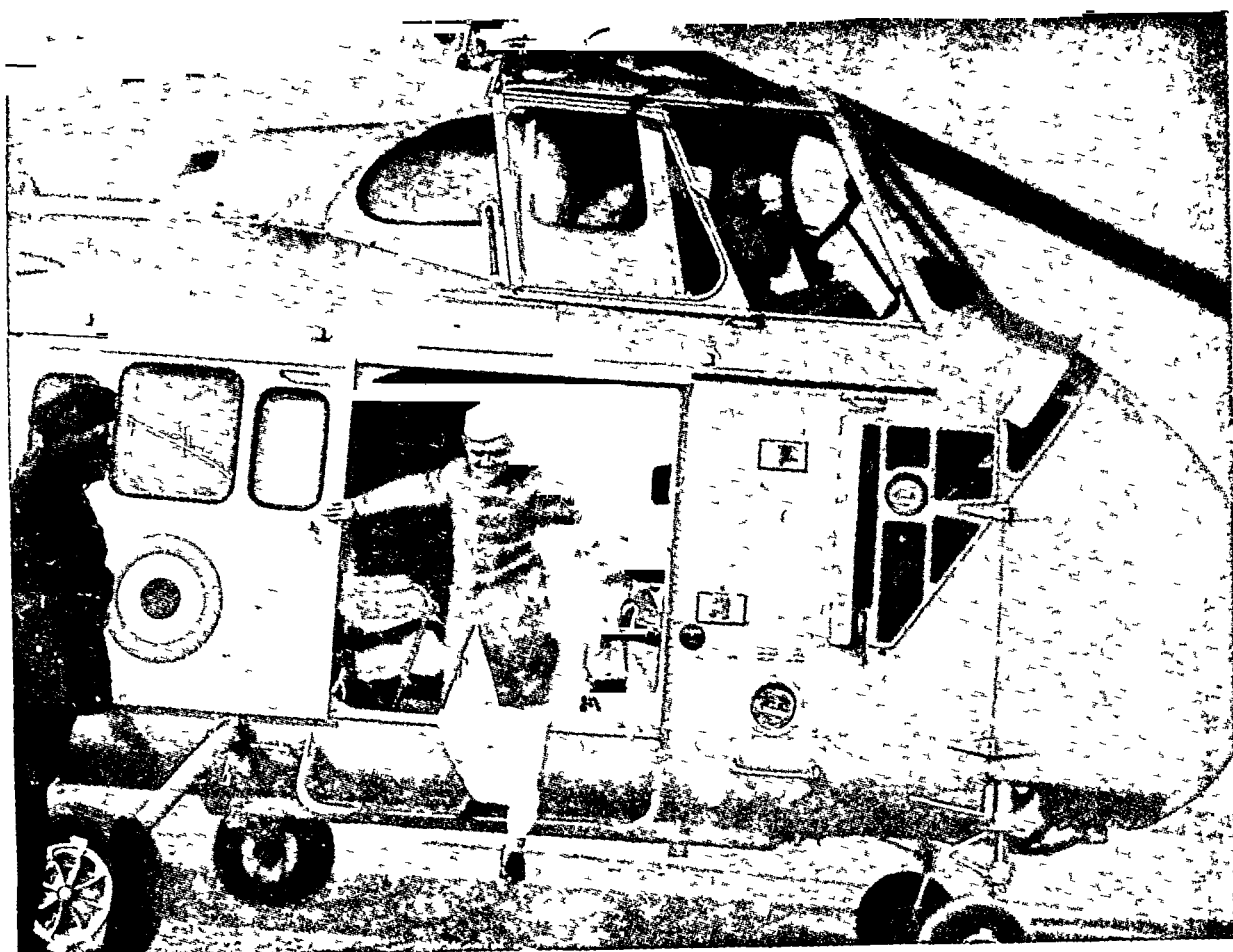
तूफानी दौरा

सहयोगियो के साथ

राष्ट्रपति व उप-राष्ट्रपति के साथ

उपाधि
लेते
हुए

ग्लाइडर की सैर

राजस्थान में

शास्त्री जी का स्वागत

राजस्थान में

शास्त्री जी

राजभवन में

एक राजस्थानी महिला तिलक लगाते हुए

राजस्थान के विभिन्न आदिवासियो से वार्ता करते हुए

जोधपुर अस्पताल का निरीक्षण करते हुए

राजस्थान के योजना मत्री श्री माथुर शास्त्री जी को सुरक्षा कोष के लिए स्वर्ण देते हुए
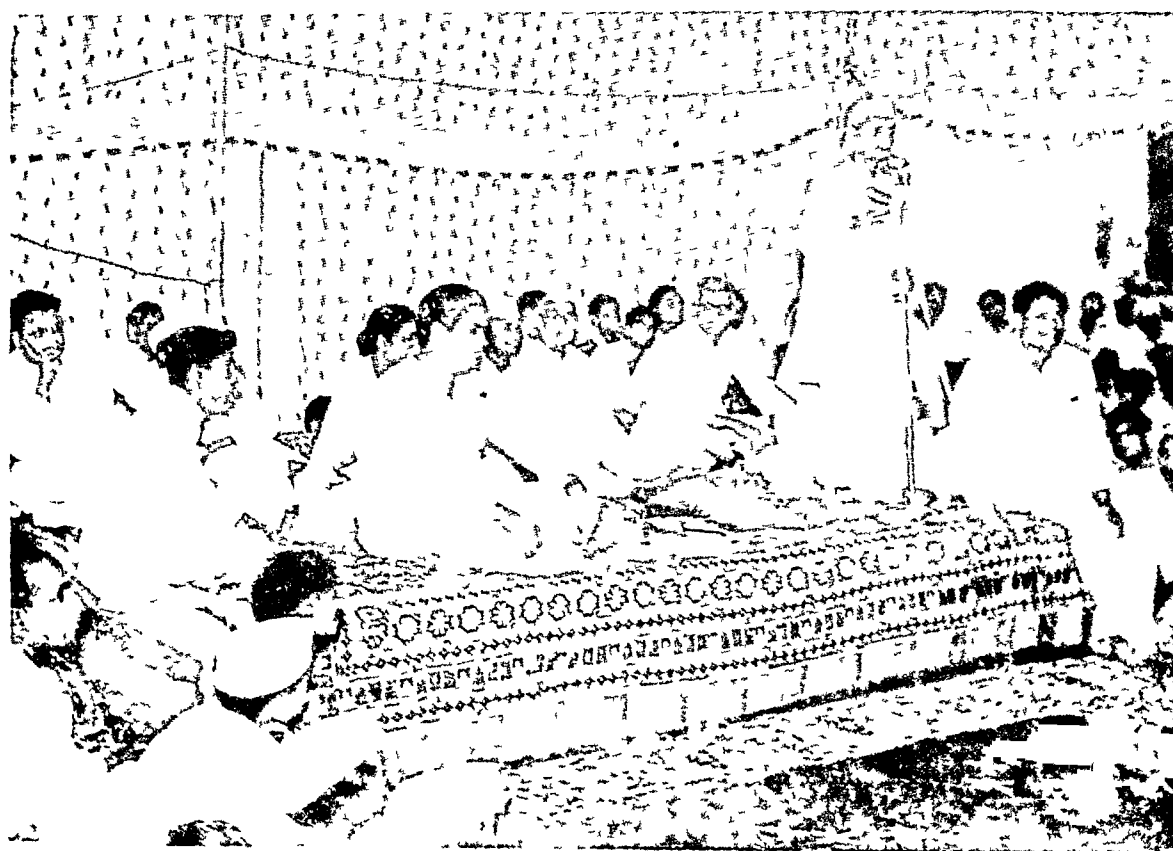
राजस्थान के नेताओके वीच

शास्त्री जी-राष्ट्रपति अयूब के साथ खुशी से मिल रहे हैं

ताशकन्द में स्लामी पुस्तक देखते हुए

श्रद्धावनत देश-विदेश के नेता

पुष्प मालाएँ चढ़ाते हुए

प्रधान मंत्री
भवन से
शव यात्रा
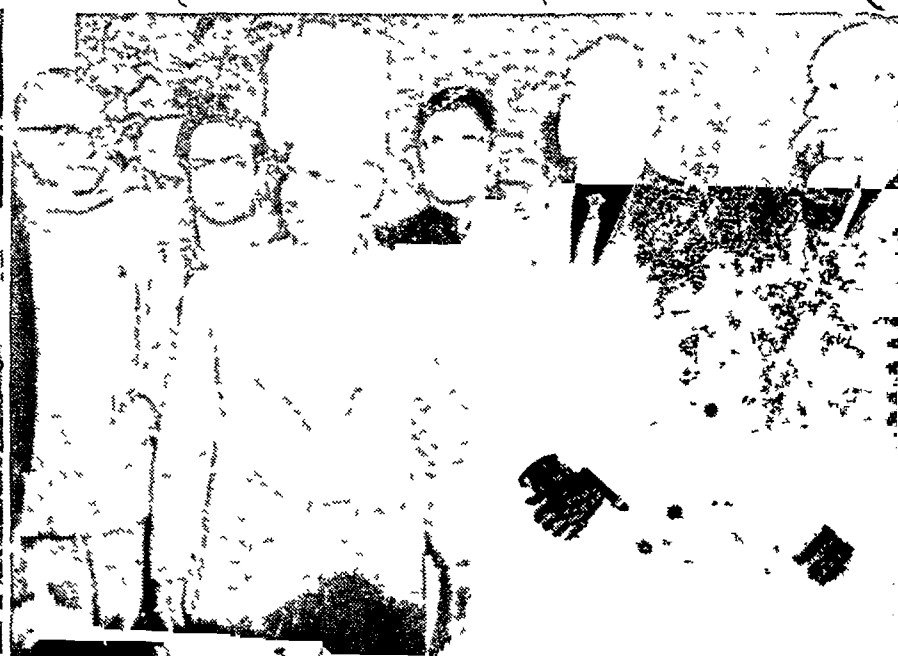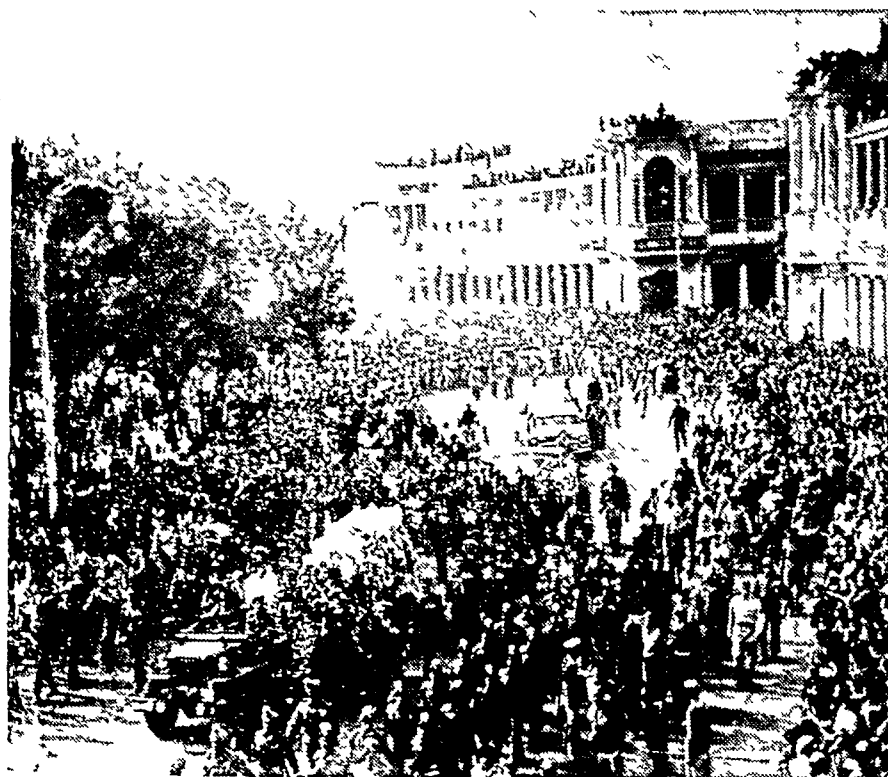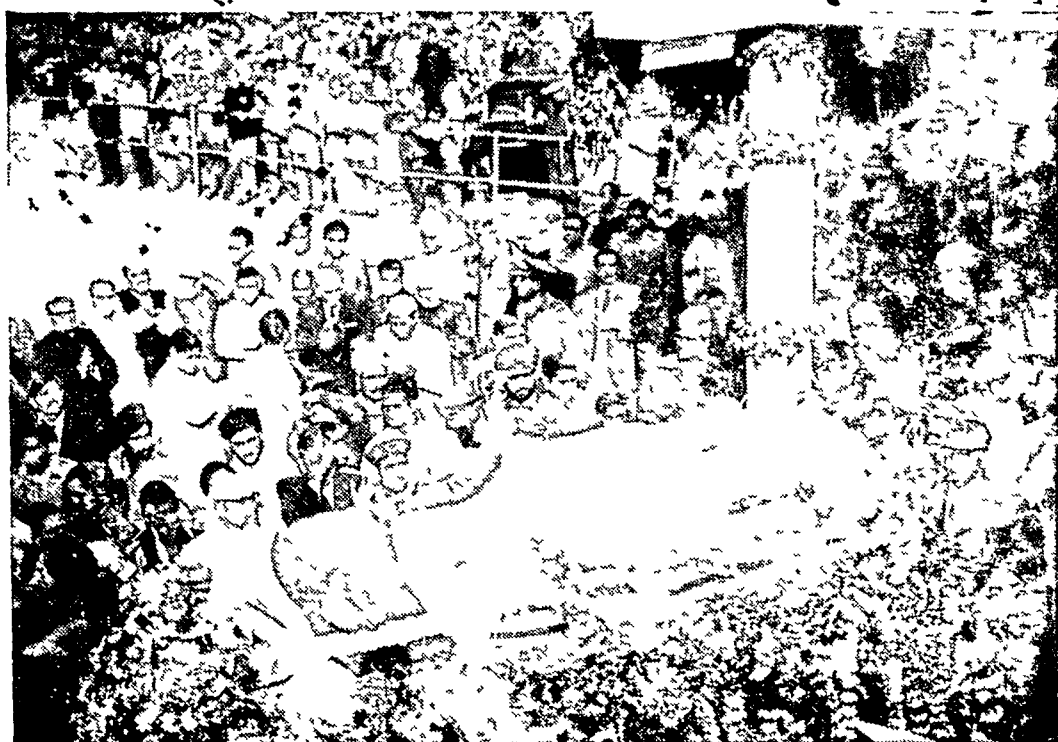
श्रद्धावनत देश-विदेश के नेता

दिल्ली के असंख्य नागरिक
अन्तिम दर्शनो के लिए
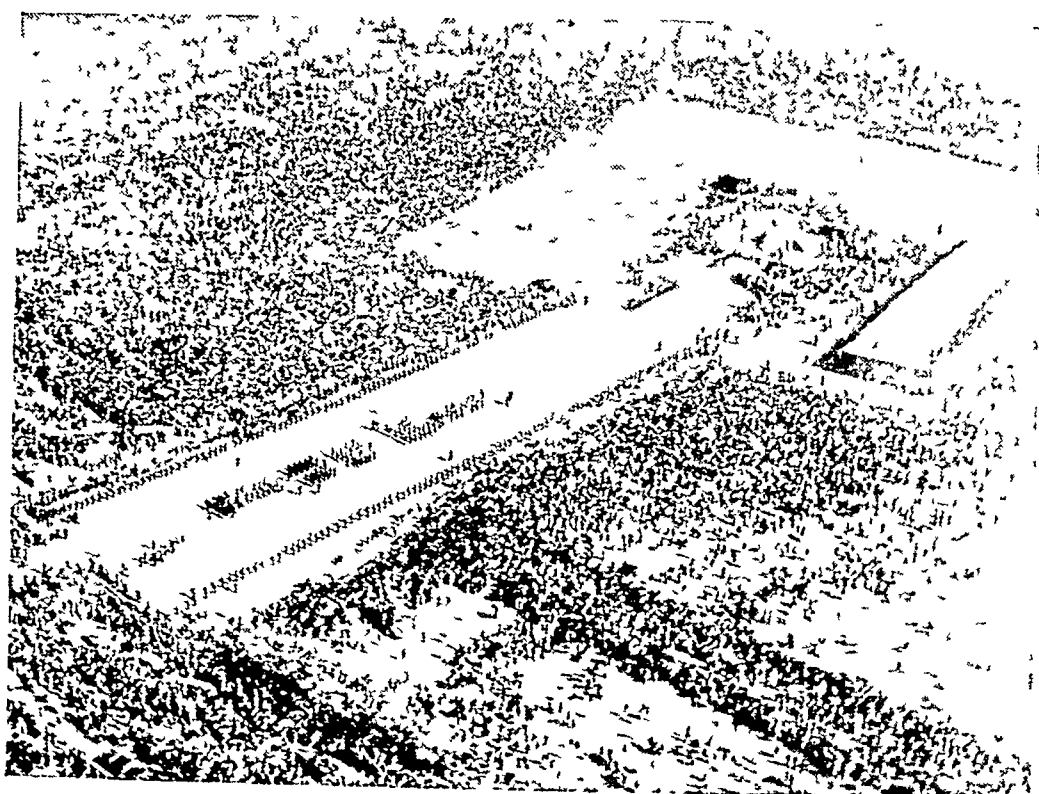
अन्तिम
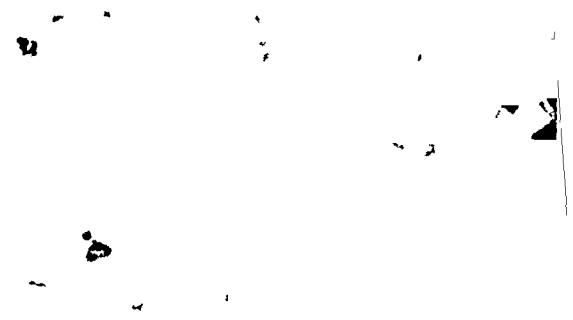
चन्दन चिता सजी

और धू-धू कर जल उठी
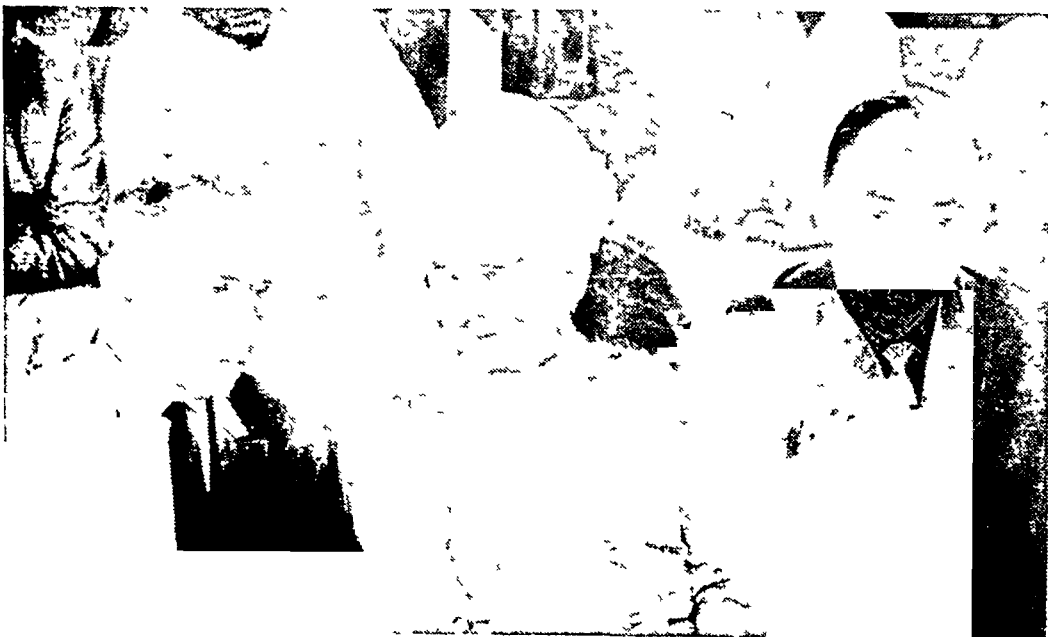
दाह के पश्चात्

रामलीला मैदान मे अमेरिकी उपराष्ट्रपति श्री हम्फरी सम्बोधित करते हुए

अस्थि विसर्जन